आधुनिक शासन पद्धतियां

(Modern Governments)

बो० एम० शर्मा, एम० ए०, पी० एच-डी०, डी० लिट्
भूतपूर्व प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, राजनीति विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ

प्रकाशक
कैलाश एण्ड कंपनी
लखनऊ

रु० १२·५०

प्रकाशक
कैलाश एण्ड कम्पनी
डी० ६/८ राजेन्द्र नगर,
लखनऊ

प्रथम बार १९६०

दो शब्द

हिन्दी को अब राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त हो गया है। अतएव यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसके साहित्य के विभिन्न अङ्गों की उन्नति की जावे। हिन्दी का सेवक होने के नाते से मैंने इस पुस्तक को वर्त्तमान रूप मे इसलिये भी लिखा है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों को बी० ए० और एम० ए० की परीक्षाओं मे तथा विभिन्न आयोगों द्वारा सचालित प्रयोगिता परीक्षाओं मे सम्मिलित होने वाले विद्यार्थियों के लिए उच्च तर की पुस्तक, जिसमे विभिन्न आधुनिक शासन पद्धतियों का तुलनात्मक वृत्तान्त हो, भी प्राप्त नही थी। मैंने अपने अध्यापन के लम्बे काल के अनुभव पर आधारित कर ो, तथा अपनी अंग्रेजी की पुस्तक Modern Governments के कुछ आधार र, इस पुस्तक को लिखा है। आशा है कि राजनीति के अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिये यह उपादेय सिद्ध होगी।

३० सितम्बर १९६०
विजयादशमी स० २०१७ वि०

अ० मो० शर्मा

विषय-सूची

प्रथम पुस्तक

वैधानिक सरकार

अध्याय १

वैधानिक सरकार

(CONSTITUTIONAL GOVERNMENT)

"यह कहने की जरूरत नहीं कि आदर्श शासन पद्धति वह नहीं है जो सभी सभ्य राष्ट्रों में व्यवहारिक और वाञ्छनीय हो परन्तु वह है जो जिन परिस्थितियों में वाञ्छनीय और साध्य समझी जाती हो, उनमें अधिक से अधिक निकटवर्ती और दूरवर्ती लाभ पहुँचाती हो। एक पूरी तरह प्रजातन्त्रीय सरकार ही ऐसी सत्ता है जो इस प्रकार का स्वभाव रखने का दावा कर सकती है।" —जे० एस० मिल

राज्य समाज का सर्वोच्च रूप है—मनुष्य ने अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं को तरह तरह के समुदाय बनाकर जाहिर किया है। परन्तु समाज का राजनैतिक सगठन करने में तो मानव चतुरता की पराकाष्ठा ही हो गई है। आरम्भ में घुमक्कड टोलियों से लेकर पशु चराने वाली जातियों, परिवार और समूह से गुजर कर आधुनिक राजनैतिक सगठन के प्रादुर्भाव तक इस प्रक्रिया में अनेक प्रकार के प्रयोग हुए हैं। इस प्रकार के समाज के जीवन में ही व्यक्ति अपने सर्वोत्तम अह० (Self) का साक्षात्कार करने योग्य हुआ है और साथ ही साथ उन लोगो का भी हित साधन कर सका है जिनसे कि वह अपने को रक्त, भावनाओं, विचारों और सामान्य क्रियाओं के बन्धन में बँधा पाता है। इस प्रकार का समाज ही जिसको कि पारिभाषिक रूप से राज्य की सज्ञा दी गई है सभ्यता के विकास, विज्ञान की प्रगति, कलाओं की वृद्धि, सिद्धान्तों के प्रतिपादन तथा व्याख्या और "प्रगतिशील मानव" शब्द के वास्तविक अर्थ को चरितार्थ करने को आवश्यक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है।

अपनी वर्तमान (अभीप्सित !)स्थिति पर पहुँचने से पहले मानव जाति सफलताओं और विफलताओं के उतार चढाव के लम्बे क्रम से गुजर चुकी है। दूसरे शब्दों में मानव-व्यवहार और प्रगति में अनेक क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ हो चुकी हैं। मानव जाति को अनेक घात-प्रतिघातों से होकर गुजरना पडा है। सभ्यता[१] वह कृत्रिम बोझ है जो मानव को अस्तित्व के लिये सघर्ष में जीवित रहने के लिये उठाना पडा है। इस अर्थ में देखने से सस्कृति मानव इतिहास का विस्तृत अभिलेख है।

१—कार्लाइल ने कहा है—"आधुनिक सभ्यता के तीन बडे तत्व बारूद, छापाखाना और प्रोटेस्टेन्ट धर्म हैं।"

राज्य का ऐतिहासिक आधार—इसलिये मानव जाति की संस्थागत प्रगति का प्रत्येक अध्ययन उसकी ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि पर आधारित होना चाहिये। परन्तु यह सत्य है कि ऐतिहासिक घटनाओं की जटिलता ऐसी है कि किसी भी समूह अथवा जाति का सांस्कृतिक जीवन समझने के लिये यह समझना जरूरी है कि वह समाज किन किन विशेष अवस्थाओं या परिस्थितियों से गुजरा है। इसलिये चाहे हम सामाजिक और आर्थिक पर्यावरण के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं से कितने भी परिचित क्यों न हों, फिर भी उस समाज के लोगों के व्यवहार को केवल मनोवैज्ञानिक आधार पर व्याख्या करने के प्रयत्न से उसके वर्तमान सांस्कृतिक जीवन का सही अन्दाजा नहीं हो सकता। फिर भूमंडल के भिन्न-भिन्न भागों में इन पर्यावरणों की विविधता से उन संस्थाओं, मूल-तत्वों, प्रणालियों और सिद्धान्तों की विविधता को यदि पूरी तरह नहीं तो भी बहुत कुछ समझाया जा सकता है जिनके द्वारा प्रत्येक समाज अपने जीवन के ढंगों को अभिव्यक्त करता है। आधुनिक राज्य, जैसा कि हेनरी सिजविक ने जोर दिया है, एक वैधानिक राज्य है। इस राज्य का ऐतिहासिक विकास प्राचीन भारतीय, यूनानी तथा रोमन काल से लेकर, अंधकारमय मध्य युग के सामन्तवाद और दैवतन्त्र (Theocracy) के उत्थान और पतन से होकर आज की वैज्ञानिक शताब्दी और देश की सीमाओं के अतिक्रमण के युग तक के इतिहास के पन्नों में देखा जा सकता है।

आधुनिक राज्य, जिसके शासन से हम यहाँ सम्बन्धित हैं, एक अत्यन्त जटिल और सगठित समाज है जिसका अपने कार्यों या आदर्श उस समाज से जो बिल्कुल भिन्न है जैसा कि दो शताब्दियों पहले था। वर्तमान विचार धारा के अनुसार राज्य 'एक समाज सेवी राज्य" है जिसका कर्तव्य जीवन के सभी पहलुओं में अपने नागरिकों के कल्याण का ध्यान रखना है। और इसी से 'कल्याणकारी राज्य' की धारणा को भी समझा जा सकता है। उसको सार्वजनिक लाभ के कामों का निर्वाचक (Constituent) नहीं बल्कि प्रबन्धक (Ministrant) के रूप में लेना है। कामों में अत्यधिक वृद्धि हो जाने के कारण राज्य का शासनतंत्र इतना जटिल हो गया है कि लोक-प्रशासन (Public Administration) अध्ययन, प्रशिक्षण और अनुसंधान की दृष्टि से एक अलग विषय ही बन गया है। कामों की बढ़ती हुई जिम्मेदारियों की समस्या प्रत्येक आधुनिक राज्य के लिये सुलझाने की एक महत्वपूर्ण समस्या बन गई है। अत उसके वैधानिक सिद्धान्त तथा शासनयन्त्र पर शासकों और नागरिकों का सतत ध्यान देने की आवश्यकता है।

संविधान समाज का ढांचा बनलाता है—सब राज्यों में इन संस्थाओं का सबसे अधिक व्यापक गुण प्रत्येक राज्य में उसके व्यक्तियों तथा सहायक संस्थाओं के बीच

एक शक्ति मूलक सम्बन्ध है। यह सब संविधान द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है जिसमें कि केवल संस्थाओं के मूल तत्व ही नहीं बल्कि राजनैतिक व्यवस्था अथवा सरकार का ढांचा भी शामिल है। मानव इतिहास की विभिन्न अवस्थाओं में भी विभिन्न प्रकार की चालू सरकारी व्यवस्थाएँ दिखाई पड़ती हैं। पहले जमाने की और आज की सरकार की प्रक्रिया में मुख्य भेद यह है कि पिछले जमाने में राज्य की सत्ता के आधीन व्यक्तियों और समूहों की पूरी संख्या का एक बहुत छोटा हिस्सा सरकार में भाग लेता था किन्तु आज सरकार में भाग लेने के अधिकार को प्रत्येक बालिग व्यक्ति और करीब करीब प्रत्येक समूह और वर्ग तक फैला देने की प्रवृत्ति है।

अतः यह स्पष्ट है कि प्रत्येक राज्य अपने लिये ऐसा संविधान बनाता है जो उसकी भौगोलिक-आर्थिक तथा सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों के अनुकूल हो। संसार के भिन्न-भिन्न भागों में इन परिस्थितियों के भिन्न-भिन्न होने के कारण संविधान भी भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण कर लेते हैं। अतः एक सफल संविधान की सामग्री वर्तमान सामाजिक आवश्यकताओं तथा मानदंडों के अनुसार व्यवस्थित होनी चाहिये क्योंकि राज्य समाज का एक बहुत विशेष अंग है जिसके अस्तित्व और विकास का अवसर अधिक है। समाज के गतिशील होने के कारण उसकी आवश्यकताएँ तथा मानदंड समय के अनुसार बदलते रहते हैं। अतः संविधान भी भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों के द्वारा होने वाले परिवर्तनों के अनुकूल बनने के योग्य होना चाहिये। इस सबसे संसार के भिन्न-भिन्न भागों में रहने वाले लोगों में राजनैतिक व्यवस्थाओं तथा सरकार के रूपों के भेद का कारण स्पष्ट मालूम पड़ता है। इस तरह किसी समाज की समृद्धि बहुत कुछ उसकी सरकार की प्रकृति पर निर्भर है। जैसा कि बर्क (Burke) ने कहा है "सरकार मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मानवीय बुद्धि का एक आविष्कार है। मनुष्यों का यह अधिकार है कि यह बुद्धि उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति का समुचित प्रबन्ध करे।" इस परिभाषा में सबसे अधिक महत्वपूर्ण शब्द मानवीय बुद्धि है क्योंकि बुद्धिमानों के अनुभवों पर आधारित हुए बिना और शासितों की आवश्यकताओं के अनुकूल हुए बिना कोई भी सरकार उपयुक्त नहीं है। काज़िन (Cousin) ने ठीक ही कहा है, "आप लोगों की सेवा करके ही उन पर शासन कर सकते हैं। इस नियम में कोई अपवाद नहीं है।" सेवा के द्वारा शासन करना परस्पर विरोधी बात मालूम पड़ती है परन्तु निसन्देह यह सरकार के कामों की आधुनिक धारणा की द्योतक है। इस सुखद सामंजस्य को प्राप्त करना तब तक कठिन है जब तक कि शासकों और शासितों का सम्बन्ध स्थायी सिद्धान्तों तथा ठोस आधारों पर स्थापित न किया जाये। एक विशेष समय पर एक अच्छी सरकार से सन्तुष्ट होना काफी नहीं है। केवल उस प्रणाली का होना ही जरूरी नहीं है जिससे

सरकार का काम बनाया जाये। पोप का यह कहना एकदम अस्वीकृत किया जा सकता है—

> "शासन पद्धतियों के बारे में, लड़ने दो मूर्खों को।
> वही है सर्वोत्तम शासन जो सर्वोत्तम शासित हो।"[१]

सरकार के रूप और उसको चलाने वाले व्यक्तियों का भी उतना ही अधिक महत्व है जितना कि उसके अभीष्ट लक्ष्य का। फ्रांसिस ऑसबोर्न (Francis Osborne) को (अपने पुत्र को) दी हुई सम्मति अत्यन्त दोष पूर्ण है। उसने कहा था "बुद्धिमान व्यक्ति के लिये इस बात का कोई महत्व नहीं है कि कौन से ताश का पत्ता तुरुप है। खेल चिड़ी (Club) में भी उतना ही अच्छा खेला जा सकता है जितना कि ईंट तुरुप होने पर। यदि हमें हारना ही है तो यह चिन्ता करना मूर्खता है कि हमारी हार कई बार हुई है *या एक बार।" फ्रांसिस ऑसबर्न के इस कथन के विरुद्ध ओविड* (Ovid) की यह बात हमें अधिक जँचती है कि "लड़के! घोड़े को छोड़ दो परन्तु उसको रास को और भी कस कर पकड़ो।" इससे एकदम एक ऐसे संगठन का समर्थन होता है जिससे अन्त में नागरिकों को राजकीय यंत्र पर नियंत्रण करना चाहिए। यह सत्य अब समझ लिया गया है और इसी कारण आज की प्रत्येक सरकार जनता के प्रतिनिधियों द्वारा जनता के नाम पर बनाये हुए संविधान पर आधारित होती है।

संविधान की परिभाषा—संविधान का क्या अर्थ है? गैटिल (Gettel) के शब्दों में "किसी राज्य के स्वरूप को निश्चित करने वाले मूल सिद्धान्त उसका संविधान कहलाते हैं।" इनमें राज्य को संगठित करने की पद्धति, सरकार के विभिन्न भागों में उसकी सर्वोच्च सत्ता का विभाजन और सरकार के कामों के करने का तरीका और क्षेत्र शामिल है।" संविधान राज्य से पहले नहीं है क्योंकि यह राज्य को उत्पन्न नहीं करता। इसके विरुद्ध वह एक विशेष समय में और विशेष परिस्थिति में एक राज्य का बाहरी ढांचा और अस्तित्व बतलाता है जिसमें कि राज्य अपनी धारणा द्वारा अपनी वास्तविक सरकार की सामान्य पद्धति प्रकट करता है। लार्ड ब्राइस (Lord Bryce) के अनुसार 'एक राज्य अथवा राष्ट्र के संविधान में उसके वे नियम अथवा कानून शामिल हैं जो उसकी सरकार का रूप और नागरिकों के प्रति उसके अधिकार और कर्तव्य नागरिकों के सरकार के प्रति अधिकार और कर्तव्य निश्चित करते हैं।" पेले (Paley) ने संविधान की परिभाषा इस प्रकार की है किसी देश के संविधान से

---

१. "For forms of government let fools contest. Whatever is best administered is best." Pope

उसके उन कानूनों का बोध होता है जोकि विधान सभा का नाम और स्वरूप, विधान बनाने वाले संगठन के अनेक भागों के अधिकार और काम तथा न्यायालयों की रचना, पद और क्षेत्र से सम्बन्धित हो। संविधान सार्वजनिक कानूनों की संहिता (Code) एक मुख्य भाग, विभाग अथवा शीर्षक है जो कि अन्य कानूनों से अपने विषय के अधिक महत्व के कारण अलग किया जाता है।" यह परिभाषा संवैधानिक कानून (Constitutional Law) का केवल एक विस्तृत रूप है जिसमें कि डाइसी (Dicey) के अनुसार सर्वोच्च शक्ति के विभिन्न अंगों की परिभाषा करने वाले सब कानून, इन अंगों के परस्पर सम्बन्ध को निश्चित करने वाले सब कानून अथवा वे कानून शामिल है जो कि सर्वोच्च शक्ति अथवा उसके अंगों का अपने अधिकारों का प्रयोग करने की पद्धति निश्चित करते हैं। आस्टिन (Austin) के अनुसार एक संविधान वह है जो कि सर्वोच्च सरकार का ढांचा निश्चित करता है। गिल क्राइस्ट (Gilchrist) ने संविधान की परिभाषा इस प्रकार की है 'लिखित अथवा अलिखित कानूनों की व्यवस्था जो कि सरकार का संगठन, सरकार के विभिन्न अंगों में शक्ति का वितरण और उन सामान्य सिद्धान्तों को निश्चित करता है जिनके अनुसार सर्वोच्च शक्ति अथवा उसके अंग अपनी शक्ति का प्रयोग करते हैं।' लीबर '(Lieber) ने संविधानों की परिभाषा इस प्रकार की है 'जनता द्वारा स्वीकृत उन सिद्धान्तों का संग्रह जोकि किसी समाज की सरकार के लिए आधारभूत माने जाते हैं, वे या तो नागरिक के राज्य से और परिणाम स्वरूप सरकार से सम्बन्ध का अथवा शक्ति के विभिन्न क्षेत्रों के उपयुक्त चित्रण (Delineation) का संकेत करते हैं, वे एकत्रित किये जा सकते हैं और एक विशेष तारीख पर उनकी घोषणा की जा सकती है जैसा कि संयुक्त राज्य (United States) का संविधान है, अथवा वे मूल सिद्धान्त स्वीकृत व्यवहारों और परम्पराओं, अनेक चार्टरों, विशेषाधिकारों, अधिकार के नियमों, कानूनों, न्यायालयों के नियमों आदि में बिखरे हो सकते हैं—जैसा कि ग्रेट ब्रिटेन का संविधान है।" एडमन्ड बर्क (Edmund Burke) संविधान के अनुभव-पूर्व (*Apriori*) सिद्धान्त का खंडन करता है और कामनवेल्थ के निर्माण में प्रयोग पद्धति में विश्वास करता है। उसके अनुसार 'सरकार मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये मानवीय बुद्धि का एक आविष्कार है। मनुष्यों का अधिकार है कि इन आवश्यकताओं की इस बुद्धि द्वारा पूर्ण किया जाय। अतः एक संविधान उन व्यवहारिक परन्तु अत्यधिक जटिल संस्थाओं और एक और भी अधिक जटिल व्यवस्था में उनके सम्बन्धों का समूह है जो कि मूल ढांचे का स्वरूप कायम रखते हुए समाज का उन मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये चालू रहने देते हैं जिनको अवश्य सन्तुष्ट किया जाना चाहिए।

इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि एक संविधान में उन मौलिक

राजनैतिक संस्थाओं का चित्र आता है जिनके द्वारा समाज अपना जीवन व्यतीत करता है। एक चित्र में विद्यार्थी केवल मोटी रूप-रेखा को ही देख सकता है। सूक्ष्म विस्तार को नहीं देख सकता। वह सूक्ष्म विशेष बातों को छोड़ कर रूप रेखा मात्र उपस्थित करता है। सूक्ष्म विशेषताओं को समझने के लिये हमें सामाजिक परिस्थितियों, आर्थिक जीवन, सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना पड़ेगा। इससे निस्सन्देह यह जाहिर होता है कि एक संविधान मूल सिद्धान्तों, सरकार के संगठन का ढांचा, सरकार के विभिन्न अंगों का आपसी सम्बन्ध और उस पद्धति को निश्चित करता है जिससे कि वे सब राज्य के नागरिकों के कल्याण की वृद्धि करने के लिये और उन्हें उनकी "आशाओं और आकांक्षाओं" को प्राप्त कराने तथा उनके भयों को दूर भगाने के लिये काम करते हैं।

संविधान की आवश्यकता—मानव जाति के लम्बे इतिहास में प्रत्येक काल अथवा युग की अपनी-अपनी विशेषताएँ रही हैं। अंधकारमय अतीत काल में, जिसके बारे में आधुनिक पुरातत्व वेत्तागण हमें कुछ धुंधला ज्ञान देने की कोशिश कर रहे हैं हमें कठिनता से ही कोई ऐसे नियम मिलते हैं जो मनुष्यों की बुद्धि उसकी रचनात्मक प्रतिभा के सम्बन्ध में समझा सकें। वह ऐसा समय था जबकि दंड का बोलबाला था और मात्स्य न्याय प्रचलित था। योग्यतम की विजय का महत्वपूर्ण जैवकीय सिद्धान्त निस्सन्देह एक मात्र चालू सिद्धान्त था। इन दिनों में कानून नहीं बल्कि मनुष्य राज्य करते थे। उनकी आज्ञा मानी जाती थी क्योंकि वह ही समुदाय के विभिन्न सदस्यों को अपने अधिकार में रख सकते हैं। मानव की बुद्धि के विकास के साथ तथा असभ्य बर्बर के बौद्धिक मानव में क्रमशः रूपान्तरित होने की शताब्दियों के बीत जाने पर एक नवीन व्यवस्था की और एक स्पष्ट गति दिखाई पड़ने लगी थी। इससे प्रक्रिया उलट गई। मनुष्यों के स्थान पर कानून नियंत्रण करने लगे और शासन के अलावा समुदाय के अन्य अंग भी संगठित राजनैतिक जीवन में भाग लेने लगे। यह वैधानिक सरकार का सुप्रभात था और एक बौद्धिक व्यवस्था का आविर्भाव था।

संविधान का इतिहास—योरोपीय लोगों में प्राचीन यूनानी दार्शनिकों ने सबसे पहले राजनैतिक समाज के रूपों तथा प्रकारों पर विचार विमर्श करने की ओर ध्यान दिया। प्लेटो तथा अरस्तू दोनों ने और इनमें भी विशेषतः अरस्तू ने जिसको कि राजनीति विज्ञान का जनक माना जाता है उन समूहों का विस्तार से विवेचन किया जिनके द्वारा मनुष्य संगठित समुदायों के रूप में रह सकते हैं। उन्होंने कहा कि राज्य के लिये किसी न किसी प्रकार के नियम होना बड़ा जरूरी है। अनेक शताब्दियों से अधिक समय तक योरप में मनुष्य के स्थायी संगठनों का विकास करने का प्रयत्न [illegible] उसका अपना सांस्कृतिक अथवा सामाजिक सामञ्जस्य था।

सामन्तवादी समाज के विघटन से और निरपेक्ष राष्ट्रीय राजसत्ताओं की निरंकुशता को समाप्त करने का खतरा उपस्थित करनेवाली शक्तियों के उदय से ज्ञात अथवा ज्ञेय नियमों और कानूनों पर आधारित एक स्थायी जीवन के आन्दोलन को और भी प्रोत्साहन मिला।

यूरोप में इंग्लैंड पहला देश था जहाँ प्रजा के अधिकारों को मान्यता दी गई। जिन राजाओं ने प्रजा पर अपनी आज्ञाओं को बलपूर्वक लादने की चेष्टा की उनके विरुद्ध पहले समृद्ध और उच्च वर्ग ने फिर सामान्य जनों ने विद्रोह किया। इस प्रकार इंग्लैंड में सामान्य लोगों के अधिकारों की रक्षा करने तथा शासकों (राजाओं अथवा उनके मंत्रियों) की निरंकुश शक्ति पर नियंत्रण करने के लिये वैधानिक सरकार का सूत्रपात हुआ। उसके बाद वह महाद्वीप पर, अमेरिका में और दुनिया के दूसरे भागों में ग्रहण कर ली गई। पिछले दो सौ वर्षों में अधिकांश राज्यों में लिखित संविधान बनाये जा चुके हैं। लिखित संविधान को ग्रहण करने की प्रवृत्ति की जिम्मेदारी अनेक कारणों पर है। इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण वह सफलता है जो कि योरपीय शक्तियों को उपनिवेशवादी नीति को मिली। इन शक्तियों ने उपनिवेश स्थापित किये और उनके शासन के लिये विशेष प्रकार की सरकार की व्यवस्थायें बनानी पड़ी। दूसरा कारण नवीन वैज्ञानिक खोजें हैं। जिनसे औद्योगीकरण हुआ जिसने नवीन आर्थिक समस्यायें उत्पन्न की और विशेष तौर से उद्योगपतियों द्वारा जनता के शोषण को रोकने के लिये राज्य के हस्तक्षेप का क्षेत्र निश्चित करने की आवश्यकता उपस्थित की। तीसरे, जनता में राजनैतिक चेतना के जागरण से जनता के अधिकारों की परिभाषा करने की आवश्यकता उत्पन्न हुई और अन्त में राष्ट्रीयता के बढ़ते हुए क्षेत्र के कारण राष्ट्रीय महत्वाकांक्षाओं के क्षेत्र को निश्चित करने की आवश्यकता पैदा हुई।

अतः वैधानिक सरकार, सरकार का वह रूप है जिसमें मनुष्य नहीं बल्कि कानून नियंत्रण करते हैं और जोकि न्यूनाधिक रूप में जनतन्त्रीय है, क्योंकि उसमें न्यूनाधिक अंश में राज्य के जीवन के महत्वपूर्ण अंश भाग लेते हैं। इसलिए एक वैधानिक सरकार का उद्देश्य संगठित समाज की परिवर्तनशील आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करना और इस प्रकार व्यक्तियों को अपने आदर्शों के लिये प्रयास करते हुए शान्ति-पूर्वक जीवन व्यतीत करने का अवसर देना है। इस प्रकार वैधानिक सरकार अत्याचार और कठोरता के बिल्कुल विरुद्ध है। परन्तु फिर भी उसमें कानूनों का तब तक पालन करना जरूरी है जब तक कि वे बदल न दिये जायें और उस सत्ता का सम्मान करना भी आवश्यक है जिसको नागरिक लोग अपने कामों की पूर्ति के लिये बनाते हैं। इस प्रकार की सरकार क्रान्तिकारी न होकर भी प्रगतिशील है, रुकावट डालने वाली न होकर भी स्थिर है। वह परिवर्तन शील परिस्थितियों के अनुरूप प्रगति का अवसर देती है।

इगलैंड में सविधान का विकास—इगलैंड में "कन्स्टीटयूशन" या सविधान शब्द का प्रयोग सबसे पहले उन प्राचीन प्रचलित रीति रिवाजो तथा मौलिक प्रथाओं के लिये किया गया था जिनको वहाँ के तत्कालीन राजा ने अपनी महान परिषद (Great Council) की सम्मति से घोषित किया था। इस प्रकार हेनरी द्वितीय ने सन ११६४ में लौकिक और धार्मिक न्यायालयों के सम्बन्धो को निश्चित करने वाले कुछ नियम बनाये जो कि क्लेरेन्डन (Clarendon) के सविधान के नाम से प्रसिद्ध हुए। वास्तव मे ये कोइ नए नियम नहीं थे बल्कि केवल पुरानी प्रथायें थीं जिनको लिखित रूप देकर औपचारिक रूप से घोषित कर दिया गया। ऐसे ही वे प्रविधान (Provisions) भी थे जिनको जमींदारों ने १२१५ में राजा जॉन (King John) से बनवा लिया था। मैग्ना कार्टा (Mogna Carta) में राज्य के अनेक मौलिक रीतिरिवाजो का अधिक विस्तृत रूप से वर्णन किया गया। वह एक नियम बनाने वाला नहीं बल्कि परिभाषा करने वाला प्रलेख (*Document*) था और उसको भी रनीमीड (Runnymede) का सविधान कहा जा सकता है। राजा के द्वारा आत्म समर्पण से यूरोप में वैधानिक सरकार अर्थात् उसमें सम्बन्धित दलो के मध्य निश्चित समझौते पर आधारित सरकार का सूत्रपात हुआ। परन्तु इन सविधानो तथा चार्टरों में वह सब सिद्धान्त शामिल नहीं है जिन पर बाद की शताब्दियों में इगलैंड की सरकार स्थापित हुई। समय समय पर उनमें नए सिद्धान्त जोड दिये गये, जैसे ग्रेट चार्टर (मैग्नाकार्टा), ऑक्सफोर्ड के प्रविधान (*Provision of Oxford* 1258,) तथा अनेक बडे विधान जैसे कि मार्टमैन का विधान (Statute of Mortmain 1279), विन्चेस्टर का विधान (Winchester 1285), प्रेमूनायर का विधान (Praemunire 1353) आदि शामिल हैं। बाद में क्रोमवेल के सैनिकों द्वारा सन् १६४७ में बनाया गया जनता का करार (Agreement of People) आया और प्रोटेक्टर द्वारा सन् १६५३ में बनाया गया शासन-विलेख (Instrument of Government) आया। यह शासन विलेख उसके तमाम मूल तत्वों सहित एक विधिवत लिखित सविधान था क्योंकि उसमें कुछ विस्तार से विधान मंडल तथा कार्यपालिका के अधिकारों का उल्लेख किया। उसने एक अग्रेजी प्रजातन्त्र स्थापित किया जिसमें व्यवस्थापक अधिकार एक विधान मडल तथा एक आजीवन राष्ट्रपति (Lord • Protector) के सुपुर्द थे। परन्तु पार्लियामेन्ट ने इस विलेख को कभी कानून नहीं माना और क्रामवेल की मृत्यु के केवल चार वर्ष बाद जबकि फिर राजतन्त्र की स्थापना हुई तब सम्राट ने सन् १६६० में यही घोषणा की कि इग्लैंड का शासन फिर से "राज्य के प्राचीन और मौलिक कानूनों के अनुसार होगा। इस प्रकार इगलैंड में इस तरह के सविधान का पहला और एक मात्र अनुभव समाप्त हुआ। १६५३ का यह अग्रेजी सविधान आधुनिक यूरोप

का सबसे पहला लिखित संविधान कहा जाता है। इंगलैंड का वैधानिक विकास सात शताब्दियों तक फैला हुआ है जिसमें विभिन्न संस्थाओं का विकास हुआ या उनके सम्बन्धों में परिवर्तन हुए अथवा समय की नई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये नई संस्थायें बनीं। अंग्रेजी संविधान के इस विकास और वृद्धि की कहानी को एक बाद के अध्याय में वर्णन किया गया है।

अमेरिका में—१७७६ में इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कि एक लिखित संविधान आवश्यक है, अमरीकी लोग अपने अंग्रेजी भाइयों के उदाहरण का ही अनुसरण कर रहे थे जिन्होंने कि १६५३ में आधुनिक यूरोप का पहला लिखित संविधान बनाया। अमेरिकन उपनिवेशों ने शासन विलेख के मूल विचार को ग्रहण कर लिया और उसका उपयोग किया। १७वीं शताब्दी के पिछले भाग में उन्होंने अपने मौलिक कानूनों और खास तौर से उनकी सरकार के संगठन से सम्बन्धित कानूनों के जाहिर करने के लिये संविधान शब्द का प्रयोग करने की रीति को फिर से चालू किया और स्वतंत्रता की घोषणा (Declaration of Independence) के बाद से तेरह राज्यों में से सभी ने अपनी स्थापित की हुई नई सरकारों के विलेखों के लिये संविधान शब्द का प्रयोग किया। दूसरे शब्दों में अमेरिका ने यह शब्द इंगलैंड से ग्रहण किया और उसका अधिक निश्चित अर्थ दिया तथा उसके उदाहरण से पिछले १७५ सालों में उसका सारी दुनिया में प्रचार हो गया। अतः हम कह सकते हैं कि अमेरिका लिखित संविधान की जन्म भूमि है। दक्षिणी कैरोलीना (South Corolina) का संविधान जान लॉक ने बनाया था और रोड दीप(Rhode Island)का संविधान रॉजर विलियम ने।

यूरोप में—लिखित संविधान बनाने का दूसरा प्रयत्न सन् १७९१ में फ्रान्स ने किया। यह संविधान एक वर्ष तक चला परन्तु फ्रांस में इसके बाद १७९२ से १८१५ तक अनेक लिखित संविधान बने। १८१५ से १८३० के बीच में छोटे छोटे अनेक जर्मन राज्यों ने लिखित संविधान ग्रहण किये। जरमनी में यह प्रारम्भिक वैधानिक आन्दोलन फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति का एक परिणाम मालूम पड़ता है। १८३० में नये स्थापित हुए बेल्जियम राज्य ने भी एक लिखित संविधान बनाया। दक्षिणी अमेरिका में स्पेन के उपनिवेशों की आजादी से भी वैधानिक सरकार और लिखित संविधान की स्थापना हुई। यूरोप के अन्य राज्यों ने विशेषतया १८४८ के क्रान्तिकारी आन्दोलन के परिणामस्वरूप लिखित संविधान ग्रहण किये। इनमें प्रशिया और इटली का नाम लिया जा सकता है। १८७० के लगभग योरप में राष्ट्रीय एकता का जो आन्दोलन देखा गया और जिसके परिणाम स्वरूप जर्मनी का संगठन हुआ उसके साथ भी अनेक लिखित संविधान प्रारम्भ हुए जिनमें आस्ट्रिया, हंगरी और जर्मन साम्राज्य का उल्लेख किया जा सकता है।

दूसरे स्थानों में—उन्नीस वर्ष बाद सन १८८९ में जब जापान साम्राज्य वैधानिक राज्यों की श्रेणी में शामिल हुआ तब जापान के लिये एक लिखित संविधान बनाया गया। प्रथम विश्व महायुद्ध से पहले कुछ वर्षों से विशेषतया आत्म निर्णय के अधिकार के परिणाम स्वरूप टर्की, ईरान, चीन, मिश्र और ईराक ने भी लिखित संविधान ग्रहण किये। १९३२ में स्याम भी इस सूची में शामिल हो गया। द्वितीय विश्व महायुद्ध ने जनता के अपने भाग्य निर्माण के अधिकार को और भी सुदृढ़ कर दिया, उपनिवेशवाद समाप्त हुआ, संरक्षित राज्य स्वतन्त्र कर दिये गये। फ्रांस, जर्मनी और जापान ने नवीन और अधिक जनतन्त्रीय संविधान बनाये। भारतीय गणतन्त्र ने नवम्बर सन् १९४९ में अपना संविधान ग्रहण किया और २६ जनवरी सन् १९५० में पूर्ण गणतन्त्र बन गया। राजनैतिक चेतना के नवीन जागरण की एक लहर सी फैल जाने से एशिया और अफ्रीका के विभिन्न भागों में स्वतन्त्र राजनैतिक समुदायों के रूप में अपनी सत्ता की रक्षा करने तथा उसे बनाये रखने के लिये लिखित संविधान ग्रहण किये जा रहे हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सन् १७७६ में संयुक्त राज्य अमेरिका से उत्पन्न हुआ आन्दोलन अब पाँचों महाद्वीपों में फैल गया है। परन्तु यह बात अक्सर याद नहीं रखी जाती कि अमरीका का संविधान जो कि सन् १७८९ में ग्रहण किया गया, कुछ अमरीकी राज्यों के संविधानों के अलावा मौजूदा संविधानों में सबसे प्राचीन लिखित संविधान है जिसको आज डेढ़ सौ वर्षों से ऊपर हो गए हैं और जिसमें आज तक केवल २२ संशोधन हुए हैं जिनमें से सभी बड़े नहीं हैं।

द्वितीय विश्व महायुद्ध के समाप्त होने के समय से केवल दक्षिणी पूर्वी एशिया और अफ्रीका तथा मध्य पूर्व के नए बने स्वतन्त्र देशों में ही नहीं बल्कि योरप के दूरस्थ पुराने देशों में भी भिन्न-भिन्न वैधानिक प्रयोग किये गये हैं जिनमें कि सरकार के नवीन सिद्धान्त माने जा रहे हैं फ्रांस ने अपने चौथे जनतन्त्र के उत्थान और पतन को तथा १९५८ में पाँचवें जनतन्त्र की स्थापना को देखा। मित्र राष्ट्रों के विजेताओं ने जर्मनी को विभाजित कर दिया था और अब उसमें दो प्रकार की सरकारों का राज्य है, पश्चिमी भाग में फैडरल रिपब्लिक तथा पूर्वी भाग में साम्यवादी आदर्श पर जनता का जनतन्त्रीय गणराज्य (पीपुल्स डेमोक्रेटिक रिपब्लिक)। इटली ने राजतन्त्र को समाप्त कर दिया है और एक नए प्रकार का जनतन्त्रीय संविधान ग्रहण किया है। जेकोस्लोवाकिया, हंगरी, पोलैण्ड और यूगोस्लाविया ने समाजवादी-साम्यवादी ढाँचे के सर्वसत्ता-सम्पन्न संविधान ग्रहण किये हैं।

संविधानों का वर्गीकरण—लिखित और अलिखित संविधानों का अन्तर बहुत कम महत्वपूर्ण है। उनको "अधिनियमित" और 'विकसित' संविधान कहना अधिक

ठीक है। किसी सविधान को अलिखित कहने से उसके अनिश्चित प्रविधानो का बोध होता है जैसा कि ब्रिटिश सविधान नही है। कुछ बातो में उसके विधान अन्य देशो के लिखित सविधानों के प्रविधानो से भी अधिक निश्चित हैं। किसी ससद अथवा शासक के हाथो से पूरी तरह बन कर निकलने वाले सविधान के विरुद्ध ब्रिटेन के जैसा एक विकसित सविधान रीतिरिवाजो मे उत्पन्न होता है। ग्रेट ब्रिटेन तथा १९१४ के पूर्व हगरी के सविधान विकसित सविधानो के वर्ग में आते हैं। अन्य सब सविधान "अधिनियमित वर्ग" मे आते हैं। परन्तु अधिनियमित और विकसित सविधानो का यह अन्तर कठोर नही है। एक विकसित सविधान भी कुछ न कुछ अधिनियमित होता है। इग्लैंड में १२१५ का मैग्ना कार्टा और हगरी मे १२२२ का गोल्डेन बुल दोनो अधिनियमित थे परन्तु वे अपने अपने देशो मे विकसित सविधानों के भाग हैं। दूसरी ओर एक अधिनियमित सविधान कभी भी एक दम नई सृष्टि नही होता। वह एक निश्चित तारीख पर निर्माताओ अथवा निर्माणकों के एक निश्चित समूह द्वारा बनाया हुआ नहीं होता। इस विषय में भारतीय गणतन्त्र के सविधान का उदाहरण सर्वोत्तम है। उसने बहुमूल्य सिद्धान्तो, लक्ष्यो, पद्धतियो तथा शासन यत्र के इगलैंड, सयुक्त-राज्य तथा फ्रास जैसे अन्य जनतन्त्रीय देशो के अनुभव से बहुत कुछ लिया है। यदि फिलाडेलफिया के कन्वेशन ने भी राजनैतिक रीति-रिवाज न अपनाये होते तो १७८७ में बना सयुक्त-राज्य का सविधान बनना भी असभव हो जाता। साथ ही साथ यह भी याद रखना चाहिए कि अधिनियमित होते ही एक सविधान का का विकसित होना प्रारम्भ हो जाता है कालान्तर में अधिनियमित लेखो पर रीति रिवाजो और परपराओ का खासा ढेर इट्ठा हो जाता है, जो कि इस विकास का ही परिणाम है। अत कोई भी सविधान पूरी तरह विकास अथवा अधिनियम मात्र का परिणाम नही कहा जा सका। प्रत्येक सविधान दोनो ही वर्गो में आ जाता है

कठोरता अथवा लचीलापन—सशोधन को कठिनाई और सरलता के अनुसार सविधान को कठोर (Rigid) तथा लचीला (Flexible) कहने का भी रिवाज है। सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान कठोर सविधान है क्योकि उसमें सशोधन करने की प्रक्रिया किसी भी अन्य देश की अपेक्षा अधिक लम्बी, 'विस्तृत और कठिन है। ग्रेट ब्रिटेन, इटली तथा हगरी (१९१८ तक) के सविधान लचीले सविधानो के उदाहरण हैं क्योकि उनमें आसानी से और बार बार परिवर्तन किया जा सकता है। पारिभाषिक रूप से कहा जाय तो ऐसे देशो में सविधान का सशोधन एक सामान्य नियम बनाने से अधिक कठिन नही होता। अत में ऐसे भी सविधान हैं जो कि इन दोना वर्गों के बीच में आते हैं, अर्थात् वे जिनमें कि एक विशेष शैली से सशोधन किया जा सकता है जो कि कानून बनाने की सामान्य प्रक्रिया से तो अधिक कठिन है परन्तु फिर भी

राष्ट्रीय विधानमंडल के अधिकार में है और किसी बाहरी शक्ति के हाथ बटाने की अपेक्षा नहीं रखता। इस प्रकार के संविधानों के उदाहरण हैं तीसरे फ्रेंच प्रजातन्त्र और जनता तथा १९१८ तक के आस्ट्रिया के संविधान। भारतीय गणतन्त्र का संविधान कुछ कठोर है और कुछ लचीला है।

लचीलापन सापेक्ष है—यद्यपि कठोर और लचीले संविधानों का अन्तर महत्वपूर्ण है परन्तु उन पर अत्यधिक जोर देना ठीक नहीं है। व्यवहार में यह देखा गया है कि संयुक्त राज्य अमरीका के जैसे लिखित संविधान भी इतने कठोर नहीं होते जैसे कि कुछ लोग उन्हें समझते हैं। संयुक्त राज्य के एक राष्ट्रपति ने संयुक्त राज्य के संविधान को देश के लिये वैसा ही बतलाया है जैसा कि किसी आदमी के लिये उसका अत्यधिक छोटा कोट। यदि वह मानने से उसके बटन लगा लेता है तो वह पीछे से खुल जाता है। परन्तु संयुक्त राज्य अमरीका के वैधानिक विकास की परीक्षा करने पर अमरीका संविधान का यह वर्णन ठीक नहीं मालूम पड़ता क्योंकि एक अधिनियमित संविधान को समय के अनुकूल बनाने के लिये विधिवत संशोधन की क्रिया ही एक मात्र तरीका नहीं है। वह केवल कुछ तरीकों में से एक है और उसे उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि रीतिरिवाजों और न्यायालयों की व्याख्याओं के परिणाम स्वरूप संविधान में महान परिवर्तन होते हैं। इस प्रकार बहुत से विषयों में संशोधन की निश्चित विधि को प्रयोग करने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। संयुक्त राज्य के संविधान में १७८९ से केवल २२ विधिवत संशोधन जोड़े गए हैं, परन्तु न्यायालयों की व्याख्याओं के कारण उसका असंख्य बार संशोधन हो चुका है। फिर, उस देश में हुए महान सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों ने तथा वाशिंगटन के समय से लेकर आजतक उसकी राजनैतिक तथा भौगोलिक वृद्धि ने ऐसी अनेक वैधानिक परम्पराओं का निर्माण किया है जिन्होंने १७८७ की लिखित धाराओं अथवा उसके बाद हुए संशोधनों द्वारा प्रस्तुत मूल चित्र को नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। फिर ऐसे अनेक व्यवहार स्थापित हो गए हैं जो कि संघ तथा राज्य सरकारों के सम्बन्धों को निश्चित करते हैं, जिनको कि संविधान की धाराओं से नहीं समझा जा सकता। इस दृष्टिकोण से अमरीका का संविधान ग्रेट ब्रिटेन के संविधान से अधिक कठोर नहीं है। कोई भी प्रतिभाशाली तथा प्रगतिशील राष्ट्र किसी कठोर संविधान को सहन नहीं कर सकता। यदि विधिवत संशोधन की पद्धतियाँ अत्यधिक क्लिष्ट मालूम पड़ती हैं तो वह परिवर्तन की कोई और पद्धति निकाल लेगा। सर्वोच्च न्यायालय की सहायता से संयुक्त राज्य अमरीका ने एक शताब्दी पूर्व ऐसी ही पद्धति निकाल ली। वैधानिक कठोरता कानून का नहीं बल्कि जन स्वभाव का विषय है। ब्रिटिश तथा स्विस लोगों के समान रूढ़िवादी प्रवृत्ति वाले लोग अपने संविधानों में धीरे-धीरे और बड़ी सावधानी से परिवर्तन करना चाहें

परिवर्तन की प्रक्रिया कितनी भी सरल क्यों, न हो। बहुधा यह कहा जाता है कि इगलैंड सुधार करता है परन्तु क्रान्ति नही। इससे यह सकेत मिलता है कि अत्यधिक लचीला सविधान होने पर भी अंग्रेज लोगो की रूढिवादी प्रवृत्ति के कारण वे अपनी कुछ वैधानिक सस्थाओ और व्यवहारो से लिपटे हुए है जो उसकी अनुपयोगिता जाहिर हो जाने पर भी चालू है। यह कठोरता का एक उदाहरण है जो कि लार्ड सभा के वर्तमान सगठन और शक्तियो से जाहिर होती है।

लिखित सविधान केवल एक ढाचा है—दूसरे शब्दो में एक लिखित सविधान एक अभिलेख में प्रस्तुत सरकार का एक ढाचा मात्र है। वह किसी देश की सरकार के यथार्थ रूप को हमेशा नही जाहिर करता। वह एक खेल के नियमो के समान है। यदि खेल जैसा कि वह वास्तव मे खेला जाता है नियमो के अनुसार नही खेला जाता तब नियमो से खेले जाने वाले खेल का सही अन्दाजा नही हो सकता।

इस तरह यदि एक लिखित सविधान के अन्तर्गत रहने वाले और काम करने वाले लोग नियमो के अनुसार राजनैतिक खेल खेलते हैं (और शायद यह कहा जा सकता है कि वे कभी बहुत दिनों तक ऐसा नहीं करते) तो लिखित सविधान यथार्थ शासन व्यवस्था का सही अन्दाजा दे सकता है। परन्तु यदि वे राजनैतिक खेल को इस तरह नही खेलते तब शासन के जिज्ञासु को वास्तविक राजनैतिक व्यवस्था को मालूम करने के लिये यह मालूम करना पडेगा कि राजनैतिक खेल वास्तव मे कैसे खेला जाता है। उदाहरण के लिये पार्टी व्यवस्था (Party System) को लीजिये। लिखित अमेरिकन सविधान में उसका कोई स्थान नही है और अलिखित अंग्रेजी सविधान में भी वह कही नही है, परन्तु शासन का प्रत्येक विद्यार्थी यह जानता है कि सरकार की अमरीकन और ब्रिटिश व्यवस्थाओ में उसका कितना महत्वपूर्ण स्थान है। सरकारो का तुलनात्मक अध्ययन करने वाले विद्यार्थियो को विशुद्ध रूपकीय (Formal) पहलुओं की ओर कम ध्यान देकर यथार्थ वैधानिक विकास और लोगो के राजनैतिक मनोविज्ञान की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

अत्यधिक कठोरता अवाछनीय है—परन्तु फिर भी किसी लिखित सविधान के सशोधन को अत्यधिक कठिन बना देना बुद्धिमानी नही है क्योंकि लगभग प्रत्येक देश में परिस्थितियाँ बराबर बदलती रहती हैं और यदि किसी सविधान को अपने आधीन रहने वाले लोगो की आवश्यकताओ को पूरा करना है तो उस परिस्थितियों के अनुसार अवश्य परिवर्तित होना चाहिये। यदि पर्याप्त आसानी से सशोधन करने का प्राविधान नही है तो या तो सविधान वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल न रह जायेगा अथवा सविधान की खीचातानी करके शासन की यथार्थ व्यवस्था में परिवर्तन किया जायेगा। सयुक्त राज्य के सविधान की एक अत्यधिक तग कोट से

तुलना करने में अमरीकन राष्ट्रपति के दिमाग में शायद यही बात रही होगी। एक संविधान में अत्यधिक कठोरता का तात्पर्य यह होगा कि उसके निर्माताओ ने लगभग अपरिवर्तनीय रूपो और संस्थाओ में उन पद्धतियो को बांध दिया है जिनसे भावी पीढ़ियो को अपने आचार का नियंत्रण या नियमन करना है। इसका अर्थ समय के साथ वृद्धि या प्रगति करने की आजादी का रोक देना होगा। अपने "राइट्स ऑफ मैन" में टाम पेन (Tom Paine) ने इस दृष्टिकोण की भर्त्सना करते हुए ठीक ही कहा कब्र के बाद भी शासन करने का दंभ और कल्पना (presumption) सब प्रकार के अत्याचारो में सबसे अधिक हास्यास्पद तथा अपमान जनक है। अनुकूलन मरे हुआ का नही बल्कि जिन्दा लोगो का होना है। जब एक आदमी का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तब उसकी शक्ति और उसकी आवश्यकतायें भी उसी के साथ समाप्त हो जाती है और इस दुनिया के मामलो से उसका कोई मतलब न रह जाने के कारण उसको अब यह निर्देश करने का अधिकार भी नही रह जाता कि उसकी सरकार का किस प्रकार सगठन होगा और कैसे उसका शासन किया जायेगा। अतः संविधान में परिवर्तन शीलता एक प्रगतिशील समाज के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इसलिये एक अच्छा संविधान वह है जो इतना कठोर नही है कि समय की बदलती हुई आवश्यकता के अनुसार अपने प्रविधानो में आवश्यक परिवर्तनो को रोक दे, और जो इतना नवीन भी नहीं है कि वह अस्थिर बन जाये। वह अपने से प्रभावित होने वाले लोगो की बढ़ती हुई मांगो के अनुकूल बनने के लिये पर्याप्त लचीला होना चाहिये, परन्तु इतना लचीला भी नही कि जनता के उद्वेगो तथा पक्षपातो में तीव्र परिवर्तन के वा [illegible] साथ साथ उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

अब यदि हम लिखित और तथाकथित कठोर संविधानो के पक्ष और विपक्ष की बातो को मापें तो शायद हम यह कह सकेंगे कि यूरोपीय जगत का लगभग सार्वभौम अनुभव वैधानिक सरकार के सिद्धान्तो को लिखित करने की इस पद्धति के पक्ष में है। उसके विरुद्ध अक्सर उठाया जाने वाला कठोरता का तर्क केवल आंशिक रूप में और उसी हद तक ठीक है जहाँ तक कि संविधान के संशोधन करने की विधियो का आवश्यक रूप से कठिन बना दिया गया है।

इस तरह प्रत्येक संविधान उसको मानव जीवन की गतिशीलता के अनुकूल बनाने के लिये परिवर्तित अथवा संशोधन करने की पद्धति निर्धारित करता है। पिछले कई सौ वर्षों से सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ जिस तेजी से बदल रही हैं उनसे [illegible] ढांचा भी अछूता नहीं रह सका है। सरकार के काम बड़ी तेजी से बढ़े हैं। [illegible] नागरिक तथा शासको के सम्बन्धो में अत्यधिक अन्तर हो गया है। शासको पर जनता की मांगें बढ़ती जाती हैं। और शासन यंत्र को बढ़ाने तथा उसकी नीति निर्माण

करन मे उसका हिस्सा बढता जाता है। इस प्रकार की मांग को राज्य के संविधान में उचित संशोधन करके पूरा किया जा सकता है।

संविधान पर लोक नियंत्रण—संयुक्त राज्य में लोक प्रभुता के सिद्धान्त के प्रभावों में से एक प्रथ व राज्यों के भौतिक संविधानों तथा उनके संशोधनों को राज्यों के वोटरों के सुपुर्द कर देना था। संयुक्त राज्य के संविधान तथा ससार के अन्य अधिकतर लिखित संविधानों में वैधानिक संशोधन के विषय मे जनता के प्रति इस प्रकार के समर्पण की आवश्यकता नहीं पडती। संशोधन का साधारण तरीका विधान के द्वारा है परन्तु उसमे साधारण बहुमत से अधिक मतों की आवश्यकता होती है और विशेष विधियों का पालन किया जाता है। इस प्रकार फ्रांस मे १८७५ के वैधानिक कानून मे निम्नलिखित रीति से संशोधन किया गया, विधान सभा के प्रत्येक सदन ने सदस्यों की बहुसंख्या से यह निश्चित किया कि एक संशोधन होना आवश्यक है। जब दोनों सदन, ने अलग अलग यह निश्चित कर लिया तब उनकी एक संयुक्त सभा बनाई गई। इस संयुक्त सभा मे संशोधन का फैसला सभा के सदस्यों के बहुमत से किया गया।

यदि हम योरोपीय राष्ट्रों के अनुभव से जाच करे तो हम इस नतीजे पर पहुंच सकते हैं कि वैधानिक सरकार वाले प्रत्येक देश मे एक लिखित संविधान होना चाहिये और यह संविधान उसी प्रकार संशोधन के योग्य होने चाहिये जैसे कि १८७५ के फ्रेंच वैधानिक कानून थे।

वैधानिक सरकार की परिभाषा—आज की प्रत्येक सरकार एक संविधान पर आधारित है। वैधानिक सरकार से हमारा क्या मतलब है? वह विश्व के इतिहास में दिखाई पडने वाली अन्य प्रकार की सरकारों से कैसे अलग है? उसमे कौन सी विशेषतायें है जिनसे हम उसे पहचान सकते है? सबसे पहले, वैधानिक सरकार का तात्पर्य सरकार के उस रूप से है जो कि वैयक्तिक सरकार के विरुद्ध शासन शक्ति रखने वाले लोगों की स्वेच्छा पर आधारित नही है बल्कि इसके विरुद्ध इसने स्पष्ट परिभाषित तथा इनने सामान्य रूप से माने हुए नियमों के अनुसार चलती है कि जिससे सार्वजनिक अफसरों के कामों पर अच्छी तरह नियंत्रण हो सके। अत वैधानिक सरकार आदमियों की सरकार न होकर कानूनों की सरकार है। यह सिद्धान्त कि वैधानिक सरकार कानूनों की सरकार है और आदमियों की सरकार नहीं है ऐसे नियमों या कानूनों का निर्माण आवश्यक बना देता है जो सरकारी अफसरों के कामों पर नियंत्रण कर सके। यह नियम अथवा कानून ही मिलकर एक संविधान बनाते हैं।

विविध प्रणालियों से बने हुए संविधान—गैटिल (Gettel) कहता है 'एक राज्य का संविधान उस एकता की अनुभूति से निकल कर जो कि राज्य को बनाती है और संविधान जिसकी रूपकीय अभिव्यक्ति है, स्वयं राज्य के साथ ही अस्तित्व धारण

उन्ना है और क्योंकि भिन्न-भिन्न राज्य भिन्न-भिन्न प्रणालियों से बने हैं इसलिये उनके संविधान भी भिन्न भिन्न प्रणालियों और कारणों की उपज हैं। ये कारण विकास की धीमी प्रक्रिया से लेकर हिंसक क्रान्तियों गृह अथवा अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों तक फैले हुए हैं। संविधानों को उत्पन्न करने वाली प्रणालियों ने उनके स्वभाव, सामग्री तथा लक्ष्यों पर अत्यधिक प्रभाव डाला है जो कि विशेषतः नए सामाजिक आर्थिक कारकों के कारण थे।

यद्यपि सभी संविधानों के निर्माण में वही कारक काम करते हैं परन्तु वैधानिक विकास की प्रक्रिया के बाहरी पहलू भिन्न-भिन्न राज्यों में बहुत अधिक भिन्न-भिन्न हैं। ब्रिटिश संविधान जैसा कि हमने देखा है संवर्धन (Accretion) की मन्द प्रक्रिया से क्रमशः विकसित हुआ है और कभी किसी एक विलेख में नहीं बांधा गया है। सच तो यह है कि अंग्रेजी संविधान में से अधिकांश कभी भी निश्चित अभिलेखों के रूप में नहीं रखा गया। इसमें मान्य प्रथाओं, परंपराओं और पूर्वोदाहरणों की एक लम्बी श्रृंखला शामिल है। परन्तु अधिकतर देशों में सामाजिक अवस्थायें इतनी स्थिर नहीं हुई हैं और सामाजिक परिवर्तन इतने शान्ति पूर्वक नहीं हुआ है जितने कि इंगलैंड में। अतः वहाँ पर संविधान बनाने की प्रक्रिया भी अधिक विश्रृंखलित, अधिक ऐच्छिक और बहुधा अधिक हिंसापूर्ण हुई है। प्रजा के गुप्त या खुले विद्रोह के कारण बहुधा राजतन्त्रों को पूरे संविधान को स्वीकार करने और चालू करने के लिये मजबूर होना पड़ा है। दूसरे उदाहरणों में प्रजा अथवा उनके किसी भाग को एक संविधान बनाने की शक्ति रखने वाली एक प्रकार की विधान परिषद को जबर्दस्ती स्थापित करने में सफलता मिली है। अन्य कुछ दूसरे मामलों में लोगों को अपनी इच्छा से ऐसी विधान परिषद बुलाने का अधिकार मिल गया है। १७८७ में अमरीकन और १९१९ में जर्मन संविधान उनके राज्यों के प्रतिनिधियों की सभाओं द्वारा बनाये गए। अमरीकन संविधान संयुक्त राज्य के प्रत्येक राज्य की विशेष रूप से बनी हुई सभाओं द्वारा अनुसमर्थित (Ratified) हुआ। वास्तव में सभी लिखित संविधान लगभग इसी प्रकार की प्रक्रिया से बने हैं। किसी तरह की एक विधान परिषद उनकी रूपरेखा तैयार करती है, और वे उस सभा द्वारा अथवा अनुसमर्थन की एक प्रक्रिया द्वारा कार्यान्वित किये जाते हैं जिसमें प्रजा के लोग प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में भाग लेते हैं।

संविधान में क्या क्या शामिल होता है—संविधान में कौन कौन सी बातें शामिल होती हैं, शायद यह जानने से वैधानिक सरकार की प्रकृति अधिक अच्छी तरह समझ में आ जायेगी। इनमें मुख्य मुख्य बातें निम्नलिखित हैं।

१—प्रत्येक संविधान किसी न किसी रूप में सरकार की शक्ति की सीमा निर्धारित करता है। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि संविधान किसी पूर्ण

रूप से प्रतिनिधि विधान परिषद द्वारा बनाया गया है, अथवा केवल किसी राजा के आत्मत्याग का फल है। दोनों ही हालतों में वह सरकार की शक्ति को निश्चित रूप से मर्यादित कर देता है। सरकार के नाम पर क्या किया जा सकता है और क्या नहीं किया जा सकता यह घोषित कर दिया जाता है और लिख दिया जाता है और कम से कम उस हद तक *संविधान राजनैतिक शक्ति का स्रोत बन जाता है।*

२—एक संविधान नागरिकों के और नागरिक समूहों के, सरकार के प्रति और आपस में, अधिकार और कर्त्तव्यों को निश्चित करता है।

३—एक संविधान यह निश्चित करता है कि सरकार की सत्ता से काम करने में कौन, किस हद तक और किस प्रकार भाग लेगा। पूरी तरह प्रजातन्त्रीय समझी जाने वाली सरकारों में भी सभी लोगों को सरकार के काम में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता और कम प्रजातन्त्रीय स्वभाव की सरकारों में लोगों के अनेक वर्ग शासन में कोई भी आवाज नहीं रखते।

४—एक संविधान राज्य के शासक अधिकारियों के चुनाव के कुछ मौलिक नियमों और कुछ आधारभूत प्रणालियों का भी उल्लेख करता है।

५—एक संविधान साधारण रूप में और कभी कभी अत्यधिक सूक्ष्म रूप में यह सदैव निश्चित करता है कि सरकार का संगठन कैसे होगा, उसकी क्या क्या शक्तियाँ होंगी और उसके *विभिन्न भागों तथा एजेन्सियों में किस प्रकार सामंजस्य होगा।*

६—एक संविधान अपने शब्दों में देश के मौलिक और सर्वोच्च कानून को निश्चित करता है और इसलिये संविधान के विरुद्ध की हुई प्रत्येक बात अनधिकृत और अवैध होती है।

संविधानवाद (Constitutionalism) और स्वेच्छाचारवाद (Absolutism) में अन्तर—

इन बातों से वैधानिक सरकार और स्वेच्छाचारवाद में मौलिक अन्तर जाहिर होता है। वैधानिक सरकार आवश्यक रूप से जनतंत्रीय सरकार नहीं होती परन्तु एक विस्तृत आधार-भूमि वाले संविधान के बिना कोई भी सरकार जनतन्त्रीय नहीं हो सकती।

उदाहरण के लिये, १९४५ के पहले जापान की सरकार जनतन्त्रीय न होते हुए भी वैधानिक सरकार थी। यही बात रूस की सोवियत सरकार के बारे में भी सच है। १९१८ के पहले आस्ट्रिया, जर्मनी और टर्की की सरकारें भी उसी प्रकार की थीं। इन सब सरकारों के अत्यन्त विस्तृत संविधान थे अथवा हैं। परन्तु कल्पना की ऊँची भी उड़ान से उनको जनतन्त्रीय नहीं कहा जा सकता क्योंकि इन संविधानों ने शासन शक्ति का ऐसा वितरण किया, ऐसे सरकारी संगठनों और क्रियाओं को जगह दी जिनसे

कुछ व्यक्तियों, समूहों और वर्गों को अनेक विशेष लाभ, अधिकार तथा शक्ति मिल गई जो कि अधिकांश लोगों को नहीं प्राप्त थी।

दूसरी ओर जनतन्त्र सरकार के प्रयोजनों से राजनैतिक शक्ति और सगठन का ऐसा वितरण है जो कि राजनैतिक सत्ता के उपभोग को सबके लिये खोल देता है और राज्य की कृपाओं, सुरक्षाओं और गारन्टियों को किसी अंश में सब व्यक्तियों, समूहों और वर्गों तक फैला देता है। दूसरे शब्दों में जनतन्त्र हम सबको एक ही राजनैतिक स्तर पर रख देता है और मौलिक रूप में हम सबको समान अधिकार, समान कर्त्तव्य, समान विशेषाधिकार, समान अवसर और समान लाभ देता है। सर स्टफर्ड क्रिप्स (Sir Stafford Cripps) ने जनतन्त्र की इस प्रकार परिभाषा की है "जनतन्त्र से हमारा तात्पर्य एक ऐसी शासन व्यवस्था से है जिसमें प्रत्येक वयस्क नागरिक सब प्रकार के विषयों पर अपने विचार और इच्छाओं को चाहे जिस तरह प्रगट करने में, और इन विचारों के अनुसार निश्चय करने और इन इच्छाओं को पूर्ण करने के लिये अपने अधिकांश साथी नागरिकों पर प्रभाव डालने के लिये समान रूप से स्वतन्त्र है। परन्तु सर क्रिप्स यह भी मानते हैं कि इस प्रकार के जनतन्त्र तेजी से गायब[1] हो रहे हैं और उनका स्थान या तो एकदलीय तंत्र (Totalitarianism) या प्राधिकारवाद (Authoritarianism) लेते जा रहे हैं।

निःसदेह इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जन तन्त्रीय सरकार में हम सब सरकारी कामों के दैनिक व्यावहारिक फल का एकही तरह से और उसी हद तक उपभोग कर सकते हैं क्योंकि दूसरे प्रकार की सरकारों के समान जनतन्त्रीय सरकार में भी समूह-संघर्ष बराबर चलता रहता है और समूह के दबाव या समूह की क्रिया से जनतन्त्रीय सरकार का रुख एक ओर या दूसरी ओर मुड़ जाने की सभावना रहती है। परन्तु फिर भी जनतन्त्र भिन्न-भिन्न व्यक्तियों और समूहों में से सब अनियन्त्रित और अस्वाभाविक अन्तर को निकाल देता है या उनको निकाल देना चाहिये, और व्यक्ति और समूह की प्रेरणाओं को किसी भी अन्य प्रकार की शासन व्यवस्था से अधिक उन्मुक्त रूप में कार्य करने का अवसर देना चाहिये।

1 Democracy Up to date, p 19

अध्याय २

संघवाद का सिद्धान्त

(THE THEORY OF FEDERALISM)

"यदि आधुनिक वैधानिक विचारधारा एक ही राज्य में अनेक सत्ताधारियों को मान्यता देती है तो उनके परस्पर सम्बन्ध के बारे में हम यही कल्पना कर सकते हैं कि वहाँ कर्तव्यों और अधिकारों का एक ऐसा पुंज है जो एक सर्वोच्च और अविभाज्य शक्ति का क्षेत्र बनाता है परन्तु जिसे बहुत से व्यक्ति सम्मिलित रूप से धारण करते हैं। इसके अलावा संघ राज्य में राज्य-सत्ता का ठीक वही रूप होता है जैसा कि ऐकिक राज्य में। भेद केवल राज्य की सत्ता धारण करने वाली संस्थाओं के विशेष रूप में होता है। जोकि एक अकेला सामूहिक व्यक्ति नहीं होता बल्कि एक विशेष प्रकार से संगठित बहुत से सामूहिक व्यक्तियों से बनता है।"

—ह्यूगो प्रूएज

संविधानों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया गया है। इनमें से एक वर्गीकरण ऐकिक और संघात्मक है। राज्यों के परस्पर सम्बन्धों में हाल में हुए परिवर्तन से और विज्ञान की तीव्र प्रगति से राष्ट्रों के राजनैतिक दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन हो गया है। राष्ट्रीय स्वावलम्बन और राष्ट्रीय स्वेच्छाचारिता अथवा स्वतन्त्रता के पुराने विचार छूटते जा रहे हैं और उनके स्थान पर राष्ट्रों की अन्योन्याश्रितता के विचार आ रहे हैं।

राजनैतिक संघों के प्रकार (*Types of Political Unions*)

राजनैतिक संघों का प्रकार अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है और प्रोफेसर सिजविक की यह भविष्यवाणी सच्ची सिद्ध होती जा रही है कि "जब हम भूत से भविष्य की ओर दृष्टि डालते हैं तो मुझे सरकार के रूप के सम्बन्ध में संघ प्रणाली का अधिकाधिक विस्तार सबसे अधिक संभावित राजनैतिक भविष्यवाणी प्रतीत होती है।" प्राचीन तथा मध्यकालीन युगों के इतिहास में भी हमें राजनैतिक संघों के उदाहरण मिलते हैं।

परन्तु ये सब संघ एक ही प्रकार के रूप नहीं जाहिर करते। इन संघों का सावधानी से अध्ययन करने पर हम उनको निम्नलिखित चार प्रकारों में बाँट सकते हैं

(१) व्यक्तिगत संघ (Personal Union)—ऐसे एक संघ का उदाहरण १७१४ से १८३७ तक इंगलैंड और हैनोवर का संघ है। जब जार्ज प्रथम इंगलैंड के राजसिंहासन पर बैठा तो उसने अपनी हैनोवर की पैतृक जागीर अपनी आधीन रखी। १७१४-१८३७ के काल में इंगलैंड और हैनोवर के राज्य का अध्यक्ष एक ही व्यक्ति था परन्तु आन्तरिक और वाह्य मामलो में दोनों देशों ने अपनी स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रखी।

(२) वास्तविक संघ (Real Union)—सन १६०३ से १७०७ के बीच में इंगलैंड और स्काटलैण्ड केवल आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र राज्य रहे जबकि सब विदेशी व्यवहारों में एक राजा के आधीन एक ही राज्य दिखाई पड़ते थे। १७०७ के संघ के अधिनियम (Act of Union) से इंगलैंड और स्काटलैंड आन्तरिक मामलों में भी एक हो गए। अधिनियम की तीसरी धारा में लिखा है "ग्रेट ब्रिटेन के संयुक्त राज्य का प्रतिनिधित्व एक ही संसद करेगी जिसका नाम ग्रेट ब्रिटेन की पार्लियामेन्ट होगा। इस अधिनियम की दूसरी धाराओं ने मुद्रा, माप और भार की समानता स्थापित की। उस समय तक दो राजमुद्राओं का प्रयोग होता था। अब उनके स्थान पर एक सामान्य राजमुद्रा बना दी गई। सबसे महत्वपूर्ण प्राविधान चौबीसवीं धारा में था जिसने संघ को यह विधान बनाकर पूर्ण किया कि इन धाराओं की शर्तों अथवा उनमें से किसी के भी विरुद्ध या प्रतिकूल किसी भी राज्य में कोई भी नियम या अधिनियम संघ के प्रारंभ होने तथा उसके बाद से समाप्त हो जायेंगे और अवैध बन जायेंगे तथा उन राज्यों की पार्लियामेन्टों द्वारा इस प्रकार घोषित कर दिये जायेंगे।" इस तरह यह एक वास्तविक संघ का उदाहरण था जो कि एक ऐच्छिक राज्य की ऐच्छिक स्थापना में समाप्त हुआ।[1]

समूह शासन या अस्थायी संघ (Confederation or Temporary Alliance)

दो या अधिक राष्ट्रों में इस प्रकार का संघ आमतौर से राजनैतिक अथवा आर्थिक विशेष प्रयोजनों के लिये बनाए गए अस्थायी संगठन से उत्पन्न होता है। इन विशेष प्रयोजनों की पूर्ति के लिये सामान्य संस्थाओं की स्थापना की जाती है। निस्सन्देह इस प्रकार की संस्था संख्या में कम होती हैं और उनके निर्णय अधिकतर समाज्ञापक (Mandatory) न होकर सिफारिश करने वाले होते हैं। इस सहयोग से सम्मिलित राष्ट्रों की व्यक्तिगत शक्ति का तो ह्रास नहीं होता, किन्तु केन्द्रित शक्ति एक प्रकार से स्थायी और बलवान बनी रहती है। विदेशी व अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में ऐसे सामूहिक शासन (Confederacy) में दोनों सदस्य-राष्ट्र एक राष्ट्र के समान दिखाई देते

१ शर्मा-फेडरल पोलिटी, पृष्ठ ४।

है और घरेलू या अन्य सामूहिक मामलों में वे स्वतन्त्र रहते हैं। परन्तु सामूहिक शासन को सदस्य-राष्ट्रों के ऊपर दण्ड लगाने का अधिकार नहीं होता। इस कारण कोई भी राष्ट्र अपने लाभ के सामने समूह को ओझल कर सकता है। समूह-राष्ट्र (Confederacy) स्थायी नहीं रहता। उदाहरण के लिये महायुद्धों के पहले *आस्ट्रिया-हंगरी* एक समूह राष्ट्र था जो केवल ४७ वर्ष तक ही चल सका और युद्ध की परीक्षा की कठिनाइयों को पार न कर सकने से *छिन्न-भिन्न हो गया।* ऐसे समूह-राष्ट्रों के उदाहरण और भी हैं, जैसे अमरीकन समूह-राष्ट्र (१७७७-१७८९), स्विटजरलैण्ड का समूह राष्ट्र (१८७४ तक) और जर्मन समूह राष्ट्र (१८७४ तक)।

४—संघ शासन (Federations)—संघ का चौथा और अन्तिम प्रकार संघ-शासन है जिसमें सम्मिलित-राष्ट्र या उपराष्ट्र अपनी स्वतन्त्रता त्याग देते हैं, यद्यपि व्यक्तिगत रूप में उनको कुछ राज्याधिकार अवश्य प्राप्त रहते हैं। बचे हुए अधिकार एक केन्द्रीय सत्ता के सुपुर्द कर दिये जाते हैं जो सामूहिक मामलों में सर्वाधिकारी बन जाती है। ऐसे संघ-शासन के उदाहरण संयुक्त राज्य अमरीका (१७८९ से), स्विटजरलैण्ड (१८८५ से), कनाडा (१८६७ से), आस्ट्रेलिया (१९०१ से), प्रजातन्त्र जर्मनी (१९१९-१९३३ तक), भारत (१९५० से) और सोवियत रूस (१९२३ से) में मिलते हैं।

संघवाद की परिभाषा (*Federation defined*)—संघवाद वह प्रणाली है जिसमें राज्यशक्ति ऐसी अनेक समानाधिकारी संस्थाओं में बंट जाती है जिनमें से *प्रत्येक एक संविधान द्वारा स्थापित व नियमित होती है।*[१] यह विभाजन क्यों आवश्यक है? यह सब जानते हैं कि नागरिक जितनी अपने निकटवर्ती और दैनिक सम्पर्क में आने वाली संस्थाओं से दिलचस्पी रखता है उतनी दूसरी संस्थाओं से नहीं। राष्ट्र और देश की प्रणाली की अपेक्षा नागरिक अपने नगर, जिला और प्रान्त की बातों से *अधिक निकट सम्बन्ध रखता है।* उसके सुख दुख में, प्रतिदिन के व्यावहारिक जीवन में नगर, जिला या प्रान्तीय शासन का अधिक और केन्द्रीय शासन का कम हाथ रहता है। *नागरिक को शिक्षा,* सफाई, सड़कें, प्रकाश, विनोद और दूसरी जीवन की सुविधाओं की आवश्यकता रहती है। इन्हीं से उसका जीवन सुख पूर्ण बनता है। जहाँ पर यह सब प्राप्त है उस स्थान से और वहाँ की संस्थाओं से उसे स्वभावतः प्रेम और निष्ठा हो जाती है। वह अपनी दृष्टि इन्हीं की ओर लगाये रहता है। दूरवर्ती केन्द्रीय शासन का उसके लिये अधिक महत्व नहीं रहता। केवल अप्रत्यक्ष रूप से, और वह भी कभी-

१ शर्मा—फेडरल पोलिटी, पृष्ठ १।

(१) व्यक्तिगत सघ (Personal Union)—ऐसे एक सघ का उदाहरण १७१४ से १८३७ तक इगलैंड और हैनोवर का सघ है। जब जार्ज प्रथम इगलैंड के राजसिंहासन पर बैठा तो उसने अपनी हैनोवर की पैतृक जागीर अपनी आधीन रखी। १७१४-१८३७ के काल में इंगलैंड और हैनोवर के राज्य का अध्यक्ष एक ही व्यक्ति था परन्तु आन्तरिक और वाह्य मामलो में दोनो देशो ने अपनी स्वतन्त्रता अक्षुण्ण रक्खी।

(२) वास्तविक सघ (Real Union)—सन १६०३ से १७०७ के बीच में इगलैंड और स्काटलैण्ड केवल आन्तरिक मामलो मे स्वतन्त्र राज्य रहे जबकि सब विदेशी व्यवहारो मे एक राजा के आधीन एक ही राज्य दिखाई पडते थे। १७०७ के सघ के अधिनियम (Act of Union) से इंगलैंड और स्काटलैंड आन्तरिक मामलो में भी एक हो गए। अधिनियम की तीसरी धारा में लिखा है "ग्रेट ब्रिटेन के सयुक्त *राज्य का प्रतिनिधित्व एक ही ससद करेगी जिसका नाम ग्रेट ब्रिटेन की पार्लियामेन्ट* होगा। इस अधिनियम की दूसरी धाराओ ने मुद्रा, आय और भार की समानता स्थापित की। उस समय तक दो राजमुद्राओ का प्रयोग होता था। अब उनके स्थान पर एक सामान्य राजमुद्रा बना दी गई। सबसे महत्वपूर्ण प्राविधान चौबीसवी धारा में था जिसने सघ को यह विधान बनाकर पूर्ण किया कि इन धाराओ की शर्तों अथवा उनमें से किसी के भी विरुद्ध या प्रतिकूल किसी भी राज्य में कोई भी नियम या अधिनियम सघ के प्रारभ होने तथा उसके बाद से समाप्त हो जायेंगे और अवैध बन जायेंगे तथा उन राज्यों की पार्लियामेन्टो द्वारा इस प्रकार घोषित कर दिये जायेंगे।" इस तरह यह एक वास्तविक सघ का उदाहरण था जो कि एक ऐकिक राज्य की ऐच्छिक स्थापना मे समाप्त हुआ।[1]

समूह शासन या अस्थायी सघ (Confederation or Temporary Alliance)

दो या अधिक राष्ट्रो में इस प्रकार का सघ आमतौर से राजनैतिक अथवा आर्थिक विशेष प्रयोजनो के लिये बनाए गए अस्थायी सगठन से उत्पन्न होता है। इन विशेष प्रयोजनो की पूर्ति के लिये सामान्य सस्थाओ की स्थापना की जाती है। निस्सन्देह इस प्रकार की सस्था सख्या मे कम होती हैं और उनके निर्णय अधिकतर समाज्ञापक (Mandatory) न होकर सिफारिश करने वाले होते हैं। इस सहयोग से सम्मिलित राष्ट्रो की व्यक्तिगत शक्ति का तो ह्रास नही होता, किन्तु केन्द्रित शक्ति एक प्रकार से स्थायी और बलवान बनी रहती है। विदेशी व अन्तर्राष्ट्रीय मामलो में ऐसे सामूहिक शासन (Confederacy) में दोना सदस्य-राष्ट्र एक राष्ट्र के समान दिखाई देते

---

१ शर्मा फैडरल पौलिटी, पृष्ठ ४।

हैं और घरेलू या अन्य सामूहिक मामलो मे वे स्वतन्त्र रहते हैं। परन्तु सामूहिक शासन को सदस्य-राष्ट्रो के ऊपर दण्ड लगाने का अधिकार नही होता। इस कारण कोई भी राष्ट्र अपने लाभ के सामने समूह को अपेक्षा कर सकता है। समूह-राष्ट्र (Confederacy) स्थायी नही रहता। उदाहरण के लिये महायुद्धो के पहले आस्ट्रिया-हंगरी एक समूह राष्ट्र था जो केवल ४७ वर्ष तक ही चल सका और युद्ध की परीक्षा की कठिनाइयो को पार न कर सकने से छिन्न-भिन्न हो गया। ऐसे समूह-राष्ट्रो के उदाहरण और भी हैं, जैसे अमरीकन समूह-राष्ट्र (१७७७-१७८९), स्विटजरलैण्ड का समूह राष्ट्र (१८७४ तक) और जर्मन समूह राष्ट्र (१८७४ तक)।

४—सघ शासन (Federations)—सघ का चौथा और अन्तिम प्रकार सघ-शासन है जिसमे सम्मिलित-राष्ट्र या उपराष्ट्र अपनी स्वतन्त्रता त्याग देते हैं, यद्यपि व्यक्तिगत रूप में उनको कुछ राज्याधिकार अवश्य प्राप्त रहते हैं। बचे हुए अधिकार एक केन्द्रीय सत्ता के सुपुर्द कर दिये जाते हैं जो सामूहिक मामलो में सर्वाधिकारी बन जाती है। ऐसे सघ-शासन के उदाहरण सयुक्त राज्य अमरीका (१७८९ से), स्विटजरलैण्ड (१८४८ से), कनाडा (१८६७ से), आस्ट्रेलिया (१९०१ से), प्रजातन्त्र जर्मनी (१९१९-१९३३ तक), भारत (१९५० से) और सोवियत रूस (१९२३ से) में मिलते हैं।

सघवाद की परिभाषा (Federation defined)—सघवाद वह प्रणाली है जिससे राज्यशक्ति ऐसी अनेक समानाधिकारी सस्थाओ में बट जाती है जिनमें से प्रत्येक एक सविधान द्वारा स्थापित व नियमित होती है।[१] यह विभाजन क्यो आवश्यक है? यह सब जानते हैं कि नागरिक जितनी अपने निकटवर्ती और दैनिक सम्पर्क में आने वाली सस्थाओ से दिलचस्पी रखता है उतनी दूसरी सस्थाओ से नही। राष्ट्र और देश की प्रणाली की अपेक्षा नागरिक अपने नगर, जिला और प्रान्त की बातो से अधिक निकट सम्बन्ध रखता है। उनके सुख दुख मे, प्रतिदिन के व्यावहारिक जीवन, मे नगर, जिला या प्रान्तीय शासन का अधिक और केन्द्रीय शासन का कम हाथ रहता है। नागरिक को शिक्षा, सफाई, सडके, प्रकाश, विनोद और दूसरी जीवन की सुविधाओं की आवश्यकता रहती है। इन्ही से उसका जीवन सुख पूर्ण बनता है। जहाँ पर यह सब प्राप्त है उस स्थान से और वहाँ की सस्थाओ से उसे स्वभावत प्रेम और निष्ठा हो जाती है। वह अपनी दृष्टि इन्ही की ओर लगाये रहता है। दूरवर्ती केन्द्रीय शासन का उसके लिये अधिक महत्व नही रहता। केवल अप्रत्यक्ष रूप से, और वह भी कभी-

---

१ शर्मा—फेडरल पोलिटी, पृष्ठ १।

कभी अपने नगर या प्रान्त से परे केन्द्रीय शासन की ओर अपनी नजर फेरता है। यही कारण है कि प्राचीन युग में, जब आने-जाने के मार्ग दुर्गम थे, शासन का विस्तार छोटा होता था और राज्य छोटे थे। आधुनिक विज्ञान की उन्नति ने जल, स्थल और वायुयात्रा को सुगम और शीघ्रगामी बना दिया है। दूरियाँ अब कम हो गई हैं और पृथ्वी सिकुड़ कर छोटी हुई सी मालूम होती हैं। इसलिये राष्ट्र का विस्तार भी पहले से अधिक बढ़ गया है। अब एक राष्ट्र की सीमा दूसरे राष्ट्र की सीमा से मिली हुई होती है। उनके बीच में अब कोई अपरिचित भूमि नहीं होती, अब वे एक दूसरे से पृथक रहकर एकाकी जीवन नहीं व्यतीत कर सकते। अब सब राज्य परस्परावलम्बी हो गये हैं और उन्होंने पृथकत्व का बाना उतार फेंका है। एक ओर अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की वृद्धि से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता में नियमन आता जा रहा है, दूसरी ओर उस सहयोग के फलस्वरूप आत्म-साक्षात्कार और आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त होता जा रहा है। ऐसी अवस्था में यह स्वाभाविक है कि नागरिक स्थानीय संस्थाओं से निकट सम्बन्ध रखते हुये भी यह जानने को उत्सुक रहता है कि दूसरे नगर, जिले, प्रान्त या देश में क्या हो रहा है। इन बाहर से विरोधी दिखाई देने वाली स्थानीय और राष्ट्रीय भावनाओं में मेल कराने के लिये ही संघ-शासन की कल्पना का प्रादुर्भाव हुआ है।

संघ-शासन की पद्धति राजनीतिज्ञों ने बड़े विचार-विमर्श के पश्चात् निकाली है। इसलिये यह पद्धति उस पद्धति की अपेक्षा नई है जिसको ऐकिक-शासन पद्धति (Unitary System of Government)—के नाम से पुकारा जाता है और जिसका अप्रत्यक्ष रूप में तथा धीरे धीरे विकास हुआ है। वास्तव में "संघवाद बड़े परिपक्व राजनैतिक अनुभव का परिचायक है और उसका संचालन करने के लिए मजे हुए राजनैतिक अनुभव की जरूरत भी है।"[1] इसलिए १७८७ ई० से पहले संघ शासन प्रणाली प्रचलित न थी। सन् १७८७ ई० में बनी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की संघ शासन प्रणाली एक नई योजना थी। यह ठीक है कि प्राचीन इतिहास में भी हमें संघशासन के उदाहरण मिलते हैं परन्तु वे उन छोटे प्रजातन्त्रात्मक राष्ट्रों के सामूहिक शासन थे जो उन्होंने युद्ध में गौरव प्राप्त करने के लिये स्थापित किये थे। प्राचीन काल में बड़े-बड़े साम्राज्य भी थे जिनमें एक सम्राट के आधीन अनेक छोटे-छोटे राजा राज्य करते थे, परन्तु उन साम्राज्यों में संघशासन के गुण न मिलते थे। क्योंकि फ्रीमैन के कथनानुसार "संघ-शासन नाम उन्हीं सदस्य-राष्ट्रों के संघ को दिया जा सकता है जिसका सम्मिलन

१ जेम्स ब्राइस: कान्स्टीटयूशन्स पृष्ठ २७१।

केवल मित्रता से अधिक घनिष्ठ हो और जिसकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की मात्रा इतनी हो कि हम उसे केवल स्थानीय स्वायत्त शासन (Municipal Government) की स्वतंत्रता या नगर स्वतन्त्रता (Municipal Freedom) न कह सकें।"[१]

संघ-शासन में दो शासन-शक्तियाँ होती हैं। पहली शासन शक्ति वह सरकार है जो सम्पूर्ण राष्ट्र पर शासन करती है, उसको केन्द्रीय सरकार या संघ सरकार (Federal Government) के नाम से पुकारते हैं। दूसरी वे अनेक सरकारें हैं जो संघ के सदस्य प्रान्तों या उपराज्यों (States) पर शासन करती हैं। संघ शासन शक्ति प्रत्येक संघात्मक शासन में इन दो प्रकार की सरकारों में बँटी हुई होती है। संघ सरकार बनाने के लिये दो बातें जरूरी हैं। एक ओर संघ के सदस्य-राज्य उन विषयों के शासन में पूरी तरह स्वतन्त्र रहने चाहियें जिनका सम्बन्ध एक सदस्य-राज्य से ही है। दूसरी ओर सब सदस्य-उपराज्य अपनी सामूहिक संस्था के आधीन रहने चाहियें[२] लार्ड चार्नवुड (Lord Charnwood) ने संघ शासन के संविधान की परिभाषा करते हुए कहा है कि "इस संविधान में शासन कार्य का एक भाग राष्ट्र की अनेक प्रान्तीय या जिले की सरकारों द्वारा सम्पादित होता है और दूसरा भाग इन सरकारों से भिन्न सारे राष्ट्र की एक सरकार द्वारा सम्पादित होता है।[२]'

संघ किस प्रकार बनते हैं (Federations How formed)—संघ दो प्रकार से बनते हैं, एकीकरण (Integrtion) द्वारा और वियोजन (Disntegration में) द्वारा जहाँ केन्द्राभिसारी (Centripetal) शक्तियाँ प्रबल होती हैं वहाँ एकीकरण द्वारा संघ स्थापित होता है और इसके विपरीत जहाँ केन्द्रापसारी (Centri- fugal) प्रवृत्ति अधिक बलशाली होती है वहाँ खडन द्वारा संघ शासन स्थापित होता है।

१—राज्यों का एकीकरण (Integration of States)—एकीकरण में अनेक छोटे छोटे राज्य जो संघ स्थापित होने से पहले घरेलू व विदेशी मामलों में पूर्ण या अर्ध स्वतन्त्र होते हैं, अपनी इच्छा से सहयोग करते हुए एक केन्द्रीय नई सरकार की स्थापना करते हैं और उसके हाथों में अपनी शासन शक्ति का कुछ भाग सौंप देते हैं। यह नई सरकार सारे राष्ट्र के लिये महत्वपूर्ण मामलों में शासन शक्ति का प्रयोग करती है। उसको छोड कर बची हुई शासन शक्ति सदस्य-राज्य अपने पास

---

१ दो फैडरल सोल्यूशन पृष्ठ ५५।
२ फ्रीमैन, हिस्ट्री आफ फैडरल गवर्नमेन्ट, पृष्ठ ३।

रखते हैं और अपने घरेलू और व्यक्तिगत मामलों में स्वयं शासन करते है। इससे यह जाहिर है कि जब कुछ राज्य मिलना चाहते है, परन्तु मिल कर एक इकाई बनाना नहीं चाहते तब संघ शासन की स्थापना होती है। इस प्रकार जो संघ शासन बनते हैं उनका एक उदाहरण अमरीकी संघ शासन है। स्विट्जरलैंड और आस्ट्रेलिया के संघ शासन भी इसी रीति से स्थापित हुए थे।

२—एक बड़े राज्य का विभाजन (Division of a big State—वियोजन (Disintegration) में एक बड़े राज्य को तोड़ कर उसको छोटे छोटे उपराज्यों में बांट दिया जाता है। इन उपराज्यों को अपने अपने आन्तरिक या स्थानीय मामलों के शासन का भार सौंप दिया जाता है और इन उपराज्यों को जन्म देने वाला राज्य बचे हुए सारे राष्ट्रों के हित से सम्बन्ध रखने वाले विषयों में सब उपराज्यों पर शासन करता है। १८६७ में कनाडा में यही हुआ। वहाँ पहले ऐकिक शासन था, फिर उसको दो भागों में क्यूबक और ओन्टेरिया के दो प्रान्तों में बाँट दिया गया। दक्षिणी अफ्रीका का संघ स्थापित होने से पहले वहाँ भी ऐकिक शासन था और इसी प्रक्रिया से वहाँ भी अब संघात्मक शासन स्थापित किया गया। यह प्रक्रिया ९ जून सन् १८७१ के उस प्रस्ताव से स्पष्ट हो जाती है जिसको केप (Cape) असेम्बली ने इस विषय में छान बीन करने वाले एक कमीशन की स्थापना के हेतु पास किया था। यह प्रस्ताव इन शब्दों में था—"और क्योंकि यह सुविधाजनक हो सकता है कि उपनिवेश को तीन या अधिक प्रान्तीय सरकारों में बांट दिया जाये जो अपने घरेलू-मामलों का प्रबन्ध करें और एक ऐसे संघ शासन में सगठित हो जायें जिसमें एक सम्मिलित संघ सरकार हो, जिस पर उन मामलों के प्रबन्ध करने का भार हो जो संयुक्त उपनिवेश के सम्मिलित हितों से सम्बन्ध रखते हों"[१] सन् १९३५ के भारतीय संघ शासन विधान से जो भारतीय संघ स्थापित होने जा रहा था उसमें एकीकरण और वियोजन दोनों प्रक्रियाओं को अपनाने की योजना थी। तत्कालीन ब्रिटिश भारत और देशी राज्यों में एकीकरण की प्रक्रिया से और ब्रिटिश भारत के प्रान्तों के कुछ अधिक छोटे प्रान्तों में वियोजन की प्रक्रिया से संघ शासन बनाने का प्रस्ताव उस समय विचाराधीन था। भारतीय गणराज्य का विधान १९५० से ही संघात्मक है।

संघ शासन की विशेषताएँ (Characteristics of Federations)—संघात्मक, सामूहिक, तथा ऐकिक राज्यों का अध्ययन करने से उनकी कुछ विशेषताएं

१—न्यूटन—दी यूनीफिकेशन ऑफ साउथ अफ्रीका, भाग १, पृष्ठ १२।

मालूम पड़ती है। हम यहाँ संघ शासन की विशेषताओं पर विचार करेंगे। हर्मन फाइनर (Herman Finer) के कथनानुसार ये विशेषताएँ इस प्रकार हैं— विधायिनी-शक्ति (Legislative Power) और शासन अधिकारों का विभाजन, उपराज्यों का संघ संसद् में प्रतिनिधित्व, आय सम्बन्धी विशेष प्रबन्ध, दो शासन शक्तियों का साथ साथ एक ही क्षेत्र में अधिकार होना, संघ शासन विधान की कठोरता, न्याय-पालिका का विशेष महत्व और राज्य निष्ठा तथा सम्बन्ध विच्छेद (Secession) का विशेष सिद्धान्त।

दो सरकारों का सहअस्तित्व —(Coexistence of two Governments)

संघ शासन में सारे राष्ट्र की सम्मिलित सरकार, जिसको केन्द्रीय सरकार भी कहते हैं, सदस्य उपराज्यों या प्रान्तों की सरकार के सान्निध्य में रहती है। शासन की य दो शक्तियाँ संविधान से अपने अधिकार प्राप्त करती हैं, इसलिये वे एक दूसरे के अधीन न रह कर विधान द्वारा निश्चित अपने अपने शासन क्षेत्र में स्वतन्त्र रहती हैं। संघ शासन विधान (Federal constitution) और एकिक शासन विधान (Unitary constitution) में यही भेद है कि एकिक संविधान के अन्तर्गत जहाँ एक ही शासन शक्ति मान्य होती है जो सब राजकीय मामलों में बिना अपवाद के सर्वशक्तिशाली और सर्वाधिकारी होती है, वहाँ संघ शासन विधान शासन सम्बन्धी अधिकारों और शक्तियों को उपराज्यों की सरकारों व संघ सरकार के बीच बाँट देता है[१] यहाँ यह तर्क उठ सकता है कि ऐकिक राज्य (Unitary State) में भी अब शक्ति का विकेन्द्रीकरण (Decentralization) बढ़ता जा रहा है और स्थानीय शासन के हेतु स्थानीय संस्थायें बढ़ती जा रही हैं इसलिये संघ और ऐकिक जहाँ राज्य में अन्तर क्या रहा? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि यद्यपि एकिक राज्य में शासन के दो स्तर, एक केन्द्रीय और दूसरा स्थानीय है, परन्तु फिर भी केन्द्रीय शासन का स्थानीय शासन पर अधिपत्य बना रहता है। केन्द्रीय शासन शक्ति ही स्थानीय या नगर शासन (Municipal Government) की सृष्टि करती है और उस शक्ति को यह वैधानिक अधिकार प्राप्त रहता है कि इन स्थानीय शासनों के अधिकारों में वृद्धि या कमी कर दें। यही नहीं बल्कि उसको यह भी अधिकार रहता है कि किसी भी वैधानिक अनौचित्य की दोषी न होते हुए वह इन शासन संस्थाओं को बिल्कुल तोड़ दे। केन्द्रीय शासन शक्ति के ऐसा निश्चय करने पर इस निश्चय के विरुद्ध किसी न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती और न ऐसा निश्चय अवैध घोषित हो सकता

---

१. फेडरल पौलिटी, पृष्ठ ७।

है, क्योंकि केन्द्रीय शासन शक्ति स्वेच्छा से और शासन कार्य में सुविधा के लिये इन सस्थाओं की सृष्टि करती है। इन स्थानीय शासन सस्थाओं के नियम केवल उपविधि (Bye-Law) ही रहते हैं और वे तभी तक लागू होते हैं जब तक कि वे केन्द्रीय शासन शक्ति द्वारा मान्य समझे जाते हैं। सघशासन मे इसके विपरीत शासन के तीन स्तर होते हैं केन्द्रीय, उपराज्य का या प्रान्तीय और स्थानीय (ऐकिक शासन के समान)। उपराज्यो में शासन होने से ही सघ शासन और ऐकिक शासन में भेद हो जाता है। उपराज्यों को अधिकार केन्द्रीय सरकार से नहीं बल्कि सीधे सविधान से प्राप्त होते हैं अर्थात् उपराज्यो की सरकारे केन्द्रीय सरकार से स्वतत्र अस्तित्व रखती हैं। उपराज्यो की सरकारो के कानून उसी प्रकार वैध (Legal) समझे जाते है जैसे केन्द्रीय सरकार के कानून। उनकी मान्यता केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति या इच्छा पर निर्भर नहीं होती।

शक्तियो का विभाजन —(Division of Powers)—सघ शासन सविधान केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारो के अधिकार स्पष्ट रूप से निश्चित कर देता है शासन क्षेत्र के सब विभागो में शासन शक्ति का पूरी तरह विभाजन कर दिया जाता है। व्यवहार में पृथक्करण, बिल्कुल पूर्ण रहता है, उसमें सदेह के लिये कोई जगह नहीं रहती। चाहे कानून बनाने का अधिकार हो या उसको कार्यान्वित करने का अधिकार, न्यायिक अधिकार हो या प्रसाशकीय सबके सम्बन्ध में दोनों सरकारो की शक्ति स्पष्ट रूप से मर्यादित करदी जाती है। आय के श्रोत आदि भी दोनों सरकारो में अलग कर दिये जाते हैं। इस अधिकार विभाजन में आम तौर से यह सिद्धान्त लागू किया जाता है कि राष्ट्रीय महत्व के हितो की रक्षा के लिये आवश्यक अधिकार जैसे प्रतिरक्षा (Defence), विदेशी सम्बन्ध, बाहरी व्यापार पर कर, रेलवे, डाकघर तार आदि सघ सरकार को दिये जाते हैं। भिन्न-भिन्न प्रान्तो के अधीन शासन के वे विभाग तथा विषय होते हैं जिनकी देख रेख प्रान्त की सरकार आसानी से और अधिक लाभ से कर सकती है तथा जिन विषयो में सभी प्रान्तो मे प्रबन्ध की समानता अनिवार्य नहीं है जैसे शिक्षा, न्याय, कला-कौशल, छोटी सडके इत्यादि। सघ तथा प्रान्त दोनों ही की सरकारें अपने अपने कार्य चलाने के लिये अपने टैक्स लगाती है। दोनों के लिये कर के अलग अलग साधन निश्चित कर दिये जाते हैं। प्राय केन्द्रीय सघ सरकार को अप्रत्यक्ष (Tax) कर के साधन ही दिये जाते हैं, जैसे विदेशी व्यापार कर आदि। परन्तु अब यह प्रवृत्ति होती जा रही है कि सघ सरकार को कर के प्रत्यक्ष साधन भी दिये जायें। इस शक्ति विभाजन से सघ और प्रान्तो दोनों ही की सरकारो की स्थिति एक दूसरे

से निरपेक्षित रहती है। एक सरकार दूसरे के अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप कर नहीं सकती।

अवशिष्ट, समवर्ती और निहित शक्तियाँ (Residuary, Conurrent and Implied powers) —इस शक्ति विभाजन के कार्य में संघ संविधान के निर्माता चाहे कितने ही दक्ष हो और कितनी ही चतुराई से काम करें परन्तु फिर भी राज्य के कर्तव्य इतने अधिक हैं और उनकी संख्या में व विस्तार में कालान्तर में इतने परिवर्तन होते रहते हैं कि सब कर्तव्यों के सम्बन्ध में दोनो प्रकार की सरकारो के अधिकारो का सदा के लिये और सब तरह पूर्ण वर्गीकरण और वितरण करना किसी भी संविधान-निर्मात्री समिति या व्यक्ति के लिये असम्भव है। उदाहरण के लिये संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान १७८७ ई० में बनाया गया था जब न वैज्ञानिक आविष्कार हुए थे न आने जाने के आज जैसे साधन ही मिलते थे। संविधान के निर्माता उस समय यह सोच भी न सकते थे कि १९वी और २०वी शताब्दी में वैज्ञानिक आविष्कारो से ऐसे साधन प्राप्त हो जायेंगे कि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के बहुत निकट आ जायगा और आपस में घनिष्टता तथा सहकारिता की मात्रा इतनी बढ जायेगी जैसी आजकल वर्तमान है। अब राष्ट्र के कामो मे जो नवीनता तथा वृद्धि हो गई है उसका उनको अनुमान न हो सकता था और इसलिये उन्होंने उसके लिये संविधान में कोई आयोजन नही किया। दो विश्व महायुद्धों तथा विज्ञान के आश्चर्यजनक आविष्कारों ने राष्ट्रीय राज्य सत्ता को हमारी धारणा में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। एक व्यवहारिक परिणाम यह है कि मौलिक अधिकारो पर अधिक जोर न देते हुए राज्यों और उपराज्य सहयोग के प्रयत्न की जरूरत को अधिकाधिक महसूस करने लगे है। इसका नतीजा यह हुआ है कि संघों में इकाइयों के मामलो में केन्द्र का नियत्रण या निर्देशन बराबर बढता गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका और भारतीय गणराज्य जैसे संघो में तो इकाइयो की सहमति से या अवशिष्ट समवर्ती और निहित शक्तियो के प्रयोग से केन्द्रीय सरकार ने ऐसे बड़े बड़े काम शुरू कर दिये हैं जिनमे कई राज्य प्रभावित होते हैं।

अवशिष्ट शक्तियाँ (Residuary powers)—उपर्युक्त कठिनाई को दूर करने के लिये सब संघ संविधान, जिनमें संयुक्त राज्य अमेरिका का शासन संविधान भी शामिल है, अवशिष्ट व अवर्णित शक्तियों के सम्बन्ध में विधान मे कुछ धारायें बना देते हैं और इन धाराओ के द्वारा उन्हें या तो केन्द्रीय सरकार के या

प्रान्तीय सरकारो के सुपुर्द कर देते हैं। यदि केन्द्रापसारी शक्तियाँ अधिक प्रबल होती हैं तो वे शक्तियाँ उपराज्यो के सुपुर्द रहती हैं। यदि केन्द्राभिसारी शक्तियाँ अधिक बलवान होती हैं तो यह शक्तियाँ केन्द्र को मिल जाती हैं। सयुक्त राज्य अमेरिका में सविधान मे वर्णन की गई शक्तियो से बची हुई शक्तियाँ उपराज्यो के सुपुर्द है क्योकि वहाँ खिचाव केन्द्र से बाहर की ओर को है। कनाडा में ये शक्तियाँ केद्रीय सरकार को मिली हुई हैं क्योकि वहाँ केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की प्रवृति है। भारतीय सविधान की धारा २४८ भारतीय पार्लियामेंट को सब अवशिष्ट शक्तियाँ प्रदान करती हैं।

समवर्ती शक्तियाँ (Concurrent Powers)—सघ विधान में प्राय समवर्ती शक्तियो के बारे में कुछ न कुछ आयोजन रहता है। कुछ मामले ऐसे होते हैं जिनको सघ और प्रान्तीय दोनो सरकारो में से किसी एक का नहीं सौपा जाता या जो प्रान्तीय और राष्ट्रीय दोनो ही दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। इन मामलो में, सघ और प्रान्तीय दोनो सरकारो को व्यवस्था करने और प्रबन्ध करने का अधिकार होता है। दोनो सरकारो में परस्पर विरोध न उत्पन्न हो जाये, इस अभिप्राय से यह निश्चित कर दिया जाता है कि यदि किसी समवर्ती विषय के बारे में दोनो सरकारो में मत-भेद हो अथवा दोनो किसी एकही समवर्ती विषय के बारे में व्यवस्था और प्रबन्ध करे तो राष्ट्रीय व्यवस्था और प्रबन्ध अधिक मान्य होगा और प्रान्तीय व्यवस्था अमान्य रहेगी। ऐसा करने से यह लाभ होता है कि जो विषय महत्व के हैं उनकी व्यवस्था सब उपराज्यो मे एकरूपता रहती है और राष्ट्रीय सरकार के काम मे दृढता और बल रहता है. उदाहरण के लिये जर्मनी के सन् १९१९ के सविधान को तेरहवी धारा मे यह दिया हुआ था कि जिन विषयो में केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारो को समवर्ती शक्तियाँ प्राप्त हैं उनमें यदि दोनो सरकारें असमान कानून बनावें तो केन्द्रीय कानून ही लागू होगा, प्रान्तीय कानून रद्द समझा जायगा। भारतीय सविधान की धारा २४६ के अनुसार वैधानिक शक्तियाँ भारतीय पार्लियामेंट और राज्यो की विधान सभाओ में छाट दी गई हैं जैसा कि सविधान की सातवी अनुसूची (Schedule) मे बतलाया गया है। इस अनुसूची में तीसरी सूची शामिल है जिसमें ४२ बातें शामिल हैं जोकि समवर्ती वैधानिक शक्तियाँ हैं। धारा २५४(२) के अनुसार उपरोक्त मामलो मे राज्य की विधान सभा का कोई भी कानून पार्लियामेंट के बनाये कानून के विरुद्ध होने पर रद्द समझा जायेगा।

निहित शक्तियो का सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers)—यह सिद्धान्त बडे महत्व का है। सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय ने इस

सिद्धान्त का सबसे पहले प्रतिपादन किया था। अमरीका के सन् १७८७ के सविधान में केन्द्रीय या राष्ट्रीय और उपराज्यो की शक्तियों का निश्चित रूप से बयान है और अवर्णित शक्तियाँ उपराज्यो की सरकारो को सौंप दी गई हैं। केन्द्र की उल्लिखित शक्तियाँ बडी सीमित हैं।

सविधान के पहिले अनुच्छेद (Article) की आठवी धारा में काग्रेस की शक्तियों का इस तरह बयान किया गया है।

काग्रेस को टैक्स, ड्यूटी, आयातकर और उत्पादन शुल्क (excise) लगाने का अधिकार होगा व ऋण चुकाने और सारे राष्ट्र की सुरक्षा और योगक्षेम के हेतु आयोजन करने का अधिकार होगा। परन्तु प्रतिबन्ध यह है कि सब ड्यूटियाँ, आयात और उत्पदन शुल्क (Excise) सारे सयुक्त राज्य मे एक समान होंगे।

"सयुक्त राज्य की सम्पत्ति और मान के आधार पर ऋण लेने का अधिकार होगा।

"उपराज्यो विदेशो व इण्डियन जातियो से व्यापार को नियमन करने का अधिकार होगा . ." इत्यादि इत्यादि। आठवी धारा के अन्तिम शब्द यह हैं— "काँग्रेस को उन सब कानूनो के बनाने का अधिकार होगा जो उपर्युक्त शक्तियो को और दूसरी शक्तियो को, जो सविधान ने सयुक्त राज्य की सरकार को या इसके किसी विभाग या अफसर को सौंपी हैं, कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक हो और उचित हो।" इन शब्दो का इतना विस्तृत अर्थ लगाया जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय ने अधिकतर काग्रेस के पक्ष मे ही व्याख्या की है और निर्णय देते समय उस व्याख्या का उपयोग करते हुए निहित शक्तियों के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार चाहे यह उल्लेख न हो कि अमुक शक्ति सरकार को प्राप्त है, किन्तु यदि किसी सरकार को किसी विशेष शक्ति को कार्यान्वित करने के लिये वह शक्ति देना अनिवार्य या उचित है, तो यह समझा जावेगा कि यह शक्ति दूसरी उल्लिखित शक्तियो मे निहित है, या दूसरी उल्लिखित शक्तियों को देते समय अमुक शक्ति को देने का तात्पर्य था। इस सिद्धान्त के व्याख्याता सुप्रसिद्ध न्यायाधीश मार्शल (Justice Marshall) थे। उन्होंने इस सिद्धान्त के द्वारा सयुक्त राज्य अमरीका की सघ सरकार अर्थात केन्द्रीय सरकार की शक्ति बढाई। दूसरे सघ शासन मे भी सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयो पर इस सिद्धान्त का प्रभाव पडे बिना न रह सका है, और इस प्रकार शक्तियो का वर्णन करने में स्वभावत जो कमी रह जाती है, उसके कारण कोई विशेष कठिनाई उत्पन्न नहीं होती।

(क) संघ शासनों में दो सरकारों की नागरिकता (Double Citizen-Ship in Federations)—संघ शासन में प्रत्येक नागरिक को दो सरकारों के प्रति निष्ठा रखनी पड़ती है। प्रान्तीय सरकार के अधिकार क्षेत्र के मामलों में व्यक्ति अपनी प्रान्तीय सरकार का नागरिक रहता है और उसके बनाये हुए कानूनों का पालन करता तथा उसकी नागरिकता के स्वत्वों से लाभ उठाता है। इसके साथ वह संघ सरकार का भी नागरिक होता है और संघ सरकार के बनाये हुए कानूनों का पालन करता है तथा उसकी नागरिकता के सम्पूर्ण अधिकारों का प्राप्त करता है। ऐकिक शासन में व्यक्ति एक ही सरकार का नागरिक होता है। सामूहिक संघ (Confederation) में भी संघ के निवासी केन्द्रीय सरकार की प्रजा नहीं होते। वे अपने अपने राज्य के नागरिक रहते हैं और संघ के कानून या आज्ञायें उनके राज्य की मध्यस्थता से उन पर लागू होती हैं। संघ की आज्ञायें बिना राज्य की अनुमति से प्रजा के लिये मान्य नहीं समझी जाती। राजशास्त्री ब्राइस (Bryce) संघ की द्विनागरिकता (Double citizenship) को इस प्रकार परिभाषा करते हैं —"प्रमुख बात तो यह है कि प्रत्येक नागरिक पर दो सरकारों का आधिपत्य रहता है।" एक तो उस उपराज्य या प्रान्त (कनाडा जैसी) या कैन्टन (स्विट्जरलैण्ड जैसी) की सरकार का आधिपत्य, जिसका वह निवासी है, और दूसरा राष्ट्र या संघ की सरकार का, जिस संघ में वे सब उपराज्य या प्रान्त शामिल हैं जिनकी प्रजा पर संघ–सरकार समान रूप से शासन करती है। इस प्रकार व्यक्ति की दो निष्ठायें रहती हैं, एक अपने प्रान्त के लिए और दूसरी सारे राज्य के लिये। वह दो कानूनों को मानता है, अपनी प्रान्तीय सरकार के कानून और संघ-सरकार के कानून। वह संघ सरकार और प्रान्तीय सरकार के भिन्न भिन्न अफसरों की आज्ञा का पालन करता है और उन करों को छोड़ कर जो उसकी नगर या ग्राम संस्था उस पर लगाती है, दो सरकारों को कर देता है।"[1] ब्राइस के मतानुसार संघ शासन उसी को कहा जा सकता है जहाँ केन्द्रीय या संघ सरकार सदस्य-उपराज्यों की प्रजा पर बिना उपराज्य की सरकार की मध्यस्थता के सीधा आधिपत्य रखती है। इस विषय में न्यूटन का मत भी स्पष्ट है। उसका कहना है कि "संघ सरकार केवल सम्मिलित राज्यों पर ही नहीं बल्कि उनकी प्रजा पर भी प्रत्यक्ष रूप से शासन करती है।" एनसाइक्लोपेडिया ब्रिटेनिका में संघ शासन के नागरिक का दो सरकारों से सम्बन्ध समझाते हुए एक दूसरे लेखक ने लिखा है कि "संघ

१—कन्स्टीट्यूशंस, पृष्ठ २८८।

सरकार अपनी उल्लिखित शक्तियों का उपभोग करने में अपने सदस्य-उपराज्यों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करती है और उन पर शासन करती है। पर उसके साथ साथ संघ के प्रत्येक 'व्यक्ति' से उसका सीधा सम्बन्ध रहता है। —और फलत संघ के निवासी दो सरकारों के संघ सरकार के और प्रान्तीय सरकार के नागरिक रहते हैं।'[1] द्विनागरिकता का यह सिद्धान्त सब संघ-शासनों में बरता जाता है। यहाँ केवल एक उदाहरण देना ही पर्याप्त होगा। संयुक्त राज्य अमरीका के संघ संविधान के १५वें संशोधन अनुच्छेद में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र में उत्पन्न हुए या देशीयकरण (Naturalisation) किये गए और उसके अधिकार क्षेत्र के आधीन सब व्यक्ति संयुक्त राज्य के तथा उस उपराज्य के नागरिक हैं जहाँ वे रहते हैं।

(ख) लिखित और कठोर संविधान (Written and Rigid Constitution)—संघ शासन-विधान की दूसरी विशेषता यह है कि वह अनिवार्य रूप से लिखित तथा परिवर्तन करने के लिये विशेषतया कठोर होता है। यह सच है कि आजकल लिखित संविधान की प्रवृत्ति है, चाहे राज्य का रूप ऐकिक (Unitary) हो या संघ शासनीय (Federal), पर संघ शासन की इस विशेषता से यह अभिप्राय है कि जबकि ऐकिक शासन प्रणाली में अलिखित विधान से भी काम चल सकता है, संघ शासन में लिखित विधान अनिवार्य है। ऐकिक शासन प्रणाली में शासन की सारी शक्ति केवल एक सरकार के पास रहती है और वहां सरकार सर्वाधिकारी होती है, किन्तु संघ शासन में शासन 'शक्ति' दो भिन्न भिन्न एक दूसरे से निरपेक्ष, सरकारों में बँटी रहती है। कुछ विषयों में केन्द्रीय सरकार का और दूसरों में प्रान्तीय सरकार का शासन रहता है। ये विषय या विभाग दोनों सरकारों में अलग अलग रहते हैं। इगलैंड का अब भी ऐसा उदाहरण है जहाँ ऐकिक शासन का लिखित विधान नहीं है। दूसरे ऐकिक शासनों में सब जगह लिखित विधान ही है। परन्तु संघ शासन एक प्रकार से पूर्ण संविदात्मक करार (Contractual Agreement) है। प्रान्तीय सरकारें आपस में एक मत होकर इस निश्चित करार पर पहुँचती हैं और अपने ऊपर संघ सरकार की स्थापना कर उसे निश्चित अधिकार देती हैं। यह करार (Agreement) बड़ा नाजुक होता है और उसमें शक्ति का अधिकारों का बड़ा सूक्ष्म संतुलन रहता है। दो

---

१. भाग १, पृष्ठ २३३। ब्राइस स्टडीज इन हिस्ट्री एण्ड ज्यूरिसप्रूडेंन्स, भाग २ पृष्ठ, ४९० भी देखिये।

व्यक्तियो में भी यदि कोई करार हो तो वह भी सदेह रहित और सब तरह से स्पष्ट नही रहता। यदि वह लिखा जाय तो भविष्य में उनकी शर्तों के बारे में उन दोनो व्यक्तियों को भ्रान्ति हो सक्ती है व झगडा हो सकता है। यही बात उस पेचीदा करार के बारे में सत्य है जो दो राज्य शक्तियो के बीच में होता है। सघ शासन का सविधान सघ सरकार और प्रान्तीय सरकार की शक्तियों की मर्यादा स्थिर करता है, इसलिए दोनो सरकारो में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। सघ-सरकार का या प्रान्तीय सरकार का कानून तभी वैध समझा जाता है जब वह सविधान के अनुकूल हो। ऐकिक शासन में सरकार की शक्तियों पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नही होता। क्योकि वह *स्वय ही शक्तिमान् रहती है। यह डी लोम* (De Lome) के उस कथन से स्पष्ट है जिसमें उसने कुछ भद्दे ढग से ब्रिटिश पार्लियामेंट की शक्ति का सक्षिप्त निरूपण किया है। उसका कहना था कि "अग्रेज वकील इस सिद्धान्त पर चलते हैं कि पार्लियामेंट सब कुछ कर सकती है केवल पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुष नही बना सकती।" सघ शासन में पार्लियामेंट को ऐसा अधिकार कभी भी नही दिया जा सकता।

सघीय सविधान परिवर्तन करने में खास तौर से कठोर होता है। जब सघ की स्थापना की जाती है तो विभिन्न सरकारो के प्रतिनिधि अपने अपने राज्य के अधिकारो का दावा करते है। इन अभ्यर्थनाओ या दावो पर बडी सूक्ष्मता और चतुरता से विचार किया जाता है और समझौते पर पहुँचने से पहले अनेको रुकावटो का सामना करना पडता है। सब अभ्यर्थनाओ का ऐसा सतुलन और *समिश्रण करना पडता है जिससे सब सदस्य-राज्य सतुष्ट रहें और सघ में* सम्मिलित होने को तैयार हो। जितने सघ शासन ससार में स्थापित हुए है उनका इतिहास इन सब बातो का साक्षी है। जब कई प्रान्त या उपराज्य मिलकर सघ (Federation) स्थापित करते है तो इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं कि सघ सरकार को केवल वे अधिकार दिये जायँ जो सम्मिलित शासन के हित में अनिवार्य रूप से आवश्यक है और वे प्रान्त बाकी अधिकार और शासन-शक्ति अपने पास सुरक्षित रखने का पूरा-पूरा उपाय कर लेते हैं। प्रान्त स्पष्ट शर्तों पर ही अपनी स्वतन्त्रता का कुछ अश सघ-शासन को सुपुर्द करते हैं और बाकी स्वतन्त्रता को अपने पास रखते हैं। इन शर्तों का लिखित और स्पष्ट होना जरूरी है जिससे सबको अपने-अपने अधिकारो का स्पष्ट ध्यान रहे और समय बीतने पर उनके सम्बन्ध में भ्रान्ति न हो जाय क्योंकि हमेशा या सविधान में सशोधन होने तक इन्ही शर्तों से शासन का सचालन होता है।

अधिकारो का जब इस प्रकार सन्तुलन हो और बडे प्रयत्न के पश्चात् समझौते पर पहुँचा जाय तो यह जरूरी है कि सविधान का सशोधन सुलभ न हो। यदि सशोधन करना साधारण कानून की तरह सुलभ कर दिया जायेगा तो सविधान निर्माताओ का महत्वपूर्ण कार्य शीघ्र नष्ट हो जायेगा और सघ अधिक समय तक जीवित नही रह सकेगा। इसी कारण जिन शर्तों पर प्रान्त सघ मे सम्मिलित हुए हैं उनको बहुत काल तक सुरक्षित रखने के लिये शासन सविधान मे परिवर्तन कठिन बनाने के लिये उसी सविधान मे उसके परिवर्तन के ढग का निर्देश कर दिया जाता है और वह ढग कठोर होता है। इसका आशय यह नही है कि सविधान मे परिवर्तन अथवा सशोधन (Amendment) हो ही न सके। सविधान के निर्माता कितने ही योग्य और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ क्यो न हो वे सविधान बनाते समय सब अनागत घटनाओ के लिये उचित आयोजन नही कर सकते, क्योकि मानव जाति स्वभाव से ही गतिशील है। कोई सविधान ऐसा नही बनाया जा सकता है जो सब समय के लिये और सब अवस्थाओ के लिये समान रूप से उपयुक्त हो। मनुष्य जाति की आवश्यकताओ मे परिवर्तन होता रहता है। उन्नति के मार्ग में नई कठिनाइयो और नई समस्याओ का सामना करना पडता है जिनसे नया अनुभव प्राप्त होता रहता है। सविधान को क्रियात्मक रूप मे लाने मे ही उसकी कमियाँ मालम होती हैं। वर्तमान युग में तो विज्ञान के नये नये आविष्कारो से मानव जाति की आर्थिक, सामाजिक, अन्तर्राष्ट्रीय व राजनैतिक स्थिति मे दिन प्रतिदिन परिवर्तन होता जा रहा है इसलिये यह जरूरी है कि शासन को परिस्थितियों के अनुकूल बदलने के लिये सघ सविधान में परिवर्तन हो सकना सम्भव होना चाहिये। प्राय ऐसा भी होता है कि सघ सविधान के निर्माता सविधान बनाते समय कुछ गत्थीदार समस्याओ को हल नही कर पाते और उन्हे भविष्य मे सुलझाने के लिये इसलिये छोड देते हैं कि सविधान को कार्यान्वित करने मे जो अनुभव प्राप्त होगा उसकी सहायता से उनको सुलझाना सुगम होगा। इसलिये सघ शासन के सविधान में ही उसके सशोधन की विधि का उल्लेख कर दिया जाता है। सशोधन करने की प्रणाली सब सघ सविधानो म एक सी ही नही होती परन्तु साधारण कानून बनाने की प्रणाली की अपेक्षा वह सब जगह कठोर रहती है। प्राय इस प्रणाली मे ऐसा आयोजन रहता है कि सघ के सदस्यो, दलो और हितों का सघ सविधान के परिवर्तन मे केवल मत प्रकाशन ही न हो सके वरन् उनका थोडा बहुत हाथ इस परिवर्तन अथवा सशोधन मे भी हो। इसलिये यह प्रणाली अधिक पेचीदा और दुष्कर होती है। ऐकिक शासन की सुविधा के लिये जब चाहे बदला जा सकता है। परन्तु सघ सविधान मे परिवर्तन तथा सशोधन केवल उसी दशा मे किया जा सकता है जबकि सघ के हित के लिये

वह संशोधन अत्यन्त आवश्यक हो, और फिर इस संशोधन के करने का ढंग भी मामूली कानूनों के बनाने के ढंग से अधिक कठोर तथा विशेष प्रकार का होता हो।

(ग) न्याय पालिका का विशेष रूप (Special Form of Judiciary)—संघ शासन की तीसरी विशेषता यह है कि उसके अन्तर्गत एक ऐसा सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) स्थापित किया जाता है जो प्रान्तों तथा केन्द्र की ही सरकारों के प्रभाव से मुक्त हो। यह पहले ही कहा जा चुका है कि संघ का शासन संविधान एक प्रकार से संविदात्मक करार (Contractual Agreement) की शर्तों का लिखित वर्णन है। यह वह लिखा हुआ समझौता है जिसमें प्रान्तीय सरकारों और संघ सरकार के बीच अधिकार और शक्तियों का विभाजन किया हुआ होता है और उनके आपस के सम्बन्धों की व्याख्या भी की हुई होती है। यदि संघ की रक्षा करनी है और उसे चिरजीव बनाना है तो इस करार की शर्तों का उचित पालन होना चाहिये। जैसे जनसमूहों के बीच करार की शर्तों को उचित रूप से सुरक्षित रखने के लिये तथा उसे तोड़ने वाले को दण्ड देने के लिये न्यायालय की आवश्यकता होती है वैसे ही केन्द्र की सरकार और प्रान्तों की सरकार के बीच में हुए करार के अर्थात् संविधान की शर्तों के पालन कराने तथा किसी भी सरकार को उसके अधिकारों का अतिक्रमण करने से रोकने के लिये न्यायालय की आवश्यकता होती है। परन्तु कौन सा न्यायालय यह निर्णय करेगा कि सब सरकारें संविधान के अनुकूल व्यवहार कर रही हैं या नहीं और उनके कानून वैध (Legal) हैं या नहीं? कौन सा न्यायालय संविधान की सर्वप्रभुता की रक्षा करेगा, कौन उसकी व्याख्या करेगा और कौन सा न्यायालय इसे इनके मौलिक तत्वों के आधार पर व्यापक रूप देगा? यह कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रान्तीय या संघ सरकार के आधीन रहने वाला न्यायालय इस काम को सुचारुरूप से नहीं कर सकता। उसके निर्णय का कोई मान न होगा। इसलिये संविधान में ही एक स्वतन्त्र न्यायालय के बनने का आयोजन कर दिया जाता है। इसको सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) कहा जाता है। वह सरकारों के आपस के झगड़े निबटाता है और उपरोक्त दूसरी बातें भी करता है। इस न्यायालय के अधिकार शासन विधान में ही स्पष्ट रूप से बयान कर दिये जाते हैं। उन अधिकारों को संविधान का संशोधन करके भले ही बदल दिया जाये परन्तु प्रान्त अथवा केन्द्र की सरकार उन्हें नहीं बदल सकती। जिस संविधान से प्रान्त अथवा केन्द्र की सरकारों को अपने अपने अधिकार और शक्तियाँ प्राप्त होते हैं उसी संविधान से सर्वोच्च न्यायालय को अधिकार और शक्ति प्राप्त होती है। किसी भी ऐकिक शासन में न्यायालय को इस प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं मिलती। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय ही एक ऐसी संस्था है जिसके उपस्थित

रहने से सघात्मक शासन सुचारु रूप से चलता रहता है। सर्वोच्च न्यायालयों ने सब सघ शासनो मे बडे महत्वपूर्ण कार्य किये है, उदाहरण के लिये निहित शक्तियो का सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय ने प्रतिपादित किया था।

(घ) सम्बन्ध विच्छेद का सिद्धान्त (Theory of Secession)—सघ शासन मे राज्यो का सम्मिलन होता है। सम्मिलन से पहले ये राज्य या तो पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं, या अर्द्धस्वतन्त्र। यह सम्मिलन कई प्रकार का हो सकता है। इस सम्मिलन मे मिलने वाली इकाइयाँ समान-पदस्थ रह सकती है, बिल्कुल एक दूसरे के आधीन रह सकती है या कुछ बातो मे आधीन और कुछ में स्वतन्त्र या समान-पदस्थ हो सकती है। यह सम्मिलन चिरकालीन या अल्पकालीन हो सकता है। इस सम्मिलन में से निकलना आसान, कठिन या असम्भव हो सकता है। यह सम्मिलन पृथक् इकाइयो द्वारा अपने अपने स्वार्थसाधन के लिये बनाया हो सकता है या आवश्यकताओ के कारण अनिवार्य या सामूहिक निष्ठा से प्रेरित हो सकता है। राजनैतिक सम्मिलनो या सघो के विविध प्रकारो का वर्णन ऊपर हो चुका है। अब हमे इस बात पर विचार करना है कि सघ शासन मे सघ कहाँ तक अविच्छेद है, अर्थात् सघ बनाने वाली इकाइयों को सघ से सम्बन्ध विच्छेद करने का कहाँ तक अधिकार है?

इस सम्बन्ध मे दो विरोधी मत पाये जाते है। एक ओर तो उन लोगो का मत है जो यह कहते है कि उपराष्ट्र या प्रान्त सघ की स्थापना के पहले पूर्ण सत्तात्मक, स्वतन्त्र और एक दूसरे से अलग इकाई थे। वे अपनी इच्छा से सघ मे शामिल हुए और शामिल होने का अभिप्राय यह था कि सघ में रहकर वे कुछ सुविधाये प्राप्त करेंगे। उनका कहना है कि ज्यो ही वे उपराष्ट्र यह अनुभव करें कि सघ मे रहने से उनको कोई लाभ नही है त्योही उनको सघ से अलग होने का अधिकार है। सयुक्त राज्य अमरीका में इस मत के प्रतिपादक वे लोग थे जो उपराज्यो के अधिकारो की श्रेष्ठता के समर्थक थे। उनकी दृष्टि में सघ के अधिकार उपराज्यो के अधिकारो से गौण है। इस मत के प्रतिपादकों मे प्रमुख केल्हौं (Calhoun) थे। ये लोग कैरोलिना और वर्जीनिया में सघ स्थापित होते समय के प्रस्तावो की भाषा का सहारा लेकर यह कहते थे कि उपराष्ट्र सघ की स्थापना के पहले जिस इकाई अवस्था में थे उसी रूप से वे सघ में आये और इसलिये सघ में शामिल होने के बाद भी उनकी सत्ता में कोई अन्तर नही हुआ और सघ में वे ज्यो के त्यो अलग अलग इकाई के रूप में सुरक्षित हैं। अमरीका में जब पहली बार सम्बन्ध-विच्छेद का प्रश्न उठा तो उसको तत्कालीन विदेशियो

व राजविद्रोह से सम्बन्धित अधिनियमों को रद्द करके टाल दिया गया परन्तु जब सन् १८१२ का युद्ध हुआ और फिर जब सन् १८२८ में कांग्रेस ने विदेशी व्यापार पर कर लगाने का निश्चय किया जिससे दक्षिणी कैरोलिना को हानि होती थी तो यह प्रश्न फिर उपस्थित हुआ। दोनों बार समझौता हो गया और यह विषय टाल दिया गया किन्तु प्रश्न का कोई समुचित सुनिश्चित हल नहीं निकाला जा सका।

दूसरे मत के प्रतिपादकों में मुख्य स्थान डेनियल वैब्स्टर (Daniel Webster) का है। इन लोगों का यह कहना था कि पृथक पृथक राज्यों ने नहीं बल्कि सारे देश के निवासियों ने मिलकर संघ की स्थापना की थी। इस आधार पर वे कहते थे कि उपराज्यों को संघ शासन के कानूनों को समाप्त करने का या संघ से सम्बन्ध तोड़ने का कोई अधिकार नहीं है। संघ सरकार के अधिकारों को श्रेष्ठ और सर्वोपरि मानने के लिये अपने मत के समर्थन में वे १७८७ के संघ संविधान की प्रस्तावना को पेश करते थे। इस प्रस्तावना में लिखा था "हम संयुक्त राज्य अमरीका के निवासी एक सुदृढ़ व अधिक पूर्ण संघ की स्थापना के लिये, न्याय की प्रतिष्ठा के लिये, घरेलू शान्ति के लिये, सार्वजनिक सुरक्षा के लिये और अपने आप को व अपनी सन्तान को स्वतन्त्रता का सुख प्राप्त कराने के लिये दृढ़ संकल्प होकर इस संघ संविधान को संयुक्त राज्य अमरीका के लिये स्वीकार करते हैं।" सन् १८६१ में जो गृह युद्ध (Civil war) हुआ उसमें यही प्रश्न उपस्थित था। दास प्रथा के सम्बन्ध में दक्षिणी उपराज्य राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के दृष्टिकोण से सहमत न थे। लिंकन दास प्रथा को तोड़ना चाहते थे पर दक्षिणी उपराज्यों को इस दास प्रथा से बड़ा लाभ था। उनकी आर्थिक सम्पन्नता इसी दास प्रथा पर निर्भर थी। उत्तरी उपराज्य इस प्रथा के विरुद्ध थे और राष्ट्रपति से सहमत थे। अन्त में झगड़ा यहाँ तक बढ़ा कि युद्ध हुआ। दक्षिणी उपराज्यों को हार माननी पड़ी और उनको अपनी इच्छा के विरुद्ध संघ में रहना पड़ा। इस प्रकार इस प्रश्न का निबटारा बल प्रयोग से हो गया पर तर्क से न हो पाया। स्विट्जरलैंड में भी सन् १८४७ में कैथोलिक धर्मावलम्बी कैन्टनों ने जब संघ शासन की आधीनता को मानने से इन्कार किया और संघ से अलग होना चाहा तो सौन्दरबन्द (Sonderbund) के युद्ध से इस समस्या का समाधान हुआ। पृथक् होने वाले प्रान्तों की सेना को जनरल ड्यूफर ने हरा दिया और उनको संघ से अलग होने से रोका। इस तरह वहाँ भी बल प्रयोग से समस्या सुलझाई गई। पर उसके बाद सन् १८७३ और सन् १८७४ में संघ शासन संविधान में संशोधन करके अलग होने की इच्छा करने वाले प्रान्तों की बहुत सी शिकायतें दूर कर दी गईं।

सम्बन्ध-विच्छेद सिद्धान्त की बडे बडे राजनीतिज्ञो ने कडी आलोचना की है। अमरीका के न्यायाधीश स्टोरी के अनुसार उपराज्यो या प्रान्तो को सघ से अलग होने का और इस तरह सघ को समाप्त करने का अधिकार नही है। इसका कारण वे यह बतलाते हैं कि सघ शासन के शान्तिपूर्वक स्थापित होने से सब अधिकारी साझीदारो के प्रमुख हितो की रक्षा व पोषण होती है, उनके मत के अनुसार ये सघ के साझेदार राज्य नही बल्कि प्रजा है और प्रजा का हित शान्ति और सुव्यवस्था में ही है। उनका कहना था कि यदि व्यक्तियो व उपराज्यो के निजी अधिकारो में हस्तक्षेप किया जाता है तो "व्यक्तिगत अधिकारो व सम्पत्ति की रक्षा इसी से हो सकती है कि सरकार द्वारा इस विशेष प्रयोजन के लिये बनाये गए न्यायालयो में शान्तिपूर्वक अपील की जाय अथवा यदि इन न्यायालयों द्वारा उचित व्यवस्था न हो तो जनता के बहु-सख्यको की नैतिक भावना और सच्चाई का सहारा लिया जाय।" मैककलो (Mc Culloch) और मेरीलैण्ड (Maryland) के बीच मुकदमे में प्रसिद्ध न्यायधीश मार्शल ने भी ऐसे ही विचार प्रकट किये थे। "सरकार जनता से निस्सारित होती है, जनता के नाम पर ही उसका निरूपण और स्थापना होती है, जब उपराज्यो ने जनता के प्रतिनिधियो को सम्मेलन में बुलाया और उनके सामने विधान रखा तो उसमे ही यह स्पष्ट था कि उपराज्यो ने अपने पूर्ण सत्ताधारी सगठित रूप से सविधान को पहले हो स्वीकार कर लिया था, सम्मेलन बुलाकर उनके सामने सविधान को स्वीकृति के लिये प्रस्तुत करने के कार्य में ही राज्यो की स्वीकृति निहित थी। परन्तु उसके बाद जनता को अधिकार था कि वह विधान को स्वीकार करती या रद्द कर देती। जनता का निर्णय अन्तिम निर्णय होता। इस निर्णय का सरकारो द्वारा अगीकार करना आवश्यक नही था, न प्रान्तीय सरकारें उसे अस्वीकार कर सकती थीं। इस तरह स्वीकृत हो जाने पर सविधान पूर्ण आबद्धकारी हो गया और उपराज्यो की सत्तायें उससे पूर्णतया बाध्य हो गई—इसलिये सघ सरकार निश्चय ही जनता की सरकार है और वह वास्तव में, रूप और तत्व दोनों को देखते हुए जनता से ही निस्सारित हुई है। जनता ने ही इस सरकार को इसके अधिकार सौंपे हैं और यह सरकार *बिना किसी मध्यस्थता के अपनी जनता पर इन अधिकारो का उनके ही* कल्याण के लिये उपभोग करेगी।"[1]

स्विट्जरलैंड में सविधान (१८७४) का पहला अनुच्छेद इस प्रकार है "स्विट्जरलैंड के पूर्ण सत्ताधारी केन्टनो की जनता इस सघ में सम्मिलित होकर

१ थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस आफ माडर्न गवर्नमेंट, पृष्ठ ८२८, फुटनोट।

स्विस सघ का निर्माण करती है।" इसी प्रकार जर्मनी के सन् १९१९ के सविधान में यह कहा गया है कि सारे शासनधिकार जनता से उद्भूत है। सघ की लोकसत्ता के सम्बन्ध में इन स्पष्ट उल्लेखों के अतिरिक्त, हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि कोई भी शासन सविधान अपने बनाए हुए राज्य का विलयन करने वाली धारा नही रख सकता और न कानूनी रूप से इसे विलयन की आज्ञा ही दे सकता है।

"जब कभी कोई एक या एक से अधिक उपराज्यीय सरकारें सघ में अपने आप को अल्पसख्यक दल में पावें और उनको यह प्रतीत हो कि उनके हितो की किसी केन्द्रीय सरकार के कानून से भारी हानि हो रही है, तो अल्पसख्यक दल को इन्तजार करना चाहिए और बातचीत के द्वारा अपना मत प्रकाशित करके ऐसा प्रयत्न करना चाहिए, कि वह कानून उसके अनुकूल बना लियें जावें। पर जब एक बार सघ की सारी जनता ने उस केन्द्रीय सस्था की स्थापना कर दी तब उस सरकार को सघ से अलग होने का कोई भी अधिकार नही है, क्योकि यदि उपराज्यो को अलग होने का अधिकार दे दिया जाये तो सारे राज्य-सगठन की स्थिरता ही नष्ट हो जाने का भय है और निश्चयपूर्वक यह नही कहा जा सकता कि इस विच्छेद का क्या अन्त हो। जिस सघ में सब मेल कराने वाले हितों को व मार्गों को स्पष्ट करके व उनके विच्छेद कराने वाले कारणो से अधिक शक्तिशाली और पुष्ट बनाकर सघ शासन की स्थापना की गई हो वहाँ प्राय ऐसे झगडे नही उठ सकते जिनके कारण कोई उपराज्य सघ से अपना सम्बन्ध तोडने पर बाध्य हो जावे। वास्तव में यदि कोई सघ उपराज्य के पृथक होने से भग हो जाये तो यह समझ लेना चाहिये कि वह सघ वास्तव में सघ न था, केवल एक मित्र सगठन मात्र था।"[१] सघ शासन का भग न हो सकना अब सभी स्वीकार करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर जब भारत में सघ शासन की स्थापना के सम्बन्ध में बातचीत चली तो बर्मा को भारतीय सघ में शामिल करने के प्रश्न पर भी विचार हुआ। उस समय यह स्पष्ट कर दिया गया था कि एक बार सघ में जाने के बाद बर्मा सघ से अलग न हो सकेगा।

सघ शासन के अनुकूल कारण (Factors that Promote Federal Union)—जिन परिस्थितियो व इच्छाओ के वश में होकर कई छोटे राज्य सघ में सगठित होने को तैयार होते हैं, या कोई एक बडा राज्य अपने

---

१ फैडरल पोलिटी, पृ० २४-२५।

को छोटे छोटे भागो में विभाजित कर सघ शासन प्रणाली को अपनाने का निश्चय करता है, उनका अध्ययन बडा महत्वपूर्ण है। सघ शासन का इतिहास इस बात के साक्षी हैं कि सघ शासन भिन्न भिन्न कारणो से स्थापित हुए। इन कारणो की विभिन्नतायें विशेष परिस्थितियो और हेतुओ पर निर्भर रहती है। हम यहाँ कुछ ऐसे मुख्य साधनों पर विचार करेंगे जिन्होंने सघ शासन की स्थापना में योग दिया है।

(१) भौगोलिक निकटता (Physical Contiguity)—यदि सम्मिलित उपराज्य एक दूसरे के निकट न हो तो सघ स्थायी रूप से सुदृढ नही रह सकता। राज्यो में सहकारिता का भाव तभी पैदा होता है जब वह एक दूसरे के समीप रहते हैं क्योकि तब उन्हे बहुत सी बातो में एक दूसरे पर निर्भर रहना पडता है। पास पास रहने से ऐसा अप्रत्यक्ष परन्तु महत्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो जाता है जो आमतौर से उन दो राज्यो मे नही होता जो एक दूसरे से दूरी पर स्थित हो।"[1] हैन्सियाटिक लीग (Hanseatic League) इसीलिये बहुत समय तक जीवित न रह सकी क्योकि इसमें सम्मिलित नगर इधर उधर एक दूसरे से दूर दूर बिखरे हुए थे। विधान निर्माताओ की बहुत कुछ इच्छा होने पर भी न्यूजीलैंड आस्ट्रेलिया के सघ में इसलिये शामिल न किया जा सका क्योंकि एकीकरण की प्रवृत्तियाँ समुद्र की दूरी से ढीली पड गयी। इन्ही कारणो से आरम्भ में न्यूफाउन्डलैंड ने कनाडा के सघ मे शामिल होने का निश्चय न किया। हैमिल्टन (Hamilton) ने प्रसन्न होकर कहा था कि "अमरीका एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न व पृथक स्थल समूहो से मिलकर नहीं बना है परन्तु स्वतन्त्रता की हमारी पश्चिमी सन्तान का देश एक विस्तृत जुडा हुआ और उपजाऊ भूमि प्रदेश है?"[2] दक्षिणी अफीका के सघ बनने मे आर० एच० ब्राण्ड (R. H. Brand) ने भी इन्ही कारणो को हेतु बतलाया था। "देश यद्यपि विस्तृत है पर प्रकृति से ही इसको इकाई बने रहने का सौभाग्य प्राप्त है। उसकी बनावट एक सी है और इसके एक भाग व दूसरे भाग में कोई प्राकृतिक रुकावटें नही हैं। यहाँ के निवासी एक राजनैतिक सगठन मे रहते हैं और युद्ध से पहले भी रहते थे।"[3] इसमें सदेह नही कि हाल ही मे पाकिस्तान के निर्माण ने भौगोलिक सार्थकता के सिद्धान्त को एक चुनौती दी है क्योंकि

१—फेडरल पौलिटी, पृ० १०२।
२—फेडरलिस्ट, न० २।
३—यूनियन आफ साउथ अफीका, पृष्ठ ८९।

बंगाल का एक भाग जिसे पूर्वी पाकिस्तान कहते हैं, पाकिस्तान का एक भाग है जोकि उस से सैकड़ो मील दूर स्थित है। इतिहास के आधार पर यह बात निश्चयपूर्वक कही जा सकती है कि यह परिस्थिति सुव्यवस्थित रूप में अधिक समय तक नहीं चल सकती। पूर्वी पाकिस्तान या तो भारतवर्ष का ही भाग हो जायेगा अथवा वह एक स्वतन्त्र राज्य के रूप मे ही परिणत हो जायेगा।

(२) आर्थिक प्रेरणायें (Economic Incentives)—संघ-शासन बनाने में आर्थिक लाभ ने बड़ा योग दिया है। बहुत से संघो के निर्माण का आधार ही यही था कि उनकी स्थापना से व्यापार, मुद्रा कर, आने जाने के मार्ग आदि के सम्बन्ध में कानूनों की समानता होगी और निरर्थक रुकावटों के हट जाने से आर्थिक स्थिति सुधर जायेगी। अमरीकन राज्यो का संघ बनने से जो आर्थिक लाभ होंगे उन पर विचार करते हुए हैमिल्टन ने लिखा था कि "व्यापार की शिरायें प्रत्येक भाग में भरी पूरी रहेंगी और प्रत्येक भाग की वस्तुओं के विविध बहाव से इनमें शक्ति और पुष्टता आवेगी। विविध राज्यों के उत्पादन की विभिन्नता से व्यापारिक उद्योग के लिये विस्तृत क्षेत्र खुल जायेगा।" कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, हैन्सियाटिक लीग-और जर्मन संघ के निर्माता संघ से प्राप्त आर्थिक लाभों को अच्छी तरह जानते थे। इन सब संघ शासन विधानों में ऐसी धारायें हैं जो इस बात को पर्याप्त समर्थक हैं। इस बात के समझने में कल्पना शक्ति को अधिक उड़ान की जरूरत नहीं है कि संघ शासन से एक विस्तृत क्षेत्र खुल जाता है, क्रय-विक्रय की सुविधायें बढ़ जाती हैं और सब सदस्य राज्यों को एक दूसरे से व्यापार में अधिक आसानी होती है। व्यापारियों को एक ही देश में स्थित एक राज्य की सीमा में पैर रखते ही भिन्न मुद्रा, तोल आदि के माप और भिन्न व्यापार सम्बन्धी नियमों को बरतने में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उनसे इस सुविधा का महत्व स्पष्ट हो जायेगा। इसलिये यह जाहिर है कि आर्थिक सुविधाओं का लाभ संघ शासन बनने में एक बड़ा कारण सिद्ध हुआ है।

(३) राजनैतिक हेतु (Political Motives)—संघ शासन की स्थापना के राजनैतिक लाभों को सभी जानते हैं। इन राजनैतिक लाभों में विशेषतया बाहरी आक्रमणों से रक्षा, वैदेशिक सम्बन्ध और शासन व्यय में बचत उल्लेखनीय है। इनके कारण बहुत से संघ शासनों की रचना हुई। प्राचीन काल में यूनान के नगर राज्यों ने पहले मैसीडोनिया और उसके बाद रोम की बढ़ती हुई शक्ति से अपनी रक्षा करने के लिये और समय पड़ने

पर उसका सामना करने के हेतु अपना एक संगठन बनाया। आस्ट्रियन सम्राट् का सामना करने के लिये इटली मे लाम्बार्ड लीग और स्विट्जरलैंड में संघ शासन की स्थापना हुई थी। स्पेन के आक्रमण को रोकने के लिये फ्रांस के उत्तर में नीदरलैण्ड संघ (Netherlands Confederacy) बनाया गया था। अमरीका में हैमिल्टन ने ठीक ही कहा था कि "संघ से प्राप्त सुखो की अनुभूति की सुदृढ कल्पना ने लोगों को बहुत प्राचीन समय में ही संघ शासन स्थापित करने के लिये और उसकी रक्षा कर उसे चिरस्थायी बनाने के लिये प्रेरित किया था।"[1] आस्ट्रेलिया में राजनैतिक भावना से प्रेरित होकर स्वतन्त्र उपनिवेशो ने संघ की स्थापना की। फेडरलिस्ट में जे (Joy) ने अमरीकन जनता से अपील करते समय उसका ध्यान यूरोपियन राज्यो की साम्राज्य लोलुपता की ओर आकर्षित किया और उसका सामना करने के लिये अपने आपको संघ शासन में संगठित कर शक्तिशाली बनाने पर जोर दिया था। उन्होंने घोषित किया कि "यदि वे (यूरोपियन राज्य) देखेंगे कि हमारी राष्ट्रीय या संघ सरकार योग्य व सामर्थ्यवान् है और उसका शासन सुव्यवस्थित है, हमारे व्यापार का बुद्धिमानी से नियमन होता है, हमारी सेना सुशिक्षित और सुसंगठित है, हमारी आर्थिक स्थिति सुदृढ और हमारे आय के साधन भली-भांति व्यवस्थित हैं, हममें दूसरो का स्थायी विश्वास है, हमारी प्रजा स्वतन्त्र, सुखी और एक मत है, तो वे हमें अप्रसन्न करने के बजाय हमसे मित्रता करने के लिये अधिक उत्सुक होंगे। इसके विपरीत यदि वे दूसरी ओर यह देखेंगे कि हमारा शासन ढीला है और हम अयोग्य सरकारो की अनाथ प्रजा हैं (जहाँ प्रत्येक 'राज्य' अपनी सुविधा के लिये गलत और ठीक जो चाहे सो करता हो) या हम तीन या चार स्वतन्त्र और शायद आपस में लडने वाले राज्य समूहों में अपने आपको बांटे हुए हैं जिसमें कोई ब्रिटेन की ओर झुका हुआ है, दूसरा फ्रांस की ओर और तीसरा स्पेन की ओर जिससे ये तीनों मिलकर हमको आपस मे लडाते रहें तो इन लोगों की दृष्टि मे अमरीका का रूप दयनीय जँचेगा। कितनी आसानी से वह लोगों की घृणा का ही विषय न बनेगा बल्कि उनके अपमान का भी शिकार बन जायेगा और कितने थोड़े समय के बाद हमारा मँहगा अनुभव पुकार पुकार कर कहेगा कि जब कोई कुटुम्ब या जन समूह फूट का शिकार बनते हैं तो वे किस तरह अपने ही हाथों अपना

१ फेडरलिस्ट, न० २।

नाश कर बैठते हैं।"[1] अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बड़े राज्य की जो सुनवाई होती है वह छोटे राज्य की नहीं होती। इस कारण भी छोटे छोटे राज्य मिलकर बड़ा राज्य बनाने के लिये तैयार रहा करते हैं। इसके अलावा संघ शासन में खर्चे की भी बचत रहती है क्योंकि संघ स्थापित होने से उपराज्यों को अलग अलग निजी स्थल, जल और वायु सेना रखने की आवश्यकता नहीं रहती और न विदेशी मामलों में उन्हें अपने निजी दूत व दूतावास रखने पड़ते हैं। यह काम और इसका खर्च सब संघ सरकार पर छोड़ दिया जाता है जो सब उपराज्यों की रक्षा के लिये एक ही राष्ट्रीय सेना संगठित करती है।

जब वीमर (Weimar) में युद्ध के पश्चात् जर्मनी के राजनीतिज्ञ संविधान बनाने के लिये एकत्रित हुए तब उनके सम्मुख यही राजनैतिक हेतु थे। उनमें एक ऐसा दल था जो रियासतों के अलग होने का समर्थक था, जिससे प्रशिया छिन्न भिन्न हो जाये। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिये ही उन्होंने संघ शासन की स्थापना की। भारतवर्ष में जब पहले पहल सन् १९३५ के शासन विधान के लिये बातचीत चल रही थी तभी यह निश्चित हो गया था कि भारतवर्ष में संघ शासन की स्थापना होनी चाहिये जिसमें रियासतें और प्रान्त दोनों शामिल हों। यह विचार किया जाता था कि समस्त भारतवर्ष विदेशी आक्रमणों से अपनी रक्षा अच्छी तरह कर सकेगा, एक सुदृढ़ व स्थिर वैदेशिक नीति अपना सकेगा और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रभावशाली बनने में सफल हो सकेगा।' यदि ऐसा न होकर उसके कई स्वतन्त्र इकाई राज्य होते तो ये सुविधायें न होतीं, न रक्षा हो सकती, न संसार में अलग अलग छोटे राज्य का कोई प्रभाव या मान होता। इन्हीं कारणों से हम आज देखते हैं कि भारत के संविधान निर्माताओं ने इस देश के संविधान को संघात्मक रूप दिया है।

जातीय और सांस्कृतिक हेतु (Racial and Cultural Factors)—जिस देश में एक ही जाति व संस्कृति के लोग रहते हों, एक ही धर्म माना जाता हो और एक ही भाषा बोली जाती हो वहाँ ऐकिक शासन का सफल होना सम्भव है। पर जहाँ धर्म भाषा व जाति की अनेकता है वहाँ ऐकिक शासन इस विभिन्नता को और भी अधिक महत्व देता है जिससे देश की उन्नति रुक जाती है। देश में स्थित भिन्न भिन्न जाति, धर्म व संस्कृति वाले समूहों व प्रान्तों को एक सूत्र में बाँध कर रखना ही यदि श्रेयस्कर समझा जाय तो संघात्मक शासन प्रणाली सबसे उपयुक्त सिद्ध होगी। कनाडा में ऐसे ही प्रयोजन को लेकर

---

१ फ़ेडरलिस्ट, नं० ४, नं० ३ भी देखिये।

सन् १८६७ में सघ शासन स्थापित किया गया था। वहाँ फ्रेंच और अंग्रेज दो बडी प्रमुख जातियाँ थी जिनमें बडी पुरानी फूट चली आ रही थी और जिनका रहन-सहन, विचार-शैली, भाषा व धर्म एक दूसरे से भिन्न थे। सघ शासन में इस विभिन्नता को मान लिया गया और उसको उचित स्थान देकर एक सयुक्त राज्य की स्थापना कर दी गई। इससे पहले ऐकिक शासन प्रणाली में उनकी भाषा, सस्कृति और जाति की विभिन्नता पग-पग पर शासन के कार्य में रोडा अटकाती थी और शासन के शान्ति पूर्वक सचालन करने में बाधक सिद्ध हो रही थी। सन् १८६७ के नार्थ अमेरिका ऐक्ट के पास होने से ऐसे सघ-शासन की स्थापना की गई जिससे इन दोनो जातियो में बहुत कुछ सामजस्य पैदा हो गया। यही बात स्विट्ज़रलैंड के बारे में भी सत्य सिद्ध हुई। वहाँ भिन्न भिन्न कैण्टनो में फ्रांसीसी, जर्मन और इटैलियन लोग रहते हैं और अपनी अपनी भाषायें बोलते हैं। उनका धर्म भी एक दूसरे से भिन्न है। ऐसी अवस्था मे इन कैण्टनो को ऐकिक शासन सूत्र में बाँधकर सुव्यवस्थित रखना असम्भव था। उनकी पारस्परिक विभिन्नता की ओर से आँख न मूद कर उसका उचित आदर किया गया और फिर सघात्मक सिद्धान्तो के आधार पर उनमें सामजस्य स्थापित कर १८७४ ई० में स्विस सघ की स्थापना कर दी गई। जर्मन प्रजातन्त्र के सघ शासन सविधान ने जर्मन उपराज्यो की विभिन्न आवश्यकताओ को उचित मान देकर उनको पूरा करने का सफल प्रयत्न किया। भारतवर्ष में सघ शासन स्थापित करने में भाषा, धर्म और सस्कृति की अनेकता भी कारण है।

सघवाद के गुण व दोष (Merits and demerits of Federalism)--सघ शासन प्रणाली का मूल्यांकन करने में राजनीति शास्त्रियो में मतभेद है, कुछ राजनीतिशास्त्री इसे दोषपूर्ण बतलाते हैं और कहते हैं कि इस प्रणाली से सरकार निर्बल रहती है क्योंकि प्रजा की राज्यनिष्ठा दो सरकारो के प्रति बँटी रहती है। यहाँ हम कुछ प्रमुख और परस्पर विरोधी विचारको के मतो का मूल्यांकन करके एक सुनिश्चित मत पर पहुँचने की चेष्टा करेंगे।

आचार्य डायसी (Prof. Dicey) **की आलोचना**—आचार्य डायसी का कहना है कि सघ शासन में दो उपराज्यों में से एक प्रबल राज्य इतना अधिक सम्पन्न हो जायेगा कि उपराज्यो की समानता का उल्लघन कर दूसरो पर अपना प्रभुत्व जमा लेगा अथवा बहुत से छोटे राज्य मिलकर सबसे बडे और शक्तिशाली सदस्य राज्य पर सघ के करो को बढाकर व दूसरे उपायो से सघ का सारा बोझ डाल देंगे और उससे स्वय बच जायेंगे। परन्तु व्यवहार में यह देखा गया है कि यदि सघ का शासन विधान को चतुराई से बनाया जाय तो इन दोनो अनिष्टो की सभावना नहीं

रहती। यह सच है कि इस बात का ध्यान युद्ध से पहले के जर्मन साम्राज्य के शासन विधान को बनाने मे नही रखा गया था। सबसे प्रभुत्वशाली सदस्य राज्य प्रशिया दूसरे छ उपराज्यो की सहायता से बचे हुए छोटे उपराज्यो पर अपना प्रभुत्व जमाये रखता था और ये शक्तिहीन और असहाय बने रहते थे। उस शासन विधान की इस कमी को देखकर लोवेल (Lowell) ने कहा था कि इन राज्यो मे जो समझौता था वह वैसा ही था जैसा कि एक सिह, आधी दर्जन लोमडियो और बीस चूहो मे हो। आस्ट्रिया-हगरी के सघ मे हगरी अपनी सगठित मैग्यार प्रजा के बल पर तीस प्रति सैकडा सघ शासन का खर्चा देने के बदले मे सघ की सत्तर प्रतिशत शक्ति का उपभोग करता था। आस्ट्रिया का क्षेत्रफल हगरी से अधिक था और उसकी जनसख्या भी हगरी की जनसख्या से अधिक थी, परन्तु भाषा और जाति के भेद के कारण आस्ट्रिया की शक्ति छिन्न भिन्न रहती थी।

आचार्य डायसी ने दूसरा दोष यह बतलाया है कि सघ शासन मे एक निष्ठा का अभाव रहने से राज्य की इकाइयो मे बराबर तनातनी बनी रहती है और प्राय मुकदमेबाजी तक की नौबत आ जाती है। सघ शासन के विरुद्ध इस अभियोग मे ऊपरी दृष्टि से देखने पर बहुत कुछ तथ्य दिखाई देता है, पर यह बात ध्यान मे रखनी चाहिये कि यह कोई अनिवार्य दोष नही है। यदि सघ का शासन विधान चतुराई से बनाया जाय तो यह दोष बहुत कुछ दूर हो सकता है और एक शक्तिशाली सघ की स्थापना हो सकती है। आचार्य डायसी आगे कहते हैं कि यदि कोई सघ सफल हुआ है तो वही जो एक कदम और बढाने पर ऐकिक शासन का रूप धारण कर ले। इस कथन का अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि सघ शासन के सफल होने से विभिन्नतायें मिटकर एकता स्थापित हो जाती है। दूसरे शब्दो में यह कहा जा सकता है कि सघ शासन में ऐसी राजनैतिक सस्था की स्थापना नही की जाती है जो अपने विरोधी शक्तियो को उत्पन्न करके अपने ही बल को कम कर दे पर उसके द्वारा एक ऐसे शक्तिशाली राज्य की उत्पत्ति होती है जो वास्तव मे ऐकिक शासन न होते हुए ऊपर से ऐसा ही दिखाई दे।

ब्राड की आलोचना (Brand's Criticism)—सघ शासन को दोषपूर्ण बतलाने वालो मे ब्राड (Brand) का नाम भी लिया जाता है। उनका कहना है कि "सघ शासन प्रणाली मानव निर्बलता को अनिवार्य मानकर अपनाई गई है।" वे आगे चल कर कहते हैं कि "यदि इसमे अच्छी दूसरी शासन प्रणाली न मिल सके तो सघ शासन प्रणाली के स्वीकार कर लेने के सिवाय कोई चारा भी नही है परन्तु इसकी असुविधायें स्पष्ट हैं। इससे सरकार के अगो के टुकडे हो जाते हैं जिनमें तनातनी और निर्बलता आ जाती है। यह प्रणाली एक नये देश के निवास का

मर्यादित और गति हीन बना देता है।"[1] इस कथन में अप्रत्यक्ष रूप से किन्हीं विशेष परिस्थितियों में संघ शासन की उपयोगिता को मान ही लिया गया है क्योंकि इसमें यह अभिप्राय स्पष्ट होता है कि जहाँ ऐकिक शासन असम्भव हो वहाँ संघ शासन ही एक मात्र विकल्प है।

आचार्य लास्की (Lashi) द्वारा प्रशंसा—संघ शासन की प्रशंसा भी उतने ही बड़े कुशल राजनीतिशास्त्रियों ने की है। इनमें आचार्य लास्की का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उनका तो यहाँ तक कहना है कि यदि सामाजिक संगठन को यथेष्ठ लाभदायक बनाना है तो उसका रूप संघात्मक ही होना चाहिये। इस संघात्मक बनावट में केवल मैं और मेरा राज्य या मेरी जाति और मेरा राज्य ये ही सम्बन्ध नहीं होते पर ये सब और उनका पारस्परिक सम्बन्ध भी इसी के अन्तर्गत रहता है।[2] इसके पश्चात् वे यह कह कर इस कथन को समाप्त करते हैं कि क्योंकि समाज संघात्मक है इसलिये राज्यतंत्र भी संघात्मक ही होना चाहिए।[3] उनके कथनानुसार "राष्ट्रीय राज्य ही सामाजिक संगठन की अन्तिम इकाई नहीं है। उसकी प्रभुता (Sovereignty) मानव समाज के ऐतिहासिक अनुभव का केवल एक रूप है और समाज की शक्तियों के दबाव ने उसको किसी भी रचनात्मक प्रयोजन के लिये निरर्थक व असामयिक सिद्ध कर दिया है। यह ठीक है कि किसी भी राज्य को उन सब विषयों में स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए जिसका प्रभाव उस राज्य के निजी क्षेत्र तक ही सीमित हो, परन्तु होता यह है कि ज्यों ही वह अपनी इच्छा को कार्यान्वित करना आरम्भ करता है उसके स्थानीय हितों और उससे बाहर की दुनिया के हितों में टक्कर होने लगती है।"[4] इसमें सन्देह नहीं कि अब दुनिया अन्तर्राष्ट्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक सहयोग के क्षेत्र में पदार्पण कर रही है और वर्तमान युग में किसी राज्य को सम्पूर्ण प्रभु या सत्ताधिकारी (Sovereign) कहने का दावा कोई विरला ही साहसी पुरुष करेगा।

संघवाद के बारे में अनुभव क्या बतलाता है ? (What Experience says of Federalism)—व्यवहार में संघ शासन उतना निर्बल सिद्ध नहीं हुआ है जैसा आचार्य डायसी ने बतलाया है। स्विट्जरलैंड के केन्टन यदि संघीभूत न हुए होते तो वे सदैव यूरोप की अशांति का कारण बने रहते। इनके सम्बन्ध में ब्रुक्स

१—दी यूनियन आफ साउथ अफ्रीका, पृ० ४६–४७।
२—ग्रामर आफ पौलीटिक्स, पृ० २६२।
३— ,, ,, ,, पृ० १७१।
४—गवर्नमेन्ट एण्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० १८।

(Brooks) ने ठीक ही कहा था कि "जो लोग अत्यधिक भौगोलिक बाधाओ से विभाजित हो, जिनमे भाषा व धर्म की भी इतनी भिन्नता हो और जो जाति और रीति रिवाजों मे एक दूसरे से न मिलते हो उनके लिये राज्य के सगठन में स्थानीय स्वायत्त शासन के लिये पर्याप्त क्षेत्र छोड देना अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में इस आवश्यकता को सघात्मक प्रणाली द्वारा तथा विभिन्न राज्यो मे प्रचलित अत्यधिक विकेन्द्रीकरण द्वारा पूरा कर दिया गया है?"[1] यही बात अमरीका के सयुक्त राज्य के सम्बन्ध मे सत्य है। यदि फिलाडेल्फिया के शासन विधान के निर्माता सघ शासन के सिद्धान्तो को अगीकार न करते तो आरम्भ के तेरह राज्य अमरीका को शक्तिशाली प्रजातन्त्र राज्य बनाने में सफल न होते। फ्रास में शासन विधान ऐकिक सरकार की स्थापना करता है। क्या कोई कह सकता है कि सयुक्त राज्य अमरीका की सघ सरकार फास को ऐकिक सरकार की अपेक्षा निर्बल सिद्ध हुई है अथवा इगलैड जो ऐकिक राज्य है, अमरीका के सघात्मक राज्य से अधिक दृढ एव शक्तिशाली है ? फास में बार-बार सरकारो के बदलने से शासन मे तरह तरह की अडचने और असुविधायें पड़ती रहती है, कनाडा में फ्रासीसियो और अग्रेजो में ऐसा विरोध और झगडा था कि वहाँ ऐकिक शासन का चिरस्थायी होना असभव था। यदि फासीसी और अग्रेज कनाडा का शासन अलग-अलग रहता और ये दोनो सघीभूत न हुए होते तब भी इनमें बराबर युद्ध चलता रहता परन्तु कनाडा के सघ शासन ने यह सब दूर कर दिया और विविधता के बीच एकरूपता की स्थापना कर दी। सन् १९१४-१८ के युद्ध के बाद जर्मनी में वीमर शासन विधान (Weimar Constitution) के निर्माताओ ने सघ शासन पद्धति की सहायता से ही जर्मनी को टुकडो में बँटने से बचाया और जर्मनी यूरोप में एक शक्तिशाली राज्य बना रहा।

"सक्षेप में, सघ शासन पद्धति ने झगडे मिटा दिये है, खन्डन रोक दिया है, द्वेष को दबा दिया है, युद्ध को रोक दिया है और ससार के विभिन्न भागो में रहने वाले अनेक जनसमूहो में से शान्तिप्रिय, शक्तिशाली व सम्पन्न राज्यो को जन्म दिया है। यह सब ऐकिक सरकार-पद्धति के अन्तर्गत न हो सकता था। यदि हम राज्यों के बीच समझौता, मेलजोल और शान्ति स्थापित करने वाले सघ शासन को निर्बल कहे तो ऐसा कहना उसके नाम का प्रतिवाद करना समझा जायेगा। इस शासन पद्धति ने जहाँ निर्बलता थी वहाँ बल दिया है जहाँ द्वेष और सन्देह का दौर-दौरा था वहाँ शान्ति और सद्भावना की स्थापना की है और इस प्रकार जहाँ छोटे छोटे निर्बल राज्य आपस में अपने अस्तित्व के लिये एक दूसरे से लड भिड़

१—गवर्नमेंन्ट एण्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० १८५।

रहे थे वहाँ शक्तिशाली बडे बडे राज्य स्थापित कर दिये।"[१] यह ठीक है कि स्वभाव से ही ऐकिक शासन, अधिक चिरजीवी और सुव्यवस्थित रहता है परन्तु जहाँ विशेष प्रकार की परिस्थितियों और आवश्यकताओं से यह शासन सम्भव न हो वहाँ सघ शासन ही निसन्देह दूसरी सबसे अच्छी पद्धति है और कुछ विशेष परिस्थितियों के लिये तो यह वास्तव में सबसे अच्छी पद्धति सिद्ध होगी।

सघ शासन की स्थापना की अब से अधिक महत्वपूर्ण परिस्थितियों में से एक "विदेशी सम्बन्धों में शक्ति की आवश्यकता" है। हेनरी सिजविक (Henry-Sidgwick) ने ठीक ही कहा है कि जहाँ कहीं एक वास्तविक स्वतन्त्रता कायम रखने के इच्छुक निकटवर्ती समुदाय हैं परन्तु जहाँ यह डर है कि वे अलग रहकर अपनी निर्बलता के कारण अपने पडोस के शक्तिशाली राज्यों के सामने अपना मस्तक ऊँचा न रख सकेंगे वहाँ के एक सघ स्थापित करने की प्रणाली का सहारा लेते हैं। प्राचीन यूनानी काल से लेकर आजतक इतिहास का निसन्देह ऐसा ही अनुभव रहा है।"

और इसलिये हमें जान स्टुअर्ट मिल के इस कथन से सहमत होना पडता है कि जहाँ सुयोग्य और स्थायी सघों की स्थापना की परिस्थितियाँ होती है वहाँ उनकी सख्या के उत्तरोत्तर बढते जाने से ससार को सदैव लाभ ही होता है। सिजविक ने एक राजनैतिक भविष्यवाणी करते हुए कहा था "जब हम भूत से भविष्य की ओर अपनी नजर फेरते हैं तो सघवाद का विस्तार मुझे सरकार के रूप के विषय में सबसे अधिक सभावित राजनैतिक भविष्यवाणी मालूम पडती है।[२]

१-फैडरल पौलिटी, पृष्ठ १३६।
२-सिजविक हेनरी: दी डेवलपमेन्ट आफ योरोपियन पौलिटी, पृ० ४३९।

अध्याय ३

सरकार के स्वरूप और कार्य

(FORMS AND FUNCTIONS OF GOVERNMENT)

"राजाओं का दैवी अधिकार कमजोर अत्याचारियों के लिये एक बहाना हो सकता है परन्तु सरकार का दैवी अधिकार मानव प्रगति की कुंजी है और उसके बिना सरकारें गिर कर पुलिस बन जाती हैं और एकराष्ट्र एक भीड़ के रूप में पतित हो जाता है।" —डिजरैली

सरकार प्रत्येक राज्य का एक अनिवार्य अंग है (Government is a Necessary Feature of Every State)—एक समुदाय-निर्माता प्राणी के रूप में मानव ने अपने साथियों के साथ रहने के लिये अनेक प्रकार की संस्थायें बनाई हैं। इन सब संस्थाओं में राज्य एक सर्वग्राही और सबसे अधिक महत्वपूर्ण संस्था है क्योंकि वह उसके उत्पन्न होने से पहले ही निश्चित और पहले ही मौजूद होती है। प्रत्येक राष्ट्र अपने आधीन भूखंड, अपने नागरिकों, लोगों को संगठित रखने वाले सांस्कृतिक तथा सामाजिक-आर्थिक बन्धन और अन्त में उसके जीवन को व्यवस्थित करने वाले एक यंत्र या व्यवस्था से जाना जाता है। सरकार से हमारा तात्पर्य इस यंत्र अथवा व्यवस्था से ही है। राज्य के राजनैतिक ढांचे को चलाने के लिये वह आवश्यक है। राज्य कुछ समय तक सरकार के बिना भी राज्य रह सकता है परन्तु एक राज्य के बिना एक सरकार कभी नहीं रह सकती।

आधुनिक राज्यों में सरकार के रूप अलग अलग हैं (Forms of Government are different in Modern States)—इस प्रकार सरकार वह यंत्र है जिसके द्वारा एक राज्य का राजनैतिक जीवन चलता है। सभी राज्यों में जीवन की एक सी समस्यायें नहीं होती, उनमें भौगोलिक आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और परम्परागत अन्तर होते हैं। इन्हीं अन्तरों के कारण आधुनिक राज्यों में भिन्न भिन्न प्रकार के शासन यंत्र पाए जाते हैं। परन्तु यह याद रखना चाहिये कि मानव इतिहास के सभी युगों में सरकार के रूप भिन्न भिन्न रहे हैं और भविष्य में भी वे यदि अधिक नहीं तो उतने ही बदलते रहेंगे। प्रत्येक राज्य अपनी आवश्यकताओं के लिये सबसे अधिक अनुकूल और अपनी विशेष परिस्थितियों में सबसे अधिक व्यवहारिक सरकार का रूप ग्रहण करता है।

प्राचीन काल से सरकारों का वर्गीकरण (Classification of Governments from ancient times)—यद्यपि सरकार के स्वरूपों के स्वभाव में भेद है परन्तु उनके वैज्ञानिक अध्ययन के लिये उनका मोटे तौर से वर्गीकरण किया जा सकता है। प्राचीन यूनानी समय से वर्तमान युग तक राजनीति दार्शनिकों की बराबर यही कोशिश रही है। इनमें से प्रत्येक विचारक ने वर्गीकरण की अपनी प्रणाली अपनाई है और एक राज्य के लिये अपने मन के अनुसार सबसे अधिक अनुकूल सरकार विकसित करने की चेष्टा की है।

वर्गीकरण के दो मुख्य आधार (Two Bases of Classification)—राजनीति विज्ञान का जनक कहलाने वाले महान् राजशास्त्री अरस्तू ने एक व्यवस्थित अध्ययन के विषय के रूप में सरकारों के वर्गीकरण का सबसे पहला प्रयत्न किया। उसका वर्गीकरण दो पहलुओं पर आधारित है अर्थात् संख्यात्मक और गुणात्मक।

१—सरकारों का संख्यात्मक वर्गीकरण (Quantitative Classification of Governments)—संख्यात्मक दृष्टिकोण से वह राज्य के यथार्थ शासन में भाग लेने वाले लोगों की संख्या के अनुसार सरकारों का वर्गीकरण करता है। यदि सम्पूर्ण शासन यंत्र एक व्यक्ति द्वारा अथवा उसके विचारों के अनुसार चलाया जाता है तो सरकार राजतन्त्र (Monarchy) है, यदि सरकार को कुछ चुने हुए लोग चलाते हैं तो वह कुलीन तन्त्र (Aristocracy) है और अन्त में यदि बहुत से लोग (अर्थात् सारे नागरिक) शासन में सक्रिय भाग लेते हैं तो सरकार जनतन्त्र (Democracy) है। रोमन काल में (जिसमें कि सबसे मुख्य पोलिबियस और सिसैरो थे) तथा मध्य युग में अनेक राजनैतिक विचारकों ने सरकारों के वर्गीकरण के इस संख्यात्मक रूप को अपनाया था।

२—सरकारों का गुणात्मक आधार (Qualitative Basis of Governments) अरस्तू सरकार के विभिन्न रूपों के अध्ययन के लिये गुणात्मक कसौटी का प्रयोग करता है तब उसका सरकारों का वर्गीकरण विचारकों की कल्पना को प्रभावित करता है और उनकी प्रशंसा पाता है। इस आधार के अनुसार कसौटी वह लक्ष्य है जिनकी ओर सरकार का काम निर्देशित होता है। इसमें शासकों के हेतु और रुख एक दम शामिल हो जाते हैं। यदि सरकार मुख्य तौर से शासितों के कल्याण के लिये काम करती है जिनमें आजकल की भाषा में अधिकांश नागरिक आ जाते हैं तो सरकार साधारण (Normal) है। उस हालत में एक का शासन राजतन्त्र (Royalty) कुछ का शासन कुलीनतन्त्र तथा सब लोगों का शासन बहुतन्त्र (Polity) कहलाता है। इसकी विपरीत अवस्था लेने पर अर्थात् जब सरकार का काम मुख्य तौर से शासकों

के लाभ के लिये होता है तो साधारण रूप भ्रष्ट और असाधारण बन जाते हैं। इसमें एक का शासन अत्याचारी तन्त्र (Tyranny), कुछ का शासन स्वार्थीतन्त्र (Oligarchy) तथा बहुतों का शासन 'जनतन्त्र' कहलाता है। अरस्तू ने जनतन्त्र शब्द का प्रयोग सरकार के उस रूप के लिये किया है जिसको कि हम आधुनिक काल में भीड़शाही (Mobocracy) या अराजकता (anarchy) कहेंगे। इन सब रूपों में सर्वोत्तम कौन सा है? इस प्रश्न का जवाब देने में अरस्तू ने सरकार के स्थायित्व को कसौटी माना है और इस दृष्टिकोण से जनतन्त्र वहाँ सर्वोत्तम होता है जहाँ कि गरीबों की संख्या अमीरों से बहुत अधिक होती है। स्वार्थीतन्त्र वह है जहाँ कि अमीरों की शक्ति और सम्पत्ति की श्रेष्ठता उनकी संख्या की कमी पूरी कर देती है, बहुतन्त्र वह है जहाँ मध्यम वर्ग और सब से स्पष्ट रूप श्रेष्ठ है। पौलीबियस (Polybius) और सिसरो (Cicero) दोनों ने सरकार का अरस्तू का वर्गीकरण ग्रहण किया परन्तु सरकार की उस व्यवस्था को सर्वोत्तम माना जिसमें राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र तथा जनतन्त्र सभी के तत्व शामिल हों। इसलिये उन्होंने रोमन व्यवस्था की तारीफ की जिसमें कौंसल्स (Consuls) राजतन्त्र के तत्व के परिचायक थे, परिषद् (senate) कुलीनतन्त्र का तत्व था और लोक सभायें स्पष्ट रूप से जनतन्त्रीय तत्व की परिचायक थीं।

सरकारों का आधुनिक वर्गीकरण (Modern classification of Governments) आजकल आधुनिक सरकारों का वर्गीकरण न तो केवल संख्यात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है और न केवल गुणात्मक दृष्टिकोण से किया जाता है। आधुनिक राज्यों में सरकार की व्यवस्थायें इतनी पेचीदा और विभिन्न हैं कि वर्गीकरण का एक भिन्न प्रकार का तरीका आवश्यक है। हमारे लिये सरकारें या तो राजतन्त्रीय हैं या जनतन्त्रीय, एकाधिनायकीय (Dictatorial) हैं या समूहवादी (Collective)। राजतन्त्र, उदार या अनुदार (Monarchy, benevolent or despotic) फिर, राजतन्त्र भी उदार हो सकता है जबकि राजा अपनी प्रजा के अधिकारों अथवा स्वतन्त्रताओं में आघात पहुँचाये बिना उनके सर्वोच्च हितों की वृद्धि करने के निश्चित उद्देश्य से शासन करता है,अथवा वह अनुदार या निरंकुश हो सकता है (जैसा कि जारों के युद्ध से पहले के रूस में था) जहाँ कि शासक के वचन ही कानून हैं और सरकार का उद्देश्य केवल शासक के हितों की वृद्धि करना है।

जनतन्त्र : प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष (Democracy direct or representative) जनतन्त्रों का भी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष में वर्गीकरण किया जा सकता है। प्रत्यक्ष जनतन्त्र में वयस्क नागरिकों का सारा समूह बनाने में,

न्यायाधीशो की नियुक्ति में और झगड़ो को निपटाने में सक्रिय भाग लेता है। इस प्रकार का जनतन्त्र आजकल स्विट्जरलैण्ड के कुछ छोटे छोटे कैन्टनो में पाया जाता है। वह प्राचीन यूनानी नगर राज्यो में भी पाया जाता था। प्रत्यक्ष जनतन्त्र केवल एक छोटे भूखड मे सम्भव है जहाँ पर लोगो को राज्य की समस्याओ पर विचार करने के लिये आसानी से एकत्रित किया जा सकता है, जहा उनकी आवश्यकताये कम होती हैं और नागरिको से सम्बन्ध शान्तिपूर्ण होते है। परन्तु विज्ञान की खोजों और आविष्कारो के कारण और परिणाम स्वरूप मानव क्रियाओ मे परिवर्तन होने से, आधुनिक जगत विशाल भूखड, करोडो की जनसख्या तथा पडोसियो से ज्यादा ओर परिवर्तनशील सम्बन्ध वाले बड़े २ राज्यों से बना हुआ है। इन राज्यो में जनतन्त्र ने प्रतिनिधि वादी रूप ग्रहण कर लिया है। नागरिक केवल समय-समय पर अपनी आवाज का उपयोग करते है जब कि उनको विधान सभा के प्रतिनिधि चुनने के लिये बुलाया जाता है, और सरकार मे यथार्थ रूप से भाग लेने का काम निश्चित समय के लिये चुने हुए प्रतिनिधियो पर छोड देते है। प्रतिनिधि-वादी जनतन्त्र अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी में शुरू हुआ। १८४८ के उदार आन्दोलन (Liberal Movement) के परिणामस्वरूप यूरोप के अधिकाश देशो मे जनतन्त्रीय सरकारो की स्थापना हुई। औद्योगिक क्रान्ति, विज्ञान और बुद्धिवाद का विकास और अत्याचारी राजतन्त्रीय सरकारो के खिलाफ विद्रोह, आधुनिक जगत में प्रतिनिधि वादी जनतन्त्रो के उदय के मुख्य कारण रहे है। वे अब भी चल रहे हैं। क्योंकि उनको अच्छी तरह काम करते हुए देखा गया है।

जनतन्त्र अब भी सबसे अधिक लोकप्रिय रूप है (Democracy is still the most popular form) वर्तमान युग में कुछ स्थानो पर उसकी अत्यधिक भत्सना और आलोचना होते हुए भी जनतन्त्र सभी सविधान निर्माताओ को प्रिय रहा है। उसके मौलिक सिद्धान्तो को भिन्न भिन्न राजनैतिक सस्थाओ द्वारा यथार्थ व्यवहार मे लागू किया गया है। आमतौर से एक सभ्य सरकार की सच्ची कसौटी यह है कि उसकी राजनैतिक व्यवस्था में जनतन्त्रीय आदर्श किस सीमा तक शामिल है। इगलैण्ड, फ्रास, सयुक्त राज्य अमरीका, स्विट्जरलैण्ड, आयरलैण्ड और राष्ट्रो के कामनवैल्थ (Commonwealth of Nations) के स्वशासित अधिराज्यो (dominions) को १९ वी शताब्दी के उदारवादी जनतन्त्र के परपरागत रूप का उदाहरण माना जाता है।

जनतन्त्र के विभिन्न मत (Different views of democracy)—यहाँ जनतन्त्रीय सरकारो की भावना को समझने की भूमिका के रूप में जनतन्त्र के मूल सिद्धान्तो का क्रमवत विवेचन करना उपयुक्त होगा। अब्राहम लिंकन ने "जनता के

लिये, जनता द्वारा, जनता को सरकार" के रूप में जनतन्त्र की परिभाषा की है। संक्षिप्त रूप में इस व्यवस्था की इससे अधिक तारीफ नहीं की जा सकती। परन्तु आस्कर वाइल्ड (Oscar Wilde) ने यह कहकर इसको अनावश्यक रूप से तोड़ मरोड़ दिया था कि "जनतन्त्र का अर्थ केवल जनता को जनता द्वारा, जनता के लिये डन्डों से पीटना है।" जनतन्त्र की यह भर्त्सना तथ्यों से पुष्ट नहीं होती। सच तो यह है कि जनतन्त्र जनता को वह स्वतन्त्रता देता है जो उनके मानव अस्तित्व के सच्चे उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिये आवश्यक है। उसका लक्ष्य उन अवस्थाओं का निर्माण करना है जो कि गिरे हुओं को उठाने और गरीबों को समृद्ध बनाने का अवसर देती है।

जनतन्त्र के सिद्धान्त (Principles of Democracy)—यह बड़ी आसानी से उन सिद्धान्तों में देखा जा सकता है जिन पर जनतन्त्र आधारित है। सरकार के इस रूप में "एक राज्य की शासन शक्ति कानूनी रूप से किसी विशेष वर्ग अथवा वर्गों में नहीं बल्कि सम्पूर्ण समुदाय के सदस्यों में होती है।" इससे यह परिणाम निकलता है कि जनतन्त्र में संख्या की शक्ति के कारण निर्धन वर्ग राज्य करता है। जनतन्त्र राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक समानता (Equality) और स्वतन्त्रता (Liberty) पर आधारित है। इसको सन् १७७६ की अमरीका की आजादी की घोषणा के शब्दों से अधिक अच्छी तरह बयान नहीं किया जा सकता।

"हम इन सत्यों को स्वयं सिद्ध मानते हैं कि सब मनुष्य समान बनाए गए हैं, कि उनको उनके रचयिता ने कुछ हस्तान्तरित न किये जाने वाले अधिकार दिये हैं, कि इनमें जीवन, स्वतन्त्रता और आनन्द की खोज भी है, कि इन अधिकारों को प्राप्त करने के लिये सरकारें बनाई गई हैं जो अपने न्यायोचित अधिकार शासितों की सहमति से प्राप्त करती हैं।"

"मनुष्य अपने अधिकारों के विषय में समान उत्पन्न हुए हैं और रहेंगे। राजनैतिक समाज का लक्ष्य मनुष्य के प्राकृतिक और अप्रत्यक्ष अधिकारों की रक्षा करना है। ये अधिकार हैं स्वतन्त्रता, सम्पत्ति, सुरक्षा और अत्याचार का विरोध।"

"समस्त सत्ता का तत्व मूल रूप से राष्ट्र में निहित है। कोई भी संगठन कोई भी व्यक्ति, किसी ऐसी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता जो कि स्पष्ट रूप से उससे प्राप्त न हुई हो"।

जनतन्त्र की परिभाषा करने में उसमें समस्त व्यक्तियों की स्वतन्त्रता और समानता पर बड़ा जोर दिया गया है। जान स्टुअर्ट मिल व्यक्ति को उसके अपने सभी विषयों में सबसे अधिक स्वतन्त्रता देता है परन्तु उन सब मामलों में नियन्त्रण

पर जोर देता है जिनका सम्बन्ध दूसरों से या समाज से है। जनतन्त्र के आदर्श को समझाते हुए लार्ड हल्डेन (Lord Haldane) ने उसे "निम्न और महान को एक ही स्तर पर रखते हुए मानव व्यक्तित्व का असीम मूल्य" कहा था। परन्तु वह अमूर्त समानता की धारणा का यह कह कर बहिष्कार करता है कि आप सब आदमियों को समान नहीं बना सकते क्योंकि प्रकृति बहुत अधिक शक्तिशाली है।" एक स्त्री सुन्दर उत्पन्न होती है और दूसरी कुरूप और इसमें बड़ा भारी अन्तर पड़ जाता है। एक आदमी बड़ी बुद्धि लेकर पैदा होता है और दूसरा उसके बगैर। एक का स्वास्थ्य बुरा है और दूसरे का स्वास्थ्य अच्छा—समानता के उस अमूर्त विचार को निकाल दीजिये—वह एक पुरानी धारणा है जो अनेक लोगों पर छाई रही है"—उसने सन् १८४८ में ऐसा ही किया जबकि विचार यह था कि सब लोग एक से होने चाहियें और जिसका व्यवहार में यह अर्थ होता है कि किसी को भी अपने साथी से ऊँचा नहीं उठना चाहिये।[1] अतः वह समानता को परिभाषा प्राप्ति की नहीं बल्कि अवसर की समानता के रूप में करता है।

जनतन्त्र प्रत्येक व्यक्ति को अपने हित का सर्वोत्तम निर्णायक मानता है। किसी भी व्यक्ति को असीम शक्ति नहीं देता क्योंकि उसमें उनके दुरुपयोग का निश्चित खतरा है। परिणामस्वरूप शासन में सम्बन्धित लोगों की संख्या जितनी ही अधिक होगी बुराइयों को दूर करने और गलतियों को ठीक करने का अवसर भी उतना ही अधिक होगा। इस प्रकार के संगठन में समुदाय की किसी रोक टोक के बिना किसी व्यक्ति को अपना स्वार्थ सिद्ध करने का अवसर बहुत कम होता है। दूसरी ओर, वह प्रत्येक नागरिक को अपने सर्वोत्तम अहं या आत्म (self) का साक्षात्कार करने और इस प्रकार जन कल्याण में योगदान करने का अवसर देता है।

जनतन्त्र की सफलता के लिये आवश्यक परिस्थितियाँ (conditions essential to the success of democracy)—सैद्धांतिक दृष्टिकोण से कितनी भी अच्छी होने पर भी कोई भी व्यवस्था तब तक लाभदायक नहीं हो सकती जब तक कि उसके काम की सफलता के लिये आवश्यक परिस्थितियाँ उपस्थित न हो, और यही कारण है कि हम यहाँ वहाँ जनतन्त्रीय संस्थाओं की विफलता के उदाहरण पाते हैं। जनतन्त्र की सफलता के लिए पहली आवश्यक परिस्थिति सामान्य शिक्षा का, साक्षरता का नहीं, उच्च स्तर है। जबतक कि नागरिक लोग अपने अधिकारों और कर्तव्यों से परिचित नहीं होंगे और एक नागरिक जीवन की एक ऊँची कल्पना नहीं रखेंगे तबतक वे एक जनतन्त्रीय सरकार को सफलता पूर्वक नहीं चला सकते।

१—हल्डेन, "दि फ्यूचर आफ डिमोक्रेसी," पृष्ठ ७–९।

यद्यपि बहुत सी शिक्षा जनतन्त्रीय संस्थाओं के व्यावहारिक कार्यक्रम से, चुनावों में, विधान सभाओं में या अन्य सार्वजनिक समितियों और संस्थाओं में भाग लेने से मिल सकती है, परन्तु भावी नागरिकों को छोटी उम्र में ही सामूहिक जीवन के तत्वों से सम्बन्धित प्रशिक्षण देना अत्यन्त आवश्यक है। बोलने की और समुदाय बनाने की स्वतन्त्रता के साथ, एक स्वतन्त्र और अच्छी तरह जानकार तथा तथ्यों को ठीक ठीक तथा निष्पक्ष रूप से उपस्थित करने वाले और जिज्ञासु जनता पर अनावश्यक रूप से अपना मत लादने की चेष्टा न करने वाले समाचारपत्र, लोक शिक्षा की कुछ अनिवार्य शर्तें हैं।

यह बात स्वयं सिद्ध है कि जनता के सर्वोत्तम हितों की वृद्धि और रक्षा करने के लिए भविष्य पर दृष्टि रखते हुए वर्तमान को अतीत पर आधारित किया जाना चाहिये। यह बात एक जनतन्त्रीय सरकार की सफलता के लिये परम्परागत समानता की आवश्यकता पर जोर देती है। सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक जीवनमें समानता सच्चे जनतन्त्र की आत्मा ही है। वर्गगत विशेषाधिकार जिससे कि नागरिक अधिकारों का उपभोग कुछ ही लोगों तक सीमित हो जाता है जनतन्त्रीय जीवन में एक भारी बाधा है जो अवश्य निकाल दी जानी चाहिये। इसी तरह राज्य में पद उन सबके लिये खुले होने चाहिये जिनमें आवश्यक सामर्थ्य और योग्यतायें हैं। मतदान का अधिकार सार्वभौम होना चाहिये और केवल सम्पत्ति-शालियों या किसी विशेष प्रजाति के वंशजों तक ही सीमित नहीं होना चाहिये। और अन्त में, आर्थिक संगठन की इस प्रकार व्यवस्था होनी चाहिये कि जिससे प्रत्येक नागरिक को केवल काम की ही नहीं बल्कि एक उत्तम मानव जीवन व्यतीत करने लायक वेतन की भी गारन्टी दी जाय। आधुनिक युग में अनेक राज्य बेरोजगारी, भुखमरी और जीवन की अस्वास्थ्य-कर अवस्थाओं को दूर करने के लिये आवश्यक आर्थिक परिस्थितियाँ उत्पन्न करने में असफल रहते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि जनतन्त्र जनता में उत्साह उत्पन्न करने में असफल होता है, और अन्त में उसी व्यवस्था के प्रति विद्रोह उत्पन्न करता है जिसका लक्ष्य उनके सर्वोत्तम हितों की वृद्धि करना है।

स्वतन्त्रता निरंकुशता के विरुद्ध युद्ध करने से प्राप्त होती है (liberty is obtained by fight against despotism)—इंगलैंड का इतिहास उस संघर्ष का उदाहरण प्रस्तुत करता है जो कि लोगों को अनिच्छुक निरंकुश स्वतन्त्रता लेने में करना पड़ा था। वाल्टेयर (Voltaire) ने अंगरेजों के संघर्ष का इन शब्दों में वर्णन किया है "इंगलैंड में स्वतन्त्रता की स्थापना करने में बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा था। निरंकुश शक्ति की प्रतिमा को डुबाने के लिये खून के

समन्दरो की जरूरत पडी थी। परन्तु अंग्रेज यह नही सोचते कि उन्होंने अपने कानूनो को अत्यधिक मूल्य देकर खरीदा है। दूसरे राष्ट्रो को भी कम कष्ट नही *उठाने पड़े थे, कम खून नही बहाना पडा था,* परन्तु *उनके मामलो में जिस खून का* उन्होंने त्याग किया था उससे उनकी दासता ही दृढ हुई थी। जनतन्त्र अथवा स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष में अधिकारो की एक व्यवस्था की मान्यता शामिल है जो नागरिकों को सुख से और अच्छी तरह रहने योग्य बनाती है। अधिकारो के एक युद्ध द्वारा ही सन् १७८३ में अमरीकनो ने अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की थी। १९३७ में अपनी इच्छा के अनुसार सरकार बनाने से पहले आयरिश लोगो को सैकड़ो सालो तक अपनी स्वतन्त्रता के लिये युद्ध करना पडा। १९४७ में अंग्रेजो के हाथ से आजाद होने के पहले भारतीयो को महान् त्याग करने पड़े थे।

जनतन्त्र और अधिकारो की घोषणा (Democracy and the Declaration of Rights)—अधिकांश आधुनिक राज्यो में नागरिको के अधिकार उनके *लिखित संविधान में ही शामिल होते हैं। इस तथ्य का स्वयं कोई विशेष अर्थ नही है क्योंकि अधिकारों की रक्षा करना विधिवत् घोषणा के स्थान पर, परंपरा और आदत* का प्रश्न अधिक है। परन्तु लिखित अधिनियम नागरिक को शासन सत्ता पर कानून के न्यायालय में आक्रमण करने का अवसर देता है, यदि शासन ने उसके अधिकारो का अतिक्रमण किया हो। एक संविधान में अधिकारो की घोषणा जनता को यह भी याद दिलाती है कि उसको अपने अधिकारो के लिये लडना पडा था, जहाँ तक कि एक सिद्धान्त की पवित्रता का सवाल है वह एक मूल्यवान लेख है। यह सिद्धान्त सरकार की शक्तियो या कार्यो को सीमित कर देता है। वह उन शर्तों को निश्चित करता है जिसमें कि लोग अपनी मूल प्रवृत्ति-जन्य स्वतन्त्रता के जीवन को मुक्त रूप से अभिव्यक्त कर सकते हैं। वह एक नागरिक को यह कहने योग्य बनाता है—

> यही है भूमि जिसको जोतते हैं मुक्त जन,
> जिसको चुना है धीर-योग्य मुक्त जन ने,
> वह भूमि, जहाँ मित्रो व शत्रुओ में,
> बोल सकता है मानव चाहे जो,
> एक भूमि स्थिर शासन की
> एक भूमि न्याययुक्त, प्राचीन, प्रसिद्ध,
> जहाँ क्रमश फैलती है स्वतन्त्रता,
> पूर्वोदाहरण से पूर्वोदाहरण तक।

जनतन्त्र और १९१४-१८ का महायुद्ध (Democracy and the Great

War 1914-18]—मित्र राष्ट्रों और उनसे सहानुभूति रखने वालों के अनुसार प्रथम विश्व महायुद्ध (१९१४-१९१८) संसार को जनतन्त्र के लिये सुरक्षित बनाने के लिये लड़ा गया था। निस्सन्देह बीसवीं शताब्दी ने जनतन्त्र में एक नया अध्याय खोला है। १ जनवरी १९०१ को आस्ट्रेलिया के कामनवेल्थ का निर्माण, और १९०९ में दक्षिणी अफ्रीका संघ के प्रान्तों को उत्तरदायी स्वायत्त शासन मिलना जनतन्त्र की राह पर महत्वपूर्ण संकेत स्तम्भ थे। १९१४ में जर्मनी का बेल्जियम की तटस्थता का अतिक्रमण, युद्ध में इंगलैंड के प्रवेश करने का संकेत था जिसमें तीन वर्ष बाद संयुक्त राज्य अमरीका भी शामिल हो गया। अमरीका के राष्ट्रपति विल्सन ने संसार को विश्वास दिलाया था कि युद्ध के समाप्त होने पर लोगों को सरकार के आधार के रूप में स्वायत्त शासन मिल जाएगा। राष्ट्र संघ (League of Nations) की स्थापना भी एक अधिक उत्तम विश्व व्यवस्था की ओर एक महान् कदम था जिसमें समानता और न्याय के सिद्धान्तों के आधार पर राष्ट्रों के अधिकारों को मान्यता दी जाती। दुर्भाग्यवश १९१९ में वार्साई की संधि ने, जिसने युद्ध को समाप्त कर दिया, राष्ट्रपति विल्सन द्वारा प्रतिपादित स्वायत्त शासन के सिद्धान्त का बिल्कुल अवहेलना करते हुए आस्ट्रो-हंगेरियन राज्य के खंडहरों पर साम्राज्यवाद के नवीन स्तम्भ आटोमन और जर्मन साम्राज्य स्थापित किये। वीमार के संविधान के अनुसार, जिसने कि एक जनतन्त्रीय संघात्मक और गणतन्त्र राज्य स्थापित किया, पराजित जर्मनी ने फिर अपना राजनैतिक जीवन प्रारंभ किया। परन्तु इटली में १८४८ के उदार आन्दोलन का संसदात्मकवाद, लन्दन की गुप्त संधि की आशाओं को पूर्ण करने में असफल हुआ जो इटली को युद्ध में मित्र राष्ट्रों के पक्ष में लाई थी। वार्साई में शान्ति की मेज पर लड़े गए कूटनीतिक युद्ध में इटैलियन पार्लियामेंटवादी हरा दिये गए। इससे इटली की निराशा का परिणाम जनतन्त्र की पूरी तरह हार हुई और मुसोलिनी के अधिनायकवाद का आविर्भाव हुआ। रूस में १९१७ की क्रान्ति ने पहले ही ज़ार के निरंकुशवाद के स्थान पर सरकार की एक नवीन व्यवस्था स्थापित कर दी थी जो कि जनतन्त्र की १९वीं शताब्दी की धारणा से उतनी ही दूर थी जितनी कि इटली में बाद में स्थापित हुआ नया अधिनायकवाद। वह मार्क्स के सिद्धान्तों पर आधारित एक समूहवादी राज्य का उदय था।

युद्ध की लूट—अर्थात् आस्ट्रो—हंगरी का साम्राज्य, ऑटोमन साम्राज्य और जर्मनी के उपनिवेशीय राज्यों ने राष्ट्रसंघ की प्रेरणा से मध्य यूरोप में नये राज्य स्थापित किए और विजेताओं, विशेषत. इंगलैंड और फ्रांस के समुद्र पार की उपनिवेशों में वृद्धि की। स्वायत्त शासन का सिद्धान्त जिसके युद्ध के बाद जनतन्त्र का मूलभूत आधार और

एक मात्र कसौटी बनने की आशा थी और जिसकी रक्षा करने के लिये युद्ध लडा गया था, उसकी व्यवहार मे पूरी तरह अवहेलना की गई।

इस प्रकार वार्साई की सधि (१९१९) के बाद मे दुनिया जनतन्त्र के लिए उतनी ही असुरक्षित रही जितनी कि वह पहले कभी भी थी। समस्त यूरोपीय राष्ट्रो का निशस्त्रीकरण एक अधूरा स्वप्न बन कर रह गया। फिर सब कही आर्थिक गिरावट आई जिससे समस्त ससार प्रभावित हुआ और जिसने व्यावहारिक रूप में जर्मनी, आस्ट्रिया, पोलैण्ड और यूरोप मे अन्य राज्यो के छुट मुट्टे जनतन्त्रो की आत्मा को ही मार डाला। बीमार जनतन्त्र अपने पैरो पर खडा न रह सका और लडखडा कर गिर गया। उसके स्थान पर १९३३ में हिटलर की अध्यक्षता में तीसरे रीख (Third Reich) की स्थापना हुई। आस्ट्रिया ने भी अधिनायकवाद ग्रहण किया जिसमे किसी अश में बाद मे पोलैण्ड भी शामिल हो गया। इसमे यूरोप मे एक नया खतरा पैदा हो गया जिसको विशेषत समाजवाद और अधिनायकवाद में सिद्धान्तो के सघर्ष ने और भी भडकाया। फासीवादी सिद्धान्त व्यावहारिक रूप में प्रत्येक देश मे फैल गए और जनतन्त्र सरकार की एक अवांछनीय प्रणाली बन गई।

इस प्रकार युद्ध के बाद के यूरोप ने दो नए प्रकार की सरकारे उत्पन्न की, अर्थात् सामूहिक सोवियत शासन जैसा कि रूस मे स्थापित हुआ था और निरकुश अधिनायकवाद जैसा कि जर्मनी और इटली मे था। अपने मूलभूत दर्शन और सस्थाओ की प्रकृति तथा रूप, दोनो मे ये दो प्रकार की सरकारे आधुनिक सरकारो के एक विद्यार्थी के लिए काफी क्षेत्र और सामग्री उपस्थित करती है। इसका वर्णन प्रस्तुत पुस्तक मे बाद मे किया गया है।

स्वतन्त्र और परतन्त्र सरकार (Independent and dependent Government)—आधुनिक राज्यो मे कुछ मे स्वतन्त्र सरकारे है और कुछ दूसरे अभी परतन्त्र है। इंगलैंड, फ्रास, जर्मनी, इटली, जापान, भारत तथा और बहुत से स्वतन्त्र राज्यो मे या तो स्थाई रूप या निहित रूप में नागरिको द्वारा स्वीकृत सरकारे है। उन सबमे एक दल द्वारा अथवा एक सविधान के अनुसार सरकारे चलती है। सविधान को प्रत्यक्ष-अथवा अप्रत्यक्ष-रूप मे जनता का समर्थन प्राप्त होता है चाहे सरकार जनतन्त्रीय हो या अधिनायकवादी। द्वितीय विश्व महायुद्ध मे और उसके साथ राष्ट्रपिता की शक्तियो के उन्मुक्त होने के पहले १९४७ के पूर्व का भारत, फिलस्तीन अथवा अधिकाश समाज्ञपित (mandated) देशो के बडे बडे राज्य थे जिनको उनकी सर्व-साधारण सामर्थ्यहीनता अथवा शासक देश की विशेष जिम्मेदारियो के बहानो के आधार पर आत्मनिश्चय अथवा आत्मशासन का अधिकार नही दिया गया था। ये देश सभ्य ससार के कलक थे और जनतत्र के प्रेमियो के लिए भयकर समस्या उपस्थित

करते थे, जिनके लिए शासक देशों के बहानों को मानना कठिन था। पार्लियामेंट और जनतन्त्र का जन्मदाता इंगलैंड एक निश्चित महान् उद्देश्य को पूरा करने को आधार बनाकर संसार के बड़े बड़े भागों पर आधिपत्य जमाए हुए था। बलशाली राज्यों का आश्रित राज्यों पर शासन, जिसका एकजनतन्त्रीय युग में किसी भी नैतिक आधार पर समर्थन नहीं किया जा सकता, अफ्रीका तथा कुछ अन्य स्थानों पर सैद्धान्तिक रूप से अब भी प्रचलित है। जार्ज बर्नार्ड शा (Barnard Shaw) ने विशाल आश्रित राज्यों पर शासन करने वाले अंग्रेजों के बारे में अपने खास तरीके से इस तरह कहा है "कोई भी चीज इतनी बुरी या इतनी अच्छी नहीं है कि आप अंग्रेजों को उसे करते न पायें, परन्तु आप एक अंग्रेज को गलत कभी नहीं पायेंगे। वह प्रत्येक बात उसूल के कारण करता है। वह आपसे उसूल पर लड़ता है, वह व्यापारिक उसूलों पर आप पर शासन करता है, *वह साम्राज्यवादी उसूलों पर आपको दास बनाता है।*" *इस प्रकार प्रभावशाली देशों द्वारा स्थापित सरकार, अपनी व्यवस्थाओं* वाले आश्रित राज्य, बाहरी रूप से *कुछ सिद्धान्तों के अनुसार* उचित मालूम पड़ते हुए भी उद्देश्यों और सरकार की प्रणालियों दोनों अध्ययन के विशेष विषय हैं।

आश्रित राज्य रखने का वास्तविक उद्देश्य (True Aim of keeping Dependencies)—एक प्रभुत्वशाली देश अपने आश्रित राज्यों पर आधीन लोगों के लाभ के लिए नहीं परन्तु उससे अनेक अपने लाभ प्राप्त करने के लिए अपना नियन्त्रण रखता है। इन लाभों में शामिल हैं (१) शान्ति काल में आश्रित राज्यों से मिला कर या राजस्व (revenue) तथा युद्ध काल में मनुष्य और धन। (२) आश्रित राज्यों में प्रभुत्वशाली राज्य के लिए कच्चे माल को खरीदने और तैयार माल को बेचने के खुले बाजार, (३) नौसेना केन्द्र अथवा हवाई अड्डों की स्थापना जैसे जिब्राल्टर, माल्टा, आयोनियन द्वीप, कैनेरी द्वीप इत्यादि, (४) *आश्रित राज्यों में प्रभुत्व*-शाली देश की आवश्यकता से अधिक जनता या अपराधियों का भेजना जैसा कि अमेरिका में प्रारंभिक ब्रिटिश उपनिवेशों, आस्ट्रेलिया और अण्डमान द्वीप के बारे में था, और (५) स्वयं अधिकार रखने का यश जिसका सर्वोत्तम उदाहरण अंग्रेजों का ब्रिटिश साम्राज्य का घमंड था जिसमें कहा जाता है कि सूर्य कभी अस्त नहीं होता था। प्रभुत्वशाली देश के यह बहाने कि वह दूसरे देशों पर उन्हीं के लाभ के लिए और योग्य होने पर उनको स्वाय त शासन देने के इरादे से दूसरे देशों पर अपना कब्जा बनाए हुए हैं, एक *अन्याय पूर्ण* अधिकार को न्यायपूर्ण सिद्ध करने का आवरण मात्र है। सर जार्ज कार्निवाल ल्वुई (Sir George Cornewall Lewis) ने १८४७ *तक भारत के आश्रित राज्य में विदेशी शासन से उत्पन्न होने वाली हानियों को इस प्रकार स्वीकार किया है :*

"यद्यपि ब्रिटिश भारत ने अंग्रेज पदाधिकारियों की उच्च ईमानदारी और बुद्धिमता से बहुत कुछ लाभ उठाया होगा, परन्तु सभी महत्वपूर्ण पदों पर केवल अंग्रेजों को नियुक्त करने की प्रथा ने, उनको उच्च वेतन देने की आवश्यकता के कारण और देशी लोक-राजस्व के अपर्याप्त होने के कारण एक अकेले व्यक्ति के सिर पर अत्यधिक करों का बोझ लाद दिया, और देश के बहुत से भागों में व्यावहारिक रूप में न्याय का निषेध तथा सरकार के अत्यधिक महत्वपूर्ण कामों का परित्याग कर दिया गया। यदि जनता के अधिक स्थायी और महत्वपूर्ण हितों की भली प्रकार रक्षा की जाती तो अंग्रेजों के गर्वपूर्ण व्यवहार से देशवासियों की भावनाओं के बहुधा अपमान का महत्व कम हो जाता। परन्तु दुःख की बात है कि देश के अधिकांश भागों में जीवन और सम्पत्ति उससे अधिक सुरक्षित नहीं है जैसे कि वह देशी सरकारों के काल में थे और लोगों को ब्रिटिश राज्य से जो मुख्य लाभ हुआ है वह है विदेशी आक्रमण से छुटकारा।"[1]

ऐसे ही दृढ़ शब्दों में सर जार्ज इस बात को मानने से भी इनकार करते हैं कि एक प्रभुत्वशाली देश आधीन लोगों को स्व-राज्य की कला में धीरे धीरे प्रशिक्षण देकर कभी भी उनको सच्ची स्वतन्त्रता प्राप्त करा सकता है। वे कहते हैं "यदि एक प्रभुत्वशाली देश एक आश्रित राज्य को लोकप्रिय संस्थायें प्रदान करता है और उसको वास्तव में स्वतन्त्र माने बिना उसको स्वायत्त शासन देने का दावा करता है तो इस प्रकार के व्यवहार से प्रभुत्वशाली देश बिना असलियत के केवल मिलती जुलती राजनैतिक संस्थायें देकर आश्रित राज्यों का मजाक उड़ाता है। एक आश्रित राज्य को स्वतन्त्र देशों में पाई जाने वाली लोकसंस्थाओं के नाम, रूप और यंत्र देना उनके साथ में कोई वास्तविक रियायत नहीं है, न ऐसी रियायतों से आश्रित राज्यों को कोई लाभ ही होता है, परन्तु इसके विरुद्ध के राजनैतिक फूट और संभवतः विद्रोहों और युद्धों के बीज बो जाते हैं जो कि अन्यथा उत्पन्न न होते।"[2]

और इसी कारण भारत के महानतम सामाजिक, धार्मिक सुधारकों और राजनैतिक दार्शनिकों में से एक, स्वामी दयानन्द ने कहा कि देशी कानून ही अधिकतर सर्वोत्तम है। एक विदेशी सरकार चाहे वह धार्मिक पक्षपातों से पूरी तरह मुक्त हो, सबकी ओर निष्पक्ष हो, कृपालु हो, उदार हो और माता पिता के समान देशी लोगों के प्रति न्यायवान हो, तब भी वह प्रजा को पूरी तरह सुखी नहीं बना सकती। यह सब कहने का अर्थ यही है कि उत्तम शासन, स्वायत शासन की जगह नहीं ले सकता।

१—एन एसे आन दि गवर्नमेन्ट आफ डिपेन्डेन्सीज, पृ० २६३।

२—वही, पृ० ३०७।

उत्तरदायी और अनुत्तरदायी सरकारें (Responsible and irresponsible Governments)—आश्रित राज्यों अथवा स्वतंत्र देशों की सरकारों का एक दूसरे दृष्टिकोण से भी वर्गीकरण किया जाता है, अर्थात् उनकी नागरिकों के प्रति उत्तरदायित्व शीलता। जब एक विशेष प्रकार की शासन व्यवस्था जनता अथवा उसके प्रतिनिधियों की इच्छाओं के अनुसार बनाई जाती है तो सरकार उत्तरदायी कहलाती है। इस प्रकार की व्यवस्था में शासक, अर्थात् कार्य-पालिका, शासन प्रबन्ध इस प्रकार करती है जिससे उसके स्वामी प्रसन्न हों चाहे वह स्विस कैन्टनों के समान स्वयं नागरिक हों जैसा कि प्रत्यक्ष जनतन्त्र में होता है, अथवा उनके प्रतिनिधि हों जैसा कि इंगलैण्ड, फ्रांस या भारत के प्रतिनिधिवादी जनतन्त्रों में होता है। परन्तु जब कार्यपालिका जनता की स्वीकृति अथवा अस्वीकृति की परवाह किए बिना किसी नीति का अनुसरण कर, जैसा कि ब्रिटिश भारत की केन्द्रीय सरकार में अथवा भारतीय गणराज्य स्थापना के पहले भारतीय रियासतों में होता था, तो सरकार अनुत्तरदायी है।

सरकार एक पेचीदा यंत्र है (Government is a complex machine)—आधुनिक राज्यों में जीवन की परिस्थितियाँ इतनी पेचीदा हैं और इतने विविध कारकों से निश्चित होती हैं कि शासन यंत्र को बहुत अधिक कामों को देखना पड़ता है, जिसमें कानूनों का बनाना, शासन का यथार्थ काम और कानूनों का लागू करना भी शामिल है। राजनैतिक विचारकों ने सरकार के कामों को पूरा करने के लिए अनेक साधन बतलाए हैं जिससे कि जनता सुखी और समृद्ध बन सके और शासन की सुगमता में हानि हुए बिना तथा सत्ता के उन्मूलन का भय हुए बिना जनता को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता दी जा सके।

सरकार के तीन अंग (Three Organs of Governments)—अरस्तू ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ दि पालिटिक्स (The Politics) में सरकार के तीन अंगों का सिद्धान्त उपस्थित किया है। इन तीन अंगों को उसने विचार करने वाले, पद-सम्बन्धी और न्यायिक कहा है। सरकारी कामों के इस विभाजन के बाद राजनैतिक विचारकों ने भी विवेचन किया था। यह प्रथा अब इतनी लोकप्रिय हो गई है कि प्रत्येक आधुनिक राज्य में सरकार इन तीन अंगों, विधायिनी (legislative), कार्यपालक (Executive) और न्यायिक (Judicial), के सामूहिक प्रयत्न से चलती है।

शक्तियों के विभाजन के सिद्धान्त पर मान्टेस्क्यू का मत (Montesquieu on the Principle of Separation of Powers)—यद्यपि सरकार की क्रियाओं का विधायिनी, कार्यपालक और न्यायिक में विभाजन आजकल आधुनिकता का दावा करने वाली सभी सरकारों ने ग्रहण कर लिया है, परन्तु इस विभाजन के

आधारभूत सिद्धान्त को सबसे पहले माण्टेस्क्यू ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "दि स्प्रिट आफ लॉज" (१७४८) में उपस्थित किया। इस सिद्धान्त को सभी उदार सविधान वादियो ने लोक प्रिय राजसत्ता के दृढ आधार के रूप में माना है।

मान्टेस्क्यू कहता है "जब विधायक और कार्यपालक शक्तियाँ एक ही व्यक्ति में अथवा न्यायधीशो के एक ही सगठन में मिला दी जाती हैं तो स्वतन्त्रता नही रह सकती, क्योकि इसमे यह सभावना हो सकती है कि एक ही राजा या समद अत्याचारी कानून अधिनिमित करे और उनको अत्याचारी विधि से लागू करे। फिर, यदि न्यायिक शक्ति को विधायक और कार्यपालक शक्तियो से अलग न किया जाय तो भी स्वतन्त्रता नही रह सकती। जहाँ वह विधायक मे मिला दी जाती है वहा प्रजा का जीवन और स्वतन्त्रता निरकुश नियत्रण के पजे में पड जाते हैं क्योकि न्यायाधीश ही विधायक भी होगा। जब वह काय- पालक शक्ति मे जोड दी जाती है तो न्यायाधीश हिंसा और अत्याचार का व्यवहार कर सकता है। यदि एक ही व्यक्ति अथवा सगठन को चाहे वह सामन्तो में हो या जनता मे, इन तीनो शक्तियो को प्रयोग करने का अर्थात् सार्वजनिक प्रस्तावो को लागू करने और व्यक्तियो के मुकद्दमे करने का अधिकार दे दिया जाय तो सब कुछ समाप्त हो जायेगा।"[1]

महान् अंग्रेज ज्यूरिस्ट ब्लेकस्टोन ने अपनी 'कमेन्ट्रीज आन दि लॉज आफ इंगलैण्ड, (१७६५) में इसी प्रकार की व्यवस्था का इन शब्दोमें वर्णन किया है, "सब अत्याचारी सरकारो मे सर्वोच्च सत्ता अथवा कानून को बनाने और लागू करने, दोनो का अधिकार एक ही आदमी और आदमियो के एक ही सगठन मे होता है और जब ये दोनो शक्तियाँ एक साथ मिला दी जाती हैं तब कोई भी सार्वजनिक स्वतन्त्रता नही बनती।" इन दो विचारको द्वारा ब्रिटिश सविधान की प्रणाली के अशुद्ध विश्लेषण से निकाला हुआ यह निष्कर्ष १८वी शताब्दी के बाद के राजनैतिक लेखको के लिए एक श्रद्धा की वस्तु हो गई। वह सयुक्त राज्य तथा फ्रास के सविधानो में अनुवादित कर दिया गया। सयुक्त राज्य में १७७६ और १७७७ के राज्य सविधान और १७८७ के सघ सविधान ने इस सिद्धान्त को ग्रहण किया और शक्तियो के पूरी तरह विभाजन की कोशिश की। फ्रास मे १७८९ की विधान परिषद् ने अधिकारो की घोषणा (Declaration of Rights) की १६वी धारा मे इन शब्दो को शामिल किया "कोई भी समाज जिसमे कि शक्तियो का पृथक्करण निश्चित नही है कोई सविधान नही रखता।"

यद्यपि शक्तियो के विभाजन के सिद्धान्त ने बाद के सविधान निर्माताओ को अत्यधिक प्रभावित किया, परन्तु १९वी शताब्दी में अंग्रेजी सविधान के कारण उसकी

1. Esprit les lois, Book XI, Chapter, VI.

उपयोगिता घट गई क्योंकि उसकी कार्यप्रणाली ने एक सार्वभौम प्राविधान के रूप में उसका खंडन किया। विधान सभा में कार्यकारिणी के उत्तरदायित्व पर आधारित (जहाँ कि कार्यपालिका भी विधान सभा का एक भाग है) सरकार की केबिनेट व्यवस्था के विकास से अत्याचारी तन्त्र के कुछ भी आभास बिना सरकार की एक नवीन परिभाषा स्थापित हुई। संयुक्त राज्य में भी सरकार की तीन शाखाओं की क्रियाओं में सामजस्य करने के लिए "अविरोध और सतुलन" की एक व्यवस्था है जिसमें से प्रत्येक अंग कुछ विशेष पहलुओं में दूसरी दोनों द्वारा रोक जाता है। वहाँ पर कांग्रेस द्वारा स्वीकार किये अधिनियमों पर राष्ट्रपति के आशिक वीटो (Veto) के प्रयोग से और राष्ट्रपति की सूचनाओं द्वारा विधान सभाओं को प्रेरणा देने से कार्यपालिका विधान बनाने में कुछ भाग लेती है। परिषद की सधियों के अनुसमर्थन करने से और कुछ सघात्मक पदों पर नियुक्ति करने के अधिकारों से विधान मडल भी कार्यपालिका के काम में कुछ भाग लेता है। न्यायधीश कार्यपालिका द्वारा नियुक्त किये जाते हैं जबकि न्यायालय विधान मडल की दो शाखाओं के अधिनियमों की प्रामाणिकता और अप्रमाणिकता पर निर्णय दे सकते हैं। इस प्रकार सघ सरकार में शक्तियों का प्रथक्करण केवल एक संशोधित रूप में होता है।

इस सिद्धान्त में एक बड़ा दोष यह है कि वह मान लेता है कि विधायक तथा कार्यपालक शक्तियों के प्रयोग करने वाले अत्याचार अवश्य करें। ग्रेटब्रिटेन के उदाहरण मान्टेस्क्यू और ब्लेक स्टोन के भय को निर्मूल सिद्ध करता है। परन्तु इस सिद्धान्त में एक अच्छी बात है अर्थात् सार्वजनिक मामलों के यथार्थ व्यवहार में कुछ अंश में शक्तियों के प्रथक्करण से शासन में अधिक दक्षताताआ आ जाती।

शक्तियों के विभजन का यह सिद्धान्त जनता की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए अनिवार्य माना जाने लगा है। इसको अधिकाश आधुनिक राज्यों ने शासकों के अत्याचार या निरकुशता से नागरिक की स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिये एक मौलिक आधार के रूप में ग्रहण कर लिया है। परन्तु फिर भी बहुत कुछ सरकार के यथार्थ व्यवहार पर निर्भर है क्योंकि "व्यवहार में तीनों प्रक्रियाओं में सीमाएँ स्पष्ट रूप से नहीं निश्चित की गई हैं और उनमें बहुत कुछ असमाप्ति छादन (ओवर-लैपिंग) तथा अनेक क्लिष्टतायें हैं।"[1]

एक राज्य में विधान मडल (Legislature in a State)—विधान मडल सरकार का वह अंग अथवा शाखा है जो राज्य के कानूनों को निश्चित करता, अधिनियमित बनाता अथवा बदलता है। एक निरंकुश राजतन्त्र में

१—एस॰ जे॰ एफ॰ एन॰—एलेमेन्ट्स ऑफ ए गवर्नमेंट (१९५५) पृ॰ २६

शासक के वचन कानून हो सकते हैं, परन्तु कोई भी जनतन्त्रीय अथवा लोकप्रिय सरकार एक ऐसा विधान मडल का प्रबन्ध किए बिना कार्य नहीं कर सकती जिसका एक मात्र कार्य समूहों, स्थानों अथवा सम्पूर्ण राज्य के कल्याण को प्रभावित करने वाले सब मामलों पर विचार करना है। प्राचीन यूनानी नगर राज्यों में अथवा वर्तमानकाल में स्विट्जरलैण्ड के कुछ छोटे कैन्टनों में अधिकाश वयस्क नागरिकों का एक साथ इकट्ठा होना और सामान्य क्रियाओं को नियत्रण करने के लिये कानून अथवा विधियाँ बनाना सभव है। परन्तु विशाल राष्ट्रीय राज्यों मे, जो कि आधुनिक काल की विशेषता है, नागरिकों द्वारा इस प्रयोजन से चुने हुए प्रतिनिधियों से बना हुआ एक प्रतिनिधिवादी विधान मडल ही कानून बनाने की एक मात्र व्यावहारिक प्रणाली है। कालान्तर में इस प्रकार का सगठन विधि बनाने की कला के विशेषज्ञों का एक सग्रह बन जाता है। यद्यपि ऐसे प्रतिनिधिवादी विधान मडल का प्रारभ इगलैण्ड में हुआ था, परन्तु यह व्यवस्था सभी आधुनिक सभ्य राज्यों में सार्वभौम रूप से ग्रहण कर ली गई है।

विधान मडल के रूप एकलसदन और द्विसदन (Forms of Legislatures, Unicameral and Bicameral)—प्राचीन काल में राष्ट्र अपने कानून धर्म, नीति सहिताओं और शासकों की घोषणाओं से निकालते थे। इसमें प्रथा का भी महत्वपूर्ण भाग था। परन्तु आधुनिक राज्य मे एच्छिक विधान कानून का सबसे बडा स्रोत है यद्यपि प्रथा, साम्याधिकार (Equity) और न्यायनिर्णय (adjudication) का भी बहुत कुछ प्रभाव था। इसलिये एक आधुनिक सरकार में एक विधान मडल के रूप, रचना और शक्तियों का प्रश्न अत्यन्त महत्व पूर्ण हो जाता है। इंगलैण्ड का राजनैतिक इतिहास दिखलाता है कि बहुत कुछ घटनावश ही पार्लियामेंट दो घरों, हाउस आफ लार्ड्स और हाउस आफ कामन्स में विभाजित हो गई परन्तु ब्रिटिश राजनैतिक सस्थाओं की नकल करने वाले दूसरे कुछ देशों ने इगलेंड के उदाहरण का अनुसरण किया और वैज्ञानिकों में से बहुत सों का यह मत है कि एक द्विसदन विधानमडल एक एकलसदन विधान मडल से अधिक लाभदायक और उपयुक्त होता है। मेरियट (Marriot) कहता है कि "असाधारण मतैक्यता से सभ्य ससार ने द्विगृही विधान मडल के पक्ष में निर्णय किया है?" उनके[1] अनुसार द्विसदनवाद के लाभ अनेक हैं। सबसे पहले, जब एक विधान एक सदन से स्वीकृत हो जाता है वह दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है जब फिर उस पर तर्कपूर्ण विचार किया जाता है इस प्रक्रिया में विधान के पहले सदन से निकलने

---

१ मेरियट—सेकिण्ड चेम्बर्स, पृ० १।

पर उसमें जो दोष रह जाते हैं उनमें से कुछ दूसरे सदन में निकाल दिये जाते हैं। इस प्रकार ऊपरी सदन (Upper House) जो कि कम सार्वजनिक और छोटे सदन का नाम है, एक प्रकार का पुनरावृति गृह है। दूसरे आधुनिक राज्य में बराबर बढ़ते हुये विधान के कारण एक सदन को सामने आने वाले प्रत्येक मामले पर पर्याप्त समय और ध्यान देना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इस प्रकार एक ऊपरी सदन की संस्था जहां पर कुछ विधान विकसित हो सकते हैं, दोनों गृहों की सभा होने पर बहुत से विधानों पर साथ साथ विचार करने की सुविधा उपस्थित करती है। यह सत्य है कि एक गृह से स्वीकृत होने पर प्रत्येक विधान दूसरे द्वारा स्वीकृत होने के लिये भेज दिया जाता है। परन्तु एक सदन द्वारा पहली बार विचार किये जाने पर भी कुछ महत्वहीन विधान अस्वीकृत कर दिये जाते या छोड दिये जाते है और इससे निश्चय ही विधान निर्माण में सुविधा होती है। तीसरे, यह कहा जाता है कि एक लोकप्रिय सदन जिसमें कि बहुधा सीधे नागरिकों द्वारा चुने हुए कम आयु के लोग रहते हैं, सार्वजनिक उत्तेजना के जोश में अक्सर, जबकि किसी एक महत्वपूर्ण मसले पर विवाद के कारण उद्वेग उमड आते हैं, तब वह उन विधानों पर विचार करता है जिनकी सामग्री पर मतदाताओं ने मतदान के समय गौर नहीं किया था, ऐसे अवसरों पर सार्वजनिक प्रतिनिधि मसले पर विचार करने में विचार की गंभीरता नहीं ला पाते हैं। ऐसे मामलों में ऊपरी सदन एक अधिक गंभीर संगठन के रूप में काम करता है क्योंकि उसमें बहुधा अधिक वयोवृद्ध और अनुभवी लोग शामिल होते हैं जो अधिकतर उद्वेगों से विचलित नहीं हो सकते और क्षणिक अनुभूतियों से कम प्रभावित होते हैं तथा पक्षपातों और लालचों के वशीभूत कम होते हैं। दूसरे शब्दों में, ऊपरी सदन लोकप्रिय संसद के जल्दी में और अविचार पूर्वक बनाए हुए विधानों पर नियंत्रण रखने का काम करता है। चौथे, एक लोकप्रिय संसद प्रादेशिक आधार पर जनता का प्रतिनिधि होने के कारण एक राज्य के अधिक स्थायी तत्वों जैसे निहित हितों, अल्पसंख्यक समुदायों, कुछ विशेष व्यवसायों और उद्योगों का प्रतिनिधित्व नहीं करता। लोकप्रिय सदन से भिन्न आधार पर बने हुए एक ऊपरी सदन की स्थापना से इन दोषों का इलाज हो जाता है। इस तरीके से सरकार के विधायक अंग में सब हितों और समुदायों को समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाता है। पांचवें, क्योंकि ऊपरी सदन अल्प संख्यक होता है और आम तौर से उसमें लोकप्रिय संसद से अधिक योग्य लोग रहते हैं इसलिये वह कानून बनाने में दूसरे सदन की अपेक्षा अधिक समय लगाता और बेहतर ज्ञान का प्रयोग करता है।

द्विसदनवाद की हानियां (Disadvantages of Bicameralism)—द्विसदनवाद के समर्थकों के विरुद्ध ऐसे भी लोग हैं जिनका यह विश्वास है कि ऊपरी सदन उस प्रयोजन को पूर्ण करने में असफल रहे हैं जिसके लिए वे स्थापित किए गए थे। इन्होंने

पहले यह तर्क किया जाता है कि एक जनतन्त्रीय राज्य मे यदि ऊपरी सदन जनता द्वारा बनाया जाता है और उसे निचले सदन के बराबर शक्तियाँ मिली रहती है तो वह केवल दूसरे की ही पुनरावृत्ति है और इसलिए वह केवल विधायक यत्र को अधिक खर्चीला और पेचीदा बना देता है। दूसरे, यदि ऊपरी सदन निचले से कम शक्ति का उपभोग करता है जैसा कि फ्रास और इंगलैंड में है, तब वह व्यर्थ ही बना है। तीसरे यदि ऊपरी सदन अधिक रूढिवादी है और निचले सदन से सकुचित मतदान से चुना गयाहै तो वह शासन यत्र पर एक गाडी के पाँचवे पहिये के समान एक बोझ मात्र है और इस प्रकार जनतन्त्र के विरुद्ध है। चौथे, यदि ऊपरी सदन एक नामनिर्दिष्ट (nominated) सभा है जैसा कि कनाडा मे है तो इस प्रणाली मे विधायक शक्ति नाम निर्देशन करने वाली सत्ता के हाथ में आ जाती है। यदि वह एक वशक्रमानुगत सस्था है जैसा कि इंगलैंड में है तो यह गलती से यह माने हुए है कि विधायक बुद्धि वशानुक्रम से अथवा इच्छापत्र से दी जा सकती है। और यदि वह व्यवसायो अथवा निहित स्वार्थों के प्रतिनिधियो द्वारा बनाई जाती है तो एक व्यवसाय और दूसरे व्यवसाय में अथवा एक विशेष हित और दूसरे हित मे उनके सापेक्षिक महत्व को निश्चित कर के साम्याधिकार के आकार पर सदस्यता निश्चित करना बडा कठिन है। यह भी कहा गया है कि एक एकलसदनवादी विधान मडल मे भी कुछ व्यवस्थाये, जैसे कमेटी की व्यवस्था अथवा एक विधान को अन्तिम रूप से स्वीकार करने से पहले उस पर जनमत लेने अथवा उसके लाभ या उपयुक्तता के विषय मे विशेषज्ञो की राय लेने का प्रविधान बनाने से, वे सब सुविधायें प्राप्त को जा सकती है जोकि किसी ऊपरी सदन से भी अधिक अश में नही होती, जैसे विधान में देर लगाना अथवा किसी कानून के दोषो को दूर करना।

क्या सघो में ऊपरी सदन आवश्यक हैं ? (Are upper routes in Federations necessary)—सघ राज्यो के बारे में द्विसदनवाद के समर्थको का यह कहना है कि छोटी बडी सब इकाइयो के स्तर मे समानता बनाये रखने के लिये और इकाइयो के विशेष अधिकारो की रक्षा करने के लिये ऊपरी सदन अनिवार्य रूप से आवश्यक है। उनका तर्क है कि ऊपरी सदन के बिना बडे राज्य जनसख्या के आधार पर बनाये गये निचले सदन में अपने प्रतिनिधियो की सख्या के बलपर छोटे राज्यो को हरा देंगे और इस प्रकार सब राज्यो की पद की समानता मे, जो कि सघवाद का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त है, व्याघात पड जाएगा। निस्सन्देह सभी सघो मे सघ बनाने के अवसर पर सघ बनाने की एक शर्त के रूप में सब इकाइयो के समान प्रतिनिधित्व के आधार पर एक ऊपरी सदन को स्थापना करने पर जोर दिया गया था परन्तु सघात्मक विधान मडलो की व्यावहारिक क्रिया ने सिद्ध करके दिखा दिया है कि सघात्मक

संविधान निर्माताओं के अनुमान उचित नहीं थे और ऊपरी सदनों की लाभदायकता के बारे में पाली हुई आशायें यथार्थ व्यवहार में पूरी नहीं हुई है।

दोनों सदनों की रचना और शक्तियां (composition and powers of the two chambers)—एक द्विसदनवादी विधान मंडल में दोनों सदनों की रचना और आपेक्षित शक्तियों की समस्या ने आधुनिक राज्यों में गंभीर कठिनाइयां उत्पन्न कर दी है। आमतौर से ऊपरी सदन निचले सदन से छोटे होते हैं जिनमें सबसे उल्लेखनीय अपवाद ब्रिटिश लार्ड सभा है, उनमें लोकप्रिय ससदों से कम अथवा समान शक्ति होती है परन्तु संयुक्त राज्य में सीनेट प्रतिनिधियों की सभा से निश्चय ही अधिक शक्तिशाली है और सबसे अधिक शक्तिमान है, जबकि ब्रिटिश लार्ड सभा सब ऊपरी ससदों में सबसे अधिक निर्बल है। ऊपरी सदन निचले सदनों से अधिक लम्बा जीवन व्यतीत करते हैं। लार्ड सभा अधिकतर वंशानुगत होती है और कनाडा की ससद आजीवन रहती है, निचले सदन वित्त पर अन्तिम नियंत्रण रखते हैं। यद्यपि संयुक्त राज्य अमरिका में दोनों ससद इस प्रकार के विषयों में समान शक्ति रखते हैं, केवल धन विधेयक (money-bill) निचले सदन में उत्पन्न होते हैं। बहुत से राज्यों में ऊपरी सदन उच्च पदाधिकारियों या राज्यों के अध्यक्षों पर महाभियोग (impeachment) के महत्वपूर्ण मामलों का निर्णय करने के लिए न्याय-पालिका का काम करते हैं। जहाँ पर ऊपरी सदन चुने हुए होते हैं वहाँ मताधिकार निचले सदनों से अधिक संकुचित होता है और कुछ उदाहरणों में अप्रत्यक्ष चुनाव तक होता है, परन्तु संयुक्त राज्य अमरीका में १९१३ से राज्यों के विधान मंडलों द्वारा संघ के सभासदों के स्थान पर प्रत्येक राज्य में मतदाताओं द्वारा सीधा चुनाव कराया जाता है, आस्ट्रेलिया में सीनेटरों के चुनाव की भी यही प्रणाली है। साथ में दी हुई सारिणी में कुछ द्विसदनवादी विधान मंडलों में सदनों की तुलनात्मक रचना और शक्तियों का परिचय दिया गया है।

विधान मंडलों में निर्वाचन की विभिन्न प्रणालियां (Different methods of election to legislatures)—विधान मंडलों में प्रतिनिधि चुनने की समस्या को प्रत्येक राज्य स्वयं सुलझाता है। परन्तु फिर भी विभिन्न जनतन्त्रीय राज्यों में विधान मंडलों के चुनावों में एक बात समान है अर्थात् चुनाव दलों के आधार पर होते हैं। राजनैतिक दल जनतन्त्रीय चुनावों का सार है। इंगलैंड में विश्वविद्यालय निर्वाचन क्षेत्रों के समाप्त होने के बाद अब कामन्स सभा के सदस्य एक सदस्य वाले निर्वाचनक्षेत्र से चुने जाते हैं। सबसे अधिक संख्या में मत पाने वाला निर्वाचनार्थी निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है, चाहे वह मतों का कितना ही प्रतिशत प्राप्त करे।

निर्वाचन की आपेक्षिक मताधिक्य पद्धति (Relative majority system of election)—यह निर्वाचन की आपेक्षिक मताधिक्य पद्धति कहलाती है। जब

तक उदार और अनुदार केवल दो राजनैतिक दल रहे तब तक इसने इगलेंड में सन्तोषजनक रूप से काम किया और आमतौर से दो निर्वाचनार्थियों में सीधा सघर्ष होता था। श्रमिक दल (Labour Party) के आने के बाद से यह पद्धति पार्लियामेंट में मतदाताओं का सच्चा और सही प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में असफल रही है जैसा कि बाद में विस्तार से बतलाया जायेगा। जहाँ यह पद्धति प्रचलित है वहाँ विधान मडल में राजनैतिक दलों का सही प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता चाहे दो दल ही निर्वाचन में भाग लें। निम्नलिखित आँकड़े यह स्पष्ट करते हैं। वे कनाडा के सघात्मक विधानमडल के निचले सदन के निर्वाचनों से सम्बन्धित हैं।

निर्वाचन का वर्ष	प्रान्त	दल	दल को प्राप्त हुए मत	दल को मिले स्थान
१९०४	नोवास्कोटिया	उदार	५६,५२६	१८
		अनुदार	४६,१३२	शून्य
१९११	ब्रिटिश कोलम्बिया	उदार	२५,६२२	१
		अनुदार	१६,३५०	शून्य
१९२६	अलबर्टा	विमान दल	६०,०००	११
१९२६	मैनीटोबा	अनुदार	४९,०००	१
		उदार प्रगतिशील	३८,०००	शून्य

अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति (System of proportional representation)—निर्वाचन की आपेक्षिक मताधिक्य पद्धति के दोष सभी ने माने हैं। उसके लिये कुछ शोधक उपाय भी बतलाए गए हैं जिनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण अनुपाती प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त है जो कि पी० आर० भी कहलाता है, जिसका लक्ष्य विधान मडल में प्रत्येक राजनैतिक दल को निर्वाचन में उसके पक्ष में डाले गए मतों के अनुपात में प्रतिनिधित्व दिलवाना है। अत अनुपाती प्रतिनिधित्व का यह सिद्धान्त है कि एक दलगत निर्वाचन में, जैसी कि अभी परिभाषा की गई है कि दलों के बीच में निर्वाचित सगठन में सीटों का विभाजन मतदाताओं द्वारा उनके मतों के विभाजन के अनुरूप होगा।"[1] पी० आर० द्वारा निर्वाचन की पद्धति कई प्रकार से ग्रहण की गई है। इस व्यवस्था के अनुसार सविधान क्षेत्र बहुत प्रतिनिधिक (multimember) होते हैं और मतदाताओं को या तो मतदान की सीमित शक्ति दी जाती है अर्थात् निर्वाचित होने वाले सदस्यों की सख्या से कम मत दिये जाते हैं, अथवा सचयी मत (Cumulative Vote) देने की सुविधा अर्थात् मतदाता

१—रास, जे० एफ० एस०—एलेक्शन्स और एलेक्टर्स पृ० १२।

को समस्त मत एक अकेले निर्वाचनार्थी के पक्ष में देने अथवा उनको एक से अधिक सदस्यों में बांट देने की शक्ति दी जाती है। अनुदानीप्रतिनिधित्व का एक दूसरा रूप भी है जो कि एकल संक्रमणीय मत (single transferable vote) की व्यवस्था कहलाती है। इस रूप में एक मतदाता का केवल एक मत होता है और वह मत-दान पत्र पर अपनी रुचि को अपने चुने हुए निर्वाचनार्थियों के पक्ष में १-२-३-४ या इसी प्रकार जाहिर करता है। इस व्यवस्था की विस्तृत बातें अत्यन्त पेचीदा हैं और निर्वाचन अधिकारी से सम्बन्ध रखती हैं, इसलिये उनका यहां विवेचन करने की आवश्यकता नहीं है।

प्रतिनिधि और मतदाता उनके सम्बन्ध (Representatives and the voters; their relations)—एक प्रतिनिधि और उसके निर्वाचन क्षेत्र में क्या सम्बन्ध होना चाहिए? क्या उसको एक विधान-मंडल में उपस्थित किसी विधान के पक्ष अथवा विपक्ष में मत देते हुए स्वयं अपने निर्णय का प्रयोग करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए अथवा क्या उसको अपने निर्वाचकों (constituents) के सामान्य मत के अनुसार कार्य करना चाहिए? उसको कैसे अपने अपने निर्वाचकों के सम्पर्क में रहना चाहिए? एक राज्य के वास्तविक शासन में ये महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। इनको प्रत्येक राज्य स्वयं सुलझाता है। निचले सदनों में समय समय पर निर्वाचन, ऊपरी सदनों में निश्चित अन्तर पर नए सदस्य भरे जाना, मंत्रिमंडल और विधान सभा में संघर्ष होने पर लोक सभा का विघटन, लोकनिर्देशन (referendum) की संस्था, उपक्रम करने का अधिकार (initiative) और प्रत्यावर्तन (recall) विभिन्न राज्यों में ग्रहण की गई कुछ मुख्य युक्तियां हैं। इनका इस पुस्तक में यथा स्थान वर्णन किया गया है।

कार्यपालिका सरकार का दूसरा अंग है (Executive is the second organ of government)—सरकार का दूसरा अंग कार्यपालिका है, जिसके रूप, कार्य और विधान मंडल से सम्बन्ध प्रत्येक राज्य में बदलते रहते हैं। निस्सन्देह, एक राज्य में शासन की धारणा उसकी कार्यकारिणी के रूप से निश्चित होती है। क्या कार्यपालिका की शक्ति एक व्यक्ति के हाथ में रहनी चाहिए या अनेकों के? उसके पद का काल कौन सा होना चाहिये, स्थिर या परिवर्तनशील? क्या वह न हटाए जा सकने योग्य होना चाहिये या हटाये जा सकने योग्य और उत्तरदायी होना चाहिये? दूसरी अवस्था में एक जनतंत्रीय राज्य में कार्यकारिणी किसके प्रति उत्तरदायी होनी चाहिये, विधान मंडल के प्रति अथवा जनता के प्रति यदि कार्य-पालिका में अनेक लोग शामिल हों और वह उत्तरदायी हो तो क्या प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी होना चाहिए, या उन सब को संयुक्त उत्तरदायित्व

(joint responsibility) के सिद्धान्त के अनुसार काम करना चाहिए? प्रत्येक राज्य ने इन प्रश्नो का स्वयं उत्तर दिया है।

कार्यपालिका के रूप के अनुसार सरकारो का वर्गीकरण: निरंकुश, अध्यक्षात्मक और ससदीय (classification of governments according to the forms of the executive despotic, presidential or parliamentary)—सरकारो का वर्गीकरण कार्यपालिका के रूप के अनुसार किया जाता है। जब कार्यपालिका शक्ति किसी एक व्यक्ति को दे दी जाती है जो कि किसी के प्रति किसी प्रकार का उत्तरदायित्व नही रखता तब सरकार निरंकुश कहलाती है, जैसी कि अफगानिस्तान के समान राजतन्त्रो मे है। कभी कभी वास्तविक कार्यपालिका शक्ति जनता अथवा उसके प्रतिनिधियो द्वारा निर्वाचित किसी एक अकेले व्यक्ति को निश्चित काल के लिये सौप दी जाती है। इस प्रकार की सरकार जनतन्त्रीय और अध्यक्षात्मक रूप की है जैसी कि सयुक्त राज्य अमेरिका में है। अमेरिका का राष्ट्रपति एक मात्र कार्यपालक है परन्तु वह सविधान का पालन करने के लिये बाध्य है। इगलैण्ड, फ्रास, भारतीय गणतन्त्र, ब्रिटिश अधिराज्यो और आयरलैण्ड इत्यादि मे कार्यपालिका मन्त्रिमडल (Cabinet) होता है। उसमें कई व्यक्ति शामिल होते है जो कि विधान मडल, आम तौर से निचले सदन, के प्रति सयुक्त रूप से उत्तरदायी होते है। इस प्रकार की सरकार ससदीय अथवा मन्त्रिमडल की सरकार कहलाती है। वह तब तक पदारूढ रहती है जब तक कि उसको लोक सभा का विश्वास प्राप्त होता है।

अध्यक्षात्मक सरकार (Presidential Form of Government)—फिलाडेल्फिया में अमरीकन सविधान बनाने वालो के सामने अपने लिए सर्वोत्तम प्रकार की कार्यपालिका के निश्चय करने की कठिन समस्या थी जिससे कि उनके अधिकार कायम रहे और सरकार की शक्ति और स्थिरता बनी रहे। आखिर कार उन्होंने राजतन्त्र को उसके अत्याचारी तन्त्र बनने के भय से और ससदीय व्यवस्था को अस्थिरता के भय से छोड दिया। इसलिए वे एक नई प्रकार की कार्यपालिका पर पहुँचे जो कि अब अध्यक्षात्मक रूप से प्रसिद्ध है। इस व्यवस्था में अप्रत्यक्ष पद्धति से चुना हुआ एक राष्ट्रपति एक निश्चित काल के लिये कार्यपालिका की शक्ति धारण करता है। वह अपनी शक्ति को किसी व्यक्ति अथवा सगठन के साथ नही बाँटता, वह न तो विधान मडल का भाग है और न उसके प्रति उत्तरदायी है। वह विश्वासघात की अवस्था को छोड कर किसी भी अवस्था में कुशासन अथवा बुरे प्रशासन के कारण नही हटाया जा सकता। वह विधान निर्माण का नियन्त्रण नही कर सकता यद्यपि वह उसको प्रभावित कर सकता है। सयुक्त राज्य पहला देश था जिसने इस व्यवस्था को ग्रहण किया और अब तक

किसी भी देश ने उसके सच्चे अर्थो में उसे ग्रहण नहीं किया है, परन्तु वह अमेरिका की हालतों में सबसे अधिक अनुकूल मानी जाती है। राष्ट्रपति अपने में सरकार का सम्मानास्पद और प्रभावशाली दोनों भाग शामिल करता है।

मन्त्रिमडल व्यवस्था के सिद्धान्त (Principles of the Cabinet System)—सरकार का ससदीय रूप अर्थात् मन्त्रिमडल व्यवस्था ग्रेटब्रिटेन का व्यावहारिक जनतन्त्र को सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान है। वह कैसे प्रारभ और विकसित हुई, इसका विवेचन बाद में किया जाएगा। कुछ ऐसे निश्चित सिद्धान्त हैं जिनके अनुसार मन्त्रिमडल व्यवस्था काम करती है। इंगलैंड में अब भी नाम मात्र का कार्यपालक राजा अथवा उसी के नाम से ससदीय व्यवस्था में राज्य होता है परन्तु वास्तविक कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग मन्त्रिमडल करता है। जिन सिद्धान्तो पर मन्त्रिमडल काम करता है वे ये हैं। सबसे पहले विधान मडल में निश्चित राजनैतिक दल होने चाहिए और कार्यपालिका का निर्माण उस दल द्वारा होना चाहिए जो कि स्वय विधान सभा में बहुसख्यक हो अथवा अधिकाश सदस्यो का समर्थन पा सकता हो। दूसरे, कार्यपालिका शक्ति का उपयोग करने का अधिकार मन्त्रिमडल के सदस्य कहलाने वाले अधिकारियो की एक अपेक्षाकृत छोटी सभा को होना है जो कि लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं, यद्यपि द्विसदन विधान मडल होने पर उनमे से कुछ ऊपरी सदन के भी सदस्य हो सकते हैं। मन्त्रिमडल प्रशासन की नीति निर्धारित करता है, विधान सभा का निर्देशन करता है और उसके सामने स्वीकृति के लिये बजट रखता है। केबिनट का मन्त्रिमडल समस्त मन्त्रिमडल के अन्तर्गत एक छोटा दल होता है जिसमें कि सब अधिकारी, मत्री, ससदीय सचिव तथा उपसचिव इत्यादि शामिल होते हैं जो सब कैबिनेट के त्यागपत्र देने पर त्यागपत्र दे देते हैं। कैबिनेट मन्त्रिमडल में मुख्य मत्री जो आमतौर से प्रधान मत्री या "प्रीमियर" कहलाता है सबसे मुख्य व्यक्ति होता है। वह केवल कैबिनेट ही नहीं बनाता बल्कि उनकी सामान्य नीति का भी निर्देशन करता है और मन्त्रियो मे शासन विभागों (Portfolios) को बांटता है। एक अकेला मत्री प्रधान मत्री के सम्मुख अपना त्यागपत्र उपस्थित करके इस्तीफा दे सकता है परन्तु प्रधान मत्री के इस्तीफा देने पर सम्पूर्ण मन्त्रिमडल का इस्तीफा माना जाता है। वह लोक सभा का नेता होता है जहाँ पर वह अपने मन्त्रिमडल की नीति का बचाव करता है और आलोचनाओ का उत्तर देता है। तीसरे, मन्त्रिमडल तब तक पदारूढ रहता है जब तक कि वह लोक सभा का विश्वासपात्र रहता है। यदि लोक सभा अविश्वास का प्रस्ताव पास करती है या किसी महत्वपूर्ण योजना को अस्वीकृत कर देती है या मन्त्रिमडल द्वारा पेश किए गए किसी विधान को स्वीकार नहीं करती तो मन्त्रिमडल को इस्तीफा दे देना चाहिये। यदि मन्त्रिमडल यह सोचता है कि विधान मडल का दृष्टिकोण नहीं बल्कि

उसकी नीति का निर्वाचकों द्वारा समर्थन किये जाने की सम्भावना है तो वह सदन के भग करने की इच्छा कर सकता है और देश से अपील करने के लिये सामान्य निर्वाचन की मांग कर सकता है। यदि देश मन्त्रिमडल के दल को बहुसख्या में वापस भेजता है तो मन्त्रिमडल चलता रहता है अन्यथा वह त्यागपत्र दे देता है और तब विरोधीदल सरकार बनाता है। यह सरकार की ससदीय व्यवस्था का सार है। चौथे, मन्त्रिमडल के अधिकाश सदस्य बहुमख्यक दल मे अथवा उस दल से लिये जाने चाहिए जिसको शासन का उत्तरदायित्व ग्रहण करने और सत्ता की बागडोर सम्भालने के लिये कहा गया है। इससे शासन में एक सगठित नीति का जारी रहना सुलभ होता है। परन्तु यदि लोक सभा मे दो राजनैतिक दलो से अधिक है जिनमें से कोई भी बहुसख्यक नही है तो किसी प्रभावशाली दल के नेता को सरकार बनाने को कहा जाता है। वह अपने मत सहयोगियो को स्वय अपने दल से ही चुन सकता है और विधान सभा मे किसी अन्य दल अथवा दलो की सहायता पर निर्भर रह कर शासन का उत्तर दायित्व ग्रहण कर सकता है, अथवा वह एक सयुक्त मन्त्रिमडल (a coalition cabinet) बनाने के लिये अपने मन्त्रिमडल में कुछ मन्त्री दूसरे राजनैतिक दलो से ले सकता है। एक सयुक्त मन्त्रिमण्डल की नीति में स्वभावत सयुक्त दल की रचना करने वाले दलो के सिद्धान्तों मे समझौता शामिल होता है और इसका अर्थ एक निर्बल मन्त्रिमडल है, जिसके बहुधा भग हो जाने का भय रहता है, जैसे कि फ्रास में।

ससदीय रूप की सरकार के गुण—ससदीय रूप की सरकारमें कुछ महत्वपूर्ण गुण है। सबसे पहिले उसमें स्पष्ट राजनैतिक दलो के बनाये जाने की आवश्यकता पडती है जिनके स्पष्ट कार्यक्रम और नीतियाँ हो जिनको वे स्वीकृति के लिये निर्वाचकों के सामने रखते हो। दल के अनुसार निर्वाचन राजनीतिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण तरीका है क्योंकि नागरिक जो कि एक जनतन्त्र में सर्वोच्च स्वामी है खूब जागृत हो जाते हैं। दूसरे, इस व्यवस्था से शासन में ज्ञान और ध्येय एक निश्चित व्यवस्था का ग्रहण करना और जारी रहना सभव हो जाता है, जो कि राज्य के सामान्य कल्याण के लिये अनिवार्य है। तीसरे उसमें सार्वजनिक कल्याण के विरुद्ध विधानों की स्वस्थ आलोचना का समुचित प्रबन्ध रहता है, क्योंकि विधान मडल में विरोधीदल जनतन्त्र के रक्षक के रूप म काम करता है। शासन की कमजोरियों को खोजने तथा उनको जनता की राय के लिये उपस्थित करने की कोशिश करने मे सदैव तत्पर रहकर के वह सरकार को अथवा सत्तारूढ दल को अपने निर्वाचन काल के वायदो को भूलजाने अथवा ऐसी राह पर जाने मे रोकता है जो कि जनता के सर्वोत्तम हित में नही है, और अन्त म पाचवें वह केवल ससद में ही नही बल्कि सदन के बाहर मच से अथवा समाचार पत्रों द्वारा लम्बे चौडे और विशद सार्वजनिक वाद विवादो का अवसर देकर जल्दबाजी में

विधि निर्माण को रोकता है।

अध्यक्षात्मक और ससदीय व्यवस्थाओं की तुलना (*Presidential* and Parliamentary types compared)—ये दोनो प्रकार की सरकारें जैसा कि वह क्रमश अमेरिका और इगलैंड म काम करती है अपने अपने लाभ हानि रखती है, जिन का बाद के अध्यायो में विवेचन किया गया है। बालफोर के अर्ल (Earl of Balfour) ने अमरीकी राष्ट्रपति की ब्रिटिश प्रधान मत्री से तुलना करके जो कि ब्रिटिश ससदीय सरकार में असली कार्य पालक अध्यक्ष है, इन दोनो प्रकार की सरकारो की निम्नलिखित शब्दो में सामान्य तुलना की है

"अध्यक्षात्मक व्यवस्था में प्रशासन का असली अध्यक्ष राष्ट्रपति एक निश्चित-काल के लिए निर्वाचित होता है। व्यवहारिक रूप में उसको हटाया ही नही जा सक्ता। यदि वह अयोग्य भी सिद्ध हो, यदि वह बदनाम हो जाये, यदि उसकी नीति उसके अधिकाश देशवासियो को अमान्य हो तब भी एक नए निर्वाचन का समय आने तक उसको और उसकी प्रणालियो को झेलना ही पडता है।"

"वह मत्रियो की सहायता पाता है जो कि चाहे जितने योग्य अथवा प्रसिद्ध होने पर भी कोई स्वतत्र राजनैतिक पद नही रखते, उनको सभवत किसी प्रकार का सभा-सम्बन्धी प्रशिक्षण नही मिलता और जिन को उनके पद के कालमें कानून इस प्रकार का प्रशिक्षण पाने से रोक देता है।"

"मत्रिमडल पद्धति में हरेक चीज भिन्न है। शासन का अध्यक्ष जो आम तौर से प्रधान मत्री कहलाता है (यद्यपि सन् १९३७ तक उस का कोई वैधानिक पद न था) उस पद के लिए इस आधार पर चुना जाता है कि वह ऐसा नेता है जो कि कामन्स सभा में बहुसख्या का समर्थन प्राप्त करने के लिए सबसे अधिक योग्य है। वह उस पद को तब तक रखता है जब तक कि वह सहायता मिलती रहती है। वह अपने दल का अध्यक्ष होता है। वह ससद के दो सदनो में से एक का अथवा दूसरे का सदस्य अवश्य होना चाहिए और वह उस सदन का नेतृत्व करने योग्य होना चाहिए जिससे वह सम्बन्धित है। जबकि एक राष्ट्रपति के मत्रिमडल के सदस्य केवल उसके अधीन ही हैं, प्रधान मत्री एक मत्रिमडल में समानो मे पहला (primus inter pares) है जिसमें कि (शान्ति कालीन प्रथा के अनुसार) प्रत्येक सदस्य उसके समान कुछ ससदीय अनुभव रखता है और कुछ ससदीय यश प्राप्त किये होता है।"

"राष्ट्रपति की शक्तियाँ सविधान से परिभाषित की जाती है और उनका (कानून के अन्तर्गत) प्रयोग करने में वह किसी व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी नही है। दूसरी ओर, प्रधान मत्री और उसका मत्रिमडल किसी लिखित सविधान द्वारा नही रोके जाते परन्तु उनको आलोचको और प्रतिद्वन्दियों का सामना करना पडता

है, जिनका पद पूर्णतया अशासकीय (unofficial) होने पर भी उतना ही वैधानिक होता है जितना कि उनका अपना, उनको अमैत्रीपूर्ण प्रश्नो के एक सतत प्रवाह का सामना करना पडता है और उनका सार्वजनिक उत्तर देना पडता है। वे विरोधी मत द्वारा कभी भी पद से हटाये जा सकते है।"

दोनो अध्यक्षो के कानूनी पद पर आधारित इन तुलना से बालफोर यह निष्कर्ष निकालते हैं और ठीक भी है कि "एक राष्ट्रपति का पद एक प्रधान मत्री के पद से कही दृढ है क्योकि उसको पद से हटाया नही जा सकता और उसकी शक्तियाँ कम नही की जा सकती।" परन्तु इस निर्णय में इस चित्र के दूसरे पक्ष का विचार नही किया गया है क्योकि राष्ट्रपति के अधिकार अत्यन्त सक्षिप्त कर दिये गये हैं, यद्यपि उसको जनता की तमाम शक्ति प्राप्त होती है परन्तु वह कानून नही बना सकता, वह ससदीय पदो पर नियुक्तियाँ अवश्य करता है परन्तु केवल सीनेट की स्वीकृति से ही। उसकी नीति को चलाने के लिए विधान अथवा आर्थिक प्रविधान काग्रेस पर निर्भर रहता है जो कि कभी कभी विरोधी भी हो सकती है। जब कि वह किसी भी विदेश नीति को अपनाने के लिए स्वतत्र है और किसी भी विदेशी शक्ति से सन्धि कर सकता है, ससद के दो तिहाई सदस्यो की स्वीकृति के बिना यह सब व्यर्थ (nugatory) साबित हो सकता है।

दूसरी ओर एक प्रधान मत्री का पद (जो कि वैधानिक रूप से एक दुर्बल अध्यक्ष है) जहाँ तक विधान मडल के सहयोग का सम्बन्ध है अधिक शक्तिमान हो सकता है। कामन्स मे बहु सख्यक दल का नेता होने के कारण उसको तब तक पार्लियामेंट का सहयोग और सहायता मिलती रहती है जब तक कि दल उस नेता की सामान्य नीति से सन्तुष्ट है, पार्लियामेंट के सदस्य निर्वाचको का सामना करने से डरते हुए कि कही वे उनको पुनर्निर्वाचित न करें मत्रिमडल की नीति को तब तक मानते रहते हैं जब तक कि वह ऐसी नीति का अनुसरण नही करते जिसका समाचारपत्र और सर्वसाधारण स्पष्ट रूप से विरोध करते है।

दल व्यवस्था, जनतन्त्रीय राज्य में एक आवश्यकता है (Party system, a necessity in a democratic state)—ससदीय जनतन्त्रों के चलाने मे एक स्वस्थ दल व्यवस्था की आवश्यकता पर अधिक जोर देने की आवश्यकता पडती है। न हटाये जाने वाले कार्यपालको और जनतन्त्रीय सस्थाओं वाले राज्यो में भी यह व्यवस्था कम लाभदायक नही है क्योकि जैसा कि ब्राइस (Bryce) ने कहा है "यद्यपि एक दल के अस्तित्व के लिए मान्य, कारण, सिद्धान्त और विचारो के एक विशाल समूह की वृद्धि करना है परन्तु उसका एक मूर्त्त पक्ष भी है और अमूर्त सिद्धान्तो का एक समूह भी है।" वह सहानुभूति, अनुकरण, स्पर्धा और कलहप्रियता

आदि के आधारो पर चलता है। एक दल के सदस्य भावनाओं की परस्पर अनुभूति और प्रयोजन की सामान्यता के बन्धन से बँधे रहते हैं और दल के अनुशासन के नियमो के एक दूसरे से अलग होने से रुके रहते हैं। विरोधियो का मुकाबला करने और सार्वजनिक जीवन में उनको हराने के तरीकों को पता लगाने से उत्पन्न स्फूर्ति मे एक विचित्र प्रकार की सुख की अनुभूति होती है।

दल व्यवस्था राजनैतिक सिद्धान्तो और मतो को निश्चित रूप देती और प्रकट करती है, जिससे राष्ट्र का मस्तिष्क समय की आवश्यकताओं के प्रति जागरूक रहता है। क्योंकि "अपने स्वय के व्यावसायिक हितों से बाहर के विषयो पर इतने कम लोग गभीरता से सोचते हैं कि यदि दल की सर्चलाइट बराबर काम न करे तो जनमत अस्पष्ट और प्रभावहीन हो जाय। वह निर्वाचकों के एक भारी समूह के विचारो की स्पष्टता और गडबडी मे से कार्य करने की एक मूर्त योजना उत्पन्न करता है। यद्यपि प्रत्येक दल किसी विषय पर अपने ही पक्ष को उपस्थित करता है और दूसरे की अच्छाइयो को भी छिपाने का प्रयत्न करता है, परन्तु जनता निस्सन्देह राज्य की यथार्थ अवस्थाओ और समस्याओं के बारे में बहुत कुछ सीख लेती है।

प्रत्येक राज्य में राजनैतिक दलो का सगठन उसकी अपनी परम्पराओं, प्रथाओ और राजनैतिक समस्याओं से बहुत अधिक प्रभावित होता है। इसका बाद में उपयुक्त स्थान पर विवेचन किया जाएगा।

एक राज्य में प्रशासन सेवा (The Civil Service in a State)—जबकि दलव्यवस्था कार्यपालिका के प्रयत्नों को ठीक करती और उसको सरकार का उत्तरदायित्व निभाने में चौकन्ना रखती है, प्रशासन सेवा जो कि कार्यपालिका का ही बृहद अग है पदारूढ दल के सिद्धान्तों के अनुरूप यथार्थ प्रशासन चलाती है। उसमें विभिन्न स्तरों के अफसरो की एक सेना शामिल होती है जो कि अधिकतर स्थायी आधार पर भर्ती किये जाते हैं। अफसरो से क्रमश अपने अपने विशेष कर्तव्यों को पूरा करने के लिये आवश्यक योग्यता रखने की आशा की जाती है। राज्य के कामों का भारी बोझ सरकार को एक ऐसी सेवा स्थापित करने के लिये बाध्य करता है जो कि अपनी स्थायी प्रकृति के कारण वास्तविक मत्रिमडल से अलग किया जा सकता है और जिसके व्यक्ति मत्रिमडल के बदलने के साथ साथ नहीं बदलते। दल, पद पर आरूढ हो सकता है अथवा उससे हटाया जा सकता है, परन्तु स्थायी प्रशासन सेवक (Civil Servants) लगातार काम करते रहते हैं। पदारूढ दल की नीति की आलोचना किए बिना उनको निष्पक्ष रूप से उनकी आज्ञाओ और आदेशो का पालन करना पड़ता है। प्रशासन सेवक स्थायी सेवक हैं, और साथ साथ प्रत्यक्ष शासक हैं। इसलिये यथार्थ प्रशासन उनके ही चरित्र और योग्यता पर निर्भर

रहता है। क्योकि चाहे कार्य पालिका की नीति नागरिको के सर्वोत्तम हितो की वृद्धि करना हो, परन्तु जबतक कि प्रशासन सेवको का विशाल सगठन नीति के विस्तार को यथार्थ व्यवहार में उतारने के लिए स्वामिभक्ति पूर्वक सहयोग नही करता तब तक वाछित परिणामों को प्राप्त नही किया जा सकता।

एक राज्य में न्यायपालिका सरकार का तीसरा अग है (Judiciary in a State is the third organ of Government)—सरकार का तीसरा अग न्यायपालिका है। जैसे ही मनुष्यों ने अपने को एक समाज मे सगठित किया कि उनमे आपस मे या उनमे और उनके शासको में झगडे और लडाइयो की सभावना स्पष्ट हो गई। इन मतभेदो और झगडो का किस प्रकार निपटारा किया जाय, यह राज्य के लिए एक मुख्य समस्या बन गई। कोई भी सरकार केवल कानून बनाकर और शासन चलाने के लिये अफसर नियुक्त करके नही चल सकती। उसको यह भी देखना होता है कि कानून लागू किये जाए और कानून का उल्लघन करने पर दड दिया जाय, ताकि नागरिक अपने अधिकारो का उपभोग करने और अपने कर्तव्यों का पालन करने मे न्याय पा सके। यह काम सरकार के न्याय वाले दल को सौंप दिया जाता है।

न्यायपालिका के काम करने के सिद्धान्त (Principles on which a judiciary works)—एक राज्य में न्यायपालिका का सगठन, कार्य और कार्य करने के सिद्धान्त या तो विधान मडल और कार्यकारिणी के परस्पर सहयोग से निश्चित किये जाते है अथवा सघ सविधान द्वारा गिना दिये जाते है। कुछ ऐसे सामान्य सिद्धान्त है जिनपर एक आधुनिक राज्य की न्यायपालिका कार्य करती है। न्याय करना न्याय-पालिका का मुख्य कार्य होने के कारण सबसे मुख्य मूलभूत सिद्धान्त उसके कार्य करने की निष्पक्षता है। न्याय का अर्थ प्रत्येक नागरिक को उस पुरुष अथवा स्त्री का वास्तविक भाग देना है। यह तभी सभव हो सकता है जब कि कानूनों को वास्तविक रूप मे लागू करने मे बिना किसी भय के और निष्पक्ष भाव से न्याय किया जाय। इस निष्पक्षता को प्राप्त करने के लिये तीन शर्तें आवश्यक मालूम पडती है। सबसे पहले, यदि न्यायाधीशो को निडर होकर और निष्पक्ष रूप से काम करना है तो उनके पद सुरक्षित होने चाहिए। वे वादी तथा प्रतिवादियो में सन्तुलन रख सकते है यदि उनको यह विश्वास हो कि उनके निर्णय उनको पदच्युत नही कर सकते, चाहे उनसे राज्य मे ऊँचे और शक्तिशाली लोगों को ही चोट पहुँचती हो। इसके लिये अवधि का निश्चित होना और कार्यकारिणी के नियत्रण से स्वतन्त्रता की आवश्यकता है। जब तक कार्यपालिका को न्याय के काम में हस्तक्षेप करने से नही रोका जाएगा तब तक न्यायाधीशो के मन से अपने कार्य के बिना व्याघात के होने का खतरा दूर नही होगा। फिर न्यायाधीशो को

अपने को सब आकर्षणो से दूर रखने के लिये पर्याप्त वेतन मिलना चाहिये। जहाँ न्यायपालिका भ्रष्ट है और रिश्वतखोरी की ओर उन्मुक्त है वहाँ निष्पक्ष न्याय नही मिल सकता। पैसा अन्तरात्मा को पिघला देता है और साधारण मानव होने के नाते न्यायाधीश भी दुर्बलता से मुक्त नही है। भ्रष्टाचार और रिश्वत खोरी के अवसर न्यूनतम किये जा सकते है और पारितोषिक की ऐसी व्यवस्था द्वारा पूरी तरह दूर किये जा सकते हैं जो उनकी सच्चाई पर सब प्रकार की आँच रोक दे। दूसरे, न्यायाधीशों को न्याय का पूरी तरह जानकार होना चाहिए जिसको कि वे लागू करते हैं। यह अधितौर से न्यायपालक सेवाओ में नियुक्त होने के लिये उच्च कानूनी योग्यताओ को अनिवार्य शर्त बनाने से हो सकता है। तीसरे, वास्तव मे निष्पक्ष होने के लिये न्याय की व्यवस्था को उनके धर्म, जाति अथवा अन्य किसी कृत्रिम भेदो का ख्याल किये बिना आसानी से गरीब और अमीर प्रत्येक वर्ग के नागरिकों की पहुँच के भीतर होना चाहिए। इसका अर्थ है कि क्रमबद्ध न्यायालयो की सख्या, कम न्यायिक शुल्क और राज्य के द्वारा गरीबवादियों को मुफ्त कानूनी सहायता पहुँचाने का प्रबन्ध होना चाहिए। न्याय पाने में अत्यधिक व्यय होने से निर्धन वर्ग कानून के न्यायालयो में न्याय पाने का प्रयास करने से रुक जाते हैं। इससे अमीरो के विरुद्ध असुरक्षा की एक भावना बनी रहती है क्योंकि वे अपनी लम्बी थैलियो के सहारे न्याय और न्याय की अदालतो का यथार्थ प्रयोजन असफल कर सकते है। चोटी पर सर्वोच्च अपील के न्यायालय के साथ विभिन्न श्रेणियो के न्यायालय होने चाहिये, ताकि यदि किसी मुकदमें में वादी असन्तुष्ट रह जाए तो निचले न्यायालय में निर्णय के विरुद्ध वह दूसरे ऊँचे न्यायालय में अपील कर सके। न्यायाधीशो की भर्ती का चाहे जो तरीका हो उनकी असफलता के विरुद्ध कभी गारन्टी नही की जा सकती। इसलिए ऊँचे न्यायालयो में अपील करने का प्रबन्ध होने की आवश्यकता है।

नागरिको के अधिकारों की प्रत्याभूति और रक्षक के रूप में न्यायपालिका (Judiciary as the guarantor and protector of the rights of citizens)—न्यायपालिका नागरिको के अधिकारो की प्रत्याभूति भी है। व्यादेश (injunction) जारी करने के द्वारा वह कार्यकारिणी को किसी विशेष काम करने से रोक सकती है जो कि नागरिको के अधिकारो पर किसी प्रकार का व्याघात पहुँचाए, अथवा वह उसको कोई ऐसा विशेष काम करने के लिये मजबूर कर सकती है जिसको उसे इन अधिकारो की रक्षा करने के लिये करना चाहिए। कानून केवल विधान करता है, न्याय ही वास्तव में अधिकार दिलाता है। भाषण, समिति तथा धर्म की स्वतन्त्रता चाहे उनकी सविधान में कितनी भी जोरदार घोषणा की गई हो तब तक निरर्थक है जब तक कि न्यायपालिका जीवन में उनके उपभोग करने में नागरिको की सहायता

नही करती। जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा, वोट देने और राज्य की क्रियाओ में भाग लेने का अधिकार, ये सब और इसी प्रकार के अन्य अधिकारो की एक भली प्रकार सगठित न्यायिक व्यवस्था द्वारा रक्षा की जाती है। एक राज्य जो अपने विरुद्ध नागरिको को उनके अधिकार नही देता अपना सम्य कहलाने का अधिकार खो देता है। प्लूटार्क(Plutarch)ने ठीक ही कहा है "कोई भी ऐसा बादशाह नही बनता जैसा कि न्याय का वितरण—न्याय ससार का अधिकार सम्पन्न राजा है।"

इसलिये न्यायपालिका निष्कलक चरित्र वाले, भय अथवा पक्षपात से अविचलित, शासको के गुर्राने से निडर, लोगो के हाथ में आकर अपने निर्णयो से स्वतन्त्रता और उन्मुक्ता की अवस्थायें उत्पन्न करती है जो कि नागरिको के मन मे एक सुरक्षा की भावना उत्पन्न करते हैं।

इसलिये सभी आधुनिक सविधान एक ऐसी न्यायपालिका की व्यवस्था करते हैं जो कि आसानी से नागरिको के सभी वर्गों की पहुँच में न्याय का सस्ता और शीघ्र प्रबन्ध उपस्थित करती है। भिन्न भिन्न राज्यो की न्यायिक व्यवस्थाओ में निस्सन्देह अन्तर है परन्तु उनका सम्बन्ध कार्य के विस्तार से अधिक और उन सामान्य सिद्धान्तो से कम है जिन पर कि वे आधारित हैं। सब राज्यो मे न्यायपालिका का एक विशेष रूप से महत्वपूर्ण स्थान होता है।

राज्य को कौन से कार्य करने चाहिए (Functions which the State should perform)—यदि राज्य जीवन को सभव बनाने के लिये सगठित किया गया था तो वह उसको सुखी रखने के लिये जारी है। उस प्रयोजन के लिये, उसका एक निश्चित उद्देश्य है और इसमें कुछ कामो का करना शामिल है। राज्य के क्या लक्ष्य होने चाहिए और उसको कौन से विशेष काम करने चाहिए? ये वे प्रश्न हैं जिनका राजनैतिक विचारको ने समाज की आवश्यकताओ, विवाद की परिस्थितियों और पर्यावरणो और राजनैतिक सभाओ के प्रयोजन पर विचार करने के रुखो के अनुसार उत्तर दिया है। सब देशो और युगो में राजनैतिक विचारको ने राज्यों में घटनाओ के चक्र को बहुत कुछ प्रभावित किया है और इस प्रकार सरकारो मे क्रान्तियो और परिवर्तनो के लिये रास्ता पाट दिया है। यही कारण है कि भिन्न भिन्न राज्य अपने कर्तव्यों के बारे मे भिन्न भिन्न धारणाएँ रखते हैं और इसलिये उनके अनुसार वे कार्य करते हैं। उनके अपने विशेष उद्गम और परपरायें रही हैं, परिस्थितियो ने उनको इतने अधिक रूपो मे माडा है, विभिन्न व्यक्तियो की आवश्यकता, रुचि तथा झक तक ने उनका विभिन्न प्रकार से निर्देशन किया है। अत सरकारो के उपक्रम (undertakings) और क्रियाये, कार्यशील सिद्धान्तो और दृष्टिकोण के लक्ष्यों की प्रतिबिम्बित करती हैं। एक सरकार को क्या काम करने चाहिये, यह इस बात से निश्चित

होगा कि वह सरकार क्या है, सरकार क्या है इससे यह निश्चय होगा कि उसको क्या होना चाहिये।

अनिवार्य और वैकल्पिक में कार्यों का वर्गीकरण (classification of functions into obligatory & optional)—सरकारों के कार्यों की विविधता इन कार्यों की प्रकृति और सीमा पर आधारित एक वर्गीकरण की सभावना उपस्थित करती है। कुछ काम ऐसे हैं जो प्रत्येक सरकार को यदि किसी अन्य प्रयोजन से नहीं तो कम से कम अपने अपने अस्तित्व का औचित्य दिखाने अथवा शासन जारी रखने के लिये करने पड़ते हैं। अमरीका के राष्ट्रपति विल्सन ने सरकार के कामों का दो समूहों में वर्गीकरण किया है अर्थात अनिवार्य और वैकल्पिक अथवा वैधानिक (Constituent) और सामाजिक (Ministrant)। अनिवार्य कार्यों में जीवन, स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की रक्षा तथा साथ साथ वे सब काम शामिल हैं जो *समाज के सामाजिक सगठन के लिये आवश्यक हैं। ये कार्य इतने आवश्यक है कि कठोरतम हस्तक्षेप रहित (laissez faire) मत भी उनको राज्य से नहीं छीनेगा।* इस प्रकार से आवश्यक रक्षा एक राज्य को कानून और सुरक्षा बनाए रखने के लिए मजबूर कर देती है। इस वर्ग में आने वाले दूसरे काम हैं पति और पत्नी तथा माता पिता और बच्चों में कानूनी सम्बन्ध निश्चित करना, सम्पति को रखने, हस्तान्तरित करने तथा बदलने के विषय में कानून बनाना, कर्ज और अपराध के लिये उत्तरदायित्व निश्चित करना अर्थात् जुर्माने और दड का विधान, नागरिकों में सविदो को लागू करना। व्यक्तियों में व्यवहार के झगड़ों को तय करना, राजनैतिक वर्तव्यों और अधिकारों को निश्चित करना, विदेशी राज्यों से व्यवहार। राज्य के वैकल्पिक या सामाजिक काम आमतौर से ये होते हैं—व्यापार और उद्योग को नियमित करना जिसमें सिक्के और मुद्रा भी शामिल हैं, नाप तौल के मानदड स्थापित करना इत्यादि, श्रम का नियमन जिसमें वेतन तथा काम के घन्टों आदि को निश्चित करना भी शामिल है, यातायात और सदेशवाहन जैसे रेल्वे, सड़को, डाक, तार तथा टेलीफोन व्यवस्थाओं का प्रवन्ध करना, शिक्षा, निर्धन और अपाहिज की देखभाल करना, कृषि, उद्योग तथा अन्य आर्थिक योजनाओं का विकास।

राज्य के कार्यों की प्राचीन धारणा (The old conception of functionsof State)—पुराने जमाने में राज्य के कार्यों की धारणा इतनी सकुचित और सीमित थी कि राज्य मारपीट, चोरी, अव्यवस्था इत्यादि को रोकने के नकारात्मक कर्त्तव्यों के करने वाले एक पुलिस दल से अधिक उच्च न था। इस प्रकार की धारणा अनेक परिवर्तनों से गुजरी; और अब उसके स्थान पर आधुनिक काल में एक बिल्कुल भिन्न धारणा आ गई।

सरकार के कार्यों की आधुनिक धारणा (Modern conception of functions of Government)—नकारात्मक कार्यों के अतिरिक्त आधुनिक सरकारें नागरिको की आधीनता के बदले विविध प्रकार के अनेक सकारात्मक (positive) काम भी करती है। अपने राज्य की सरकार से समुखीन (vis-a-vis) आधुनिक नागरिक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अधिकार रखता है जो सरकार को अवश्य जुटाने चाहिए और उनकी रक्षा करनी चाहिए। औद्योगिक क्रान्ति अर्थात् यत्र युग द्वारा लाये गए महान आर्थिक परिवर्तन ने सरकारी कार्यों की प्रकृति और सीमा को बहुत अधिक परिवर्तित कर दिया है। अन्तर्राष्ट्रवाद की विकासमान धारणा ने जिसने राष्ट्रो को अधिकाधिक अन्योन्याश्रित बना दिया है इनको और भी विस्तृत कर दिया है। व्यक्तिवादियो की अक्सर दोहराई गई धारणा कि वह सरकार सर्वोत्तम है जो न्यूनतम शासन करती है, विकासमान समाजवादी प्रवृत्तियो के सामने सरकार को सब कामो में नियत्रण करने की शक्ति देने की धारणा में बदल गई है। आधुनिक सरकारो ने अब तक एक नागरिक के जीवन के सूक्ष्मतम विस्तार में भी हस्तक्षेप करना आरभ कर दिया है, यहाँ तक कि उसके लिये यह भी निश्चित किया जाने लगा है कि उसको क्या पढना चाहिये, क्या खाना चाहिये, कितना खाना चाहिए, कौन सा व्यवसाय करना चाहिये और कैसे विवाह करना चाहिये तथा कैसे तलाक देना चाहिये। नागरिको के अधिकारो का सरकार द्वारा सबसे अधिक अतिक्रमण आर्थिक क्षेत्र मे किया गया है। एक ओर पूँजीवादी देशो में सरकारें विशाल पैमाने के उद्योगो को प्रोत्साहन दे रही है जो कि निजी व्यक्तियों के अधिकार में है, जिनके पक्ष में अनेक कानून है, दूसरी ओर समाजवादी देशो में सब उत्पादक योजनाओ को राज्य के अधिकार म लाने के निश्चित प्रयत्न किये गए है जिससे कि व्यक्ति को समाज के आर्थिक ढाचे में व्याघात उपस्थित करने के लिये बहुत कम अवसर रह जाता है। सयुक्तराज्य अमेरिका जैसे राज्यो मे भी जहाँ कि सघीय सविधान केन्द्रीय सरकार की शक्तियो को सीमित करता है, रुजवेल्टवाद का सार जैसा कि वह नेशनल रिकवरी एक्ट (N.R.R A.) अथवा न्यूट्रेलिटी (Neutrality Act) एक्ट के बाद के सशोधन में शामिल है निर्धन वर्गों के आर्थिक कल्याण की वृद्धि करना था।

आधुनिक सरकारें अपनी क्रियाओ की वृद्धि करने के लिये और नागरिकों को सुखी बनाने के लिय, उसको प्रतिबन्धहीन स्वतन्त्रता के रोकने के लिय नित्य कानून बना रही है, और यह किसी भी अन्य स्थान पर इतना महत्वपूर्ण नही है जितना कि आर्थिक क्षेत्र मे क्योकि वह सरकार की किसी अन्य क्रिया की अपेक्षा नागरिक के दैनिक जीवन को अधिक प्रभावित करता है। फासिस्ट इटली, नाजी जर्मनी और सोवियत रूस की सरकारें मानव जीवन के आर्थिक पक्ष पर किसी भी अन्य सरकार

की अपेक्षा अपने नियन्त्रण को बराबर विस्तृत करती गई हैं। यह कार्य उनसे बिलकुल विरुद्ध है जिसे करने की सरकार को समाजवादी और फासीवादी राज्यों के विकास के पहले आशा थी, जो कि एक बिल्कुल नवीन धारणा पर आधारित है।

क्या यह स्वतन्त्रता है ? यदि स्वतन्त्रता ही लक्ष्य है तो सरकारों को केवल उन कार्यों तक सीमित कर दिया जाना चाहिए जो कि "सर्वाधिक संख्या का सर्वाधिक सुख" जुटाने के साथ साथ, आजादी से सोचने, आजादी से बोलने और अपनी पसन्द का व्यवसाय चुनने की निजी स्वतन्त्रता को व्यक्ति से न छीन ले। स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए बन्धन अनिवार्य है, परन्तु उन्हें व्यक्तिगत प्रेरणा और स्वतन्त्रता को पंगु नहीं कर देना चाहिये।

आदर्शों के संघर्षों और सब राज्यों को जीवन की एक ही धारणा साम्यवादी अथवा फासीवादी में रूपान्तरित करने की प्रेरणा को लिए हुए, जगत की वर्तमान परिस्थितियों में, जनतन्त्रों तक को अपने नागरिकों की नागरिक स्वतन्त्रताओं का अधिक से अधिक अतिक्रमण करने को बाध्य होना पड़ा है। इसलिये व्यक्ति के जीवन में राज्य के हस्तक्षेप का क्षेत्र सीमित करने की आशा कम अथवा नहीं के बराबर है। दूसरी ओर एकदलीय राज्यों में राज्य की क्रिया अपना क्षेत्र इतना बढ़ाती जा रही है कि सामाजिक और आर्थिक जीवन को छोटी से छोटी बात को भी निश्चित किया जा रहा है। वास्तव में यह स्वतन्त्रता के विस्तार के लिये स्वतन्त्रता पर बन्धन लगाने का विरोधाभास है और इसलिये सब राज्यों को अपने कार्यों की वृद्धि करने के लिये बाध्य होना पड़ा है।

पाठ्य-पुस्तकें

इस अध्याय में जिन विषयों पर विचार किया गया है उसके अध्ययन के लिए वृहत् साहित्य उपलब्ध है। प्रत्येक राजशास्त्री और लेखक ने इन विषयों पर कुछ न कुछ अवश्य लिखा है। हाल ही मे इस प्रकार का साहित्य प्रचुर मात्रा में तैयार हुआ है। यद्यपि पाठकों को किसी भी राजनीति की पुस्तकों से पर्याप्त पठन-सामग्री मिल सकती है, पर फिर भी निम्नलिखित पुस्तकें इस अध्ययन के लिये विशेष उपयुक्त होंगी।

Bryce, Viscount—Modern Democracies, Vol I.
Burns, C.D.-Political Ideas.
Coker, F.W.-Recent Political Thought.
Cole, G.D H. and M.I.-Modern Politics, Books V & VI.
Finer, Herman-Theory & Practice of Modern Governments Vol. I, chs I, II, III, VII, XI, XII, XIV and XVI.
Haldane, Lord-The Future of Democracy.
Laski, H. J-A Grammar of Politics.
Laski, H J.-Liberty in the Modern State.
Laski, H.J.-Introduction to Politics.
Michels, R.-Political Parties
Ross, J. F. S.-Elections and Electors, (1954),
Seeley, J.R.-Introduction to Political Science.
Wilson, W-The State
Brand, R. H.-The Union of South Africa, pp. 1-50.
Brooks, R. C.-Government and Politics of Switzerland, pp. 1-50
Bryce, Viscount-Constitutions (Oxford University Press)
Dicey, A. V-Law of the Constitution pp. LXXX...LXXXiii
Finer, Herman-Theory and Practice of Modern Government, Vol. 1. chs VIII-IX
Freeman, E. A-History of Federal Government. Vol. I
Hamilton The Federalist. Nos. II-XI
Laski, H. J.-Grammar of Politics, ch VIII
Newton, A. P.-Federal and Unified Constitutions,-Introduction.
Sharma, B M-Federal Polity, chs. I,III,IV
Sharma, B. M.-Federalism in Theory and Practice, 2 Vols. (1953)
Sidgwick, H.-The Development of European Polity.

SELECT READINGS:

Allen, S. M.–The Evolution of Govt. and Laws vol 8
Bryce, Viscount–Constitution.
Burke, Edmund–Reflections on the Freneh Revolution.
Crips, Sir Stafford–Democracy up to date.
Dicey A. V.–Law of the Constitution.
Laski. H. J.–Introduction to Politics.
Garner. J. W.–Political Science and Government.
Leacock. L P–Elements of Politics.
Sidgwick, H.–Elements of Politics.
Sidgwick, H.–The Development of European Polity.
Taft, W. H.–*Popular Government.*

द्वितीय पुस्तक

इंगलैंड की सरकार

अध्याय ४

अंगरेजी संविधान का विकास

(Evolution of the English Constitution)

"ब्रिटिश साम्राज्य एक नियन्त्रित राजसत्ता द्वारा संयुक्त है जो कि उस प्राचीन नियन्त्रित राजसत्ता के अलावा कोई दूसरा नहीं है जिसका गठबन्धन पहले स्काटलैंड की राजसत्ता से हुआ और जिसमें बाद में समुद्र पार के दूसरे राष्ट्र भी आकर शामिल हो गए। उसका वर्तमान वैधानिक स्वरूप किसी एक घटना या आन्दोलन से उत्पन्न न होकर एक ऐसे क्रमिक विकास के कारण है जो प्राचीन नोर्मन (Norman) जाति की विजय के जितना प्राचीन है। वास्तव में हमें अपनी दृष्टि हटाकर और भी पहले के उन सैक्सन राजाओं पर लगा सकते हैं जिनके आधिपत्य में इंगलैंड के राजा और उसके प्रदेशों का जन्म हुआ। विशेषतया हमारी दृष्टि हमारे राजाओं में सबसे महान् एलफ्रेड पर जाकर जमती है जिसका जीवन व चरित्र अँगरेजी संविधान का जीता जागता रूप मालूम पड़ता है।" —जी० एम० ट्रेविल्यान

इंगलैंड में एंग्लो-सैक्सन जाति—पिक्ट् और स्कौट लोगों से ब्रिटेन के लोगों की रक्षा करने के हेतु आने वाले ऑंगल, सैक्सन और जूट लोग लगभग पाँचवी शताब्दी में ब्रिटेन में बस गए थे। इन नवागन्तुकों ने ब्रिटेन की संस्थाओं के आकार व व्यवहार को बदल दिया जो कि केल्ट और रोमन संस्कृतियों का एक निराला सम्मिश्रण थी। भिन्न-भिन्न योद्धा विजेताओं के आधीन कई छोटे छोटे राज्य बस गए जो कभी एक राज्य के और कभी दूसरे के निर्बल अधिपत्य में रहते थे। इसके पश्चात् के काल की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता थैग्नस् (Thegns) नामक एक शूर जाति का उत्थान था जो कि सामन्तवादी शर्तों पर जागीरों का उपभोग करते थे और युद्ध के समय के राजा की सहायता करते थे।

ब्रिटेन के जीवन पर ईसाइयत का प्रभाव—छठी शताब्दी में जब ५९७ ई० में अंग्रेजों के ईसाई धर्म अपना लेने से ब्रिटेन में एक ऊँची सभ्यता का आरम्भ हुआ जिसने उसके सामाजिक और राजनैतिक जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। सार्वभौम ईसाई धर्म अंग्रेजों को यूरोपियन राजकीय समाज के निकट ले आया और वे अपनी राजकीय सभाओं का धार्मिक संघों के अनुरूप संगठन व संचालन करने लगे।[1] "आरम्भ से ही राज्य व धर्म का निकट सम्बन्ध स्थापित हो गया और यद्यपि वहाँ का धर्मसंघ रोम के पादरी का प्रभुत्व मानता था पर उसका निजी राष्ट्रीय ढंग पर विकास

1—टैसवेल-लैंगमीड—English Constitutional History, p. 8.

हुआ। इस समय जब ब्रिटेन में सात आन्ग्ल व सैक्सन राज्य साथ-साथ स्थित थे सारे प्रदेश में अनेक छोटे छोटे राजा राज्य करते थे। महान् इतिहासकार बेडे (Bede) उनमें से सात का वर्णन करता है। परन्तु वैसेक्स, मर्शिया और नौर्थम्ब्रिया के तीन राज्य सबसे अधिक प्रबल थे। वैसेक्स के राजा एग्बर्ट (Egbert) ने दूसरे राज्यों को अपने आधीन कर उन पर अपना आधिपत्य जमा लिया और अपने को पश्चिमी सैक्सनों का राजा कहने लगा। जिस ईसाई धर्म की प्रेरणा से प्रत्येक राज्य संगठित था और एक केन्द्रीय शक्ति अर्थात् राजा को माने हुए था, उसने राष्ट्रीय भावना के विकास में कोई योग नहीं दिया, जब तक कि विदेशियों के आक्रमण के भय से उन्हें एक साथ मिलकर रहने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अँगरेज जाति की एकता का श्रेय अधिकतर उत्तर से होने वाले डेन लोगों के आक्रमण को है जोकि लगभग ७९३ ई० से प्रारम्भ हुआ और पचास वर्ष के भीतर ही यह एक भारी समस्या बन गया।

एल्फ्रेड इंगलैंड को राष्ट्रीय करता है—सन् ८७१ ई० में जब एग्बर्ट (Egbert) का चौथा पोता एल्फ्रेड वैसेक्स (Wessex) का राजा हुआ उस समय डेनों के आक्रमण ने विकट रूप धारण किया। सन् ८७८ ई० में एल्फ्रेड ने सफेद डन की लड़ाई में डेनों के सरदार गुथरूम (Guthrum) को करारी हार दी और उसे वैडमोर (Wedmore) के संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने को विवश किया जिससे उत्तरी ब्रिटेन पर डेनों का राज्य मान लिए जाने पर भी वैसेक्स की स्वतन्त्रता सुरक्षित कर दी गई। इसके पश्चात् एल्फ्रेड ने वैसेक्स की शक्ति को सुदृढ़ करने की ओर ध्यान दिया। उसने स्थल सेना की शक्ति बढ़ाई, जल सेना तैयार की, कानूनों का सुधार किया और विद्या व देशभक्ति को प्रोत्साहन किया।

नार्मन विजय के पूर्व ब्रिटिश संस्थायें—उस समय सारी जमीन राजा की सम्पत्ति समझी जाती थी और वही समाज का केन्द्र समझा जाता था। राजा ने यह जमीन अर्लों (Earls) और थैनों (Thegns) में इस शर्त पर बाँट रखी थी कि वे युद्ध में राजा की सहायता करेंगे। इस प्रकार के वितरण को फ्यूडल प्रणाली कहते हैं। राज्याधिकार पिता से पुत्र को मिला करता था पर राजा की मृत्यु होने पर राजा के पुत्रों में से सबसे योग्य राजकुमार या राजघराने का और कोई व्यक्ति उसका उत्तराधिकारी चुन लिया जाता था। यह कोई नियम न था कि ज्येष्ठ राजकुमार ही राज्य सिंहासन पर बैठे। राजा की अधिकतर आय उसकी निजी सम्पत्ति व स्थानीय न्यायालयों द्वारा लगाये हुए आर्थिक दण्डों से होती थी। यद्यपि राजा अभी न्याय का स्रोत न समझा जाता था क्योंकि जागीरदारों की अपनी-अपनी जागीरों में न्याय की संस्थायें थी परन्तु धीरे धीरे राजा का न्याय जागीरदारों की सत्ता को हटा कर उसका स्थान स्वयं ले रहा था।

विटेनगेमोट (Witenagemot) इसकी बनावट और इसके कर्त्तव्य—उस समय राजा निरंकुश न था उसकी शक्ति अमर्यादित न थी। विटेनगेमोट (Witenagemot) नामक राज्य परिषद् को बडे अधिकार प्राप्त थे और यह राजा की शक्ति पर अंकुश रखती थी। इस संस्था को राष्ट्र की सर्वोच्च कौंसिल माना जा सकता है। इस परिषद् में प्रत्येक स्वाधीन नागरिक बैठ सकता था। परन्तु निसन्देह एक यह कुलीन संस्था थी जिसके सदस्य राजा, जागीरदार, मठधारी, पादरी या बुद्धिमान कहलाने वाले व्यक्ति ही होते थे। जो लोग इस परिषद् में उपस्थित होते थे उनको विटेन या बुद्धिमान व्यक्ति कहते थे इसी कारण इनका नाम विटेनगेमोट अथवा बुद्धिमानों की परिषद् पड गया। इसके बडे विस्तृत अधिकार थे। यह राजा को चुन सकती थी, गद्दी से उतार सकती थी और सामान्य शासन प्रबन्ध में स्वयं भाग लेती थी। राजा के साथ बैठकर यह परिषद् कानून बनाती थी और राजकीय सेवाओं के बदले में कर लगाती थी। शान्ति के समझौते और सन्धि करना, अवसर पडने पर स्थल व जल सेना एकत्रित करना, राजा की जागीर में से भेंट देना, पादरियों को पदासीन व पदच्युत करना, दूसरे राज्याधिकारियों व जागीरदारों को अपने पद पर नियुक्त करना या हटाना, अपराधियों को व नि सन्तान व्यक्तियों की जायदाद का फैसला कर जब्त करना और धार्मिक आज्ञाओं का अनुकरण करना, ये सब काम यह परिषद् किया करती थी। अन्त में यह परिषद् जब तब सम्पत्ति सम्बन्धी व झगडे सम्बन्धी मुकदमों में सर्वोच्च न्यायालय का काम भी किया करती थी।[1] संक्षेप में, यह भ्रूणावस्था में आधुनिक पार्लियामेंट थी। यद्यपि इसके अधिकार बडे विस्तृत थे पर उनका प्रायः उपयोग न किया जाता था। इन मामलों में राजा का व्यक्तित्व ही बडा महत्वपूर्ण समझा जाता था। सारा देश गाँवों में विभक्त था। जिस कुल ने जिस गाँव को बसाया उसी के नाम पर गाँव का नाम पड गया। सौ गाँव के समूह का नाम "दी हन्ड्रेड" होता था और यह प्रशासन की दूसरी इकाई होती थी। पहली इकाई गाँव थी। अनेक हन्ड्रेड मिलाकर शायर (Shire) बनता था जो कि राज्य का सबसे बडा प्रशासकीय उपविभाग था।

इन प्रशासन विभागों की संस्थाओं और अधिकारियों के संगठन और सम्बन्ध के बारे में इतिहासकारों के भिन्न भिन्न मत हैं। शायर (Shire) में राजा का सबसे बड़ा अफसर एल्डरमैन (Elderman) होता था जिसको राजा नियुक्त करता था। यह अफसर प्रायः राजघराने का ही व्यक्ति होता था और सैनिक तथा शासन-सम्बन्धी अधिकारों का उपभोग करता था। वह शायर की पुनर्विचार करने वाली अदालत (Appel-

1 टैसवेल-लैंगमीड English Constitutional History, p. 27.

late court) का सभापति होता था। इस अदालत को शैरिफ (Sheriff) एकत्रित करता था जो कि शायर (Shire) का निर्वाचित कर्मचारी होता था। इस अदालत के दूसरे सदस्य पादरी, जमींदार राजकर्मचारी, धर्म-पुजारी और कुछ प्रतिनिधि व्यक्ति होते थे।

दी हण्ड्रेड (The Hundred), शायर (Shire) का एक उप-विभाग था और उसमें एक स्थानीय अदालत होती थी। जिसका नाम हण्ड्रेड मूट (Hundred-moot) था। इस अदालत में बारह या बारह के अपवर्त्य (multiple) सख्या में जज होते थे। शेरिफ (Sheriff) या उप-शेरिफ (Deputy Sheriff) प्रधान का काम करता था। दीवानी और फौजदारी के मुकदमे इसी अदालत मे प्रारम्भ होते थे।

नौर्मनों की अधीनता में इगलैंड—सन् १०६६ के हेस्टिंग्ज के युद्ध मे इगलैड के शासन-विधान के इतिहास का रुख ही बदल गया। नार्मण्डी (फ्रान्स) के राजा विलियम प्रथम ने इगलैड के राजा को हरा दिया और इगलैड के प्रथम नार्मन राजा के रूप में राजसिंहासन पर बैठा। राज्याभिषेक के अवसर पर उसने इगलैंड की प्राचीन राज-शपथ ली। उसने इगलैंड के प्राचीन नियमो का पालन किया और वैधानिक राजा की तरह राज्य करने की कोशिश की। उसने उन जागीरदारो की जागीरें छीन ली जो उसके विरुद्ध युद्ध मे लडे और उन जागीरो को अपने उन नौर्मन सामन्तों में बाँट दिया जिन्होंने उसे सहायता दी थी। आवश्यकता पडने पर सैनिक सहायता देने का वचन लेकर पुराने जागीरदारो को राजभक्ति की शपथ लेनी पडी और वे उसके न्यायालयो में अपनी शिकायतों की पुकार करने पर विवश किये गये। धर्म न्यायालय (Spiritual Courts) राजकीय न्यायालयो (Civil Courts) से पृथक् कर दिये गये परन्तु धर्ममठो पर राज्य का प्रभुत्व यह नियम बना कर सुरक्षित रखा गया कि राजा की आज्ञा बिना कोई पादरी मान्य न समझा जाय, न उसके आदेशो का पालन किया जाय। राष्ट्रीय याजक-परिषदो (Ecclesiastical assemblies) के निर्णय और आज्ञायें तब तक मान्य न हो जब तक राजा उनका समर्थन न कर दे और कोई जागीरदार या कर्मचारी राजा की आज्ञा के बिना पदच्युत या समाजच्युत न किया जाय।

इस प्रथम नौर्मन विजय के फलस्वरूप बने नये जागीरदारो (Barons) ने कुछ समय बाद विलियम द्वितीय के लिये बडी कठिनाई उत्पन्न कर दी जिसने इगलैंड के निवासियो से मिलकर इनके विद्रोह को दबाया। हैनरी प्रथम के समय में राजा ने अंग्रेजी जनता की स्वतत्रता का पहला नौर्मन चार्टर माना। यह चार्टर बाद को दूसरे नौर्मन राजाओ ने तथा एन्जीविन (Angevin) राजवश की नीव डालने वाले हैनरी द्वितीय ने भी प्रचलित किया। प्लान्टाजेनेट (Plantaganet) राजवश में

जॉन (John) नामक राजा का राज्यकाल इंगलैंड के जनतन्त्र के इतिहास में महत्वपूर्ण समझा जाता है।

इंगलैंड की जनता के अधिकारों का मैग्नाकार्टा (सन् १२१५ ई०)—जॉन नामक राजा के समय में जागीरदारों और पादरियों ने जो कि उस समय देश के नेता थे—राजा के विरुद्ध विद्रोह किया। उन्होंने राजा को ग्रेट चार्टर (Great Charter) स्वीकार करने को विवश करने के लिए मिल कर एक षड्यन्त्र रचा। इस चार्टर के उपबन्धों (Provisions) से यह स्पष्ट होता था कि राजा पर जनता के किसी भी वर्ग का विश्वास नहीं है। राजा ने सामन्तों व पादरियों से झगड़ा कर लिया था। मैग्ना कार्टा (Magna Carta) उन तीन चार्टरों में से एक है जो चैथम (Chatham) के कथनानुसार आंग्ल संविधान की बाइबल है। दूसरे दो चार्टर पिटीशन ऑफ राइट्स (Petition of Rights) और बिल ऑफ राइट्स (Bill of Rights) के नाम से प्रसिद्ध हैं। सूक्ष्म विवेचना करने पर यह पता चलेगा कि मैग्नाकार्टा केवल पुनः प्रतिष्ठापक (Restorative) है और वह केवल सन् १२१५ ई० के पूर्व के जनस्वातन्त्र्य के मान्य अधिकारों को लेखन-क्रिया द्वारा पुनः प्रतिष्ठित ही करता है। प्रस्तावना के अतिरिक्त इसमें ६३ खण्ड (Clauses) हैं जो बिना किसी क्रम के लिखे हुए हैं। सबसे पहले यह सामन्तशाही (Feudalism) के कर्त्तव्यों को फिर से दुहराता है और सामन्तों के प्रति राजा की माँगों को मर्यादित करता है। दूसरे यह न्याय प्रणाली को यह घोषणा करके सरल बनाने का प्रयास करता है कि (१) साधारण जनता के मुकदमों की सुनवाई निश्चित स्थानों पर होगी, (२) अर्लो (Earls) और बैरनों (Barons) को अपराध के अनुसार उनके ही कुलीन न्यायाधीश दण्ड दे सकेंगे, (३) राजा के मुकदमे, शैरिफ, पुलिस अफसर, अमीन (Bailiff) आदि सुनकर फैसला न करेंगे, (४) कोई स्वाधीन नागरिक न्यायालय में जाने से न रोका जा सकेगा, (५) कोई अमीन विश्वसनीय गवाहों के सुने बिना अपना निर्णय नहीं देगा (६) न्याय के ज्ञाता ही न्यायाधीश, अमीन और शैरिफ नियुक्त किए जायेंगे, आदि आदि। तीसरे उसमें शासन विधान के मौलिक सिद्धान्तों की परिभाषा की। इसमें लिखा है कि चार्टर में बतलाए हुए तीन मामलों के अलावा किसी मामले में कोई भी सहायता नहीं ली जाएगी। विटन (बुद्धिमानों की सभा न्यायालय) को बुलाने के लिए पादरियों, महन्तों, मठ धारियों, अर्लों व बड़े बैरनों के पास अलग अलग व्यक्तिगत रूपसे निमन्त्रण भेजा जाना चाहिए, प्रमुख आसामियों (Tenants) को प्रत्येक शायर में शैरिफ की लिखित आज्ञा द्वारा बुलाया जायगा, न्याय किसी को बेचा न जायगा, न कोई इससे वंचित रखा जायगा। चौथे, इस मैग्ना कार्टा में नगरों व कस्बों के अधिकारों को फिर से दुहराया गया और कुछ व्यापारिक अधिकारों की परिभाषा की गई और पाँचवे,

राजा द्वारा लगाये जाने वाले करो की निश्चित मर्यादा बाँध दी गई है। यद्यपि इस चार्टर में उच्च वर्गों के व्यक्तियों के अधिकारो का वर्णन था, परन्तु इसका हैनरी तृतीयने छ बार, एडवर्ड ने तीन बार एडवर्ड तृतीयने चौदह बार, रिचार्ड द्वितीय ने छः बार, हैनरी चतुर्थ ने छ बार और हैनरी पाचवे और छठे ने एक बार समर्थन करने की घोषणा की। जनता, विशेषकर बैरन और पादरी, अपनी स्वतन्त्रता व अधिकारो की रक्षा करने का जो महत्व इस चार्टर को देते थे वह इससे बिल्कुल स्पष्ट है ही।

एन्जीविन वंश के राज्यकाल में इंगलैण्ड का शासन विधान—मैग्नाकार्टा (Magna Carta) ने प्रजा के लिए राजासे अपने अधिकाधिक अधिकार मागने का मार्ग खोल दिया। इसके पश्चात् हैनरी तृतीय के समय मे राजा की वैधानिक स्थिति में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। हैनरी तृतीय छोटी अवस्था में ही राजा हो चुका था, उसकी ओर से राज्य प्रबन्ध करने के लिए जो परिषद् बनाई गई उसने अपनी शक्ति बढा ली। जब हैनरी पूर्ण वयस्क होकर राजसिंहासन पर बैठा तो उसे इस परिषद् से परामर्श लेना पड़ता था। उस समय तक उस कौंसिल का नाम प्रीवी कौंसिल पड चुका था। बाद में हैनरी के विदेशी मित्रो ने अपनी शक्ति बढ़ाली जिससे देश में असन्तोष बढने लगा और अव्यवस्था फैलने लगी।

आक्सफोर्ड के उपबन्ध (Provisions of Oxford 1258)—सन् १२५८ में जब बैरनो (Barons) ने आक्सफोर्ड नगर में अपनी मांगो को लेखबद्ध करने के लिए एक "मैड पार्लियामेंट" (उन्मादिनी संसद)नामक ग्रेट कौंसिल (Great Council) बुलाई तो अनुशासनहीनता की हद हो गई। ये लेख अन्त में आक्सफोर्ड के उपप्रबन्ध (Provisions of Oxford) के नाम से प्रसिद्ध हुए। विद्रोह पर तुले बैरनो को देखकर राजा को इन उपबन्धो (Provisions) को शासन प्रबन्ध का आधार मानने पर विवश होना पडा। इस नई योजना के अनुसार राजा को शासन-कार्य में परामर्श देने केलिए पन्द्रह बैरनो और पादरियों की कौंसिल नियुक्त हो गई। हर तीसरे वर्ष पार्लियामेंट बुलाना आवश्यक था जिसमें कौंसिल के १५ सदस्यो के अतिरिक्त बैरनो के १५ प्रतिनिधि और राजा के १५ मनोनीत व्यक्ति भी बुलाने पड़ते थे। इससे सामन्तो को तो शासन प्रबन्ध में हाथ बँटाने का अवसर मिल गया पर साधारण जनता को अभी कोई प्रतिनिधित्व नही मिला था।

साइमन डिमान्टफोर्ड द्वारा बैरनो का नेतृत्व—पहले तो हैनरी उपरोक्त कौंसिल से परामर्श लेने को सहमत हो गया पर सन् १२६१ ई० में उसने ऑक्सफोर्ड के उपबन्धो का अनुकरण करने से खुले तौर से इकार कर दिया। बैरनो ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया। गृह युद्ध आरम्भ हुआ और सन् १२६४ ई० में १४ मई को

लिविस के युद्ध में हार खाकर राजा और उसके पुत्र एडवर्ड ने आत्मसमर्पण कर दिया। इस सघर्ष में साइमन डि मान्टफोर्ड (Simon de Montford) ने बैरनो का नेतृत्व किया था। प्राय उसको साधारण जनता का नेता भी कहा गया। फ्रांसीसी इतिहासकार गुइजट (Guizot) ने उसे "प्रतिनिधिक सरकार का जन्मदाता" कह कर पुकारा है जबकि उसका जीवन लेखक पाउली (Pauli) साइमन को हाउस आफ कामन्स का जन्मदाता कहता है। सच तो यह है कि वह दोनो में से एक भी नही है, यह ऐतिहासिक प्रमाणो से सिद्ध है। मोन्टफोर्ड एक दुसाहसी नौर्मन था जिसका चरित्र कई आकर्षक गुणो व दोषो का अद्भुत मिश्रण था जो कि अपने बहनोई हैनरी तृतीय के प्रोत्साहन के कारण आरम्भ मे उन्नति कर गया और उसका प्रतिनिधि राज्य-शासन प्रणाली की ओर तब तक बिलकुल झुकाव न था जब तक कि उसने उससे अपने स्वार्थ की सिद्धि न देखी। मान्टफोर्ड के स्वार्थ का अनायास ही इगलैंड के शासन विधान की प्रगति से मेल हो गया। उस समय नगरो की आबादी बढ रही थी। पार्लियामेण्ट उसकी अधिक समय तक उपेक्षा नही कर सकती थी। प्रतिनिधित्व तो अनिवार्य था ही। साइमन ने केवल इस सम्बन्ध मे असामयिक प्रयास किया।

साइमन को १२६४ और १२६५ की पार्लियामेंट—राजा से राजनैतिक लडाई लडने के लिये साइमन ने सन् १२६४ ई० में एक पार्लियामेण्ट बुलाई जिसमे पहले से ही अधिकारी बैरनो और पादरियो के अतिरिक्त प्रत्येक प्रान्त (County) के चार प्रतिनिधियो को भी बुलाया गया। इस पार्लियामेण्ट ने शासन प्रबन्ध को साइमन की अध्यक्षता में एक नौ सदस्यों की कमेटी को सौंप देने का निश्चय किया। सन् १२६५ ई० में साइमन ने फिर पार्लियामेन्ट बुलाई जिसमें उसने केवल "नाइट्स आफ दी शायर्स" (Knights of the Shires) ही नही बल्कि सब बडे नगरो और कस्बो से प्रतिनिधि बुलाये। निस्सन्देह यह प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना करने के लिये पहला कदम था और इसका श्रेय साइमन को ही दिया जा सकता है।

एडवर्ड प्रथम के वैधानिक सुधार (Constitutional Reforms of Edward I)—सन् १२७४ ई० मे हेनरी तृतीय के मरने के पश्चात् एडवर्ड प्रथम राजसिंहासन पर बैठा। उसकी पार्लियामेण्ट ने कई शासन सुधार किये। वैस्टमिस्टर का प्रथम विधान (First Statute of Westminster) सन् १२७५ ई० मे पास हुआ जिसमे भूमिकर (Land Tax) निश्चित कर दिया और पार्लियामेण्ट में मुक्त निर्वाचन का आयोजन किया। सन् १२७८ ई० में जागीरो पर बैरनो के स्वामित्व का अधिकार जानने के लिये ग्लोसेस्टर का परिनियम (Statute of Gloucester) पास हुआ जिससे बैरनो पर राजा का नियत्रण और अधिक दृढ हो गया। सन् १२७९ में मोर्टमेन के परिनियम (Statute of Mortmain) से पादरियो के उस

अधिकार को सीमित कर दिया गया जिससे वे मरणासन्न व्यक्तियों को अपनी जायदाद, गिरजा-घरो या मठो के नाम कर देने के लिये विवश किया करते थे। सन् १२८५ ई० में वेस्टेमिस्टर का दूसरा परिनियम (Second Statute of Westminster) पास किया गया जिससे मरने के बाद स्वाधीन नागरिको की भूमि इनके ज्येष्ठ पुत्रो को दिये जाने का विधान बना कर जमीन को पैतृक कर दिया गया। सन् १२८५ ई० में वीन्चेस्टर के परिनियम (Statute of Winchester) से देश की रक्षा व नगरो तथा गाँवो की पुलिस का प्रबन्ध होने का आयोजन हुआ। दूसरे अन्य सुधारो से चान्सरो के न्यायालयो (Courts of Chancery) और किंग्स बैन्च (King's Bench) को राजा के व्यक्तित्व का अनुसरण करना पड़ता था।

सन् १२९५ ई० को ग्रेट पार्लियामेण्ट—एडवर्ड प्रथम का सबसे महत्वपूर्ण शासन सुधार सन् १२९५ ई० में ग्रेट पार्लियामेण्ट को बुलाना था जिसमें इंगलैण्ड के राजनैतिक जीवन में भाग लेने वाले तीनो वर्गो पादरी, लार्ड्स और कामन्स (Common's) के प्रतिनिधियों को बुलाया गया। एक भी नगर न बचा जिसका कोई प्रतिनिधि पार्लियामण्ट में न हो। इसलिये यह पार्लियामेण्ट "प्रथम पूर्ण और आदर्श पार्लियामेण्ट" (First Complete and Model Parliament) कहलाई।

शतवर्षीय युद्ध और पार्लियामेण्ट—सन् १३३८ ई० में शतवर्षीय युद्ध के छिड़ने से कई महत्वपूर्ण वैधानिक सुधार हुए। उस समय तक पार्लियामेण्ट के उपर्युक्त तीनो वर्ग एक ही सदन में बैठते, वाद-विवाद करते और वोट दिया करते थे, यद्यपि बैरन बहुधा मनचाही कर लेने में सफल हो जाया करते थे। इसके अनन्तर पादरियो व बैरनो ने विवाद करने के लिये एक अलग सदन में बैठना आरम्भ कर दिया और इस तरह हाउस ऑफ लार्ड्स (House of Lords) की नीव पडी। नगरो और कस्बो के प्रतिनिधि अपने अलग सदन में बैठकर राजकाज करने लगे; यह सदन हाउस ऑफ कामन्स (House of Commons) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। १३७७ में एडवर्ड तृतीय के राज्य के समाप्त होते होते पार्लियामेण्ट का इन दो शाखाओ में विभाजन पक्का हो गया। पहले सदन में सामन्तशाही का प्रतिनिधित्व था और दूसरे सदन में साधारण जनता का। पहले पार्लियामेण्ट की बैठकें अनियमित थी। परन्तु सन् १३३० ई० में यह कानून बना दिया गया कि "प्रति वर्ष एक बार और यदि आवश्यक हो तो एक से अधिक बार पार्लियामेण्ट की बैठक होगी।" सन् १३६२ ई० में उसको फिर दोहराया गया और इस बैठक के उद्देश्यो को इस प्रकार निश्चित रूप से घोषणा कर दी गई," भिन्न-भिन्न प्रकार के दैनिक झगडो और शिकायतों को दूर करने के लिए प्रतिवर्ष पार्लियामेण्ट की एक बैठक बुलाई जायेगी।" एडवर्ड तृतीय के राज्य के समाप्त होते-होते पहले सदन (Lower House) ने अपने तीन महत्वपूर्ण अधिकार अपने

हाथ में कर लिये अर्थात् (१) सदन की सम्मति के बिना कर अवैध (illegal) है। (२) कानूनो के बनने के लिये दोनो सदनो की सहमति आवश्यक है, और (३) कामन्स को शासन प्रबन्ध के दोषो में छानबीन करने और उसको सुधारने का अधिकार है। युद्ध के व्यय के लिये धन की आवश्यकता के कारण विवश होकर राजा को आय-व्यय व कानून-व्यवस्था पर पालियामेण्ट का नियन्त्रण स्वीकार करना पडा। उस समय से ही पालियामेण्ट में हाउस ऑफ लार्ड्स का महत्व कम होने लगा और कामन्स की शक्ति व महत्ता बढने लगी।

नौर्मन और एन्जोविन राजवशो के समय में न्याय-पालिका का विकास—नौर्मन और एन्जोविन राजवशो के समय में न्याय-प्रणाली का विकास एक मनोरंजक अध्ययन है। उस समय राजा ही न्यायपालिका सहित सारे शासन का स्वामी होता था। प्रारम्भ में राजा स्वय न्यायालय में बैठता था और न्याय करता था। परन्तु उसके फ्रास-स्थित प्रदेशो के शासन के भारी उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिये उसको अधिक समय तक महाद्वीप पर ही रहना पडता था। इसलिये अपनी अनुपस्थिति में न्याय और आय-व्यय के प्रबन्ध की देखभाल करने के लिये राजा ने अपना एक प्रधान मन्त्री जस्टिसिअर (Justiciar) नियुक्त किया। एडवर्ड प्रथम ने जस्टिसिअर (Justiciar) के पद को तोड दिया और उसके काम को चासलर (Chancellor) को सौंप दिया जिसको सबसे पहले एडवर्ड दी कनफेसर (Edward the Confessor) ने जन्म दिया था; इस प्रकार चासलर के द्वारा न्याय की व्यवस्था प्रारम्भ हुई।

जस्टिसिअर (Justiciar) और चासलर (Chancellar) के अतिरिक्त क्यूरिया रेजिस (Curia Regis) नामक एक और महत्वपूर्ण सस्था थी जो न्याय-पालिका के कर्तव्यो को पूरा किया करती थी। पहले यह ग्रेट काउसिल ऑफ दी रैल्म (Great Council of the Realm) अर्थात् राष्ट्र की महान परिषद् कहलाती थी जिसमें कुछ राज्य-कर्मचारियो की क्यूरिया (Curia) नामक एक छोटी सी समिति थी जो कि न्याय-सम्बन्धी सब काम करती थी। कुछ समय पश्चात् इस समिति का काम, किग्स बैंच (King's Bench), दी कोर्ट ऑफ कॉमन प्लीज (The Court of Common Pleas) और कोर्ट ऑफ एक्सचैकर (Court of Exchequer) इन तीन न्याय सस्थाओ में बांट दिया गया। कोर्ट ऑफ एक्सचैकर कर सम्बन्धी और आय-व्यय सम्बन्धी मुकदमे सुनती थी। दीवानी के मुकदमे कोर्ट ऑफ कामन प्लीज में सुने जाते थे। बचा हुआ न्याय सम्बन्धी सब काम किग्स बैन्च में हुआ करता था। हैनरी तृतीय के राज्य के अन्त में यह कार्य विभाजन हो चुका था।

हैनरी प्रथम के समय में क्यूरिया रेजिस (Quria Regis) के कुछ न्याया-

धीशों को एक जिले से दूसरे जिले में जा जाकर मुकदमे करने पड़ते थे और अपराधियों को दण्ड देना पड़ता था। इनको इटीनेरेण्ट (Itinerant) अर्थात् भ्रमणशील न्यायधीश कहते थे। इन न्यायधीशों के लिये सन् ११७३ में हैनरी द्वितीय ने सारे राज्य को ६ भागों में बाँट दिया जिनमें से प्रत्येक तीन न्यायाधीशों के अधीन रखा गया। ये सरकिट कोर्ट (Circuit court) बनाते थे जो कि क्यूरिया रेजिस (Curia Regis) सायरमूट (Shire moot) अर्थात् राज न्यायालय और लोक न्यायालय, प्राचीन और नवीन व्यवस्था में सम्बन्ध स्थापित करते थे।" हैनरी द्वितीय ने फौजदारी (Criminal) मामलों में पंचों (Jury) की सहायता से न्याय करने की प्रथा आरम्भ की। बाद में यह प्रथा दीवानी मुकदमों के लिये भी लागू हो गई। पहले पहल यह पंच केवल वे ही लोग होते थे जो शपथ लेते हुए सच बातें बतला कर गवाही देने को जिनसे आशा की जाती थी।

जब न्यायपालिका का यह विकास हो रहा था, राजा की ग्रेट कौंसिल (King's Great Council) जिसका बाद में कंटीन्यूअल कौंसिल (Continual Council) नाम पड़ गया, अपने विशेष न्याय-अधिकार क्षेत्र में काम करती रही। यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से इस न्यायालय में कौंसिल (भूतपूर्व पार्लियामेण्ट) के तीनों भागों अर्थात् बैरनों, पादरियों और कामन्स के लोग होते थे, पर साधारणतया कामन्स कौंसिल के न्याय सम्बन्धी काम में भाग न लेते थे। इसलिये यह न्याय-सम्बन्धी काम अकेले पीयर्स (Peers) ही करने लगे। जब इन लोगों ने एक अपना सदन (हाउस ऑफ लार्ड्स) बना लिया तब ये उसमें विचारक मण्डली और न्यायालय दोनों का काम करने लगे। बाद में धीरे-धीरे यह न्याय का काम इस हाउस ऑफ लार्ड्स की एक छोटी समिति प्रीवी कौंसिल द्वारा होने लगा।

गुलाब युद्धों (Wars of Rose) के वैधानिक परिणाम—उपर्युक्त शासन प्रणाली लंकास्टर (Lancaster) और यार्क (York) के राजवंशों में होने वाले गुलाब युद्ध के छिड़ने के समय तक इंगलैण्ड में रही। ये युद्ध सन् १४५५ से १४८५ ई० तक चलते रहे और जब ये समाप्त हुए तो देश में कई महत्वपूर्ण वैधानिक परिवर्तन हुए। यार्किस्ट और लंकास्ट्रियन दो वर्गों में बट जाने से बैरनों की शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई और राजा पर से उनका अत्यधिक प्रभाव समाप्त हो गया। युद्ध के कष्टों से लोगों की आर्थिक दशा शोचनीय हो गई और उन्होंने हेनरी सप्तम को शान्ति और सुरक्षा को पुनः स्थापित करने के लिये असाधारण शक्ति दे दी। हेनरी सप्तम के राज्याभिषेक को पार्लियामेण्ट ने स्वीकार कर लिया। तब से पार्लियामेण्ट को राजा को चुनने का अधिकार मिल गया।

ट्यूडर निरंकुशता की स्थापना (Establishment of Tudor

Despotism)—पहले दो ट्यूडर वंशी राजाओ (हेनरी सप्तम और अष्टम) ने इस अवसर का अपनी शक्ति बढाने में खूब लाभ उठाया और वे निरंकुश शासन स्थापित करने में बहुत कुछ सफल हुए। यद्यपि पार्लियामेण्ट की बैठकें अब भी नियमित रूप से होती थी पर इन ट्यूडर वंशी राजाओ ने उनको अपनी निरंकुश शक्ति बढाने का साधन बना रखा था। उन्होंने चालाकी से पार्लियामेण्ट में ऐसे व्यक्तियो को निर्वाचित करा दिया जो उनकी हाँ में हाँ मिलाने वाले होते थे, और फिर अपने राजकोष को भरने के लिये करो को बढा दिया बैरनो की शक्ति को कुचलने के लिये उन्होने स्टार चेम्बर (Star Chamber) का न्यायालय और हाई कमीशन (High Commission) का न्यायालय स्थापित किया, दूसरी ओर हेनरी सप्तम की रानी को तलाक देने के प्रश्न पर पोप से झगडा हो जाने से एक नये ईसाई संघ की स्थापना हुई जिस पर कार्डिनलो के द्वारा राजा का बडा प्रभाव था। एडवर्ड षष्ठ व मेरी (Mary) के राज्य में धार्मिक झगडो और उनके दमन से, तथा प्रोटेस्टेन्टो और कैथोलिको में सन्तुलन रखने की रानी एलिजबेथ की नीति ने जनता की इस निजी धार्मिक फूट का लाभ उठाने में कोई कसर न रखी। वह चालाकी से भरी नीति से राजसत्ता की शक्ति बढाती चली गई। कला व साहित्य के पुनरुद्धार (Renaissance) के आन्दोलन ने भी देश पर बडा महत्वपूर्ण प्रभाव डाला। इगलैंड एक शक्तिशाली जल-सेना का स्वामी हो गया। राजकीय चार्टर के आधीन बनी व्यापारिक कम्पनियो से जनता समृद्ध हुई और राजा से अपने पारस्परिक सम्बन्धो व अधिकारो पर विचार करने लगी। निरंकुश ट्यूडर राजाओ के स्वेच्छाचारी शासन के विरुद्ध जागरूकता और सार्वजनिक अधिकारो की माँग की इस लहर को रानी एलिजाबेथ ने अपनी कूटनीति की सहायता से सफलता पूर्वक रोके रखा। वह अपने मंत्रियो से बालको के समान व्यवहार करती थी जैसे कि वे युद्धविद्या और राजनीति के बारे में बहुत ही कम जानते हो।

स्टुअर्ट-काल में वैधानिक परिवर्तन (Constitutional changes during the Stuart period)—१६०३ में इगलैण्ड के राजसिंहासन पर जेम्स प्रथम के बैठने से स्टुअर्ट राजवंश का प्रारम्भ हुआ जिनके राज-सिद्धान्त और शासन-नीति ने दो बार ऐसी आपत्तिपूर्ण स्थिति उत्पन्न कर दी जिसके फलस्वरूप कई महत्वपूर्ण वैधानिक परिवर्तन हुए। जेम्स प्रथम ने राजाओ के दैवी अधिकार के अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसमें चार प्रविधान थे —(१) कि राजा सीधे ईश्वर से अपना राज्याधिकार प्राप्त करता है, (२) कि राजा का यह अधिकार अनियंत्रित और अमर्यादित है, (३) कि राजा की आज्ञा का विरोध करना प्रत्येक दशा में अवैध है, (४) कि राज पद पैतृक है और राजा के लडको में सब से बडा उसका उत्तराधिकारी होना

चाहिये। इन सिद्धान्तो के कारण जेम्स प्रथम और पालियामेण्ट में प्रत्यक्ष मुठभेड हो गई। राजा की धार्मिक नीति ने, जिसने रोमन कैथोलिको को किसी प्रकार की स्वतन्त्रता देने से इन्कार कर दिया था क्योंकि रोमन कैथोलिक पोप को प्रभुता मानते थे, राजा-प्रजा के वैमनस्य की आग में घी का काम किया। प्यूरिटन लोग भी राजा की नीति से अप्रसन्न थे। इसलिये जब जेम्स प्रथम की पहली पालियामेण्ट बैठी तो इन सब असन्तुष्ट दलो ने मिल कर राजा से जनता के सार्वजनिक अधिकारो को स्वीकार करने और अन्य अधिकारो के साथ कामन्स (House of Commons) के कर लगाने की स्वीकृति देने के अधिकार की सफल माँग की। जेम्स प्रथम ऊपर से कामन्स के अधिकारो का सम्मान करने का बहाना करते हुए भीतर ही भीतर उनसे स्वतन्त्र होने की चाल चल रहा था, और सन् १६११ से १६१४ तक उसने बिना पालियामेण्ट के ही राज्य किया। जब १६१४ ई० में उसने पालियामेण्ट को बुलाया तो "अनुदान स्वीकार करने के पूर्व शिकायतें दूर हों" इस बात पर आपस में झगडा हो जाने से पालियामेण्ट भग कर दी गई। इसके बाद फिर छ साल तक उसने पालियामेण्ट के बिना राज्य किया। सन् १६२१ में तीसरी पालियामेण्ट ने फिर यही माँग की कि उनको बोलने की स्वतन्त्रता दी जाय, उनको पकडा न जाय और उन्हे राजा के परामर्शदाताओ की निन्दा करने का अधिकार दिया जाय। इस पर राजा ने पालियामेण्ट भग कर दी। परन्तु सन् १६२४ ई० में राजा ने चौथी पालियामेण्ट बुलाई और उनकी अधिकतर माँग मान ली, इससे पालियामेण्ट का आदर और शक्ति बढ गई।

चार्ल्स प्रथम और पालियामेण्ट (Charles I and his Parliaments) जेम्स प्रथम के बाद सन् १६२५ में उसका पुत्र चार्ल्स प्रथम राजसिंहासन पर बैठा जो अपने पिता के समान ही राजाओ के दैवी अधिकारो में विश्वास करता था। उसने राजा के अनियन्त्रित अधिकार वाले सिद्धान्त की अति कर दी, और पालियामेण्ट की स्थिति और उसके परामर्श से शासन करने की आवश्यकता, दोनो को ठुकरा दिया। परन्तु धनाभाव के कारण विवश होकर उसे पालियामेण्ट बुलानी पडी। सन् १६२६ ई० में उसकी दूसरी पालियामेण्ट ने राजा के मन्त्री बकिंघम (Buckingham) पर अभियोग लगाया। इससे राजा और पालियामेण्ट में प्रत्यक्ष सघर्ष हो गया और राजा ने पालियामेण्ट भग कर दी। पर सन् १६२८ में फिर कर उगाहने की आवश्यकता के कारण उसे पालियामेण्ट बुलानी पडी, परन्तु अनुदानो को स्वीकार करने से पहले कामन्स ने यह प्रस्ताव पास किया कि उनकी स्वीकृति के बिना कोई भी कर वैध न समझा जायगा, और राजा के स्वेच्छाचारी-शासन की कडी निन्दा की। १६२८ का पिटीशन ऑफ राइट्स (The Petition of Rights, 1628) और उसके बाद के अधिकार पत्रो में स्वीकृत अपने प्राचीन अधिकारो के आधार पर उन्होंने एक पिटीशन ऑफ राइट्स

(Petition of Rights) अर्थात् अधिकारों का प्रार्थना-पत्र, तैयार किया जिसमें उनकी माँगों का उल्लेख था। उन मांगों में से कुछ ये थी,—(१) अवैध कर-वसूली को रोकना—जैसा कि एडवर्ड प्रथम के समय में घोषित हो चुका था कि राजा या उनके उत्तराधिकारी पादरियों, अर्लों (Earls), बैरनों (Barons) नाइटों (Knights) आत्मशासित नगरों के नागरिकों (Burgesses) और दूसरे स्वाधीन देशवासियों की स्वीकृति के बिना कोई भी कर राज्य में न लगाया जायगा और जिसका एडवर्ड तृतीय को पार्लियामेण्ट ने इस प्रकार स्पष्टीकरण कर दिया था "कि आज यह घोषित और अविनियमित किया जाता है कि अब से आगे किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध राजा के लिये ऋण देने पर विवश न किया जायगा क्योंकि ऐसे ऋण नागरिकता और तर्क के विरुद्ध हैं। (२) राजा व्यक्तियों को कारावास देने में स्वेच्छाचार न करें जिसके सम्बन्ध में मैग्नाकार्टा में घोषणा हो चुकी थी और जिसको एडवर्ड तृतीय के राज्यकाल में पार्लियामेण्ट ने फिर दुहरा दिया था। (३) राज्य में मार्शल लॉ (Martial Law) अर्थात् सामरिक कानून न लगाया जाय जैसा कि मैग्नाकार्टा ने और एडवर्ड तृतीय ने घोषित किया था। (४) संविधान व कानून के अनुसार प्रजा की स्वतन्त्रता और उसमें स्वत्वों की रक्षा। इस अंग्रेजी स्वतन्त्रता रूपी भवन का दूसरा स्तम्भ पिटीशन ऑफ राइट्स है। इसमें पूर्व के राजाओं द्वारा मान्य अधिकारों को संक्षिप्त रूप से एक स्थान पर एकत्रित कर दिया गया था। और इसमें कोई नई बात न थी। राजा को विवश होकर यह प्रार्थना-पत्र स्वीकार करना पड़ा। उसके पश्चात् पार्लियामेण्ट ने राजा को शराब व दूसरी वस्तुओं के आयात-निर्यात पर कर लगा कर धन इकट्ठा करने का अधिकार दे दिया। पर साथ ही साथ नौसेना रखने के लिये लगाये हुए कर को तोड़ दिया और स्टार चैम्बर व हाई कमीशन कोर्ट को भी भंग कर दिया। राजा ने भीतर ही भीतर सेना को पार्लियामेण्ट के विरुद्ध भड़काने की और इस प्रकार बल प्रयोग से पार्लियामेण्ट पर अपना प्रभुत्व जमाने की कोशिश की। जब पार्लियामेण्ट को इसका पता लगा तो उसने ग्रेड रिमोस्ट्रेन्स (Grand Remonstrance) नामक एक प्रलेख तैयार किया जिसमें उसके स्वत्वों व अधिकारों का गौरवपूर्ण दृढ़ समर्थन था और राजा से प्रार्थना की कि वह उनको स्वीकार करे। राजा और पार्लियामेण्ट के संघर्ष ने गृहयुद्ध का रूप धारण किया जिसमे चार्ल्स को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा, और उसके पश्चात् एक शासन विलेख (Instrument of Government) के अनुसार कॉमनवेल्थ की स्थापना हुई। हाउस ऑफ लार्ड्स को तोड़ दिया गया और राजसत्ता भी समाप्त कर दी गई। हाउस ऑफ कॉमन्स में से राजसत्ता के समर्थक सब पक्ष निकाल दिये गये और इंगलैण्ड का शासन एक नये राज्य प्रमुख प्रोटेक्टर (Protector) की अध्यक्षता में होने लगा।

राजसत्ता की पुनर्स्थापना (१६०० ई०)—इगलैण्ड में कामनवेल्थ का शासन केवल ग्यारह वर्ष (१६४९–१६६०) रहा। इस काल में शासन की कमियां स्पष्ट हो गई। पार्लियामेण्ट ने राजसत्ता को पुन स्थापित करने का निश्चय किया और सन् १६६० में चार्ल्स द्वितीय को राजसिंहासन पर बिठाया। इस नये राजा ने प्रजा के स्वत्वों व अधिकारो की रक्षा करने का वचन दिया। उसके राज्य मे सबसे महत्वपूर्ण वैधानिक लाभ सन् १६७९ ई० में हेबियस कारपस (Habeas Corpus) ऐक्ट का पास होना था जिसमे प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिक स्वतन्त्रता सुरक्षित हो गई। इस ऐक्ट में यह आयोजन कर दिया गया था कि यदि किसी व्यक्ति पर अपराध करने का अभियोग लगाया जाय और उसको बन्दी बना लिया जाय और वह व्यक्ति स्वय या किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा किसी न्यायालय में इसके विरुद्ध प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करावे तो वह न्यायालय उस बन्दी को न्यायालय के सामने अभियोग की सुनवाई करने के लिये उपस्थित करने की आज्ञा देगा। अपने पिता के समान चार्ल्स द्वितीय ने भी स्वेच्छाचारी शासन करने का प्रयत्न किया पर पार्लियामण्ट ने इस बार कोई कड़ी कार्यवाही नहीं की क्योंकि उसे प्रजातन्त्र-काल के कटु अनुभव की याद थी।

सन् १६८८ ई० की क्रांति और उसके वैधानिक परिणाम—चार्ल्स द्वितीय के पश्चात् उसका भाई जेम्स द्वितीय राजगद्दी पर बैठा। उसके मन में आरम्भ से ही निरकुश शासन चलन और राज्यरक्षित ईसाई धर्म सघ को नष्ट करने का कुचक्र रचा हुआ था। उसने अवैध कर उगाहना आरम्भ किया; सेना बढ़ाई, एक नया हाई कमीशन कार्ट स्थापित किया जिसमे न्याय-निर्णय उसके पक्ष में ही हो और सन् १६८८ ई० में दो डिसीजन्स ऑफ इण्डलजेन्स (Decisions of Indulgence) अर्थात् अनुग्रह-निर्णय जारी किये जिनसे धर्म सघ की नीतियों में हस्तक्षेप हुआ। इन सब बातो से पार्लियामेण्ट चिढ़ गई और उसने राजा के बहनोई विलियम ऑफ ऑरेञ्ज (William of Orange) को इगलैण्ड आने और राजसिंहासन, ग्रहण करने का निमत्रण भेजा। इसको सुन कर जेम्स २३ दिसम्बर सन् १६८८ को इगलैण्ड छोड़ कर भाग निकला। बाईस जनवरी सन १६८९ को पार्लियामेण्ट स्वय एकत्रित हुई और कुछ दिन बाद दो प्रस्ताव पास किए जो इस प्रकार थे (१) क्योंकि जेम्स राजा ने राजा-प्रजा के प्रारम्भिक समझौते को तोड़ कर इस राज्य के संविधान को भग करने का प्रयत्न किया और जैसुइट (Jesuit) तथा अन्य दुष्ट व्यक्तियों की सलाह से देश के मौलिक नियमों का उल्लंघन करके और देश से भाग कर राजपद त्याग कर दिया है, जिससे राजसिंहासन रिक्त पड़ा है; (२) कि अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि यह इस प्रोटेस्टेन्ट राज्य की सुरक्षा और कल्याण के विरुद्ध है कि इस देश का राजा पोप का समर्थक हो।

बिल ऑफ राइट्स (Bill of Rights)—पार्लियामेण्ट ने जेम्स द्वितीय के अवैध और स्वेच्छाचारी कामो को दुहराते हुए अधिकारो का घोषणापत्र (Declaration of Rights) तैयार किया और इगलैण्ड का राजमुकुट विलियम व उसकी रानी मेरी को सुपुर्द किया। विलियम ने अपनी ओर से तथा अपनी पत्नी की ओर से इसे धन्यवाद पूर्वक स्वीकार किया। इसे युगल राजा-रानी ने पार्लियामेण्ट द्वारा २५ अक्टूबर सन् १६८९ को पास किए हुए बिल ऑफ राइट्स (Bill of Rights) को स्वीकार किया। यह अंग्रेजो की स्वतन्त्रता का तीसरा चार्टर था, और इसने मैग्ना-कार्टा की नीव पर खडे हुए वैधानिक ढाचे को पूरा कर दिया। इस बिल ने जेम्स द्वितीय के अवैध कामो को दुहराया, उदाहरणार्थ—कानून की अवहेलना करना व उनको उल्लघन करना, हाई कमीशन अदालत की स्थापना, अनाधिकृत करो का लगाना, पार्लियामेण्ट की अनुमति बिना स्थायी सेना एकत्रित करना, शान्ति के समय में निर्वाचन की स्वतन्त्रता मे हस्तक्षेप करना, अपराध सिद्ध होने से पूर्व जुर्माना वसूल करना व सम्पत्ति जब्त करना, आदि आदि। इसके पश्चात् इस बिल मे विलियम को राज्याधिकारी घोषित किया गया और ऐसे राजवश के व्यक्तियो को राज्य का उत्तराधिकारी होने से वचित कर दिया जो पोप के समर्थक हो, या जो पोप के समर्थको से विवाह-सम्बन्ध स्थापित कर ले। इस बिल मे यह स्पष्ट कर दिया गया कि प्रत्येक राजा-रानी को इस सम्बन्ध मे घोषणा करनी होगी।

सन् १७०१ मे पार्लियामेण्ट ने एक्ट ऑफ सैटिलमेण्ट (Act of Settlement) पास करके यह निश्चित कर दिया कि रानी एन (Anne) की मृत्यु के पश्चात् (उसका कोई उत्तराधिकारी न हो) तो इगलैण्ड का राज-मुकुट हैनोवर की राजकुमारी सोफिया और उसके उत्तराधिकारियो को प्रदान किया जाय। इस एक्ट में अंग्रेजी जनता के धर्म, न्याय और स्वतन्त्रता की रक्षा करने वाली और भी कई महत्वपूर्ण वैधानिक व्यवस्थायें थीं। इस ऐक्ट की निम्नलिखित तीन धारायें उल्लेखनीय हैं —

(१) जो कोई भी इगलैण्ड के राजमुकुट को धारण करेगा वह कानून से स्थापित हुए इगलैण्ड के ईसाई धर्म-सघ (Church of England) का ग्रहण करेगा।

(२) यदि इस राज्य का राजमुकुट और राज्यश्री किसी ऐसे व्यक्ति को सुशोभित करती हो जो इस देश का निवासी न हो तो यह राष्ट्र किसी ऐसे देश की रक्षा के लिए युद्ध में भाग लेने के लिए पार्लियामेण्ट की सहमति के बिना बाध्य न किया जायेगा जो इगलैण्ड की राजसत्ता के अधीन न हो।

(३) कोई भी व्यक्ति जो भविष्य मे राजमुकुट धारण करेगा पार्लियामेण्ट की सहमति के बिना इगलैण्ड, स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड की राज्य सीमा से बाहर न जा सकेगा।

इस ऐक्ट में यह भी आदेश था कि भविष्य में प्रत्येक राजा या रानी देश के निर्णयो का आदर करेगा और जनता के स्वत्वो और स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखेगा।

दो राजनीतिक दलो का प्रारम्भ—ग्लोरियस रिवोल्यूशन (Glorious Revolution) का प्रत्यक्ष फल बिल ऑफ राइट्स (Bill of Rights) और ऐक्ट ऑफ सैटिल्मेण्ट (Act of Settlement) का पास होना था परन्तु उसके दूरवर्ती और अप्रत्यक्ष परिणाम अधिक महत्व पूर्ण थे। गृह युद्ध (Civil War) ने पार्लियामेण्ट व देशवासियो को दो पृथक दलो में बाँट दिया था। एक दल तो चार्ल्स प्रथम का सहायक था और दूसरा पार्लियामेण्ट का समर्थक होने से स्टुअर्ट निरकुशता का विरोधी था। राजा के फिर से पदासीन होने पर कुछ समय के लिए इन दलो का विरोध कुछ ठण्डा पड गया था, लेकिन ग्लोरियस रिवोल्यूशन (Glorious Revolution) से फिर पुरानी आग भडक उठी। जेम्स द्वितीय और उसके पुत्र के अनुयायी रूढिवादी (Tories) कहलाये और ग्लोरियस रिवाल्यूशन (Glorious Revolution) तथा हैनोवर के राजघराने के पक्षपाती उदार (Whigs) नाम से प्रसिद्ध हुए। रूढिवादी दल ने विलियम तृतीय को मारने और उसके स्थान पर जेम्स द्वितीय को फिर से सिंहासन पर बैठाने का असफल प्रयत्न किया। आरम्भ में विलियम तृतीय की पार्लियामेण्ट मे उदार दल का बहुमत था पर उसने सयुक्त (Coalition) मत्रिपरिषद् बनाने का ही निश्चय किया। सन् १६९५–९८ में उसकी तीसरी पार्लियामेण्ट में भी उदार पक्ष वालो (Whigs) का मताधिक्य था और उसने केवल उदार पक्ष ही का मत्रिमडल बनाया। इस प्रकार इगलैण्ड में इस प्रथा का श्रीगणेश हुआ कि ऐसे मत्रिमडल की स्थापना हो जिसके समर्थक पार्लियामेण्ट में बहुमत रखते हो।

उदार और रूढिवादी पक्षो की नीतिया (Policies of the Whigs and Tories)—उदार दल वालो का कहना था कि राजा प्रजा का सेवक है और इसलिए उसे पार्लियामेण्ट की इच्छा के अनुसार शासन करना चाहिए। इसके विपरीत रूढिवादी दल वाले राजा के दैवी अधिकार में विश्वास रखते थे। इन लोगो में अधिकतर लार्ड्स, बड़े जमीदार या ईसाई सघ के पादरी होते थे।

राजनीति विचारक अग्रेजो का इन दो पक्षो में विभाजन बाद में देश में इतना व्यापक हुआ और उनमें इतना गहरा विरोध उत्पन्न हो गया कि वाल्टेअर (Voltaire) को ये शब्द लिखने पड़े, "उदार और रूढिवादियो की पुस्तकें पढ़ने में बडा आनन्द मिलता है, यदि उदार पक्ष वालो की बात सुनें तो वे कहते हैं कि रूढिवादियो ने इगलैण्ड के साथ विश्वासघात किया है। यदि रूढिवादियो को सुनें तो उनका कहना है कि प्रत्येक उदार ने स्वार्थ के लिए राज्य का बलिदान कर दिया है। यदि इन दोनो की बात पर विश्वास किया जाय तो सारे राष्ट्र में एक भी ईमानदार आदमी

नहीं है। इंगलैण्ड का बादशाह वैधानिक इतिहास देश की सरकार में अपने अपने सिद्धान्तों के स्थापित करने के इन दोनों दलों के संघर्ष का वर्णन मात्र है।"

रानी ऐन (Queen Anne) के शासन-काल में पालियामेण्ट में कभी उदार पक्ष वालों की व कभी रूढ़िवादियों की संख्या अधिक होती रही। रानी ने कभी मिली-जुली और कभी केवल एक ही पक्ष के लोगों की मन्त्रिपरिषद् नियुक्त की। सन् १७०८ ई० के बाद सब मन्त्रिमण्डल में एक ही पक्ष के मन्त्री होने लगे। राजनैतिक प्रश्नों के अतिरिक्त ये दोनों पक्ष धर्म-सम्बन्धी व सामाजिक प्रश्नों पर भी एक विचार न रखते थे। उदार पक्ष वाले पूजा-पाठ की स्वतन्त्रता, श्रम-जीवियों (Serfs) की स्वतन्त्रता और जमींदारों के आसामियों की भी स्वतन्त्रता के समर्थक थे। इसके विपरीत रूढ़िवादी लोग अंग्रेजी ईसाई धर्म और जमींदारों व पादरियों के अधिकारों के समर्थक थे।

हैनोवर राज्य परिवार के शासन काल में राजनीतिक पक्षों की सरकारें—सन् १७१४ ई० में ऐक्ट ऑफ सैटिलमेण्ट (Act of Settlement) के अनुसार हैनोवर राज्य-परिवार के इंगलैण्ड के पहले राजा जार्ज प्रथम के राजसिंहासन पर बैठने के साथ मन्त्रिमंडल की शक्ति बढ़ने लगी। जार्ज प्रथम अंग्रेजी भाषा न जानता था। इसलिए उसे सारा राज-कार्य प्रधान मन्त्री पर छोड़ने को विवश होना पड़ा। प्रधान-मन्त्री ही मन्त्रिमण्डल की बैठकों में अध्यक्ष का पद लेता था और शासन-नीति की रूपरेखा निश्चित करता था। इस प्रकार अनायास ही शासन की यथार्थ सत्ता राजा के हाथ से निकल कर मन्त्रियों के हाथ में आ गई। जार्ज प्रथम का प्रथम मन्त्रिमण्डल टाउन्सेण्ड (Townsend) के नेतृत्व में उदार मन्त्रिमंडल था। उस समय तक सन् १६९४ ई० में ट्रैनियल ऐक्ट (Triennial Act) के अन्तर्गत पालियामेण्ट के सदस्यों का निर्वाचन हर तीसरे वर्ष होता था। परन्तु सन् १७१७ ई० में सेप्टीनियल ऐक्ट (Septennial Act) पास हुआ, जिसने हैनोवर परिवार और प्रोटेस्टेन्ट धर्मावलम्बियों का राज्याधिकार पक्का करने के साथ-साथ पालियामेण्ट की अवधि सात वर्ष तक बढ़ा दी। इस अवधि के बढ़ जाने से पालियामेण्ट राजा के नियन्त्रण से और भी स्वतन्त्र हो गई।

वालपोल, प्रथम प्रधान मन्त्री—सन् १७२१ ई० में लार्ड वालपोल (Walpole) ने अपना मन्त्रिमण्डल बनाया और प्रथम प्रधान मन्त्री, ट्रेजरी का प्रथम लार्ड (Lord of the Treasury) और खजानेकर का प्रथम चांसलर (Chancellor of the Exchequer) हो गया। वह इंगलैण्ड का प्रथम प्रधान-मन्त्री था जिसने शासन नीति का सूत्र अपने हाथ में संभाला, मन्त्रिपरिषद् की शासन नीति का निरीक्षण करने का काम करना आरम्भ किया, हाउस ऑफ कामन्स का नेतृत्व किया और आवश्यकता पड़ने पर उसके असम्मति सूचक आदेश के सामने सिर झुकाया।

जब सन् १७४२ ई० में हाउस आँफ कामन्स में उसकी हार हुई तो उसने पदत्याग कर दिया और पार्लियामेण्ट के प्रति मन्त्रि-परिषद् के उत्तरदायित्व का पहला उदाहरण उपस्थित किया। वालपोल प्रधान-मन्त्री (Prime Minister) की शक्ति बढाने में बहुत सफल सिद्ध हुआ; यद्यपि मुख्य मन्त्री के लिये "प्राइम मिनिस्टर" शब्द का प्रयोग केवल १७६० मे ही हुआ क्योंकि जार्ज प्रथम और द्वितीय दोनो अंग्रेजी भाषा और रीति-रिवाजो से परिचित न थ।

वाल पोल मन्त्रिमण्डल के प्रमुख सदस्यो ने एक छोटी परिषद् बनाई जिसका नाम कैबिनेट (Cabinet) पडा जो कि प्रिवी कौंसिल से छोटी थी और जिसमें राजा के सब सलाहकार शामिल होते थे।

मन्त्रिमडल व्यवस्था का उदय (Rise of Cabinet System)—इस कैबिनेट प्रणाली का उदय चार्ल्स प्रथम के समय से पार्लियामेन्ट और राजा के बीच भिन्न-भिन्न रूपो में बराबर होता आ रहा था। परन्तु केवल हैनोवर के दो राजाओ, जार्ज प्रथम और द्वितीय के समय में ही कैबिनेट को शासन-प्रबध में अपना सिक्का जमाने का अवसर मिला और तभी से राजा इसकी कार्यवाही के सचालन के भार स मुक्त कर दिया गया। जब जार्ज तृतीय राजसिहासन पर बैठा तो वह कैबिनेट के कार्य में हस्तक्षेप करने लगा, क्योंकि उसका पालन-पोषण इगलैण्ड में हुआ था और वह वहाँ के रीति-रिवाजो व राजनीतिक दलो की नीति से अच्छी तरह परिचित था। तीस वर्ष बीतने के बाद राजा का वह हस्तक्षेप मन्त्रिमण्डल को बुरा लगा। राजा और उदार पक्ष वालो (Whigs) की तनातनी में कुछ समय के लिये राजा की जीत हुई और उसने सन् १७७० मे रूढिवादी पक्ष के नेता लार्ड नार्थ को अपना प्रधान मन्त्री बनाया। परन्तु इसी काल में (अमरीकन स्वतन्त्रता-युद्ध के परिणाम स्वरूप) अमरीका स्थित तेरह उपनिवेशो के इंगलैंड के आधिपत्य से बाहर निकल जाने से रूढिवादियो की लोकप्रियता समाप्त हो गई और उदार पक्ष फिर शक्तिशाली होने लगा। कुछ समय बाद पिट (Pitt) ने हाउस आफ कामन्स के बहुमत की सहायता से एक मिला-जुला मन्त्रिमडल बना डाला जिसने जार्ज तृतीय की पुन व्यक्तिगत शासन स्थापित करने की कोशिश को समाप्त कर दिया। इस प्रकार पिट के पौरुष और दूरदर्शिता से कैबिनेट की शक्ति को नष्ट होने से बचा लिया। राजा और केबिनेट के बीच सघर्ष के इस काल में हाउस आफ कामन्स ने निर्वाचनो पर नियत्रण करके तथा स्वय अपनी कार्य पद्धति निश्चित करके अपनी शक्ति बढ़ा ली थी।

जार्ज तृतीय के शासन-काल में ही सन् १७६० ई० में एक एक्ट पास हुआ जिसने यह आयोजन करके न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को पूर्णतया स्थापित कर दिया कि सम्राट् की अथवा उसके उत्तराधिकारियो में से किसी की मृत्यु हो जाने पर भी न्याया-

धीश अपने व्यवहार के ठीक रहते तक अपने पदो पर पूरी शक्ति सहित सुरक्षित रहेगें।

उन्नीसवी शताब्दी के वैधानिक सुधार—बाद के हैनोवर वशीय राजाओ ने १९वीं शताब्दी में राज्य किया जिसमें ऐसे अनेक वैधानिक परिवर्तन हुए जिनसे एक वास्तविक प्रजातन्त्र राज्य के स्थापित होने में बडी सहायता मिली। इन परिवर्तनो ने केन्द्रीय और स्थानीय शासन व विधान कार्य में प्रजातन्त्र के सिद्धान्तो को प्रचलित किया; उनके कारण उन्नीसवी शताब्दी के इन परिवर्तनो के मूल में कई कारण थे। सबसे पहले, फ्रान्स की राज्य क्रान्ति ने साधारण यूरोपीय जनता के मस्तिष्को में समाज में राजतन्त्र और कुलीन तन्त्र के स्थान और देश को सरकार से सम्बन्धित साधारण जनता के अधिकारो के बारे में बडी उथल पुथल कर दी। स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृभाव के क्रान्तिकारी सिद्धान्तो का सारे यूरोप में प्रचार हो चुका था, और यद्यपि सन् १८१५ ई० की वियना की काग्रेस ने राजाओ को फिर पदासीन करने तथा नेपोलियन की बनाई हुई व्यवस्था को तोड फोड कर फ्रास की क्रान्ति के किये हुए पर पानी फेरने का प्रयत्न किया, परन्तु सन् १८४८ ई० का उदार आन्दोलन (Liberal Movement) इन्ही सिद्धान्तो का प्रत्यक्ष परिणाम था। इंगलैंड मे राजनीतिज्ञो ने इन सिद्धान्तो के प्रचार को रोकने का प्रयत्न किया परन्तु क्रान्ति की लहर दब जाने के बाद उन्होने भी शासनपद्धति में सुधार करने की आवश्यकता अनुभव की। दूसरे, अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी के औद्योगिक विकास ने समाज का रूप ही बदल दिया था। इस समय तक पार्लियामेंट में कुलीन व्यक्ति या उनके प्रतिनिधि ही सदस्य होते थे। मत-दान का अधिकार बहुत थोडे लोगो को प्राप्त था और पुराने नगरो तक ही सीमित था। औद्योगिक उन्नति के परिणामस्वरूप नये बडे-बडे औद्योगिक नगर बस गये जिनमें पुराने शहरो से या गाँवो से आकर लोग रहने लगे। इन नये नगरो का पार्लियामेंट में कोई प्रतिनिधित्व न था, जबकि उन स्वशासित नगरो (Boroughs) को बहुत से प्रतिनिधि भेजने का अधिकार था जिनकी जनसख्या लोगो के नये नगरो मे चले जाने से बहुत घट गई थी। कही-कही तो बैरन्स (Barons) के मनोनीत व्यक्ति ही प्रतिनिधि नियुक्त हो जाते थे। किन्ही नगरो मे कोई मतदाता न था, परन्तु फिर भी उसके प्रतिनिधि पार्लियामेंट मे बैठते थे। अत छोटे और सडे हुए नगर बडे प्रभावशाली बने हुए थे और बर्मिंघम जैसे बडे बडे नगर बिना प्रतिनिधित्व के ही रह जाते थे। यह स्थिति अधिक समय तक न रह सकती थी क्योंकि इससे नये समृद्धिशाली नगरो में असन्तोष बढ रहा था। तीसरे, उन्नीसवी शताब्दी के बेन्थम (Bentham) और कौबेट (Cobbet) जैसे विचारको और दार्शनिको ने जनता के सामने नये विचार

प्रस्तुत कर दिये थे, जिससे लोग अपने सामाजिक अधिकारों के प्रति जागरूक हो गये थे। यद्यपि अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक भी कुछ राजनीतिज्ञों ने शासन-पद्धति में सुधार करने का प्रयत्न किया पर वे सफल न हुए। परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी में, पुरानी पद्धति काम न दे सकती थी।

१८३२ का सुधार-अधिनियम (The Reform Act of 1832)–इसलिये १२ दिसम्बर सन् १८३१ को लार्ड जॉन रसैल (Lord John Russell) ने तीसरा सुधार विधेयक (Bill) प्रस्तुत किया, (सन् १८३१ ई० में दो विधेयक पास न हो पाये थे) जो कि हाउस ऑफ कॉमन्स में २१ सितम्बर सन् १८३२ को तीसरी बार पढ़ा गया। जब राजा ने हाउस आफ लार्ड्स में नये व्हिग पीयरों (Whig Peers) को बना कर विधेयक के समर्थकों की संख्या बढ़ा देने की धमकी दी तो लार्ड्स ने भी इसका विरोध करना उचित न समझा और विधेयक पास कर दिया। इस अधिनियम (Act) से तीन प्रमुख परिवर्तन हुए। सबसे पहले ५६ पौकेट और रोटेन बरों के प्रतिनिधित्व को समाप्त कर दिया। इनके १११ *प्रतिनिधि हुआ करते थे जिनमें अलग अलग २००० से कम व्यक्ति निवास करते* थे। दूसरे ३० बरों का एक-एक प्रतिनिधि तोड़ दिया गया, और एक के दो प्रतिनिधि तोड़ दिये गए। ये १४३ रिक्त स्थान उन काउन्टियों और बरों में बाँट दिए गए जिनका कोई प्रतिनिधि पार्लियामेण्ट में न होता था अथवा जिनका प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर अपर्याप्त था। दूसरे, मताधिकार विस्तृत कर दिया गया। १० पौंड प्रति वर्ष किराया देने वाले या ५० पौण्ड प्रति वर्ष देने वाले पट्टेदार या आसामी इन सब को मताधिकार दे दिया गया। तीसरे, भ्रष्टाचार और बेईमानी को रोकने के लिये निर्वाचन के नियम बना दिए गए। इस प्रकार सन् १८३२ ई० के पश्चात् हाउस ऑफ कामन्स में जनता का पहले से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व होने लगा।

सामाजिक सुधारों की मांग—परन्तु १८३२ के सुधारों से उन लोगों का सन्तोष न हुआ जो श्रमजीवियों और साधारण जनता के अधिकारों की रक्षा करना चाहते थे। सर राबर्ट ओवन (Sir Robert Owen) जो कि एक स्वयं बनाया हुआ आदमी था और एक कपड़े की मिल का मालिक था, का चलाया हुआ एक *आन्दोलन पहले से भी हो रहा था जिसमें काम करने वाले व दूसरे श्रमजीवियों की* दशा सुधारने की मांग हो रही थी। सर राबर्ट ओवन ने इस पर जोर दिया कि राज्य श्रमजीवियों के प्रति अपना कर्तव्य पालन करें। उसने स्वयं ही इस ओर कदम उठाया और अपने कारखाने में से दस साल से नीची उम्र वाले बच्चों को हटा दिया। वयस्कों के लिये काम करने का समय कम करके निश्चित कर दिया, मजदूरों के लिये स्वास्थ्य-

वर्धक घर और प्रमोदोद्यान बनवाये और उनकी प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये सहकारी समितियाँ बनाईं। उसने दो पुस्तकें लिखीं और प्रकाशित की, एक "ए न्यू व्यू ऑफ सोसाइटी" (A New View of Society) सन् १८१३ ई० में और दूसरी 'ए बुक ऑफ दी न्यू मोरेल वर्ल्ड" (A Book of the New Moral World) सन् १८३६-४४ ई० में। इन पुस्तकों में सामाजिक सुधार के सिद्धान्तों का विवेचन था। सन् १८३६ ई० में उसके द्वारा निकाले हुए "पीपुल्स चार्टर" (Peoples Charter) के कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिये लन्दन वर्कमेन्स एसोसिएसन' (London Workmen's Association) की स्थापना हुई।

चार्टिस्ट आन्दोलन (The Chartist Movement)—इस चार्टर का यह नाम इसलिये पड़ा क्योंकि इसका उद्देश्य साधारण जनता के हितों का साधन करना था। इस अधिकार-पत्र को प्रकाशन करने वाली सभा ने सारे देश के श्रमिकों को इन शब्दों से सम्बोधित किया—"यदि हम राजनीतिक अधिकारों की समानता के लिये लड़ रहे हैं तो यह किसी अन्याय-पूर्ण कर को हटाने के लिये या सम्पत्ति, शक्ति व प्रभाव को किसी एक दल के हाथ से हस्तान्तरित करने के लिये नहीं किया जा रहा है। हम यह सब इसलिए करते हैं जिससे हम अपने सामाजिक कष्टों के स्रोत को सुखाने में सफल हों और क्रमश पद्धतियों से निवारण करते हुए हम अन्यायपूर्ण कानूनों के दण्ड से बच जायें।" इस अधिकार-पत्र के अनुगामी अपने को चार्टिस्ट कह कर पुकारते थे और उनका आन्दोलन "चार्टिस्ट आन्दोलन" के नाम से प्रसिद्ध है। चार्टर की मुख्य माँगें ये थीं। सार्वभौम वयस्क मताधिकार, पार्लियामेन्ट के सदस्यों का वार्षिक निर्वाचन, समान माप के निर्वाचन क्षेत्र, गुप्त रीति से मतदान हो (मतों को गुप्त रखने के लिये जिससे मत देते समय धनी लोग छोटे लोगों पर अनुचित दबाव न डाल सकें)। पार्लियामण्ट की सदस्यता के लिये सम्पत्ति-सम्बन्धी योग्यता को हटाना, पार्लियामेण्ट के सदस्यों को वेतन देना (जिससे निर्धन लोग भी निर्वाचन के लिये खड़े हो सकें और देश के शासन प्रबन्ध में अच्छी तरह हाथ बँटा सकें)। लिबरल (उदार पक्ष) और कन्जरवेटिव (रूढ़िवादी पक्ष) दोनों पक्षों ने मिलकर इस आन्दोलन का विरोध किया और फलत वह कुछ ही दिनों में ठंडा पड़ गया।

सन् १८६७ ई० का द्वितीय सुधार ऐक्ट (The Second Reform Act of 1867)—यद्यपि चार्टिस्ट आन्दोलन का तुरन्त ही कोई प्रभाव न दिखाई पड़ा पर उसकी सुधारों की माँगों को अनिश्चित समय तक टाला न जा सका। सन् १८३२ के अधिनियम (ऐक्ट) से तत्कालीन समस्याओं का समाधान न हो सका, क्योंकि उद्योगों की बराबर उन्नति हो रही थी और उपयोगितावाद (Utilitarianism) की धूम थी

जिसका सिद्धान्त यह था कि अधिक से अधिक लोगो का अधिक से अधिक सुख ही समाज का उद्देश्य है। इन सबके परिणामस्वरूप सन् १८३७ में द्वितीय सुधार ऐक्ट पास हुआ। इससे पार्लियामेण्ट ने मताधिकार को विस्तृत कर दिया। नगर में मताधिकार (Borough Franchise) उन सब लोगो को दे दिया गया जो मकान बना कर एक वर्ष तक नगर में रहते थे और दरिद्र पोषणार्थ कर चुकाते थे तथा जो १० पौंड मकान का किराया देते थे। ग्यारह नगरो को मताधिकार से वंचित कर दिया गया और ३५ नगरो में प्रत्येक का प्रतिनिधित्व दो से घटा कर एक कर दिया गया। इस प्रकार जो स्थान खाली हुए वे बड़े नगरो को और अंग्रेजी काउण्टियों को दे दिये गये। इस ऐक्ट से अल्पसंख्यकों को भी कुछ प्रतिनिधित्व मिल गया।

सन् १८८४ का सुधार ऐक्ट (The Reform Act of 1884)—पाँच वर्ष बाद सन् १८७२ ई० मे फिर और सुधारो के लिये आन्दोलन उठा। उदार पक्ष के लोग जो अब लिबरल कहलाने लग थे मताधिकार को और बढ़ाने की माँग करने लगे। वे कहते थे कि निर्वाचन क्षेत्र बराबर माप के हो और पार्लियामेण्ट के सदस्यो को वेतन दिया जाय। उस समय प्रधान मन्त्री ग्लेडस्टोन (Gladstone) ने सुधार करने की माँग स्वीकार कर ली और ६ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को तृतीय सुधार ऐक्ट पास हो गया जिसका सरकारी नाम "रिप्रजेन्टेशन ऑफ पीपुल्स ऐक्ट, १८८४" था। इस ऐक्ट से काउण्टो (जिला) में भी वही मताधिकार दे दिया गया जो सन् १८३७ ई० के ऐक्ट से नगरो के लिये दिया गया था, और गाँव के श्रमजीवियो को भी मताधिकार मिल गया।

रीडिस्ट्रीब्यूशन आफ सीट्स ऐक्ट, १८८५ (Redistribution of Seats Act, 1885) इस ऐक्ट से निर्वाचन सूची में बीस लाख लोगो के नाम और शामिल हो गये और इसलिये निर्वाचन-क्षेत्रों को फिर से बनाना आवश्यक समझा गया। इस के लिए सन् १८८५ का रीडिस्ट्रीब्यूशन ऑफ सीट्स एक्ट पास हुआ। एक ऐक्ट के अनुसार एक निर्वाचन क्षेत्र से दो-प्रतिनिधि निर्वाचन क्षेत्र बनाए गए, परन्तु २२ नगर और ऑक्सफार्ड व कैम्ब्रिज के विश्वविद्यालय प्रत्येक दो प्रतिनिधि चुन सकते थे। अन्य सब बहु-प्रतिनिधिक निर्वाचन क्षेत्रो को काट छाँट कर एक प्रतिनिधिक निर्वाचन क्षेत्रो में बदल दिया गया। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि यद्यपि सन् १८३६ का चार्टिस्ट आन्दोलन दबा दिया गया था पर उसकी अधिकाश मागें, जैसे सार्वभौम वयस्क मताधिकार, समान निर्वाचन क्षेत्र, बैलट द्वारा मत दान, पार्लियामण्ट के सदस्यो के लिये सम्पत्ति की योग्यता की शर्त हटाना सन् १८८५ तक पूरा कर दी गई।

स्थानीय-शासन में सुधार—१८०५, १८८८ और १८९४ के ऐक्ट (Reforms

in Local Government Acts of 1835, 1888 and 1894)--
१९ वी शताब्दी में स्थानीय शासन में भी कई सुधार हुए। उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ तक स्थानीय शासन मुख्यत कुलीनो के हाथ मे था। लार्ड लैफ्टिनेंट (Lord Lieutenant) की सलाह से राजा द्वारा नियुक्त कुलीन घराने के व्यक्ति जिलो में शांति और न्याय स्थापित करते और शासन,प्रबन्ध करते थे। सन् १८३५ ई० में एक म्यूनिसिपल कारपोरेशन ऐक्ट (Municipal Corporation Act) पास हुआ जिसने इन कुलीन सत्ताओ को हटाकर इनके स्थान पर मेयर (Mayor), एल्डरमैन (Aldermen) और कौंसिलर्स (Councillors) को सारे अधिकार सौंप दिए। सन् १८८८ में लोकल गवर्नमेण्ट ऐक्ट (Local Government Act) पास हुआ जिसने जिलो में पुरानी पद्धति भग कर दी और उसके स्थान पर लोक निर्वाचित जिला सस्थाये स्थापित की। इस ऐक्ट का प्रमुख उद्देश्य जिलो में वही पद्धति चलाना था जो स्व शासित नगरो (Boroughs) में पहले से ही प्रचलित थी। प्रत्येक जिले को सख्या एक कौरपोरेशन बना दी गई। सन् १८९४ ई० के लोकल गवर्नमेण्ट ऐक्ट (Local Government Act) ने प्रत्येक एडमिनिस्ट्रेटिव काउण्टी (Administrative County) को नागरिक और ग्राम्य छोटे जिलो में बाँट दिया। जिनमें से प्रत्येक की अपनी अपनी निर्वाचित परिषद् थी। इग्लैण्ड में इस प्रकार से जो स्थानीय शासन की व्यवस्था प्रारम्भ हुई वह बाद के सुधारो द्वारा अभी तक चली आ रही है।

बीसवीं शताब्दी के सुधार (The Twentieth Century Reforms)-सन् १९१० ई० मे हाउस ऑफ कॉमन्स और हाउस ऑफ लार्डस के मतभेद से और प्रथम महायुद्ध (१९१४-१८) के फलस्वरूप प्रजातन्त्र की बढती हुई लहर से बीसवी शताब्दी में जो वैधानिक सुधार हुए उनका विस्तृत विवरण आगे व्यवस्थापिका सभाओ और स्थानीय शासन से सम्बन्धित अध्यायो मे दिया जायगा।

न्याय-पद्धति का सुधार (Reforms of the Judicial System) इसी अध्याय में यह बताया जा चुका है कि हेनरी प्रथम के समय से इगलैंड में न्याय पद्धति का कैसे विकास हुआ परन्तु इस विकास में कोई क्रम न था। फलत विभिन्न प्रकार के मुकद्दमो के लिए पृथक्-पृथक् न्यायालय स्थापित कर दिए गए थे। सन् १८७३ ई० में पार्लियामेण्ट ने सुप्रीम कोर्ट ऑफ ज्यूडीकेचर (Supreme Court of Judicature) ऐक्ट पास किया जिसमें न्यायपालिका का पुनर्सगठन किया, जिसमे सबसे ऊपर एक सर्वोच्च न्यायालय, सुप्रीम कोर्ट ऑफ ज्यूडीकेचर बनाया गया। क्वीन्स बेंच (Queen's Bench) का न्यायालय, कॉमन प्लीज (Common Pleas) एक्सचेकर (Exchequer), चान्सरी (Chancerry), एडमिरल्टी (Admiralty), और प्रोबेट व डाइवोर्स (Probate and Divorce) के न्यायालय जो अब तक

स्वतन्त्र थे अब सर्वोच्च न्यायालय (High Court of Justice) के अंग बना दिए गए और एक नया पुनर्विचार करने वाला न्यायालय (Court of Appeal) भी बना दिया गया। इसके बाद से कानून सम्बन्धी व साधारण न्याय (Equity) दोनों के मुकदमे एक ही न्यायालयों में सुने जाने लगे।

पाठ्य पुस्तकें

लगभग इंगलैंड के इतिहास की प्रत्येक पुस्तक अंग्रेजी शासन विधान के विकास का वर्णन करती है और उनमें सम्राट्, मन्त्रिमण्डल, विधानमण्डल स्थानीय शासन और न्यायपालिका आदि का उल्लेख रहता ही है, फिर भी निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन लाभदायक सिद्ध होगा—

Adams G. B,—Constitutional History of England (1934 Edition)
Bagehot, W—Evolution of Parliament.
Cross, A. L.—Shorter History of England and Greater Britain.
Dicey, A V.—The Law of the Constitution (1938 Ed.)
Maitland, F. W—Constitutional History of England.
Montague, F. C.—Elements of English Constitu tional History (1936)
Pollard, A .F. —The Evolution of Parliament. (1926)
Puntambekar, S. V.—English Constitutional History. (2 Vols. 1892)
Taswell Langmead, T. P.—English Constitutional History (9th ed)
Taylor, H.—Origin and Growth of English Constitution (2 Vols., 1898).
Usher, R. G—Institutional History of the Commons. 1547-1641 (1924).
White A B.—The Making of the English Constitution (1925),

अध्याय ५

अंगरेजी शासन-विधान के विशेष लक्षण

(Salieant Features of the English Constitution)

"वैधानिक सिद्धान्त और उसके भिन्न-भिन्न आकार केवल अव्यक्त तर्कों के शून्याकाश में काम नहीं करते। वे एक ऐसे साधन हैं जो किन्हीं निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये काम में लाये जाते हैं और उस अभिप्राय की सिद्धि के अनुकूल ही उनका रूप निर्धारित किया जाता है। इंगलैंड का ढाई सौ वर्ष पुराना राज्य उस उदार भावना का सत्यात्मक अभिव्यंजना है जिसकी अभिव्यक्ति सबसे प्रथम लॉक ने की।" —एच० जे० लास्की

"हमारे शासन विधान का सार विधि (Law) है जिसका आदर किया जाता है और जो लागू किया जाता है और हमारे देश के विधि निर्बन्ध तथा न्यायान्य व पालियामेण्ट का सर्वोच्च न्यायालय मध्ययुगीन अंग्रेजी राजाओं और उनके भृत्यों की महान सिद्धि है।" —जी० एम० ट्रैविलियन

संयुक्त राज्य (U.K) एक राजतन्त्रवादी एकात्मक राज्य है जिसमें एक पालियामेण्टवादी सरकार है जहाँ कि कार्यपालिका जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी है। उसका संविधान अधिकतर अलिखित है, उसमें अनेक शताब्दियों के काल में पास किये गये अधिनियमों और लेख्यों की एक बड़ी संख्या और सरकार की व्यवस्था को बदलते हुए समय के अनुकूल बनाने के लिये समय समय पर अपनाये गए रीति रिवाज और परम्परायें शामिल हैं। संयुक्त राज्य का उदगम् ९वीं शताब्दी में देखा जा सकता है जबकि इंगलैण्ड पहली बार एक सैक्सन राजा के आधीन संगठित किया गया था। तेरहवीं शताब्दी तक के समाप्त होने से पहले, वेल्स और आयरलैण्ड संयुक्त राज्य के भाग बन चुके थे। स्कॉटलैण्ड सन् १७०७ में एक संघ की सन्धि से इंगलैण्ड से मिलया गया। १८०१ में ब्रिटिश पालियामेण्ट की शक्ति आयरलैंड तक बढ़ा दी गई परन्तु १९२२ में आयरलैण्ड (दक्षिण की २६ काउण्टियाँ) संयुक्त राज्य से अलग हो गया। एकतन्त्रात्मक राज्य होते हुए भी, जिसमें कि मुख्य बातों पर पूरे संयुक्त राज्य के लिये नीति निश्चित की जाती है, विभिन्न भागों को व्यक्तिगत आवश्य-

वनाओं के अनुसार यथार्थ प्रशासन में पर्याप्त लचीलापन है। प्रशासन के इस विकेन्द्रीकरण से वेल्स के मामलों के लिये एक कैबिनेट मन्त्री नियुक्त किया गया है, जिसका सहायक राज्य का मन्त्री होता है, जो कि अपना अधिकांश समय वेल्स में काटता है। स्काटलैण्ड अपने कानूनों, अपने न्यायालयों और अपने गिरजाघर, अपनी शिक्षा प्रणाली तथा सरकार के अपने विभागों को अब भी रखता है, जो कि स्काटलैण्ड के लिये एक राज्य सचिव के अधीन रखे जाते हैं जो संयुक्त राज्य की सरकार का एक प्रमुख सदस्य होता है। उत्तरी आयरलैण्ड सरकार की काउन्सिलें अपनी स्वयं की पार्लियामेण्ट के अधीन हैं। सम्राट के दो आश्रित राज्य चैनल द्वीप और मैन (Man) का द्वीप (जो कि संयुक्त राज्य के भाग नहीं हैं) अपनी धारा सभायें, अपनी कानून और स्थानीय प्रशासन की व्यवस्थायें और अपने न्यायालय रखते हैं, परन्तु उनकी मुख्य देश से निकटता और ब्रिटिश सम्राट से पुराने सम्बन्ध के कारण वे व्यापार और डाक सेवा के लिये मुख्य देश के भाग माने जाते हैं और अनौपचारिक रूप से संयुक्त राज्य की पार्लियामेण्ट के अधीन हैं। इससे यह मालूम पड़ता है कि यद्यपि बाहर से संयुक्त राज्य एक वास्तव में एकतन्त्रात्मक राज्य है परन्तु यथार्थ व्यवहार में वह एक बहु-राष्ट्रीय राज्य है जिसमें आयरिश, वेल्स, स्कॉट और निकट के द्वीपों की जनता को काफी स्वतन्त्रता मिली हुई है। एक हजार वर्ष से अधिक पुरानी राजतन्त्र की संस्था अब भी संयुक्त राज्य की सबसे अधिक महत्वपूर्ण संयोजक शक्ति है। मौलिक रूप में राजा की शक्तियाँ अक्षुण्ण हैं यथार्थ व्यवहार में सरकार तीन अंगों द्वारा चलती है—पार्लियामण्ट के रूप में विधान मण्डली, एक उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल के रूप में एक कार्यपालिका, और एक स्वतन्त्र न्यायपालिका।

(१) विकासात्मक वृद्धि ब्रिटिश संविधान की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है—पिछले अध्याय में अंग्रेजी शासन-विधान के संक्षिप्त इतिहास का जो वर्णन किया गया है, उसमें अंगरेजी शासन विधान की यह प्रमुख विशेषता भलीभांति प्रकट है कि वह एक क्रमिक विकास की लम्बी और अप्रत्यक्ष प्रक्रिया का परिणाम है। इंगलैण्ड के इतिहास में किसी समय भी यह दिखाई नहीं पड़ता कि वहाँ के निवासियों ने कोई बड़ा परिवर्तन सहसा ही कर डाला हो और राजनैतिक पद्धति की संस्थाओं को बिल्कुल नये सिरे से प्रारम्भ किया या संगठित किया हो। क्रामवेल के समय में जो थोड़े समय के लिये गृहयुद्ध के फलस्वरूप कामनवैल्थ की नवीनता रही, वह उपर्युक्त नियम का केवल अपवाद ही कहा जा सकता है। कई शताब्दियों के इस लम्बे क्रमिक विकास में प्रत्येक परिस्थिति राजकीय संस्थाओं पर अपना निजी प्रभाव छोड़ गई। इसलिये अंग्रेजी शासन विधान का चित्र उस भवन के चित्र से भिन्न दिखाई पड़ेगा जिसका पूर्व कल्पित अभिप्राय से विचारपूर्वक किसी एक निश्चित ढंग पर बनाया गया हो;

यह तो उन पुरानी गढ़ी के समान है जिसमें मुख्य ढांचे की समता को रखने की कोई कोशिश न करते हुए प्रत्येक आने वाली पीढ़ी ने अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुसार कोई भीत या बुर्ज जोड़ दिया हो। इसलिए यदि राजनीति-विज्ञान के विद्यार्थी की अंग्रेजी विधान को एक स्थान पर पाने की अभिलाषा पूरी न हो तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। आजकल प्रायः सभी राष्ट्रों में कोई एक लेख्य होता है जिसमें उस राष्ट्र के शासन सम्बन्धी मुख्य-मुख्य सिद्धान्त लिखे रहते हैं। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमरिका का शासन-विधान उस एक लेख्य में पाया जाता है जो फिलाडलफिया के सम्मेलन में तैयार हुआ और जिसको उपराज्यों ने स्वीकार कर लिया था। इस लेख्य में बाद में हुए थोड़े से संशोधनों को जोड़ने से शासन-विधान का पूरा चित्र हमारे सामने आ जाता है।

अंग्रेजी शासन विधान एक अकेला प्रलेख—सन् १९५८ ई० के संविधान से फ्रान्स के शासन विधान की रूपरेखा देखने को मिल सकती है परन्तु इसके विरुद्ध अंग्रेजी शासन विधान किसी एक लेख्य या पालियामेण्ट से बनाए हुए कानून से नहीं जाना जा सकता। इसका परिचय पाने के लिए हमको उन सब सिद्धान्तों की जानकारी करनी पड़ेगी जो सन् १२१५ ई० के मैग्नाकार्टा (Magna Carta) से लेकर सन् १९३६ ई० के राज्य त्याग एक्ट तक पालियामेण्ट ने बनाए हैं। परन्तु यदि विधान के बड़े-बड़े सिद्धान्तों वाले प्रमुख कानूनों को ही गिनती की जाय तो वे ये हैं —

मैग्ना कार्टा (Magna Carta, 1215)—जिसने बैरनों और पादरियों के कुछ अधिकार सुरक्षित करके कर लगाने पर सम्मति प्रकट करने के लिए एक राष्ट्रीय परिषद् (National Council) का बुलाया जाना आवश्यक करके और इस चार्टर (Magna Carta) की शर्तों को नियात्मक रूप देने के लिये २५ बैरनों की एक परिषद् बना कर राजा के अधिकार कम कर दिये।

पिटीशन आफ राइट्स (Petition of Rights, 1628)—जिसने मैग्ना कार्टा से दिये गये अधिकारों की पुनः घोषणा की। पालियामेण्ट की सम्मति के बिना स्वेच्छा से राजा की कर लेने की शक्ति को समाप्त कर दिया, और बिना परीक्षा व विचार किये और कारण बताये किसी व्यक्ति को बन्दी बनाने के राजा के अधिकार को अस्वीकृत कर दिया।

हेबियस कॉर्पस ऐक्ट (Habeas Corpus Act, 1679)—जिसने प्रजा को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा की यद्यपि वैयक्तिक स्वतन्त्रता का अधिकार इंगलैण्ड में बहुत प्राचीन समय से मान्य था पर उसकी प्राप्ति के उपाय दोषपूर्ण व अपर्याप्त थे। इस ऐक्ट ने उन सब असुविधाओं व दोषों को दूर कर दिया और लोगों को एक

ऐसे महत्वपूर्ण अधिकार का लाभ कराया जो दूसरे देशों में स्वच शासन विधान में लिखा रहता है।

बिल आफ राइट्स (Bill of Rights, 1689)—जो कि ग्लोरियस रिवोल्यूशन (Glorious Revolution) का परिणाम था जिसने मैकाले के कथनानुसार "अन्तिम बार इस प्रश्न का निबटारा कर दिया कि अंगरेजी राजकीय जीवन में फिट्जवाल्टर और डिमौन्टफोर्ट के समय में उत्पन्न हुआ लोकतत्व राजतत्व से दब जायगा या उसको धीरे धीरे बढ़ने की स्वतन्त्रता मिलेगी जिससे वह प्रबल होकर सब पर अपना प्रभुत्व करने के योग्य हो जाय।" मैकाले ने आगे चल कर कहा कि "यद्यपि बिल आफ राइट्स न कोई ऐसा कानून नहीं बनाया जो पहले कानून न था पर उसमे उन सब अच्छे कानूनों का अंकुर था जो पिछली डेढ़ शताब्दी में पास हो चुके थे, या जो अच्छे कानून भविष्य में समाज की उन्नति व कल्याण के लिये आवश्यक समझे जायेंगे और जिनसे जनमत सन्तुष्ट होता हो।"

दी ऐक्ट आफ सेटिलमेन्ट (The Act of Settlement 1701)—जो वास्तव में राजा और प्रजा के बीच एक प्रकार का प्रारम्भिक अनुबन्ध था, क्योंकि इसने राजा के दैवी अधिकार को अमान्य ठहरा दिया और पालियामेण्ट के राज्यसिंहासन पर बैठाने के लिये उत्तराधिकारी का निर्णय करने के अधिकार को मान्य कर दिया।

दी ऐक्ट आफ यूनियन (The Act of Union, 1707)-जिसने इंगलैण्ड और स्काटलैंड को मिला कर यूनाइटेड किंगडम आफ ग्रेट ब्रिटेन (United Kingdom of Great Britain) की स्थापना की।

दी ऐक्ट आफ यूनियन विद आयरलैंड (The Act of Union with Ireland, 1800)—जिसने आयरलैण्ड को इंगलैण्ड से नियमित रूप से संयुक्त कर दिया और जिससे पालियामेण्ट के संगठन में कुछ परिवर्तन हुआ।

दी रिफार्म्स ऐक्ट्स (The Reforms Acts of 1832, 1867, 1884 and 1885)—जिन्होंने मताधिकार को विस्तृत किया जिससे कॉमन्स सभा वास्तव में लोक प्रतिनिधि सभा बनी।

रिप्रजेंटेशन आफ दी पीपुल ऐक्ट्स (Representation of the People, Acts of 1921 and 1929)—जिसने कॉमन्स सभा के लिये वयस्क मताधिकार दे दिया।

लोकल गवर्नमेंट ऐक्ट्स (Local Government Acts of 1888, 1894 and 1929)—जिन्होंने प्राय आकस्मिक ढंग से स्थापित प्राचीन शासन संस्थाओं का पुनर्संगठन करके स्थानीय स्वायत्त शासन की स्थापना व उन्नति की और देश में स्थानीय स्वायत्त शासन की एक निश्चित पद्धति का प्रचार किया।

दी जुडीकेचर ऐक्टस (The Judicature Acts of 1873, 1875, 1876 and 1894)—जिन्होंने न्यायपालिका का पुनर्गठन करके न्यायक्षेत्र में प्रचलित अन्ध धुन्धी के स्थान पर एक अच्छी व्यवस्था स्थापित की।

पार्लियामेन्ट ऐक्ट (The Parliament Act of 1911)—जिसने हाउस आफ लार्ड्स के अधिकार कम कर दिये और हाउस आफ कॉमन्स को सर्वप्रमुख सदन बना दिया।

उपर्युक्त सूची पूर्ण नही है।

ऊपर अग्रेजी शासन विधान के सिद्धान्तों के परिचायक अधिनियमो (Acts) मे से प्रमुख अधिनियमो का ही वर्णन किया गया है। इस वर्णन से पाठको को विधान की मोटी रूपरेखा ही समझ में आ सकती है। परन्तु शासन विधान का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को अँगरेजी सविधान को पूरी तरह हृदयगम करने के लिये पार्लियामेण्ट के अभिलेखों (Records)और अनेक छोटे अधिनियमो की छानबीन करनी पडगी। जैसा मैरियट (Marriot)ने कहा है, 'शासन विधान की निर्वाचिता और अस्पष्टता को देख कर विदेशी लाग हैरान भी रहते है, और प्रशसा भी करते है। स्थान स्थान पर उनको प्रमाणिक लेखो की अनुपस्थिति खटकती है पर फिर भी वे अपने सरल स्वभाव के कारण अग्रेजी पद्धति की उपयोगिता को देखने और उसका समर्थन करने से नहा चूकते।" अपना शासन विधान बनाने में अग्रेजों ने अपने परम्परागत स्वभाव को नही छोडा है और कभी भी एसा परिवर्तन नहीं किया है जिसमें पुरानी सस्था और परिपाटी से उनका सम्बन्ध टूट जाता हो। प्रत्यक आग आने वाली परिस्थिति में उन्होंने केवल उतना ही परिवर्तन करना ठीक समझा जितने से नई परिस्थिति का सफलतापूर्वक सामना किया जा सके। इस लक्षण को बौटमी (Boutmy)ने इन शब्दो में बडो भला प्रकार समझाया है —

"अग्रजा ने अपने शासन विधान के भिन्न भिन्न भागो का वही छोड दिया जहाँ इतिहास की लहर न उन्ह लाकर डाल दिया। उन्होने इन टुकडो को एक स्थान पर इकट्ठा करने की या उनका वर्गीकरण करन की और उनका एक समीचीन तथा समन्वित पूर्ण बनाने की कभी कोशिश नहीं की। मूल लेखो के अन्वेषको व परीक्षका को इस बिखरे हुए सविधान मे कोई सहारा नहीं मिलता। उनको भूलो की ओर उगली उठाने वाले आलोचकों या सिद्धान्त-विरोधी नियमो को धिक्कारने के लिए उत्सुक लोगा से डरने की कोई जरूरत नहीं। इन्ही भूलों व विरोधो से सुखमयी असम्बद्धता, उपयोगी असगतियाँ, रक्षा करने वाले विरोध सुरक्षित रखे जा सकते हैं, जिनका मानव सस्थाओं में सुरक्षित रहना भी अहैतुक नहीं है क्योंकि प्रथम तो वे प्रकृति में ही वर्तमान हैं, इसके अतिरिक्त इनके होने से सामाजिक शक्तियो को क्रियात्मक

होने का पूरा अवसर प्राप्त होने के साथ ही साथ अपनी मर्यादा को उल्लंघन करने का साहस नहीं होता, न उन्हें यह अवसर मिलता है कि सारे सामाजिक मन्दिर की नीव हिला दें। यही लाभ है जो कि अंग्रेजो ने अपने संवैधानिक लेखों को बिखेर कर प्राप्त किया है और जिस पर उन्हें अभिमान है और वे हमेशा सतर्क रहे हैं कि संविधान को एक स्थान पर एकत्रित व सुसम्बद्ध कर इस लाभ को खो न दिया जाय"।

(२) अधिकतर अलिखित संविधान—यही निर्वाकता और अस्पष्टता व संविधान के टुकड़ों का दूर दूर बिखरे हुए होना, अंग्रेजी शासन विधान को अलिखित संविधान के लक्षण प्रदान करता है। अंग्रेजी शासन विधान के अलिखित कहे जाने का अभिप्राय यह है कि संविधान किसी एक अधिनियम या लेख्य में नहीं मिल सकता। इसके अतिरिक्त सब अधिनियमों को जोड़ कर रखने से भी इस संविधान का पूर्ण रूप नहीं जाना जा सकता, क्योंकि बहुत-सी वैधानिक बातें अंग्रेजी राजकीय समाज की परिपाटियों, रीति रिवाजों आदि में निहित है। यदि ब्रिटेन के किसी भी पुस्तक विक्रेता से ब्रिटिश संविधान की एक प्रति मांगी जाय तो वह असमंजस में पड़ जायगा क्योंकि इस प्रकार का कोई अकेला अभिलेख है ही नहीं। जब बर्क ने अपने 'रिफलैक्शन्स आन दि फ्रेंच रिवोल्यूशन' में अंग्रेजी संविधान का समर्थन किया तो लिखित संविधानों के प्रसिद्ध फ्रेंच समर्थक टामस पेन (Thomas Paine) ने पूछा "क्या मि० बर्क अंग्रेजी संविधान उपस्थित कर सकते हैं।" एक दूसरे फ्रेंच लेखक डी० टौकविली ने कहा कि "अंग्रेजी संविधान का अस्तित्व ही नहीं है।" इन कथनों का तात्पर्य केवल यह है कि इंगलैंड ने कभी भी अपने संविधान को लेकर एक अकेला प्रलेख प्रस्तुत करने की कोशिश नहीं की, परन्तु फिर भी पिछली कुछ शताब्दियों में पास हुए कुछ अधिनियम, लेख्य और अधिकार पत्र हैं जो संविधान के अंग हैं। इनके अलावा, संविधान की अधिकांश रीतियाँ अलिखित होते हुए भी रीतिरिवाजों और रूढ़ियों में शामिल हैं जो संविधान के महत्वपूर्ण अंग हैं।

(३) वह परम्पराओं पर भी आधारित है—अंग्रेजी समाज की परम्पराओं का क्या महत्व है? इस प्रश्न का उत्तर यों दिया जा सकता है, इंगलैंड में नियमबद्ध कानून और वैधानिक व्यवहार में बहुत अन्तर है, सरकार की यथार्थ व्यवस्था इन विधि निर्बन्धों के शाब्दिक अर्थों से बहुत हटी हुई है जिनमें दिये हुए सिद्धान्तों के अनुसार शासन विधान का ऊँचा भवन बन कर तैयार हुआ है। पार्लियामेण्ट के विधि निर्बन्धों में बहकने का उत्तरदायित्व इन्हीं रीति-रिवाजों पर है। इन संवैधानिक रीति रिवाजों या प्रथाओं का अर्थ क्या है? प्रथायें नियम तो हैं पर वे

कानून का निर्बन्ध नहीं हैं, जो किसी देश के शासन-विधान के अंग हुआ करते हैं। एडमन्ड वर्क के अनुसार, "रूढ़ियां उस तरीके को निश्चित करती हैं जिसके अनुसार कानून, जो कि उनके पहले होते हैं, लागू किये जाते हैं। इस प्रकार वे संविधान की प्रेरक शक्तियाँ हैं। दूसरे, इन रूढ़ियों द्वारा हमेशा यह बात निश्चित कर ली जाती है कि व्यवहार में संविधान उस समय के प्रचलित सवैधानिक पद्धति के अनुसार काम करता है।" इस प्रकार रूढ़ियां उस पद्धति की अभिव्यक्ति हैं जिसके अनुसार वैधानिक सिद्धान्त व्यवहार में लागू होंगे। इंगलैंड में रूढ़ियां कार्यकारी और विधायक दोनों शक्तियों में व्याप्त हो गई हैं। आचार्य डायसी ने इन प्रथाओं की इस प्रकार परिभाषा की है, "वे सिद्धान्त या व्यावहारिक नियम जो यद्यपि राजा, मन्त्रियों और संविधान के अन्तर्गत अन्य लोगों के कार्यों का नियन्त्रण करते हैं पर वास्तव में वे कानून नहीं हैं।" इस परिभाषा को स्पष्ट करने के लिए वह इन प्रथाओं के उदाहरण भी उपस्थित करता है, "राजा पार्लियामेण्ट के दोनों भवनों से पास किये हुए कानून को स्वीकार करने को बाध्य है, वह उसे अस्वीकृत नहीं कर सकता।" "हाउस ऑफ कामन्स के विश्वासपात्र न रहने पर मन्त्रिगण पदत्याग कर देते हैं।" इनमें से पहले उदाहरण से यह स्पष्ट है कि किस प्रकार कानून से मान्य राजा की विधायिनी शक्ति (Legislative Power) व्यवहार में उससे छीन ली गई है जिससे कि पार्लियामेण्ट की विधायक सर्वोच्च सत्ता स्थापित हो। दूसरे उदाहरण से यह प्रगट है कि यद्यपि सवैधानिक नियम के अनुसार राजा ही स्वेच्छा से मन्त्रियों की नियुक्ति करता है पर वे वास्तव में हाउस ऑफ कामन्स के प्रति उत्तरदायी हैं, जिसका व्यवहार में मतलब यह हुआ कि राजा उन्हीं व्यक्तियों को मन्त्री चुन सकता है जो कामन्स के विश्वासपात्र हैं। संविधान की निरूढ़ियों (Conventions) में "प्रथायें, रीतियां, आधार सूत्र (Maxims) अथवा उदाहरण (Precepts) जो कि न्यायालयों द्वारा लागू नहीं किये जाते अथवा नहीं माने जाते, कानूनों की व्यवस्था नहीं बनाते बल्कि सवैधानिक और राजनैतिक नीति की व्यवस्था बनाते हैं। वे ऐसे समझौते हैं जो कि कालान्तर में शक्तिशाली राजनीतिज्ञों अथवा प्रधान मन्त्रियों द्वारा यथार्थ स्थितियोंका सामना करने के लिए सरकार के यथार्थ कार्य में प्रयुक्त सिद्धान्तों से विकसित होते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जो कि मे (May) की पार्लियामेण्टरी प्रैक्टिस (Parliamentary Practice) में देखकर आसानी से समझा जा सकता है, जो इंगलैंड की पार्लियामेण्ट वाली व्यवस्था की कार्य प्रणाली पर एक प्रामाणिक पुस्तक है। पुस्तक के प्रथम संस्करण को अन्तिम से तुलना करने पर पाठक को यह मालूम पड़ता है कि पिछली कुछ शताब्दियों में विशेषतया १९वीं और २० वीं शताब्दी में इगलैंड की सरकार जिन रीतियों और प्रथाओं, व्यवहारों

तथा समझौतो के अनुसार चलती रही है उनकी एक बड़ी सख्या उसमें जोड दी गई है।

सविधान की निरूढियों अथवा समझौतो की मुख्य विशेषताओ का फ्रीमैन ने इन शब्दों में बयान किया है :—

"अब हमारे पास राजनैतिक नैतिकता की एक पूरी व्यवस्था सार्वजनिक व्यक्तियो (public men) के निर्देशन के लिए उदाहरणो की एक पूरी सहिता है जो परिनियमों या सामान्य विधियो के किसी पृष्ठ पर नही पाई जायेंगी, परन्तु जो व्यवहार में ग्रेट चार्टर अथवा पिटीशन आफ राइट्स में शामिल किसी भी सिद्धान्त से कम पवित्र नहीं मानी जाती। सक्षेप में, हमारे लिखित कानून के साथ एक निरूढियों का अलिखित सविधान विकसित हो गया है। जब एक अग्रेज किसी सार्वजनिक व्यक्ति के व्यवहार को वैधानिक अथवा अवैधानिक कहता है तो उसका तात्पर्य व्यवहार के वैध या अवैध (illegal) होने से बिलकुल भिन्न है। एक बड़े राजनीतिज्ञ के प्रस्ताव पर कामन्स सभा में पास हुए एक मत ने यह घोषणा की थी कि तत्कालीन राज्य-मत्रिगण पर कामन्स सभा का विश्वास नही है और इस प्रकार उनका पदो पर बने रहना सविधान की भावना के विरुद्ध है। कई शताब्दियो से सार्वजनिक व्यक्ति जिन परम्परागत सिद्धान्तो पर अमल करते आ रहे हैं उनके अनुसार ऐसी स्थिति का सत्य असदिग्ध है परन्तु हमारे लिखित कानून के पृष्ठो में इन सिद्धान्तो का कोई पता ढूढना बेकार ही होगा। उस प्रस्ताव को पेश करने वाले का प्रयोजन वर्तमान मत्रिमडल पर किसी अवैध काम का दोषारोपण करना नही था, जो कि किसी निचले न्यायालय में अथवा स्वय पार्लियामेंट के उच्चन्यायालय में मुकदमें का विषय बन सकता हो। उसका यह मतलब नहीं था कि राजा की इच्छा से नियुक्त राजा के मत्रियो ने जब तक कि राजा उनको पदच्युत करना ठीक न समझे तब तक अपने पदो पर आरूढ रहकर किसी कानून का ऐसा उल्लघन किया है जिसको कानून तय कर सकता है। उसका मतलब यह था कि उनकी नीति का सामान्य रुख इस प्रकार का था जिसको कामन्स सभा का बहुमत बुद्धियुक्त अथवा राष्ट्र के लिये लाभदायक नहीं समझता, और इसलिये निरूढ़िगत सहिता के अनुसार जो कि स्वय लिखित कानून के समान समझा गया और प्रभावशाली है, मत्रि-गण उन पदो को छोडने को बाध्य हैं, जिनके लिये कामन्स सभा उनको और अधिक समय के लिये योग्य नहीं समझती है।"[1]

इस प्रकार किसी निरूढि अथवा सवैधानिक समझौते की यह प्रकृति है। इगलैंड

१—कीथ, ए० बी०—दी कान्स्टिट्यूशन, एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड लाज़ आफ दी एम्पायर, पृष्ठ ५।

में प्रशासन का अधिकाश व्यावहारिक काम निरूढियो के अनुसार किया जाता है। फ्रीमैन और डायसी दोनो ने अनेक महत्वपूर्ण निरूढियो के उदाहरण दिये हैं जो कि अंग्रेजी सविधान के अलिखित भाग बन चुके हैं। निम्नलिखित उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते हैं—

(१) "एक मत्रिमडल जिसके खिलाफ कामन्स सभा में बहुमत दिया जा चुका है अधिकाश प्रसगो में पद को त्यागने के लिए बाध्य होता है।" यह ठीक है कि सिद्धान्तरूप से मत्रिमडल तब तक पदासीन रहता है जब तक राजा उसे चाहता है। परन्तु क्योकि राजा पक्ष राजनीति से परे हो गया है और राष्ट्र की एकता का प्रतीक मात्र रह गया है, अत वास्तव मे मत्रिमडल शासन करने का अधिकार नही रखता। इस प्रसग मे एक दूसरी सहसम्बन्धित (correlated) निरूढि है, अर्थात् 'किसी गभीर प्रश्न पर मतनिर्वाचन में हार जाने पर एक मत्रिमडल भग होकर राष्ट्र से अपील कर सकता है।" अर्थात्, जब मत्रिमडल कामन्स में किसी महत्वपूर्ण प्रश्न पर हार जाता है और वह यह महसूस करता है कि कामन्स सभा का मत नही बल्कि उसकी नीति ही देश से स्वीकृत होगी तब वह सदन को भग करने और नये चुनावो की आज्ञा देने के लिये राजा से प्रार्थना कर सकता है। निरूढि के अनुसार (कानून से नही) राजा मत्रिमडल की प्रार्थना मान लेगा और सदन को भग कर देगा। यदि नये चुनावो के बाद बहुमत फिर मत्रिमडल के विरुद्ध हो गया तो मत्रिमडल त्याग पत्र दे देगा। इस प्रकार से हारा हुआ कोई भी मत्रिमडल दुबारा सदन के भग करने की प्रार्थना नही कर सकता। यह सब अलिखित सविधान के लगभग एक अतरग अग के रूप में स्थापित हो गया है।

(२) "सब विषयो के सामान्य रूप से व्यवहार के लिये मत्रिमडल सामूहिक रूप से पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी है?" यह (निरूढि के अनुसार) मत्रिमडल का पार्लियामेण्ट के प्रति सामूहिक व्यवहार में कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायित्व कहा जाता है। सिद्धान्त रूप में मत्रिमडल के सदस्य राजा द्वारा नियुक्त किये जाते है और प्रत्येक सदस्य अपने विभाग के कामो के लिए उत्तरदायी होता है। परन्तु निरूढि से मत्रिमडल एक इकाई के रूप मे काम करता है। जब किसी विशष मत्री की नीति सदन द्वारा अस्वीकृत कर दी जाती है तो सम्पूर्ण मत्रिमडल त्यागपत्र दे देता है। इससे मत्रि मडल का सगठन और कार्यपालिका का विधान मडल के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व बना रहता है।

(३) कामन्स सभा मे उस समय बहुमत रखने वाला दल अपने नेताओ को पदासीन कराने का अधिकार रखता है और इसलिये (आमतौर से) इन नेताओ में से सबसे अधिक प्रभावशाली नेता प्रधानमत्री अथवा मत्रिमडल का अध्यक्ष बनता है।

सिद्धान्त रूप में मंत्रिमंडल राजा की सरकार है और राजा कामन्स सभा के किसी भी सदस्य को सरकार बनाने को कहने के लिए स्वतन्त्र है, परन्तु क्योंकि गठित होने पर मंत्रिमंडल को कामन्स सभा का विश्वास पात्र होना चाहिये, अतः केवल बहुसंख्यक पक्ष के नेता को ही सरकार बनाने के लिये बुलाया है। राजा के आमन्त्रण के स्वीकार करने पर यह नेता प्रधानमंत्री (Premier) कहलाता है और वह अनेक नामों की सिफारिश करता है जिनको वह राजा के मंत्रिगण बनने के योग्य समझता है। यदि सदन में किसी भी पक्ष का स्पष्ट बहुमत न हो तो राजा किसी भी दल के ऐसे नेता को आमंत्रित करने के लिए अपना निर्णय प्रयोग करता है जो उसकी राय में सरकार बनाने के लिये सदन का बहुमत प्राप्त कर सकेगा। फिर निवृति के अनुसार, राजा को "हिज मैजेस्टी" के मंत्रियों के पद पर नियुक्त करने के लिये प्रधान मंत्री के सिफारिश किये हुए व्यक्तियों की सूची मंजूर करनी चाहिये। कुछ अवसरों पर राजा किसी विशेष व्यक्ति के हिज मैजेस्टी के मंत्री बनने के औचित्य पर विवेचन भी कर सकता है, *परन्तु अन्त में मंत्रिमंडल की नियुक्ति में प्रधान मंत्री* का दृष्टिकोण ही राजा पर बाध्य रहता है।

(४) "पार्लियामेंट के किसी *अधिनियम की आवश्यकता के बिना संधियाँ की* जा सकती हैं परन्तु राजा को अथवा वास्तव में राजा का प्रतिनिधित्व करने वाले *मंत्रिमंडल को कोई ऐसी संधि नहीं करनी चाहिये जो पार्लियामेंट की स्वीकृति न पा सकेगी।"* वास्तविक प्रशासन में सब व्यावहारिक प्रयोजनों के लिये मंत्रिमंडल राजा का प्रतिनिधित्व करता है। विदेशों से सिद्धान्त रूप में राजा, परन्तु यथार्थ रूप में मंत्रिमंडल, व्यवहार करता है और क्योंकि विदेशों से संधियां इंग्लैंड की पूरी सरकार पर लागू होती हैं इसलिए मंत्रिमंडल को यह ध्यान में रखना पड़ता है कि सन्धि करने में पार्लियामेन्ट की अन्तिम इच्छा सर्वोपरि है अतः उसको ऐसी कोई सन्धि नहीं करनी चाहिये जिसको पार्लियामेन्ट की स्वीकृति मिलने का आसार न हो।

(५) "देश की वैदेशिक नीति, युद्ध की घोषणा, और शान्ति की स्थापना राजा के हाथों में अथवा यथार्थ में राजा के कर्मचारियों के हाथों में छोड़ दी जानी चाहिये। परन्तु विदेशी मामलों में भी जैसे कि गृह के मामलों में पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों (अथवा उनमें मतभेद होने पर) कामन्स सभा की इच्छा का अनुसरण किया जाना चाहिये"। इसका यह अर्थ है कि जबकि मंत्रिमंडल अंग्रेजी सरकार के कार्यपालक अंग के रूप में विदेशी मामलों को निबटाता है तब उसे कामन्स सभा के प्रति अपना उत्तरदायित्व ध्यान में रखना चाहिये। इस प्रसंग में मंत्रिमंडल के राष्ट्र की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाली, अथवा जनता की इच्छा का दर्पण कामन्स सभा के प्रति सर्वोपरि उत्तरदायित्व का सर्वोत्तम उदाहरण प्रधान मंत्री एन्थोनी इडन (Ad-

thony Eden) का इस्तीफा है जिसको अपना पद त्याग करना पडा था (यद्यपि बाहर से स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणो से) जबकि कामन्स सभा में और समाचार पत्रो में अक्टोवर १९५६ के आग्ल-फ्रेंच के स्वेज पर आक्रमण की घोर आलोचना की गई। ईडन के प्रधान मत्री के पद से इस्तीफा देने से मत्रिमडल सम्बन्धी एक सकट टल गया। अत किसी भी मत्रिमडल का काम अत्यन्त असवैधानिक होगा यदि वह सदन की इच्छाओ के विरुद्ध युद्ध की घोषणा अथवा शान्ति की स्थापना करता है।

(६) "यदि लार्ड्स सभा और कामन्स सभा मे मतभेद है तो किसी हद पर, जो कि स्पष्ट नही है, लार्ड्स सभा को विवाद छोड देना चाहिये और यदि पीयर्स समर्थन न करें और कामन्स सभा को देश का विश्वास मिला रहे, तो सम्राट् का अथवा उसके उत्तरदायी सलाहकारो का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे इतनी सख्या में नए पीयर्स उत्पन्न करे या उत्पन्न करने की धमकी दे जिससे कि लार्ड्स सभा मे विरोध दबाया जा सके और दोनो विधान मडलो में सामजस्य उत्पन्न किया जा सके।" यद्यपि सिद्धान्त रूप में पालियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता का अर्थ दोनो सदनो की सर्वोच्च सत्ता होना चाहिये, वर्तमान शताब्दी में उसका अर्थ कामन्स सभा की सर्वोच्च सत्ता हो गया है जोकि निर्वाचको अर्थात् देश की इच्छा का प्रतिनिधित्व करती है। जब १९०९ में लार्ड्स सभा फाइनेन्स बिल (Finance Bill) का बराबर विरोध करती रही तब प्रधान मत्री एसक्विथ (Asquith), १९११ के पालियामेण्ट एक्ट के द्वारा लार्ड्स सभा की शक्तियाँ कम करने में सफल हुआ। यह वह अवसर था जबकि अधिक पीयर्स उत्पन्न करने की धमकी के सामने लार्ड्स ने आत्मसर्पण कर दिया।

(७) "प्रत्येक वर्ष, काम का भुगतान करने के लिये कम से कम एक बार पालियामेण्ट जरूर बुलाई जानी चाहिये।" पालियामेण्ट बजट पास करके प्रत्येक वर्ष राजा की सरकार के लिए रुपया स्वीकृत करती है और वह प्रत्येक वर्ष सेना रखने का भी अधिकार देती है। इसका अर्थ है कि प्रत्येक वर्ष पालियामेण्ट बुलाना आवश्यक (बल्कि अनिवार्य) है जिससे कि सरकार के व्यय के लिए और सिविल कर्मचारियो तथा सेना की एक बडी सख्या रखने के लिये पालियामेण्ट की आवश्यक स्वीकृति प्राप्त की जा सके। जिस तरह बजट प्रत्येक वर्ष पास किया जाता है उसी प्रकार सेना का अधिनियम (Muting Act) भी प्रत्येक वर्ष फिर से स्वीकृत किया जाता है।

(८) "जब कोई विधान पालियामेण्ट के दोनो सदनो से पास हो चुका है और वह राजा के सामने हस्ताक्षर को प्रस्तुत कर दिया गया है तो राजा को उस विधान पर हस्ताक्षर अवश्य करने चाहिये।" यह ब्रिटिश सविधान की एक महत्वपूर्ण निरूढ़ि बन चुकी है। सिद्धान्त रूप में राजा किसी ऐसे अधिनियम पर

हस्ताक्षर करने से इनकार नहीं करता जिस पर दोनों सदन सहमत हो चुके हों। यदि पार्लियामेन्ट के वैधानिक अधिनियम को राजा की स्वीकृति नहीं मिलती तो कोई भी प्रधान मंत्री अपने पद पर नहीं रहना चाहेगा। राजा के विधान पर अभिषेध (veto) प्रयोग करने का यह निषेध एक निरूढ़ि बन चुका है।

(९) "कामन्स सभा का अध्यक्ष (Speaker) एक निष्पक्ष व्यक्ति (no party man) होता है।" यह ब्रिटिश संविधान की एक अन्य महत्वपूर्ण निरूढ़ि है। निस्सन्देह सामान्य चुनाव के समय अध्यक्ष चुना जाने वाला व्यक्ति एक पक्ष का अभ्यर्थी (candidate) होता है परन्तु अपने चुनाव के बाद वह अपने पक्ष से सम्बन्ध तोड़ लेता है और कामन्स के एक स्वतन्त्र अध्यक्ष अधिकारी के रूप में काम करता है। इस प्रकार वह सदन में सब वर्गों का आदर पाने के योग्य होता है और कार्यक्रम को निष्फल रूप से पूरा कर सकता है। निरूढ़ि के अनुसार राजनैतिक पक्ष बाद के चुनावों में उस अध्यक्ष के विरुद्ध अभ्यर्थी नहीं खड़ा करते जो कि कामन्स में दुबारा चुनाव का प्रयत्न करता है।

(१०) एक अन्य महत्वपूर्ण निरूढ़ि भी विकसित हुई है जिसके अनुसार "कामन्स सभा में शक्तिशाली पक्ष सदन के सामने किसी ऐसे नये विधान को उपस्थित नहीं करेगा जो उसके चुनाव परिपत्र में शामिल उद्देश्य के लिये किसी प्रकार से आवश्यक न हो।" इससे निर्वाचकों की इच्छा का सम्मान निश्चित रहता है। विशेष कर लार्ड्स सभा के सदस्य चाहे उसमें कामन्स के बहुमत पक्ष के विरुद्ध बहुमत क्यों न हो किसी ऐसे विधान का विरोध न करेंगे जिसकी नीति पर निर्वाचक गण मत दे चुके हैं।

ऊपर विवेचन की हुई अधिकांश निरूढ़ियाँ सम्राट को वैधानिक रूप से मिली हुई शक्तियों के सम्बन्ध में हैं जो व्यवहार में पार्लियामेण्ट अथवा मन्त्रिमंडल द्वारा प्रयोग की जाती है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कानून न होने पर भी निरूढ़ियों का आदेश क्यों माना जाता है? निरूढ़ियाँ कानून नहीं हैं क्योंकि उनके पीछे कोई वैधानिक स्वीकृति नहीं है, उनके उल्लंघन पर न्यायालय आक्षेप नहीं कर सकते, न वे न्यायालयों द्वारा ही उस प्रकार से लादी जा सकती हैं जैसे कानून लादे जाते हैं। परन्तु फिर भी उनके आदेशों का पालन किया जाता है क्योंकि वे वह समझौते हैं जिनके अनुसार प्रशासन चलता है। वे अंग्रेज की आदतों का एक भाग बन चुकी हैं। उनके उल्लंघन से केवल अव्यवस्था ही नहीं फैलेगी बल्कि प्रजा में असन्तोष और विरोध भी फैलेगा। संविधान के लिखित भाग या लिखित कानूनों के ढांचे को निरूढ़ियाँ वास्तविक रक्त और मांस प्रदान करती हैं। वे देश में परवर्तन शील परिस्थितियों की मांगों के कारण विकसित हुई हैं, और वे प्रथम बार महान् राजनीतिज्ञों द्वारा

उपस्थित की गई हैं, जिनको कि उपस्थित संकट अथवा उत्पन्न कठिनाइयों का सुलझाव खोजना पड़ता था। इस प्रकार निरूढ़ियों के आदेशों के पालन में प्रशासन में सुविधा होती है।

इस प्रकार संवैधानिक प्रथायें अंग्रेजी संविधान में बड़ा महत्व रखती हैं। इन प्रथाओं तथा कानूनों में केवल अन्तर यही है कि कानून लिखित हैं और प्रथायें अलिखित। कानून के खिलाफ कोई भी काम कानून का उल्लंघन है और पहचाना जा सकता है, परन्तु एक रूढ़िका उल्लंघन नहीं पहचाना जा सकता। परन्तु रूढ़ियों के विरुद्ध किये हुए किसी भी काम का जनता विरोध करती है और उससे एक संकट उत्पन्न हो जायेगा। क्योंकि रूढ़ियाँ महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये बनाई जाती हैं, जिनका कि किसी अन्य प्रकार से इन्तजाम नहीं हो सकता, इसलिये वे राज्य के संविधान में गहरी जड़ जमाये हुए हैं। इंगलैंड में संवैधानिक सम्बन्धों में प्रमुख सम्बन्ध इन प्रथाओं से ही मर्यादित हैं, और इनके कारण कानून का रूप ही बदल जाता है।[1]

(४) संविधान का अत्याधिक लचीलापन--अंशतः अलिखित होने से और उसके व्यावहारिक रूप में प्रथाओं का बड़ा महत्व रहने के कारण, अंग्रेजी शासन विधान बड़ा लचीला है। वैसे तो सभी एकात्मक (unitary) शासन विधान लचीले होते हैं, अर्थात् साधारण कानून की तरह से उनमें परिवर्तन व संशोधन हो जाता है, परन्तु इंगलैण्ड का शासन विधान जो मूलतः एकात्मक है, संसार के वर्तमान शासन संविधानों में सबसे अधिक लचीला है। यह लचीलापन इस बात में नहीं है कि वह साधारण प्रणाली के द्वारा बदला जा सकता है, वरन् यह लचीलापन बदली हुई परिस्थितियों से उसकी अनुकूलता में भी है। पार्लियामेण्ट की विधायिनी प्रभुता इतनी अधिक व्यापक है कि वह एक ही प्रणाली से किसी भी विधि निर्बन्ध को बना सकती है चाहे उसका सम्बन्ध सड़क के कर की चौकी से, हाउस ऑफ कॉमन्स के अधिकारों के परिवर्तन से, या किसी अंग्रेजी उपनिवेश को स्वतन्त्रता देने से हो। संविधान में परिवर्तन करने के लिए विशेष पद्धति को अपनाने की आवश्यकता नहीं होती अर्थात् इस कारण संविधान सहज ही प्रत्येक परिस्थिति के अनुकूल बनाया जा सकता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण सन् १९३६ ई० का राज्यत्याग ऐक्ट (Abdication Act) था जो उपस्थापित होने के आधे घण्टे के भीतर ही पास हो गया और पार्लियामेण्ट ने आठवें एडवर्ड के राजत्याग को वैध बना दूसरे राजा को राजमुकुट पहना दिया। किसी देश में ऐसा परिवर्तन करने के लिए एक बड़ी क्रान्ति की आवश्यकता हो जाती, पर इंगलैण्ड में इससे राजनैतिक सागर पर एक लहर तक न उठी। अंग्रेजी संविधान के इस लचीलेपन को

---

१ कीथ, ए० बी०--दि कान्स्टीट्यूशन, एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड लॉज आफ दि एम्पायर, पृष्ठ ५।

संयुक्त राज्य, स्विट्जरलैण्ड, फ्रान्स और भारत के संविधानों में संशोधन की कठोर और विशेष तौर से निश्चित प्रक्रिया से तुलना की जाती है, जिन सबमें साधारण कानून के संशोधन और संवैधानिक संशोधन में अन्तर किया गया है। इगलैण्ड में एक सामाजिक और राजनैतिक जीवन के विकास में शताब्दियाँ लगी हैं और यह विकास अब भी चल रहा है। अतः अंग्रेजी संविधान के लचीलेपन से वह सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों के प्रति अनुकूलन में बड़ा समर्थ हो गया है। इसलिये किसी भी सरकार ने क्रान्तिकारी राजनैतिक परिवर्तनों को लाने की कोशिश नहीं की है जैसा कि अन्य सब योरोपीय देशों, विशेषकर फ्रांस की विशेषता रही है।

(५) शासन विधान से स्थापित पार्लियामेण्टरी प्रजातन्त्र—शासन संगठन की चोटी पर राजा के आसीन होने से और जैसी उसकी ख्याति व कीर्ति है उससे साधारण दृष्टा को यह धारणा होगी कि इगलैण्ड का शासन विधान राजसत्तात्मक (monarchic) ढंग का है पर वास्तव में ऐसा नहीं है, और व्यवहार में ससदात्मक (parliamentary) प्रजातन्त्र सरकार की ही स्थापना की गई है। इसका भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णन किया गया है। कुछ लोग इसे नियन्त्रित राजसत्ता कहते हैं, दूसरे इसे राजसत्तात्मक-प्रजातन्त्र (monarchic democracy) कहकर बयान करते हैं। यह ठीक है कि सिद्धान्ततः राजा ही विधायिनी, कार्यपालिका व न्याय पालिका शक्ति का स्वामी है। परन्तु संवैधानिक प्रथाओं व कुछ कानूनों ने उसे राज्य का केवल संवैधानिक अध्यक्ष भर हो रहने दिया है। पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च प्रभुता से एक ससदात्मक कार्यपालिका (parliamentary executive) अर्थात् मन्त्रि-परिषद् का जन्म हुआ, जो कि राजा द्वारा नियुक्त होने पर भी वास्तव में कॉमन्स सभा के प्रति उत्तरदायी है। यह सब उस संवैधानिक संघर्ष का फल है जो अप्रत्यक्ष रूप से कई शताब्दियों तक चलता रहा था। इगलैण्ड में विकसित, और बाद में अन्य देशों द्वारा ग्रहण की गयी, पार्लियामेण्टवादी व्यवस्था अंग्रेजी संविधान की एक अनोखी विशेषता है जो राजा को एक नाममात्र का अध्यक्ष बना देती है और नागरिकों को एक ऐसी राजनैतिक व्यवस्था प्रदान करती है जो कि जनतन्त्रीय से अलग नहीं है। वह जन साधारण को भी सरकार पर प्रभाव डालने योग्य, और एक ऐसा संकट उपस्थित करने योग्य बनाती है जिसमें मन्त्रिमण्डल परिवर्तित हो सकता है, अथवा मध्यकाल (mid-term) चुनाव हो सकता है ताकि निर्वाचकों की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हुए विधान मंडल कार्यपालिका पर नियत्रण कर सके।

(६) राजनीतिक पक्ष प्रणाली ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता है—यदि ससदात्मक सरकार को सर्वप्रथम जन्म देने का श्रेय इगलैण्ड को दिया जाता है तो उसकी अनुगामिनी पक्षप्रणाली (party system) के विकास का भी श्रेय उसी

को है। जैसा कि बेजहोट (Bagehot) ने ठीक ही कहा है "दलीय सरकार प्रतिनिधिवादी सरकार का एक मुख्य सिद्धान्त है।" पिछले अध्याय में यह वर्णन हो चुका है कि इगलैण्ड में विभिन्न राजनैतिक दलो का आविर्भाव किस प्रकार हुआ। अंग्रेजी शासन विधान के किसी भी सूक्ष्मदर्शी विद्यार्थी को यह स्पष्ट हो जायेगा कि विधान-मण्डल में राजनैतिक पक्षो के बने बिना ससदात्मक सरकार का बनना असम्भव है। इस प्रकार वह एक विकसित पक्षप्रणाली पर आधारित है और जहाँ कहीं प्रतिनिधिक सरकार ग्रहण की गई है वहाँ पक्ष प्रणाली उसका एक अनिवार्य उपसिद्धान्त बन गई है। जैसा कि लास्की कहते है, "सरकार नेतागण चाहती है, नेतागण एक अव्यवस्थित भीड नही बल्कि एक व्यवस्थित अनुयायी दल चाहते हैं जो कि एक स्वतन्त्र इच्छा वाले निर्वाचक के लिये समस्यायें स्पष्ट कर सकें।" इगलैण्ड में साधारण निर्वाचन के समय प्रारम्भ होने वाला राजनैतिक सघर्ष अमरीका के समान निर्वाचन के बाद समाप्त नहीं हो जाता। वह लडाई पार्लियामेण्ट के भीतर भी जारी रहती है जहाँ लगभग प्रत्येक प्रश्न पर सम्राट की सरकार व सम्राट का विरोधी दल बुद्धिरूपी तलवारों से लडते हैं और अपनी अपनी बात पक्की करने का प्रयत्न करते हैं। कार्यपालिका पर ससद के नियन्त्रण का मूलमन्त्र ही यही है कि ससद में सुसगठित व अनुशासित राजनीतिक पक्ष हो।

तीन पक्ष—ससदात्मक कार्य-कारिणी के सफल कार्य होने के लिये दो और केवल दो ही पक्ष आवश्यक हैं। इगलैण्ड में बहुत समय तक उदार और अनुदार अथवा रूढिवादी दो ही पक्ष थे। पर बाद में छोटे-छोटे सामाजिक और राजनैतिक भेदो के कारण दूसरे दल बन गये। ये नये दल रैडिकल(Redicals), होम रूलर्स (Home Rulers), यूनियनिस्ट(Unionist), लेबोराइट्स(Labourites) और कम्यूनिस्ट (Communists) नामो से प्रसिद्ध हैं। पर इस समय तीन राजनीतिक दल हैं जो अच्छी तरह सगठित हैं, जिनके प्रतिनिधियो की पार्लियामेण्ट में अच्छी सख्या है और जिनका निश्चित राजनीतिक कार्य-क्रम है। ये तीन राजनीतिक दल, अनुदार अथवा रूढिवादी (Conservative), उदार(Liberal) और श्रम (Labour) हैं। हम यहाँ उन सिद्धान्तों की व्याख्या करेंगे जिन पर इन तीनो पक्षो का सगठन हुआ है और जिनके कारण ये एक दूसरे से भिन्न हैं।

अनुदार पक्ष (Conservative Party)—कुछ समय पहले इगलैण्ड मे अनुदार दल की सख्या सबसे अधिक थी। कन्जरवेटिज्म के सारभूत तत्व इसके प्रगति सम्बन्धी दृष्टिकोण में या उन सस्थाओ में मिलेंगे जिनका यह समर्थन करती है। सामाजिक सस्थाओ में कन्जरवेटिव पक्ष वाले लोग राजा, राष्ट्रीय एकता, ईसाई-धर्म सघ (Church), एक शक्तिशाली शासक-वर्ग और वैयक्तिक सम्पत्ति को राज्य के

हस्तक्षेप से स्वतन्त्रता, इन सब बातों के समर्थक हैं।[1] अनुदार पक्ष के लोग राजा को यदि पार्लियामेंट से अधिक नहीं तो कम से कम उसके समान ही राष्ट्र व साम्राज्य की एकता का प्रतीक समझते हैं। राजा के प्रति उनकी भक्ति और उनका प्रेम लगभग ईश्वर-भक्ति सा ही है। वे राष्ट्रभावना से पूरी तरह अभिप्रेत रहते हैं और दूसरे राष्ट्र या वर्ग को बिल्कुल अविश्वास भरी दृष्टि से देखते हैं। इस पक्ष के लोगों का विश्वास है कि उनकी जाति सब जातियों में श्रेष्ठ है यहाँ तक कि युद्ध में मित्र राष्ट्रों की जातियों को भी अपने बराबर स्थान नहीं देते। उन्हें अपनी राजकीय संस्थाओं व परम्पराओं की विशिष्टता पर भी बड़ा विश्वास और गर्व है। उनकी धारणा है कि ईश्वर ने उनकी जाति को दूसरे लोगों को उनकी इच्छा के विरुद्ध भी सभ्य बनाने के लिये भेजा है। वे अपने इस कार्य को सम्पादित करने में हिंसा व राक्षसी क्रूरता का भी उपयोग करने से नहीं हिचकते। देश की रक्षा और उनको महान् बनाने वाली बातों को प्रशंसा द्वारा ऊंचा उठाने में उनकी यह राष्ट्रीय भावना व्यक्त हुआ करती है। महान् बनाने से उनका अभिप्राय साम्राज्य की समृद्धि और सामरिक शक्ति को बढ़ाने से ही होता है न कि कलात्मक सिद्धि से . । साम्राज्य तो इसका जीवन है क्योंकि साम्राज्य से जाति को उस सामर्थ्य का निर्देश होता है जिससे वह दूसरों पर अपनी प्रभुता बढ़ाने में सफल होती है और इस सफलता को वे भारी आध्यात्मिक उन्नति का पर्यायवाची समझते हैं।"[2] इन सब बातों से स्पष्ट है कि कन्जरवेटिव दल के लोग वैदेशिक नीति में एक दृढ़ और सतत् बढ़ने वाले साम्राज्य के समर्थक हैं और ब्रिटिश साम्राज्य के आधीन राष्ट्रों की स्वतन्त्रता के विरोधी हैं।

अनुदार पक्ष और ईसाई धर्म-संघ—ये लोग हमेशा से इंगलैण्ड के राष्ट्रीय ईसाई धर्म-संघ के भक्त रहे हैं, क्योंकि यह संघ प्रारम्भ से ही एक रूढ़िवादी संस्था रही है। टोरियों (जो कन्जरवेटिव लोगों के पूर्वगामी थे) की तो आवाज ही यह थ —"यदि बिशप नहीं तो राजा नहीं," और ये संघ के आसन को ऊंचा रखने के लिए सत्रहवीं शताब्दी में राजनैतिक लड़ाइयाँ भी लड़ चुके थे।

अनुदार पक्ष और समाज—सामाजिक क्षेत्र में इस पक्ष के लोग सदा से एक शासक वर्ग के होने के समर्थक रहे हैं क्योंकि उनकी धारणा है कि कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं कि जो इतने कुशल हैं कि उन्हें बिना लोकेच्छा का सहारा लिये शासन करने का अधिकार है। इसलिये उन्होंने बराबर मताधिकार के विस्तृत करने और हाउस ऑफ कॉमन्स के अधिकार बढ़ाने का विरोध किया है जिसमें बैठकर साधारण जनता के प्रतिनिधि उच्च वर्गों पर शासन करते हैं। हाउस ऑफ लार्ड्स में अनुदार पक्ष के

१ फाइनर—थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ माडर्न गवर्नमेण्ट, पृष्ठ ५१६।
२ फाइनर—थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ माडर्न गवर्नमेण्ट, पृष्ठ ५१७।

लोगों का ही प्रभुत्व रहा है क्योंकि इगलैण्ड की सम्पत्ति और भूमि के अधिक भाग पर उन्ही का स्वामित्व है। इसी कारण वैयक्तिक सम्पत्ति में वे राज्य के हस्तक्षेप के विरोधी हैं। सम्पत्ति और भूमि के स्वामित्व के ही कारण इस पक्ष के लोग राजघराने से सान्निध्य प्राप्त किये हुए हैं और उनके द्वारा ये राज्य की शासन नीति पर अपना प्रभाव डालने में सफल हो सके हैं।

पूजीपतियो और उद्योगपतियो की मध्यस्थता के द्वारा अनुदार लोग इगलैण्ड के समाचार पत्रो पर अपना नियत्रण रखते हैं। बडे-बडे सभी समाचार पत्रो का वे ही सचालन करते हैं जिससे लोकमत पर अपना प्रभाव डालने मे उन्हे बडी सुविधा रहती है। यह प्रभाव विशेषतया वैदेशिक नीति सम्बन्धी मामलो और साम्राज्य सम्बन्धी विषयो में अधिक रहता है।

उदार दक्ष (Liberal Party)—दूसरा राजनैतिक दल उदार लोगो का है, यद्यपि अब इसके अनुयायियो की सख्या अधिक नही है पर फिर भी यह पक्ष अनुदार पक्ष के समान ही प्राचीन है। उदार पक्ष का मूल मन्त्र नये अनुभव के प्रति उदारता और मुक्त विकास का समर्थन है। इगलैण्ड मे उदार दल के सिद्धान्तो का उदय सुधार आन्दोलन (reformation movement) के फलस्वरूप हुआ जब कि वैयक्तिक विचार-स्वतन्त्रता का अधिकार बहुत मान्य हो चुका था। इसलिय ये सिद्धान्तत राष्ट्रीय धर्म सघ और अनियन्त्रित शासन सत्ता के कट्टर विरोधी थे, यही कारण था कि ह्विग (लिबरलो के पूर्व-गामी) लोग स्टुअर्ट राजाओ की निरकुशता से लडने के लिए खडे हुये, ग्लोरियस रिवोल्यूशन (Glorious Revolution) के जन्मदाता बने और उन्होने राजा की शक्ति को कमकर पार्लियामेण्ट की शक्ति को बढाया। उन्नीसवी शताब्दी के जितने भी वैधानिक सुधार हुए उनको उदार पक्ष की सरकार ने ही इगलैण्ड में प्रचलित किया था क्योकि उदार पक्ष की सदा से ही यह भावना रही है कि शासन पद्धति में ही स्वतन्त्रता व अत्याचारी शासन के अकुर निहित हैं और उसी ओर अपना ध्यान रखना आवश्यक है। उदार सिद्धान्त को मानने वाले के लिए, "महत्व में व्यक्ति राज्य से पहले है। व्यक्ति में ही वृद्धि, प्रेरणा और सृजन-शक्ति के सिद्धान्तो का आविर्भाव होता है और व्यक्ति अपने अनुभव के आधार पर ही दूसरो के अनुभव को सत्य मानता है। इन सब सृष्टि का अन्तिम उद्देश्य अधिक से अधिक सख्या मे पूर्ण व्यक्तियो को उत्पन्न करना है। व्यक्ति अपना जीवन कैसा बनायें, इसका निर्णय वे नही कर सकते जिनके हाथ मे शासन शक्ति है, पर व्यक्ति स्वय ही अपने विवेक से इसका निश्चय कर उसे स्वीकार करेगा क्योंकि कोई भी निश्चयपूर्वक यह नही कह सकता कि अमुक ज्ञान या अनुभव अधिक सत्य, अधिक सुन्दर और अधिक कल्याणकारी है। अत सत्य की खोज की आशा इसी मे है कि सबको

समान अवसर दिया जाय जिससे सभी अपने विचार प्रकट कर सकें और अपनी निहित शक्तियों का विकास कर सकें। इस स्वतन्त्रता पर केवल उतना ही नियन्त्रण हो जितना इस स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये नितान्त आवश्यक हो।[1]" यद्यपि उदार लोग राष्ट्र व जाति की भावना को स्वीकार करते हैं परन्तु वे साम्राज्य की विभिन्न जातियों को धीरे-धीरे स्वतन्त्र करने के पक्ष में हैं। उन्होंने इस नीति को कार्यान्वित करते हुये कनाडा, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका को स्वतन्त्र सरकार बनाने दिया। घरेलू मामलों में उनका यह कहना है कि व्यापार और उद्योग की उन्नति करके साधारण जनता को अधिक सुविधायें दी जाँय, नगर पालक संस्थाओं को अधिक अधिकार दिये जाँय और बेकारी समाप्त की जाये।

लिबरल दल की विशेषता ही यह है कि वह मध्य व निम्न वर्ग से सहानुभूति रखता है। यदि अनुदार पक्ष सम्पत्ति-वर्ग है तो उदार पक्ष बुद्धि-वर्ग है। हाउस आफ लार्ड्स में इनकी संख्या बहुत है पर कामन्स में श्रम पक्ष (Labour Party) के प्रभाव के बढ़ने से इनकी गिनती कम होती जा रही है। राजनैतिक विचार के रूप में उदार पक्ष, अनुदार पक्ष और साम्राज्यवाद के मध्य का मार्ग है।

इंगलैंड में श्रम पक्ष (Labour Party)—पहले महायुद्ध के पश्चात् इंगलैण्ड में अनुदार पक्ष का सामना करने के लिए एक तीसरा राजनीतिक पक्ष शक्तिशाली बना। यह दल श्रम पक्ष (Labour Party) के नाम से प्रसिद्ध हुआ और इसमें उदार पक्ष के बहुत से लोग आकर मिल गये। इस पक्ष का बनना पुराने दोनों राजनीतिक पक्षों को चुनौती देना था। यह पक्ष समाजवाद के सिद्धान्तों पर आधारित है और इसलिये यह राजनीति में सम्पत्ति और पूँजीवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया-स्वरूप है। इस पक्ष के लोग अधिकतर श्रमिक व निर्धन वर्ग के हैं। यह ठीक है कि इंगलैण्ड के प्रत्येक ऐतिहासिक काल में, विशेषकर उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जब कि चार्टिस्ट आन्दोलन आरम्भ हुआ, बहुसंख्यक निर्धन वर्ग की दशा सुधारने के लिये बराबर आन्दोलन चलता रहा। पर इस आन्दोलन को प्रथम महायुद्ध के पश्चात् बड़ा प्रोत्साहन मिला। लेबर-पार्टी के उद्देश्य ये हैं, बड़ी बड़ी आर्थिक योजनाओं का राष्ट्रीयकरण, श्रमिकों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा करना, धनिक वर्ग पर अधिक कर लगाना, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और साम्राज्य के आधीन देशों को स्वतन्त्रता देना। इस प्रकार घरेलू तथा वैदेशिक दोनों मामलों में श्रम पक्ष की नीति अनुदार पक्ष की नीति से प्रतिकूल है। हाउस ऑफ लार्ड्स में उनकी संख्या बहुत कम है, पर हाउस आफ कामन्स में उनकी संख्या द्वितीय महायुद्ध से पहले भी बहुत थी। पिछले तीस सालों में ये कम से कम चार बार और दो बार लिबरलों की सहायता से सरकार बना चुके हैं।

१ फाइनर—थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ माडर्न गवर्नमेन्ट, पृष्ठ ५२३।

इगलैंड में राजनीतिक पक्ष प्रणाली—निसन्देह इगलैण्ड की राजनीतिक पक्ष प्रणाली पर ही प्रतिनिधिक सरकार का भव्य भवन खडा हुआ है। प्रत्येक पक्ष अपने नेताओं को मन्त्रिमण्डल में पदासीन कराने का प्रयत्न करता है और इस अभिप्राय की सिद्धि के लिए वह लोकमत को नाना प्रकार से अपनी ओर झुकाने के लिये प्रयत्नशील रहता है। "वह भोज देता है, नृत्य, सत्कार आदि का आयोजन करता है। सभायें, उपदेश, शिक्षण-सम्मेलन आदि भी बराबर होते रहते हैं। पक्ष के अपने अपने वक्ता, मत एकत्र करने वाले, व कार्यकर्ता होते हैं। वह अपने कामो के लिए धन इकट्ठा करता है। अपने प्रचार के लिये स्थानीय व राष्ट्रीय समाचार पत्रो में घुसता है।"[१] प्रत्येक पक्षो का अपना राष्ट्रीय सगठन होता है जिसकी अनेक शाखायें होती हैं और जो इन शाखाओ के कामो पर नियत्रण रखता है। इस सगठन का काम बराबर चलता रहता है। इस प्रकार राजनीतिक पक्ष प्रणाली शासन पद्धति पर सदैव अपना नियत्रण रखती है और इसीलिए यह शासन विधान का एक आवश्यक अग बन गई है।

(७) कानून का शासन सविधान की एक विशेषता है—अंग्रेजी शासन विधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता कानून का शासन (rule of law) है। यह साधारण सार्वजनिक नीति नियमो पर आधारित है और शताब्दियो से चले आने वाले राजा-प्रजा के सघर्ष के फलस्वरूप प्राप्त हुई है। इगलैण्ड मे नागरिकों के अधिकार किसी एक अधिनियम या कानून मे अन्तर्भूत नही है और कुछ अधिकारों का तो किसी भी अधिनियम मे समावेश नही किया गया है, फिर भी यहां के सब नागरिक उन्ही वैयक्तिक, धार्मिक और सामाजिक स्वतन्त्रताओ का उपयोग करते हैं जो अमरीकन या फ्रेंच नागरिको को अपने राष्ट्र में उपलब्ध है। यह स्वतन्त्रता कानून के शासन से सुरक्षित रहती है। यह कानून का शासन सबसे प्रथम इगलैण्ड मे उत्पन्न हुआ और इसी के कारण अंग्रेजी शासन प्रणाली अन्य यूरोपियन शासन प्रणालियो से भिन्न है।

आचार्य डायसी के अनुसार मोटे तौर पर विधि शासन (Rule of Law) के तीन मूल सिद्धान्त हैं —

पहला, यह है कि किसी व्यक्ति को तब तक दण्ड नही दिया जा सकता या उसको शारीरिक कष्ट व साम्पत्तिक हानि नही पहुँचाई जा सकती, जब तक उसने किसी विधि को न तोडा हो और उसका यह अपराध राज्य की साधारण अदालतो के सामने विधिपूर्वक निर्णीत न हुआ हो।[२]

---

१ लास्की—पार्लियामेण्टरी गवर्नमेण्ट इन इगलैण्ड, पृ० ७१।

२. ला आंफ दी कन्स्टीटयूशन, पृ० १८३-१८४।

इसका यह मतलब निकला कि विधि शासन के होने से राजतन्त्र सत्ताधिकारियों की स्वेच्छाचारिता से बचा रहेगा क्योंकि वे लोग जनता की स्वतन्त्रता को मन माना कुचल न सकेंगे।

दूसरे, विधि शासन यह निश्चित कर देता है कि कोई भी व्यक्ति, चाहे वह किसी भी श्रेणी का हो या कैसा भी प्रभुत्वशाली हो, कानून से परे नहीं है और प्रत्येक नागरिक "राज्य के सार्वजनिक विधि निर्बन्धों के आधीन है व सार्वजनिक न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र के वशवर्ती हैं।"[१] अंग्रेजी शासन प्रणाली की इस विशेषता के जोड़ की कोई वस्तु यूरोपियन शासन प्रणाली में नहीं मिलती जहाँ कि सरकारी कर्मचारियों के अपराधों पर विशेष प्रशासन न्यायालयों (Administrative Courts) में विचार किया जाता है जिनकी नियुक्ति प्रशासन विधि (Administrative Law) के अन्तर्गत की जाती है। आचार्य डायसी ने सार्वजनिक विधि शासन की सर्वोच्चता का इस प्रकार वर्णन किया है—"हमारे यहाँ प्रधान मन्त्री से लेकर कान्स्टेबिल और कर संग्रह कर्ता तक प्रत्येक कर्मचारी अपने अवैध कार्यों के लिये उतना ही उत्तरदायी है जितना और कोई नागरिक।"[२]

निर्बन्ध, विधि या कानून की दृष्टि से यह समानता इतनी पूर्ण है कि केवल राजा ही इसकी परिधि से बाहर समझा जाता है और उसका कोई कार्य अवैध नहीं समझा जाता। पर राजा के विषय में भी एक बचत है, वह यह कि उसका कोई भी आदेश प्रजा पर तब लागू नहीं हो सकता जब तक कि उस आदेश पत्र पर किसी मन्त्री के हस्ताक्षर न हों। मन्त्री के हस्ताक्षर होने पर राजा के कृत्य का उत्तरदायित्व मन्त्री पर आ पड़ता है और मन्त्री देश के सार्वजनिक कानून की परिधि के भीतर है उससे परे नहीं है। ऐसे उदाहरण देखने को मिल सकते हैं जहाँ शासनाधिकारियों को अपनी राजकीय स्थिति में किये हुये अवैध कृत्यों के लिये सार्वजनिक न्यायालयों में साधारण ढंग पर ही विचार करके दण्ड दिया गया है। अतः अपवाद यथार्थ होने की जगह मौखिक ही अधिक है।

तीसरे, विधि शासन यह निर्देश करता है कि अंग्रेजों के साथ विधान सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्त न्यायालयों के निर्णयों के परिणाम हैं जिनसे विशिष्ट अभियोगों के न्यायालय के सम्मुख उपस्थित होने पर साधारण व्यक्तियों के अधिकारों को निश्चित किया गया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विधि प्रशासन किसी भी शासन कर्मचारी या

१ पूर्व श्रोत।
२ पूर्व श्रोत, पृष्ठ १८३-८४।

साधारण नागरिक को विशिष्ट स्थान या अधिकार प्रदान नहीं करता। "जो व्यक्ति सरकार के अंग हैं वे मनचाहा नहीं कर सकते। उन्हें पार्लियामेण्ट के बनाये हुये नीति निर्बन्धों के अनुसार ही अपनी शक्ति का उपयोग करने की स्वतन्त्रता है।"[१] यदि कोई राज कर्मचारी अपने अधिकारों की सीमा का उल्लघन करता है तो उस पर साधारण न्यायालय में अभियोग लगाया जा सकता है जहाँ सार्वजनिक कानून के अन्तर्गत उस पर लगाये हुये अभियोग पर विचार किया जायेगा और यदि वह अपराधी सिद्ध हुआ तो उसी न्याय-पद्धति मे वह भी दण्डनीय होगा जिससे साधारण नागरिक दण्डित होते हैं। यूरोप में ऐसा नहीं होता। वहाँ यदि राज्यकर्मचारी कोई अपराध करते हैं तो उन पर लगाये गये अभियोग की सुनवाई विशेष प्रशासकीय न्यायालयो में होती है।

इस प्रकार इगलैण्ड में कार्यकारिणी सत्ता पर विधि शासन (Rule of Law) का नियत्रण रहता है। परन्तु हाल ही में विधि शासन के प्रति इस आदर में कमी होने लगी है। आचार्य डायसी ने स्वय ही स्वीकार किया है कि अब "राजनैतिक व सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अवैध साधनो का उपयोग करने की प्रवृत्ति बढती जा रही है।"[२] प्रथम तो हमे यह न भूलना चाहिये कि जब किसी राज कर्मचारी पर न्यायालय में मुकदमा चलाया जाता है और अपराधी सिद्ध होने पर यदि उसे किसी गैर सरकारी नागरिक को दण्डस्वरूप क्षतिपूरक धन देना पड जाता है तो वह धन राजकोष से दे दिया जाता है, राजकर्मचारी स्वय अपने कोष से नही देता क्योकि यह समझा जाता है, कि वह राज्य का कार्यवाहक है और उसके कृत्यों के लिये राज्य को ही उत्तरदायी होना चाहिये। इससे राजकर्मचारी सतर्क नही रहता और अपने अधिकार का उपयोग कानून के अनुसार करने पर कडी दृष्टि नही रखता, क्योकि अपराधी ठहराये जाने पर उसको कोई हानि होने का भय नही रहता। दूसरे, हाल ही में पार्लियामेण्ट ने राजकर्मचारियो को बहुत से न्यायकारी अधिकार भी सौंप दिये हैं। उदाहरणार्थ, सन् १९०२ ई० का ऐज्युकेशन ऐक्ट, ऐसे अधिकार ऐज्यूकेशनल कमिश्नर्स को व फाइनेन्स ऐक्ट (१९१०) और नेशनल इन्श्योरेन्स ऐक्ट (१९११ व १९१२) दूसरे अफसरों को सौंपती है। १९११ के पार्लियामेण्ट के ऐक्ट से स्पीकर (Speaker) को बडे विस्तृत अधिकार सौंप दिए गये हैं। उसका प्रमाण पत्र (certificate) अन्तिम निर्णयकारी समझ लिया जाता है और उसके विरुद्ध किसी न्यायालय में प्रश्न नही उठाया जा सकता। इसके साथ साथ यदि यह स्मरण रक्खा जाय कि न्याय करते समय न्यायाधीश बराबर यह ध्यान रखता है कि चाहे दस अपराधी छूट

१ होगन और पौबेल—गवर्नमेण्ट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन, पृ० ९।
२ डायसी—लॉ ऑफदी कॉंसटीटयूशन, भूमिका।

जायँ पर एक निरपराधी दोषी ठहर कर दण्डित न हो जाय, तो हमें यह ज्ञात हो जायगा कि राज कर्मचारियों को इतने विस्तृत स्वविवेकी (Discretionary) अधिकार सुपुर्द करने से न्यायाधीश की शक्ति कितनी कम हो जाती है और इस प्रकार विधि शासन का महत्व किवभा घट जाता है। इसके अतिरिक्त राजकर्मचारी कानून के अन्तर्गत नियम या उपनियम के रूप में भी अधिकाधिक अधिकार लेते जा रहे हैं। इस प्रकार इंगलैण्ड में ऐसी प्रणाली का आविर्भाव हो रहा है जो किसी क्षण भी व्यक्ति के लिये, जनता के व राजकर्मचारियों के लिये अन्यायकारी सिद्ध हो सकती है। सिद्धान्तों में एकरूपता नहीं रह गयी है क्योंकि विधि शासन का स्थान इधर उधर के अनियमित सिद्धान्तों ने ले लिया है।[१]

(८) *सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर*—अन्य देशों में, जिनमें लिखित संविधान होता है, सरकार की वास्तविक प्रणाली संविधान के अनुकूल होती है। परन्तु इंगलैण्ड में ऐसा नहीं है। वहाँ व्यवहारों, प्रथाओं तथा रूढ़ियों के कारण सिद्धान्त और व्यवहार में महान् अन्तर है। सिद्धान्त रूप में राजा सर्वोच्च सत्ता है क्योंकि वह पालियामेण्ट का एक भाग और कार्यपालिका का अध्यक्ष है। पालियामेण्ट जिसमें कि राजा, लार्ड्स तथा कॉमन्स शामिल हैं, कानून बनाती है। व्यवहार में कॉमन्स सभा ही पालियामेण्ट की सत्ता का प्रयोग करती है और मन्त्रिमण्डलों को बनाती बिगाड़ती है। सिद्धान्त रूप में, इंगलैण्ड एक राजतन्त्रवादी राज्य है परन्तु व्यवहार में जनतन्त्र के समान काम करता है क्योंकि राजा सब राजनैतिक विवादों से ऊपर है। मन्त्रिमण्डल राजा के सब विशेषाधिकारों का प्रयोग करता है और राजा को केवल राष्ट्रीय एकता के चिह्न के रूप में छोड़ देता है। केवल पालियामेण्ट को भंग करने या न करने के प्रश्न पर अथवा मन्त्रिमण्डल बनाते समय ही राजा यथार्थ शक्ति का प्रयोग करता है। वह सिद्धान्त रूप में राजा की और व्यवहार रूप में जनता की सरकार है। राजा न्याय का स्रोत है परन्तु यथार्थ व्यवहार में न्यायपालिका राजा के प्रभाव से स्वतन्त्र और मुक्त है।

ऊपर हमने अंग्रेजी शासन विधान के प्रमुख लक्षणों का वर्णन कर दिया। यह शासन विधान राष्ट्रीय परिस्थितियों में परिवर्तन के अनुसार प्रतिदिन नया रूप धारण करता रहता है। ऐसे संविधान का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को एक विशाल साहित्य की छान-बीन करने के बाद ही इसका ठीक-ठीक परिचय मिल सकता है।

१ फाइनर—थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ मॉडर्न गवर्नमेंट, पृष्ठ संख्या १४४७।

पाठ्य पुस्तकें

Anson W. R.—Law and Custom of the Constitution.
Begehot, W.—English Constitution.
Boutmy—English Constitution.
Dicey, A. V.—Law of the Constitution, 1939 Edition
Finer, H.—Theory & Practice of Modern Government, chs. XII—XV
Greaves. H. R. G —The British Constitution, pp. 11-24.
Jennings, W. I.—The Law and the Constitution (1933).
Keith, A. B.—An Introduction to the British Constitutional Law, 1913.
Keith, A. B.—Constitution, Administration and Laws of the Empire (1924).
Laski H. J.—Parliamentary Government in England (1938) chs. I. & II.
Marriot, J. A. R.—English Political Institutions, Ch. II.
Ogg. F. A.—English Government and Politics (1936) pp. 57-81.
Taswell and Langmead—English Constitutional History.

अध्याय ६

पार्लियामेन्ट : उसका विकास और प्रभुता

इगलैंड में पार्लियामेण्ट को सविधान में सशोधन करने का एक मान्य अधिकार है, क्योंकि इसलिये सविधान बराबर बदलता रहता है अतः यथार्थ में उसका अस्तित्व ही नहीं है। पार्लियामेण्ट ही एक साथ विधायिनी और सवैधानिक समिति है।

—डी-टौकविलि

सब प्रकार के मामलो, धार्मिक, व्यावहारिक, नागरिक, सैनिक, नाविक अथवा अपराधी के बारे में कानून के बनाने, समर्थन करने, बढाने, कम करने, रद्द करने, निरसित करने (Repealing), फिर से चालू करने और पृष्ठ पोषण करने में वह (पार्लियामेण्ट) सर्वोच्च और अनियन्त्रित अधिकार रखती है। यही वह स्थान जहाँ पर कि वह निरपेक्ष निरकुश सत्ता जो सब सरकारो में कही न कही रहती है, इन राज्यों के सविधान द्वारा स्थापित की गई है।

—ब्लेकस्टोन की टीकाएँ

पार्लियामेन्ट शब्द का क्या अर्थ है?—पार्लियामेण्ट इगलैण्ड की विधायिनी समिति है। वह समस्त ब्रिटिश साम्राज्य के लिये और मौलिक रूप में स्वशासित अधिराज्यो के लिये भी विधायिनी शक्ति का प्रयोग करती है। वह सयुक्त राज्य के सब देशो की प्रतिनिधि है, वह समस्त ब्रिटिश द्वीपो के लिये, ग्रेट ब्रिटेन के लिये, इगलैण्ड और वेल्स के लिये अलग अलग और केवल स्काटलैण्ड के लिये विधान बना सकती है। कानूनी रूप में पार्लियामेण्ट शब्द में राजा, कॉमन्स सभा और लार्ड्स सभा आ जाते हैं। पार्लियामेण्ट एक सयुक्त निकाय है अत पार्लियामेण्ट के अधिनियमों में तीनों तत्वो के एक मत होने की जरूरत पडती है और इगलैण्ड में सर्वोच्च विधायक शक्ति का वे सब मिलकर प्रयोग करते हैं, जैसा कि पार्लियामेण्ट के किसी परिनियम में कानून बनाने वाली सत्ता की ओर सकेत करने वाले शब्दो से स्पष्ट होता है। ये शब्द हैं "Be it therefore enacted by the Kings most Excellent Majesty. By and with the advice and consent of the lords spiritual and temporal, and commons, in this present parliament assembled, and by the authority of the same as follows......" अर्थात् अत यह राजा की सर्वश्रेष्ठ सत्ता से, धार्मिक और लौकिक लार्डों की सम्मति और सहमति से और इस पार्लियामेण्ट में

उपस्थित कॉमन्स और उन सबकी सत्ता के द्वारा निम्नलिखित रूप से अधिनियमित किया जाता है.. . " बाहर से अलग, पार्लियामेण्ट के ये तीन भाग बिल्कुल भिन्न सिद्धान्तो पर आधारित हैं, वे विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न काम करते हैं और केवल प्रतीकात्मक महत्व के अवसरों पर जैसे राजतिलक, अथवा राजा द्वारा व्यक्तिगत रूप से पार्लियामेण्ट के उद्घाटन के समय पर ही मिलते हैं।

जब कि राजा की स्थिति और विधान सम्बन्धी मौखिक शक्तियाँ वैसी ही बनी हुई हैं, वास्तविक विधायक शक्ति का प्रयोग हाउस ऑफ कॉमन्स और हाउस ऑफ लार्ड्स करते हैं यद्यपि १९११ के पार्लियामेण्ट ऐक्ट में लार्ड्स ने कानून बनाने में अपना अधिकतर प्रभाव खो दिया है। इस अध्याय मे, हम पार्लियामेण्ट की प्रभुसत्ता का उद्गम, विकास और वृद्धि का बयान करना चाहते हैं।

ब्रिटिश पार्लियामेण्ट का उद्गम और विकास—ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ससार में प्राचीनतम विधायिनी समिति है। अन्य देशों ने अपनी ससदीय सस्थाओ को इगलैण्ड से ही लिया है और यही कारण है कि क्यो ब्रिटिश पार्लियामेण्ट "पार्लियामेण्टों की जननी" कही जाती है।

नार्मनों और प्लान्टाजेनेटों के आधीन—ब्रिटिश सविधान अर्थात् सरकार के प्रत्येक भाग की विकासात्मक प्रकृति का हम पहले ही जिक्र कर आये हैं। प्रारभिक समय से विटेनगेमौट (बुद्धिमानो की समिति) राजा को सलाह दिया करती थी। नार्मनो की विजय और फ्यूडल प्रथा के प्रारम्भ होने से विटेनगेमौट के स्थान पर एक नवीन समिति आ गई। राजा के फ्यूडल सरदारो का कोर्ट जो कि राजमुकुट को कर देने वाले थे उसके लिये सैनिक सेवा के बन्धनो से बँधा हुआ था। कोर्ट में कौंसिल की बैठको में विशपो और मुख्य एबटो के एकत्रित होने की प्रथा को नार्मन राजाओ ने भी चलाये रखा। नवीन समिति की प्रत्येक बैठक में राजा को असाधारण सहायता मजूर करते समय मुख्य सरदार और धर्माधिकारी अपने अधिकारो की रक्षा करने के लिये विशेष रूप से सतर्क रहते थे। बाद में जबकि राजा ने सदस्यो के अधिकार का अतिक्रमण किया तो उसको मैग्नाकार्टा (१२१५) को स्वीकार करने को बाध्य किया गया जिसमे उसने ऐसे अवसरो पर सब कर दाताओ को, आर्कबिशपो, बिशपों, एबटो, अर्लों और बड़े बैरनो को व्यक्तिगत रूप मे और बाकी सबको शेरिफो के द्वारा बुलाने का वायदा किया। जबकि भूमि के बँटवारे से करदाताओ की सख्या बढ़ गई, उनकी निर्धनता बढ़ गई और प्रभाव कम हो गया।

राजा जॉन के उत्तराधिकारियों द्वारा राष्ट्रीय कौंसिल की सलाह की उपेक्षा करने के सतत प्रयत्न से, विशेषत जब हेनरी तृतीय ने बार बार अधिकार पत्र की उपेक्षा की, अपने विदेशी कृपापात्रो की राय ली और अपने पुत्र के लिये सिसली क

राज्य प्राप्त करने का मूर्खतापूर्ण और खर्चीला प्रयत्न किया तो प्रजा के सब वर्गों में राजा के प्रति शत्रुता की भावना भड़क उठी। अन्त में २ अप्रैल १२५८ को लन्दन में ५ मई तक सम्मेलन करने वाली ग्रेट कौंसिल अथवा पार्लियामेंट ने राजा को २४ सदस्यों की एक समिति नियुक्त करने को बाध्य किया (जिसमें १२ बैरनों द्वारा चुने जाने थे और १२ राजाद्वारा नामांकित किये जाने थे) जिनको कुछ भी सुधार करने की असीम शक्ति दी गई। इस कमेटी ने ११ जून को ऑक्सफोर्ड में सम्मेलन किया और प्रसिद्ध ऑक्सफोर्ड का प्रविधान स्वीकृत किया जिसके अनुसार सब सरकारी शक्तियों का कम होना प्रारंभ हुआ और इस प्रकार पहले कुछ लोगों के हाथ में और फिर जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में शक्ति हस्तान्तरित हो गई।

तीन साल बाद (१२६१) राजा का बैरनों से प्रत्यक्ष संघर्ष हुआ और १४ मई १२६४ को लेविस के युद्ध में राजा हरा दिया गया। इससे साइमन डी मान्टफोर्ड को सर्वोच्च शक्ति मिल गई। साइमन ने शाही किलों में मैत्रीपूर्ण सेनायें रख दीं और लन्दन में एक राष्ट्रीय कौंसिल में सामन्तों (barons) को तथा सब धर्माधिकारियों को बुलाया। उसने एक बड़ा गंभीर कदम भी उठाया (जिससे महान सुधार प्रारंभ हुआ) और सब शेरिफों को प्रत्येक शायर से दो नाइट के साथ साथ प्रत्येक नगर से दो नागरिक और प्रत्येक बरो से दो बर्गेस को कौंसिल की सभा में शामिल होने को भेजने को लिखा। २० जनवरी १२६५ की पार्लियामेंट में नगर और ग्रामीण क्षेत्रों के इस प्रतिनिधित्व से साइमन को "कामन्स सदन का संस्थापक" की उपाधि मिल गई। इसके बाद इसी प्रकार से बनी हुई पार्लियामेंट हेनरी तृतीय के शासन काल में बुलाई जाती रही। उसकी मृत्यु के बाद १४ जनवरी सन् १२७३ में वैस्ट मिन्सटर में एडवर्ड प्रथम जो कि उस समय फिलस्तीन में था, की आधीनता की प्रतिज्ञा करने के लिए राष्ट्रीय कौंसिल को बुलाया गया। इस कौंसिल में केवल प्रीलेट और बैरन ही नहीं बुलाये गये बल्कि प्रत्येक काउन्टी से चार नाइट और प्रत्येक नगर से चार नागरिक भी बुलाये गए। जब एडवर्ड ने अप्रैल १२७५ को वैस्टमिन्सटर में अपनी पहली सामान्य पार्लियामेंट बुलाई तो उसने वैस्ट मिन्सटर के प्रथम परिनियम को पास किया जो "उसकी कौंसिल तथा आर्क बिशपों, बिशपों, एबटों, पुजारियों, प्रायरों, अर्लों, बैरनों तथा वहाँ बुलाये गये सामान्य जनों द्वारा "बनाया गया था। इससे धर्माधिकारियों तथा सामन्तों का पार्लियामेंट में कानून पास करने का अधिकार स्पष्ट रूप से स्थापित हो गया।

१२९५ में एडवर्ड प्रथम फ्रांस पर एक हमले में उलझ गया जिसमें सैन्य दल ने गैसकोनी पर अधिकार कर लिया और डावर तक पहुँच गए। समस्त राष्ट्र का समर्थन पाने के लिये स्वयं एडवर्ड प्रथम ने नवम्बर में वैस्ट मिन्सटर में एक पार्लियामेंट बुलाई जो कि इस प्रकार बनाई गई थी कि सारे देश का प्रतिनिधित्व करती और

सब पर कर लगाने का अधिकार रखती थी। इस पालियामेंट में आर्कविशपो और विशपो के साथ साथ निम्न पादरियो के प्रतिनिधि भी बुलाए गए। शेरिफो को चुनावो का प्रबन्ध करने और प्रत्येक काउन्टी से दो नाइट, प्रत्येक शहर से दो नागरिक और प्रत्येक बरो से दो बर्गेस चुन कर भेजने को आदेश दिये गये। इस प्रकार तत्कालीन पालियामेंट को बनाने के लिये तीन वर्ग बुलाये गये अर्थात् बैरन, पादरी और सामान्य जन। सम्भवत. प्रत्येक वर्ग की बैठक अलग अलग हुई परन्तु राजा के सामने प्रार्थनापत्र रखने में नाइट बहुधा कामनरो के साथ मिल गए।

एडवर्ड द्वितीय के राज्यकाल में, राजा के कृपापात्रो के कुकृत्यो के कारण बैरनो ने राजा का विरोध किया। १३११ में पास हुए सुधारो की धाराओ से राजा पर जोर डाला गया जिनमें अन्य बातो के साथ साथ ये विधान भी थे कि —

(१) पालियामेंट में सामन्तो (barons) की स्वीकृति बिना राजा को राज्य नही छोडना चाहिए और न युद्ध छेड़ना चाहिये और पालियामेंट की स्वीकृति से राज्य का एक सरक्षक नियुक्त किया जाना चाहिये।

(२) कि चान्सलर, दो मुख्य न्यायाधीश, कोषाध्यक्ष तथा राज्य के अन्य बडे अफसरो का चुनाव पालियामेंट मे बैरनो की सलाह और सहमति से होना चाहिये।

(३) कि न्याय मिलने में देर को रोकने के लिये प्रत्येक वर्ष एक बार या दो बार उपयुक्त स्थानो पर पालियामेंट की बैठके होनी चाहिए। इन धाराओ ने प्रशासन के मामले मे और नियमित रूप से पालियामेंट बुलाये जाने में बैरनो के अधिकार को स्थापित किया।

१३०९ में कामन्स ने "इस शर्त पर कि राजा को कुछ अनुच्छेदो पर सलाह लेनी चाहिये और क्षति पूर्ति करनी चाहिये जिनमें उनकी शिकायतो का बयान किया गया था" कुछ अनुदान स्वीकृत करके अपनी शक्ति और अधिकारो का समर्थन किया। तेरह साल बाद एक अधिनियम पास हुआ जिसने १३११ में पास हुए अध्यादेशो को रद्द कर दिया और यह घोषणा करके कामन्स के विधिनिर्माण में भाग लेने के अधिकार को मान्यता दी कि "जो मामले हमारे मालिक राजा और उसके उत्तराधिकारियो की जायदाद के लिये और राज्य के लिये तथा जनता के लिये स्थापित किये जाने है वे पालियामेंट मे राजा द्वारा स्थापित किये जायेगे और उन पर प्रीलेटो, अर्लो, बैरनो और राज्य के सामान्य जनो को स्वीकृति ली जायेगी जैसी कि अब प्रथा बना दी गई है।"[१] इससे इगलैण्ड के सामान्य जनो का नगर और ग्राम दोनो के प्रतिनिधियो द्वारा इंगलैंड के कानूनो को बनाने में भाग लेने का अधिकार मिल गया। कानून बनाने की शक्ति जो कि पहले केवल राजा द्वारा प्रयोग

१. स्टेट्यूट्स आफ दि रैल्म, १५, एडवर्ड द्वितीय १८९।

की जाती थी अब राजा, प्रीलेटो, बैरनो तथा इगलैण्ड की सामान्य जनता के प्रतिनिधियो से बनी पार्लियामेंट के हाथो में आ गई। १३०० में और फिर १३०२ में परिनियम द्वारा यह घोषित कर दिया गया कि पार्लियामेंट की बैठक प्रति वर्ष हुआ करेगी। चौदहवी शताब्दी के पहले आधे भाग में यह प्रथा विकसित हो गई कि लार्ड्स और कामन्स राजा को अपने उत्तरो का विवेचन करने के लिये एक दूसरे से प्रथक प्रथक मिलने लगे। कामन्स ने शीघ्र ही कानून में परिवर्तन करने के लिये राजा के सामने प्रार्थनायें और विधेयक पेश करने शुरू किये और हेनरी पञ्चम के शासन काल से (१४१३-२१) विधेयक कामन्स सभा द्वारा स्वीकृत किये जाने लगे। जैसे जैसे समय गुजरा राजा की शक्ति कम होने लगी और उसी के अनुरूप पार्लियामेंट की शक्ति बढ़ती गई। अत राजा का पार्लियामेंट में मिलना केवल औपचारिक रह गया और वास्तविक कार्य दोनो सदनो (लार्ड्स और कामन्स) द्वारा प्रथक होने लगा।

एडवर्ड तृतीय के शासन काल में कामन्स ने तीन महत्वपूर्ण अधिकारो की घोषणा की। विधिनिर्माण में दोनो सदनो का एक मत होना आवश्यक है, कामन्स को प्रशासन की अव्यवस्थाओं की जाँच करने और उनमें सशोधन करने का अधिकार है।[१] सन् १३६० में कामन्स ने प्रथम बार अपने दोषारोपण करने के अधिकार का प्रयोग किया।

राजा रिचार्ड द्वितीय के शासन काल में अधिकतर समय कामन्स अपने अधिकारो के सम्बन्ध में बड़ा उग्र रूप धारण किये रहे और कुछ समय तक "सम्पूर्ण कार्यकारिणी सरकार दोनो सदनो को सौंप दी गई।" बाद में उसी राज्यकाल में मंत्रियो पर नियत्रण करने में दोनो सदनो ने एक मत से काम लिया और १३९९ में पार्लियामेंट ने राजा को पदच्युत कर दिया।

लकास्ट्रियनों और यौरकिस्टों के आधीन—लकास्ट्रियन और यौर्किस्ट राजाओ के शासन काल में (१३९९-१४८५) प्रत्येक सदन ने सामूहिक रूप से और उसके व्यक्तिगत सदस्यो के लिये विशेषाधिकार प्राप्त कर लिये जिनमें से तीन महत्वपूर्ण हैं —

(१) वक्तृत्व की स्वतन्त्रता।

(२) गिरफ्तार होने से और शारीरिक दड पाने से विशेष सुरक्षा।

(३) कामन्स का प्रतियोगी चुनावो को निर्धारित करने का अधिकार।

ट्यूडरों के आधीन—ट्यूडर निरकुशता के विकास के साथ पार्लियामेंट का नियत्रण कम हो गया, हेनरी सप्तम ने अपने चौबीस साल के शासन काल में केवल सात बार पार्लियामेंट बुलाई जिनमें से बाद के तेरह वर्षों में केवल एक बार पार्लियामेंट बुलाई गई। यह इसलिये सभव हो सका क्योंकि उसकी प्रथम पार्लियामेंट ने उसके लिये

---

१. इस समय तक पार्लियामेन्ट के तीनो वर्गों ने दो सदनो में बैठना शुरू किया, बैरनो ने हाउस आफ लार्ड्स में और बाकी लोगो ने हाउस ऑफ कामन्स में।

आजीवन टनेज (Tonnage) और पाउण्डेज (Poundage) के कर मजूर कर दिये थे और वह जुर्मानो से भारी रकम वसूल करता था जो बलात् कर्जो और भेंट आदि के साथ मिलकर राजा को इतना रुपया दे देते थे कि वह पार्लियामेण्टो के बिना शासन चला सकता था। उसके उत्तराधिकारी हेनरी अष्टम ने भी पार्लियामेंटो के बिना राज्य करने का प्रयत्न किया परन्तु जब कभी उसने पार्लियामेंट बुलाई तब उसने उसे अपने कृपा पात्रो अथवा वैतनिक नौकरो से भरने की कोशिश की। उसका पार्लियामेंटो में से एक तो इतनी आधीन हो गई कि उसने यह अधिनियम बनाया कि "राजा की घोषणायें पार्लियामेन्ट के अधिनियमो के समान वैध होनी चाहिये।"

ऐलिजाबेथ के राज्य काल की विशेषता धार्मिक कार्य थे। कामन्स सभा के अधिकाश सदस्य प्यूरिटन थे। कामन्स ने अपने सदस्यो के लिये दो अधिकार प्राप्त करने के लिये बार बार प्रयत्न किये अर्थात् वक्तृत्व की स्वतन्त्रता और गिरफ्तार होने से स्वतन्त्रता। जब १५९२-९३ में स्पीकर ने वक्तृत्व की स्वतन्त्रता के लिये अपना भाषण दिया तो लार्ड कीपर ने रानी के पक्ष मे यह उत्तर भेजा "वक्तृत्व की स्वतन्त्रता के लिये रानी मुझे आपको यह बतलाने का आदेश देती है कि विधेयको के लिये हां या न कहने मे ईश्वर न करे कि किसी व्यक्ति को रोका जाय या वह अपनी सर्वोत्तम रुचि के अनुसार उत्तर देने से डरे। और इस प्रकार अपनी बुद्धि को थोडे में प्रगट करने में और उसमें एक स्वतन्त्र आवाज रखने में ही सदन की सच्ची स्वतन्त्रता है इसमें नही, जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं, कि सब प्रकार की बातो पर बोला जाय और अपने छोटे मस्तिष्को के अनुरूप एक प्रकार के धर्म का रूप या एक प्रकार की सरकार की व्यवस्था बना ली जाय जिसके लिये वह कहती है कि राज्य के लिये योग्य कोई भी राजा इस प्रकार की मूर्खताओ को स्वीकार नही करेगा।" वक्तृत्व की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त के इस प्रकार से स्पष्ट तिरस्कार से कामन्स और स्टुअर्ट राजाओ में सघर्ष होने लगा। दो बातो पर राजा और पार्लियामेंट में झगडा हो गया—राज्य का उत्तराधिकार और हेनरी अष्टम के राज्य में चर्च में आगे सुधार।

स्टुअर्टों के आधीन—जेम्स प्रथम के सिहासन ग्रहण करने के साथ पार्लियामेण्ट और राजा में वास्तविक सघर्ष छिड गया। जेम्स ने शासन में राजा के दैवी अधिकार का प्रतिपादन किया, पार्लियामेण्ट ने समय समय पर प्राप्त किये हुए अपने अधिकारो और विशेषाधिकारो पर जोर दिया। १६२८ में पार्लियामेण्ट ने पिटीशन ऑफ राइट्स पास किया। १६२९ में चार्ल्स प्रथम सिंहासनारूढ हुआ उसने पार्लियामेण्ट के बिना शासन करने का और इस प्रकार इगलैंड का ससदीय सविधान उखाड फेंकने का निश्चय किया। उसने स्वेच्छापूर्ण करो से रुपया खीचा। राजा और पार्लियामेण्ट में सघर्ष के परिणाम स्वरूप अन्त में गृह युद्ध छिड गया क्योकि पार्लियामेण्ट ने अपनी शिकायतो को दूर किये बिना पूर्तियाँ स्वीकृत करने से इनकार कर दिया। १६४१ मे पार्लिया-

मेण्ट ने पार्लियामेण्टों के बीच में बहुत समय गुजर जाने से होने वाली असुविधा को दूर करने के लिये ट्रनियल ऐक्ट (Triennial Act) पास किया। उसने यह विधान किया कि कम से कम तीन साल में एक बार पालियामिण्ट अवश्य बुलाई जानी चाहिये। १६४२-१६६० के क्रान्तिकारी काल में प्राइड्स पर्ज (Prides Purge) के अलावा कोई महान परिवर्तन न हुआ जिससे कि कॉमन्स के उन सदस्यों को निकाल दिया गया जिन्होंने राजा का पक्ष ग्रहण किया था और अस्थायी रूप से लार्ड्स सभा भग कर दी गई। परन्तु १६६० में चार्ल्स द्वितीय के सिंहासनारूढ होने से पालियामेण्ट को फिर से वैधानिक सर्वोच्च सत्ता प्राप्त हो गई। ग्लोरियस रिवोल्यूशन (१६८९) के साथ किसी राजा के तख्त छोडने को स्वीकृत करने के और दूसरे राजा को ग्रहण करने के पालियामेण्ट के अधिकारों की सफलतापूर्वक स्थापना की गई।

बाद की दो शताब्दियों में पालियामेण्ट ने शासन यत्र में सर्वोच्च तत्व के रूप में अपना पद प्राप्त कर लिया। १६८४ के ग्लोरियस रिवोल्यूशन के बड़े दूरवर्ती वैधानिक परिणाम हुए। १३ फरवरी सन् १६८९ को अधिकारों की घोषणा को स्वीकृत करके विलियम और मेरा ने सिंहासन ग्रहण किया। अधिकारों की घोषणा में यह विधान किया गया था कि (अ) पार्लियामेण्ट की सत्ता बिना राजा को कानूनों का स्थगित करने, रद्द करने की शक्ति का प्रयोग करने, रुपया वसूल करने, धार्मिक मामलों के लिये कमीशन और न्यायालय नियुक्त करने और शांति के समय में एक स्थायी सेना रखने के लिये कोई अधिकार नहीं रहता और (ब) प्रजा को राजा से प्रार्थना करने, पार्लियामेण्ट में चुने जाने की स्वतन्त्रता रखने जिसको नियमित रूप से मिलना पड़ता था, पार्लियामेण्ट में भाषण की स्वतन्त्रता रखने और अत्यधिक लग्नक (Bail), अत्यधिक जुर्मानों और अवैध तथा क्रूर दण्डों से मुक्त होने का अधिकार था। १६ दिसम्बर सन् १६८९ को पार्लियामेण्ट ने राजा के विशेषाधिकारों को सीमित करते हुए और प्रजा के अधिकार का पोषण करते हुये बिल ऑफ राइट्स पास किया। इस प्रविधान से रोमन कैथोलिक चर्च के सदस्य अथवा किसी पोपवादी से शादी करने वालों का सिंहासन पर कोई अधिकार न रहा। उसने उत्तराधिकार इस क्रम से निश्चित किया, विलियम और मेरी, मेरी के बच्चे और सन्तान न होने पर विलियम के बच्चे। प्रथम म्यूटिनी ऐक्ट (जो कि आर्मी एक्ट कहलाया) भी उस वर्ष पास हुआ जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी विधान था कि पार्लियामण्ट की सहमति के बिना कोई भी स्थायी सेना नहीं रखी जानी चाहिये। यह अधिनियम प्रति वर्ष फिर से नया किया जाना चाहिये और इस प्रकार प्रत्येक वर्ष पार्लियामेण्ट को बुलाने की आवश्यकता पड़ती थी। १६९४ के ट्रेनियल एक्ट ने पार्लियामेण्ट का कार्यकाल तीन वर्ष सीमित कर दिया।

१७०१ में विलियम और मेरी की पांचवीं पार्लियामेण्ट (जिसमें कि टोरी बहुमत था) ने एक मात्र शाही सन्तान एनी (Anne) की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार या व्यवस्था का एक अधिनियम पास किया। उसके मुख्य प्रविधान ये थे: (१) एनी की मृत्यु के बाद राज्य प्रोटेस्टेन्ट होने के कारण हैनोवर की एलेक्ट्रेस सोफिया और उसके उत्तराधिकारियों को मिलता जो कि जेम्स प्रथम की कन्या एलिजाबेथ की कन्या थी, (२) राजा को इगलैण्ड के चर्च का सदस्य अवश्य होना चाहिये, (३) पार्लियामेण्ट की सहमति के बिना राजा के सवैधानिक राज्य की रक्षा के लिये कोई युद्ध नही छिड़ना चाहिये, (४) पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना राजा को इगलैण्ड नही छोडना चाहिये (यह १७१४ में भग कर दिया गया), (५) न्यायधीश उचित व्यवहार करने तक पदो पर रहेंगे और केवल पार्लियामेण्ट के दोनो सदनो के कहने पर हटाये जा सकते हैं, (६) ग्रेट सील के आधीन क्षमा की दोषारोपण के न्यायालय मे वकालत नही की जा सकती, (७) कोई भी विदेशी पार्लियामेण्ट में या प्रीवी कौसिल में नही बैठ सकता न राजा से जमील ले सकता है, (८) प्रीवी कौसिल के क्षत्र के अन्तर्गत सब मामले वही निबटाये जाने चाहिये और उसके निर्णयो पर उसके सब सदस्यो के हस्ताक्षर होने चाहियें (१७०५ में रद्द किया गया), (९) कोई भी पेन्शनयाफ्ता या स्थान (Place) रखने वाला पार्लियामेण्ट में नही बैठ सकता (१७०५ मे रद्द)। सन् १७०७ में पार्लियामेण्ट ने स्काटलैण्ड के साथ सघ का अधिनियम स्वीकृत किया जिससे इगलैण्ड के राजा के आधीन पार्लियामेण्ट का अलग अस्तित्व समाप्त हो गया और एक पार्लियामेण्ट के साथ ग्रेट ब्रिटेन के सयुक्त राज्य की स्थापना हुई।

हैनोवरों के आधीन—जब १७१४ में जार्ज प्रथम सिंहासन पर बैठा तो पार्लियामेण्ट की प्रभुता में एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ। क्योंकि राजा और उसका उत्तराधिकारी पुत्र जार्ज द्वितीय अग्रेजी नही जानता था अत उन्होने प्रशासन का वास्तविक कार्य पार्लियामेण्ट और मन्त्रियो पर छोड दिया। जार्ज प्रथम ने १५ सदस्यों की एक मन्त्रिपरिषद नियुक्त की और प्रारम्भ में उसकी बैठकों में उपस्थित हुआ परन्तु १७१७ के बाद उसकी उपस्थिति बहुत कम हो गई। अत यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी नीति का समन्वय करने के लिये एक अध्यक्ष चुने—यह प्रधान मन्त्री के पद का उद्गम था। वालपोल इगलैण्ड का प्रथम प्रधान मन्त्री बना और केबिनेट व्यवस्था प्रारम्भ हुई। प्रारम्भ में "प्राइम मिनिस्टर" शब्द वालपोल के शत्रुओं द्वारा गाली के रूप में प्रयोग किया जाता था जो यह जाहिर करना चाहते थे कि वह राज्य की समस्त शक्ति स्वय हड़प रहा है। १७२१ में वालपोल की ट्रजरी के प्रथम लार्ड के पद पर नियुक्ति से उसको अपने सहयोगियो में श्रेष्ठता मिल गई और वह दक्षिणी महासागर के बुलबुले (South Sea Bubble) के परिणाम स्वरूप आर्थिक सकट से निबटने वाला एक

मात्र योग्य व्यक्ति पाया गया। इस प्रकार कॉमन्स में उसके नेतृत्व और राजा पर उसके प्रभाव ने उसको चोटी पर पहुँचा दिया और वह "हाउस ऑफ कॉमन्स में राजा के साथ मन्त्री" कहलाने लगा। इस श्रेष्ठता ने १७२१-१७४२ के काल में प्रधान मन्त्रित्व की नींव रखी। राजा के कानूनी विशेषाधिकार अब भी कायम थे परन्तु अब वे राजा के उत्तरदायी मन्त्रियों की इच्छा से प्रयोग किये जाते थे जो कि हाउस ऑफ कॉमन्स में बहुमत का प्रतिनिधित्व करता था। कर लगाने का पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेने से हाउस ऑफ कॉमन्स सर्वोच्च हो गया, सालाना पूर्तियाँ स्वीकृत करने की व्यवस्था स्थापित हो गई और इससे पार्लियामेण्ट के वार्षिक अधिवेशनों की आवश्यकता पड़ी। जार्ज तृतीय अंग्रेजी अच्छी तरह जानता था। इंगलैण्ड में पैदा होने के कारण वह सरकार की ब्रिटिश व्यवस्था को पूरी तरह जानता था। १७६० में गद्दी पर बैठने के बाद उसने शासन करने का और अपने विशेषाधिकारों को व्यक्तिगत रूप से प्रयोग करने का प्रयत्न किया और मन्त्रियों को अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग न करने दिया। बाद में एक के बाद एक मन्त्रिमण्डल से राजा का संघर्ष हुआ। अमरीकन उपनिवेशों की हानि बहुत कुछ उसकी कठोरता के कारण हुई। १७८१ में छोटे पिट के प्रधान मन्त्री बनने और कॉमन्स में बहुमत प्राप्त कर लेने के कारण उसको अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने का अवसर मिला जिसपर वह १८०१ तक बना रहा और दो वर्ष बाद उसने कहा कि "इस देश के मामलों से निबटने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि एक ऐसा वास्तविक और दृढ़ मन्त्री हो जो कौंसिल में मुख्य महत्व और राजा के विश्वास में मुख्य स्थान रखता हो।" राजा के गिरते हुए स्वास्थ्य और बारबार की बीमारियों ने (१७६५, १७८९, १८०१, और १८०४ में) पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च-सत्ता और हाउस ऑफ कॉमन्स के प्रति मन्त्रियों के उत्तरदायित्व की स्थापना की। जब १८१० में जार्ज तृतीय विक्षिप्त हो गया तो वह स्थायी रूप से असमर्थ हो गया और वास्तविक शक्ति पार्लियामेण्ट के हाथ में आ गई।

तत्कालीन ब्रिटिश पार्लियामेण्ट मतदाताओं के वास्तविक मत का प्रतिनिधित्व नहीं करती थी। पार्लियामेण्ट के सुधार का आन्दोलन १९ वीं शताब्दी भर चलता रहा। चुनावों में भ्रष्टाचार रोकने के लिये, मताधिकार को नागरिकों के एक बड़े प्रतिशत तक पहुँचाने के लिये और चुनावों में धनी लोगों का प्रभाव कम करने के लिये तीन क्रमिक सुधार अधिनियम (१८३२, १८६७ और १८८४-८५ का) पास किये गये। रानी विक्टोरिया के लम्बे शासन ने (१८३७-१९०१) पार्लियामेण्ट में महान राजनीतिज्ञों का उदय देखा जिन्होंने अपने सिद्धान्तों और नीतियों से हाउस ऑफ कॉमन्स को राज्य में वास्तविक शक्ति का अधिकारी बना दिया। सरकार की पक्ष प्रणाली ब्रिटिश राजनैतिक व्यवस्था की मूलभूत (यद्यपि अलिखित) विशेषता बन गई।

सब उत्तरदायित्व से मुक्ति और एक निश्चित सिविल लिस्ट के बदले में राजा ने सब व्यवहारिक प्रयोजनो के लिये सब शाही अधिकार और विशेषाधिकार (कानूनी पद और शक्तियां न खोते हुए) उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल के हाथ में सौंप दिये। इस प्रकार कई शताब्दियों के संघर्ष के बाद ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने कार्यकारिणी पर पूर्ण नियंत्रण और पूर्ण विधायक शक्तियां प्राप्त कर ली।

पार्लियामेण्ट की प्रभुता की प्रकृति और सीमा—ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के उद्गम और विकास तथा इगलैण्ड की सरकारी व्यवस्था में उसकी वर्तमान स्थिति के उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है उस देश में सरकार के सब अगो में पार्लियामेण्ट नि सन्देह सबसे अधिक शक्तिशाली और सर्वोच्च अग है। इगलैण्ड के सविधान और सवैधानिक कानून पर विभिन्न लेखको ने अन्य जनतन्त्रीय राज्यो की विधान सभाओ के मुकाबले में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की प्रभुता का विवेचन किया है। प्रो० डायसी कहते है "पार्लियामेण्ट की प्रभुता (एक कानूनी दृष्टिकोण से) हमारी राजनैतिक सस्थाओ की एक मुख्य विशेषता है। पार्लियामेण्ट की प्रभुता और प्रकृति का विवेचन करते हुए उन्होंने सर एडवर्ड कोक का विचार दिखलाते हुये ब्लेकस्टोन की टीकाओ में से यह प्रसिद्ध पक्तियां उद्धृत की हैं "पार्लियामेण्ट की शक्ति और क्षेत्र इतना परात्पर और निरपेक्ष है कि वह कुछ प्रयोजनो या व्यक्तियो के लिये सीमाओ में नही बांधा जा सकता।" पार्लियामेण्ट द्वारा प्रयुक्त या प्रयुक्त हो सकने योग्य शक्तियो के सम्बन्ध मे इन पक्तियो में आगे कहा गया है कि "वह धार्मिक, लौकिक, नागरिक, सैनिक, नाविक अथवा अपराध सम्बन्धी सब प्रकार के सम्भव मामलो में कानूनो को समर्थन करने, सीमित करने, रद्द करने, पुनर्जीवित करने अथवा पोषण करने के लिये सर्वोच्च और अनियन्त्रित सत्ता रखती है यह वह स्थान है जहाँ कि इन राज्यों के सविधान से वह निरकुश शक्ति सौंप दी गई है जो कि सब सरकारो मे कही न कही रहनी चाहिये। सब गडबडियां और शिकायतें, क्रियायें और निदान जो कि कानूनो के साधारण क्षेत्र से परे होते हैं इस असाधारण न्यायालय के क्षेत्र के अन्तर्गत हैं। वह सिंहासन के उत्तराधिकार को नियमित अथवा निश्चित कर सकती है जैसा कि *हेनरी अष्टम और विलियम तृतीय के शासन काल में किया* गया था। वह देश के स्थापित धर्म को बदल सकती है जैसा कि हेनरी अष्टम और उसके तीन बच्चो के राज्य में विविध उदाहरणो में किया गया था। वह राज्य और स्वय पार्लियामेण्ट के लिये नये सिरे से सविधान बना सकती है जैसा कि सघ के एक्ट तथा त्रिवर्षीय तथा सप्तवर्षीय चुनावों के कुछ परिनियमों में किया गया था। सक्षेप में वह सब कुछ कर सकती है जो कि प्राकृतिक रूप से असभव नही है और इसी कारण कुछ लोगो ने अत्यधिक बढाचढा कर उसकी शक्ति को पार्लियामेण्ट

को सर्वशक्तिमत्ता कह दिया है। यह सत्य है कि जो कुछ पार्लियामेण्ट करती है वह पृथ्वी पर कोई भी सत्ता मेट नही सकती।"[1] पार्लियामेण्ट की प्रभुता की सीमा का संकेत करते हुये डी लोम के शब्द प्रसिद्ध हो गये है। उसने कहा था "अंग्रेजी वकीलो के साथ यह मौलिक सिद्धान्त है कि पार्लियामेण्ट को एक स्त्री को पुरुष और पुरुष को स्त्री बनाने के अलावा हर एक चीज कर सकती है।" कोक और डी लोम के इन शब्दो को कहे हुये बहुत काल गुजर चुका है। अब हमें पार्लियामेण्ट की प्रभुता के बारे मे उपरोक्त कथनो के सत्यो की परीक्षा करनी चाहिये।

पार्लियामेण्ट की प्रभुता का अनेक दृष्टिकोणो से विवेचन किया जा सकता है अर्थात् सिद्धान्त रूप में कानूनी प्रभुता, व्यवहार में यथार्थ प्रभुता, आन्तरिक प्रभुता (उसकी अपनी बनावट, कार्यकाल, शक्तियो और इगलैण्ड तथा सयुक्त राज्य के लिये उसके विधिनिर्माण की सीमा के बारे में) और बाह्य प्रभुता (यानी ब्रिटिश साम्राज्य या कामन वैल्थ के विभिन्न भागो और अन्तर्राष्ट्रीय समितियो तथा विदेशी राज्यो के सम्बन्ध में)।

कानूनी दृष्टिकोण से पार्लियामेण्ट अब भी सर्वोच्च सत्ता है क्योकि उसके बनाये हुए किसी कानून पर किसी भी कानून के न्यायालय में सवाल नही उठाया जा सकता, न ही वहां पार्लियामेण्ट की कानून बनाने की शक्ति के बारे मे किसी भी सत्ता द्वारा निश्चित कोई सीमा ही है। अमेरिकन काग्रेस की कानून बनाने की शक्ति अमेरिकन सविधान द्वारा सीमित है जो कि भाग ८ की धारा १ में इन शक्तियो की व्याख्या करता है। क्योकि सर्वोच्च न्यायालय को सविधान को लागू करने का अधिकार है अत काग्रेस का कोई कानून अवैध भी घोषित किया जा सकता है और सविधान से असमीचीनता के आधार पर इस प्रकार कानूनो के रद्द होने के अनेक उदाहरण हैं। दूसरी ओर ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की कानून बनाने की शक्ति का क्षेत्र कही भी निश्चित नहीं किया गया है। ब्रिटिश न्यायालय पार्लियामेण्ट के बनाये हुए किसी भी कानून की वैधता पर प्रश्न नही उठा सकते। इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य के ऐसे भागो की विधान सभाओ के मुकाबले में, जो कि पूर्णतः स्वशासित नही हैं, ब्रिटिश पार्लियामेण्ट एक सर्वोच्च सत्ता सम्पन्न विधान सभा है। १७०१ का एक्ट ऑफ सैटिलमैन्ट पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता का एक अच्छा उदाहरण है क्योकि उसने ब्रिटिश सिंहासन का उत्तराधिकार निश्चित किया और धर्म तथा वैवाहिक सम्बन्ध के बारे में उत्तराधिकारी के अधिकार सीमित कर दिये। एडवर्ड अष्टम को सिंहासन छोडना पडा क्योकि वह दो बार तलाक पाई हुई और अमरीकन पैतृकता की एक स्त्री के साथ भावी सन्तति

---

१ लॉ आफ कान्स्टीट्यूशन में डायसी द्वारा उद्धृत, पृष्ठ ४१-४२।

के उत्तराधिकार के साथ विवाह करना चाहता था। उसने ऐसी शादी करने से इनकार कर दिया था जिससे उसके बच्चों को (उस विवाह से) सिंहासन का उत्तराधिकार न मिलता। फिर, पार्लियामेण्ट अपना कार्यकाल निश्चित करती है। १७१६ में पार्लियामेण्ट ने १६९४ के त्रिवर्षीय एक्ट को रद्द कर दिया। (जिसने हाउस ऑफ कॉमन्स का कार्यकाल तीन वर्ष निश्चित किया था) और कार्यकाल बढा कर सात वर्ष करते हुए सप्तवर्षीय एक्ट पास किया। इस प्रकार तत्कालीन पार्लियामेण्ट ने अपना कार्यकाल चार वर्ष और बढा लिया और वर्तमान परिस्थिति में चुनाव होने पर दंगो की संभावना से और कॉमन्स सभा में हैनोवर वंश के विरुद्ध जैकोबाइट बहुमत के भय से बचाव कर लिया। इस एक्ट को पास करने में पार्लियामेण्ट ने यह दिखाते हुए अपनी सर्वोच्च सत्ता का समर्थन किया कि वह मतदाताओं की एजेन्ट या ट्रस्टीमात्र नहीं है बल्कि उसको किसी भी कानून को पास करने या रद्द करने का अधिकार है। १९११ में पार्लियामेण्ट ने एक महत्वपूर्ण प्रविधान पास किया (पार्लियामेण्ट एक्ट १९११) जिससे हाउस ऑफ लार्डस को शक्तियाँ कम हो गई और कॉमन्स का कार्यकाल ५ वर्ष निश्चित कर दिया गया। परन्तु उसी पार्लियामेण्ट ने १९१६ में (पाँच वर्ष की सीमा की अवहेलना करके) स्वयं अपने कार्यकाल को बढा लिया जिससे प्रथम महायुद्ध के समय में चुनाव न हो। परन्तु कोई पार्लियामेण्ट अपने उत्तराधिकारियों को नहीं बाँध सकती क्योंकि इसका यह मतलब होगा कि उत्तराधिकारी पार्लियामेण्ट प्रभु अथवा सर्वोच्च नहीं होगी। अपने कार्यकाल में कोई भी पार्लियामेण्ट मन चाहे कानून बना सकती है "वह किसी भी कानून को बना या बिगाड सकती है, वह परिनियम के द्वारा संविधान की दृढतम स्थापित परम्परा को नष्ट कर सकती है, वह गत असंवैधानिकताओं को वैध बना सकती है और इस प्रकार न्यायालयों के *निर्णयों को उलट सकती है, वह पाँच वर्ष के साधारण कार्यकाल से अपना समय बढा सकती है।"*

१९१९ के गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट की प्रस्तावना ने भारत को स्वायत्त शासन देने की विभिन्न अवस्थाओं को निश्चित करने के लिये पार्लियामेण्ट को एकमात्र निर्णायक मान लिया। १९३५ के गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया एक्ट ने १९१९ के एक्ट को रद्द कर दिया परन्तु उसकी प्रस्तावना को नहीं। परन्तु भारत की १९४७ की परिस्थितियों से बाध्य होकर पार्लियामेण्ट को भारत का स्वतन्त्रता अधिनियम पास करना पड़ा जिससे भारतीय राजे राजमुकुट के आधीन न रहे और भारत और पाकिस्तान के दो अधिराज्य उत्पन्न हो गये। परन्तु कोई अत्यधिक साहसिक व्यक्ति ही कोक के साथ यह कह सकता है कि पार्लियामेण्ट १९४७ के इस अधिनियम को रद्द कर सकती है और १९१९ या १९३५ के भारत सरकार अधिनियम को फिर से लागू कर सकती

है। यह ठीक है कि पार्लियामेण्ट ने स्वयं अपने अधिनियमों से १९४७ में भारत और पाकिस्तान के अधिराज्य उत्पन्न किये परन्तु उसको १९४७ के एक्ट को रद्द करके इस व्यवस्था को समाप्त करने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है।

१९३१ का वैस्टमिन्सटर का परिनियम (Statute of West Minster) पार्लियामेण्ट की कानूनी सर्वोच्च सत्ता पर व्यावहारिक सीमा का एक अन्य उदाहरण है। अधिराज्यों के स्तर को कानूनी मान्यता देने के लिये, जो कि उस समय तक उन्होंने प्राप्त कर लिया था और १९३० के साम्राज्य सम्मेलन के प्रस्ताव से मान्य हो चुका था, पार्लियामेण्ट ने १९३१ का वैस्ट मिन्सटर का परिनियम पास किया। प्रस्तावना के द्वितीय पैराग्राफ में यह परिनियम १७०१ के सैटिलमेण्ट के एक्ट द्वारा निश्चित ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की शक्ति को सीमित करता है और उसको अधिराज्यों में इन शब्दों में बाँट देता है *"और क्योंकि इस अधिनियम की प्रस्तावना के रूप में* यह निश्चित करना उपयुक्त होगा कि क्योंकि राजमुकुट राष्ट्रों के ब्रिटिश कामनवैल्थ के सदस्यों के मूल साहचर्य का प्रतीक है और क्योंकि वे राजमुकुट के प्रति एक सामान्य आधीनता से मिले हुये हैं, तब यह एक दूसरे के सम्बन्ध में कॉमनवैल्थ के सब सदस्यों की वैधानिक स्थिति के अनुकूल होगा कि राज सिंहासन के अथवा शाही पदों या उपाधियों के उत्तराधिकार को छूने वाले किसी भी कानून में अब से सब अधिराज्यों की पार्लियामेण्टों तथा संयुक्त राज्य की पार्लियामेण्ट की सहमति की आवश्यकता होगी।" अतः जब एडवर्ड अष्टम के श्रीमती सिम्पसन से विवाह के निश्चय पर संकट उपस्थित हुआ तो बाल्डविन ने राजा को यह स्पष्ट कर दिया कि इसमें सन्देह है कि अधिराज्यों की पार्लियामेंटें १७०१ के उत्तराधिकार अधिनियम में परिवर्तन पर राजी होंगी। वास्तव में बाल्डविन ने सब अधिराज्यों की सरकारों को उस संकट से सम्बन्धित बातों के विकास के बारे में सब सूचनायें दे रखी थी जो कि एडवर्ड के पदत्याग से बच गया। परन्तु इस पदत्याग के विधेयक को उपस्थित करने के लिये भी सब अधिराज्यों की सहमति ले ली गई थी। इस राजत्याग को विधिसम्मत बनाने के लिये स्वतन्त्र आयरिश राज्य ने स्वयं अपना कानून पास किया। १७०२ के शाही अधिनियम को संघ के कानून का एक अंग बनाने के लिये और यह मानते हुए कि राजत्याग हुआ है, दक्षिणी अफ्रीका संघ की सरकार ने एक अधिनियम पास किया और वैस्ट मिन्सटर के परिनियम से एक दिन पहले की तारीख में रखा।

परिनियम के तृतीय पैराग्राफ में यह निर्धारित किया गया है कि "संयुक्त राज्य की पार्लियामेन्ट द्वारा बनाया हुआ कोई भी कानून अब उक्त अधिराज्यों में उस अधिराज्य के कानून के भाग में लागू नहीं होगा जब तक कि उसके लिये प्रार्थना न की जाय अथवा अधिराज्य की स्वीकृति न मिल जाय।"

परिनियम का खड २ कालोनियल लॉज वैलीडिटी एक्ट १८६५ के लागू होने को रद्द करता है और आगे यह कहता है कि अधिराज्य का कोई भी कानून "इस आधार पर रद्द या लागू न होने वाला न होगा कि वह इगलैण्ड के कानून अथवा सयुक्त राज्य की पार्लियामेन्ट के किसी वर्तमान या भावी प्रविधान या ऐसे अधिनियम के अन्तर्गत बने नियम या अधिनियम के विरुद्ध है और एक अधिराज्य की पार्लियामेन्ट की शक्तियो में किसी भी ऐसे परिनियम, आदेश, नियम या अधिनियम को रद्द करने या सशोधन करने का अधिकार है जहाँ तक वह अधिराज्य के कानून का भाग है।" इसी अधिराज्य के लिये कानून बनाने की पार्लियामेन्ट की प्रभुता को सीमीत कर दिया है और उसी समय एक अधिराज्य की पार्लियामेन्ट को ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के किसी भी ऐसे अधिनियम को सशोधन करने का अधिकार दे दिया है जो अधिराज्य को इस प्रकार से प्राप्त विधि बनाने की शक्ति के विरुद्ध हो। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के परिनियम के खड ४ के अन्तर्गत ब्रिटिश पार्लियामेन्ट एक अधिराज्य पर लागू होने वाला कोई भी कानून या अधिनियम पास नहीं कर सकती जब तक कि उस अधिराज्य की स्पष्ट प्रार्थना या सहमति न प्राप्त हो। परिनियम के खड ७ ने इसको और भी स्पष्ट कर दिया है। ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की प्रभुता में ये परिवर्तन (प्रतिबन्ध) पहले ब्रिटिश उपनिवेशो, जो कि अब अधिराज्य कहलाते हैं, की बदली हुई परिस्थितियो के कारण है। १९३१ के वेस्ट-मिन्सटर के परिनियम में इन प्रविधानो का समर्थन करते हुए लार्ड पामफील्ड ने २६ नवम्बर १९३१ को हाउस ऑफ लार्ड्स में विधेयक पर बहस होते समय कहा था "पार्लियामेण्ट का एक अधिनियम बहुत से मामलो में बन्धन का प्रलेख न होकर स्वतन्त्रता का प्रलेख बन जाता है। इस मामले में वह एक स्वतन्त्रता का प्रलेख है—अधिराज्यों को स्वतन्त्रता देने के लिये और इस देश को अधिराज्यो से उसके सम्बन्धो में, पार्लियामेण्ट के रूप म एक अधिनियम के बिना बढ़ने और विकसित होने के लिये . . . . मै विश्वास करता हूँ कि राष्ट्रो का ब्रिटिश कॉमन वैल्थ कानूनी बन्धनो और पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक फैलने वाले पार्लियामेण्ट के अधिनियमो के आधार पर नही टिक सकते।" यह सच है कि अधिराज्यो के सम्मुख अपनी प्रभुता के प्रयोग में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने स्वय अपने अधिनियम से इन "बन्धनो" को हटा दिया परन्तु अब यह कहना मूर्खता है कि वह वेस्ट मिन्सटर के परिनियम को रद्द करके और [१८६५ के कालोनियल लॉज वैलीडिटी अधिनियम को फिर से जारी करके, जैसा कि कोक या डीलोम प्रस्तावित कर सकते हैं, अपनी प्रभुता को फिर से बढा सकती है।

ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने स्वय अपने अधिनियमो से, बर्मा को पूर्ण स्वतन्त्रता

और लंका को अधिराज्य पद दिया परन्तु यह कहना गलत होगा कि पार्लियामेंट इन अधिनियमों को रद्द करके जिन्होंने एक को स्वतन्त्रता और दूसरे को अधिराज्य पद दिया, इन दोनों पर अपनी प्रभुता फिर से लागू कर सकती है। इसी प्रकार से वह घना (Ghana) की स्वतन्त्रता को मान्यता देने वाले अधिनियम का उन्मूलन नहीं कर सकती। इन तथ्यों का उल्लंघन करने का कोई भी प्रयत्न अवैध होगा।

कीथ अथवा डाल्सीम के वक्तव्यों में प्रदर्शित अथवा डायसी द्वारा वर्णित पार्लियामेण्ट की प्रभुता की सीमा वर्तमान परिस्थितियों में लागू नहीं हो सकती और इसलिये वह कोरी कल्पना हो—है। और फिर भी यह कहना सच है कि ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की प्रभुता के समान किसी भी अन्य देश की विधान सभा की प्रभुता नहीं है। पार्लियामण्ट की इस विशिष्ट प्रभुता का बयान इस प्रकार किया जा सकता है —

(१) ब्रिटिश पार्लियामण्ट कानूनी रूप से सर्वोच्च है और ग्रेटब्रिटेन के संयुक्त राज्य तथा आयरलैण्ड में कोई भी कानून बनाने की असीम तथा अबाध सत्ता रखती है, परन्तु राजसिंहासन के पद अथवा उत्तराधिकार में कोई भी परिवर्तन अधिराज्यों की पार्लियामेण्टों की सहमति से ही हो सकता है जैसा कि १९३१ के वेस्ट मिन्सटर के परिनियम में निश्चित किया गया है। राज्य में कानून का कोई भी न्यायालय पार्लियामेन्ट के पास किये हुए किसी भी अधिनियम की वैधता पर सवाल नहीं उठा सकता। इस प्रकार वह अमरीकन कांग्रेस से अधिक शक्तिशाली है जो कि अमरीकन संघीय व्यवस्था में सीमित कानूनी शक्ति रखती है। इंगलैण्ड में न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) का कोई सिद्धान्त नहीं है। परन्तु पार्लियामेण्ट विधि शासन की अवहेलना करके नागरिकों के अधिकार नहीं छीन सकती। १९१४-१५ का साम्राज्य प्रतिरक्षा अधिनियम और १९२० का एमर्जेन्सी पावर्स एक्ट विशेष आपत्तियों से निबटने के लिये बनाये गये विशेष प्रविधान थे और आपत्तिकाल समाप्त होने के बाद रद्द कर दिये गये।

(२) ब्रिटिश पार्लियामेण्ट इस अर्थ में भी प्रभुता रखती है कि वह सब कानूनों को स्वीकृत करता है चाहे वह एक स्थानीय बांड उत्पन्न करने का साधारण विधान या टर्नपाइक बिल हो या वेस्टमिन्सटर के परिनियम, १९४७ के भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम या १९३६ के राज्यत्याग अधिनियम के समान कोई विधान हो। इस प्रकार वह "एक सामान्य विधायक समिति तथा एक प्रभुतासम्पन्न वैधानिक समिति" दोनों ही है। जहाँ तक पार्लियामण्ट की कानून बनाने की शक्ति का सम्बन्ध है इंगलैण्ड में साधारण कानून और संवैधानिक कानून में कोई अन्तर नहीं है। यदि पार्लियामेण्ट चाहे तो वह इंगलैण्ड में राजतन्त्र का उन्मूलन करके प्रजातन्त्र की घोषणा कर सकती है और एक साधारण नियम पास करने की प्रक्रिया से ही हाउस आफ लार्ड्स का

उन्मूलन कर सकती है। इस प्रकार की दूरवर्ती विधि निर्माण की शक्ति किसी भी अन्य विधान सभा को प्राप्त नही है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में संविधान मे कोई भी परिवर्तन (प्रेजीडेन्ट का कार्य-काल अथवा प्रेजीडेन्ट के समय से पहले मर जाने पर उसका उत्तराधिकार) संविधान के संशोधन से किया जा सकता है जिसके लिये संविधान ने यह प्रक्रिया निश्चित की है —

"जब कभी दोनो सदनों का दो तिहाई बहुमत आवश्यक समझेगा, कांग्रेस इस संविधान में संशोधन पस करेगी अथवा कुछ राज्यो की विधान सभाओ के दो तिहाई बहुमत के प्रार्थनापत्र देने पर एक संशोधन का प्रस्ताव करने के लिये एक सम्मेलन बुलायेगी जो कि, किसी भी मामले मे सब प्रयोजनों के लिये, कुछ राज्यो की तीन चौथाई विधान सभाओं द्वारा अथवा तीन चौथाई सम्मेलन द्वारा या कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित अनुमर्थन के अन्य तरीके से अनुसर्मथित होने पर, संविधान के एक भाग के रूप में बँध जाना जायेगा।"

न ही फ्रेन्च पार्लियामण्ट (चौथे जनतन्त्र में) को फ्रान्स का संविधान परिवर्तित करने का आदेश है। संविधान स्वय अपने संशोधन के लिये निम्नलिखित पद्धति स्वीकृत करता है —

"संशोधन राष्ट्रीय समिति को बनाने वाले सदस्यो के एक पूर्ण बहुमत से तय किया जाना चाहिये। प्रस्ताव संशोधन का उद्देश्य अनुबाधित (Stipulate) करता है। करीब तीन महीने बाद उसका उन्ही परिस्थितियों में एक द्वितीय वाचन होता है जब तक कि जनतन्त्र की कौंसिल जिसको राष्ट्रीय कौंसिल का प्रस्ताव निर्देशित किया गया है एक पूर्ण बहुमत से उसी प्रस्ताव को स्वीकार नही कर लेती। द्वितीय वाचन के बाद राष्ट्रीय एसेम्बली संविधान के संशोधन के लिये एक विधेयक का मसविदा तैयार करती है। यह विधेयक पार्लियामेण्ट के सामने पेश कर दिया जाता है और एक साधारण कानून के समान उस पर बहुमत लिया जाता है। जब तक कि वह द्वितीय वाचन में राष्ट्रीय एसेम्बली द्वारा दो तिहाई बहुमत से या प्रत्येक सदन में तीन चौथाई बहुमत से स्वीकृत न हो तब तक वह जनमत संग्रह के (Referendum) के लिये पेश किया जाता है।"

विधेयक के स्वीकृत हो जाने के आठ दिन के अन्दर प्रेजीडेन्ट उसको जारी कर देता है। परन्तु कौंसिल की सहमति अथवा जनमत संग्रह के बिना कौंसिल के अस्तित्व को छूने वाला कोई संशोधन नही किया जा सकता।

स्वीजरलैण्ड में एक संवैधानिक संशोधन एक जनमत से किया जा सकता है जिससे

कि अधिकतर कैन्टनों के बहुसंख्यक मतदाताओं और स्वीजरलैण्ड के बहुसंख्यक मतदाताओं द्वारा स्वीकृत हो जाने पर कानून पास हुआ माना जाता है।

संक्षेप में, एक आधुनिक अथवा जनतन्त्रीय संविधान वाले संसार के किसी भी देश में एक सवैधानिक कानून और एक साधारण कानून में अन्तर है और विधान सभा केवल साधारण कानून बना सकती है जबकि सवैधानिक कानून को विधान सभा से भिन्न संविधान में निश्चित एक समिति बनाती है। *केवल ब्रिटिश पार्लियामेण्ट को* ही सवैधानिक तथा साधारण विधिनिर्माण में असीम शक्ति प्राप्त है, यह उस पार्लियामेण्ट की प्रभुता की एक विशेषता है।

(३) निसन्देह पार्लियामेण्ट को कानूनी प्रभुता प्राप्त है परन्तु, वह मतदाताओं की अन्तिम और राजनैतिक प्रभुता के आधीन है जिसकी इच्छा ही अन्त में मानी जाती है। विरोधी जनमत के सन्मुख पार्लियामेण्ट किसी कानून को पास करने की हिम्मत नहीं कर सकती। यह जनमत समाचार पत्रों अथवा सार्वजनिक सभाओं में जाहिर होता है। हाउस ऑफ कॉमन्स के प्रत्येक चुनाव में अपने अभीष्ट उम्मीदवार को मत देकर मतदाता यथार्थ में राजनैतिक स्वोच्च सत्ता का प्रयोग करते हैं अत सदन से उन्हीं कानूनों के पास होने की आशा की जाती है जो या तो मतदाताओं द्वारा स्वीकृत हो चुके हों या उनके द्वारा अस्वीकृत न हुये हों।

(४) वास्तविक प्रक्रिया में सदन की विधिनिर्माण कमेटियाँ महत्वपूर्ण कार्य करती हैं। यदि विधेयक पर विचार करने वाली कमेटी विधेयक के किसी हिस्से या कुछ हिस्सों को अस्वीकृत करके उनके स्थान पर अन्य संशोधन पेश करती है तो सदन बाहर के जनमत को असंतुष्ट न करने के लिये कमेटी की सिफारिशें को मान लेती है।

(५) जब एक विधेयक पार्लियामेण्ट के सामने पेश होता है तब संगठनों अथवा अन्य प्रभावित समितियों की आलोचनाओं तथा प्रस्तावों का सदन के अन्तिम मत के निश्चय करने में बड़ा प्रभाव पड़ता है। अत यथार्थ व्यवहार में पार्लियामेण्ट किसी प्रस्तावित विधान से प्रभावित विभिन्न संस्थाओं और समितियों के द्वारा प्रकट होने वाले जनमत का बड़ा ध्यान रखती है जिससे कि उसके द्वारा पास हुआ अन्तिम कानून सार्वजनिक विरोध अथवा असन्तोष न उत्पन्न करे।

(६) यथार्थ व्यवहार में पार्लियामेण्ट की प्रभुता संयुक्त राज्य संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में ब्रिटेन की सदस्यता से उत्पन्न होने वाले कर्तव्यों से भी उन सब मामलों में सीमित होती है जिसमें कि ब्रिटिश सरकार ने कुछ वायदे किये हुये हैं। संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता ने प्रत्येक सदस्य राज्य की प्रभुता सीमित होती है और ब्रिटेन कोई अपवाद नहीं हो सकता। अत पार्लियामेण्ट को संयुक्त राष्ट्रसंघ अथवा

अन्य अन्तर्राष्ट्रीय सगठनो द्वारा निश्चित सिद्धान्तो अथवा निर्णयो को मानना पड़ता है। वह अपने क्षेत्र में अथवा अपने विधायक नियत्रण के क्षेत्र मे मानवीय अधिकारो का भग करने वाले अथवा दासता को वैध ठहराने वाले कानून नही बना सकती। उदाहरण के लिये अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन (आई० एल० ओ०) श्रमिको के काम करने के घटा आदि के बारे में कानून बनाने में पार्लियामेण्ट की प्रभुता को सीमित करता है।

सक्षेप मे, यह कहा जा सकता है कि यद्यपि कानून से पार्लियामेण्ट की सत्ता सर्वोच्च है परन्तु व्यवहारिक रूप में उसका इस प्रकार प्रयोग नही किया जाता। इसके दो कारण हैं। सबसे पहले, कार्यभार बढ जाने से पिछले कुछ सालो से मन्त्रियो की प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण (Delegated Legislation) की शक्ति बढ रही है सब प्रकार के स्थानीय सगठनो तथा निकायो को विशेष शक्तिया दी जा रही हैं। यद्यपि पार्लियामेन्ट किसी भी समय इस प्रत्यायुक्त शक्ति को वापस ले सकती है परन्तु यह लगभग असभव है कि कभी एसा होने की नौबत आय। और दूसरे, सरकार व विपक्ष प्रणाली से पार्लियामेण्ट के निरकुश व्यवहार पर बन्धन रहता है। यदि कोई पार्लियामेण्ट एसा करे तो उसको अगले चुनाव में मतदाताओ के हाथो भारी दण्ड भोगना पड़े।

यह है पार्लियामेण्ट की प्रभुता की सीमा और प्रकृति। इससे कोक और डी लाम की बात साफ साफ गलत जाहिर होती है। परन्तु यह तथ्य स्थापित होता है कि ब्रिटेन पार्लियामेण्ट की विधायक शक्तियाँ ससार की किसी भी अन्य विधान सभा से अधिक हैं।

पाठ्य-पुस्तकें

Adams, G. B.–Constitutional History of England (1934 edition)

Dicey, A.V.–The Law of the Constitution (9th Ed 1952)

Emden, Cecil S.–Select Speeches and Documents on the Constitution (World Classics, 2 Vol.)

Libert Sir, C.–Parliament. Its History, Constitution, Practice 1911).

Keith, A. B.–The Constitution, Administration and Laws of the Empire (1924)

Keith, A. B.–Speeches and Documents on Colonial Policy

Peole, A.–English Constitutional History, (XIX Edition).

अध्याय ७

पार्लियामेन्ट: संगठन और शक्तियाँ

"ससार में ऐसा कोई भी देश नहीं है जिनमें प्रत्येक पीढी का कानून में प्रबन्ध हो अथवा जिसमे राजनैतिक सस्थाये सामान्य बुद्धि अथवा सार्वजनिक नैतिकता का स्थान लेने योग्य सिद्ध हो सके।' —डी० टॉकविलि

'व्यवहार में सार्वजनिक प्रवृत्ति पर जोर डालना नहीं बल्कि उसका अनुगमन करना, समुदाय की सामान्य भावना को एक निर्देश, एक रूप, एक प्राविधिक पोशाक और एक विशिष्ट स्वीकृति देना ही विधान निर्माण का सच्चा उद्देश्य है। —बर्क

सदन की सदस्य सख्या—हाउस ऑफ कॉमन्स प्रथम सदन है। हालाकि निर्माण होने मे इसका दूसरा नम्बर है क्योंकि हाउस ऑफ लार्ड्स के स्थापित होने से बहुत समय पश्चात् इसका जन्म हुआ था। हाउस ऑफ कॉमन्स के सक्षिप्त इतिहास का हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं। सन् १२९५ ई० की मॉडल पार्लियामेण्ट (Model Parliament) मे जब नगरो व जिलो को प्रतिनिधित्व प्रारम्भ हुआ तभी से समय समय पर विधान मण्डल की बनावट बदलती रही है। एडवर्ड प्रथम के राज्यकाल मे कुल ७४ नाइट और २०० नागरिक पार्लियामेण्ट के सदस्य होते थे। इसके बाद इस सख्या मे घटती बढ़ती होती रही। सन् १३७८ ई० के लगभग हाउस आफ कॉमन्स एक प्रथक सस्था के रूप में एकत्रित होकर बैठने लगी। एडवर्ड तृतीय और लका-स्ट्रियन्स के समय में १८० बरो थे, हेनरी सप्तम के समय मे २०० बरो थे हेनरी अष्टम और चार्ल्स द्वितीय के समय मे बरो को शाही आज्ञा पत्र देकर १८० बरो जोड दिये गए, उसके बाद सन् १९३१ तक कोई नए बरो न बनाए गए। १७०७ में जब इगलैण्ड और स्काटलैण्ड का सयोजन हुआ तो हाउस ऑफ कॉमन्स के तत्कालीन ५१३ सदस्यों में स्काटलैण्डके ४५ प्रतिनिधि सदस्य और जुड गए। सन् १८८० ई० में आयरलैण्ड भी मिला लिया गया और उसके भी १०० प्रतिनिधि शामिल हो गये। सन् १९२८ ई० तक कॉमन्स के सदस्यो की सख्या ६७० थी पर उस वर्ष जो रिप्रेजेण्टेशन आफ पीपल ऐक्ट (Representation of People Act) अर्थात् लोक प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अधिनियम पास हुआ उसने यह सख्या ६१५ स्थिर कर दी गई जो सन् १९४५ तक चलती रही।

कामन्स में प्रतिनिधित्व—यह पहले ही से कहा जा चुका है कि १९४८ के रिप्रेजेन्टेशन आफ द पीपल एक्ट ने विश्वविद्यालयों का प्रतिनिधित्व समाप्त कर दिया

(जिससे विश्वविद्यालय क्षेत्रो के लोगो के दोहरे मत समाप्त हो गए) और इस प्रकार सदस्यता १२ रह गई। १९४९ के रिडिस्ट्रीब्यूशन ऑफ सीट्स एक्ट ने कामन्स की सदस्यता ६१५ निश्चित कर दी जो कि १९५० और १९५१ के चुनाव में कार्य रूप मे परिणित की गई। जब १९५३ मे पार्लियामेण्ट्री बाउण्डरी कमीशनो ने अपना कार्य शुरू कर दिया तब निर्वाचको की सख्या ५५,६७० निश्चित कर दी गई। इससे चुनाव क्षेत्रो की सख्या बढकर ६३० हो गई जो कि सन् १९५५ में कार्यरूप में परिणित की गई। सन् १८३२ से पहले हाउस ऑफ कॉमन्स साधारण जनता की सच्ची प्रतिनिधि न थी और जनता का मत नही प्रगट करती थी। इसम केवल कुलीन वर्ग के लोग या उनके मनोनीत किये हुए व्यक्ति ही भरे हुए थे। सन् १८३२, १८६७ और १८८४ मे तीन सुधारो ने मताधिकार को विस्तृत किया और सन् १९१८ के ऐक्ट ने लगभग वयस्क-मताधिकार ही दे डाला था। अर्थात् सब पुरुष जो छ महीने निवास कर चुके हो या व्यापार-भवनो में रहते हो या विश्वविद्यालय की उपाधि पाये हुए हो, वे मत दे सकते थे। ३० या ३० से अधिक आयु वाली स्त्रियों को भी इस ऐक्ट से मताधिकार प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त वरो और काउण्टी अर्थात् नगर वा ग्राम निर्वाचन क्षेत्रो मे एक समान मताधिकार कर दिया गया। इस ऐक्ट के द्वारा निर्वाचन-सम्बन्धी दूसरी कुछ महत्वपूर्ण बातें भी हुई—उदाहरण के लिये यह निश्चित कर दिया गया कि यदि कोई उम्मीदवार डाले हुए मतो की कुल सख्या के आठवे भाग से भी कम मत प्राप्त करेगा तो उसकी १५० पौंड की जमानत जब्त कर ली जायगी, कि इगलैण्ड मे प्रत्येक ७०००० मतधारको के लिए और आयरलैण्ड में ४३००० मतदाताओ के लिये एक प्रतिनिधि चुना जा सकता था। इसके १० वर्ष बाद सन् १९२८ का लोक प्रतिनिधित्व ऐक्ट पास हुआ। इस ऐक्ट के अनुसार सर्ववयस्क मताधिकार (Universal Adult Franchise) दे डाला गया और साम्पत्तिक योग्यता की शर्तें हटा दी गई। अब प्रत्येक वयस्क स्त्री पुरुष जो पहली जून को निर्वाचन क्षेत्र मे रहता हो, जो अपना नाम मतदाताओं की सूची मे लिखे जाने से पहले कम से कम ३० दिन तक वहाँ निवास करता रहा हो और निर्वाचन क्षेत्र में ही या उससे सम्बन्धित पार्लियामेण्टरी काउण्टी या बरो में तीन मास का समय व्यतीत कर चुका हो और राजा की आधीनता मानने वाली ब्रिटिश प्रजा हो। वह मतदान का अधिकारी है। 'ब्रिटिश प्रजा' का तात्पर्य उन सब लोगो से है जो कि जन्म से अथवा देशीकरण (Naturalisation) से ऐसे हो। इसमें केवल अंग्रेज ही नही आते बल्कि इगलैण्ड में रहने वाले कामन-वैल्थ के सब सदस्य आते हैं। व्यापार-भवनो में रहने वालो के लिये भवन की किराए से कम से कम १० पौंड वार्षिक आय होनी चाहिये। विश्वविद्यालय के निर्वाचन क्षेत्र में सब उपाधि-प्राप्त स्नातक मत दे सकते हैं। एक ही व्यक्ति एक सामान्य निर्वाचन मे दो

क्षेत्रों से मत नहीं दे सकता अर्थात् वह एक निर्वाचन-क्षेत्र में निवासाधिकार के बल पर और उसी समय दूसरे क्षेत्र में व्यापार या विश्वविद्यालय की मत योग्यता के आधार पर मत देने का अधिकारी नहीं हो सकता। कुछ वर्गों के लोगों को मतदान के अधिकार के अयोग्य घोषित कर दिया गया है। इनमें अपराधी, मूढ, बालक, विदेशी पीयर्स और सार्वजनिक संस्थाओं में पलने वाले निर्धन व्यक्ति आते हैं। जिनको चुनाव के समय में गलत साधन प्रयोग करने के कारण न्यायालयों से दण्ड मिल चुका हो उनका मताधिकार भी छीन लिया गया है।

निर्वाचन क्षेत्र व निर्वाचन दल—सन् १९४४ तक कॉमन्स के ६४० सदस्य इस प्रकार बंटे हुए थे इंगलैण्ड ४९२, वेल्स ३६, स्काटलैण्ड ७४, उत्तरी आयरलैण्ड १३। निर्वाचन क्षेत्रों की कुल संख्या ५९५ थी जिनमें से ५७६ तक एक प्रतिनिधि वाले क्षेत्र थे, १८ दो प्रतिनिधि चुनते थे और स्काटलैण्ड के विश्वविद्यालय मिल कर तीन प्रतिनिधि चुनते थे। द्वितीय महायुद्ध में जनसंख्या के निष्क्रमण (Migration) के कारण २० चुनाव क्षेत्रों में निर्वाचकों की संख्या प्रत्येक में १,००,००० से भी बढ़ गई। अतः अक्टूबर १९४४ में कामन्स सभा के रिडिस्ट्रीब्यूशन ऑव सीट्स ऐक्ट को शाही सम्मति दे दी गई जिससे २० निर्वाचन क्षेत्र ४५ में विभाजित हो गए। और सदन की संख्या अस्थायी रूप से ६४० तक बढ़ गई और जून १९४५ में चुनावों तक यही संख्या थी। सामान्य निर्वाचन क्षेत्र इस प्रकार बनाये गये हैं कि उनकी जन संख्या लगभग बराबर होती है। प्रत्येक में लगभग ५०,००० मतधारक होते हैं। सन् १९५० में ग्रेट ब्रिटेन में मतधारकों की संख्या इस प्रकार बँटी हुई थी। इंगलैण्ड २८,३७४,२८८ निर्वाचक और ५०६ पद, वेल्स १,८०२,३५६ निर्वाचक और ३६ पद, स्काटलैण्ड ३,३००,१९० निर्वाचक और ७१ पद। उत्तरी आयरलैण्ड के १२ पद थे। इन संख्याओं में स्त्रियों की संख्या पुरुषों की संख्या से कहीं अधिक है। क्योंकि इसका सन् १९२८ के बाद होने वाले निर्वाचनों के परिणाम पर बड़ा प्रभाव पड़ा है क्योंकि स्त्रियों की प्रवृत्ति राजनीति को संयत बनाने की होती है। सन् १९४९ में कॉमन्स की संख्या ६२५ कर दी गई है। १९४८ में डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ सीट्स ऐक्ट पास हो गया जिस के अनुसार विश्वविद्यालयों का विशेष प्रतिनिधित्व समाप्त हो गया और १९५४ से सदन की कुल संख्या ६३० निश्चित कर दी गई। उसी ऐक्ट ने दो सदस्यों के १५ निर्वाचन क्षेत्र समाप्त कर दिये। पहले निर्वाचन क्षेत्र अनियमित रूप से बनाये जाते थे जैसा भी और जब भी पार्लियामेण्ट का निर्देश होता, परन्तु १९४४ में स्थायी सीमा कमीशन नियुक्त किये गए और उनकी सिफारिश से १९४४ में निर्वाचन क्षेत्र निश्चित किये गए।

सीमा कमीशन और निर्वाचन क्षेत्र—कॉमन्स सभा के १९४४ के रिडिस्ट्री-

ब्यूशन ऑफ सीट्स ऐक्ट के अनुसार इगलैण्ड, स्काटलैण्ड, वैल्स और उत्तरी आयरलैण्ड मे चार सीमा कमीशन नियुक्त किये गए। निश्चित अवधियों पर निर्वाचन क्षेत्रो की जाच करने के लिये १९४९ और १९५८ के रिडिस्ट्रीब्यूशन ऑफ सीट्स के अनुसार ये कमीशन अब स्थायी रूप से काम करते है। १९४९ के ऐक्ट ने तीन साल का समय निश्चित किया था परन्तु १९५८ के ऐक्ट ने उसे दस साल तक बढा दिया। क्योकि आखिरी रिपोर्ट १९५४ मे पेश की गई थी अत. अगली रिपोर्ट १९६४ मे पेश की जायेगी परन्तु उनके १९६९ से पहले पेश होने की जरूरत नही है।

प्रत्येक कमीशन में पदेन (Ex-officio) सभापति के रूप में स्पीकर, उपाध्यक्ष के रूप में एक हाईकोर्ट का न्यायाधीश (स्काटलैण्डके कमीशन मे, सेशन्स कोर्ट का न्यायाधीश) और उपयुक्त मन्त्रियो द्वारा नियुक्त दो सदस्य (इगलैण्ड और वैल्स) के लिये गृह सचिव और गृह निर्माण व स्थानीय शासन का मन्त्री दोनो एक एक सदस्य नियुक्त करते है, और स्काटलैण्ड के लिये गृह सचिव चुनाव करता है। कमीशन का काम पार्लियामेन्ट के निर्वाचन क्षेत्रो के विस्तार की जाच करना है और ऐसे परिवर्तनो की सिफारिश करना है जो आबादी के परिवर्तनो से या अन्य कारणो से आवश्यक मालूम पडते हैं। १९४९ के एक्ट की द्वितीय अनुसूची मे दिए हुए और १९५८ के एक्ट द्वारा सशोधित पुनर्विभाजन के नियमो के अनुसार निर्वाचन क्षेत्रो की सख्या ६१३ से बहुत अधिक या बहुत कम नही होनी चाहिये जिसमे से स्काटलैन्ड के क्षेत्र ७१ से कम नही होने चाहिये वैल्स के ३५ से कम नही होने चाहिये और उत्तरी आयरलैंड के १२ से कम नही होने चाहिये। १९५३ मे की गई सबसे अर्वाचीन सिफारिश के अनुसार ६३० पदो का विभाजन इस प्रकार किया गया। इगलैंड ५११ स्काटलैंड ७१ वैल्स ३६ और उत्तरी आयरलैण्ड १२।

इगलैण्ड, स्काटलैण्ड और वेल्स की विभिन्न परिस्थितियो का विचार करते हुए १९५८ के एक्ट ने सयुक्त राज्य के प्रत्येक भाग के लिए अलग-अलग निर्वाचन सख्या नियुक्त की है। पुनर्विचार करने में कमीशन उन असुविधाओं को और स्थानीय सम्बन्धो के टूटने का ख्याल रखता है जो निर्वाचन क्षेत्र मे परिवर्तन से हो सकते है। जब कमीशन अस्थायी रूप से सिफारिशो को मजूर कर लेता है तब वह उनको प्रत्येक सम्बन्धित निर्वाचन क्षेत्र में प्रकाशित कर देता है और आक्षेपो को एक माल का समय देता है। उसमे एक स्थानीय जांच की आवश्यकता पडती है और यदि प्रभावित निर्वाचन के कम से कम १०० सदस्य उसकी माँग करते है तो जाँच अवश्य होनी चाहिये। उसकी अन्तिम सिफारिशें तब सदन सचिव अथवा स्काटलैण्ड के लिये राज्य-सचिव के सामने पार्लियामेंट की स्वीकृति पाने के लिए पेश कर दी जाती है उसके बाद सशोधनो के साथ या वैसे ही उन सिफारिशो को कार्यान्वित करने की आज्ञायें दे दी जाती है।

पार्लियामेन्ट की अवधि—सन् १६८८ की क्रान्ति के पूर्व सम्राट पर पार्लियामेंट के नियमपूर्वक बुलाने का मुश्किल से कोई बन्धक कहा जा सकता था, पर १६८९ के बिल आफ राइट्स (Bill of Rights) ने यह निश्चित कर दिया कि पार्लियामेंट प्रति वर्ष बुलाई जाय। स्टुअर्ट राजा पार्लियामेंट के बुलाने में बिल्कुल नियम परायण न थे और कभी कभी उन्होंने बिना किसी पार्लियामेंट के ही राज्य किया। सन् १६६४ के ट्रेनियल (Triennial) एक्ट ने प्रत्येक पार्लियामेंट की अवधि तीन वर्ष निश्चित कर दी। परन्तु सन् १७१५ मे जैकोबाइटो (Jacobites) की धूर्तता के डर से और निर्वाचन से हेनोवर राजवश की स्थिति के डावाँडोल हो जाने के भय से उदार (Whig) मंत्रिमंडल ने हाउस आफ लार्ड्स में एक विधेयक रखा जिसके दोनो सदनो द्वारा स्वीकृत हो जाने से पार्लियामेंट की अवधि बढ कर सात वर्ष हो गई। यह वृद्धि इसलिए भी आवश्यक समझी गई क्योकि सर जार्ज स्टील (Steele) ने १७१५ की सप्तवर्षीय योजना का समर्थन करते हुए कहा था, "त्रिवार्षिक विधेयक के स्वीकृत होने के पश्चात् देश मे बराबर झगडा व मतभेद चलता चला आ रहा है। त्रिवार्षिक पार्लियामेंट का सत्र (Session) पिछले निर्वाचनो से उत्पन्न वैमनस्य का प्रतिशोध करने के लिये अनुचित निर्णय करने में लग गया है। दूसरे सत्र (Session ने कुछ काम किया है, तीसरे सत्र में जो कुछ थोडा बहुत दूसरे सत्र म करने का इरादा किया गया था उसको पूरा करने में भी ढील ढाल पड गई है और होने वाले निर्वाचन के डर से सदस्य आँख बन्द करके अपने अपने सिद्धान्तो के दास बन गए और उन्ही की कसौटी पर प्रत्येक प्रश्न की अच्छाई बुराई की परख करने लग गये हैं। बाद मे एक बार फिर त्रिवार्षिक निर्वाचन की पुनःस्थापना का प्रयत्न किया गया। परन्तु १९११ के पार्लियामेंट एक्ट (Parliament Act) ने पार्लियामेंट की अवधि को सात वर्ष से घटा कर पाँच वर्ष कर दिया। यद्यपि उसी पार्लियामेंट ने सन् १९१६ में एक प्रस्ताव पास कर लिया जिससे इसने प्रथम महायुद्ध के संकट के कारण अपनी अवधि पाँच साल से—आगे बढा—ली। यह इसलिये उचित समझा गया क्योकि उस समय युद्ध जीतने के उपायो पर एकचित होकर ध्यान देने की आवश्यकता थी और उस एकचित्तता में निर्वाचन करके गडबड़ हो सकती थी। इस प्रकार इस समय पार्लियामेंट (अर्थात हाउस आफ कामन्स) की अवधि पाच वर्ष है। परन्तु यदि राजा किसी प्रधान मंत्री का मतदाताओं के सम्मुख अपनी योजनाओं को रखने का प्रयास स्वीकृत कर ले तो कभी-कभी इससे पहले ही उसका विघटन हो जाता है। नीचे लिखी सारिणी से यह प्रकट हो जायगा कि किस प्रकार एक के बाद दूसरी पार्लियामेंट निश्चित समय से पूर्व ही समाप्त हो गई—

		वर्ष	माह	दिन
१३ फरवरी, १९०६	१० जनवरी, १९१०	३	११	२४
१५ फरवरी, १९१०	२८ नवम्बर, १९१०	०	९	१३
३१ जनवरी, १९११	२५ नवम्बर, १९१८	७	९	२५
४ फरवरी, १९११	२६ अक्टूबर, १९२२	३	८	२२
२० नवम्बर, १९२२	१६ नवम्बर, १९२३	०	११	२७
८ जनवरी, १९२५	९ अक्टूबर, १९२४	०	९	१
२ दिसम्बर, १९२४	१० मई, १९२९	४	५	७
२५ जून, १९२९	२४ अगस्त, १९३१	२	१	२९
३ नवम्बर, १९३१	२५ अक्टूबर, १९३५	३	११	२२
२६ नवम्बर, १९३५	१५ जून, १९४५	९	६	२०
२१ जुलाई, १९४५	२ फरवरी, १९५०	४	६	१२
३ मार्च, १९५०	४ अक्टूबर, १९५१	१	७	२
जून, १९५५	— —	—	—	—

इससे यह मालूम होगा कि १२ पार्लियामेंट ४४ वर्ष ३ मास और २४ दिन चली जिसका औसत प्रत्येक पार्लियामेंट के लिये ३ वर्ष ८ मास और १० दिन आता है। प्रथम युद्धोत्तर काल में यह औसत तीन वर्ष से भी कम आता है। पर सर रिचार्ड ने १६९४ में त्रिवार्षिक पार्लियामेंट की जो आलोचना की थी वह अब लागू नहीं होती क्योंकि अब परिस्थिति बदल गई है और निर्वाचन ऐसी निश्चित पक्ष प्रणाली पर होते हैं कि पार्लियामेंट के बहुमत वाले पक्ष को अपना कार्यक्रम नये सिरे से प्रारम्भ करने की आवश्यकता नहीं है। उसका कार्य-क्रम पूर्व निश्चित रहता है। और सभी उनसे परिचित रहते हैं। इसके अतिरिक्त मंत्रिपरिषद् का पार्लियामेंट पर इतना प्रभुत्व रहता है कि पार्लियामेंट, परिषद् के विचारों का केवल समर्थन भर कर देती है। अब विधिनिर्माण पदासीन पदों की नीति के अनुसार निर्धारित हुआ करता है।

पार्लियामेंट का भंग होना और नये चुनाव—यदि सदन पांच वर्ष के साधारण समय तक चल चुका हो या मन्त्रिमंडल ने सदन का समय पूरा होने से पहले मतदाताओं से अपील करने का निश्चय कर लिया है तो पार्लियामेंट भंग कर दी जाती है। जब पार्लियामेंट में रानी लार्ड चान्सलर को इन निर्देशों के साथ आज्ञा देती है (१) दोनों शाही घोषणाओं पर शाही ग्रेट शील लगाना जिनमें से एक पार्लियामेंट को भंग करने के लिए है और दूसरी नई पार्लियामेंट को बुलाने के लिये और (२) चुनाव के लेखों को

जारी करना जो क्राउन इन चैन्सरी के क्लर्क के दफ्तर से जारी किये जाते हैं। लेख (Writ) जारी करने के सत्रहवें दिन को चुनाव के लिए निश्चित कर दिया जाता है। इस प्रकार यह दो सप्ताह का समय राजनैतिक पक्षों तथा उम्मीदवारों द्वारा अपने चुनाव प्रोपैगेन्डा में खर्च किया जाता है।

चुनाव समाप्त होने के बाद निर्वाचन क्षेत्र का चुनाव अधिकारी क्राउन के क्लर्क का लेख इस प्रमाण पत्र के साथ वापस कर देता है कि कौन उम्मीदवार चुना गया है। प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की भावना में परिवर्तन हो जाने के बाद भी चुनाव का यह पुराना रूप अब भी कायम रखा गया है। पुरानी व्यवस्था में लेख इस बात के लिये जारी किया जाता था कि एक उम्मीदवार पार्लियामेंट के चिन्तनों में भाग लेने और राय देने के लिये भेजा जाय। अब भी पार्लियामेंट का एक सदस्य औपचारिक रूप में इस्तीफा नहीं दे सकता। फिर भी, एक तरीका निकाला गया है जिससे वह कोई लाभप्रद परन्तु बिना वेतन का पद मंजूर कर लेता है जैसे (Chiltern Hundreds) का स्टीवर्ड पद जो कि उसे पार्लियामेंट में बैठने के अयोग्य बना देता है और तब फिर शीघ्र ही वह इस्तीफा दे देता है। कैसी अजीब पद्धति है।

पहले राजा पार्लियामेंट के किसी सदस्य को किसी लाभदायक पद का लालच दिखाकर अपने पक्ष में कर लेता था। इसके विरुद्ध सुरक्षा के लिये १७०५ के प्लेसमेंट एक्ट (Placement Act) ने यह निश्चित किया कि कोई भी लाभदायक पद पर आसीन व्यक्ति पार्लियामेंट का सदस्य नहीं बना रह सकता। यह बन्धन चलता रहा। सदस्यों को त्यागपत्र देने का अधिकार देने के अनेक प्रयत्न असफल हुए। परन्तु सदस्य का त्यागपत्र देने योग्य बनाने के लिये एक तरकीब निकाली गई जिसमें एक्स-चकर के चांसलर के पास चिल्टर्न हण्ड्रेड्स में स्टीवर्ड पद की नियुक्ति के लिये प्रार्थना पत्र देना पड़ता है। ये पहले बाकिंघम शायर में जमीन के तीन टुकड़े थे जो राजा के थे और जिनकी देखभाल के लिए स्टीवर्ड की जरूरत रहती थी। ये अब सुन्दर पार्कों में बदल दिये गये हैं। जिनकी देखभाल के लिये किसी स्टीवर्ड की जरूरत नहीं है। परन्तु उपरोक्त काम के लिये स्टीवर्ड का पद बनाये रखा गया है। उससे इस्तीफा आसानी से दिया जा सकता है और मंजूर हो जाता है।

मतदाता और मतदान—कामन्स सभा में चुनाव के लिये वयस्क मताधिकार है। किसी निर्वाचन क्षेत्र में रहने वाले सब स्त्री पुरुष जिनमें मत देने के सम्बन्ध में कोई अयोग्यता नहीं है और जो या तो ब्रिटिश प्रजा हैं (जिसमें कामनवेल्थ के सभी सदस्य राज्यों के सभी नागरिक शामिल हैं) या आयरलैंड के जनतन्त्र के नागरिक हैं। और या तो २१ वर्ष की आयु पूरी कर चुके हैं या चुनाव के बाद १५ जून तक पूरी कर चुकेंगे वे मत दे सकते हैं। रजिस्ट्री, काउन्टी, बरो या जिले के अधिकारी का वर्क

करता है। वह अपने कार्य क्षेत्र में सब गृहस्थों को एक स्टेन्डर्ड फार्म पर सब सूचनायें देने के लिये राजी करके सालाना पार्लियामेंटरी रजिस्टर बनाता है। इस प्रकार बनाई-गई मतदाताओं की अस्थायी सूची कौसिल के दफ्तरो, डाकखानों, सार्वजनिक पुस्तकालयो आदि में प्रकाशित कर दी जाती है। इनपर आक्षेपो व अधिकारों का समय ग्रेट ब्रिटेन में २८ नवम्बर से १६ दिसम्बर तक (उत्तरी आयरलैंड में ११ से २७ दिसम्बर तक) रहता है। जो कि रजिस्ट्रेशन अधिकारी द्वारा निश्चित किये जाते है और जिनके विरुद्ध काउन्टी न्यायालय में अपील हो सकती है। तब प्रत्येक वर्ष १५ फरवरी को अन्तिम रजिस्टर प्रकाशित कर दिया जाता है और १६ फरवरी से लागू हो जाता है।

जिनको मत देने का अधिकार नही है वे लोग ये है पियर (जो कि लार्ड स सभा के सदस्य है), अवयस्क (जो कि २१ वर्ष से कम आयु के है), विदेशी, विकृत मस्तिष्क के लोग जो पिछले पाच सालो मे कभी भी चुनाव के सिलसिले में भ्रष्ट या अवैध उपायों का प्रयोग करने के लिये दडित किए गए हो।

मतदाताओ के रजिस्टर मे दाखिल होने के लिए निवास की शर्त के अलावा कुछ व्यक्तियो को उनकी सेवाओं के कारण अन्य व्यक्ति के द्वारा अथवा इगलैण्ड मे रहने पर स्वय या डाक द्वारा वोट देने का अधिकार है। जो व्यक्ति सर्विस वोटरो की सूची में शामिल नहीं है परन्तु जो इस बात का प्रार्थना पत्र देते हैं कि उनसे अनुपस्थित मतदाताओ का सा व्यवहार किया जाय उन व्यक्तियों मे वे शामिल होते है जो कि —

१—अपने व्यवहार की सामान्य प्रकृति के कारण चुनाव के स्थान पर नहीं जा सक्ते।

२—जो अधेपन या किसी अन्य शारीरिक दोषो से युक्त है।

३—जो जल या वायु से यात्रा किये बिना अपने वोट देने के पते पर नही पहुँच सक्ते।

४—जो उस पते पर अब नही रहते जिससे उनको मत देने का अधिकार था। ये डाक से या कभी कभी किसी अन्य व्यक्ति द्वारा भी मत दे सकते हैं।

कामन्स सभा की निर्वाचन पद्धति—कामन्स सभा में वर्तमान निर्वाचन पद्धति को हम तीन शीर्षको के अन्तगत अध्ययन कर सक्ते हैं—(१)एक अभ्यर्थी का मनोनीत होना,(२)निर्वाचन प्रचार और (३) मतदान वा उसके परिणाम की घोषणा। जैसे ही पार्लियामेन्ट भग होती है—चाहे उसकी अवधि पूरी होने के कारण या प्रधानमत्री के प्रस्ताव की राजा द्वारा स्वीकृति के फलस्वरुप, प्रत्येक राजनैतिक पक्ष चुनाव लडने की तैयारी आरम्भ करता है। यहाँ यह बताना ठीक होगा कि प्रत्येक पक्ष का एक राष्ट्रीय सगठन होता है जिसकी शाखाएँ प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में होती है। प्रत्येक पक्ष की

सर्वोच्च राष्ट्रीय संस्था का पक्ष का कार्यक्रम और शासन नीति की रूप-रेखा स्थिर करती है और उसे अपनी शाखाओं को समझा देती है।

सदस्यों का मनोनीत होना—इसके पश्चात् अभ्यर्थियों के चुनने का महत्वपूर्ण कार्य आरम्भ होता है। प्रत्येक राजनैतिक पक्ष की स्थानीय शाखा अपने क्षेत्र में *सफलता की सबसे अधिक सम्भावना वाले व्यक्ति का नाम प्रस्तावित करके भेजती* है। ऐसे अभ्यर्थी के नाम का प्रस्ताव करने में स्थानीय संस्था उस व्यक्ति की लोकप्रियता, निर्वाचन-व्यय को सहने की शक्ति, पक्ष के प्रति उसकी सेवाएं और उसके व्यवस्थापक होने की योग्यता आदि पर खासतौर से विचार करती है। इन सब स्थानीय संस्थाओं द्वारा भेजे हुए नामों को राष्ट्रीय संस्था विधिपूर्वक स्वीकार करती है। यह आवश्यक नहीं है कि उम्मेदवार जिस निर्वाचन क्षेत्र से खड़ा हो वहां का निवासी भी हो। केवल यह जरूरी है कि उसे किसी न किसी क्षेत्र में मतदाता होने का अधिकार मिला हुआ होना चाहिये। परन्तु १९५७ के कामन्स डिसक्वालीफिकेशन एक्ट के अनुसार निम्नलिखित वर्ग के लोग कामन्स सभा में चुनाव के लिये नहीं खड़े हो सकते —

न्याय के पदों पर आसीन, सिविल सर्विसके स्थायी या अस्थायी सदस्य और कुछ स्थानीय सरकारी कर्मचारी, नियमित सेना के सदस्य, पुलिस के सदस्य सार्वजनिक सम्मतियों के सदस्य, सरकारी कमीशनों के सदस्य, किसी काउन्टी अथवा कामनवेल्थ के बाहर किसी प्रदेश की विधान सभा के सदस्य और राज्य द्वारा नियमित अन्य अनेक पदों के सदस्य।

प्रत्येक पार्लियामेंट में ऐसे बहुत से सदस्य होते हैं जो कि उन निर्वाचन क्षेत्रों से चुने जाते हैं जहां न वे रहते हैं और न कभी रहे हैं ये सदस्य अपनी सेवा *अथवा योग्यता के कारण यश प्राप्त कर लेते हैं और इसलिये सुदूर से चुन लिये जाते* हैं—उदाहरण के लिये ग्लैडस्टोन अपने लम्बे कैरियर में पांच निर्वाचन क्षेत्रों से चुना गया जहां वह कभी नहीं रहा था। क्षेत्र के १० रजिस्टर्ड मतदाताओं को निर्वाचन सम्बन्धी राजकर्मचारी से प्राप्त मनोनयम करने वाले पत्र पर उम्मीदवार (अभ्यर्थी) का नाम लिख कर हस्ताक्षर करना पड़ता है। उम्मीदवार के मनोनयम पत्र निर्वाचन अधिकारी को दे दिये जाते हैं जो या तो टाउन हाल या न्यायालय के स्थान पर या किसी अन्य सुविधाजनक स्थान पर पदों को ग्रहण करता है। चुनाव विज्ञप्ति के बाद किसी भी दिन १० बजे से सन्ध्या के ३ बजे तक (शनिवार को १० बजे से *दोपहर तक) परन्तु एक काउन्टी क्षेत्र में चौथे दिन से पहले नहीं और आठवें दिन से* बाद नहीं तथा एक बरो क्षेत्र में तीसरे दिन से पहले नहीं और सातवें दिन से बाद नहीं, एक उम्मीदवार मनोनयन के कुछ निश्चित समय के अन्दर स्वयं या अपने एजेन्ट

द्वारा प्रार्थना पत्र देकर अपना नाम वापस ले सकता है। मनोनयन पर आपत्तियो के बारे मे चुनाव अधिकारी निर्णय देता है। एक हो निर्वाचन क्षेत्र से कितने ही उम्मीदवार खडे हो सकते है पर प्रत्येक उम्मीदवार को १५० पौंड प्रतिभूति (सीक्यूरिटी) के रूप में देने पडते है जो उस निर्वाचन क्षेत्र में पडे हुए मतो का आठवाँ भाग प्राप्त न होने पर जब्त कर लिये जाते है। प्रत्येक चुनाव मे बहुत से अभ्यर्थी अपनी प्रतिभूति जब्त करा बैठते है। १९४५, ५० व ५१ के चुनावो मे जब्त होने वालो की सख्या क्रमश १८१, ४६१, और ९६ थी।

पक्ष के बडे बडे नेता ऐसे क्षेत्रो मे खडे किये जाते है जहाँ उस पक्ष का प्रभाव सबसे अधिक होता है और उसके उम्मीदवारो की जीत निश्चित कही जा सकती है, क्योंकि इस बात का ध्यान रखना पडता है कि पक्ष के उन नेताओ की हार न हो जिनका पार्लियामेंट मे होना आवश्यक है। इन क्षेत्रो को उस पक्ष के सुरक्षित स्थान (Safe Seat) कह कर पुकारा जाता है। अधिकतर क्षेत्रो मे तीनो बडे बडे पक्ष अपना एक एक उम्मीदवार खडा करते है, इनके अतिरिक्त छोटे छोटे पक्ष कुछ क्षेत्रो मे अपने उम्मीदवार खडे करते है। स्वतन्त्र उम्मीदवार जो किसी पक्ष के सदस्य नही होते, उन निर्वाचन क्षेत्रो मे खडे होते है जिनके निवासियो पर उनका अपनी पहली सेवाओ के कारण इतना प्रभाव है कि उन्हे उनका बहुमत पाने की आशा रहती है।

चुनाव आन्दोलन—उम्मीदवारो के नाम निर्देशन होने से पूर्व ही राजनैतिक पक्ष अपने अपने प्रचार में लग जाते है। जब उम्मीदवार का नाम निर्देशन हो चुकता है तब राजनैतिक पक्ष अपने प्रचार मे तीव्रता लाते है। यह प्रचार अनेको तरह से किया जाता है और जनता पर अपना प्रभाव डालने व उनकी रुचि अपनी ओर करने के लिये जितने भी साधन हो सकते है वे सब अपनाये जाते है। सभाएँ की जाती है, पर्चे बाँटे जाते है, समाचार पत्रों में, रेडियो पर, यहाँ तक कि थियेटरो और सिनेमाओ में भी यह प्रचार किया जाता है। इस प्रचार मे जनता के सामने प्रत्येक पक्ष अपना कार्यक्रम रखता है और यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि विपक्षी पक्ष के कार्यक्रम व नीति से उनका कार्यक्रम व नीति क्यों उत्तम है और किस प्रकार राज्यशक्ति उसके हाथ मे आने से वह अपने कार्यक्रम के द्वारा जनता को सुखी और देश को समृद्धिशाली बना सकता है। सारे देश मे निर्वाचन के कारण एक हलचल उत्पन्न हो जाती है क्योकि इसी समय भविष्य में अपनाई जाने वाली शासन नीति को विचारो के सघर्ष द्वारा परख कर जनता नया रूप देती है। जिस दिन निर्वाचन होता है उस दिन तो चारो ओर कोलाहल व उत्तेजना रहती है। निर्वाचन का समय प्रातःकाल ९ बजे से रात के नौ बजे तक है। मतदाता निश्चित स्थान पर जाकर अपना गूढ शलाका (Secret Ballot) पर देते है। सेवा में लगे निर्वाचक या अनुपस्थित निर्वाचक किसी अन्य

व्यक्ति द्वारा या डाक द्वारा अपना मत देते है।

चुनाव का खर्चा—एक स्वतंत्र और जनतंत्रीय चुनाव में पक्ष और अभ्यर्थी को भारी खर्चा करना पड़ता है। भ्रष्ट उपायो को निरुत्साहित करने के लिये चुनाव के नियमो में धन की अधिकतम राशि निश्चित कर दी जाती है जो कि एक अभ्यर्थी अपने चुनाव पर खर्चा कर सकता है। यह अधिकतर राशी इगलैण्ड में समय समय पर बदलती रहती है। जुलाई १९४८ में निश्चित वर्तमान सीमा इस प्रकार है काउन्टी के चुनाव में ४५० पौंड तथा प्रति मतदाता को दो पैन्स, बरो के चुनाव में ४५० पौंड और डेढ पैन्स प्रति मतदाता। यह सबसे पहले सन् १९५० के चुनावो में लागू किया गया। औसतन प्रत्येक उम्मीदवार ने ६३० पौंड खर्च किया ग्रेट ब्रिटेन के सब पक्षो का कुल खर्च क्रमश १९५० और १९५० के चुनावो के लिये १,१६०, ३३० और ९३७, ५२३ पौंड था।

१९१८ से पूर्व प्रत्येक क्षेत्र के लिये चुनाव अधिकारी (Returning Officer) ही चुनाव का दिन निश्चित करते थे। इसका परिणाम यह होता था कि चुनाव करीब एक सप्ताह तक होते रहते थे। इस प्रणाली के अपने दोष है, एक क्षेत्र के परिणाम से दूसरे क्षेत्र के चुनावो पर असर पडता है। अत १९१८ के एक्ट से सारे देश के लिए चुनावो का एक ही दिन निश्चित कर दिया गया। यह मनोनयन का नवाँ दिन होता है।

निर्वाचन के फल की घोषणा—जैसे ही मतदान कार्य समाप्त हो जाता है, अभ्यर्थियो या उनके एजेन्टो की उपस्थिति में मतो की गिनती करने का काम इस प्रकार आरम्भ होता है जिससे बैलट गुप्त रहे। जो उम्मीदवार सबसे अधिक मत अपने पक्ष में प्राप्त करता है वही निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है। थोडे से मतो से हारा हुआ अभ्यर्थी आमतौर से वोटो की दुबारा गिनती कराता है और चुनाव अधिकारी उसको आज्ञा दे देता है। ऐसा निश्चय करने में इस बात को कोई महत्व नही दिया जाता कि इन मतो की कुल संख्या का कौन सा भाग है।

इस प्रणाली को अपेक्षाकृत मताधिक्य (Relative Majority System) कह कर पुकारा जाता है क्योकि इस प्रणाली में केवल यही बात ऐसी देखी जाती है कि जिस उम्मीदवार को सबकी अपेक्षा अधिक मत मिले वही निर्वाचित हो। इस प्रणाली में यह दोष है कि इसके आधार पर सगठित किया हुआ विधान मण्डल (Legislature) लोकमत को ठीक प्रकार से प्रदर्शित नहीं करता क्योकि जिस निर्वाचन क्षेत्र में दो से अधिक उम्मीदवार एक ही स्थान के लिये खडे हुए हो वहाँ यह सम्भव है कि विजयी उम्मीदवार के पक्ष में कुल मतो का *अधिक्य न हो अर्थात्* जितने मत पडे उनके आधे से अधिक मत उसे न मिलें और फिर भी वह निर्धारित हो जाय क्योकि अपेक्षाकृत उसके

पक्ष मे पड़े हुए मतो की सख्या दूसरो के पक्ष मे पड़े मतो की सख्या से अधिक है।

हो सकता है कि पार्लियामेण्ट का एक सदस्य सच्चा प्रतिनिधि न हो— उदाहरण के लिए हम यह मान लेते हैं कि किसी निर्वाचन क्षेत्र में एक स्थान के लिये चार उम्मीदवार क, ख, ग और घ खड़े होते हैं क को १५०००, ख को १४९००, ग को १४५०० और घ को ५१००, मत मिलते हैं। सौ मतो के अपेक्षाकृत आधिक्य के कारण क निर्वाचित हो जायगा और वह सब मतदाताओ का प्रतिनिधि करेगा जिसमे कि वे ३४५०० मतदाता भी शामिल है जिन्होंने उसके विरुद्ध मत दिया है। इससे स्पष्ट होता है कि ऐसे निर्वाचित सदस्य जनता के सच्चे प्रतिनिधि नही कहे जा सकते क्योंकि वे बहुमत का प्रतिनिधित्व नही करते। अधिकतर क्षेत्रो में दो या तीन उम्मीदवार खड़े होते है। जब तीन उम्मीदवार खड़े होते हैं तो इस बात की बहुत कुछ सम्भावना है कि जनता को अपनी पसन्द का उम्मीदवार चुनने के लिये मिल जाय हालांकि तब भी हो सकता है कि जो उम्मीदवार निर्वाचको के समान सबसे अधिक विचार रखता हो वह दूसरी बातो में वांछनीय न हो और पार्लियामेंट का सदस्य बना कर भेजे जाने के लिये अयोग्य हो या किसी एक विषय में उसका दृष्टिकोण, निर्वाचको के दृष्टिकोण से अत्यन्त प्रतिकूल हो। जहाँ दो ही व्यक्तियो में से एक को चुनना है वहाँ ऐसे बहुत से मतदाता होंगे जो उन दोनों में किसी को पसन्द नही करते हो, उदाहरण के लिये शायद उनमें से एक समाजवादी और दूसरा सरक्षणवादी (Protectionist) हो, और सम्भव है कोई निर्वाचक यह समझता हो कि समाजवाद और सरक्षणवाद दोनो ही देश का अहित करेंगे। ऐसी दशा मे यदि वह इनमें से एक को भी अपना मत दे तो वह उसके मत का प्रतिनिधित्व न करेगा, और वह उस बात का समर्थन करेगा जिसका वह जबर्दस्त विरोधी है। प्रश्न उठता है कि ऐसी स्थिति में वह क्या करे? उसके सम्मुख दो उपाय हैं, या तो वह किसी को मत न दे और अपने मताधिकार को व्यर्थ होने दे या उन दोनों में से अपेक्षाकृत अधिक वाछनीय को अपना मत दे। प्राय वह दूसरा उपाय ही काम में लाता है। पर उसका परिणाम यह होता है किसी भी निर्वाचित व्यक्ति के सम्बन्ध मे यह नही कहा जा सकता कि उसने जो बहुमत प्राप्त किया है वह वास्तव म बहुसख्यक निर्वाचको की वास्तविक इच्छा का प्रतीक है। यह बात सामूहिक रूप मे सारे राष्ट्र के लिये लागू हो सकती है और यह निश्चय पूर्वक नही कहा जा सकता कि लोक- सभा जनता की वास्तविक इच्छा का प्रतिनिधित्व करती है।

यह बात सन् १९२२ नवम्बर में हुए सामान्य निर्वाचन से स्पष्ट हो जायेगी यहाँ केवल चार निर्वाचन क्षेत्रों के मतो के आँकड़े दिये जायेंगे —

ड्यूजबॅरी

उम्मीदवार का नाम	दल का नाम	मतो की सख्या
रीले, बी	लेबर	८,८२१ निर्वाचित
हारवे, टी० ई०	लिबरल	८,०६५
पीक, ओ०	यूनियनिस्ट	६,७७४

हड्सफील्ड

मार्शल	लिबरल	१५,८७९ निर्वाचित
हडसन	लेबर	१५,६७३
साइक्स	नेशनल लिबरल	१५,२१२

केन्ट मेडरटोन

बेलेअर्स	यूनियनिस्ट	८,९२८ निर्वाचित
ब्लैक	लिबरल	८,८९५
डाल्टन	लेबर	८,००४

पोर्ट्समाउथ सेंट्रल

प्रीवेट	यूनियनिस्ट	७,६६६ निर्वाचित
फिशर	नेशनल लिबरल	७,६५९
ब्रैम्सडन	लिबरल	७,१२९
गोर्ड	लेबर	६,१२६

उपर्युक्त प्रत्येक क्षेत्र में निर्वाचित व्यक्ति को कुल मतो का बहुत थोडा अश ही प्राप्त हुआ और फिर भी वह जनता का प्रतिनिधि घोषित कर दिया गया।

जनता की इच्छा की विकृति--अन्त में अग्रेजी निर्वाचन प्रणाली में एक दूसरी तरह से भी लोकमत की विकृत हो जाती है। जब तीन राजनैतिक पक्ष निर्वाचन में खडे हो तो यह सम्भव हो सकता है कि कोई दल गिनती में सब से अधिक मत अपने पक्ष में प्राप्त करे पर फिर भी हाउस ऑफ़ कामन्स में एक भी स्थान उसको न मिल पावे। यह उस अवस्था में सम्भव है जब कि उस पक्ष के उम्मीदवार अधिकतर क्षेत्रो में मतो की थोडी थोडी कमी के कारण हार जाय और किसी दल किन्ही क्षेत्रो में बहुत कमी के कारण हार जाय और दूसरो में थोडी अधिकता के कारण जीत जाय ऐसा होने पर यह हो सकता है कि जो राज- नैतिक पक्ष सारे देश की दृष्टि में रखते हुए अल्प-सख्यक हो वह हाउस आफ कामन्स में बहुमत प्राप्त कर ले। प्रथम महायुद्ध के पश्चात् दो बार ऐसा हो चुका है। इसलिये निर्वाचन एक जुआ है जिसमें बहुत कुछ भविष्य पर छोडना पडता है। इस अनिश्चितता से राष्ट्रीय-जीवन व शासन-नीति पर बडा अहितकर प्रभाव पडता है।

उदाहरण के लिये सन् १९१८ का निर्वाचन लीजिये। उस समय मिली जुली सरकार ने युद्ध विजय के भारी प्रयास के बाद जनता से समर्थ की प्रार्थना की। उसने इस निर्वाचन में अपने विपक्षी दल को करारी हार दी क्योकि हाउस ऑफ कॉमन्स में विपक्षी दल के १३० स्थानो के मुकाबले में इसको ४७२ स्थान मिले। फिर भी हिसाब लगाने से यह पता लगा कि विजयी पक्ष को डाले हुए मतो के केवल ५२ प्रतिशत मत प्राप्त हुए और विपक्षी दल को ४८ प्रतिशत। यदि प्राप्त हुए मतो के अनुपात से इन दोनो पक्षो को हाउस ऑफ कॉमन्स में स्थान दिये जाते तो सरकार का बहुमत ३४२ स्थानो से न होकर केवल ३० मतो से होता।

सन् १९२२ में मिली जुली सरकार के भग होने पर एक के बाद एक तीन निर्वाचन थोडे थोडे समय के पश्चात् हुए, पहला १९२२ में दूसरा १९२३ में और तीसरा १९२३ में। सन् १९२२ के निर्वाचन मे अनुदार पक्ष को ३४७ स्थान मिले। जो विपक्षी दलो के कुल प्राप्त स्थानो से सख्या में ७९ अधिक थे। फिर भी उन्हे कुल डाले हुए मतो के ३७ प्रतिशत मत ही प्राप्त हुए, उदार पक्ष को २८.५ प्रतिशत और श्रम पक्ष को २९.५ प्रतिशत मिले। सबसे बहुसख्यक पक्ष होते हुए भी अनुदार पक्ष को बचे हुए दोनो पक्षो के सयुक्त स्थानो से अधिक सख्या मे स्थान न मिलने चाहिये थे। इस सम्बन्ध में अधिक स्पष्ट करने के लिये कुछ आँकडे नीचे दिये जाते हैं —

विश्वविद्यालयो को छोडकर वे क्षेत्र जहाँ निर्वाचन लडा गया—

दल	मतो की सख्या	जीते हुए स्थान	मतो के अनुपात से स्थान	प्रति स्थान मतो की सख्या
कन्जरवेटिव	५,३८१,४३३	२९६	२०८	१८,१८०
लेबर व कोआपरेटिव	४,२३७,४९०	१३८	१६४	३०,७०६
लिबरल	२,६२१,१६८	५४	१०१	४८,५४०
नेशनल लिबरल	१,५८५,३३७	५१	६१	३१,०८५
स्वतत्र व दूसरे	३३७,४४३	८	१३	४२,१८०
कुल	१४,१६२,८७१	५४७	५४७	

इन आँकडो से यह स्पष्ट है कि उदार पक्ष को बहुत हानि उठानी पडी, उनके बाद स्वतत्र और श्रमपक्ष को अनुदार पक्ष को इन सबकी हानि से बहुत लाभ हुआ। इस प्रकार जो हाउस आफ कामन्स बना उससे यह ठीक ठीक पता न लग सकता था कि भिन्न भिन्न पक्षो को जनता का विश्वास किस मात्रा में प्राप्त है।

पक्षो की विषय शक्ति—सन १९२३ का निर्वाचन सरक्षण (Protection)

के प्रश्न पर लड़ा गया परन्तु अन्य दोनो पक्षो ने सरकार का समान रूप से विरोध किया। अनुदार पक्ष को पहले के समान ही ३८ प्रतिशत मत प्राप्त हुए पर निर्वाचन प्रणाली की कुछ ऐसी अव्यवस्था है कि अब की बार उन्हे ९० स्थान कम मिल पाए जिनमे सब विपक्षी पक्षों के स्थानों के मुकाबिले में उनके १०० स्थान कम रहे। फिर भी उन्होंने मतो की सख्या के अनुपात से २४ स्थान अधिक पाये और उदार पक्ष को २४ स्थान कम मिले। जिस प्रश्न पर यह निर्वाचन लड़ा गया उसके होते हुए अनुदार पक्ष को मन्त्रिमडल से निकलना ही पड़ता, इसलिए श्रम पक्ष ने मन्त्रिमडल बनाया। इगलैण्ड की पार्लियामेंट के आधुनिक इतिहास में वह पहला उदाहरण था जब अल्प मत वाले पक्ष ने शासन सत्ता को अपने हाथ में सभाला हो।

सन १९२४ के निर्वाचन में उदार पक्ष की हार आश्चर्यजनक थी, और उनको केवल ४२ स्थान ही मिल सके जहा पहले उनको १०८ स्थान प्राप्त थे। यदि मतो के अनुपात से स्थान मिलते तो अब भी उनको ये १०८ स्थान मिल सकते थे क्योकि उन्हे कुल मतो के १७ प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। इसके विपरीत अनुदार पक्ष को ४१० स्थान मिले जबकि उन्हे कुल के ४७ प्रतिशत मत ही प्राप्त हुए थे और मतो के अनुपात से केवल २८९ स्थान ही मिल सकते थे। सन् १९२९ में श्रम पक्ष को २८८ स्थान मिले जब कि मतो के अनुपात से उन्हे २२४ स्थान ही मिल सकते थे क्योकि उनके मतो की सख्या केवल ३६ प्रतिशत ही थी। इन दोनो निर्वाचनो के आंकड़े इस प्रकार है:-

१९४२

दल	(मतो की सख्या)	प्राप्त स्थानों की सख्या
कन्जरवेटिव	७,४५१,१३२	४१२
लिबरल	३,००८,४७४	४६
लेबर	५,४८४,७६०	१५१
	१९२९	
कन्जरवेटिव	८,६५६,६३९	२५६
लिबरल	५,३०९,४२६	५९
लेबर	८,३८५,३०१	२८८

१५ नवम्बर सन् १९३५ में निर्वाचित हाउस आफ कामन्स भी इसी प्रकार की निर्वाचन की अव्यवस्थायें थीं जो नीचे दिये आंकडो मे स्पष्ट है —

दल का नाम	मतो की सख्या	स्थानो की सख्या
कन्जरवेटिव	१०,४९६,०००	३७५
नेशनल लिबरल	८६६,०००	३३
नेशनल लेबर	३४०,०००	७

दल का नाम	मतो की संख्या	स्थानों की सख्या
नेशनल (सरकार)	९७,०००	५
लेबर	८,४६५,०००	१६८
लिबरल	१,४३३,०००	१९
दूसरे	३०२,०००	८

यद्यपि १९२५ में जो सरकार बनी वह अपने आपको राष्ट्रीय अर्थात् ऐसी सरकार कहती थी जो राष्ट्र के सब पक्षो का प्रतिनिधित्व करती हो, पर उसमें अनुदार पक्ष के इतने मत्री थे कि वह अनुदार सरकार ही कही जा सकती थी। इस सब-विवरण से यह स्पष्ट हो जायेगा कि दो पक्ष प्रणाली के समाप्त होने पर जब बहुपक्ष प्रणाली (Multiparty system) का जन्म हुआ तो एक प्रतिनिधि निर्वाचन क्षेत्रो में अपेक्षाकृत मताधिक्य पद्धति से चुना हुआ हाउस आफ कामन्स सच्चे रूप में जनता का प्रतिनिधि न रह गया।

निम्नलिखित तालिका १९२९ के पक्षीय चुनाव की प्रकृति दिखलाता ह —

सामान्य चुनाव का साल	अभ्यर्थियों की सख्या के साथ पद: एक	दो	तीन	चार	पाँच	छ.	अभ्यर्थियो की कुल सख्या वाले	एक अभ्यर्थी कुल पद	प्रतिपद अभ्यर्थियो की सख्या
१९३१	५४	४०९	९९	१४	—	—	१,२२५	५७६	२१०
१९३५	३४	३८९	१४०	७	—	—	१२७८	५७६	२.१९
१९४५	३	२५९	२९१	४२	६	—	१५९२	६०१	२६२
१९५०	२	११३	४०५	१००	५	—	१,८६८	६२५	२९९
१९५१	४	४९५	१२२	४	—	—	१,३७६	६२५	२.२०

बहुसख्या मतदाताओं का मताधिकार से वचित होना—*युद्धोत्तर १९१८ के निर्वाचन का विश्लेषण कठिन होते हुए भी शिक्षाप्रद है क्योंकि उससे यह प्रकट होता है कि ब्रिटिश निर्वाचन प्रणाली में बहुसख्यक व्यक्ति अपने मताधिकार के लाभ से वचित रह जाते हैं।* यदि हम उन व्यक्तियो की सख्या गिनें जो अपने क्षेत्र में केवल एक ही उम्मीदवार के खडे होने के कारण अपने मताधिकार का उपयोग ही न कर सके, वह उनकी जिनका प्रतिनिधि निर्वाचन मे हार गया और उसके लिये दिया हुआ मत व्यर्थ हो गया व उनकी सख्या जिन्होंने अपने मत का उपयोग ही नही किया क्योंकि उनको कोई ऐसा उम्मीदवार न मिला जिसकी नीति का वे समर्थन करते और उनकी सख्या गिनें जिन्होने बेमन से अपना मत ऐसे उम्मीदवार को दिया जो उनके विचारो का प्रतिनिधित्व न करता था पर दूसरो से अधिक अनुकूल था तो यह पता लग जायगा कि लगभग ७० प्रतिशत मतदाता ऐसे होंगे जो अपने मत का प्रभाव शासन सगठन

पर न डाल सके होंगे या जिन्होंने ऐसी नीति का समर्थन कर दिया होगा जिसके वे विरोधी हैं।

निर्वाचन की इन अन्यायों और असंगतियों को दूर करने के लिये इंगलैंड में कई सुधार के सुझाव उपस्थित किये गये और दूसरे देशों में इन सुधारों का कार्यान्वित भी किया गया पर इंगलैण्ड में अनुदार और श्रम इन दो बड़े पक्षों ने इन सुधारों पर अधिक ध्यान नहीं दिया है क्योंकि इनमें से प्रत्येक यह सोचता है की शायद पुरानी पद्धति के चलते रहने में ही उनका लाभ है। प्रत्येक यह आशा लगाये बैठा है कि उदार पक्ष कुछ दिनों में लोप हो जायगा और उसका स्थान उसी को मिलेगा।

निर्वाचन प्रणाली के दोष निवारक सुझाव—निर्वाचन प्रणाली के इन दोषों को कई उपायों से दूर किया जा सकता है जैसे अनुपाती प्रतिनिधित्व प्रणाली (Proportional representation) या द्वितीय शालाका (Second ballot) प्रणाली। द्वितीय शालाका प्रणाली में यदि किसी क्षेत्र से किसी भी उम्मीदवार को सब विपक्षी दलों के कुल मतों से अधिक मत न मिले, तो दूसरी बार निर्वाचन होता है, जिसमें पहले निर्वाचन के सबसे पहले दो अभ्यर्थी (उम्मीदवार) खड़े होते हैं और इस दूसरे निर्वाचन में इन दोनों में से जिसको अधिक मत प्राप्त होते हैं वही प्रतिनिधि घोषित कर दिया जाता है। अनुपाती प्रतिनिधित्व प्रणाली के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न सुझाव भिन्न भिन्न अंश में सफलता के साथ प्रजातंत्रीय जर्मनी, बेलजियम, हालैण्ड, डेनमार्क, नार्वे, स्विटजरलैण्ड व स्वतंत्र आयरिश राज्य में प्रयुक्त हो चुके हैं। इंगलैंड में पार्लियामेंट के सदस्यों का निर्वाचन में इस प्रणाली का प्रयोग नहीं किया गया क्योंकि इस प्रणाली की अच्छाई स्वीकार करते हुए भी अंग्रेजों की यह धारणा है कि मानव क्षेत्र में तर्क या विज्ञान सच्चा पथ प्रदर्शक सिद्ध नहीं होता। उनका कहना है कि यदि यह प्रणाली दूसरे देशों में सफल सिद्ध हुई है तो यह आवश्यक नहीं कि इंगलैण्ड में भी यह लाभदायक सिद्ध होगी।

एकल संक्रमणीय मत-प्रणाली (Single Transferable Vote System) इंगलैण्ड की अनुपाती प्रतिनिधिक प्रणाली की समर्थक संस्था के सदस्य आजकल एकल-संक्रमणीय मत प्रणाली को समस्या का एक सुझाव मानते हैं। यह प्रणाली अनुपाती प्रणाली की ही एक पद्धति है। इस पद्धति से इंगलैण्ड के वर्तमान दो या अधिक एकप्रतिनिधिक क्षेत्रों को आपस में मिला कर कुछ इस प्रकार के बड़े बड़े निर्वाचन क्षेत्र बना दिये जायगे कि प्रत्येक बड़े निर्वाचन क्षेत्र में कम से कम तीन और अधिक से अधिक सात अभ्यर्थी (उम्मीदवार) चुने जा सकें। एक निर्वाचनक्षेत्र में सदस्यों की संख्या कितनी भी क्यों न हो, प्रत्येक मतदाता को एक ही मत देने का अधिकार होगा परन्तु वह सब उम्मीदवारों के नाम के सामने अपनी रुचिपूर्वक

१-२-३-४, आदि संख्या लिख देगा। यदि पहली पसन्द के उम्मीदवार को उस मतदाता के मत की आवश्यकता न हुई और वह उसके मत पाने से पहले ही निश्चित मतों की संख्या पा चुकने से निर्वाचित हो गया या उसके निर्वाचित होने की आशा ही नहीं है तो वह मत उसकी पसन्द के दूसरे उम्मीदवार को और यदि आवश्यक हो तो तीसरे आदि को दे दिया जायगा। मतदाता का मत किसी प्रकार भी व्यर्थ नहीं जायगा। वह किसी न किसी उम्मीदवार को निर्वाचित करने में उपयोगी सिद्ध होगा। इस प्रणाली की विशेषता यही है कि कोई भी मत व्यर्थ नहीं जाता। यदि कोई कठिनाई है तो वह गिनने की, पर उनसे मतदाता को कोई कष्ट नहीं होता। *गणना में पहले यह स्थिर करना पड़ता है कि निर्वाचित होने के लिये प्रत्येक उम्मीदवार को कम से कम कितने* मत मिलने चाहिये। प्रतिनिधियों की संख्या व दाताओं की संख्या मालूम होने पर इसका निकालना बहुत सरल है। इस प्रणाली से वर्तमान प्रणाली की अपेक्षा लोकमत का अधिक सच्चा परिचय मिलता है। इससे प्रत्येक मतदाता को अनेक अभ्यर्थियों में अपनी पसन्द करने की वास्तविक स्वतन्त्रता मिल सकती है।

निर्बन्धनीय और एकत्रीभूत मत (Restrictive and Cumulative vote)—अनुपाती प्रणाली की दूसरी दो पद्धतियाँ निर्बन्धनीय मत-पद्धति और एकत्रीभूत मत पद्धति हैं। जिनकी परीक्षा की जा सकती है। इन दोनों के लिये भी बहुप्रतिनिधिक निर्वाचन क्षेत्र होने चाहिये पर पहली पद्धति में मतदता को नर्वाचित होने वाले प्रतिनिधियों की संख्या से कम संख्या में मत देने का अधिकार होता है। जब कि दूसरी जितने प्रतिनिधि चुने जाने वाले हैं उतने ही मत देने का अधिकार होता है पर उसे इस बात की स्वतन्त्रता रहती है कि वह अपने सब मत केवल एक ही उम्मीदवार को दे दे या उनको सब में बाँट दे। यह मानना पड़ेगा कि अनुपाती प्रतिनिधिक प्रणाली में अनेकों पक्ष बन जायेंगे और दो पक्षवाली सरकार की प्रणाली समाप्त हो जायगी। परन्तु यह निश्चित नहीं है कि क्या दो पक्षों की व्यवस्था एक पार्लियामेंटवादी सरकार की सफलता के लिए आवश्यक है। वर्तमान व्यवस्था में भी इंगलैण्ड में तीन राजनैतिक पक्ष हैं, *अनुपाती प्रणाली के अपनाने से इन तीनों पक्षों में स्थिरता आ जायेगी।* हो सकता है कि पक्ष तीन या उससे अधिक हो परन्तु सब पक्ष लोकमत के सब अंगों का प्रतिनिधित्व कर सकेंगे। अनुपाती प्रतिनिधित्व से स्थापित इस स्थिरता और सुरक्षा के होने पर ही शासन नीति व शासन कार्य के गुण दोषों की स्वतन्त्रता और उत्तरदायी आलोचना हो सकती है।

क्या हाउस आफ कामन्स वास्तव में सब लोगों का प्रतिनिधित्व करता है—सिद्धान्तरूप से लोकसभा को किसी एक पक्ष को प्रधानता दिये बिना समस्त जनता की इच्छा का प्रदर्शन करना चाहिये इस सिद्धान्त पर हाउस आफ कामन्स की रचना

की परीक्षा करने से यह पूछा जा सकता है कि यह सदन के किन किन वर्गों का प्रतिनिधित्व करता है? इसकी सदस्यता का विश्लेषण करने से कुछ रोचक बातें मालूम होती हैं। ग्रीव्ज ने अपनी "दी ब्रिटिश कॉन्स्टीट्यूशन" नामक पुस्तक में लिखा है." हाउस ऐसे दो विभागों में बँटा हुआ है जो उसके बाहर सामाजिक वर्ग विभाग में मिलते जुलते हैं। दोनों प्रमुख पक्षों के सदस्य एक ही सामाजिक वर्ग से नहीं आते। उनमें वश की शिक्षा की, आर्थिक व्यवसाय की, सम्पत्ति की व अवकाश के उपयोग के तरीके की विभिन्नता रहती है, और यदि ऐसा है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है कि राजनीति के विषय में उन दोनों में मौलिक मत भेद हो और उनके राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय उद्देश्य एक दूसरे के विरोधी हो।[1] सन् १९३१ के हाउस में १८८ सदस्य कम्पनियों के सचालक मण्डलों में ६९१ स्थानों पर आसीन थे। जिनमें से १५२ उन मण्डलों के सभापति के स्थान पर थे और इन १८१ सदस्यों में १६५ अनुदार पक्ष के लोग थे बाकी ५३ श्रमिक पक्ष के सदस्य थे जिनमें ३२ श्रमिक सघों के पद धिकारी थे। पार्लियामेंट के अधिकतर उपाधि-प्राप्त सदस्य अनुदार पक्ष के सदस्य थे। साधारणतया अनुदार पक्ष उच्च श्रणी के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है और श्रमिक (लेबर) पक्ष साधारण मनुष्य का। यह स्मरण रखना चाहिये कि "उच्च श्रेणी के व्यक्तियों की सामाजिक श्रेष्ठता और भूमि के स्वामित्व से मेल खाने वाली साधारण श्रे ी वालों की औद्योगिक या व्यापारिक प्रभुता पहले की तरह अब देखने को नहीं मिलती और इन दोनों प्रभुताओं को एक ही हाथ में कर लेने की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा ने शासक पक्ष और विरोधी पक्ष के हितों में पहले जैसा तानाबाना बनाना छोड़ दिया है।'

सदन का सगठन—जब सामान्य निर्वाचन हो चुकता है तब नया सदन अपना सगठन करने के लिये एकत्रित होता है। सबसे पहला काम स्पीकर (अध्यक्ष) का निर्वाचन करना होता है। किसी भी विधानमडल के अध्यक्ष का आसन ग्रहण करने की इच्छा करने वाले व्यक्ति में जिन दो गुणों की विशेष आवश्यकता है वे हैं निष्पक्षता और निर्णय करने की योग्यता। अध्यक्ष को कार्य प्रणाली के सब नियमों की जानकारी होनी चाहिये —

अध्यक्ष की योग्यतायें—यदि ये बातें न हों तो विधान मडल केवल एक भीड़ रह जाती है। यहाँ समय बर्बाद होता है, बिना समुचित विचार हुए कानून बनते हैं और विधान मण्डल की उपयोगिता में विश्वास नहीं रहता। भाग्यवश इगलैंड की पार्लियामेंट का यह दावा सत्य सिद्ध हो चुका है कि उसका स्पीकर (अध्यक्ष) पक्षपात शून्य है। अध्यक्ष सदन की पूरी अवधि के लिये चुना जाता है पर एक बार चुन

---

१ ग्रीव्ज : दी ब्रिटिश कॉन्स्टीट्यूशन् पृ० ३।

जाने के बाद वह जितनी बार चुना जाना चाहे चुना जा सकता है। उसे चुनाव के लिए विभिन्न पक्षों के नियामक (whips) पहले ही मिलकर समझौता कर लेते हैं और एक उम्मीदवार को चुन लेते हैं जिससे सदन में चुनाव होते समय एकमत होकर अध्यक्ष का चुनाव हो। जिस क्षण अध्यक्ष चुन लिया जाता है तब से वह किसी पक्ष का सदस्य नहीं रहता और विधानमंडल के उस संघर्ष में बिलकुल तटस्थ रहता है जो कि दोनों पक्षों के मध्य में बराबर होता रहता है। वह अनुशासन रखता है और वाद-विवाद को नियमपूर्वक लाने का काम करता है। इसलिए इस पद की निरपेक्षता सर्वमान्य हो गई है और हर सामान्य निर्वाचन में अध्यक्ष का निर्वाचन क्षेत्र उसे बिना विरोध के चुन लेता है। केवल एक बार श्रमिक दल (Labour party) ने अध्यक्ष के विरुद्ध अपना उम्मीदवार खड़ा किया और उसमें वह हार भी गया। तब से अध्यक्ष की महत्ता और भी बढ़ गई है।

अध्यक्ष (Speaker) के कर्तव्य—इंगलैण्ड में अध्यक्ष का पद बहुत प्राचीन है और १४वीं शताब्दी से अनवरत चलता चला आ रहा है पहले अध्यक्ष एक उच्च सरकारी पदाधिकारी होता था और कामन्स सभा में प्रतिनिधि (Mouth piece) तथा शासक दोनों के रूप में काम करता था। कामन्स की ओर से वह राज्य सभा के अधिकार माँगता था (एक प्रथा जो भूतकाल की स्मृति में अब भी जीवित है) और वह राजा का मत कामन्स तक पहुँचाता था। सन् १७४२ से जबकि अध्यक्ष *आनस्लो (Onslow) ने अपने पद से स्तीफा दे दिया अध्यक्ष सदन के निर्वाचित* सदस्यों में से ही एक होता है। अध्यक्ष के मुख्य कर्तव्य सदन की बैठकों में अध्यक्ष का काम करना, सदन के काम को नियमानुकूल रखना, और जब विधेयक (Bills) पास हो जाँय तब उन्हें प्रमाणित करना है।

अध्यक्ष का सम्मान—अध्यक्ष को अच्छा वेतन दिया जाता है और अवकाश प्राप्त करने पर पेंशन भी दी जाती है, साथ साथ लार्ड की उपाधि भी दी जाती है परन्तु अधिकार स्वरूप नहीं बल्कि भेंट-स्वरूप ही मिलती है। १९२८ में अध्यक्ष ज० एच० ह्विटले (Whitley) ने इस सम्मान को ग्रहण करने से इन्कार कर दिया था।

सदन के अन्य कर्मचारी—सदन के दूसरे कर्मचारी भी होते हैं उनमें क्लर्क (Clerk) सारे कार्य अभिलेखों (Records) की देखभाल करता है और उसी पर विधेयक प्रश्न सम्बन्धी नोटिस ग्रहण करने का उत्तरदायित्व होता है। वह अध्यक्ष के आदेश से प्रतिदिन का कार्यक्रम तैयार करता है। सारजेंट एट आर्म्स (Sergeant-at-Arms) सदन में अध्यक्ष के प्रवेश की घोषणा करता है और अनुशासन रखने में अध्यक्ष के आदेशों का पालन करता है।

सदन की समितियां——प्रत्येक नये सदन के सगठित हो चुकने पर कुछ समितियों का सगठन किया जाता है और प्रत्येक समिति को निश्चित कार्य भार सौंप दिया जाता है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण वे छ स्थायी समितियाँ हैं जो प्रत्येक सत्र के आरम्भ में चुनी जाती हैं। और पार्लियामेंट को भग होने तक अपरिवर्तित रहती हैं। प्रत्येक समिति अपने विशेष अधिकार क्षेत्र में आने वाले विधेयकों को उनकी जाँच करने तथा आवश्यक परिवर्तनों के सुझाव देने के लिये स्वीकार करती है। इनके अतिरिक्त प्रवर समितियां (Select Committees) होती हैं जिनका नाम उन विधेयकों को गृहण करना उनकी जाच करना तथा उन पर रिपोर्ट देना है जो किसी भी समिति के अधिकार क्षेत्र में नहीं पडते और जिनमें कोई नये सिद्धान्त अन्तर्भूत होते हैं। छ: स्थायी समितियां हैं जो क्रमानुसार लोक लेखा (Public Accounts) स्थायी आदेशों (Standing orders), जनता के प्रार्थना पत्रों (Select Public Petitions), स्थानीय विधान निर्माण (Local Legislation) और विशेषाधिकारों (Privileges) से सबन्ध रखती हैं। छठी समिति सारे सदन की होती है। यह समिति के रूप में सदन हो है जब सदन समिति के रूप में अपनी कार्यवाही करता है। उस समय अध्यक्ष अपने आसन से उठ जाता है और दण्ड (Mace) आसन के नीचे रख दिया जाता है जो इस बात की सूचना देता है कि सदन का स्थगन (Adjournment) हो गया, और सभापति का आसन वह व्यक्ति लेता है जो कि प्रत्येक पार्लियामेंट इसके लिये विशेषतया चुना हुआ होता है। यह सभापति (Chairman) अध्यक्ष की भाँति पक्ष पात शून्य नहीं होता वह अपने पक्ष का दृढ सदस्य होता है। जब सदन की समिति के रूप में बैठकर काम करता है तब कार्यक्रम के नियमों का कडाई के साथ पालन नहीं किया जाता। कोई सदस्य एक ही प्रश्न पर जितनी बार चाहे उतनी बार बोल सकता है, प्रस्तावों के समर्थन की आवश्यकता नहीं होती, जिस विषय पर मतदान हो चुका हो उस पर पुन विचार हो सकता है। जब सदन समिति के रूप में अपना कार्य समाप्त कर चुकता है तो वह अपनी रिपोर्ट देने के लिये फिर से सदन के रूप में आ जाता है स्पीकर अपना आसन ग्रहण कर लेता है, दण्ड फिर आसन पर रख दिया जाता है और सदन का काम पूर्ववत् आरम्भ हो जाता है।

समितियाँ कैसे नियुक्त की जाती हैं—यद्यपि सिद्धान्त रूप से समितियों की नियुक्ति सदन में चुनाव के द्वारा हुई समझी जाती है पर व्यवहार में यह काम निर्वाचन समिति (Committee of election) पर छोड दिया जाता है जिसमें ११ सदस्य होते हैं जो प्रत्येक सत्र के प्रारम्भ में दोनों सदनों द्वारा छाट लिये जाते हैं। वास्तव में प्रधान मत्री व विरोधी दल का नेता दोनों इन ११ नामों पर सहमत

हो लेते हैं, जो कि सदन मे स्वीकृत हो जाते हैं। उसके बाद निर्वाचन समिति प्रत्येक स्थायी और प्रवर समिति के सदस्यो को चुनती है जिसमें कि सब व्यक्ति के बहुमत के पक्ष से ही नही चुन लिये जाते वरन' यह ध्यान रखा जाता है कि सदन मे प्रत्येक पक्षो के सदस्यो की गिनती के अनुपात से इन समितियो मे उन पक्ष के व्यक्ति रहे।

सदन को गणपूरक सख्या (Quorum)—अर्थात् सदस्यो की जिस सख्या मे उपस्थिति के बिना कार्यक्रम नही हो सकता वह चालिस है। जब तक ४० सदस्य सदन में उपस्थित न हो, सदन वैध रूप से कार्यवाही नही कर सकता। जब गणपूरक सख्या नही होती तो एक घन्टी बज जाती है और यदि इस घन्टी के बजने के भीतर सदस्य आकर इस सख्या को पूरा नही करते तो स्पीकर सदन को स्थगित कर देता है।

सदन में कार्यक्रम के नियम—अपने कार्यक्रम के सम्बन्ध में सदन स्वय ही नियम बनाता है जिनका सदन की बैठको में पालन किया जता है। उनमे से कुछ य हैं —वाद विवाद में दूसरे सदन के होने वाले वाद विवाद का कोई परिचय न दिया जाय या न्यायालय द्वारा विचाराधीन विषय पर कोई आलोचना न की जाय, राजा का नाम अनादरपूर्वक या सदन मे प्रभाव जमाने के हेतु न लिया जाय, देशद्रोही या विद्रोहात्मक वचन न बोले जायें, न बाधा डालने वाली या विलम्बकारी चालें चली जाय, कोई सदस्य चाहे तो अपनी टिप्पणियाँ दे सकता है पर अपने व्याख्यान को पढकर सुना नही सकता, व्याख्यान मे दूसरे सदस्यो का नाम लेकर निर्देश नही किया जा सकता, और अध्यक्ष के आदेश का अवश्य पालन होना चाहिये। वाद विवाद को कम करने और कार्यवाही में शीघ्रता लाने के लिये सदन ने बहुत से उपाय निश्चय कर रखे है। यदि कोई सदस्य अनावश्यक विलम्ब करने का प्रयत्न करे या कार्यवाही में रुकावट डाले तो अध्यक्ष अपराधी का नाम बता देता है। यदि इस सदस्य के विरुद्ध विलम्ब का प्रस्ताव रखा जाय और वह स्वीकृत हो जाय तो उस सदस्य को सदन से निश्चित समय के लिये बाहर निकाला जा सकता है। यह समय उस सत्र के बचे हुए समय से अधिक नही हो सकता।

वाद-विवाद को रोकने की युक्तियाँ—वाद विवाद या व्याख्यान को समाप्त करने के लिए क्लोजर (Closure) अर्थात् समाप्ति की युक्ति काम मे लाई जाती है। इस प्रस्ताव के लिये एक सदस्य कह सकता है कि "अब प्रश्न पर मत निर्णय किया जाय", और यदि इस कथन को सभापति स्वीकार कर ले तो वह वाद विवाद को वही समाप्त कर देता है और इस प्रस्ताव को सदन के सामने रखता है। यदि समाप्ति के प्रस्ताव के समर्थन के लिये १००सदस्य खडे हो जायें तो वह स्वीकृत समझा जाता है। गिलोटिन (Guillotine) कहलाने वाली युक्ति भी वाद विवाद को अन्त करने के लिये काम में लायी जाती है। विवाद को सीमित करने के लिये एक अन्य युक्ति भी अपनाई जाती है जो 'क्लोजर बाई कम्पार्टमेन्ट्स" (Closure by

Compartments) कही जाती हैं। विधेयक के क्षेत्र का मंत्री सदन में यह प्रस्ताव रख सकता है कि विधेयक की अमुक अमुक धारायें विधेयक का भाग मान ली जाय। यदि यह प्रस्ताव अध्यक्ष द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है और बहुमत द्वारा पास हो जाता है तो उन धाराओं पर विवाद समाप्त हो जाता है। इसके द्वार व्याख्याना पर समय सम्बन्धी सीमा बांधी जाती है। जब सदन समिति रूप में का: करता है तो अध्यक्ष उपस्थित संशोधना में से कुछ संशोधनों को विचार करने क लिये छांट लेता है जिससे बचे हुए संशोधना पर विचार करने का समय बच जाता है क्योकि उनपर विचार नही किया जाता। इस युक्ति को कगारु (Kangaroo) कहते हैं।

सदस्यो के कर्तव्य (Obligations) और विशेषधाकिार (Privileges)—सदन के सदस्यो के कुछ कर्त्तव्य और कुछ विशेषाधिकार होते हैं जिनको राजा द्वार प्रत्येक नई पालियामेंट के उद्घाटन के समय अध्यक्ष राजा से मांगता है। प्रत्येक सदस्य को सदन के कार्य में भाग लेने से पूर्व पालियामेंट की सामान्य शपथ लेनी पडती है जो इस प्रकार है "मैं———शपथ लेता हूँ कि मैं सम्राट्——— व उसके उत्तराधिकारो के प्रति विधान के अनुसार सच्ची भक्ति रखूंगा, इसलि ईश्वर मुझे शक्ति दे।" प्रत्येक सदस्य को सदन के नियमो का पालन करना पडत है और अध्यक्ष की आज्ञा शिरोधार्य करनी पडती है। सदस्यो को कुछ अधिका यह हैं १००० पौंड वार्षिक वेतन, बोलने की स्वतत्रता, पालियामेंट की बैठक के समय तथा उससे ४० दिन पूर्व व पश्चात तक बन्दी न होने की स्वतत्रता विधेयकों और प्रस्तावों को रखने की स्वतत्रता और प्रश्न पूछने की स्वतत्रता जिनका उत्त मंत्रिपरिषद देती है।

सदन के संस्था रूपी अधिकार—संस्था रूप में सदन के कुछ अधिकार होते : अध्यक्ष का माध्यम से वह सामूहिक रूप से सम्राट् तक पहुँच सकता है। इसक यह अधिकार है कि इसकी कार्यवाही का अधिक से अधिक अनुकूल अर्थ लगाय जावें। अध्यक्ष चाहे तो अजनबी लोगो को बाहर हटाने की आज्ञा दे सकता है, अज नबियों या जनता द्वारा सदन की कार्यवाही के आलेख के प्रकाशन पर रोक लग सकता है। सदन स्वय ही अपनी रचना पर नियंत्रण रखता है, यह अपने सदस्य का या बाहर वालों का सदन के अनादर करने के अपराध का दण्ड दे सकता है

व्यक्तिगत सदस्यों के अधिकार और विशेषाधिकार—कॉमन्स सभा के सदस्यों व कुछ व्यक्तिगत अधिकार और विशेषाधिकार मिले रहते हैं। पहला बन्दी होने से स्वत त्रता का है। वह केवल न्यायालय के अपमान के लिये बन्दी होने के अलावा अन्य प्रका के नागरिक बन्दी होने से सम्बन्धित है। यह पालियामेंट की बैठकों के चालीं

दिन पूर्व और पश्चात् तक लागू होता है। दूसरा अधिकार भाषण की स्वतन्त्रता का है जो कि १६८८ के अधिकारो के विधेयक से अन्तिम बार प्राप्त हुआ था। यह जनतत्रीय विधान सभा के सदस्यो को मिला हुआ सबसे अधिक महत्वपूर्ण अधिकार है। सदन में कुछ भी कहने पर उनपर न्यायालय में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। परन्तु सदस्यो को अपने भाषण में सुरुचि और सौम्यता बनाये रखनी पड़ती है, वे अस-सदीय भाषा का प्रयोग नही कर सकते।

पार्लियामेंट के सदस्य (एम० पी०) के प्रभाव में कमी—१९वी शताब्दी मे कामन्स सभा के सदस्य का जो प्रभाव था वह वर्तमान समय से कही अधिक था। ठीक या गलत, वह उस समय अपने क्षेत्र का आज की तीन पक्ष की व्यवस्था ने कही अधिक सच्चा प्रतिनिधि माना जाता था, अत सम्पूर्ण सदन प्रधान मत्री तथा उसके मत्रिमडल पर आजकल की अपेक्षा अधिक प्रभाव डालता था। सदन का काम अब इतना बढ गया है कि मत्रिमडल के प्रस्ताव ही अधिकतर समय ले लेते हैं और गैर सरकारी सदस्य का प्रभाव बहुत कम पड सकता है। जब वेजहोट (Bagehot) ने ब्रिटिश संविधान पर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक लिखी थी तब पालियामेंट के निजी (private) सदस्य सदन में आजकल की अपेक्षा कही अधिक प्रभाव रखते थे। १८३२ के सुधारो के बाद पहले पैंतीस वर्षों में पार्लियामेंट के निजी सदस्यो की ऐच्छिक कार्यवाही से आठ सरकारो की हार हुई जिनके अध्यक्ष सदन का बहुमत अपने हाथ न रख सके क्योकि उनके अपने दलो में कुछ प्रभावशाली विरोधियो का प्रभाव और व्यक्तित्व शक्ति बहुत अधिक थी। १८४६ में कोअर्जन बिल (Coercion Bill) पर हारकर पील ने त्याग पत्र दे दिया । १८५१ में रसेल ने त्यागपत्र दे दिया जबकि विरोधी दल ने उसके विरुद्ध एक फेंचाइज़मोशन पास किया। उसने सन् १८५२ में फिर इस्तीफा दिया जब कि सदन में उसके मिलीशिया बिल को रद्द किया। १८५२ में डर्बी-डिजरैली सरकार ने त्याग पत्र दे दिया जब कि उसका बजट स्वीकार न हुआ। १८५५ मे रसैल ने त्यागपत्र दिया जबकि उसके विरोध के बावजूद भी क्रीमिया के युद्ध मे जांच करने के लिये एक समिति नियुक्ति करने का विधेयक मजूर कर लिया। १८५८ मे पामर्सटन ने त्याग पत्र दिया जबकि वह कान्सपिरेसी बिल पर हार गया। १८५९ म डिजरैली ने त्यागपत्र दिया जबकि भाषण पर एक सशोधन स्वीकृत हो गया। इसी प्रकार १८६६ में रसैल ग्लैडस्टोन की सरकार ने सुधार पर हारकर इस्तीफा दे दिया। १८५५ मे ग्लैडस्टोन ने पदत्याग किया जबकि उसका बजट पास नहीं हो सका। इनमें से किसी भी अवसर पर हारे हुए प्रधान मत्री ने जनता का मत लेने के लिये सदन के भग करने की प्रार्थना नही की। इस प्रकार राजनैतिक दृष्टि से

महत्वपूर्ण व्यक्त सदस्य इतना अधिक प्रभाव रखते थे क्योंकि उनका सिद्धान्त था कि सदस्य अपने से निम्न व्यक्तियो अर्थात् मतदाताओं का प्रतिनिधि है। अपने से श्रेष्ठ लोगों का भेजा हुआ नही है। उस समय सर्वोच्च अधिकार राष्ट्र में नही बल्कि सदन में माना जाता था। ब्रिस्टल के अपने मतदाताओ के सामने भाषण देते हुए बर्क ने कहा था कि 'केवल आपके प्रतिनिधि का उद्योग ही नही बल्कि उसका निर्णय भी आपके कारण है। और वह आपकी सेवा करने के स्थान पर आपको धोखा देता है यदि वह अपने मत आपकी रायो के सामने छोड दे। प्रतिनिधित्व का यह सिद्धान्त अब नही माना जाता। और एक हारी हुई सरकार आम तौर पर मतदाताओं की राय लेने के लिये सदन को भग करा देती है। ये मतदाता सबसे श्रेष्ठ है। अब कोई सदस्य यह नही कह सकता कि उसका निर्णय उसके मतदाताओ की राय से अधिक महत्वपूर्ण है।

दल के अनुशासन की कठोरता भी सदस्यों की शक्ति के कम होने के लिये जिम्मेदार है क्योंकि दल से विद्रोह करने या विरोध करने पर उसको अगले चुनाव में अपना पद खो देने का भय है।

हाउस आफ लार्ड्स

"हाउस आफ लार्ड्स का जन्म राजनैतिक विकास की प्रथम प्रफुल्ल अचेतनावस्था मे हुआ। बड़े बड़े जागीरदारो व विजयी सामन्तो के लिये यह स्वाभाविक था कि वे राजा को परामर्श देने का कार्य भार अपने ऊपर लेते और स्वाभाविक था उन विद्वान सम्पत्तिवान धर्मपुजारियो के लिये कि वे ग्रेट कौंसिल के शक्तिशाली वृत के भाग बनते[1] वर्तमान हाउस आफ लार्ड्स उस एग्लो-सेक्सन विटेनगमोट (Witenagemot) का ऐतिहासिक प्रतिनिधि है जो नौर्मन काल में अपने पूर्व नाम को छोड़कर मैग्नम कौंसीलियम (Magnum Concilium) के नाम से प्रकट हुआ। बहुत प्राचीन समय से अब तक पीयरो (Peers) के बनाने का विशेषाधिकार राजा का ही रहा है जो अधिकतर अपने आप ही हाउस आफ लार्ड्स में बैठने का अधिकार प्राप्त कर लेते हैं। पियर पांच श्रेणियो के हैं। ऊपर से नीचे श्रेणियां में क्रम से यह हैं — ड्यूक (Dukes) जिनकी संख्या इस समय ३० हैं। मार्क्वेस (Marquesses) जिनकी संख्या लगभग २७ है। अर्ल (Earls) जिनकी संख्या लगभग १३० है, वाईकाउन्ट (Viscounts) जो कि अपेक्षा कृत कम है और जिनकी संख्या अब लगभग ९० है और बेरन (Barons) जो कि बहुसख्यक हैं और अब ५०० से ऊपर हैं। इस समय भी हाउस आफ लार्ड्स में भिन्न भिन्न

१ फाइनर—थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस आफ मोडर्न गवर्नमेन्ट पृ० ६८८।

श्रेणियों के लगभग ८७० सदस्य हैं। पियर का पद उन व्यक्तियों को दिया जाता है जिन्होंने कि विशेष व्यवसाय में नाम प्राप्त कर लिया है। और राष्ट्र की कोई विशेष सेवा की है। परन्तु जे० ब्राउन (J. Brown) ने यह कह कर पियर पद का मजाक उड़ाया है, "एक मूर्ख को अवश्य ही किसी खिताब की बड़ी जरूरत होती है, वह लोगों को उसे काउन्ट या ड्यूक कहना सिखाता है और उसका वास्तविक नाम मूर्ख भुला देता है।"

हाउस आफ लार्ड्स नाम क्यों—यद्यपि ब्रिटिश हाउस आफ लार्ड्स ऐतिहासिक दृष्टि से इंगलैण्ड में ही नहीं वरन् सारे विश्व में प्रथम विधान मंडल है परन्तु अपने अधिकारों और कर्तव्यों के कारण यह दूसरा सदन कहलाता है। कभी कभी इसे 'हाउस आफ पीयर्स, कहकर भी पुकारा जाता है। परन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं है क्योंकि सब पीयर्सों को हाउस में स्थान नहीं मिलता और न ही सब सदस्य पीयर ही होते हैं। इस प्रकार पीयर्स (peers) और हाउस आफ लार्ड्स से एक ही वस्तु का मान नहीं होता। स्काटलैंड और आयरलैंड के सब पीयर हाउस आफ लार्ड्स के सदस्य नहीं होते। उनके अतिरिक्त बिशप (पादरी) और पुनर्विचार करने वाले न्यायाधीश—लार्ड्स पीयर नहीं होते पर वे हाउस के सदस्य होते हैं। पीयर की उपाधि पैतृक होती है और यह उपाधि व इससे सलग्न विशेषाधिकार पिता से पुत्र को प्राप्त होते हैं परन्तु पार्लियामेंट के सब लार्ड्स को यह अधिकार प्राप्त नहीं होता।

पियर बनाने का राजकीय विशेषाधिकार—जैसा कि पहले कहा जा चुका है केवल राजा को ही यह विशेषाधिकार है कि वह पियर बनावे और वह जितने पीयर बनाना चाहे बना सकता है। परन्तु राजा प्रधान मंत्री की सम्मति से ही इस विशेषाधिकार का प्रयोग करता है। प्रत्येक वर्ष नये साल के दिन या राजा के जन्मदिन पर नए पियर बनाये जाते हैं। अवकाश प्राप्त प्रधान मंत्री और कामन्स सभा के अध्यक्ष को भी पियर का पद दिया जाता है। कुछ पहले प्रधानमंत्रियों जैसे ग्लैडस्टोन, लायड जार्ज और चर्चिल इत्यादि ने पियर पद लेने से इनकार कर दिया था। २७ जुलाई १९५८ को रानी ऐलिजाबेथ ने ब्रिटेन की प्रथम चार आजीवन पीयरसें—इतिहास में पहली स्त्रियाँ उत्पन्न की जिनको अब तक के पूरी तरह पुरुष हाउस आफ लार्ड्स में बैठने और मत देने का अधिकार दिया जायगा। उसमें दस पुरुष पीयर भी उत्पन्न किए। ये बैरन ये जिनका पद उनके उत्तराधिकारियों को मिलने के बजाये उनके साथ ही समाप्त हो जायेगा। ये चार स्त्री बैरेन हैं, कैथेरिन इलियट (Dae Katharine Elliot) आयु ५५ वर्ष, अनुदारों के राष्ट्रीय संगठन की भूतपूर्व सभापति तथा कर्नल वाल्टर इलियट की विधवा जो कि अनुदार दल का एक बड़ा राजनितिज्ञ था। कर्नल

स्टैला (Stella) मार्क्विस रीडिंग की उत्तराधिकारिणी विधवा पत्नी जो कि एक प्रसिद्ध जनप्रिय व्यक्ति रहा है। और जो अनेकों वर्षों तक अनेक सार्वजनिक कामों से सम्बन्धित रहा है। मैरी ईरेने (Mary Irene) रेवेन्सडेल की बैरोनेस, आयु ६२ वर्ष जो कि अपने उत्तराधिकार से ही बैरोनेस थी और एक प्रमुख जनप्रिय स्त्री है श्रीमती बैबारा वूटन (Mrs. Barbara Wooten) प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री और लन्दन विश्वविद्यालय में सामाजिक शास्त्रों की भूतपूर्व प्रोफेसर।

पालियामेंट के दूसरे सदन के लगभग ८५० अधिकांश उत्तराधिकार प्राप्त पियरों में इस प्रकार शामिल होने वाले लोगों में हैं सर रावर्ट बूथबाँ (Sir Robert Boothby) आयु ५८ वर्ष, पालियामेंट का अनुदार सदस्य और प्रसिद्ध टेलीविज़न का अधिकारी वैज्ञानिक और सर एडवर्ड ट्विनिंग (Sir Edward Twining), आयु ५९ वर्ष टांगा-निका का भूतपूर्व गवर्नर और प्रधान सेनापति।

पियरों का उत्पन्न करना अनुदार सरकार के एक हाल के ही निर्णय से प्रारम्भ किया गया जिसका उद्देश्य वर्तमान आगार को एक अधिक जनतन्त्रीय स्वरूप देना था। उदाहरण के लिये इस समय अनुदार, लिबरल तथा अन्य और समाजवादी दलों से श्रमिक दल के सदस्यों की सख्या बहुत कम है और उसमें १ तथा १५ का अनुपात है। आजीवन पियरों का उत्पन्न करने का विधेयक समय समय पर प्रस्तुत किया गया और श्रमिक दल के घोर विरोध करने पर भी कानून बन गया। समाजवादियों ने आजीवन पियरों के बनने का कोई विरोध नहीं किया। परन्तु फिर यह समझा कि सरकार हाउस आफ लार्ड्स के सुधार के प्रश्न से केवल खिलवाड कर रही है। नई आजीवन स्त्री पियरों के पतियों को कोई पद नहीं मिलेगा। वह 'मिस्टर' ही कहलाते रहेंगे। जब कि उनकी पत्नियां 'लेडी' अथवा 'बैरोनेस' कहलाएंगी। परन्तु एक आजीवन पियर की पत्नी को आजीवन बैरोनेस का पद मिला रहेगा और उस अवधि में उनके बच्चे 'दि आनरेबिल' कहे जावेंगे। राजा को पीयर बनाने की इस स्वतन्त्रता पर कुछ नियन्त्रण भी हैं। वे ये हैं—पहले, स्काटलेंड से सम्मिलित कराने वाले विधान के अनुसार स्काटलैंड का कोई नया पीयर नहीं बनाया जा सकता। दूसरे, आयरलैंड को मिलान वाले विधान के अनुसार आयरलैण्ड में प्रत्येक तीन विलीन हुए पुराने पीयरों के स्थान पर एक नया पीयर बनाया जायगा जब तक कि वहाँ के पीयरों की सख्या घटते घटते १०० न रह जाय। तीसरे राजा उस व्यक्ति को फिर से पीयर नहीं बना सकता जिसने कभी पहले अपनी पीयर की उपाधि वापस कर दी हो। पर वास्तव में कोई व्यक्ति अपनी उपाधि वापिस नहीं कर सकता। क्योंकि हाउस ने सन् १९५८ में यह प्रस्ताव पास कर दिया था कि राजा का कोई भी पीयर इस सम्मान का समर्पण, अनुदान, जुर्माने अथवा

अन्य किसी रूप में राजा को वापिस नही कर सकता। यद्यपि १९१९ में वाईकाउन्ट एस्टर (Viscount Astor) ने कामन्स सभा में अपना पद बनाये रखने के लिये अपने पीयर पद से इस्तीफा देने की कोशिश की परन्तु पार्लियमेंट ने उस इस्तीफे को वैध बनाने के लिये आवश्यक विधान को मंजूर करने से इनकार कर दिया। चौथे जागीर भेंट करने पर राजा पीयर की उपाधि को ऐसे नियमों से मर्यादित नही कर सकता जो अवैध हों। अर्थात् जो विधान से मान्य न हों।

हाउस आफ लार्ड्स में कौन कौन लोग होते हैं।—हाउस आफ लार्ड्स मे तीन श्रेणियों के सदस्य होते हैं (क) पार्लियामेंट के पैतृक अधिकारवाले लार्ड्स—जिनमें राजघराने के राजकुमारों के अतिरिक्त इंगलैण्ड के पाँच प्रकार के पीयर होते हैं—ड्यूक, मार्क्विस, अर्ल, वाईकाउन्ट और बैरन, ये उपाधियाँ पिता के पश्चात् ज्येष्ठ पुत्र को प्राप्त होती है। (ख) बिना पैतृक अधिकार वाले लॉर्ड्स जिनमें स्काटलैंड के पीयरों द्वारा अपने मे से चुने हुए १६ पीयर्स होते हैं और आयरलैंड के पीयरों द्वारा चुने हुए अट्ठाईस आजीवन पीयर होते हैं। स्काटलैंड के बचे हुए पीयर हाउस ऑफ कामन्स की सदस्यता के लिए खडे नही हो सकते। पर आयरलैंड के पीयर हाउस आफ कामन्स मे निर्वाचित होकर जाने के लिए खडे हो सकते हैं, (ग) आजीवन लार्ड्स—जिनमे २६ धर्माधिकारी लार्ड्स और छ लार्ड्स ऑफ अपील इन आर्डिनरी (Lords of Appeal in Ordinary) जो १५ वर्ष तक बैरिस्टर रह चुके हो या जो किसी बड़े न्यायाधीश के पद पर आसीन रह चुके होते हैं। धर्माधिकारी लार्ड्स में केन्टरबरी और यार्क के दो बडे पादरी और चौबीस छोटे पादरी होते हैं। लार्ड्स आफ अपील (Lords of Appeal) की नियुक्ति राजा ही करता है और उनको छ हजार पौंड प्रति वर्ष वेतन मिलता है। इन छ लार्डों को तभी अपने पद से हटाया जा सकता है जब पालियामेंट के दोनों सदन मिल कर ऐसा करने के लिये राजा से प्रार्थना करे। यह आजीवन लार्ड जब तक जीवित रहते हैं हाउस के सदस्य बने रहते हैं। पहले पीयर लोग प्राक्सी (Proxy) अर्थात् दूसरे पुरुष के द्वारा सदन में अपना मत दे सकते थे। पर सन् १८६८ के पश्चात् से यह प्रथा बन्द कर दी गई और अब अपना मत देने के लिये प्रत्येक पीयर को सदन मे उपस्थित होना चाहिये।

लार्डों के कर्तव्य और विशेषाधिकार—पार्लियामेंट के लार्डों के कुछ कर्त्तव्य और कुछ विशेषाधिकार होते हैं। प्रत्येक पीयर की चाहे वह पार्लियामेंट का सदस्य हो या न हो, राजा के पास सीधा पहुँच होती है। जो लार्ड २१ वर्ष की आयु वाला न हो या जिसमें सन् १८६६ के शपथ विधान के अनुसार राजभक्ति की शपथ न ली हो वह हाउस मे न बैठ सकता है और न मत दे सकता है। यदि किसी लार्ड

को देश द्रोह या किसी दूसरे महा अपराध का दण्ड मिल चुका है तब वह उस समय तक हाउस में बैठकर वोट नहीं दे सकता जब तक कि वह दण्ड भुगत न चुका हो। जो व्यक्ति ब्रिटेन का नागरिक नहीं है वह हाउस आफ लार्ड्स में बैठने के लिये नहीं बुलाया जा सकता। न किसी दिवालिया पीयर को बुलाया जाता है। एक बार जब पैतृकाधिकार वाले पीयर को बुलावा मिल जाता है तो वह बुलावे का अधिकार उसके उत्तराधिकारी को भी उसके बाद अपने आप मिल जाता है। रायपुर (बिहार) के प्रथम लार्ड सिनहा की जब मृत्यु हो गई (प्रथम लार्ड सिन्हा हाउस आफ लार्ड्स के सदस्य थे) तो उनके पुत्र और उत्तराधिकारी लार्ड सिनहा को जो अभी जीवित है हाउस में आने का बुलावा न मिला क्योंकि उनसे यह सिद्ध करने को पूछा गया कि उनके पिता विवाह की अयोग्यता के अपराधी तो नहीं थे इस पर यह प्रश्न हाउस की विशेषाधिकार सम्बन्धी समिति (Committee of Privileges of the House Lords) के सम्मुख रखा गया जिसका निर्णय लार्ड सिनहा के अनुकूल रहा और अब लार्ड सिन्हा को बराबर हाउस के लिये बुलावा आता है और वे हाउस में बैठने के लिये जाते हैं। पार्लियामेंट की बैठक के दौरान में या किसी सत्र के चालीस दिन पूर्व और पश्चात् तक हाउस आफ लार्ड्स के किसी सदस्य को किसी अपराध के लिये पकड़ा नहीं जा सकता। यह सुविधा लार्डों के नौकरों को भी मिलती है और उनको भी सत्र के २० दिन पूर्व व २० दिन पश्चात् व जब बैठक हो रही हो पकड़ा नहीं जा सकता। प्रत्येक लार्ड को बोलने की स्वतंत्रता होती है और उसे यह भी अधिकार होता है कि वह चाहे तो किसी प्रस्ताव पर अपनी अस्वीकृति को हाउस के आलेखों में लिखवा दे। उसे जूरी (Jury) में काम करने के भार से मुक्त कर दिया जाता है। आजीवन पीयर स्त्री हाउस में न बैठ सकती है। और न वोट दे सकती है। हाउस की पूर्ण सदस्य संख्या लगभग ८४० है किन्तु वास्तव में मताधिकारियों की संख्या लगभग १२० है।

हाउस आफ लार्ड्स के विशेषाधिकार—संस्था रूप में हाउस आफ लार्ड्स को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं वह अपनी कार्यवाही का नियमन और नियन्त्रण स्वयं करता है। हाउस का अनादर करने वाले व्यक्ति को हाउस अनिश्चित काल के लिये कारागृह भी भेज सकता है। अपने सगठन के विषय में यह स्वयं ही देख भाल करता है और इस अधिकार का उपयोग करने में यह नए पीयरों के नियमानुकूल बनने या न बनने पर विचार करके निर्णय दे सकता है यहाँ तक कि यदि हाउस निर्णय करे तो किसी अयोग्य ठहरा दिये गए नए पीयर को हाउस में बैठने और कार्यवाही में भाग लेने से रोक सकता है और उसके स्थान की रिक्त घोषित कर सकता है। सन् १९३६ से पूर्व यदि कोई लार्ड (स्त्री या पुरुष) देशद्रोह या

महापराध का दोषी कहा जाता और यदि वह कहता कि उसका मुकद्दमा लार्डों द्वारा ही सुना जाये तो हाउस ही ऐसे मुकद्दमों को सुनता था और निर्णय देता था। पर सन् १९३७ में एक ऐसा कानून लार्ड साके ने विधान मंडल में रखा जिसके पास हो जाने पर यह विशेषाधिकार समाप्त कर दिया गया। लार्ड साँके (Lord Sanke) ने यह प्रस्ताव क्यों रखा इसके पीछे एक छोटा-सा इतिहास है। जब लार्ड डिक्लिफोर्ड (De Clifford) पर मोटर दुर्घटना के फलस्वरूप मनुष्य हत्या का अपराध लगाया गया तो मुकद्दमे की सुनवाई हुई और सुनवाई के अन्त में जब लार्ड हाई स्टीवर्ट वाईकाउन्ट हैलशम (Hailsham) ने यह प्रश्न रखा कि बन्दी अपराधी है या नहीं तो ८४ पीयरों में से प्रत्येक ने खड़े होकर कहा कि "अपराधी नहीं मेरे सम्मान पर।" इससे सब को यह भावना हो गई कि यह विशेषाधिकार" कानून के सम्मुख समता के नियम का उल्लंघन करता है और फलस्वरूप लार्ड साके ने इनको तोड़ने का प्रस्ताव विधान मंडल में रख दिया जो कि स्वीकृत होकर कानून बन गया।

लार्ड्स किसका प्रतिनिधित्व करते हैं?—हाउस आफ लार्ड्स दूसरे सदन के रूप में बड़ी ही अनुदार संस्था है क्योंकि वह सम्पत्तिशाली वर्ग का गुट है जहाँ से वे अपनी रक्षा करते हैं। इसलिये यह सदन किसी भी प्रकार से लोकमत का प्रतिनिधित्व नहीं करता। लार्ड्स अपने आप का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। और इस लिये वह उन योजनाओं का विरोध करते हैं जिनसे उनके या दूसरे धनिकों के अधिकारों पर आक्रमण होता हो। लार्ड्स में बहुत से बड़े धनी हैं। यह इस तथ्य से प्रकट हो जायेगा कि सन् १९३१ ई० में हाउस में २४६ जमींदार थे, बैंकों के डाईरेक्टर ६७, रेलों के ६४, कल के कारखानों के ४९ और बीमा कम्पनियों के ११२। सन् १९२७ में २२७ पीयर कुल ७,३६२,००० एकड़ भूमि के स्वामी थे। और प्रत्येक पीयर के पास औसतन ३२,४०० एकड़ भूमि थी। ७६१ कम्पनियों में ४२५ डायरेक्टरों के पद पर ७७२ लार्ड्स आसीन थे।"[१] परन्तु कुछ पीयर ऐसे भी हैं जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। सन् १९५३ में बहुत से पीयर एलेजाबेथ द्वितीय के राजतिलक के समारोह में इसलिये शामिल नहीं हुए क्योंकि उनके पास आवश्यक गणवेश सिलवाने को पैसा नहीं था, जिसमें कुछ सौ पौंड का खर्चा था। इसलिये यह आश्चर्य की बात नहीं कि इस हाउस ने कई अवसरों पर विशेषकर सन् १८३२ और १९१० में रुकावट डालने वाली चालें चलीं। जौन स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill) ने इसका वर्णन "एक भारी क्रोध दिलाने वाली छोटी सी असु-

---

१. प्रोवज दि ब्रिटिश कान्स्टीट्यूशन पृ० ५४।

दिया" कह कर किया था। परन्तु बहुधा अन्त में प्रगतिशील पीयर दलकी ही जीत हुई है। और रुकावटें हटा ली गई है। पार्लियामेंट के लार्डों की सख्या लगभग ८७० है जिनमें ८५० ही हाउस आफ लार्ड्स में बैठ सकते है। और वोट दे सकते हैं। बचे हुए अल्पवयस्क या स्त्री होने के कारण अयोग्य है। इन पार्लियामेंट के लार्डो की सख्या के उन पाच श्रेणियो में विभक्त है जिनको पैतृक अधिकार हैं। उदाहरण के लिये सन् १९४२ में २९ ड्यूक, ४० मारक्विस, १६९ अर्ल, ६७ वाइकाउन्ट और ३४४ बैरन थे। अधिकतर लार्ड हाउस में उपस्थित होने को उत्सुक नहीं रहते। इसलिये सदन की औसतन उपस्थिति केवल ८० है। यह पता लगा है कि सन् १९३२ और १९३३ में २८७ पीयर हाउस में कभी भी उपस्थित नहीं हुए और सन् १९१९ से १९३१ तक १११ पीयरों ने कभी अपना वोट देने की परवाह नहीं की। जितने उपस्थित भी होते है उनमें से आधे कभी बोलने का प्रयत्न नहीं करते।

इस उपेक्षा के कारणो में से एक यह भी है कि लार्ड्स सभा के सदस्यो को सभा में उपस्थित होने के लिये कोई वेतन अथवा नियमित धन नहीं मिलता जैसा कि कामन्स को मिलता है। परन्तु उनके अपने घरो से वेस्ट मिन्स्टर के महल तक आने का खर्चा मिलता है,(यदि वे कम से कम तिहाई बैठको में शामिल हो) । वे हाउस में आने के लिये खर्च की माग कर सकते है (परन्तु न्याय सम्बन्धी बैठको में नहीं)। यह खर्च अधिक से अधिक तीन गिनी दैनिक मिल सकता है। केवल लार्ड, चांसलर, कमिटियो का लार्ड चेयरमैन और मत्री पद पर आसीन लार्ड लोगो को ही नियमित वेतन मिलता है। स्पष्ट है कि यह लार्ड हाउस की कार्यवाही की ऐसी उपेक्षा करते हैं कि कभी कभी इस सदन की उपयोगिता पर सन्देह होने लगता है। इसके वर्तमान स्वरूप को बदलने व इसमें सुधार करने के लिये कई प्रयत्न भी किये जा चुके हैं। पार्लियामेंट के काम के प्रति लार्ड्स के उपेक्षा के बारे में बोलते हुए लार्ड बरकेन हैड (Birkenhead) ने कहा मेरा विश्वास है कि आज के लार्डो में से ७०० से कम ऐसे नहीं हैं जिनको इस सभा के अविवेकता में भाग लेने का अधिकार है। इस सात सौ में से—हाउस के प्रतिदिन का काम वास्तव में लगभग २०० पीयरो द्वारा किया जाता है। इस बारे में मुझे निश्चय है कि किसी भी परिस्थिति ने इस हाउस की ख्याति तथा कुशलता को जैसा कि वह इस समय नर्गोठत है जनता की नजरो में इतना नीचा नहीं गिराया है जितना कि इस बात ने कि इसमें इतनी अधिक सख्या में एस लोग है जो अपने ससदीय कर्त्तव्यो को पूरा करने की कोई परवाह नहीं करते। साथ ही आप जीवन के किसी भी क्षेत्र में बहुधा ऐसी पीढ़ी दर पीढ़ी खानदानी ७०० व्यक्ति नहीं पा सकते जिनमें कि सबका नैतिक चरित्र असदिग्ध हो। अत उनके हाउस के

सुधार का समर्थन किया।

हाउस आफ लार्ड्स के सुधार—लगभग १०० साल से ब्रिटिश राजनीति का एक महत्वपूर्ण प्रश्न हाउस आफ लार्ड्स के सुधार का प्रश्न रहा है। सन् १८३२ तक तो कामन्स की साधारण जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करता था। परन्तु पहले दो सुधार अधिनियमों के पास हो जाने के पश्चात् हाउस आफ कामन्स वास्तविक प्रजातन्त्रात्मक सदन में परिवर्तित हो गया और हाउस आफ लार्ड्स को सशंक दृष्टि से देखने लगा क्योंकि यह भय था कि हाउस आफ लार्ड्स प्रजातन्त्र की उन्नति में बाधक सिद्ध होगा सन् १८६९ और १८८८ के बीच में अधिकारों की दृष्टि से या संगठन के सम्बन्ध में या दोनों बातों में हाउस आफ लार्ड्स के सुधार करने के लिये कई प्रयत्न किये गए। एक बार तो यह सुझाव रखा गया कि धर्माधिकारी पियरों को समाप्त कर दिया जाये। पर इनमें से कोई भी प्रयत्न सफल न हुआ। सन् १९०६ में जब उदार पक्ष का मन्त्रिमंडल बना तो अनुदार पक्ष के लोग हाउस आफ लार्ड्स में अपने बहुमत के आधार पर महत्वपूर्ण उदार योजनाओं के पास होने से रोड़ा अटकाने लगे। इसके फलस्वरूप दोनों सदन में विरोध उत्पन्न हो गया। कामन्स ने यह प्रस्ताव पास किया कि लार्ड्स का विरोध होते हुए भी जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा सर्वमान्य होनी चाहिये और इसी के अनुसार कार्य होना चाहिये।

रोजबरी समिति—इसलिये सन् १९०८ में लार्डस ने अपनी एक समिति नियुक्त की जिसके सभापति लार्ड रोजबरी हुए इस समिति को यह काम सौंपा गया कि वह सुधार के लिये सुझाव उपस्थित करे। समिति ने सिफारिश की कि द्वितीय गृह (Upper House) की रचना निर्वाचित हो, पर इस सुझाव को कामन्स में उदार दल के बहुमत ने स्वीकार नहीं किया।

ब्राइस समिति के सुझाव—सन् १९११ में पार्लियामेंट एक्ट (Parliament Act) पास हुआ जिससे तुरन्त ही कुछ महत्वपूर्ण सुधार हुए और उसकी प्रस्तावना में यह वचन दिया गया कि भविष्य में हाउस आफ लार्ड्स के सुधार के लिये कोई वैधानिक कार्यवाही की जावेगी। यह प्रस्तावना इन शब्दों में थी और क्योंकि यह इच्छा है कि हाउस आफ लार्ड्स के स्थान पर एक द्वितीय आगार (Second Chamber) पैतृक अधिकार के आधार पर न बना कर लोक सत्ता के आधार पर बनाया जाये। परन्तु ऐसा परिवर्तन तुरन्त कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। सन् १९१७ में एक समिति नियुक्त हुई जिसमें सभापति लार्ड ब्राइस थे। इस समिति को यह काम सौंपा गया कि वह हाउस आफ लार्ड्स के सुधार के सुझाव उपस्थित करे। १९१८ में इस ब्राइस समिति ने अपनी रिपोर्ट में यह सुझाव रखे (१) द्वितीय सदन के अधिकार हाउस आफ कामन्स के अधिकारों के समान न हों जिससे वह हाउस,

आफ कामन्स का प्रतिद्वन्दी न बन सके। (२) इस द्वितीय सदन को मन्त्रिमंडल बनाने या बिगाड़ने की शक्ति न मिलनी चाहिये और (३) अर्थ सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार के लिये हाउस आफ कामन्स के बराबर अधिकार न मिलने चाहिये। भविष्य में द्वितीय सदन के संगठन के लिये समिति ने ये सिफारिश की : (क) किसी राजनैतिक मत को स्थायी प्रभुत्व न मिलने चाहिये (ख) जिसका संगठन ऐसा हो कि सम्पूर्ण राष्ट्र के विचार और दृष्टिकोण का इससे प्रदर्शन हो सके, और (ग) इसमें ऐसे व्यक्ति रखे जायं जो शारीरिक शक्ति न होने या प्रबल दल बन्दी के अनुकूल स्वभाव न होने के कारण हाउस आफ कामन्स में जाना नहीं चाहते। समिति के विचार में इस द्वितीय गृह के कर्त्तव्य निम्नलिखित होने चाहिये।

(१) हाउस आफ कामन्स से आये हुए विधेयकों (Bils) की परीक्षा करना और दुहराना। यह काम बड़ा आवश्यक हो गया है क्योंकि हाउस आफ कामन्स में काम इतना बढ़ गया है कि पिछले तीन वर्षों में कई अवसरों पर हाउस आफ कामन्स में वाद विवाद को कम करने के लिये विशेष नियम बनाने पड़े और उनके अनुसार कार्यवाही करनी पड़ी।

(२) उन अविरोधी विधेयकों को प्रारम्भ करना जो यदि विचार करने के पश्चात् सुव्यवस्थित रूप में रख दिये जांय तो हाउस आफ कामन्स में सहज ही स्वीकृत हो जाय।

(३) किसी विधेयक के कानून बनने में इतना ही विलम्ब करना जिसे लोक मत को प्रकट होने का पर्याप्त समय मिल सके। उन विधेयकों के सम्बन्ध में इसकी विशेष आवश्यकता है जो विधान के आधार-भूत सिद्धान्तों में परिवर्तन करना चाहते हैं या जो निर्बन्ध सम्बन्धी नये सिद्धान्त प्रचलित करते हों या जो ऐसे प्रश्न उठाते हों जिनके अनुकूल व विरोध में लोकमत समान रूप से विभक्त हो।

(४) जिस समय हाउस आफ कामन्स में इतना काम हो कि वह महत्वपूर्ण और बड़े प्रश्नों जैसे वैदेशिक नीति के लिये समय न निकाल सकें तब उन प्रश्नों पर खुले ढंग पर पूरी तरह वाद विवाद करना। ऐसा वाद विवाद यदि उस सभा में हो जिसे कार्यकारिणी के भाग्य निर्णय करने का अधिकार न हो तो और भी लाभदायक होगा।

हाउस आफ लार्ड्स के इस सुधार को कार्यान्वित करने के लिये ब्राईस समिति ने यह सिफारिश की कि नये द्वितीय सदन के सदस्यों की कुल संख्या ३२७ हो, इनमें से २४६ को कामन्स के सदस्य चुनें। इस चुनाव के लिये कामन्स के सदस्यों को १३ प्रादेशिक भागों (Regional Division) में बांट कर प्रत्येक भाग से अपनी निश्चित संख्या को चुनने का काम दे दिया जाये। बचे हुए ८१

सदस्यों को दोनो सदनो की एक सम्मिलित समिति सब पीयरो (Peers) मे से छाटे। इस द्वितीय सदन की अवधि १२ वर्ष रखी गई। जिसमें प्रत्येक चार वर्ष पश्चात् एक तिहाई सदस्य हटते हो। कोई एक हाउस आफ कामन्स २४६ सदस्यों को एक तिहाई सदस्य निर्वाचित न करें। इसका अभिप्राय यह था कि यह योजना क्रमानुसार धीरे धीरे कार्यान्वित हो न कि तुरन्त। किसी एक निश्चित समय पर सुधार की आवश्यकता पर जोर देते हुए वाईकाउन्ट ब्राइस ने कहा "५०-६० या ७० साल के लोगो ने यह अनुभव किया है कि यह सविधान की एक ऐसी शाखा है कि जिसमें कुछ सुधार अवश्य होने चाहिये और स्थगित करने से काम अधिक आसान नही होता।" उसने एक सुधारे हुए द्वितीय सदन के लाभो का वर्णन किया जो कि समितियो की व्यवस्था के द्वारा या दूसरी तरह से कामन्स को विधान के भारी काम से मुक्त कर देगा। उसने अन्त में यह कह कर खत्म किया "यह हमारी समस्याओं में सबसे अधिक आवश्यकता में से एक है। क्योकि इन चिन्ता के दिनो में उसके सुलझाव पर ही ब्रिटिश सविधान तथा उसके वैधानिक व प्रशासन *यन्त्र का सुचारु तथा सुरक्षित रूप से चलना निर्भर है। यह योजना भी केवल* लिखी ही रह गई, इस पर कोई कार्यवाही नही की गई।

सन् १९२९ की केव और क्लेरेण्डन की योजनाएँ—सन् १९२९में लार्ड केव (Cave) ने एक दूसरी योजना उपस्थित की। इस योजना का उद्देश्य हाउस आफ कामन्स के विरुद्ध हाउस आफ लार्ड्स को अधिक शक्तिशाली बनाना था। पर इसका सभी ने जबर्दस्त विरोध किया, उसी वर्ष दिसम्बर मे लार्ड क्लैरेण्डन (Lord Clarendon) ने फिर एक दूसरी योजना हाउस आफ लार्ड्स के सम्मुख रखी जिसका उद्देश्य यह था कि दक्षता पूर्वक शीघ्रता से कार्य सम्पादन के हित में दोनो सदनों में अधिक मेल रहे और एक दूसरे के सहायक रहे। इस योजना के अनुसार सब पीयर (Peers) मिल कर अपने में से १५० पीयर चुनते, दूसरे १५० पीयरो को राजा प्रत्येक पार्लियामेंट की अवधि तक के लिये मनोनीत करता। मनोनीत करने मे राजा यह ध्यान रखता कि पीयर हाउस आफ कामन्स में विभिन्न पक्षो की सख्या के अनुपात से ही नियुक्त किये जायें। इसके अतिरिक्त राजा को कुछ आजीवन पीयर बनाने का अधिकार भी दिया गया था। पर यह योजना भी स्वीकृत की अतिम सीढ़ी तक न पहुँच सकी।

सैलिजबरी की सुधार योजनाए—दिसम्बर सन् १९३३ में कतिपय वैधानिक सिद्धान्तों का सहारा लेकर लार्ड सैलिजबरी ने हाउस आफ लार्ड्स के सुधार का एक विधेयक फिर उपस्थित किया। इस विधेयक के सिद्धान्त ये थे—अर्थ-सम्बन्धी विषयो मे जनता के प्रतिनिधियो की राय सर्वोच्च समझी जाय और उनको अन्तिम

स्वीकृति देने का अधिकार हो, दूसरे विषयों में निर्बन्ध तभी अन्तिम रूप से पास हो, जब जनता विचारपूर्वक निर्णय करे। पैतृक अधिकार के सिद्धान्त में कमी लाने के लिये द्वितीय सदन (Second Chamber) के सदस्यों की संख्या कम करके ३२० रखी गई। इन ३२० सदस्यों में १५० पैतृकअधिकार वाले पीयर १५० दूसरे पार्लियामेंट के लार्ड्स जो पियरों के बाहर से चुने जायें, और बाकी रायल पीयर (Royal Peers) ल्याय लार्ड (Law Lord) और कुछ धर्माधिकारी रखे गये थे। इसके अतिरिक्त मुद्रा विधेयकों को प्रमाणित करने का अधिकार सन् १९११ के ऐक्ट में निर्धारित अध्यक्ष के स्थान पर दोनों सदनों की एक सम्मिलिति समिति को दिया गया। यह भी प्रस्ताव किया गया कि यदि किसी योजना को हाउस आफ लार्ड्स तीन बार पूर्ण बहुमत (absolute majority) से रद्द करदे तो उसके सम्बन्ध में निर्णय दूसरे होने वाले हाउस आफ कामन्स पर छोड़ दिया जाय। यह योजना भी परिनियम की पुस्तक में स्थान न पा सकी।

सुधार की आवश्यकता बनी हुई है—इतनी योजनाओं के असफल रहने के पश्चात् भी सुधार की आवश्यकता ज्यों की त्यों बनी हुई है क्योंकि हाउस आफ लार्ड्स द्वितीय सदन का कर्त्तव्य भलीभाँति पूरा नहीं करता। ऐसे सदन के दो मुख्य कार्य होते है, पहला, प्रथम सदन से आई हुई योजनाओं को दुहराना और उन पर पुनर्विचार का अवसर प्रदान करना। दूसरा, उन लोगों को राज्यकार्य में साझी होने की सुविधा देना जो हाउस आफ कामन्स में निर्वाचित होने के लिये निर्वाचन लड़ना नहीं चाहते। श्री ग्रीव्ज (Greaves) ने यह सुझाव रखा कि इन दोनों कार्य-सिद्धान्तों को व्यवहार रूप दिया जा सकता है यदि (१) हाउस आफ कामन्स द्वारा पार्लियामेंट के लार्डों का चुनाव हो। यह चुनाव प्रत्येक पार्लियामेंट के पहली सत्र के प्रथम मास में हो और पार्लियामेंट के विघटन होने तक लार्ड अपने पदों पर बने रहें, (२) कामन्स में जिस पक्ष के जितने सदस्य हों वे अपनी संख्या के आधे के बराबर लार्डों को चुनें और (३) हाउस आफ कामन्स का अध्यक्ष निर्वाचन पद्धति निश्चित करे। सुधार की कोई योजना भी स्वीकार की जाय पर यह निर्विवाद है कि हाउस आफ लार्ड्स का सुधार होना आवश्यक है जिससे यह व्यवस्थापक मण्डल का उपयोगी अंग सिद्ध हो सके।

हाउस आफ लार्ड्स का संगठन—हाउस आफ कामन्स की तरह हाउस आफ लार्ड्स का भी एक अपना संगठन है। इसका सभापति लार्ड चान्सलर (Lord Chancellor) कहलाता है जो मंत्रिपरिषद् का सदस्य होता है। लार्ड चान्सलर का पीयर होना आवश्यक नहीं है इसलिये उसका आसन हाउस की परिधि से बाहर रहता है। उसका आसन वूलसैक (Woolsack) कहलाता है जिसका अर्थ है कि वह

लार्ड्स के समान कीमती आसन पर न बैठने योग्य होने के कारण साधारण ऊनी बोरे के आसन पर बैठता है। पर साधारणतया जब कोई ऐसा व्यक्ति लार्ड चान्सलर बनाया जाता है जो पीयर न हो तो वह चान्सलर बनने के पश्चात् पीयर बना दिया जाता है। हाउस अपनी कार्य पद्धति को स्वय ही निश्चित करता है। लार्ड चान्सलर अथवा उसकी अनुपस्थिति में लार्डो द्वारा चुने हुए उपाध्यक्ष को कार्य पद्धति सम्बन्धी प्रश्न पर आदेश देने का अधिकार नही है। कम से कम तीन पीयरो की गणपूरक सख्या होनी है परन्तु साधारणतया किसी बैठक में ५० पीयरो के उपस्थित होने की आशा की जाती है। पीयर जब व्याख्यान देते हैं तब अध्यक्ष को नही वरन् सदन को अपना भाषण सुनाते हैं। यदि लार्ड चान्सलर पीयर नही होता तो उसे मत देने का अधिकार नही होता। यदि वह पीयर होता है तो और पीयरो के समान उसे भी मत देने का अधिकार प्राप्त रहता है। पर उसे निर्णायक द्वितीय मत देने का अधिकार नहीं होता यदि किसी प्रस्ताव के पक्ष विरोध में मत बराबर हो तो वह प्रस्ताव गिर जाता है। कोई भी पीयर किसी भी समय किसी मामले पर कागजो के प्रस्ताव करके (by moving for papers) विवाद छेड सकता है क्योकि कार्यक्रम निश्चित नही होता। दैनिक बैठके एक घटे के लगभग होती हैं। कार्यवाहियाँ अधिकतर नीरस होती हैं यद्यपि भाषण कभी कभी उच्च स्तर के होते हैं क्योकि बैठको में भाग लेने वाले और भाषण देने वाले लोग उस मामले में रुचि रखने वाले और भारी वैधानिक तथा प्रशासकीय अनुभव वाले पीयर ही होते हैं। क्योकि भाषण दर्शको को खुश करने के लिये नहीं दिये जाते इसलिये वे सक्षिप्त होते हैं। लार्ड चान्सलर के अतिरिक्त एक व्यक्ति समितियो का अध्यक्ष भी होता है। जो उस समय सभापति का स्थान ग्रहण करता है। जब सदन समिति के रूप में कार्य करता है। वही व्यक्तिगत विधेयको में सम्बन्धित सब कामो की देख-भाल करता है। ग्रेट सील्स (Great Seals) अर्थात् राजमुहरो से प्रमाणित अधिकार पत्रो द्वारा एक जेटिलमैन अशर आफ दी ब्लैक रोड (Gentlemen usher of the Black Road) नियुक्त किया जाता है। हाउस आफ लार्ड्स में जो अधिकार सूचक दण्ड के रूप में काले रग का एक डण्डा रखा जाता है उसी से इस पदाधिकारी का नाम पडा है। उसका मुख्यकाम बन्दी बनाने की आज्ञाओ को कार्यान्वित करना, कामन्स के सदस्यो को आवश्यकता पडने पर हाउस के सामने उपस्थित करना और जिन व्यक्तियो को हाउस आफ लार्ड्स ने किसी अभियोग के सम्बन्ध में रोक रखा हो उनको सुरक्षित स्थान में बन्द रखना है। जब लार्ड चान्सलर हाउस में प्रवेश करता है या हाउस छोड कर जाता है तो सार्जण्ट एट आर्म्स, अधिकार दण्ड (Mace) लेकर चलता है। हाउस का क्लर्क कार्यक्रम की

रिपोर्ट और न्याय सम्बन्धी निर्माण के आलेखों को सुरक्षित रखता है पालियामेंट का क्लर्क सदन के लेखों और निर्णयों को रखता है।

हाउस आफ लार्ड् स के विधायी कर्त्तव्य—हाउस आफ लार्ड् स के दो प्रकार के कर्त्तव्य हैं। एक विधायी (Legislative) दूसरा न्यायकारी (Judicial)। विधायक सदन के रूप में आरम्भ में हाउस आफ लार्ड् स को ही राजा को विधि बनाने में परामर्श देने का अधिकार था केवल सन् १९२२ में ही इस काम में कामन्स की समिति की आवश्यकता समझी गई। १९वीं शताब्दी के मध्य तक सिद्धान्तत व व्यवहार में दोनों सदनों को विधायक सत्ता की दृष्टि के समानाधिकारी समझा जाता था। परन्तु सन् १८६१ के अधिकार विधेयकों के बनाने में विशेषकर अर्थ सम्बन्धी विधियों में हाउस आफ कामन्स की प्रभुता स्वीकार होने लगी। जब सन १९०९ में लार्डस ने आर्थिक विधेयक (Finance bill) के पास होने में रुकावट डाली तो प्रधान मंत्री एस्क्विथ (Asquith) ने हाउस आफ लार्ड् स की विधायिनी शक्ति को कम करने के लिये एक विधेयक प्रस्तुत किया। यह विधेयक सन् १९१२ के पार्लियामेंटरी ऐक्ट, के स्वरूप में पास हो गया ? इससे हाउस आफ लार्ड् स की विधायनी शक्ति बहुत कम हो गई।[१] यद्यपि हाउस आफ लार्ड् स अब भी विधि निर्माण के कार्यों में भाग लेता है। पर अब वह केवल एक द्वितीय सदन के समान है जो किसी योजना के बनने में देरी कर सकता है पर रुकावट नहीं डाल सकता।

न्यायकारी कर्त्तव्य—लार्ड् स सभा का दूसरा कार्य न्यायकारी कर्त्तव्य हैं। न्यायकारी संस्था के रूप में हाउस आफ लार्ड् स का अधिकार क्षेत्र दो प्रकार का है, प्रारम्भिक न्यायालय के रूप में और पुनर्विचारक न्यायालय के रूप में। प्रारम्भिक न्यायालय के रूप में सन् १९३६ तक उन पीयरों के मुकद्दमें हाउस आफ लार्ड् स में ही आरम्भ होते थे जो अपनी श्रेणी के ही न्यायाधीशों से सुने जाने की सुविधा की मांग करते थे। पर अब यह अधिकार समाप्त कर दिया गया है। प्रारम्भिक न्यायालय के रूप में हाउस के अन्य काम ये हैं—(१) हाउस आफ कामन्स से लगाये हुए अभियोग (अब ऐसे अभियोग लगाने की प्रथा नहीं रही है) (२) अटेन्डर (Attainder) विधेयक द्वारा मुकद्दमा जो कि अब बहुत ही कम हो गया है (३) उन लागों के विवाहोच्छेद के मुकदमे जो आयरलैण्ड के निवासी हों।

१. १९४९ के पार्लियामेंट एक्ट से अवित्तीय विधेयकों के पास करने में १९११ के पार्लियामेंट में स्वीकृत दो वर्ष देर करने का समय, घटा कर एक साल कर दिया गया। इस विषय में विधेयक को लार्ड् स ने रोक रखा था और दो साल बीत जाने पर सन् १९४७ में यह विधेयक स्वीकृत हो गया।

(४) पीयर बनने के अधिकार सम्बन्धी मुकदमें (५) विशेषाधिकारो के विरुद्ध किये गये अपराधो के अभियोग (६) स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड के पीयरो के निर्वाचिन सम्बन्धी झगडे। पुनर्विचारक न्यायालय (Court of Appeal) के रूप में हाउस आफ लार्ड्स सारे देश की अदालतों के निर्णयो पर पुनर्विचार कर सकता है। परन्तु न्याय सम्बन्धी यह कार्य लार्ड स आफ अपील इन आर्डिनरी (Lord of Appeal in Ordinary) ही करते हैं सम्पूर्ण हाउस इस काम को नही करता। जब अपीलो की सुनवाई होती है तब लार्ड चान्सलर जो लार्ड्स आफ अपील इन आर्डिनरी में एक लार्ड होता है सभापति का आसन ग्रहण करता है। परन्तु प्रारम्भिक न्यायालय के रूप में काम करने पर लार्ड हाई स्टीवार्ड (Lord High Steward) हाउस के सभापति का काम करता है जो प्रत्येक मुकदमे के लिये विशेष रूप से राज्याधिकार से नियुक्त होता है।

हाउस आफ लार्ड्स सभा के अधिवेशन नियमित रूप से मगल, बुध, बृहस्पति तथा कभी-कभी सोमवार को भी होते हैं। यद्यपि एक नियमित बैठक की गणपूरक सख्या निश्चित है परन्तु किसी भी विधेयक को स्वीकार करने के लिये कम से कम तीस सदस्य उपस्थित होने चाहिये और इसलिये जब कभी लार्ड्स के सामने कामन्स से विधेयक आते हैं तो हाउस आफ लार्ड्स के अधिवेशन लम्बे होते हैं और उनमे अधिक उपस्थिति रहती है।

पार्लियामेन्ट के अधिकार

पार्लियामेंट की सर्वोच्च सत्ता—प्रसिद्ध लेखक मैरियट (Marriot) ने पार्लियामेंट की महत्ता का इन शब्दो में वर्णन किया है, "किसी भी दृष्टि से परीक्षा करने पर यह ज्ञात होता है कि विधान मण्डल ससार में सबसे अधिक महत्वपूर्ण और रोचक सस्था है। प्राचीनता में बेजोड अधिकार क्षेत्र में सर्वाधिक विस्तृत और शक्ति में असीम। अधिकारी होने के कारण और सर्वदा मानव जाति के एक चौथाई भाग के लिये विधि निर्बन्ध बनाते रहने से पार्लियामेंट (या यो कहिए कि पार्लियामेंट स्थित राजा) अपने आप से ऊँची किसी घरेलू सत्ता को नही मानती। एक शब्द में वह राजा के अधिराज्यो के अन्तर्गत सब पारलौकिक तथा लौकिक मामलो मे सर्वोच्च सत्ता है। इतने विशाल अधिकारो की स्वामिनी पार्लियामेंट की जोड की दूसरी सस्था ससार मे नही है। आचार्य डायसी ने इस सर्वोच्च सत्ता का स्पष्टीकरण करने के लिए तीन बात कही है। (१) ऐसे कोई भी निर्बन्ध अर्थात् कानून नही हैं जिसे पार्लियामेंट न बना सकती हो (२) ऐसा कोई निर्बन्ध नही जिसमे पार्लियामेंट सशोधन या परिवर्तन न कर सकती हो (३) अग्रेजी शासन विधान मे अवैधानिक और

वैधानिक निर्बन्धों में कोई स्पष्ट अन्तर नहीं है। यद्यपि स्टैट्यूट आफ वैस्टमिनिस्टर पार्लियामेंट के विस्तृत अधिकारों का एक उदाहरण है। परन्तु उसके पास हो जाने से पार्लियामेंट की सर्वोच्च सत्ता में कमी आ गई क्योंकि उसके द्वारा अधिराज्यों (Dominions) की पार्लियामेंटों को यह अधिकार दे दिया गया था कि वे अपने देश के लिये कोई भी कानून बना सकती हैं चाहे वह कानून ब्रिटिश पार्लियामेंट के किसी एक्ट के विरुद्ध भी हो पर इन स्वायत्त शासन वाले देशों को छोड़ कर ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे भाग अब भी पार्लियामेंट की सर्वोच्च सत्ता के आधीन हैं[१]। ब्रिटिश साम्राज्य में स्वशासित अधिराज्यों के बाहर कोई न्यायालय ब्रिटिश पार्लियामेंट के बनाये हुए निर्बन्धों के वैध-अवैध होने पर शंका नहीं कर सकता। संक्षेप में पार्लियामेंट की सर्वोच्च सत्ता की यही प्रकृति है जो कि केवल विधान की दृष्टि से सर्वोच्च सत्ता है। क्योंकि राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता ब्रिटेन की जनता के हाथ में है जो इस पार्लियामेंट को चुन कर जन्म देती है।

वास्तविक शक्ति कामन्स के हाथ में है—पार्लियामेंट का मुख्य काम आर्थिक व दूसरे प्रकार के निर्बन्धों को बनाना और मंत्रिमंडल तथा देश के सामान्य प्रशासन पर नियंत्रण रखना है। सिद्धान्ततः सब निर्बन्ध किंग इन पार्लियामेंट (King in Parliament) अर्थात् राजा और पार्लियामेंट की सम्मति से बनते हैं परन्तु व्यवहार में हाउस आफ कामन्स के जनतंत्रात्मक बनने से और राजा द्वारा सारे अधिकार पार्लियामेंट को सौंप जाने से हाउस आफ कामन्स ही सब विधि-निर्माण के कार्यों का सम्पादन करता है और मंत्रिमंडल का नियंत्रण करता है। इस शक्ति में १९११ के पश्चात् और भी अधिक वृद्धि हो गई है। राजा तो केवल इससे सन्तुष्ट रहने लग गया है कि उसको खर्च करने के लिये धन मिलता है और वह शासन के उत्तरदायित्व के भार से मुक्त है। सन् १९११ से पहले भी हाउस आफ लार्ड्स सब महत्वपूर्ण निर्बन्धों के विषय में हाउस आफ कामन्स की प्रभुता स्वीकार कर लेता था, विशेषकर अर्थ सम्बन्धी मामला में हाउस आफ कामन्स वास्तविक शक्ति व अधिकार का उपभोग करता था यद्यपि हाउस आफ लार्ड्स को परिवर्तन के सुझाव देने और अपना नियंत्रण रखने का कानूनी अधिकार प्राप्त था। एरसकिन मे (Erskine May) ने राजा हाउस आफ लार्ड्स और हाउस आफ कामन्स के पारस्परिक सम्बन्ध को बड़े ही स्पष्ट शब्दों में समझाया है जो इस प्रकार है —

---

१ १५ अगस्त् १९४७ से ब्रिटिश पार्लियामेंट ने भारत, पाकिस्तान, मलाया और बर्मा के लिये विधान बनाना बन्द कर दिया है। बर्मा कामनवैल्थ का सदस्य भी नहीं रहा है।

राजा पैसा चाहता है, कामन्स उसे मंजूर करता है और लार्ड्‌स उस मंजूरी से सहमत होते हैं। परन्तु कामन्स पैसे की मंजूरी नहीं देते जब तक राजा को उसकी आवश्यकता न हो। न वे नये कर लगाते या पुरानों में वृद्धि करते हैं जब तक ऐसा करना अनुदानों की मंजूरी के लिये आवश्यक न हो या आगम में कमी न पड़ गई हो। राजा को करो के प्रकार या उनके विवरण से कोई सरोकार नहीं रहता पर पार्लियामेंट के कर रोपण (taxation) का आधार उन समाज सेवाओं की अवश्यकता है जिनको राजा ने अपने वैधानिक परामर्शदाताओं के द्वारा निश्चित कर दिया है।

सन् १९११ का पार्लियामेंट एक्ट और दोनों सदनों के सम्बन्ध—सन् १९०९ में अर्थ विधेयक के विषय में दोनों सदनों में विरोध से उत्पन्न वैधानिक संकट के फलस्वरूप एस्क्विथ के मंत्रिमण्डल के प्रस्ताव करने पर सन् १९११ का पार्लियामेंट एक्ट बना। उस समय एस्क्विथ के उदार पक्ष को विरोधी पक्ष की अपेक्षा १२७ सदस्यों का बहुमत प्राप्त था। यद्यपि प्रस्तावना में जिस सुधार की आशा दिखलाई गई थी वह सुधार अभी तक नहीं हो पाया है, पर इस एक्ट में दोनों सदनों के पारस्परिक सम्बन्ध को *निश्चित रूप से स्थिर कर दिया गया और उस सन्देह को समाप्त कर दिया जो* हाउस आफ लार्ड्‌स के सम्बन्ध में जब तब हुआ करता था। २१ फरवरी, सन् १९११ को दो सदनों के परस्पर सम्बन्ध विषयक पार्लियामेंट के विधेयक को प्रथम वाचन के लिये प्रस्तुत करते हुए प्रधान मंत्री एस्क्विथ ने कामन्स सभा में इस प्रकार कहा, 'फिर अध्यक्ष महोदय! उनके नीति, प्रशासन, अथवा विधान पर नियंत्रण करने के अधिकार के बारे में दोनों सदनों का वैधानिक सम्बन्ध जो कि सम्मानित और समान शक्ति रखते हैं वास्तविक तथ्य के अनुकूल नहीं हैं। हाउस आफ लार्ड्‌स की बहुत समय से नीति अथवा प्रशासन में कोई वास्तविक शक्ति नहीं है वह ऐसे विषयों पर वाद विवाद करते हैं और हम बड़े चाव से उनके वाद विवाद को पढ़ते हैं' और उनसे लाभ उठाते हैं। परन्तु उनके निर्णय शास्त्रीय निष्कर्ष मात्र हैं और उनका कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं होता—और अपने भाषण को समाप्त करने से पहले उसने कहा १९०९ की शरद ऋतु में सीमा ही आ पहुँची थी, जबकि हाउस आफ लार्ड्‌स ने उस वर्ष के वित्त को रद्द कर दिया मैं नहीं समझता कि मैं यह कहकर कुछ भी अतिशयोक्ति कर रहा हूँ कि उस घातक दिन, जो कि किसी अन्य के लिये नहीं बल्कि हाउस आफ लार्ड्‌स के लिये ही घातक था, ३० नवम्बर, सन् १९०९ को हाउस आफ लार्ड्‌स ने जैसा कि हम उसे जानते हैं जैसा कि हमारे पिता और पितामहों ने उसको जाना है। राजनैतिक आत्महत्या कर ली। परन्तु धमकाये हुए (threatened) आदमियों के समान पतित संस्थायें भी अधिक दिन जीवित रहती हैं और हाउस आफ लार्ड्‌स अब भी मौजूद हैं यद्यपि उसके पर काट दिये

गये है और उसकी आवाज से कोई हानि नही हो सकती।

सन् १९११ का पार्लियामेंट एक्ट इतना महत्वशाली है कि इसकी मुख्य मुख्य धाराओ का अनुवाद यहा दिया जाता है —

पार्लियामेन्ट एक्ट्स सन् १९११—पार्लियामेंट की अवधि को सीमित करने के लिये और हाउस आफ कामन्स के सम्बन्ध मे हाउस आफ लार्ड्स की शक्तियो के बारे में प्रविधान बनाने का एक अधिनियम । (१८ अगस्त, १९११) ।

क्योकि यह आवश्यक है कि पार्लियामेंट के दोनों आगारो के सम्बन्ध को नियमित करने के लिये प्रविधान बनाया जाय।

और क्योंकि यह विचार हो रहा है कि हाउस आफ लार्ड्स के स्थान पर एक द्वितीय सदन सगठित किया जाय जो पैतृकाधिकार पर न बनाया जाकर लोकसत्तात्मक ढग पर बनाया जाय पर ऐसे नये द्वितीय आगार का बनाना अभी नही हो सकता।

और क्योंकि ऐसे नये द्वितीय आगार बनाने पर नये आगार के अधिकारो की परिभाषा और मर्यादा स्थिर करनी होगी पर यह वांछनीय है कि हाउस आफ लार्ड्स के अधिकारो की मर्यादा का प्रविधान इस एक्ट मे जैसा किया गया है कर दिया जाय।

इसलिये—यह व्यवस्था की जाती है कि (१) यदि कोई मुद्रा विधेयक हाउस आफ कामन्स से पास होकर हाउस आफ लार्ड्स के सत्र के समाप्त होने से कम से कम एक माह पहले भेज दिया गया हो और वह विधेयक इस प्रकार पहुँचने से एक माह के भीतर बिना सशोधन किये पास न किया जावे तो वह विधेयक हाउस आफ कामन्स का कोई विपरीत आदेश न होने पर सम्राट् के सम्मुख उपस्थित किया जावेगा और सम्राट् के सहमिति सूचक हस्ताक्षर होने पर यह विधेयक एक्ट बन जायेगा चाहे हाउस आफ लार्ड्स ने उस विधेयक पर अपनी सम्मति न दी हो।

(२) मुद्रा विधेयक वह सार्वजनिक विधेयक है जिसमें कामन्स सभा के अध्यक्ष के मत से वही प्रविधान है जो आगे वर्णन किये हुए सब या इनमे से किसी एक विषय से सम्बन्ध रखते हों, कर का लगाना, तोडना, माफ करना, बदलना या सुव्यवस्थित करना, ऋण चुकाने का भार या किसी दूसरे व्यय का भार, एकत्रित कोष पर या पार्लियामट से दिये हुए धन पर डालना, ऐसे व्यय में कमी या वृद्धि करना या बिलकुल समाप्त कर देना, सार्वजनिक धन का दान, पर्यादान उगाहना, सुरक्षित रखना और उसका हिसाब रखना व हिसाब की जाँच करना, किसी ऋण की प्रत्याभूति (Guarrantee) बढाना या उस ऋण का चुकाना, या इन सब विषयो से सम्बन्धित कोई कार्यवाही करना, इस धारा मे 'कर', सार्वजनिक 'धन' और 'ऋण' से स्थानीय सस्थाओ के 'कर' 'धन' और 'ऋण' मे अभिप्राय न समझा जाय।

(३) जब कोई मुद्रा विधेयक हाउस आफ लार्ड्स के लिये या सम्राट् की

सम्मति के लिये भेजा जाय तो उस पर स्पीकर का प्रमाण लेख होना चाहिये कि वह मुद्रा विधेयक है। इस प्रकार प्रमाणित करने के पूर्व, स्पीकर यदि सम्भव हो तो निर्वाचन सम्मति द्वारा प्रति सत्र के आरम्भ मे नियुक्त सभापतियो में से दो व्यक्तियों से सम्मति लेगा।

२-(१) यदि कोई सार्वजनिक विधेयक (जो मुद्रा विधेयक न हो या जो पालिया-मेन्ट की अवधि पाँच वर्ष से अधिक न बढ़ाता हो) हाउस आफ कामन्स में लगातार तीन सत्रो मे पास हो जाय। (चाहे उसी पालियामेंट में या अन्य मे) और वह हाउस आफ लार्ड्स के सत्र के समाप्त होने से एक मास पूर्व भेजा जा कर वहाँ उन सत्रो मे से प्रत्येक सत्र मे रद्द हो जाये तो वह विधेयक हाउस आफ लार्ड्स में तीसरे सत्र मे रद्द होने पर हाउस आफ कामन्स के विपरीत आदेश न होने पर सम्राट् के सम्मुख सम्मति के लिये प्रस्तुत किया जावेगा और सम्मति मिलन पर एक्ट बन जायगा। चाहे हाउस आफ लार्ड्स ने उसे स्वीकार नही किया हो। परन्तु यदि उन तीनो सत्रो में से कामन्स के पहले सत्र के द्वितीय वाचन (Second Reading) के पश्चात् कामन्स के तीसरे सत्र तक जब यह विधेयक पास हुआ हो दो वर्ष का समय न बीता हो तो यह विधान लागू न होगा।

(२) जब उपर्युक्त धारा के अनुसार विधेयक सम्राट् के सम्मुख प्रस्तुत किया जायगा तो उसके साथ कामन्स के स्पीकर का यह प्रमाण पत्र होगा कि इस धारा के प्रविधानो की पूर्ति हो चुकी है।

•(३) यदि विधेयक बिना सशोधन के या ऐसे सशोधना के साथ जो कामन्स ने मान लिये हो हाउस आफ लार्ड्स मे पास न हो तो वह हाउस आफ लार्ड्स द्वारा रद्द किया समझा जायगा।

(४) कोई विधेयक वही समझा जायगा जो पहले हाउस आफ लार्ड्स में भेजा गया था, यदि वह पहले विधेयक से मिलता जुलता हो या उसमें स्पीकर से प्रमाणित ऐसे परिवर्तन हो जो उस समय के बीतने के कारण आवश्यक हो गये हो या जो हाउस आफ लार्ड्स द्वारा किये हुए सशोधनो को मिलाने के लिये किये गये हो और यदि हाउस आफ लार्ड्स ने ऐसे सशोधन अपने तीसरे सत्र में कर दिये हो जो कामन्स को स्वीकार हो तो वह स्पीकर द्वारा प्रमाणित होकर उस विधेयक में शामिल कर दिये जायेंगे। जो विधेयक सम्राट् की सम्मति के लिये प्रस्तुत किया गया हो।

परन्तु यदि हाउस आफ कामन्स उचित समझे तो अपने दूसरे और तीसरे सत्र में पास होने पर और दूसरे सशोधन का सुझाव कर सकता है। ये सशोधन बिना उनको विधेयक मे शामिल किये हुए, और ये सब सुझाव किये हुए हाउस आफ लार्ड्स में विचार के लिये रखे जायेंगे। और वहाँ स्वीकार होने पर ये सशोधन वे सशो-

धन समझे जावेगे जो हाउस आफ लार्ड्स ने किये हो और कामन्स ने स्वीकार कर लिये हो। परन्तु यदि हाउस आफ लार्ड्स इस विधेयक को रद्द कर दे तो हाउस आफ कामन्स के इस अधिकार-प्रयोग से इस धारा के कार्यान्वित होने पर कोई प्रभाव न पडेगा।

३—स्पीकर का प्रमाण पत्र अन्तिम समझा जावेगा और कोई न्यायालय उस पर विचार न कर सकेगा।

४—(अ) राजा के सम्मुख प्रस्तुत प्रत्येक विधेयक में ये शब्द होगे "Be it enacted by the Kings most Excellent Majesty, by and with the advice and consent of the Commons in this present parliament assembled in accordance with the provisions of the Parliament Act 1911 and by the authority of the same as follows;

(ब) इस धारा को कार्यान्वित करने के लिये किसी भी विधेयक में कोई परिवर्तन विधेयक का सशोधन नहीं माना जायेगा।

५—इस एक्ट में सार्वजनिक विधेयक में किसी प्रावधिक आज्ञापत्र को स्वीकार करने का विधेयक शामिल नही है।

६—इस एक्ट में कुछ भी कामन्स सभा के वर्तमान अधिकारो और विशेष अधिकारो में कमी नही करेगा।

७—सन् १७१५ के सैप्टेनियल एक्ट के अन्तर्गत पालियामेंट की महत्तम अवधि को सात वर्ष के स्थान पर पाँच वर्ष कर दिया जाय।

८—यह एक्ट पालियामेंट एक्ट १९११ के नाम से पुकारा जाय।

इस प्रकार १९११ के पालियामेंट एक्ट द्वारा दोनो सदनो की शक्तियो तथा पारस्परिक सम्बन्धो के बारे में निम्नलिखित वैधानिक परिवर्तन हुए—

मुद्रा-विधेयको के ऊपर हाउस आफ लार्ड्स का कोई अधिकार न रहा। ये मुद्रा-विधेयक हाउस आफ कामन्स में पास हो जाने के ३० दिन बाद पास हुए समझे जाते है चाहे हाउस आफ लार्ड्स ने उनका विरोध ही क्यो न किया हो। इस एक्ट से स्पीकर को यह अधिकार दे दिया गया कि वह यह निर्णय करे कि कौन सा विधेयक साधारण विधेयक है और कौन सा मुद्रा विधेयक। स्पीकर के इस निर्णय के विरुद्ध किसी भी न्यायालय में सुनवाई नही हो सकती। हाउस आफ लार्ड्स दूसरे विधेयको को, जो मुद्रा विधेयक न हो दो वर्ष तक टाल सकता है। १९४९ के पालियामेंट एक्ट से यह अवधि एक साल कर दी गई। हाउस आफ कामन्स को कानून बनाने का नियमित अधिकार दे दिया गया है, इसमें केवल एक ही अपवाद है, वह यह कि एक्ट से ही निश्चित पाँच वर्ष की अपनी अवधि को हाउस आफ कामन्स बढा नही सकता।

अध्याय ८

पार्लियामेन्ट की कार्य प्रणाली

"अंग्रेज लोग सन्तुष्ट समाज कहलाते हैं जो कि स्वय अपने कारनामो पर अपने को बधाई देने की विलासिता के आदी हैं। मेरी यह विश्वास करने की प्रवृत्ति है कि सदन के कार्यों पर जितना ही अधिक विचार किया जाता है उनको उतना ही अधिक अपनी प्राप्ति (achievement) की भावना के लिये कारण मिलेगा।'

—हैरोल्ड जे० लास्की।

एक शाही घोषणा द्वारा एक पार्लियामेंट भग की जाती है और दूसरी बुलाई जाती है जिसमें नई पार्लियामेंट की बैठक का समय और तारीख दी हुई होती है। वेस्ट मिन्सटर का महल पार्लियामेंट के मिलने का स्थान है, कामन्स हरे आगार में और लार्ड्स लाल आगार में मिलते हैं। द्वितीय महायुद्ध में १० मई १९४१ को जर्मनी के बम्बो से यह इमारत नष्ट हो गई थी परन्तु वह शीघ्र ही बना दी गई और १९५० में नई इमारत में ठीक उसी स्थान पर काम होने लगा जहाँ पहले होता था।[१] नया कामन्स सदन पुराने से बडा है और उसमें लगभग ४५० अर्थात् सदन के दो तिहाई सदस्यो के बैठने का स्थान है। बहुत ही कम अवसरो पर सदन भरता है। बहुत से सदस्य बरामदो में घूमते रहते है या गोष्ठी कक्षो (Lobbies) में कुछ काम करते रहते है या उस विशाल भवन के किसी अन्य भाग में व्यस्त रहते हैं जिसमें लगभग १२०० कमरे है। कामन्स सभा का आकार अण्डाकार है अध्यक्ष की कुर्सी आगार में घुसने के स्थान के ठीक विरुद्ध होती है। द्वार में एक पीतल की छड लगी रहती है जिसको घूमकर सदस्य अपना स्थान ग्रहण करते हैं। प्रधान मत्री अध्यक्ष के दाईं ओर सामने की बेन्च पर बैठता है जब कि विरोधी दल का नेता प्रधान मत्री के ठीक दूसरी ओर उसके बिल्कुल सामने और अध्यक्ष के बाईं ओर बैठता है। उनमें से प्रत्येक के दोनों ओर उनके पक्षो के प्रमुख सदस्य होते हैं। (प्रधान मत्री के पास मन्त्रि परिषद के सदस्य होते हैं और विरोधी दल के नेता के पास तथा कथित "छाया मन्त्रि परिषद्" (Shadow Cabinet) के सदस्य होते है।

---

१ पुराने सदन के भवन का डिजाइन क्रिस्टोफर रेन ने बनाया था नये का डिजाइन सर चार्ल्स बेरी ने बनाया है।

जब एक नई कामन्स सभा अपने आगार में पहली बार एकत्रित होती है तब वह कुछ मिनट तक प्रतीक्षा करती है जब तक कि लार्ड चान्सलर की आज्ञा लेकर ब्लैक रॉड काली छड़ी लेकर दिखाई पड़ता है और कामन्स सभा के सदस्यों को हाल में जाने को आमंत्रित करता है और तब वे सदन के क्लर्क के नेतृत्व में हाउस आफ लार्ड्स के विशाल बरामदे मे गुजरते है ऐसा होने के बाद लार्ड चान्सलर घोषणा करता है "सम्राट् यह चाहते है कि आप किसी विद्वान तथा योग्य व्यक्ति को अपना स्पीकर चुन लें।" कामनर लोग तब चुपचाप कामन्स सदन को वापस लौट जाते है और अपना स्पीकर चुन लेते हैं। तब लार्ड चान्सलर से *राजा द्वारा राजसिंहासन से पार्लियामेंट का* उद्घाटन करते समय व्यक्तिगत रूप में दिये जाने वाले भाषण को सुनने का बुलावा आता है। *कभी कभी यह भाषण राजा द्वारा नियुक्त कोई अन्य व्यक्ति देता है।* जब राजा पार्लियामेंट का उद्घाटन करता है तब वह बडे ठाठ बाट से तमाम रास्ते प्रतीक्षा करती हुई जनता की हर्ष ध्वनि के बीच एक शानदार जुलूस के रूप में हाउस आफ लार्ड्स को जाता है। वह बड़ी गम्भीरता से लार्ड्स सदन में प्रवेश करता है, स्वयं अथवा प्रधान मंत्री द्वारा पहले से तैयार किया हुआ भाषण पढ़ता है जिसमें कि सरकार द्वारा निश्चित नीति की मोटी रूप-रेखा होती है। इसके बाद कामन्स सदस्य अपने सदन को लौट जाते है और अपनी कार्यवाही शुरू करते हैं।

पार्लियामेंट के सत्र—जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि एक पार्लियामेंट का कार्यकाल प्रीवी कौंसिल की सलाह से राजा के भाषण से शुरू होता है पहले राजा के मरने से पार्लियामेंट भी अपने आप भंग हो जाती थी परन्तु १८६७ के रिप्रजेन्टेशन आफ दि पीपुल एक्ट के पास हो जाने से पार्लियामेंट के दोनो सदन केवल तब तक स्थगित रहते है जब तक कि उनके सदस्य नये राजा की आधीनता की प्रतिज्ञा नही कर लेते और यह घोषणा के लिये उत्तराधिकार समिति की आज्ञा हो जाने के बाद तत्काल हो जाता है।

पार्लियामेंट के मिलने और उसके भंग होने के बीच का समय पार्लियामेंट का सत्र (Session) कहलाता है उसके सत्र के बीच में कोई भी सदन किसी अन्य तिथि पर मिलने के लिये बैठक स्थगित कर सकता है। स्थगन (Adjournment) का किसी प्रकार से भी यह मतलब नही होता कि अधूरे काम पर किसी तरह से प्रभाव पड़ता है क्योंकि दुबारा बैठक होने पर कार्यवाही वही से शुरू होती है जहां छोड़ दी गई थी। दूसरी ओर पार्लियामेंट के सत्रावसान (Prorogation) क्राउन के द्वारा अधिकृत एक कमीशन द्वारा किया जाता है। सत्रावसान का मतलब है कि अधूरा काम छोड़ दिया गया है और पार्लियामेंट के फिर एकत्रित होने पर वांछित होने पर उसे दुबारा पास किया जा सकता है अन्यथा वह छोड़ दिया जाता है।

औसत रूप में पार्लियामेंट के सत्र में लगभग १६० बैठक वाले दिन होते हैं जो कि आमतौर से चार भागो में बाँट दिये जाते हैं, नवम्बर से क्रिसमस तक करीब ३० बैठक के दिन, जनवरी से ईस्टर तक करीब ५० बैठक के दिन ईस्टर से ह्विटसन (Whitson), (ईस्टर के सात सप्ताह बाद) लगभग ३० बैठक के दिन और ह्विटसन से जुलाई के अन्त तक करीब ४० बैठक के दिन पिछले कुछ दिनो से बहुधा अक्टूबर मे १० बैठक के दिन होते हैं।

पार्लियामेंन्ट की बैठक—पार्लियामेंट की प्रत्येक बैठक के उद्घाटन के समय स्पीकर का जुलूस निश्चित समय पर पार्लियामेंट में प्रवेश करता है। स्पीकर घुटनों तक ब्रीचेज और लम्बा काला गाउन तथा सिर पर सफेद ह्विग की परम्परागत पोशाक में आता है। स्पीकर छतदार कुर्सी पर परम्परागत रूप से अपने हाथ से सिर टेक कर बैठता है। प्रार्थनायें की जाती है, पादरी उनको पढता है। तब स्पीकर उपस्थित सदस्यो को गिन कर यह निश्चित करता है कि गणपूरक सख्या उपस्थित हैं या नही। यदि चालीस सदस्यो को गणपूरक सख्या नही उपस्थित होती तो उसकी अनुपस्थिति के चिह्न स्वरूप बरामदो, गोष्ठी कक्षो, वाचनालयो तथा धूम्रपान कक्षो आदि में घटियाँ बजती हैं। यदि दो मिनट बाद भी गणपूरक सख्या पूर्ण नही होती तो स्पीकर बैठक को स्थगित कर सकता है परन्तु ऐसे अवसर बहुत ही कम आते हैं। पार्लियामेंट को कार्यवाहियो के बीच में एक बडी सख्या में सदस्य आराम करने के कमरो, गोष्ठी कक्षो या पुस्तकालय में चले जाते हैं तथा कुछ और काम करते हैं क्योकि वे विवाद के विषय में रुचि नही रखते। जब कार्यवाही अरुचिकर होती है तो गणपूरक सख्या से भी कम कुछ थोडे से सदस्यो के साथ निर्बाध काम करता रहता है और जब तक कोई स्पीकर का ध्यान इस ओर न खीचे कि गणपूरक सख्या पूरी नहीं है तब तक स्पीकर कार्यवाही को चलने देता है।

सदन सप्ताह में पाँच दिन सोमवार से शुक्रवार तक मिलता है यद्यपि इनमें से आखिरी दिन पर वह ११ बजे रात से पहले उठ जाता है जिससे कि सदस्य यदि चाहे तो अपने निर्वाचन क्षेत्रो को वापस जाकर अपनी इच्छानुसार सप्ताह के अतिम दिन काट सकें। सदस्य अक्सर सप्ताह के अन्तिम दिन अपने निर्वाचन क्षेत्रों में उनकी आवश्यकताओ की देखभाल मे, सभाओ मे भाषण देने, महत्वपूर्ण व्यक्तियो से मिलने और मतदाताओ से हृमने बोलने में गुजारते हैं जिससे कि यह जाहिर हो कि उनको अपने मालिको की जरूरतें याद हैं।

कामन्स में प्रश्न का समय—कामन्स सभा में सबसे अधिक मनोरजक और चैतन्य समय प्रश्न का घटा सोमवार से वृहस्पति तक पहले चार दिनो में प्रत्येक दिन एक घटा है जिसमे मत्रियो को अपने अपने विभागो में प्रशासन के सब पक्षो पर

प्रश्नो का उत्तर देना पडता है। सदन के सदस्य सम्बन्धित मंत्रिमंडल से प्रश्न करने के अपने अधिकार की सावधानी से रक्षा करते हैं और उसमें किसी प्रकार की कमी पसन्द नही करते। एक विभाग के मंत्री से प्रश्न पूछने के द्वारा ही एक सदस्य किसी विषय में कुछ सूचना पा सकता है (चाहे वह छोटी बात हो या सरकारी नीति से सम्बन्धित कोई अत्यधिक सार्वजनिक महत्व का मामला) प्रश्न करने का उद्देश्य किसी विशेष विषय पर सूचना प्राप्त करना होता है। अत प्रश्न की भाषा स्पष्ट होनी चाहियें। प्रश्न औपकाल्पनिक (Hypothetical) नही होना चाहियें और न उसमें "विवाद, अनुमान, दोषारोपण, उपाधि अथवा व्यगोक्ति" ही होनी चाहिये। स्पीकर को इस नियम के उल्लघन करने वाले प्रश्न को मानने से इनकार करने का अधिकार है। प्रश्न के घटे में ही सदन बहुधा भरा रहता है क्योकि सदस्य बहुधा यह जानने के इच्छुक होते हैं कि मंत्रीगण प्रश्नों तथा सहायक प्रश्नों को कैसे झेलते हैं जो कि मुख्य प्रश्नकर्ता अथवा मंत्री के उत्तर से असतुष्ट कोई भी सदस्य पूछ सकता है। यह मंत्री की परीक्षा का समय होता है जिससे यह जाहिर होता है कि उसको अपने विभाग के कामो के सम्बन्ध में विस्तृत और सामयिक सूचनायें ज्ञात हैं अथवा नही। यदि कोई प्रश्न सदस्यों को सन्तुष्ट नही करता तब वे प्रश्न के घटे के अन्त में सभा के स्थगन की मांग कर सकते हैं जिसके लिये विवाद में भाग लेने के लिये कम से कम चालीस सदस्यों का होना अनिवार्य है। परन्तु कामन्स सभा में प्रश्नो का वह महत्व नही है जो कि कुछ महाद्वीपीय देशो में परिप्रश्नो (interpellations) का है जहाँ पर किसी परिप्रश्न के परिणाम स्वरूप मंत्रिमंडल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास किया जा सकता है। सयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस में इस प्रकार के प्रश्न पूछने की कोई व्यवस्था नही है क्योकि वहाँ सरकारी बेंचे और विरोधी पक्ष की बेंचें नही होती। कार्यकारिणी की अध्यक्षतात्मक व्यवस्था में इस प्रकार की प्रथा की आवश्यकता नही होती।

सदन की बैठक में एक सदस्य चार से अधिक प्रश्न नही पूछ सकता, उत्तर की प्रवृत्ति के अनुसार सहायक प्रश्नो की सख्या कुछ भी हो सकती है। प्रत्येक दिन १५० से २०० प्रश्न पूछे जाते हैं परन्तु उनमें से अधिकतर एक घटे की सीमा में नही हो पाते। प्रश्न और उनके उत्तर दिन के छपे हुए कार्यक्रम में जैसे निकलते हैं चाहे वे वास्तव में सभा में पूछे और उत्तर दिये गये हो या नही, वैसे ही सदन की छपी हुई कार्यवाही (जो कि हन्साड (Hansaord) कहलाती है) में शामिल कर लिये जाते हैं। यदि किसी मंत्री की सम्मति में किसी प्रश्न का उत्तर सार्वजनिक हित में नही होगा अथवा कि वह कूटनीति अथवा गृहनीति के गुप्त रहने में बाधक है तो वह उसका उत्तर देने से इनकार कर सकता है। सबधित मंत्री को अल्पकालीन

नोटिस देकर किसी आवश्यक विषय पर "अल्पकालीन नोटिस" (Short notice) प्रश्न पूछा जा सकता है। साधारणतया किसी प्रश्नका उत्तर तैयार करने के लिये कुछ निश्चित समय दिया जाता है क्योंकि मत्री को प्रश्न का उत्तर देने के लिये सबधित अफसरों या कार्यालयो से पूर्ण सूचना प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। किसी प्रश्न के उत्तर में होने वाला औसत खर्चा २ पौंड ५ शिलिंग अथवा लगभग ३४ रुपये होता है। और प्रत्यक सत्र में पूछे गए प्रश्नो की बडी सख्या को देखत हुए उनपर बडा खर्चा होता हैं परन्तु यह उचित है क्योंकि वह सदन को सरकार के कार्यों के बारे में बडा सतर्क रखती है और मत्रिमडल और अपनी नीति पर चलन के बारे में तथा अन्त में वह प्रशासक सेवा के अफसरो को उनके सार्वजनिक कर्त्तव्यो के प्रति उपेक्षा रखने से रोकता है। अत पार्लियामेंट के सदस्यो के प्रश्नो के लिये चुकाई गई कीमत सर्वदा उचित है क्योंकि वह सरकार की किसी भी निरकुशता के विरुद्ध मतदाता को स्वतत्रता की रक्षा करता है।

पार्लियामेन्ट के कार्य—जब बेजहोट ने अग्रेजी सविधान पर अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा तब उसने पार्लियामेंट के निम्नलिखित कामो को गिनाया —

(१) "कामन्स सभा एक निर्वाचित सदन है, एसेम्बली हमारा अध्यक्ष चुनती है।" यद्यपि राजा ब्रिटिश प्रधान मत्री की नियुक्ति करता है (जिसका पद अमेरिकन प्रेजीडेन्ट के अनुरूप है) वास्तव मे कामन्स सभा ही उसको चुनती है क्योकि कामन्स सभा में बहुमत का समर्थन पाये बिना कोई भी प्रधान मत्री अपन पद पर नहीं रह सकता। अत' कामन्स के समर्थन से ही उसके चुनाव का अनुमान लगा लिया जाता है।

(२) कामन्स सभा का दूसरा काम "एक अभिव्यक्ति का है।" और यह सदन मे जनता के प्रतिनिधियो द्वारा किया जाता है जो अपनी भाषण की स्वतत्रता का उपयोग करते हुए सरकार की नीति में मतदाताओ की राय को नि.सकोच अभिव्यक्त करते हैं। बेजहोट के शब्दो में "अपने सामने अपने वाले सब विषयो पर अग्रेज जनता का मन प्रगट करना उसका काम है।"

(३) पार्लियामेंट का तीसरा काम "सिखाने का काम" है जिससे उसका यह मतलब है कि एक समाज के बीच में बैठे हुए कई सौ प्रतिनिधियो को यह समिति आवश्यकता पड़ने पर भिन्न भिन्न प्रकार के कानून बनाकर उसको बदल सकती है और यह परिवर्तन भलाई के लिए होता है।

(४) चौथा कार्य "सूचना देने का कार्य" है अर्थात् वाद विवाद द्वारा जो कि अब छापी जाती है, जनता को यह बतलाता है कि प्रशासन के बारे में क्या हो

रहा है। पहले, सदन अपने वाद विवाद द्वारा राजा को सरकार के विषय में आम जनता की अनुभूतियों और प्रतिक्रियाओं की सूचना देता था परन्तु अब सदन राजा के मन्त्रियों और बाहर के लोगों दोनों को सूचित करता है। (५) पाँचवाँ कार्य "विधान बनाने का कार्य" है जो कि अब कानून का सबसे बड़ा श्रोत है।

वेजहोट ने कामन्स सभा के विकास सम्बन्धी कार्य को समान महत्व नहीं दिया, परन्तु उसका यह तर्क कि तत्सम्बन्धी कार्य राजमुकुट का विशेषाधिकार है, उस नियन्त्रण के महत्व को कम नहीं करता जो कि सदन राजा की कर लगाने की अथवा खर्च करने की शक्ति पर रखता है।

जब से वेजहोट ने अपना ग्रन्थ लिखा तब से थेम्स में बहुत सा जल बह चुका है। सरकार के कामों की हमारी धारणा बदल चुकी है, अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों ने राज्यों के सम्मुख नई समस्याएँ उपस्थित कर दी हैं, इंगलैण्ड में राजतन्त्र से जनतन्त्रीय सरकार की दिशा में परिवर्तन की प्रक्रिया ने पालियामेंट को राजा की पूर्तियों पर मत देने के लिये एकत्रित आधीन समिति के विरुद्ध वास्तविक प्रशासक समिति बना दिया है।

इस समय पालियामेंट तीन महत्वपूर्ण काम करती है जो ये हैं — वह सरकार का नियन्त्रण करती है जो कि सिद्धान्तरूप में राजा की सरकार बने रहते हुए भी जनता के प्रतिनिधियों में से निर्वाचित (यद्यपि अप्रत्यक्ष रूप से) लोगों की सरकार है। कार्यकारिणी (जिसका प्रतिनिधित्व मन्त्रि-परिषद अथवा मन्त्रिमंडल करता है पालियामेंट के प्रति और यथार्थ व्यवहार में कामन्स के प्रति उत्तरदायी है और प्रशासन की नीति के लिये उसको उत्तर देती है, कामन्स मन्त्रिपरिषद को तब तक कायम रखती है जब तक वह सदन द्वारा स्वीकृत नीति पर चलती है और जब वह उसके विश्वास का पात्र नहीं रहती तब उसको निकाल फेंकती है। मन्त्रियों से प्रश्न करके सदन के सदस्य उनको सतर्क रखते हैं। दूसरे, कामन्स खर्च का नियन्त्रण करती है। पुराने जमाने में करों को स्वीकृत करने के लिये राजा पालियामेंट बुलाया करता था। कालान्तर में इससे पालियामेंट पूर्तियाँ (supplies) स्वीकृत करने से पहले शिकायतों को दूर करने पर जोर देने लगी। अब भी परिवर्तन रूप में वही सिद्धान्त कार्य करता है। राजा अथवा रानी की सरकार को चलाने के लिये धन की माँग के लिये मन्त्रिपरिषद् बजट तैयार करती है। पालियामेंट विनियोग (Appropriation) तथा तरीकों व साधनों (Ways and Means) की दो समितियों द्वारा बजट की परीक्षा करती है। फिर, प्रत्येक सरकारी विभाग के आय व्यय के लेखे सार्वजनिक लेखों (Accounts) की विशेष समिति द्वारा जाँचे जाते हैं जो कि कन्ट्रोलर और आडीटर जनरल के लेखों की रिपोर्ट की परीक्षा करती है,

जो कि पालियामेंट के एक अफसर के रूप में स्थायी रूप से नियुक्त रहता है। वह खजाने की माँग पर पालियामेंट द्वारा एक्सचेकर से स्वीकृत धन सम्बन्धी मामलो का नियत्रण करके और सरकारी विभागो के लेखो की लेखा परीक्षा करके पालियामेंट की सहायता करता है। किसी भी विभाग में हुई किसी भी अनियमितता को वह पालियामेंट के सामने लाता है। जब कि मन्त्रिपरिषद राजा के नाम पर रुपया माँगता है कामन्स कर मजूर करता है और जनता उन्हे चुकाती है इस प्रकार कामन्स में जनता के प्रतिनिधि खर्चो पर नियत्रण रखते हैं और अन्ततोगत्वा वे ही बजट पास करने से इनकार करके मन्त्रिपरिषद को पदच्युत कर देते है। और सबसे आखिरी परन्तु सबसे महत्वपूर्ण और रोज होने वाला काम उन सब क्षेत्रो की जनता के लिये कानून बनाना है जिन पर पालियामेंट का नियत्रण है। पहले पालियामेंट सयुक्त राज्य के अलावा सम्पूर्ण साम्राज्य और कामनवैल्थ के लिये कानून बनाती थी। परन्तु १९३१ मे उसने अधिराज्यो के लिये कानून बनाना बन्दकर दिया है, वह अब भारत और पाकिस्तान के लिये कानून नही बनाती जो कि जनतत्र बन गये है। फिर भी पिछले दिनो में पालियामेंट का विधि-निर्माण काफी बढ गया है क्योकि उसने एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिये अपने ऊपर जनता के सार्वजनिक कल्याण का भार भी ले लिया है वह अब नागरिक के जीवन के सब पक्षो और सब विषयो, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार शिशु कल्याण आदि सब पर कानून बनाती है। प्रत्येक सत्र में उसके विधि निर्माण का उत्पादन बहुत होता है, फिर भी वह सब कामो को विस्तार के साथ नही कर सकती। अत उसने कानून और नियम बनाने का बहुत सा काम मन्त्रिमडलो, बोर्डो अथवा कारपोरेशनो पर छोड देने की प्रथा बना ली है जिसको वह एक विशेष कानून से निश्चित कर देती है। यह बोर्ड, कारपोरेशन या स्थानीय निकाय पालियामेंट से अपने काम के लिये नियम अथवा उपविधि निर्माण करने की सामान्य शक्ति प्राप्त कर लेते है जो किसी भी कानून के समान लागू किये जा सकते है। यह "प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण" (Delegated Legislation) कहलाता है। यह प्रत्यायुक्त (delegation) इतनी महत्वपूर्ण हो गई है कि पालियामेंट के बहुत कम अधिनियम ऐसे है जिनमें उसके प्रयोग के लिये कुछ प्रविधान न हो।

प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण का लाभ —पालियामेंट के अधिनियमो में मन्त्रियो, बोर्डो, कारपोरेशनो और स्थानीय निकायो को विधिनिर्माणको शक्ति प्रत्यायुक्त कर दी जाती है। मन्त्रिगण इस शक्ति को कौसिल में अध्यादेश जारी करके अथवा आज्ञाओ, वारन्टो, नियमो या अधिनियमों के रूप में प्रयोग करते है। यद्यपि इस प्रकार की शक्ति का प्रयोग पिछले छ सौ वर्षो से होता आ रहा है (जिसका सबसे पहला प्राप्त उदाहरण १३३७ के एक

परिनियम में पाया जाता है। जिसमे यह विधान बनाया गया था कि इगलैण्ड से ऊन निर्यात नही किया जा सकता जब तक कि राजा और उसकी कौसिल का कोई अन्य आदेश न हो) परन्तु वर्तमान शताब्दी के प्रारभ मे पार्लियामेन्ट के समय पर भार इतना बढ गया है कि अधिकाश मामलो में प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण की पद्धति सामान्य नियम बन गया है।

प्रशासन की विस्तृत बातो को पूरा करने के लिये मत्रिगण तथा अन्य अधिकारियो पर छोड देन के लाभो को सर सी० टी० कार ने इस प्रकार गिनाया है– (१) कि वह पार्लियामेंट के सम्मुख उपस्थित विधेयको को छोटा और स्पष्ट कर देता है और इस प्रकार उसे अधिक काम के निबटने और नीति तथा सिद्धान्तो के मामलो की ओर अधिक ध्यान देने का अवसर देता है जो कि उसके प्रारम्भिक काम हैं। (२) कि वह लचीलेपन को प्रोत्साहित करता है क्योकि प्रशासन की विस्तृत बातें पार्लियामेंट मे बिल पास करते समय निश्चित न करके आवश्यकता पडने पर स्थानीय और विशेष परिस्थितियो मे सामजस्य करते हुए निश्चित करने मे अधिक अच्छी तरह तय की जा सकती हैं, (३) कि वह किसी आपत्ति (Emergency) में किसी लम्बे सोच विचार की आवश्यकता के बिना कार्यकारिणी को शक्ति देने के लिये विधान सभा द्वारा तत्काल कदम उठाने के साधन के रूप में अमूल्य है। (४) कि वह पार्लियामेंट की नीति को कार्यान्वित करने का एक द्रुत गति और सुलभ साधन प्रस्तुत करता है।[1] परन्तु अधिकार की प्रत्यायुक्ति की इस शक्ति का दुरुपयोग भी हो सकता है। इस खतरे से बचाव या कम से कम उसको न्यूनतम करने के लिये इस प्रकार की शक्ति कौंसिल में राजा अथवा ऐसे अन्य अधिकारियो को दी जाती है जो सीधे पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी हो। आगे बहुधा यह भी प्रविधान कर दिया जाता है कि प्रत्यायुक्त विधि निर्माण को लिये हुए एक परिनियम का विलेख कुछ निश्चित समय के अन्तर्गत पार्लियामेंट के सामने पेश किया जाना चाहिये ताकि कामन्स उसकी परीक्षा कर सकें, उसको स्वीकृत या अस्वीकृत कर सकें। कुछ ऐसे मामले होते हैं जिनमें कि आखिरी रूप देने से पहले विलेख का ड्राफ्ट पार्लियामेंट के सामने रखा जाना चाहिये। यदि सदन किसी विलेख को समाप्त करना चाहता है तो वह राजा को एक पत्र लिखता है कि विलेख समाप्त कर दिया जाय और एक कौंसिल के अध्यादेश द्वारा ऐसा कर दिया जाता है। परिनियमो के विलेखो पर अपनी विशेष समितियों की रिपोर्ट के द्वारा सदन प्रत्यायुक्त विधि-

1. Concerning English Administrative Law (Oxford University Press 1922)pp. 32–34

निर्माण की देख रेख रखता है। फिर, प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण का विधान करने वाला मुख्य अधिनियम उस शक्ति के प्रयोग की सीमाओं को निश्चित करता है, और इन सीमाओं का उल्लघन होने पर अदालत उस काम को अवैध घोषित कर सकती है। कुछ अधिनियमो में यह भी आदेश कर दिया जाता है कि प्रत्यायुक्त विधि निर्माण से पहले कुछ विशेष सगठनो और निकायों से परामर्श अवश्य लिया जाना चाहिये।

परन्तु प्रत्यायुक्त विधिनिर्माण के दोषों को रोकने के लिये चाहे कुछ भी बचाव कर लिये जायें यह निश्चित है कि वह व्यक्ति को सरकारी विभागो, मत्रियों तथा अन्य अधिकारियों के आधीन बना कर विधि शासन में हस्तक्षेप करता है। इस प्रथा से शासको का महत्व बढ जाता है और जब प्रत्यायुक्त विधि निर्माण के आकार का विचार किया जाता है तो कोई भी इस निश्कर्ष पर पहुँचे बिना नही रह सकता कि प्रत्यायुक्त विधि निर्माण की व्यवस्था व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर भारी व्याघात है। उदाहरण के लिये परिनियमो के आदेशो और नियमो के रूप में १९२० में ही जारी किये गये कानून लगभग ३००० पृष्ठ घेरते थे जबकि उसी बीच में बने सार्वजनिक परिनियम ६०० पृष्ठ से भी कम जगह घेरते थे। मत्रियों की शक्ति की समिति ने १९३२ में रिपोर्ट की "हमें सन्देह है कि क्या स्वय पार्लियामेण्ट ने यह समझ लिया है कि प्रत्यायुक्ति की प्रथा कितनी विस्तृत हो चुकी है अथवा किस हद तक उसने स्वय अपने कार्यों को इस प्रक्रिया में समर्पण कर दिया है अथवा कितनी आसानी से इस रीति का पूरा प्रयोग हो सकता है।" और उसने पार्लियामेण्ट के आदेशो की अधिक अच्छी तरह जाँच तथा अधिकारी से न्यायालय को अधिक निश्चित अपील का सुझाव दिया। परन्तु वर्तमान शताब्दी में पार्लियामेण्ट के विशाल उत्तरदायित्व को देखते हुये प्रत्यायुक्त विधि निर्माण को एक अनिवार्य दोष समझकर सहन करना ही पडेगा।

कानून का महत्व—प्रत्येक सत्र में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट केवल ग्रेट ब्रिटेन के सयुक्त राज्य और आयरलैण्ड के लिये ही नही बल्कि समुद्र पार के ब्रिटिश राज्य के लिये भी एक बडी सख्या में अधिनियम पास करती है। इन सब कानूनो मे कानून बनाने की प्रक्रिया एक ही है जिसके सौन्दर्य का सर ए० हैल्पस ने इस प्रकार वर्णन किया है" आप उन लोगो पर हँसते हैं जो केवल चित्रों में ही सौन्दर्य देख सकते हैं परन्तु आप किसी गूढ और चक्कर दार कानून की प्रक्रिया के सौन्दर्य की कल्पना भी नही कर सकते जिसमे मानवो की पीढ़ियों के सन्देह और बारीकियाँ शामिल हैं। मैं कहता हूँ कि इस प्रकार देखने से पार्लियामेण्ट का एक अधिनियम दर्शनीय है।" कानूनों की आलोचना करने में रूसो जरूरत से ज्यादा कटु हो गया है जबकि उसने कहा है कि सब देशो के कानूनो की सार्वभौम भावना सदैव बलवान को निर्बल के विरुद्ध और उसको उसके विरुद्ध रखना है कि जिसके पास कुछ नही है। यह दोष अनिवार्य है

और इसमें अपवाद नही है। सी० मैकालिन का भी यही विचार है" कानून एक अस्त व्यस्त विज्ञान है जो कि आपकी जेब काटते समय आपके सामने मुस्कराता रहता है और उसके न्याय से उसकी शानदार अनिश्चितता प्रोफेसरो के लिये उपयोगी है।" परन्तु कानून के विषय में इनमतो के विपरीत रायें भी जाहिर की गई है। पार्लियामेण्ट के द्वारा बनाया हुआ कानून किसी सार्वजनिक हित के विषय पर जनमत जाहिर करता है। वह एक लम्बी प्रक्रिया के बाद पास होता है और चाहे बर्नेट का यह कहना एकदम गलत न हो कि "इगलैण्ड का कानून राष्ट्र का सबसे बड़ा कष्ट है, बड़ा खर्चीला और दीर्घसूत्री" परन्तु फिर भी वह नागरिक तथा समाज के जीवन का नियंत्रण करने के लिये आवश्यक है।

विधेयक और अधिनियम में अन्तर—अब हम ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में कानून बनाने की प्रक्रिया का वर्णन करेंगे। सबसे पहले विधेयक और अधिनियम में अन्तर समझना जरूरी है। विधेयक वह लेख या ड्राफ्ट है जिसमें प्रस्तावित कानून अपनी पूरी शकल में मोजूद है। वह पहले पार्लियामेण्ट में किसी सदन में पेश किया जाता है। केवल अर्थ विधेयक कामन्स में ही और पीयर्स के अधिकारों और विशेषाधिकारों से सम्बन्धित विधेयक लार्ड स सभा में ही उत्पन्न होने चाहियें। जब एक बिल दोनो सदनों में विभिन्न अवस्थाओं से गुजर कर शाही स्वीकृति प्राप्त कर लेता है तब वह पार्लियामेण्ट का एक अधिनियम या नियम बन जाता है।

विधेयकों के प्रकार—विधेयक दो प्रकार के होते हैं सार्वजनिक विधेयक और निजी विधेयक। एक सार्वजनिक विधेयक वह है जो कि सार्वजनिक हित के किसी विषय से सम्बन्धित होता है और इस प्रकार या तो सम्पूर्ण समाज अथवा उसके किसी बड़े भाग को प्रभावित करता है। एक निजी विधेयक वह है जो कि किसी व्यक्ति, व्यक्तियो के समूह अथवा किसी विशेष निकाय या सगठन से सम्बन्धित होता है। यहाँ पर यह ध्यान रखने की बात है कि निजी विधेयक निजी सदस्य द्वारा पेश किया जाता है। इस प्रकार एक निजी सदस्य का विधेयक एक सार्वजनिक विधेयक हो सकता है (यदि वह जनता को प्रभावित करने वाले किसी विषय से सम्बन्धित हो) अथवा वह एक निजी विधेयक हो सकता है यदि उसका सम्बन्ध किसी विशेष क्षेत्र अथवा निकाय से हो। पार्लियामेण्ट अपना अधिकांश समय सरकारी विधेयकों में लगाती है जो कि सरकार के सदस्यों द्वारा पेश किये जाते हैं और निजी सदस्यों को उनमें सशोधन करने के लिये उनकी आलोचना करने का अधिकार है। सरकार का समर्थन पाये बिना निजी सदस्य का विधेयक बड़ी मुश्किल से कानून बन पाता है और सरकार बहुत ही कम अवसरो पर निजी सदस्यो के विधेयकों का समर्थन करती है। जब कभी मंत्रिमण्डल यह देखता है कि किसी निजी सदस्य के विधेयक वास्तव में लाभदायक

हैं तब वह उन्ही विचारो को लेकर स्वयं बाद मे कानून का प्रस्ताव पेश करता है।

एक साधारण एम० पी० का काम—इस प्रकार यह मालूम पडता है कि ब्रिटिश पार्लियामेंट में निजी सदस्यो का काम सरकार के कामो या नीति की आलोचना अथवा सामान्य या विशेष हित के मामलो में सरकार से प्रश्न पूछने तक ही सीमित रहता है। सदन के नियम स्थायी हैं परन्तु काम की गति बढ़ाने के लिये स्थगित किये जा सकते हैं, इस शक्ति का दुरुपयोग नही हुआ है। प्रत्येक दिन प्रश्न के घण्टे को निजी सदस्यो द्वारा सरकार से प्रश्न पूछने में इस्तेमाल किया जाता है। कोई सदस्य सरकार के प्रति अविश्वास का प्रस्ताव भी पेश कर सकता है और उसके पास हो जाने पर सरकार पदत्याग देती है। पार्लियामेण्ट आमतौर से तत्कालीन सरकार के विधेयक कार्यक्रम को चलाने में सलग्न रहती है। युद्ध के समय में सदन का सारा समय सरकार के कामो में लग जाता था परन्तु सन् १९४९ से निजी सदस्यो ने विधेयक उपस्थित करने के अपने परपरागत अधिकार को अक्षुण्ण रखा है और इस समय प्रत्येक सत्र में २० शुक्रवार निजी सदस्यो के विधेयको और प्रस्तावो को दिये जाते हैं। इसके अलावा मगलवार और बुद्धवार को भी दस मिनट के सक्षिप्त भाषण के बाद कोई सदस्य प्रश्न के घण्टे के बाद विधेयक पेश कर सकता है। सत्र का ९० प्रतिशत समय सरकारी विधानों में लगाया जाता है।

विधेयक का नोटिस—किसी भी विधेयक को तैयार करने में पहली बात उसका मसविदा बनाना होता है। सरकारी विधेयको का मसविदा एक ट्रेजरी का "पार्लियामेण्टरी कौंसिल" तैयार करता है। किसी सदस्य द्वारा उपस्थित किया हुआ विधेयक या तो उस सदस्य द्वारा ही तैयार होता है या वह किसी दूसरे से तैयार करा लेता है। किसी भी हालत में सदस्य का नाम अवश्य होना चाहिये। जब सदस्य को विधेयक को प्रस्तुत करने की आज्ञा मिल जाती है तो वह अपना मसविदा पब्लिक बिल आफिस में ले जाता है और विधेयक को हाउस के सामने रखने के लिये उसे एक फार्म भरना पडता है। हाउस में वह बार (Bar) के पास जाता है और स्पीकर के पुकारने तथा पूछने पर कहता है "ए बिल सर"। तब यह विधेयक हाउस के क्लर्क को दिया जाता है जो उस विधेयक के सक्षिप्त नाम को जोर से पढ़ता है। उसके पश्चात् यह समझ लिया जाता है कि विधेयक हाउस में आ गया।

विधेयक का प्रथम वाचन (First Reading)—दूसरी सीढी विधेयक का प्रथम वाचन होता है। सरकारी विधेयक को कोई मन्त्री उपस्थित करता है जो विस्तार पूर्वक उस विधेयक का तथ्य समझाता है। उसके व्याख्यान के पश्चात् वाद विवाद होता है, फिर मत निर्णय किया जाता है पर सभी विधेयको (प्रथम वाचन) में

वाद विवाद नहीं होता। आमतौर से विधेयक का प्रथम वाचन औपचारिक होता है और वास्तविक वाद विवाद बाद के लिये सुरक्षित रखा जाता है। गैर सरकारी विधेयक की छपी कापियां सदस्यों को बांट दी जाती हैं, जो सदस्य उस विधेयक को पुनः स्थापित करता है वह तद्विषयक एक फार्म भर देता है और स्पीकर के पुकारने पर उसे उसके आसन के पास ले जाता है जहाँ क्लर्क उसके संक्षिप्त नाम को पढ़ता है, और इस प्रकार प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है।

द्वितीय वाचन (Second Reading)—उसके पश्चात् विधेयक का दूसरा वाचन प्रारम्भ होता है। इस द्वितीय वाचन में विधेयक के आधारभूत सिद्धान्तों और धाराओं पर विस्तारपूर्वक वाद-विवाद होता है अथवा यदि वह कोई गैर सरकारी विधेयक है तो यह निश्चय किया जाता है कि उसमें कोई आपत्ति जनक बात तो नहीं है। पर द्वितीय वाचन से प्रस्ताव में यदि यह संशोधन कर दिया जाय कि इस विधेयक पर तीन मास (या और कोई समय की अवधि रख दी जाय जिससे उस सत्र में वह वाचन न हो सके) के पश्चात् विचार किया जाय और यदि यह संशोधन स्वीकृत हो जाय तो उसका अभिप्राय समझा जाता है कि विधेयक रद्द कर दिया गया। सदस्यों द्वारा प्रस्तुत हुये विधेयकों में से बहुत से इसी प्रकार रद्द कर दिये जाते हैं। पर जो विधेयक द्वितीय वाचन में रद्द होने से बच जाता है वह एक समिति को भेज दिया जाता है। प्रत्येक मुद्रा विधेयक पूर्ण[१] सदन की समिति के सामने रखा जाता है। यदि सदन आदेश दे तो वे विधेयक भी जो मुद्रा-विधेयक न हों सदन की समिति के सन्मुख रखे जा सकते हैं वरना वे सम्बन्धित स्थायी समितियों के लिये भेज दिये जाते हैं। कभी कभी स्थायी समिति या सदन की समिति के सामने जाने से पूर्व कोई कोई विधेयक सेलेक्ट समिति के सामने भी रखे जा सकते हैं। समिति में विधेयक पर पूरी तरह से वाद विवाद होता है। प्रत्येक खण्ड को अलग-अलग लेकर विचार होता है और उन पर संशोधनों के प्रस्ताव हो सकते हैं जिससे उसके दोष दूर हो जायें।

विधेयक की रिपोर्ट की अवस्था—जब इस प्रकार समिति में विधेयक पास हो जाता है तो वह फिर सदन में प्रस्तुत किया जाता है और यह रिपोर्ट की अवस्था कहलाती है। सदन उसके ऊपर विस्तार पूर्वक विचार करना आरम्भ करता है। प्रत्येक खण्ड को लेकर वाद-विवाद होता है। यदि संशोधन के प्रस्ताव होते हैं और वे स्वीकार हो जाते हैं तो वे संशोधन विधेयक में कर दिये जाते हैं। कभी-कभी विधेयक फिर दुबारा समिति को भेज दिया जाता है।

---

१ पूर्ण सदन की समिति का अर्थ पूर्ण सदन के अधिवेशन से है जिसमें अध्यक्ष के स्थान पर कोई अन्य निर्वाचित व्यक्ति सभापति का पद ग्रहण करता है और विवाद के नियम स्थगित कर दिये जाते हैं।

तृतीय वाचन (Third Reading)—इसके पश्चात् विधेयक का तीसरा वाचन प्रारम्भ होता है। इस वाचन में सारे विधेयक के रूप, सिद्धान्त व उपयोगिता पर विचार होता है। यदि इस समय संशोधन के प्रस्ताव हो और वे स्वीकार हो जाँय तो विधेयक फिर समिति मे भेज दिया जाता है। परन्तु इस प्रकार के अवसर बहुत कम आते हैं और अधिकतर विधेयक तृतीय वाचन के बाद सदन द्वारा स्वीकार कर लिये जाते हैं। यदि तीसरे वाचन में द्वितीय वाचन से निकला हुआ विधेयक ज्यो का त्यो पास हो जाता है तो वह दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है। वहाँ भी उस पर उसी क्रम से विचार होता है। जब दूसरे सदन में भी बिना संशोधन के वह विधेयक पास हो जाता है तो वह सम्राट् की सम्मति हेतु रखा जाता है और सम्मति प्राप्त होने पर वह एक्ट (अधिनियम) घोषित कर दिया जाता है।

यदि दूसरा सदन उस विधेयक में कुछ संशोधन कर देता है तो वह फिर प्रारम्भ करने वाले सदन मे वापिस भेज दिया जाता है और यदि प्रारम्भ करने वाले सदन में ये संशोधन मान्य कर लिये जाते हैं तो विधेयक सम्राटकी स्वीकृति के लिये भेज दिया जाता है।

मुद्रा विधयकों के लिये कार्यक्रम—मुद्रा विधेयक के लिये जो कार्यवाही की जाती है वह कुछ भिन्न होती है। सप्लाई सेवाओ (Supply Services) के लिये कार्य पालिका प्रतिवर्ष खर्चे के आकलन (Estimates) बनाती है और पार्लियामेण्ट की स्वीकृति लेती है। कन्सोलिडेटेड फण्ड (Consolidated Fund) अर्थात् एकीकृत कोष वाली सेवाओं के लिये स्थायी अधिनियमो (Acts) द्वारा ही अनुदान स्वीकृत हो जाते हैं। मुद्रा विधेयकों के सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्तों का पालन किया जाता है—(१) प्रत्येक विधेयक जो सार्वजनिक कोष में व्यय कराने वाली योजना बनाता हो वह जो क्राउन (Crown) अर्थात् मन्त्रि-परिषद् की ओर से प्रस्तावित होना चाहिये, उसे कोई साधारण सदस्य उपस्थित नही कर सकता, (२) ऐसा प्रत्येक विधेयक आकलन के रूप में होना चाहिये, (३) यह हाउस आफ कामन्स में ही प्रारम्भ होना चाहिये। यह प्रथा १६७८ से ही चली आती है जबकि कामन्स ने यह प्रस्ताव पास किया "सब सहायतायें और पूर्तियाँ, और हिज मैजेस्टी इन पार्लियामेण्ट को सहायता केवल कामन्स की ही भेंट है और किसी भी ऐसी सहायताओ अथवा पूर्तियो को मजूर करने के लिये सभी विधेयक कामन्स मे प्रारभ होने चाहिये।"

अगले वित्तीय वर्ष के लिये अनुदानो की माँग सम्राट् के भाषण में की जाती है। अर्थमन्त्री (Chancellor of the Exchequer) उसके पश्चात अपने बजट भाषण में उन सब माँगो को उपस्थित करता है। ये माँगें हाउस की कमेटी आफ सप्लाईज (Committee of Supplies) या कमेटी आफ वेज़ एण्ड मीन्स (Committee

of Ways and Means.) के सामने लाई जाकर उन पर वाद-विवाद होना आरम्भ होता है। उपर्युक्त दोनों समितियां सारे सदन की होती हैं अर्थात् सारा सदन अपने को एक समिति के रूप में समझ कर काम करता है, उस समय वाद-विवाद आदि के बन्धन ढीले कर दिये जाते हैं। पर फिर भी कोई सदस्य खर्चे को बढ़ाने वाला प्रस्ताव नहीं कर सकता। यदि ऐसा करना वाञ्छनीय समझा जाता है तो उसका एक अनुपम ढंग है और वह यह है कि सम्बन्धित मन्त्री के वेतन में कटौती का प्रस्ताव किया जाता है। कमेटी आफ सप्लाईज (Committee of Supplies) यह निर्णय करती है कि क्राउन (Crown) यानी कार्यकारिणी को कितना व्यय करने का अधिकार दिया जाय और कमेटी आफ वेज एण्ड मीन्स यह निश्चित करती है कि किस प्रकार खर्च के लिये धन एकत्रित किया जाय। नया कर लगाने के सब प्रस्ताव आर्थिक विधेयक (Finance Act) में शामिल होते हैं और जब वह पास हो जाता है तो उसे आर्थिक विधान (Finance Act) कह कर पुकारा जाता है।

सब मुद्रा विधेयकों को कार्यक्रम की उन सब सीढ़ियों को पार करना पड़ता है जो साधारण विधेयकों के लिये वर्णन की गई है। अन्तर केवल इतना ही रहता है कि सन् १९११ के पार्लियामेण्ट एक्ट के अनुसार यदि मुद्रा विधेयक सत्र को समाप्ति के कम से कम एक मास पूर्व हाउस आफ लार्डस् में भेज दिया जाता है और वह एक मास के भीतर पास नहीं होता तो वह सम्राट् की सम्मति के लिये भेज दिया जाता है और सम्मति प्राप्त होने पर अधिनियम बन जाता है। ऐसे मुद्राविधेयक को स्पीकर द्वारा प्रमाणित कराना पड़ता है कि वह मुद्राविधेयक है। लार्डों ने अब इस वैधानिक बन्धन से समझौता कर लिया है और किसी मुद्रा विधेयक के पास करने में बाधा या देर नहीं लगाते। •

दोनों सदनों का मतभेद किस प्रकार समाप्त किया जाता है—इस प्रकार १९११ से कामन्स विधान पर नियंत्रण रखते हैं किसी विधेयक पर दोनों सदनों में मतभेद होने पर सन् १९११ के पार्लियामेण्ट एक्ट के अनुसार हाउस आफ लार्डस में यदि कोई मुद्राविधेयक एक मास के भीतर स्वीकार न हो तो वह सम्राट् की स्वीकृति पाकर अपने आप एक्ट बन जाता है इस प्रकार दोनों सदनों का मतभेद समाप्त हो जाता है। यदि मतभेद साधारण विधेयक के सम्बन्ध में हो और हाउस आफ लार्डस के संशोधनों को हाउस आफ कामन्स न माने, और यदि वह विधेयक एक ही सत्र में या एक से अधिक सत्रों में कामन्स में तीन बार पास हो जाय और प्रथम तथा तृतीय बार पास होने में एक वर्ष का अन्तर हो (जैसा कि १९४९ के संशोधन से निश्चित किया गया है) तो वह सम्राट् की सम्मति के लिये भेज दिया जाता है और सम्मति प्राप्त होने पर एक्ट बन जाता है। इस प्रकार पास होने में केवल एक रुकावट है, वह यह कि

कामन्स के पहली बार पास करते समय जो दूसरा वाचन हुआ था उससे लेकर तीसरी बार पास होने तक एक वर्ष बीत चुका होना चाहिये। इसका निष्कर्ष यह है कि हाउस आफ लार्ड्स और कामन्स में मतभेद केवल एक वर्ष तक रह सकता है और उस विधेयक के पास होने में एक वर्ष का विलम्ब हो सकता है।[1]

यहाँ पर सम्राट की सम्मति के बारे में कुछ बातें कहनी आवश्यक हैं। सम्राट की सम्मति केवल एक बाह्य व्यवहार (Formality) है। सन् १७०७ से लेकर अब तक यह सम्मति कभी भी नामजूर नही हुई। यदि सम्राट किसी विशेष योजना के विरुद्ध हो तो वह मन्त्रिपरिषद् को समझा कर उन्हे इस योजना को प्रस्तुत करने से रोक सकता है या वह चाहे तो परिषद् का विघटन कर नई परिषद् बना सकता है या पार्लियामेण्ट का विघटन कर जनता से नये चुनाव की अपील कर सकता है। राजसी सम्मति देने के लिये या तो सम्राट स्वय पार्लियामेण्ट में आता है या रायल साईन मैनूअल और ग्रेटसील द्वारा नियुक्त कमीशन द्वारा यह सम्मति दी जाती है। सन् १७०७ में जब राजा ने स्काच मिलिशिया बिल को रद्द कर दिया था तब अन्तिम बार यह सम्मति नही दी गई थी।

---

१. सन् १९४९ के संशोधन से दो वर्ष के स्थान पर (जैसा कि १९११ के अधिनियम में दिया गया था) एक वर्ष कर दिया गया है।

पाठ्य पुस्तकें

Adams, G B.–Constitutional History of England. 1934 Ed.
Carr, Sir, C.T.–Concerning English Administrative Law (Oxford University Press 1922) pp. 33-34.
Champion, G F M–An Introduction to the Procedure of the House of Commons (1939 edition)
Dicey, A V:–The Law of the Constitution. (1929 edition)
Emden, C. S–The Select Speeches on the Constitution, 2 Vols
Finer, H–The Theory and Practice of Modern Government, chs XVIII–XXI.
Greaves, H R G.–The British Constitution chs II–III
Ilbert, Sir C–Parliament. Its History, Constitution and Practice, (1911 edition)
Laski H J–Parliamentary Government in England, chs III–IV
Marriot, J A R–English Political Parties and Politics, chs on Parliament and Legislation.
May, Sir, T E–Parliamentary Practice. (1924 Ed.)
Poole, A.–English Constitutional History (9th. Ed.) pp 670–725
Ogg, F A–English Government and Politics (Chapters on the Parliament and Legislation)
Ogg, F A and Zink Harod–Modern Foreign Governments (1953)

अध्याय ६

कार्यपालिका : राजा और राजमुकुट

'अंग्रेजी राजतन्त्र का चरित्र यह है कि वह उन भावनाओ को कायम रखता है जिनसे कि शौर्यपूर्ण राजाओ ने अपने कठिन युग पर शासन किया है और उनमे उन अनुभूतियो को जोड दिया है जिनसे बाद के यूनान के सविधानो ने अधिक परिष्कृत युगो में शासन किया है।" —वाल्टर बेजहौट

"प्रत्येक श्रेष्ठ राजमुकुट काटो का मुकुट है और इस पृथ्वी तल पर सर्वदा ऐसा ही रहेगा।" —कार्लाइल

"राजा के पद आमतौर से बल प्रयोग से प्रारभ होते हैं जिसको समय घिसकर अधिकार बना देता है, और शक्ति से जो कि एक युग में अत्याचार होता है और दूसरे में सच्चा उत्तराधिकार बन जाता है।" —ड्रायडन

ससार के समस्त जनतन्त्रीय देशो म केवल इगलैण्ड ही इस बात का गर्व कर सकता है कि उसके एक लम्बे सफल सघर्ष से राजतन्त्र जनतन्त्र मे परिवर्तित हो गया

राजा जॉन, चार्ल्स प्रथम, चार्ल्स द्वितीय, जार्ज तृतीय सब समय के साथ गायब हो गये। वे अपने को दैवी अधिकार अथवा निरकुश शक्ति के साकार स्वरूप समझते थे और अपनी इच्छा का किसी प्रकार का विरोध नही सहन करते थे। १९ वी शताब्दी ने राजा की सब शक्ति को पालियामेण्ट को हस्तान्तरित होते देखा। क्रियात्मक राजनीति में राजा के तटस्थ रहने का सिद्धान्त अब ब्रिटिश राजतन्त्र पर शासन करता है। यद्यपि राजतन्त्र के बाहरी चिह्न शानोशौकत तथा यश और गौरव अब भी बहुत कुछ उसी प्रकार बने हुये है और अग्रेज का राज्य सिहासन के प्रति आदर और भी बढ गया है परन्तु सिहासन पर बैठने वाले की वह स्थिति हो गई है जैसा कि शेक्सपीयर ने राजा के लिये लिखा था, "राजा ऐसा ही एक आदमी है जैसा मैं हूँ, तत्व उसको भी वैसे ही दिखलाता है जैसा कि मुझको, उसकी सब इन्द्रियो की केवल मानवीय परिस्थितियाँ हैं, उसकी शानोशौकत को छोडकर नग्न रूप में वह केवल एक आदमी

दिखाई पडता है और यद्यपि उसकी प्रीति हमसे अधिक ऊँची बढी हुई है परन्तु जब वे झुकते हें तो हमारी ही तरह झुकते हैं।"

इगलैण्ड में कार्यकारिणी अब भी राजा है जो मौखिक रूप में सभी शक्तियों को अब भी रखता है और वैधानिक रूप से राज्य का अध्यक्ष कहा जा सकता है। उनकी नाममात्र की अध्यक्षता अब भी उतनी ही सच है जैसे कि पहले कभी थी परन्तु वास्तविक कार्यपालक शक्ति को अब (यद्यपि राजा के नाम पर ही) मन्त्रिपरिपद् प्रयोग करता है। एक व्यक्ति के रूप मे राजा राजमुकुट धारण करता है, राज्य का मुकुट जो कि अधिकार के चिह्न स्वरूप उसके सिर की शोभा बढाता है। परन्तु राजमुकुट अब एक स्थायी सस्था बन गया है और वह केवल राजा की टोपी मात्र नही है। और यही वर्तमान ब्रिटिश राजतन्त्र की मुख्य विशेषता है, इगलैण्ड का राजा राज्य करता है परन्तु शासन नही करता।

राजा (King)

ब्रिटिश राजतन्त्र अनुपम है—सिद्धान्त इगलैण्ड का राज्यतन्त्र निरकुश राज्यतन्त्र है, प्रत्येक कानून या निर्बन्ध पर राजा के हस्ताक्षर होने चाहिये, मन्त्री राजा के मन्त्री कहलाते हें, न्यायालय राजा की ही न्याय सस्थाएं हें, पर बाह्यरूप से यह राज्यतन्त्र नियन्त्रित है क्योकि राजा का कोई आदेश तब तक वैध नही समझा जाता जब तक कोई मन्त्री उस पर अपने हस्ताक्षर न करे और राजा सदैव अपनी मन्त्रिपरिपद् के परामर्श को स्वीकार करता है। व्यवहार मे यह राज्यतन्त्र प्रजातन्त्र है। राजा केवल एक रबड की मुहर ही के समान है। राजनीतिक क्षेत्र में वह केवल इतना ही कर सकता है कि अपना परामर्श दे, उत्साहित करे या चेतावनी दे। कानूनो के बनाने वाले और मन्त्रि-परिपदो का भाग्य निर्णय करने वाले तथा शासन नीति को निश्चित करने वाले तो प्रजा के प्रतिनिधि और अन्तत स्वय मतदाता ही हैं। इस प्रकार अग्रेजी राजतन्त्र (Monarchy) के जोड की कोई शासन सत्ता किसी दूसरे देश में नही मिल सकती, वह अपने ढग की निराली है।

एग्लो-सेक्सन काल में राजा निरकुश था, यद्यपि उस समय भी वह बुद्धिमानो की सलाह और सम्मति से ही कानून बनाता था। सन् १२१५ में बैरनो और पादरियो ने मिल कर राजा जॉन को मैग्नाकार्टा पर हस्ताक्षर करने के लिये बाध्य किया और इस प्रकार अग्रेजो की स्वतन्त्रता के प्रथम अधिकार-पत्र का जन्म हुआ। उसके पश्चात् वैधानिक राजतन्त्र (Constitutional Monarchy) की ओर धारा का प्रवाह आरम्भ हो गया। उस बहाव में कभी-कभी किसी राजा ने शासन सूत्र को अपने हाथ में फिर से करने के लिये रोक लगाने का प्रयत्न किया। स्टूअर्ट-वशीय राजाओं ने राजा के दैवी अधिकार वाले सिद्धान्त का प्रतिपादन किया इसके फलस्वरूप राजाओं और पार्लिया-

मेण्ट म बहुत दिन तक सघर्ष चला। पर अन्त में सन् १६२९ और १६८८ की क्रान्ति होकर पार्लियामेण्ट की ही जीत हुई। जब जनता के प्रतिनिधि राजा से शासन सत्ता छीन लेने को लड रहे थे उस समय भी राजा के महत्व को कम करने का कोई प्रयत्न नही किया गया था, यह बैकन (Bacon) द्वारा जेम्स प्रथम (James I) को दी हुई निम्नलिखित सलाह से प्रकट हो जायगा —

"पार्लियामेण्ट को एक निश्चित आवश्यकता समझो पर केवल आवश्यकता ही नही उसे राजा और प्रजा को मिलाने वाला एक अनुपम और मूल्यवान साधन समझोगे जिससे बाहरी दुनिया को यह दिखाया जा सकता है कि अँगरेज अपने राजा को कितना प्यार करते हैं और उसका कितना आदर करते हैं और उनका राजा किस प्रकार अपनी प्रजा पर विश्वास रखता है। उसके साथ खुलासा ढग पर बर्ताव करो जैसे किसी राजा को करना चाहिये न कि फेरी वाले व्यापारी की तरह सन्देह की दृष्टि से। पार्लियामेण्ट से भय न करो, उसको बुलाने मे चतुरता से काम लो पर उसे अपने समर्थको से भरने का प्रयत्न न करो।

उसको वश में रखने के लिये सारी चतुरता, मानव स्वभाव की जानकारी, दृढ़ता और गौरव का प्रयोग करो, शरारती और बदमाशो को उनके उपयुक्त स्थान पर रखो पर अनावश्यक अडगा लगाने का प्रयत्न न करो, प्रकृति को अपना कार्य करने दो, हालाकि तुम उसे धन के लिये ही चाहते हो पर दूसरो पर यह प्रकट न होने दो कि उसके बुलाने से तुम्हारा यही अभिप्राय है। कानून बनाने मे अग्रसर हो। अपने पास कोई न कोई रोचक और प्रभावशाली सुधार या नीति का विषय तैयार रखो और पार्लियामेण्ट से कहो कि वह उसके सम्बन्ध मे तुम्हारी सलाह ले। इस बात का ध्यान रखो कि ऐसे विधेयकों को बनवा कर तैयार करा लो जिनसे राजा के आदर मे वृद्धि हो और उसकी देखभाल मान्य हो, ऐसे विधेयको को बनवाने के लिये प्रयत्न न करो जो राजा व उसकी कृपा को सस्ती बना डालें पर ऐसे विषय उपस्थित करो जिनसे ऊपर पार्लियामेण्ट कुछ काम करने में लगे क्योकि खाली पेट केवल विनोदपूर्ण बातो से नही भरते।"

वशानुगत राजतन्त्र—चौथे अध्याय मे हम यह दिखला आये हैं कि किस प्रकार सन् १६२९ में और १६८८ में जिस बात को राजा ने स्वीकार नही किया उसे पार्लियामेण्ट ने बलात छीन लिया। अब १६८९ का बिल आफ राइट्स और १७०१ के एक्ट आफ सैटिलमेण्ट (Act of Settlement) राजा के अधिकारो की मर्यादा व राजा का उत्तराधिकार क्रम निश्चित् करते हैं। जब राज्य सिंहासन खाली होता है तो राजमुकुट सबसे पहले ज्येष्ठ पुत्र को पहनाया जाता है। यदि ज्येष्ठ पुत्र जीवित न हो तो उसका बच्चा, लडका हो या लडकी, राज-

सिंहासन पर बैठता है। उसके भी न होने पर दूसरे पुत्र को या उसके बच्चों को राजमुकुट पहनाया जाता है। इस प्रकार राज्य करने का अधिकार पैतृक है और राजसिंहासन कभी खाली नहीं रहता। "राजा मर गया, राजा चिरजीवी रहे" (The King is dead, long live the King.) इस कानूनी सिद्धान्त का यही मतलब है कि यद्यपि एक व्यक्ति विशेष राजा मर गया पर राजसिंहासन खाली नहीं है, दूसरा उत्तराधिकारी राजा उस पर अपने आप ही कानून की दृष्टि से आसीन है। यह उत्तराधिकार अपने आप ही प्राप्त हो जाता है जैसा कि एडवर्ड अष्टम के प्रीवी कौंसिल में दिये उस भाषण से व्यक्त हो जायगा जो पंचम जार्ज की मृत्यु के पश्चात् दिया गया था। एडवर्ड अष्टम ने कहा 'मेरे प्रिय पिता सम्राट् की मृत्यु से ब्रिटिश साम्राज्य को जो हानि हुई है उसके पश्चात् सर्वोच्च सत्ता के कर्तव्य का भार मेरे ऊपर आ पड़ा है। मैं जानता हूँ कि आप और मेरी सब प्रजा, और मुझे आशा है कि मैं कह सकता हूँ कि तमाम दुनिया मेरे दुख को अनुभव करती है और मुझे उस प्रेममय सहानुभूति का निश्चय है जो कि मेरी प्रिय माता को उसके इस असह्य दुख में दी जायेगी।"

सवैधानिक सरकार को बनाये रखने का वायदा—"२६ वर्ष पूर्व मेरे पिता इस आसन पर आये थे, उन्होंने घोषणा की थी कि उनके जीवन का एक उद्देश्य यह रहेगा कि वे वैधानिक राजतन्त्र को सुरक्षित रखें। इस बात में मैं स्वयं भी अपने पिता का अनुगामी बनूँगा और उनकी तरह अपने सारे जीवन भर अपनी प्रजा के सुख व कल्याण के लिये प्रयत्न करता रहूँगा। मुझे सारे साम्राज्य की प्रजा के प्रेम का सहारा है और मुझे विश्वास है कि उनकी पार्लियामेण्ट मेरे भारी काम में मुझे सहायता देगी और मैं प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर इस काम में मुझे मार्ग दिखावे।"

दूसरे दिन सेण्ट जेम्स महल की खिड़की से निम्नलिखित सन्देश सुनाया गया —

"क्योंकि सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने हमारे राजा जार्ज पन्चम को अपने पास बुला लिया है जिससे ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्ड का राजमुकुट अकेले और अधिकारी ढंग से राजकुमार एलबर्ट जार्ज को प्राप्त हो गया है, इसलिये हम इस देश के याजक व आयाजक लार्ड, सम्राट की प्रिवी कौंसिल के लार्डों के साथ व दूसरे श्रेष्ठ पुरुषों, लन्दन के लार्ड मेयर, एल्डर मैन और नागरिकों के साथ एक स्वर, वाणी व अतः करण से यह घोषणा करते हैं कि महान् व शक्तिमान राजकुमार एलबर्ट जार्ज एण्ड्र पैट्रिक डेविड, हमारे पुनीत स्मृति वाले राजा की मृत्यु के पश्चात् अधिकारी वैधायनिक रूप से एडवर्ड अष्टम हमारे राजा हुये, इत्यादि। "परन्तु दिसम्बर १९३६ में एडवर्ड अष्टम ने राज त्याग दिया क्योंकि उसने अपनी बगल में उस स्त्री (श्रीमती सिम्पसन) के बिना उस महान कार्य के उत्तरदायित्व को सभालना कठिन पाया, जिसको वह प्यार

करता था और जिससे उसने बाद में विवाह कर लिया।

राजा नाम के लिये कार्यपालक सत्ता है—इस घोषणा व उस शपथ के शब्दों से, जो प्रत्येक इगलैण्ड के राजा को राज्याभिषेक के समय लेनी पड़ती है, प्रकट हो जायगा कि यद्यपि ब्रिटिश राज्यतन्त्र पैतृक है पर वह वास्तव में वैधानिक है और उसकी शक्ति की मर्यादा बंधी हुई है। राजा प्रजा पर शासन नहीं करता केवल राज्य करता है। वर्तमान राजतन्त्र का पहले जैसा ही गौरव अब भी है, शायद पहले से अधिक ही हो, पर वास्तविक शक्ति मन्त्रि-परिषद् के हाथ में है। इस प्रकार इगलैण्ड में राजतन्त्र को औपचारिक कार्यकारिणी (Formal Executive) कह सकते हैं क्योंकि राजा के नाम से सारी शासन-सत्ता का उपभोग मन्त्री लोग करते हैं जो पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी रहते हैं।

दूसरे राष्ट्रपतियों की तुलना में राजा की आय—शासन सत्ता को दूसरों को सौंपने के बदले में राजा को शासन की जिम्मेदारी के बोझ से मुक्ति मिल गई। वह पार्लियामेण्ट के काम में हस्तक्षेप नहीं करता और उसके बदले में पार्लियामेण्ट प्रतिवर्ष उसके लिये एक बहुत बड़ी रकम मजूर कर देती है जिससे वह बड़े राजसी ठाठ बाट से रह सकता है। जार्ज अष्टम को प्रतिवर्ष ४१०,००० पौण्ड मिलता था। और इसके अतिरिक्त लकास्टर की जागीर की आय भी मिलती थी जो ५ लाख पौंड के लगभग थी। कार्नवेल की जागीर से भी उसे एक लाख पौंड की आय थी जिसमे से १६,००० पौंड कुमारी एलिजाबेथ को व ड्यूक आफ ग्लोसेस्टर को दे दी जाती थी। राजघरान के दूसरे सब लोगो को मिलाकर प्रति वर्ष १७०,००० पौंड दिया जाता है। इस प्रकार राजघराने का खर्चा कुल ६,५०,००० पौंड का था। इसके मुकाबिले मे डनमार्क के राजा की आय ५०,००० पौड, हालैण्ड की रानी और इटली के राजा म प्रत्येक को १,२५,००० पौंड, नार्वे और स्वीडन के राजाओ को, क्रमश ३५,००० पौंड और ८५,००० पौंड थी। फ्रास के प्रेसीडेण्ट को ४५,००० पौड ओर अमरीका के प्रेसीडेण्ट को २०,००० पौंड मिलता है, इसके अलावा कुछ भत्ता और दिया जाता है। इगलैण्ड के राजा की निजी सम्पत्ति भी बहुत है जो रानी विक्टोरिया के समय से प्राप्त होती चली आ रही है। अन्य व्यक्तियों के समान वह अपनी सम्पत्ति को बेच सकता है और खरीद सकता है।

राजा कोई गलती नही कर सकता

अंग्रेजी राजतन्त्र कानून की दृष्टि में और वास्तव में—कानून की दृष्टि मे इगलैण्ड का राजा अब भी उतना ही सर्वोच्च सर्वाधिकारी है जितना १६वी शताब्दी के अन्त में था। उसके कानूनी अधिकारों में कोई कमी नहीं आई है। वही सर्वोच्च कार्यपालिका सत्ता है, वही पार्लियामेण्ट में अन्तिम विधायिनी शक्ति का स्वामी है,

वह अब भी "जस्टिस (न्याय) और औनर (प्रतिष्ठा) का निर्झर है। अब भी वह धर्म संघ (Church) का अध्यक्ष है, वह अब भी राष्ट्र की सैन्यशक्ति का नायक है और साम्राज्य व राष्ट्र की एकता और गौरव उसमें मूर्तिमान है।"

कानूनी शक्तियां—राजनीतिक बेजहोट (Bagehot) ने विक्टोरिया के राज्यकाल में राजा की उन शक्तियों का संक्षिप्त वर्णन किया था जो वह बिना पार्लियामेण्ट की सम्मति के उपयोग कर सकता है। वह वर्णन इस प्रकार है "रानी सेना को भंग कर सकती थी, वह सेनापति से लेकर सब अफसरों को बर्खास्त कर सकती थी, वह सब नाविकों को भी अपने पद से हटा सकती थी, वह हमारे सब युद्ध पोत और नाविक भंडारों का सब सामान बेच सकती थी। वह कार्नवेल की जागीर देकर सुलह कर सकती थी और ब्रिटेनी की विजय के लिये युद्ध कर सकती थी। वह इंगलैण्ड के प्रत्येक स्त्री पुरुष को पीयर (peer) बना सकती थी और प्रत्येक पैरिश (Parish) को यूनिवर्सिटी बना सकती थी। यह सब राजकीय कर्मचारियों को बर्खास्त कर सकती थी और सब अपराधियों को क्षमा कर सकती थी। संक्षेप में रानी सरकार के सारे काम कर सकती थी, बुरी लड़ाई या सुलह कर के राष्ट्र का अपमान करा सकती थी और समुद्री तथा दूसरी सेनाओं को तोड़-फोड़ कर हमको दूसरे राष्ट्रों के आक्रमण के लिये अरक्षित छोड़ सकती थी।"[1] इंगलैण्ड के राजा के अधिकारों की यह विस्तृत सूची है जिनको राजा आज भी काम में ला सकता है। परन्तु वास्तव में विक्टोरिया के सिंहासन पर बैठने से बहुत दिन पहले ही वास्तविक शक्ति राजा से पार्लियामेण्ट को मिल चुकी थी। इसको १३ अप्रैल सन् १८०७ को लार्ड्स् सभा ने अपने भाषण में लार्ड एर्सकिन (Erskine) ने स्पष्ट कर दिया था। उसने कहा "राजा स्वयं सरकार का कोई काम नहीं कर सकता और इस सदन में किसी भी ऐसे व्यक्ति का स्वागत नहीं किया जाना चाहिये जो यह घोषणा करे कि सरकार का कोई काम राजा की निजी इच्छा, निश्चय या अन्तरात्मा से हुआ है। मुख्य न्यायाधीश के रूप में राजा ऐसी कोई अन्तरात्मा नहीं रख सकता जिस पर उत्तरदायी प्रजा का विश्वास नहीं है. ... उसके कार्यों का यश और आदर उसका अपना है, परन्तु क्योंकि सभी मनुष्य गलती कर सकते हैं, हमारी सरकार की बुद्धिमत्ता उनको उसी के लिये छोड़ देती है यह सिद्धान्त कि राजा कोई गलती नहीं कर सकता, चीजों की प्रकृति और रचना को नहीं बदलता, परन्तु सरकार को केवल अपराध के दोषारोपण से बचाने के लिये ही नहीं बल्कि उसके कारण अनादर और यशहानि से बचाने के लिये है राज्य अथवा सरकार का कोई भी काम इसलिये राजा का नहीं हो सकता, वह सलाह के अलावा

---

१ बेजहोट : इंगलिश कस्टीट्यूशन, पृष्ठ ३६।

काम नहीं कर सकता, और जो व्यक्ति पदासीन रहता है वही सभी कामो को स्वीकृत करता है चाहे वे किसी भी श्रोत से हुये है।"

राजा के वास्तविक अधिकार सीमित हैं—पर व्यवहार मे बड़ा अन्तर है। राजा का कोई भी आदेश कार्यान्वित नही हो सकता जब तक कोई मन्त्री उस आदेश पर हस्ताक्षर न कर दे, और हस्ताक्षर करने पर वह मन्त्री उस आदेश का उत्तरदायी हो जाता है। राजा को अपने मन्त्रियो की सलाह माननी पडती है यद्यपि यह बात प्रथा (Convention) के अनुसार मान्य हो गई है, इसके पीछे कोई वैधानिक लिखित नियम नही है, पर फिर भी वह अग्रेजी विधि-निर्बन्ध का ऐसा महत्वपूर्ण अग बन गई है कि सन् १९३६ में अष्टम एडवर्ड को राजसिंहासन छोडने पर बाध्य होना पडा क्योंकि उसके मन्त्रियो ने उसे अपनी प्रेयसी से विवाह करने के विचार को त्याग देने की सलाह दी।

राजा का विशेषाधिकार अब सापेक्ष है—राजकर्मचारियो के बरखास्त करने का राजा का विशेषाधिकार इसी प्रकार प्रतिबन्धित है। हैल्सबरी ने प्रीरोगेटिव (Prerogative) अर्थात् राजा के विशेषाधिकार की परिभाषा इस प्रकार की है "प्रीरोगेटिव वह सर्वोच्च प्रतिष्ठा है जो प्राचीन प्रचलित नियमो मे, पर उनकी परिधि के ब

इस

सानस्वीकृत है जो प्राचीन प्रचलित नियम के अनुसार इगलैण्ड के राजा को प्राप्त रहती हैं। परन्तु जब इन विशेष राजकीय अधिकारो को भी काम में लाया जाता है तो न्यायालय को इनके अस्तित्व के सम्बन्ध में पूछताछ करने का अधिकार रहता

कारो पर चाहे वे वैधानिक हो या कार्यकारी, कुछ तो राजा और जनता के पारस्परिक समझौतो से, कुछ नियेधक कानूनो से और कुछ अप्रचलित होने से प्रतिबन्ध लग गये हैं। उदाहरणार्थ, कानून का बनाना राजा का विशेषाधिकार है, पर सन् १७०७ से अब तक पालियामेण्ट के बनाये हुये कानूनों पर राजसी सम्मति कभी भी नामजूर नही हुई है। राजा अपने विशेषाधिकार मे नये पीयर बना सकता है। जार्ज चतुर्थ ने अर्ल ग्रे को पीयर बनाने की यह आज्ञा दी थी—"राजा अर्ल ग्रे को व लार्ड ब्रोघम को यह *अनुमति देता है कि वे इतने पीयर बना दे जितने सुधार-विधेयक को पास कराने के लिये पर्याप्त हो।* पर पहले पीयरो के ज्येष्ठ पुत्रो को पीयर बनाया जाय।" परन्तु फिर भी राजा इस अधिकार को निरपेक्ष ढग पर काम में नही ला सकता। इस बात को लार्ड लिन्धर्स्ट (Lord Lindharst) ने काफी स्पष्ट कर दिया था। उन्होंने कहा

"इसका यह मतलब नही हैं कि क्योकि यह बिलकुल वैध (Legal) है इसलिये विशेषाधिकार का यह या और कोई प्रयोग विधान के सिद्धान्तो के अनुकूल है। राजा चाहे तो इस विशेषाधिकार के बल पर एक दिन में १०० पीयर बना दे और यह बिलकुल वैध समझा जायगा पर हर एक को अनुभव करना और जानना है कि राजा द्वारा विशेषाधिकार का ऐसा प्रयोग विधान के सिद्धान्तों का निन्द्य उल्लंघन होगा।"

अपने मन्त्रित्वकाल मे दो महान प्रधान मन्त्री लायड जार्ज और एसक्विथ ने राजा को सलाह देकर शब्दश पीयर उत्पन्न किये। इसलिये अब नये पीयर मन्त्रिपरिषद् की सलाह से बनाये जाते हैं। राजा के दूसरे विशेषाधिकार भी इसी प्रकार प्रतबन्धित है। सन् १६८८ की क्रांति के बाद राजा की स्थिति इस वाक्य में वर्णित है "राजा बनाया गया, राजा प्रतिबन्धित किया गया, राजा को वेतन दिया जाने लगा।"

राजा और न्यायपालिका—न्याय के विषय में राजा की शक्तियाँ इस प्रकार समझाई जा सकती हैं। यद्यपि राजा को न्याय का निर्झर कहकर पुकारा जाता है और न्यायालय सम्राट् के न्यायालय कहलाते है, पर सम्राट् न्याय-प्रबन्ध मे न तो हस्तक्षेप करता है, न कर ही सकता है। यद्यपि न्यायाधीश बाह्यरूप से राजा के ही द्वारा नियुक्त और पदच्युत किये जाते हे पर वास्तव मे उनकी नियुक्ति मन्त्रियो द्वारा ही होती है, और साधारणतया पालियामेण्ट के दोनो सदनो के कहने पर अपने पद से हटाये जा सकते हें। यह भी ठीक है कि अपराधियो को क्षमा प्रदान करने के विशेषाधिकार को राजा ही कार्यरूप देता है परन्तु उसका प्रयोग गृह सचिव करता है। राजा को केवल उन बातो की सूचना भर दे दी जाती है जिस पर उसे अपने हस्ताक्षर करने होते है। उसका उत्तरदायित्व मन्त्री पर रहता है।

राजा और विधायिनी शक्ति—राजा पालियामेण्ट का उद्घाटन और विघटन करता है, पर यह काम वह केवल अपनी मर्जी के अनुसार ही नही करता, उसके इस अधिकार पर प्रचलित प्रथाओ के बन्धन लगे हुये है। उसे प्रतिवर्ष पालियामेण्ट बुलानी पडती है जिससे बजट पास हो सके और सेना सम्बन्धी अधिनियम (Act) स्वीकृत हो सके सन् १९११ के पालियामेण्ट एक्ट से पालियामेण्ट की अवधि पांच वर्ष कर दी गई है। पालियामेण्ट स्वय ही अपना कार्यक्रम निश्चित करती है। पालियामेण्ट के विघटन करने के अधिकार को काम मे लाते समय राजा को राष्ट्र की इच्छा के अनुसार कार्य करना पड़ता है। विघटन के सम्बन्ध मे ठीक वैधानिक स्थिति क्या है इसका विशद् वर्णन अर्ल ग्रे और एस्क्विथ ने अपने १८ दिसम्बर सन् १९२३ के व्याख्यान मे इस प्रकार किया था: "इस देश में पालियामेण्ट का विघटन करना राजा का विशेषाधिकार है। यह अधिकार कोरी आसामल्खाही के अपर से चली आने वाली प्राचीन परिपाटी नही है, पर यह हमारी वैधानिक प्रणाली का एक उपयोगी अंग है जिसके

जोड़ की कोई वस्तु किसी दूसरे देश, उदाहरणार्थ संयुक्तराष्ट्र अमरीका में नहीं मिलती। इसका मतलब यह नहीं है कि राजा को इस अधिकार को कार्यान्वित करते समय स्वेच्छा से और मन्त्रियों का परामर्श लिये बिना काम करना चाहिये, पर इसका मतलब यह अवश्य है कि जब तक राजा को ऐसे दूसरे मन्त्री मिल सकते हैं जो सरकार को चलाने के भार को अपने ऊपर लेने को तैयार हो, उस समय तक राजा किसी मन्त्री की ऐसी सलाह मानने को बाध्य नहीं जिससे प्रजा को एक के बाद दूसरे निर्वाचन के कुहराम से कष्ट उठाना पड़े।" राजा विघटन की तभी आज्ञा देता है जब वह यह अच्छी प्रकार समझ लेता है कि हाउस आफ कामन्स ने जनता का प्रतिनिधित्व करना बन्द कर दिया है। राजा को यदि पार्लियामेण्ट से कुछ कहना होता है तो वह सत्र के आरम्भ में या उसकी समाप्ति पर अपने राज्यसिंहासन से वक्तृता देकर या सन्देश भेजकर कर सकता है। पार्लियामेण्ट का उद्घाटन करते, स्थगित करते या विघटन करते समय ही राजा हाउस आफ लार्ड्स में, उपस्थित होता है जहाँ कामन्स के सदस्य भी बुलाये जाते हैं। परन्तु राजा के सारे सन्देश व वक्तृतायें तत्कालीन मन्त्रिपरिषद् तैयार करती है, और उसी की शासन नीति उस सन्देश आदि में बतलाई जाती है। पार्लियामेण्ट में वाद-विवाद होते समय राजा वहाँ उपस्थित नहीं हो सकता। यद्यपि सारे कानून राजा व पार्लियामेण्ट के नाम से ही बनते हैं, पर वास्तव में केवल पार्लियामेण्ट, या यों कहिये केवल हाउस आफ कामन्स ही कानूनों को बनाता है। हाउस आफ लार्ड्स हस्तक्षेप नहीं कर सकता, राजा तो उससे भी कम हस्तक्षेप कर सकता है। अन्तिम बार सन् १७०७ में पार्लियामेण्ट के विधान पर शाही स्वीकृति से इनकार किया गया जबकि स्काच मिलीशिया बिल पर सम्राट् के हस्ताक्षर नहीं हुये। उस समय से राजा की अभिषेद (Veto) की शक्ति प्रभावशाली नहीं रह गई है। अब पार्लियामेण्ट का प्रत्येक सत्र अनेक ऐसे विधेयक पास करता है जिस पर शाही स्वीकृति की आवश्यकता होती है। क्राउन का क्लर्क कहलाने वाला अफसर ऐसे विधेयकों की एक सूची तैयार करता है। राजा शाही हस्ताक्षर मैनुअल में एक लेख्य जारी करता है जिस पर राजा की महान मुहर होती है। इससे लार्ड चान्सलर की अध्यक्षता में पाँच व्यक्तियों के एक कमीशन की नियुक्ति की जाती है जो कि राजा के लिये विधेयकों पर स्वीकृति दे। तब कमीशन के सदस्य गहरे लाल रंग की पोशाकें धारण करके हाउस आफ लार्ड्स की परिषद् में सिंहासन के नीचे एक बेन्च पर बैठते हैं। लार्ड चान्सलर यह घोषणा करता है कि हिज मैजेस्टी ने पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत कुछ अधिनियमों पर शाही स्वीकृति की घोषणा करने के लिये कुछ लार्डों के नाम एक कमीशन जारी किया है।" इसके बाद जन्टिल मैन अशर आफ दि ब्लैक राड कामन्स में जाता है और उनका दरवाजा खटखटाता है और यह घोषणा करता है कि लार्ड कमिश्नर लार्ड्स के परिषद्

मे कामन्स की उपस्थिति चाहते हैं। तब अध्यक्ष और सार्जेन्ट इन आर्मस के नेतृत्व में कुछ थोडे से कामन्स लार्डस की ओर जाने वाले वरामदे में जाते है। अध्यक्ष लार्ड कमिश्नरो के सामने झुकता है और लार्डस् का क्लर्क शाही फरमानों को पढता है। इसके बाद राजमुकुट का क्लर्क प्रत्येक बिल का शीर्षक पढता है और पालियामेण्ट का क्लर्क शाही स्वीकृति की खास सूत्र के साथ घोषणा करता है जो कि सरकारी और निजी विधेयको के लिए अलग अलग होते हैं। यही नही बल्कि नये उपनिवेशो के शासन प्रबन्ध के लिये निकाली हुई घोषणाएँ व भारतवर्ष के लिये निकाले हुये कौंसिल के अध्यादेश (Orders in Council) यद्यपि प्रिवी कौंसिल में स्थित राजा द्वारा निकाले हुये समझे जाते थे पर वास्तव में मन्त्री ही उन सब को तैयार करते थे।

इन सब वर्णन से यह न समझना चाहिये कि विधि निर्माण में राजा का प्रभाव नही के बराबर है। कई मन्त्रि-परिषद् का अनुभव प्राप्त कर लेने से कभी-कभी वह इस योग्य हो जाता है कि मन्त्रियो को किसी कार्य करने या किसी विधेयक को पुनः स्थापित करने से समझा बुझा कर रोक दे। पर यदि पालियामेण्ट किसी योजना को पास कर दे तो फिर राजा उस पर अपनी सम्मति देने से इन्कार नही करता। परन्तु वह कानून से परे है अर्थात् वह किसी भी वैधानिक रीति से न्यायालय में उपस्थित नही कराया जा सकता और किसी भी अपराध का दोषी नही ठहराया जा सकता। उसके सब कार्यों का उत्तरदायी कोई न कोई मन्त्री ही होता है।

राजा और कार्य-पालक शक्ति--राज्य का अध्यक्ष होने से राजा मुख्य मजिस्ट्रेट होता है और कार्यपालिका का अध्यक्ष होता है। पर व्यवहार में मन्त्रि-परिषद् ही वास्तविक कार्यपालक सत्ता है। राजा प्रधान मन्त्री की नियुक्ति करता है और उसके परामर्श से दूसरे मन्त्रियो को नियुक्त करता है, परन्तु वास्तव में मन्त्री हाउस आफ कामन्स द्वारा ही नियुक्त होते हैं क्योंकि प्रधान मन्त्री को नियुक्त करते समय राजा को उस नेता को प्रधान मन्त्री स्वीकार करना पडता है जो कामन्स में बहुमत प्राप्त कर सके। यद्यपि मन्त्री राजा के मन्त्री कहलाते हैं, पर व्यवहार में वे लोग राजा के प्रति उत्तरदायी न होकर कामन्स अर्थात् जनता के प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं। यदि कोई राजा अपनी इच्छा से किसी मन्त्रिमण्डल को हटावे तो उसका यह काम संविधान के विरुद्ध समझा जायगा यद्यपि वैदेशिक मामलो में राजा ही नाम के लिए ब्रिटिश राजदूतो को मनोनयन करके भेजता, और विदेशी राजदूतो का स्वागत करता है, पर वास्तव में ब्रिटिश राजदूतो की नियुक्ति मन्त्रि-मण्डल द्वारा ही होती है। निसन्देह महारानी विक्टोरिया व एडवर्ड सप्तम के राज्यकाल में वैदेशिक नीति में राजा का बड़ा प्रभाव था, और ये लोग समय समय पर महत्वपूर्ण मामलो में हस्तक्षेप करते थे और विदेशी राज्यो से सम्बन्ध स्थापित करने में अपना बड़ा प्रभाव डालते थे, पर

उनका ऐसा करना कानूनी अधिकार से न होकर उनकी वैयक्तिक योग्यता के कारण था।

राजमुकुट (Crown) और राजा (King) का भेद—अब तक हमने सुविधा के लिये क्राउन अथवा राजमुकुट (Crown) और किंग (King) दोनो के लिये ही राजा शब्द का ही उपयोग किया है। पर इन दोनो शब्दो में अन्तर है और ब्रिटिश संविधान के इतिहास के विद्यार्थी को इस अन्तर को अच्छी तरह समझ लेना चाहिये। क्राउन एक संस्था है जो कभी विघटित नही होती, किंग एक व्यक्ति है जो उस संस्था का स्वामी होता है और जो मृत्यु से या किसी और प्रकार से किंग नही रहता। क्राउन साम्राज्य की एकता का प्रतीक है, यह वह स्वर्ण श्रृंखला है जो ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न भागो को जोड कर रखती है। प्रजा की भक्ति क्राउन के प्रति मानी जाती है। व्यक्तिगत रूप से राजा (किंग) को समाज मे बडा ऊँचा स्थान दिया जाता है। किंग को बहुत सी बातो का पता भी नही चलता जो क्राउन के नाम से की जाती है। क्राउन सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति है और राजा अपने मन्त्रियो की सलाह से उसके अधिकारो का उपभोग करता है। क्राउन की ख्याति और प्रभाव एक ऐसे रहस्यमय वैभव से लिपटे हुए हैं जो उसके लम्बे इतिहास और परम्परा में व्याप्त हैं। इसकी स्थिति इसे शक्ति प्रदान करती है ऐसी शक्ति जिसे वही व्यक्ति दबा सकता है जो बडे दृढ चरित्र वाला हो। नम्र स्वभाव वाला निर्बल भावुक व्यक्ति स्वयं ही उसके प्रभाव में आ जायगा। क्राउन की स्थिति और प्रभाव को संक्षेप में इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है : क्राउन को यह अधिकार है कि उसे देश के भीतर या बाहर की राजनैतिक स्थिति से परिचित रखा जाय, इसीलिये सभी कानूनो और बहुत से सरकारी पत्रों पर उसके हस्ताक्षर की आवश्यकता रहती है। वह आपत्ति का प्रतिवाद कर सकता है, सुझाव दे सकता है पर शासन प्रबन्ध में रुकावट नही डाल सकता। पहले मन्त्री राजा को सलाह देते थे किन्तु अब परिस्थिति बदल गई प्रतीत होती है क्योंकि अब राजा मन्त्रियो को सलाह देता है और शक्तिशाली राजा कभी-कभी यह काम बडी अच्छी तरह करता भी है।

राजमुकुट का विशेषाधिकार—यद्यपि सिंहासन पर बैठने वाले और ब्रिटिश राजमुकुट धारण करने वाले एक व्यक्ति की हैसियत से राजा किसी शक्ति का उपभोग नही करता, परन्तु राजमुकुट के अनेको विशेषाधिकार हैं जो कि यह तो कानून द्वारा दिये गये अथवा परिमार्जित किये गये हैं या प्राचीन परम्परागत शक्तियाँ हैं अथवा जैसी कि डायसी (Dicey) ने परिभाषा की है, विशेष शक्तियाँ हैं जिनको राजा अथवा उसके कर्मचारी पालियामेण्ट के किसी अधिनियम के बिना प्रयोग करते हैं। ये इस प्रकार है —

(१) कर लगाने की शक्ति—जो कि प्राचीन काल मे राजा के पास थी

परन्तु राजा द्वारा (१६३७ में) लगाया गया अन्तिम प्रत्यक्ष कर-शिपमनी था। तब से राजमुकुट के बदले मन्त्रिपरिषद् करों का प्रस्ताव करती है और पालियामेण्ट उन्हें मन्जूर करती है। कर इकट्ठा करने का राजमुकुट का विशेषाधिकार अब भी है परन्तु उसका प्रयोग राजा नहीं बल्कि मन्त्रिगण करते हैं।

(२) **घोषणा करके कानून बनाना**—यद्यपि इस विशेषाधिकार को १५ वीं शताब्दी में छोड़ दिया गया था, १६ वीं शताब्दी में उसको फिर से शुरू किया गया जबकि १५३९ में हेनरी सप्तम ने अपनी पालियामेन्ट से घोषणाओं का परिनियम पास करा लिया जिसने यह विधान बनाया कि अपनी कौंसिल (अर्थात् प्रीवी कौंसिल) की सलाह से राजा घोषणाओं द्वारा कानून बना सकता है। इस विधान को बाद में भंग कर दिया गया परन्तु फिर लागू कर दिया गया। इन दिनों आर्डर्स-इन-कौंसिल जारी किये जाते हैं जो कि पालियामेण्ट द्वारा पास किये कानूनों के पूरक हैं। परन्तु इस विशेषाधिकार का प्रयोग अब केवल मन्त्रिपरिषद् की सम्मति पर और उसकी आवश्यकतानुसार किया जाता है।

(३) **एक सेना को रखना**—राजमुकुट का यह प्राचीन विशेषाधिकार अब वास्तव में मन्त्रिपरिषद् द्वारा प्रयोग किया जाता है जिसकी प्रार्थना पर पालियामेण्ट वार्षिक सेना और खर्च सम्बन्धी अधिनियम पास करती है। राजा का उसमें कोई प्रत्यक्ष भाग नहीं होता यद्यपि वह सेना का तथा राज्य की अन्य प्रतिरक्षा शक्तियों का प्रधान सेनापति होता है।

(४) **न्यायपालिका का नियन्त्रण**—राजा अब भी न्याय का निर्झर है परन्तु उसकी न्यायाधीशों की नियुक्ति करने की शक्ति अब उससे ले ली गई है। अब उसके पास न्यायाधीशों को नियुक्त करने तथा बर्खास्त करने की शक्ति नहीं है। अब न्यायाधीशों का कार्यकाल १८७५ के जूडीकेचर एक्ट से निश्चित होता है और अब न्यायाधीश राजा के नाम पर प्रधान मन्त्री अथवा लार्ड चान्सलर द्वारा नियुक्त किये जाते हैं और "अच्छा व्यवहार रखने तक पदासीन रहते हैं, और हिज मैजेस्टी को पालियामेण्ट के दोनों सदनों द्वारा प्रस्तुत किसी परिपत्र पर राजा की शक्ति से हटाये जा सकते हैं।"

(५) **आदर का निर्झर**—सिद्धान्त रूप में यह विशेषाधिकार अब भी कायम है परन्तु वास्तविक व्यवहार में पदों, और सम्मानों का वितरण मन्त्री (प्रमुख सहयोगियों के साथ परामर्श करने के बाद) राजा के नाम पर करता है। राजा प्रधानमन्त्री को सुझाव दे सकता है परन्तु उन दोनों के बीच क्या होता है यह कभी प्रकाश में नहीं आता।

(६) **विजित और मिला हुआ प्रदेश**—पहले राजा सब विजित और मिले हुए प्रदेशों अथवा राजमुकुट के आश्रित राज्यों पर विधान और प्रशासन के सब

अधिकारों का प्रयोग करता था। परन्तु अब इस शक्ति का प्रयोग या तो पार्लियामेण्ट के विधान द्वारा या कौंसिल के अध्यादेश द्वारा और राजा के नाम पर मन्त्रि-परिषद् ही करती है।

(७) **युद्ध छेड़ने या शान्ति स्थापित करने का अधिकार**—राजा के इस प्राचीन विशेषाधिकार का प्रयोग अब व्यवहार मे राजा के नाम पर मन्त्रि परिषद् करती है। उदाहरणार्थ सितम्बर १९३९ में प्रधान मन्त्री चैम्बरलैन ने कामन्स सभा मे यह घोषणा की कि सम्राट् की सरकार ने जर्मनी से युद्ध छेड़ दिया है जब सन्धि होनी होती है तो सब बातचीतें मन्त्रिपरिषद् के द्वारा की जाती हैं और सन्धि पत्र पर राजा की ओर से मन्त्री द्वारा हस्ताक्षर कर दिये जाते हैं जो कि पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी होते हैं। वास्तव में विदेशी सरकारों से सब व्यवहार अब पूरी तरह मे मन्त्रिपरिषद् के अधिकार मे हैं।

(८) **व्यक्तिगत विशेषाधिकार**—इनमें निम्नलिखित शामिल हैं —

(I) **राजा कोई गलती नहीं कर सकता**—:। राजा के इस अनुत्तरदायित्व का अर्थ है कि राजा के नाम पर जो कुछ किया जाता है वह किसी न किसी मन्त्री द्वारा किया जाता है जो कि उस काम के लिये उत्तरदायी होता है। स्वयं राजा कुछ नही कर सकता। उसके नाम पर किये गये प्रत्येक काम पर किसी मन्त्री के हस्ताक्षर होते हैं जिनका मतलब यह है कि हस्ताक्षर करने वाला मन्त्री उस काम के लिये पार्लिया-मेण्ट के प्रति उत्तरदायी है। राजनीति में न तटस्थ होने के कारण राजा अपने नाम पर मन्त्रियों द्वारा किये गये कामों के लिये उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता। चार्ल्स द्वितीय के बमें रुचेस्टर ने ठीक ही कहा था

> यही है हमारा मालिक सम्राट्
> जिसके वचनो पर किसी ने नही किया विश्वास
> जिसने नही कही कभी भी कोई मूर्खतापूर्ण बात
> परन्तु जिसने नही की कभी बुद्धिमानी भी ।

अपने नाम पर हुये कामो से राजा की यह तटस्थता उत्तरदायी सरकार और वैधानिक राजतन्त्र की वास्तविक नीव है। राजा कभी भी कोई उचित अथवा अनुचित काम नही कर सकता, उसके नाम पर हस्ताक्षर करने वाले मन्त्री को ही उस काम का यश अपयश मिलता है।

(II) **राजा कभी नहीं मरता**:—एकट आफ सैटिलमैन्ट ने सब समय के लिये राजसिंहासन का उत्तराधिकार निश्चित कर दिया। एक राजा के मरने पर, अधिनियम के अनुसार, उत्तराधिकारी सदैव मौजूद रहता है। अत जब गद्दी पर बैठने वाला विशेष व्यक्ति मर जाता है तब राजा की मृत्यु की घोषणा करते हुए और उसके उत्तरा-

धिकारी का स्वागत करते हुये हम कहते हैं, "राजा मर गया, राजा चिरजीव रहे।" यह राजा और राजमुकुट के अन्तर को भी स्पष्ट करता है। एक व्यक्ति के रूप में राजा मर गया परन्तु राजमुकुट की संस्था मौजूद है। अतः राजा के पद में कोई व्यवधान नहीं होता। इस प्रकार राजा की मृत्यु और नये राजा के सिंहासनारूढ़ होने की घोषणा की हम प्रत्येक वर्ष ३१ दिसम्बर की रात के १२ बजे बजने वाली घटियों से उपमा दे सकते हैं जिनसे एक ही साथ पुराना साल समाप्त होता है और नया शुरु होता है।

(III) **राजा कभी बालक नहीं होता**—जब कभी राजा अवयस्क होता है तब उसकी अवयस्कता के समय में संरक्षकता अधिनियम पास किये जाते हैं जिनसे संरक्षक को राजा के कामों को करने की सीमित शक्ति दे दी जाती है परन्तु सामान्य कानून से राजा सदैव राज्य-काज करने योग्य होता है। बालक राजा द्वारा स्वीकृत शाही अनुदान और अधिनियम मान्य होते हैं।

(IV) राजा और प्रजा के किसी व्यक्ति के अधिकारों में संघर्ष होने पर राजा का अधिकार मान्य होता है।

(V) **अपराधियों को क्षमादान का अधिकार**—इस अधिकार का प्रयोग अब राजा के नाम पर गृह सचिव करता है।

(९) **पार्लियामेण्ट को बुलाने अथवा भंग करने का अधिकार**—इसका प्रयोग अब मन्त्रि-परिषद् करती है यद्यपि मन्त्रि परिषद् के कामन्स सभा का विश्वास खो देने पर पार्लियामेण्ट को समय से पूर्व भंग करने का अधिकार राजा के किसी अन्य प्रधान मन्त्री को पाने के प्रयत्न पर निर्भर है।

(१०) **प्रधानमन्त्री को नियुक्त करने का अधिकार**—क्योंकि सरकार राजा की सरकार है अतः राजा को यह अधिकार है कि वह जिसको भी प्रधान मन्त्री पद के सर्वाधिक उपयुक्त समझे उसको उस पद पर नियुक्त करदे परन्तु अपने इस चुनाव में राजा पर यह प्रतिबन्ध है कि वह व्यक्ति एक स्थायी मन्त्रिमण्डल बनाने के लिये कामन्स सभा में बहुमत का विश्वासपात्र होना चाहिये। अतः वह अपने निर्णय में इस प्रथा से निर्देशित होता है कि कामन्स सभा का नेता कौन है। परम्परा के अनुसार राजा आमतौर से स्वयं पदच्युत प्रधान मन्त्री से उसके उत्तराधिकारी के बारे में सलाह लेता है परन्तु वह ऐसा करने के लिये बाध्य नहीं है। इस प्रकार जब १९५६ में स्वेज के संकट पर एन्थोनी ईडेन ने त्यागपत्र दिया तब महारानी एलिजाबेथ ने दूसरे प्रधान मन्त्री पद के लिये ईडेन से नहीं बल्कि लार्ड सैलिसबरी और श्री० विन्स्टन चर्चिल से राय ली। यह कहा जाता है कि रानी ने अपने विशेषाधिकार का प्रयोग किया और चर्चिल की राय मानी तथा आर० ए० बटलर को न बुलाया जिनकी आशा की जाती

थी, बल्कि हैरोल्ड मैक्मिलन को नया मन्त्रिमण्डल बनाने के लिये बुलाया। इस विशेषाधिकार का राजा वास्तव मे प्रयोग करता है। कोई भी अधिकार के रूप में राजा को उसकी सरकार बनाने वाले व्यक्ति के सम्बन्ध मे राय देने का दावा नहीं कर सकता। सर्वसाधारण का यह विश्वास ठीक नही है कि राजा को पदच्युत प्रधानमन्त्री की राय लेनी ही चाहिये। जैसा कि चर्चिल कहता है "किसी प्रधानमन्त्री के लिये जब तक कि *उससे पूछा न जाय यह परपरा नही है कि वह अधिकारी रूप से राजा को अपने* उत्तराधिकारी के विषय में राय दे।"[1] अत युद्ध काल मे जब चर्चिल प्रेजिडेन्ट रूजवेल्ट से मशविरा करने के लिये अमरीका जा रहा था तब उसने (१६ जून १९४१) को राजा को एक पत्र लिखा जिसमें यात्रा मे उसकी मृत्यु के प्रसग में राजा को यह सम्मति देने की राय माँगी कि सम्राट को "एक नई सरकार बनाने का उत्तरदायित्व विदेश मन्त्रालय के राज्य सचिव श्री एन्थोनी ईडेन को सौंपना चाहिये जो कि सम्मति मे राष्ट्रीय सरकार में और कामन्स सभा में सबसे बडे राजनैतिक पक्ष का सबमे प्रमुख नेता है।"[2] यह चर्चिल ने राजा की आज्ञा लेकर के एक सुझाव के रूप मे लिखा न कि किसी परपरागत अधिकार के रूप मे। वास्तव में प्रधान मन्त्रियो के त्याग पत्र देने के अवसर पर ही इगलैण्ड मे जनता अगली सरकार के निर्माण के लिये अपने राजा की ओर देखती है और ऐसे अवसरो पर ही वैधानिक राजतन्त्र अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करने के लिये सामने आता है।

(११) राजा का अपने निजी सचिव को नियुक्त करने का अधिकार—राजा सब सरकारी काम करने के लिये और अपनी वैधानिक सत्ता तथा शक्ति का प्रयोग करने के लिये एक निजी सचिव रखता है। इस पद पर नियुक्ति राजा पूरी तरह अपनी स्वेच्छा से करता है, मन्त्रिमण्डल इस चुनाव में कोई हस्तक्षेप नही करता।

राजतन्त्र क्यो कायम है?—*इगलैण्ड में* राजतन्त्र के सिद्धान्त और व्यवहार का अध्ययन करने वाले अधिकाश विद्यार्थी अपने मे यह प्रश्न करते है. यदि राजा किसी शक्ति का प्रयोग नही करता और यदि मन्त्रिपरिषद ही वास्तविक कार्यपालिका है तो राजतन्त्र को कायम ही क्यो रखा जाय? इसके उत्तर मे यह कहा जा सकता है कि यद्यपि ग्रेट ब्रिटेन सब प्रकार से और सब प्रयोजनो से एक जनतन्त्र है परन्तु राजतन्त्र जनतन्त्रीय व्यवस्था के काम करने मे बाधा नही डालता। अंग्रेज स्वभाव से ही अनुदार होते है और किसी ऐसी संस्था का उन्मूलन करने के लिये नहीं झगड सकते जिसके पीछे एक लम्बा इतिहास है और जो कि उनके अधिकारो में हस्तक्षेप नही

१ विन्सटन चर्चिल—दि सेकिण्ड वर्ल्ड वार, चतुर्थ पुस्तक, पृष्ठ २९२।
२. विन्सटन चर्चिल—दि सेकिण्ड वर्ल्ड वार, चतुर्थ पुस्तक, पृष्ठ २९२।

करता। अपने चारों ओर के गौरव के कारण राजतन्त्र बड़ा उपयोगी है। राजा कामनवेल्थ की एकता का चिह्न है जिसके सब सदस्यों ने (जिनमें भारत और पाकिस्तान के जनतन्त्र और स्वशासित अधिराज्य भी शामिल हैं) उसे अपना अध्यक्ष माना है। ब्रिटिश समाज के अध्यक्ष के रूप में राजा जनता के तौर तरीकों, रुचियों, कला, साहित्य और शिक्षा पर प्रभाव पड़ता है। अतः राजतन्त्र के उन्मूलन से कोई लाभप्रद प्रयोजन नहीं सिद्ध होगा। प्रो० मनरो के शब्दों में "ब्रिटिश जनता ने यह समझ लिया है कि व्यक्तिमान और पक्षगत द्वन्द से ऊपर, राजनीति से तटस्थ, सन्तुष्ट करने के लिये कोई भी महत्वाकांक्षा न लिये हुए, सरकार को गौरव देने वाला परन्तु जनता की इच्छा के मार्ग को न रोकने वाला राजतन्त्र कभी उनको दुःखदायक नहीं हो सकता-उन्होंने यह समझ लिया है कि चाहे उनके विविध कष्टों के कुछ भी कारण क्या न हों, राजा उनमें से एक नहीं है।" राजा को अब "राज्य के पोत की आवश्यक प्रेरणा शक्ति" समझा जाता है। "यह मस्तूल है जिस पर जहाज के पतवार झुके हुये हैं।"[1] उन्हें अब सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के मामलों की पुनरावृत्ति का भय नहीं है।

कभी-कभी राजतन्त्र के भारी खर्चे की आलोचना की गई है और इस प्रकार जनतन्त्र का समर्थन किया गया है। बेन्जामिन डिजरैली (बाद में बीकन्स फील्ड का अर्ल) ने इस आलोचना का प्रत्युत्तर दिया और राजतन्त्र की संस्था का समर्थन किया जिसने साम्राज्य के अन्य राज्यों की सत्ता से सीमित होकर भी इस देश की समृद्धि में इतना योगदान दिया है।" राजतन्त्र के पक्ष में उसने तीन तर्कों की घोषणा की। सबसे पहले, "चाहे पक्षों का कुछ भी संघर्ष हो, चाहे सम्प्रदायों में कुछ भी कशमकश हो, चाहे जनता के मस्तिष्क में कुछ भी उत्तेजना हो, फिर भी इस देश में ऐसी एक चीज रही है जिसके चारों ओर सब वर्ग और पक्ष एकत्रित हो सकते हैं जो कि कानून के गौरव और न्याय के प्रशासन का प्रतिनिधित्व करती है और जो कि उसी समय प्रत्येक व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करती है और सम्मान की निर्झर है।" राजतन्त्र की पुनर्स्थापना (Restoration) और उस समय तक गुजरी हुई दो शताब्दियों में, डिजरैली का कहना था कि इंगलैण्ड में कोई क्रान्ति नहीं हुई। वास्तव में, अब तक राजतन्त्र के विरुद्ध कोई भी विद्रोह नहीं हुआ है। दूसरी ओर डिजरैली आगे कहता है इसका अर्थ है (१) मानव की योग्यता का अनवरत प्रयोग और उपयोग (२) उसके आराम और सुभीते के लिये विज्ञान की खोजों का सतत प्रयोग (३) सम्पत्ति का एकत्रीकरण, श्रम का उत्थान और पंक्तियों की स्थापना तथा देश में खेती का विकास। (४) "सतत व्यवस्था जो कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और राजनैतिक अधिकार का

१. गवर्नमेन्ट आफ यूरोप (चतुर्थ आवृत्ति) पृ० ६६।

एकमात्र जन्मदाता है।" उसने इन सबको राजा के कारण बतलाया। दूसरे, जैसा कि उसका विश्वास था, राजा अपनी तटस्थता के द्वारा पक्ष व्यवस्था पर आधारित पार्लियामेण्टवादी सरकार में सबसे अधिक उपयोगी और शक्तिशाली प्रभाव डालता है क्योंकि जबकि पार्लियामेण्टवादी सरकार "श्रेष्ठतम सरकार" है, उसका एक बड़ा दोष "बुद्धिमत्ता को कुंठित कर देना है" क्योंकि कोई भी मन्त्री चाहे वह सार्वजनिक प्रश्न पर उसके लाभ हानि के अनुसार विचार करने का कितना भी इच्छुक क्यों न हो, अपने पक्ष को परम्परागत पक्षपात से अपने को मुक्त नहीं कर पाता और इसलिये पार्लियामेण्ट के सामने कोई प्रविधान पेश करने से पहले "उसको सब पक्षों से श्रेष्ठ और उस प्रकार के सब प्रभावों से मुक्त प्रभाव के सामने समर्पण करना चाहिये" और यह सम्मति या चेतावनी है जो कि ऐसे अवसरों पर राजा दे सकता है। भिन्न-भिन्न प्रधान मन्त्रियों के नेतृत्व से विभिन्न राजनैतिक पक्षों की सरकारों के अधिक लम्बे अनुभव के कारण राजा किसी विशेष पक्ष की सरकार पर बहुत कुछ उपयोगी प्रभाव प्रयोग करता है। राजा के तीन अधिकार सम्मति लिये जाने का अधिकार, प्रोत्साहित करने का अधिकार और चेतावनी देने का अधिकार, जिनका राजतन्त्र का वैधानिक रूप न खोते हुए प्रयोग किया जाता है, का वर्णन करते हुए बेजहौट एक काल्पनिक राजा की एक काल्पनिक मन्त्री को एक काल्पनिक सम्मति का वर्णन करते हुये कहता है "इन प्रविधानों का उत्तरदायित्व आप पर है। आप जो कुछ उचित समझेंगे वह किया जायेगा। जो कुछ आप सर्वोत्तम समझेंगे उसमें मेरी पूरी और प्रभावपूर्ण सहायता होगी। परन्तु आप देखेंगे कि इस अथवा उस कारण से जो कुछ आप कराना चाहते हैं वह अनुचित है, और इस अथवा उस कारण से जो आप नहीं करना चाहते वह बेहतर है। मैं विरोध नहीं करता, विरोध न करना मेरा कर्तव्य है, परन्तु ध्यान दीजिये, मैं चेतावनी देता हूँ।

मन्त्रिमण्डल के लाभदायक प्रयोजन की समीक्षा करते हुये बेजहौट ने उसके पक्ष में पाँच तर्क दिये हैं —

(१) राजतन्त्र सुदृढ़ शासन है इसका सर्वोत्तम कारण यह है कि वह एक समझ में आने योग्य सरकार है। मानव समूह उसे समझते हैं और वे संसार में और कहीं कुछ भी नहीं समझते। बहुधा यह कहा जाता है कि मनुष्यों पर उनकी कल्पना से शासन किया जाता है, परन्तु यह कहना अधिक सत्य होगा कि वे अपनी कल्पना की दुर्बलता से शासित होते हैं।

जब से ये शब्द लिखे गये हैं उस समय से जनता का मस्तिष्क सब कहीं जनतन्त्र की दिशा में बहुत आगे बढ़ चुका है और वे परम्परागत शासकों के स्थान पर जो कि वास्तविक शासक हो सकते हैं, स्वयं अपने पर या अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों पर

अधिक विश्वास करते हैं।

(२) "अगरेजी राजतन्त्र हमारी सरकार को धर्म की शक्ति से दृढ करता है।" ब्रिटिश राजा धर्म का रक्षक और इगलैण्ड के चर्च का अध्यक्ष है।

(३) "रानी हमारे समाज की अध्यक्ष है। यदि वह न रहे तो प्रधान मन्त्री देश में पहला व्यक्ति होगा।" हो सकता है कि यह ब्रिटेन के बाहर के देशो की लोगो को कोई बडी महत्वपूर्ण बात न लगे परन्तु बेजहौट इस बात को आगे और भी स्पष्ट करता है जब वह कहता है परन्तु ससार के सब राष्ट्रो में अग्रेज शायद सबसे कम अक्ष में दार्शनिकों का राष्ट्र है। हमारे लिये अपनी सरकार के प्रत्यक्ष को प्रत्येक चार या पाच साल में बदलना बडी गभीर बात होगी।"

इस प्रकार का विचार राजतन्त्र के एक हजार साल से ऊपर बने रहने के कारण और अग्रज समाज का एक अग बन जाने के कारण है जो कि परपरागत ब्रिटिश रूढ़िवादी प्रवृत्ति का एक उदाहरण है।

(४) "चौथे, हम राजमुकुट को अपनी नैतिकता का अध्यक्ष मानते हैं। रानी विक्टोरिया और जार्ज तृतीय के गुण आम जनता के हृदय में गहरे प्रवेश कर गये है।

(५) अन्त मे, "वैधानिक राजतन्त्र——एक पर्दे के रूप मे काम करता है। वह हमारे वास्तविक शासको को लोगो के जानने की चिन्तायें किये बिना बदलते रहने योग्य बनाता है।" राजनैतिक सागर पर एक लहर भी उठे बिना प्रशासन का परिवर्तन निःसन्देह इगलैण्ड को सबसे बडा लाभ है।

बैजहोट के समय से ससार ने दो महायुद्ध देखे हैं जिन्होंने केवल योरप में ही नहीं बल्कि समस्त ससार में भारी परिवर्तन उत्पन्न कर दिया है। सरकारो की व्यवस्थाये बदल गई हैं—कुछ जनतन्त्र की ओर, दूसरी उससे दूर। नई राजनैतिक विचार धाराओ ने लोगों की कल्पना में घर कर लिया है। दोनो महायुद्धो में इगलैण्ड मित्र विजेताओ के पक्ष में सबसे बडी शक्ति रही है। ऐसे समयो मे राजतन्त्र एक अधिकाधिक आवश्यक सस्था मालूम पडी है। उसको राष्ट्रो के कामन वैल्थ का प्रतीकात्मक अध्यक्ष मान लिये जाने से, जिसमे दो जनतन्त्र भारत और पाकिस्तान भी शामिल हैं, वह इस अन्तर्राष्ट्रीय समाज के दस सदस्य राज्यो को एकत्रित करने में सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्व साबित हुआ है। अत वह कामनवैल्थ की राजनीति म सबसे बडी सगठनकारी शक्ति और इगलैण्ड को विकासात्मक वैधानिक सरकार के पथ के रूप पर ले जाने के सबसे अधिक प्रभावशाली साधन के रूप में जाविन है चाहे शासन में आज रूढ़िवादी और कड समाजवादी परिवर्तन होते रहे। अर्नेस्ट बार्कर ने ठीक ही कहा था "यदि कामनवैल्थ के राजनीतिज्ञ राजतन्त्र के आदर्श और साधन को न समझ पाते तो वे उस लचीलेपन की प्रतिभा को खो देते जिसने उन्हें समय की माँग के अनुसार वर्तमान सस्थाओं का समन्वित सामन्जस्य करने योग्य बनाया है।"

पाठ्य पुस्तकें

Anoson, W. R-Law and Custom of the Constitution,

Bagohot, . . & VI.
Barker, S . . . . . Monarchy
Emden, Cecil S-Select Speeches on the Constitution pp. 1-58
Greaves, H R G-The British Constitution, chs, IV & V
Marriot, J A R-English Political Institution chs. III & IV
Muir Ramsay-How Britain is Governed, Ch III
Munro, W B-The Governments of Europe 4thEd ch IV
Buck, R W & Masland, J W.-The Government of Foreign Powers, chs III.

अध्याय १०

कार्यपालिका : कैबिनेट और मंत्रिमंडल

मन्त्रिपरिषद् राजा, पालियामेण्ट अथवा राष्ट्र से अपने सम्बन्धों अथवा उसके सदस्यों के आपस के सम्बन्धों अथवा अपने अध्यक्ष के सम्बन्धों को निश्चित करने के लिये *लिखित कानून अथवा सविधान* की एक पंक्ति भी न होते हुए केवल समझौते से काम करता है। —ग्लैडस्टोन

इगलैण्ड में असली कार्यपालिका मन्त्रिपरिषद् है जिसके ऊपर ब्रिटेन और उसके साम्राज्य (स्वशासित अधिराज्यों को छोड़कर) के शासन-प्रबन्ध का भारी बोझ रहता है। सरकार बराबर रहनी चाहिये इसलिए जब एक मन्त्रिपरिषद् पदत्याग कर देती है उसके स्थान पर दूसरी बना दी जाती है क्योंकि मन्त्रिपरिषद् के बिना कोई भी प्रशासन असम्भव है। आचार्य डायसी ने मन्त्रिपरिषद् के बारे में यह कहा है: "यद्यपि राष्ट्र का प्रत्येक कार्य राजा के नाम से होता है पर इगलैण्ड की वास्तविक कार्यपालिका सरकार मन्त्रिपरिषद् है। हां, यह कोई भी इनकार नहीं कर सकता कि एक ऐसा अस्पष्ट घेरा भी है जिसके भीतर सविधान के अन्तर्गत साम्राज्ञी की वैयक्तिक इच्छा का बड़ा प्रभाव रहता है।" दूसरी राज्य-संस्थाओं से तुलना करते हुये ग्लैडस्टोन (Gladstone) ने मन्त्रिपरिषद् के बारे में यह कहा था

"मन्त्रिपरिषद तीन मोड़ वाला वह कब्जा है जो ब्रिटिश सविधान के तीन अगों को अर्थात् राजा या रानी, लार्ड्स और कामन्स को मिला कर कार्य में प्रवृत्त करता है। धक्का सभालने वाले यन्त्र की स्प्रिंग के समान यह सम्पूर्ण भार को अपने ऊपर वहन करता है और इसके भीतर उस धक्के के पारस्परिक विरोधी तत्व लड़भिड़ कर ठण्डे हो जाते हैं। आधुनिक समय में राजनीतिक ससार में यह एक अनुपम रचना है। इसकी अनुपमता इसके गौरव के कारण नहीं पर इसकी सूक्ष्मता लचीले पन और बहुमुखी शक्ति की विविधता के कारण है। राजा, पालियामेण्ट राष्ट्र या सदस्यों के आपस के सम्बन्ध या अपने प्रधान से इसका सम्बन्ध निश्चित करने वाली सविधान की एक लिखित लकीर भी न होने के कारण वह केवल पारस्परिक समझ के आधार पर जीवित है और अपना काम कर रहो है।" कैबिनेट प्रीवी कौंसिल की मुख्य सन्तति है और उसको प्रीवी कौंसिल के कामों का कार्यकारी पक्ष सौंप दिया गया है। कैबिनेट का स्वयं कोई कानूनी पद नहीं है। वह केवल परपरा में ही रहता और काम करता है। कानून उसको नहीं जानता, वह कोई सगठित निकाय नहीं है, वह परपरा

से काम करता है। कैबिनेट के सब सदस्य पालियामेण्ट के किसी सदन के सदस्य होते हैं, युद्ध मन्त्रिमण्डल मे स्मट्स को सम्मिलित करना एक अपवाद ही था। इसी प्रकार १९३५ के मन्त्रिमण्डल में रैमजे और मैक्डोनल्ड और उसका पुत्र मालकम मैक्डोनल्ड शामिल कर लिये गये थे परन्तु सदन के चुनाव में असफल होने के कारण उन्हे सन् १९३६ में ही मन्त्रिमण्डल छोड देना पड़ा। कैबिनेट अथवा मन्त्रिपरिषद् ही वास्तविक कार्यपालिका है जो कि एक ओर राजा के प्रति और दूसरी ओर पालियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी है। राजा के प्रति उसका उत्तरदायित्व राजा के नाम पर प्रशासन चलाने से उत्पन्न होता है। उसका पालियामेण्ट के प्रति उत्तरदायित्व इस सिद्धान्त का परिणाम है कि वह केवल तभी तक काम कर सकता है जब तक कि उसके वित्त सम्बन्धी तथा अन्य प्रस्ताव हाउस आफ कामन्स द्वारा मान लिये जाय और इसी कारण से कैबिनेट *के अधिकाश सदस्य कामन्स के बहुमस्यक पक्ष से चुनने पडते हैं जहाँ कि वे सरकार* को नीति को स्वीकृत कराने में अपने प्रभाव का प्रयोग कर सकें। जब तक कि कामन्स सभा मन्त्रिपरिषद् मे विश्वास नही दिखाती तब तक कोई स्थाई सरकार नही बन सकती।

क्राउन की तीन कौंसिलें--इस प्रकार मन्त्रिपरिषद् अंग्रेजी प्रथाओ, रीति-रिवाजो और प्रचलित नियमो से उत्पन्न हुई एक अत्यधिक विचित्र सस्था है। वह इस समय क्राउन अर्थात् राजा की तीन कौसिलो में से एक है, दूसरी दो में से एक हाउस आफ लार्ड्स है और एक प्रिवी कौसिल है। हाउस आफ लार्ड्स की उत्पत्ति आदि के सम्बन्ध में पहले ही वर्णन हो चुका है। वर्तमान मन्त्रिपरिषदो के कर्तव्यो को भली भाँति समझने के लिये यह आवश्यक है कि इसमें और प्रिवी कौंसिल में भेद स्पष्ट कर दिया जाय।

क्यूरिया का प्रारंभिक इतिहास—क्यूरिया (Curia) पहले, विशेषतः नार्मन काल में राज के परामर्श दाताओ की एक स्थायी समिति थी जो न्याय, अर्थ तथा शासन सम्बन्धी व दूसरे परामर्श देने वाले कार्य करती थी। जैसे जैसे समय बीतता गया और इस समिति का काम बढा, इसका न्याय सम्बन्धी काम किंग्स बैंच और कामन प्लीज नामक दो न्याय सस्थाओ में बाँट दिया गया और अर्थ सम्बन्धी (Financial) *काम अर्थ विभाग या राजकोष विभाग (Exchequer) को सौंप दिया गया।* सामान्य शासन और राजा को परामर्श देने से सम्बन्धित बचे हुये काम कण्टीन्यूअल कौंसिल (Continual Council) करने लगी। यह कण्टीन्यूअल कौंसिल हैनरी सप्तम के समय में बडी प्रख्यात हुई जबकि इसके सदस्य प्रतिवर्ष चुने जाते थे, उनको वेतन दिया जाता था और उन्हे कौंसिल की बैठको में उपस्थित होना पडता था। इसके कर्तव्य *वे सब थे जो कार्यपालिका के हुआ करते हैं और इसलिये वह सरकार की कार्यपालिका*

परिषद बन गई थी।

क्यूरिया प्रीवी कौंसिल बन जाती है—एडवर्ड अष्टम के समय में यह प्रीवी कौंसिल के नाम से पुकारी जाने लगी। इसके पश्चात् ट्यूडरकाल में यह छोटी-छोटी समितियों में विभक्त होकर काम करने लगी थी। प्रत्येक शासन के साथ इसके सदस्यों की संख्या बदलती रही। सन् १५०९ में यह संख्या ११, १५४७ में २५, मेरी (Mary) के समय में ४६ पर एलिजाबेथ के समय में केवल १३ थी। जनता के प्रतिनिधि (हाउस आफ कामन्स) इन पर इनके सदस्यों के विरुद्ध अभियोग लगाकर इनका नियन्त्रण किया करते थे। सन १८३३ में एक एक्ट से प्रिवी कौंसिल की न्याय समिति (Judicial Committee) बना दी गई। इसी प्रकार समय-समय पर और भी समितियां और बोर्ड इसमें से बन कर अलग हो गये जैसे, बोर्ड आफ ऐज्यूकेशन (शिक्षा बोर्ड), स्थानीय बोर्ड इत्यादि।

प्रीवी कौंसिल रचना और कार्य—प्रीवी कौंसिल की वर्तमान रचना से उसके विचार करने वाले या सलाहकार निकाय के रूप की सम्भावना नहीं रह जाती। एक बार प्रीवी कौंसिल का सदस्य आजन्म प्रीवी कौंसिल का सदस्य रहता है, इस सिद्धान्त से उसकी सदस्यता सैंकड़ों तक बढ़ गई है और वह एक बेजोड़ तथा बहुरंगी बन गयी है। सब कैबिनेट मन्त्रिगण (भूत और वर्तमान), अधिकतर राजदूत, कामनवैल्थ के देशों के प्रधान मन्त्री और कला, साहित्य, कानून तथा जीवन के अन्य क्षेत्रों के वे प्रख्यात सदस्य जिनको प्रीवी कौंसिल की सम्मान सूचक सदस्यता दे दी गई है, उसके सदस्य हैं। इस प्रकार के निकाय को गुप्त परामर्श देने का कार्य नहीं सौंपा जा सकता।

प्रीवी कौंसिल के मुख्य कार्य ये हैं—(१) वह मन्त्रियों की सलाह से राजा द्वारा पूर्व निश्चित प्रविधानों को व्यक्त करने का माध्यम है, (२) उसके कार्यपालक कार्यों में शासकीय प्रतिज्ञायें कराना, राजमुकुट के आधीन पदों की नियुक्ति और बर्खास्तगी, विशपों द्वारा सम्मान कराना तथा शेरिफों का चुनाव है। (३) वह उपनिवेशों तथा धार्मिक न्यायालयों की कौंसिल के विरुद्ध अपील करने का अन्तिम न्यायालय है।

सभायें साधारण कौंसिल के क्लर्क द्वारा बुलाई जाती हैं और राजा अध्यक्ष पद ग्रहण करता है। परन्तु जब आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज और स्काटिश विश्वविद्यालयों के प्रश्नों पर विचार करने (ये काम अब विभिन्न कोर्टों को सौंप दिये गये हैं) अथवा सवैधानिक मामलों पर और म्युनिसिपल सगठनों के अधिकारपत्रों पर विचार करना होता है और कौंसिल के अध्यादेश जारी करने होते हैं तब उन पर सलाह देने के लिये विशेष समितियों की बैठकें होने पर लार्ड प्रेजीडेन्ट अध्यक्ष होता है। वह नये नियम और

कानून बनाने के लिये कौंसिल में अध्यादेश जारी करती है। वह पार्लियामेण्ट को बुलाने या भग करने जैसे मामलो को प्रसिद्ध करने के लिये घोषणायें जारी करती है। बैठक के लिये गणपूरक संख्या निश्चित है। आमतौर से चार पाँच कैबिनेट सभा में बुलाये जाते हैं। दूसरे न बुलाये जाते हैं और न आने की परवाह ही करते हैं। यद्यपि सदस्यता ३०० से ऊपर है।

मन्त्रिपरिषद (Cabinet) का उद्गम—एडवर्ड षष्ठ के समय में प्रिवी कौंसिल की एक समिति को कुछ महत्वपूर्ण कार्यों के करने का भार सौंप दिया गया था और इसलिये उसको 'कमेटी आफ स्टेट' (Committee of state) कहकर पुकारा जाता था। चार्ल्स द्वितीय ने १६६७ में कुछ विश्वस्त मन्त्रियों की एक समिति बनाई जिसका नाम "कैबाल" (Cabal) रखा और जिसका काम राजा को परामर्श देना था।[1] बाद में कैबिनेट (Cabinet) नाम पड़ा। यही कैबिनेट शासन नीति निश्चित करती थी जिसे प्रीवी कौंसिल राजा की ओर से स्वीकार कर लेती थी और जिसके अनुसार विभिन्न शासन विभाग अपना काम करते थे। विलियम तृतीय के समय में कैबल के द्वारा काम करने की प्रणाली का विरोध होने लगा, इसलिये एक्ट आफ सैटिलमेंट (Act of Settlement) में यह निश्चय कर दिया गया कि प्रीवी कौंसिल के सदस्य स्वयं अपने हस्ताक्षर किया करें। इस एक्ट ने यह भी निश्चित कर दिया कि सरकारी वेतन भोगी व्यक्ति पार्लियामेण्ट के सदस्य नहीं हो सकते। परन्तु रानी ऐन के समय में इन प्रविधानों को रद्द कर दिया गया।

हैनोवर राजवंश के समय की कैबिनेट अर्थात् मन्त्रिपरिषद—जार्ज प्रथम के राजसिंहासनारूढ होने पर मन्त्रिपरिषद् की बनावट और कार्यपद्धति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। जार्ज प्रथम ने मन्त्रि परिषद् में उदार पक्ष के मुख्य नेता रखे। अंग्रेजी भाषा से अनभिज्ञ रहने के कारण वह मन्त्रिपरिषद् की बैठकों में शामिल न होता था और इस प्रकार शासन कार्य व उसकी नीति स्थिर करने में राजा का हाथ न रहा। उसका स्थान प्रधान मन्त्री ने ले लिया। जार्ज द्वितीय के समय में सर राबर्ट वाल्पोल ने मन्त्रिपरिषद् प्रणाली को अच्छी तरह स्थापित कर सचालित किया और उस प्रणाली को व्यवस्थित रूप दे दिया। मन्त्रिपरिषद् की व्यवस्था की स्थापना करने का श्रेय वालपोल को है। प्रधान मन्त्री के रूप में उसने अपने मन्त्रियों से स्वामिभक्ति की माँग की और अपने मन्त्रिपरिषद् के पार्लियामेण्ट के सामने एक सगठित मोर्चा प्रस्तुत करने पर जोर दिया। वह फर्स्ट लार्ड ऑफ ट्रेजरी और चान्सलर ऑफ दि एक्सचेकर बन

१ 'Cabal' नाम पाँच सलाहकार सदस्यों के नामों के प्रथम अक्षरों से बना था। ये सदस्य थे—Clifford, Arlington, Buckingham, Ashley and Lauderdale

गया। प्रेरणा को अपने हाथ में रखने का निश्चय करके उसने प्रशासन की नीति का सचालन किया, क्रिया की एकता निश्चित रखी और सामान्य उत्तरदायित्व को लागू किया। १७३० में वाल्पोल ने अपने सहयोगी टाउन्संड को त्याग पत्र देने को बाध्य किया क्योंकि वह उसकी राय से सहमत न था। उसी प्रकार सन् १७३३ में एक्साइज बिल का विरोध करने पर लार्ड चेस्टरफील्ड ने इस्तीफा दे दिया। परन्तु १७४२ में कामन्स सभा में हार जाने पर वालपोल ने स्वयं त्यागपत्र दे दिया। इस प्रकार उसने दो सिद्धान्त स्थापित किये (१) नीति निश्चित करने में प्रधान मन्त्री का उत्तरदायित्व, और (२) मन्त्रिपरिषद् का राजा के प्रति नहीं बल्कि कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायित्व। जार्ज तृतीय को यह प्रणाली पसन्द न थी इसलिये टोरियों की सहायता से उसने इसे नष्ट करना चाहा। पर अमरीकन उपनिवेशों के हाथ से निकल जाने से राजा का वैयक्तिक शासन समाप्त हो गया और पिट के नेतृत्व में अनुदार पक्ष भी मन्त्रिपरिषद् व पक्ष-प्रणाली का उतना ही भक्त हो गया जितना उदार पक्ष था। रानी विक्टोरिया ने भी कुछ दुविधा के बाद इस प्रणाली को स्वीकार कर लिया और इस प्रकार राजाओं के ऊपर पूरा लोक नियन्त्रण हो गया।

मन्त्रिपरिषद् का निर्माण—मन्त्रिपरिषद् आजकल शासन की प्रेरणात्मक शक्ति है। यह इस सिद्धान्त पर बराबर बना रहता है कि राजा की सरकार चलनी ही चाहिये। इसलिये जब एक मन्त्रिमण्डल पदच्युत हो जाता है तो दूसरा तुरन्त बन जाता है। मन्त्रिमण्डल बनाने के लिये राजा पार्लियामेण्ट के राजनैतिक पक्षों में से उस पक्ष के नेता को बुला भेजता है जो पार्लियामेण्ट में बहुमत को अपनी ओर कर सके (पार्लियामेण्ट से यहाँ हाउस आफ कामन्स ही समझना चाहिये) और उस नेता को राजा अपना प्रधान-मन्त्री नियुक्त कर देता है। उसके पश्चात् प्रधान-मन्त्री मन्त्रिपरिषद् बनाता है। १९२३ में जार्ज पन्चम ने लार्ड कर्जन के स्थान पर श्री बाल्डविन को पसन्द किया और इस प्रकार यह प्रथा स्थापित की कि प्रधान मन्त्री कामन्स सभा का सदस्य होना चाहिये। साधारण स्थिति में प्रधान मन्त्री अपने पक्ष के बड़े-बड़े व्यक्तियों से सलाह लेता है और सलाह लेने के पश्चात् अपनी मन्त्रि-परिषद् के मन्त्रियों के नाम राजा के सामने प्रस्तुत कर देता है जो विधिपूर्वक स्वीकृत हो जाने हैं और मन्त्रिपरिषद् के सदस्यों के नाम गजट में छाप दिये जाते है। असाधारण स्थिति में मिली जुली (Coalition) मन्त्रिपरिषद् बनाई जाती है जिसमें सब राजनैतिक पक्षों के प्रमुख व्यक्ति रखे जाते है।

राजा का प्रभाव—यद्यपि प्रधान मन्त्री अपने साथी मन्त्रियों को चुनने में स्वतन्त्र है पर राजा तीन प्रकार से इस काम में अपना प्रभाव डाल सकता है: (१) किसी विशेष राजनीतिज्ञ के नाम का सुझाव देकर (२) प्रधान मन्त्री द्वारा प्रस्तावित

किसी राजनीतिज्ञ को स्वीकार करने से इन्कार कर और (३) किसी पसन्द किये हुये राजनीतिज्ञ की अयोग्यता की कटु आलोचना करके। यह सब प्रभाव बलपूर्वक बाध्य करने के रूप में होकर केवल समझाने के रूप में डाला जाता है। कुछ उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जायेगा। जब रानी विक्टोरिया ने श्री ग्लैडस्टोन को मन्त्रिपरिषद् बनाने के लिये आमन्त्रित किया तब उसने लार्ड हैलीफैक्स को मन्त्रिपरिषद् में शामिल कर लेने का सुझाव देते हुये ४ दिसम्बर १८६२ को उन्हे एक पत्र लिखा। ६ तथा १० दिसम्बर को यह सुझाव फिर से दोहराया गया परन्तु ग्लैडस्टोन ने उसे नहीं माना। केवल १८७० में अपने मन्त्रिपरिषद् का पुनर्संगठन करते समय ही उन्होंने लार्ड हैलीफैक्स को प्रीवी सील के पद तथा मन्त्रिपरिषद् में स्थान के लिये आमन्त्रित किया। फिर, जब २५ जुलाई १८८६ को लार्ड सैलिसबरी प्रधानमन्त्री बन गया तब रानी ने सर ई० मैले (E Mallet) को विदेशी मामलो के सचिव के रूप मे नियुक्त करने का सुझाव दिया परन्तु यह प्रस्ताव नही माना गया और लार्ड इडेसली (Iddesligh) उस पद पर नियुक्त कर दिया गया। दूसरी ओर रानी विक्टोरिया के राजनैतिक प्रभाव के कारण ही सन् १८९५ में सैलिसबरी ने लार्ड क्रास को कैबिनेट मन्त्री नियुक्त किया। राजा मन्त्रिपरिषद् में किसी विशेष स्थान पर उसको न जँचने वाले व्यक्ति को स्वीकार करने से भी इनकार कर सकता है। प्रधान मन्त्री राजा के विरोध को कम करने के लिये स्वभावत. ही जहाँ तक हो सकता हो उसकी बात मानने की कोशिश करता है। इस प्रकार जब १८६८ में रानी विक्टोरिया ने विदेश नीति के महत्व के आधार पर लार्ड क्लैरेन्डन को वैदेशिक सचिव के रूप मे नियुक्ति को मानने से इनकार कर दिया तो श्री ग्लैडस्टोन रानी के इच्छा के सामने नहीं झुके यद्यपि लार्ड क्लैरेन्डन के डच रानी से निकट सम्बन्ध थे और जर्मनी तथा रूस के बारे में उसके विचार रानी विक्टोरिया के विचारो से भिन्न थे। परन्तु सन् १८८६ मे ग्लैडस्टोन ने रानी की बात को मान लिया और लार्ड ग्रेनविले (Granville) को विदेश विभाग में नही नियुक्त किया परन्तु उसके बजाय उसे उपनिवेश सचिव बना दिया।

मन्त्रिमंडल के निर्माण के समय राजा किसी विशेष पद के लिये योग्यता के अभाव के आधार पर किसी विशेष व्यक्ति की उस मन्त्रि पद पर नियुक्ति की आलोचना कर सकता है। सैलिस्बरी ने श्री गोशेन (Goschin) को एडमिरैल्टी का प्रथम लार्ड और लार्ड जॉ० हैमिल्टन को भारत का राज्य सचिव चुना। रानी विक्टोरिया ने सैलिसबरी को लिखा कि वह इन दोनो राजनीतिज्ञो को उनकी सामर्थ्य के आधार पर उन पदो के उपयुक्त नही समझती। परन्तु सैलिसबरी ने रानी को लिखा कि श्री गोशेन ने किसी भी अन्य पद को मंजूर करने से इनकार कर दिया है और उसको कैबिनेट में शामिल करना जरूरी है और लार्ड हैमिल्टन को पहले से ही इस पद का

चार वर्ष का अनुभव है। अत. दोनो नियुक्तियां कर दी गई।

कैबिनेट के बनने में कोई राजा कहां तक प्रभाव डाल सकता है यह सब उसके अपने स्वभाव और योग्यता पर निर्भर होता है। रानी विक्टोरिया ने बड़ा प्रभाव डाला परन्तु एडवर्ड सप्तम ने बहुत कम, जो कि केवल अपनी इच्छा और अनिच्छा को जाहिर किया करता था। जार्ज पचम बहुत ही वैधानिक था और नियुक्तियों के लिये प्रधान मन्त्री की सिफारिशों में हस्तक्षेप नहीं करता था अतः यहाँ पर कैबिनेट और राजा के वास्तविक सम्बन्ध तथा राज्य में उसकी यथार्थ स्थिति पर प्रकाश डालना अच्छा रहेगा। जैसा कि हरमन फाइनर लिखता है "मन्त्री राजा के मन्त्री हैं, अर्थात् औपचारिक रूप से राजा ही उनको नियुक्त और पदच्युत करता है। परन्तु यह काम केवल प्रतीकात्मक है......राजा नियुक्त करता है परन्तु वह चुनता नहीं, वह पदच्युत करता है परन्तु नियन्त्रण नहीं करता, न ही वह पदच्युत करने का अवसर निश्चित करता है।" मन्त्रिमण्डल की स्थिति का वर्णन करते हुये ग्लैडस्टोन ने उसे ब्रिटिश सविधान में "चतुर्थ शक्ति" कहा है, बाकी तीन लार्डस, कामन्स और सम्राट् को हैं। उसके अपने शब्दों में "चौथी शक्ति अन्य तीनों पर आधारित है और बिना किसी स्वतन्त्र अस्तित्व के उनके जीवन पर निर्भर रहती है।" राजा मन्त्रिपरिषद् बनाने का काम सबसे अधिक जनमत पाने वाले अर्थात् कामन्स में बहुसख्यकों की सहायता पाने वाले व्यक्ति को सौंपता है। पक्ष व्यवस्था के विकास और एक पक्षगत समिति (party caucus) के अस्तित्व ने राजा को कैबिनेट मन्त्रियों को स्वय चुनने के कष्ट साध्य कार्य से मुक्त कर दिया है।

कैबिनेट अर्थात् मन्त्रिपरिषद की रचना—मन्त्रि परिषद् के बनाने का काम प्रधान मन्त्री के लिये बड़ा महत्वपूर्ण है। अधिकतर वह ऐसे व्यक्तियों को ही चुनता है जो योग्य व प्रभावशाली होते हैं पर कभी कभी ऐसे व्यक्ति भी छाट लिये जाते हैं जिनकी केवल योग्यता यही है कि वे प्रधान मन्त्री के मित्र रह चुके हैं। क्योंकि कैबिनेट मन्त्रियों की संख्या कम होती है, इसलिये अपने सहयोगियों के चुनने में प्रधान मन्त्री अपने दल के सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्तियों, और पक्ष समिति (party caucus) से परामर्श लेता है क्योंकि मन्त्रिपरिषद् बनाने का काम वास्तव में बड़ा नाजुक है। जबकि निकटतम व्यक्तिगत मैत्रियां पुरस्कृत होती हैं, यह ध्यान में रखना पड़ता है कि अन्तिम चुनाव के सम्पूर्ण पक्ष को यह विश्वास हो जाना चाहिये कि योग्यतम और सर्वोत्तम व्यक्ति ही लिये गये हैं। जब १८९२ में ग्लैडस्टोन ने मन्त्रिपरिषद् बनाने का उत्तरदायित्व लिया तब उसने विभागों के विभाजन के लिये मोरले और हरकोर्ट की सलाह ली। सर हेनरी कैम्पबेल से भी परामर्श लिया गया। उसने इस अवसर का वर्णन इस प्रकार किया है "यह अन्तिम अवसर था जबकि मुझे एक सरकार बनाने से

काम पडा, और यह बडा ही कष्टदायक काम है। प्रत्येक बात पर वाद विवाद और सोच विचार होना जरूरी है और सब दिलो के रहस्य खोल दिये जाते हैं। कल (इतवार) सबने मुझे ढूढ निकाला और एक सकट से निकलने के उपाय के बारे में सलाह देने के लिये एक शीतल पुस्तकालय में फ्रेंच उपन्यास से मुझे खीच लिया।

१३ साल बाद सन् १९०५ में कैम्पबैल को एक उदार मन्त्रिमण्डल बनाने के लिये बुलाया गया, तब उसने विभागो के विभाजन के लिये एसक्विथ से मशविरा किया।

मन्त्रि मडल बनाने के लिये आमन्त्रित व्यक्ति को नियुक्तियों की पूर्णता निश्चित करने के लिये अपने दल के मुख्य सचेतक (Chief Whip) से परामर्श लेना पडता है क्योंकि मुख्य सचेतक को सदन की प्रवृत्तियो तथा सम्मतियो का पर्याप्त अनुभव होता है और इसलिये वह नेता को यह चेतावनी दे सकता है कि कौन से व्यक्ति पक्ष और सदन में प्रभाव रखते हैं और किनको शामिल करना खतरनाक होगा। परम्परा के अनुसार सरकारी कर्मचारियो को मन्त्रिमण्डल में नही शामिल किया जाता। परन्तु युद्ध की आवश्यकताओ के कारण १९१४ और १९१५ को लार्ड किचनर को मन्त्रिपरिषद् मे शामिल करना पडा था यद्यपि उसने यह शर्त रखी थी कि युद्ध के *स्थगित रहते वह सेना से त्याग पत्र नही देगा। एक अन्य अपवाद सन् १९१४-१९१९* के युद्ध मन्त्रिपरिषद् में दक्षिणी अफ्रीका के जनरल स्मट्स को शामिल करना था क्योंकि १९१८ तक ब्रिटेन से बाहर का कोई भी व्यक्ति मन्त्रिपरिषद् का सदस्य नही बनाया गया था। पहले मन्त्रिपदो को पार्लियामेण्ट के दोनो सदनो में विभाजित करने की शर्ते थी। मिनिस्टर्स आफ दी क्राउन एक्ट (Ministers of the Crown Act) के पास हो जाने के बाद यह नियम हो गया है कि हाउस आफ लार्ड्स मे से भी कम से कम तीन कैबिनेट मन्त्री और तीन पार्लियामेण्टरी उपसचिव लेने चाहियें। इस ऐक्ट के अनुसार कैबिनेट मन्त्री ये कहे जाते हैं—प्रधान-मन्त्री, अर्थ-मन्त्री, कोष-मन्त्री, गृह-मन्त्री, उपनिवेश-मन्त्री, विदेश-मन्त्री, अधिराज्य-मन्त्री, युद्ध-मन्त्री, वायुसेना-मन्त्री, भारत-मन्त्री, (अब यह पद टूट गया है क्योंकि भारत अब स्वतन्त्र है) स्काटलैंड का मन्त्री, नौसेना-मन्त्री, व्यापार बोर्ड का अध्यक्ष, कृषि-मन्त्री, शिक्षा-बोर्ड का अध्यक्ष, स्वास्थ्य-मन्त्री, श्रम-मन्त्री, यातायात-मन्त्री, नियामक (Co-ordination) मन्त्री, कौंसिल का लार्ड प्रेसीडेण्ट, लार्ड प्रीवी सील, पोस्टमास्टर जनरल, निर्माण विभाग का प्रथम कमिश्नर, और पेन्शन मन्त्री। वे अधिनियम द्वारा निश्चित वेतन पाते हैं।[1]

---

१. अधिनियम के अनुसार प्रधान मन्त्री और ट्रेजरी का प्रथम लार्ड १०,००० पौण्ड प्रतिवर्ष और पद छोड़ने के बाद २००० पौण्ड वार्षिक पेन्शन पाते हैं, तब दूसरे

क्योंकि कामन्स सभा में विभिन्न राजनैतिक पक्षों में बराबर सघर्ष होता रहता है। अत मन्त्रिमण्डल बनाते रहत जनता के प्रतिनिधियों के समान सरकार को अपनी नीति के बारे में लगाये हुये अभियोगो का प्रतिवाद कर उसका औचित्य दिखलाना पडता है इसलिए अधिकतर मन्त्री और पार्लियामेण्टरी उपसचिव हाउस आफ कामन्स के सदस्यों में से ही लिये जाते हैं।

मन्त्रि परिषद् का पुनर्निर्माण और सशोधन—मन्त्रिपरिषद् के व्यक्तियों की नियुक्ति स्थायी नही होती क्योंकि समय समय पर प्रधान मन्त्री पुराने सदस्यों के स्थान प नये मन्त्री नियुक्त करता रहता है प्रधान मन्त्री को परिषद् बनाने का ही, अधिकार नहीं वरन् उसमें समय समय पर परिवर्तन कर उसे पुनर्सगठित करने का भी अधिकार है यदि ऐसा करना उसके विचार में वाछनीय हो। इस प्रकार की परिस्थितियां ये हैं —

(१) किसी विशेष विपत्तिजनक परिस्थिति के कारण या साधारणरूप से किसी मन्त्री का पद त्याग।

(२) किसी सामान्य निर्वाचन में सफल होने के पश्चात् किसी प्रधान-मन्त्री की अपनी परिषद् का पुनर्सगठन करने की इच्छा।

(३) प्रधानमन्त्री की परिषद् को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने की इच्छा। ऐसा करते समय प्रधान-मन्त्री केवल अपने पक्ष के नेताओं से सलाह नही लेता वरन् उन मन्त्रियों और व्यक्तियों की सलाह भी लेता है जिन पर इस पुनर्संगठन का असर पडता हो। पुनर्निर्माण और पुनर्विभाजन की प्रक्रिया बडी नाजुक है और कठिनाइयों से भरी हुई है। त्याग पत्रों से रिक्त स्थानों की पूर्ति करने में प्रधानमन्त्री को कई बातों का ध्यान रखना पडता है, उम्मीदवारों के गुण, प्रशासन की कुशलता में कमी किये बिना विभागों का पुनर्विभाजन, दोनों सदनों में मन्त्रिपरिषद् के पदों का उचित विभाजन

वर्ग में चान्सलर आफ दि एक्सचेकर, मुख्य राज्य सचिव, एडमिरैल्टी का प्रथम लार्ड, शिक्षा बोर्ड का अध्यक्ष, स्वास्थ्य मन्त्री, श्रम मन्त्री, यातायात मन्त्री, समन्वय मन्त्री, कौंसिल का लार्ड प्रेजीडेण्ट, लार्ड प्रीवी सील, पोस्ट मास्टर जनरल, फर्स्ट कमिश्नर आफ वर्क्स आते हैं जिनमें से प्रत्येक ५००० पौण्ड वार्षिक पाता है, तीसरी श्रेणी में शामिल हैं, राज्य मन्त्री ३००० पौण्ड वार्षिक, ससदीय उपसचिव १५०० पौण्ड वार्षिक पाते हैं परन्तु ट्रेजरी का निजी सचिव ३००० पौण्ड वार्षिक, वित्तीय सचिव ३००० पौण्ड वार्षिक और पेन्शन विभाग का सचिव ३००० पौण्ड वार्षिक, सहायक पोस्ट-मास्टर १५०० पौण्ड वार्षिक, प्रत्येक जूनियर लार्ड आफ ट्रेजरी २००० पौण्ड वार्षिक पाते हैं। विरोधी पक्ष का नेता मन्त्रिपरिषद् के लिये सबसे बडा काटा होने पर भी ५००० पौण्ड वार्षिक पाता है।

और लम्बे अर्से के राजनैतिक मित्रो के अधिकारो को सन्तुष्ट करने की आवश्यकता। प्रधानमन्त्री की रुचि और अरुचि का बडा महत्व होता है। इन कारणो से किसी महत्वाकाक्षी नवयुवक को निराश होना पड़ सकता है। १८८३ में ग्लैडस्टोन ने लार्ड रोजबर्ग को लार्ड प्रीवी सील के रूप में मन्त्रिपरिषद् में शामिल नही किया क्योकि वह उसको, 'एक सुन्दर उज्ज्वल भविष्य वाले अल्पायु बालक" ने अधिक कुछ नही समझता था। परन्तु दो वर्ष बाद सन् १८८५ में उसे मन्त्रिपरिषद् में ले लिया गया। १९०७ में सर हेनरी कैम्पबेल ने अपने मन्त्रिपरिषद् का पुनर्संगठन करते हुये विन्सटन चर्चिल को मन्त्रिपरिषद् में नही लिया इसको लार्ड ऐशर (Escher) ने इस प्रकार बयान किया है "प्रधान मन्त्री इस समय विन्सटन का मन्त्रिपरिषद् में रहना नही चाहेगा। वह मि० जी० (ग्लैडस्टोन) के समान पुराने फैशन का है और जल्दबाज नौजवानो को नापसन्द करता है।" तब विन्सटन को मन्त्रिपरिषद् में पद दिये बिना आयरिश सचिव का पद दिया गया परन्तु उसने उसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

मन्त्रि परिषद् के पुर्ननिर्माण के अवसरो पर राजा भी कुछ प्रभाव इस्तेमाल करता है परन्तु प्रधान मन्त्री पर सबसे अधिक प्रभाव उसके प्रमुख सहयोगियो का पड़ता है।

प्रधान मन्त्री, उसकी स्थिति और उत्तरदायित्व—किसी मन्त्रिपरिषद् की शासन नीति क्या होगी और वह कितनी सफलीभूत सिद्ध होगी, यह प्रधान-मन्त्री के पौरुष, *व्यक्तित्व और उसकी योग्यता पर निर्भर रहता है। रामजे म्योर ने कहा है कि कैबिनेट* राज्यपोत का परिचालन करने वाला पहिया है और प्रधान मन्त्री उसका परिचालक है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि यद्यपि अँगरेजी शासन विधान वाली पुस्तको में प्रधान मन्त्री के नाम व पद का इतना वर्णन पाया जाता है पर १९०५ तक यह नाम या पद मान्य न हुआ था और सन् १९१७ के वेतन सम्बन्धी एक्ट मे प्रधान-मन्त्री और प्रथम राजकोप मन्त्री के वेतन का वर्णन पाया जाता है। जब कोई राजनीतिज्ञ राजा से चुना जा कर मन्त्रिमण्डल बनाने का कार्यभार स्वीकार कर लेता है तो वह प्रधान-मन्त्री बन जाता है वह मन्त्रिपरिषद् का प्रमुख व्यक्ति होता है। उसका मुख्य कार्य मन्त्रिपरिषद् को बनाना, बुलाना, स्थगित करना और उसके अध्यक्ष का काम करना है। वह मन्त्रियो को नियुक्त करता और बरखास्त करता है, और अपने साथी मन्त्रियो की सलाह से शासन नीति की रूपरेखा निश्चित करता है। वह राजा को पार्लियामेण्ट के विघटन करने और सामान्य निर्वाचन करने की आज्ञा देने की सलाह देता है। यद्यपि कानून के अनुसार प्रधान-मन्त्री की विघटन सम्बन्धी प्रार्थना का राजा विरोध कर सकता है पर वह केवल प्रधान-मन्त्री को विघटन के विरुद्ध समझाने बुझाने तक ही अपने प्रभाव का उपयोग करता है। मन्त्रिमण्डल और

राजा के बीच में प्रधान-मन्त्री ही बातचीत का एक मात्र साधन है। उपाधि वितरण में उसका मत निर्णायक माना जाता है। पालियामेण्ट में शासन नीति सम्बन्धी विषयों पर उसकी ही बात अन्तिम निर्णय करने वाली समझी जाती है। इसलिये वही हाउस आफ कामन्स का सर्वमान्य नेता होता है जब तक कार्यभार के कारण या राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय संकट उपस्थित होने पर वह अपना काम किसी अन्य मन्त्री को न सौंप दे। प्रधान मन्त्री ही जनता के सम्मुख सरकार की शासन नीति की घोषणा करता है और वही पत्रकारों के प्रतिनिधियों से मिलता है। वैदेशिक नीति का उत्तर-दायित्व प्रमुख रूप से उसी के ऊपर रहता है चाहे वह वैदेशिक मामलों के विभाग का अध्यक्ष न हो पर फिर भी वैदेशिक नीति व वैदेशिक सम्बन्धों की रूपरेखा निश्चित करने में वह सक्रिय भाग ले सकता है। उदाहरणार्थ, चैम्बरलेन ने हिटलर से बातचीत कर म्यूनिक के समझौते पर हस्ताक्षर किये हालांकि विदेश मन्त्री लार्ड हैलीफैक्स थे। राजकोष के प्रथम लार्ड (First Lord of the Treasury) के पद के अतिरिक्त प्रधान-मन्त्री और भी जो काम करना चाहे उसका भार अपने ऊपर ले सकता है।

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री के पद की प्रजातन्त्रीय देशों के अध्यक्षों की स्थिति से तुलना नहीं की जा सकती। लार्ड मौरले उसको मन्त्रिपरिषद् की नींव कहकर बयान करते हैं। वह मन्त्रिपरिषद् का मुख्य चालक है और रैमजे म्यौर ने उसको राज्य के पोत का चलाने वाला चक्र कहा है। प्रधान मन्त्री समस्त प्रशासन यन्त्र का चलाने का जिम्मेदार होता है। परन्तु किसी विशेष मन्त्रिपरिषद् पर प्रधान मन्त्री का प्रभाव बहुत कुछ उसके व्यक्तिगत गुणों पर निर्भर है। प्रभाव कायम रखने के लिये आमतौर से वह एक आन्तरिक समूह रखता है जिसमें उसके सबसे अधिक विश्वासपात्र और सच्चे मित्र रहते हैं जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रविधानों को निश्चित करते हैं और मन्त्रिपरिषद् की बैठकों में उसका समर्थन करते हैं। उसे अपने सहयोगियों की भावनाओं को एकत्रित करना तथा समझना पड़ता है। अपने सहयोगियों का विश्वास और आदर प्राप्त करने के लिये उसे सहिष्णु और धैर्यवान होना पड़ता है। मन्त्रिपरिषद का अध्यक्ष और उसकी नीति का मुख्य निर्माता होने पर भी वह कोई निरंकुश शासक अथवा मन्त्रिपरिषद् में सीजर नहीं हो सकता। वह अपने सहयोगियों के व्यक्तित्व को नहीं कुचल सकता परन्तु जब वह अपनी नीति का भारी विरोध देखता है तब वह त्यागपत्र देने की धमकी दे सकता है, जैसा कि ग्लैडस्टोन ने अक्सर किया और इस प्रकार अपने श्रेष्ठ अधिकार को पुन वापस पा सकता है। मन्त्रिपरिषद् में विरोध होने पर लार्ड सैलिसबरी के ये शब्द इस बात का एक उत्तम दृष्टान्त है। "मैं उनको बतला दूंगा कि यदि वे इस बात पर जोर देते हैं तो उनको दूसरा प्रधान मन्त्री देख लेना चाहिये।" परन्तु इस प्रकार की धमकियों को सदैव प्रयोग नहीं किया जा सकता।

एन्थोनी इडेन को मैकमिलन के लिये जगह खाली करनी पड़ी थी।

ग्रेट ब्रिटेन में प्रधान मन्त्री की वास्तविक शक्तियों और कार्यों का कहीं बयान नहीं किया गया है, वे राजनैतिक प्रथाओं और व्यवहारों से बनी हुई हैं। लार्ड मेलबोर्न (१८४१) के शब्दों में स्थिति इस प्रकार है, "यह निश्चित रूप से खोजना कठिन है कि प्रधान मन्त्री अपनी वर्तमान अवस्था पर किस प्रकार पहुँचा यह भी जानना कठिन है कि वह कैसे ट्रेजरी के प्रथम कमिश्नर के पद से संयुक्त हो गया परन्तु लार्ड मेलबोर्न का अनुमान है कि सर राबर्ट वालपोल पहला व्यक्ति था जिसके व्यक्तित्व में शक्तियों का यह संयोग निश्चित रूप से स्थापित हुआ था और उसका ऐसा होना उसमें जार्ज प्रथम और जार्ज द्वितीय के भारी विश्वास के कारण और उस कठिनाई के कारण हुआ जो कि उसको विशेषत जार्ज प्रथम को उस देश की भाषा के अपूर्ण ज्ञान के कारण पड़ती थी।

प्रधान मन्त्री की शक्तियों और कार्यों का संक्षेप में इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है —

(१) **मन्त्रीपरिषद के बारे में कार्य**—वह मन्त्रिपरिषद् को संगठित करता, बुलाता, स्थगित करता तथा उसकी सभाओं की अध्यक्षता करता है। वह प्रतिरक्षा समिति का अध्यक्ष होता है। वह मन्त्रिपरिषद् की एतदर्थ समितियों का एक सदस्य होता है।

(२) **मन्त्रियों को नियुक्त करने तथा पदच्युत करने की शक्ति**—यद्यपि मन्त्रिगण समेत सब अधिकारी राजा के नाम पर नियुक्त और पदच्युत किये जाते हैं परन्तु आमतौर से प्रधान मन्त्री ही इस काम के लिये उत्तरदायी होता है। केवल राजा के निजी सचिव की नियुक्ति ही उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर है। नियुक्ति करने की शक्ति का प्रयोग करने में प्रधान मन्त्री अपने सहयोगियों की सलाह ले भी सकता है और नहीं भी ले सकता।

(३) **विभागों की देखरेख करने की शक्ति**—सिद्धान्त रूप में, प्रधान मन्त्री ही विभिन्न विभागों की देखरेख करता और उन पर नियन्त्रण रखता है, परन्तु वास्तविक व्यवहार में पिछली आधी शताब्दी में बढ़ी हुई भारी जिम्मेदारियों और कार्यभार के कारण उसको उनके लिये समय नहीं मिलता। अत अन्य विभागों का नियंत्रण करना प्रधान मन्त्री के लिये असम्भव हो गया है। परन्तु वह विदेश विभाग के कार्य के विषय में सदैव सचेत रहता है क्योंकि इस विभाग की नीति और कार्यवाहियों का ब्रिटेन के अन्य देशों से सम्बन्ध पर प्रभाव पड़ता है। विदेशी मामलों में उसके नियन्त्रण करने के अधिकार में निम्नलिखित बातें शामिल हैं, (अ) उसकी सलाह लिये जाने का अधिकार (ब) विदेश कार्यालय के सब महत्वपूर्ण कागजों को पाने और देखने का

अधिकार (स) लन्दन में विदेशी राजदूतों से मिलने और ब्रिटेन के विदेश स्थित राजदूतों से बातचीत करने का अधिकार (द) विदेशी राज्यों के अध्यक्षों की सभा में ग्रेट ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार।

इन शक्तियों तथा कार्यों के कारण यह आवश्यक है कि प्रधान मन्त्री अपने सबसे अधिक विश्वसनीय मित्र को विदेशी मामलों के लिये राज्य सचिव के पद पर नियुक्त करे।

(४) पार्लियामेंट के सम्बन्ध में कार्य—क्योंकि मन्त्रिपरिषद् कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी होता है, प्रधान मन्त्री आमतौर से सदन के नेता के रूप में काम करता है यद्यपि अत्यधिक संलग्न होने की स्थिति में वह अपने किसी सहयोगी को सदन का नेतृत्व करने के लिये नियुक्त कर सकता है जैसे कि एन्थोनी इडेन ने आर० ए० बटलर को कामन्स सभा का नेता नियुक्त किया था। प्रधान मन्त्री कामन्स में सब महत्वपूर्ण विषयों पर सरकार की नीति की घोषणा करता है। वह सदन को भंग करने के लिए राजा से प्रार्थना करता है। यह काम वह स्वयं अपने उत्तरदायित्व पर अथवा मन्त्रिपरिषद् से राय लेकर कर सकता है। राजा भंग करने से इनकार नहीं कर सकता।

(५) शाही संरक्षण—राजमुकुट के विशेषाधिकारों के अन्तर्गत शाही संरक्षण (Patronage) का सब वितरण प्रधान मन्त्री करता है। मन्त्रिपरिषद् के सदस्य सम्मान पाने वालों अथवा नियुक्तियों के उम्मीदवारों के नामों को प्रस्तावित कर सकते हैं परन्तु उनको स्वीकृत और अस्वीकृत करना प्रधान मन्त्री पर छोड़ दिया जाता है।

मन्त्रिपरिषद् का भीतरी संगठन—मन्त्रिपरिषद का भीतरी संगठन क्रमिक विकास का फल है। पहले तो राजा ही मन्त्रिपरिषद् की बैठकों में अध्यक्ष का पद लेता था। जार्ज प्रथम के समय से यह प्रथा जाती रही और सब शक्ति प्रधान-मन्त्री के हाथ में आ गई तथा वही अध्यक्ष का पद लेने लगा।

बैठक कैसे होती हैं—मन्त्रिपरिषद् की बैठकों में शासन-सम्बन्धी मामलों पर विचार होता है। मन्त्रिपरिषद् की बैठक बुलाना प्रधान मन्त्री की इच्छा पर रहता है। कोई भी मन्त्री बैठक बुलाने के लिये प्रार्थना कर सकता है, पर प्रधान-मन्त्री ऐसी प्रार्थना को मानने न मानने में बिल्कुल स्वतन्त्र रहता है। बैठकों के होने का समय व दिन प्रधान-मन्त्री ही निश्चित करता है पर परिषद् की बैठक में क्या कार्यवाही होगी उसका ब्योरा नहीं दिया जाता हालांकि सब मन्त्री जानते हैं कि किन विषयों पर विचार किया जावेगा। परिषद् की बैठक प्रायः शाम के समय हुआ करती है। काम के बढ़ जाने से युद्धोतर काल में पहले की अपेक्षा बैठकों की संख्या बहुत बढ़ गई है। युद्ध के समय में तो प्रतिदिन बैठक होती थी। १९१७ में ३०० से अधिक

बैठकें हुई और १९१८ में १८७ साधारण सालों में बैठकों की संख्या ८० से ९० तक होती है।

परिषद् की बैठक में उपस्थिति—परिषद् की बैठक के लिये कोई गण पूरक संख्या निश्चित नहीं है। प्रधान-मन्त्री या और कोई मन्त्री अस्वस्थ होने पर अनुपस्थित रह सकते हैं। अनुपस्थित मन्त्री चाहे तो किसी विचाराधीन विषय पर अपना मत प्रधान मन्त्री को पत्र के रूप में भेज सकता है। जब प्रधान-मन्त्री अनुपस्थित रहता है तो अध्यक्ष का काम वह मन्त्री करता है जो पुराना राजनीतिज्ञ हो या और किसी दूसरी प्रकार से प्रभावशाली हो। जब बैठक होती है तो मन्त्रियों के बैठने का कोई निश्चित क्रम नहीं होता पर प्रभावशाली मन्त्री प्रधान-मन्त्री के पास बैठते हैं।

परिषद् में किन विषयों पर विचार होता है?—परिषद् सब महत्वपूर्ण विषयों पर विचार करती है। प्रत्येक मन्त्री अपने विभाग के विषय को परिषद् के विचारार्थ उपस्थित करता है क्योंकि सारी परिषद् शासन-नीति को निश्चित करती है। जो विषय परिषद् के सम्मुख रखे जाते हैं वे साधारणतया तत्कालीन राजनैतिक घटनाओं से सम्बन्ध रखते हैं। परिषद् के सदस्य छोटी-छोटी बातों पर ध्यान न देकर अपनी बुद्धि व ध्यान उन बातों को सुलझाने पर केन्द्रित करते हैं जो उनके सम्मुख बड़ा महत्व रखती हैं।[1] *बजट और राजा का भाषण बड़े महत्वपूर्ण विषयों में गिने जाते हैं।* उसके बाद वैदेशिक नीति महत्वपूर्ण समझी जाती है।

कोई नियमित कार्यवृत (Minutes) नहीं रखे जाते—परिषद् के निर्णय किसी लेख में नहीं लिखे जाते, हाँ निर्णयों की टिप्पणियाँ बनाली जाती हैं जो राजा को परामर्श देने के लिये आगे होने वाले दूसरे मन्त्रिपरिषद् की सूचना के लिये और गलती व भ्रान्ति का निवारण करने के लिये काम देती हैं। मन्त्रियों को परिषद् में टिप्पणियाँ बनाना मना है, केवल प्रधान मन्त्री ही टिप्पणियाँ लिख सकता है क्योंकि उसे अपने व अपने साथी मन्त्रियों के विचार राजा को बतलाने में इनकी आवश्यकता रहती है। निर्णय प्रायः बहुमत के द्वारा होता है पर प्रधान-मन्त्री के विचारों को बड़ा महत्व दिया जाता है क्योंकि वही एक ऐसा व्यक्ति है जो शासन नीति का निर्देश करता है। परिषद् की कार्यवाही गुप्त रखी जाती है।

परिषद् सचिवालय का काम—परिषद् के साथ एक सचिवालय भी रहता है। सन् १९१७ की युद्ध परिषद् की रिपोर्ट में इस सचिवालय के कर्तव्यों की सूची संक्षिप्त रूप में इस प्रकार दी गई है। (१) युद्ध परिषद् की कार्यवाही का विवरण रखना। (२) युद्ध परिषद् के निर्णयों को उन विभागों को बतलाना जिन्हें उन निर्णयों को

१ दी इंगलिश कैबिनेट सिस्टम, पृ० २४१।

कार्यान्वित करता है या जो और किसी प्रकार उनसे सम्बन्धित हैं। (३) कार्य क्रम तैयार करना, मन्त्रियों व उस कार्यक्रम से सम्बन्धित दूसरे व्यक्तियों की उपस्थिति का इन्तजाम करना और विचाराधीन विषयों पर आवश्यक सूचना एकत्रित कर सब मन्त्रियों के पास भेजना (४) युद्ध परिषद् के काम से सम्बन्धित पत्र व्यवहार करना और (५) पूर्व धारा में वर्णित रिपोर्ट तैयार करना।[1]

मन्त्रिपरिषद् की समितियां—जब कोई विशेष प्रकार के मामले परिषद् के सन्मुख विचार के लिए आते हैं तो परिषद् उनको भली प्रकार निबटाने के लिये छोटी छोटी समितियों में बँट जाती है। इन समितियों में एक महत्वपूर्ण समिति साम्राज्य-सुरक्षा समिति (Committee of Imperial Defence) है जिसमें नौसेना मन्त्री (Frist Lord of the Admiralty) युद्ध मन्त्री और वायु-सेना मन्त्री के अतिरिक्त परिषद् के बाहर के वे व्यक्ति सदस्य होते है जिनको उनकी विशेष योग्यता के कारण प्रधान-मन्त्री नियुक्त कर देता है। दूसरी समिति गृह-विषयों की है जो देश के भीतरी शासन प्रबन्ध के मामलों पर विचार करती है। कुछ एतदर्थ समितियां (Adhoc Committees) भी होती हैं। जो विशेष मामलों पर विचार करती और उनसे सम्बन्धित विधेयकों को पार्लियामेंट में उपस्थित करने के लिये तैयार करती हैं।

अन्तरीय परिषद् (Inner Cabinet)—इतने बड़े साम्राज्य पर शासन करने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि शासन नीति का निर्माण-कार्य व उसके सम्बन्ध रखने वाले निर्णय गुप्त रख जायें। पर ऐसा करना २३ सदस्यों वाली बड़ी सख्या में सम्भव नहीं हो सकता। इसलिये प्रायः उन मामलों के लिये जिनका गुप्त रखना बहुत आवश्यक है एक अन्तरीय परिषद् होती है जिसमें कुछ प्रभावशाली मंत्री होते है। जिनकी राय लेने के बाद प्रधानमंत्री मामलों को बड़ी परिषद् के विचारार्थ उपस्थित करता है। इसमें एक सुगमता यह भी होती है कि जब मंत्रिपरिषद् में वाद विवाद होता है तो प्रधान मंत्री के मत को दृढ़ समर्थन प्राप्त हो जाता है।

युद्ध परिषद् (१९१६-१९)—अन्तरीय परिषद् की आवश्यकता प्रथम महायुद्ध के समय में प्रतीत हुई जब युद्ध सम्बन्धी मामलों में तुरन्त निर्णय और परिषद् की कार्यवाही को गुप्त रखना अनिवार्य हो गया। लायड जार्ज ने सन् १९१६ के दिसम्बर मास में प्रथम अन्तरीय परिषद् बनाई जब मिस्टर एस्क्विथ ने लायड जार्ज से मतभेद होने के कारण पदत्याग किया। इस अन्तरीय परिषद् में जो युद्ध परिषद् के नाम से प्रसिद्ध हुई, प्रधान-मंत्री लायड जार्ज

---

१ दी इगलिश कैबिनेट सिस्टम, पृष्ठ २५९।

के अतिरिक्त, लार्ड कर्जन (प्रेसीडेंण्ट ऑफ दी कौंसिल,) लार्ड मिलनर, मिस्टर आर्थर हैण्डरसन और मिस्टर बोनरला (अर्थ मन्त्री) थे। कुछ समय पश्चात् जनरल स्मट्स भी इसमें शामिल कर लिये गये जिससे युद्ध में साम्राज्य की दृढ़ एकता दिखला दी गई। इस प्रकार कार्यकारी शक्ति और उत्तरदायित्व २३ सदस्यों की मन्त्रपरिषद् में न होकर ६ व्यक्तियों की एक छोटी युद्ध परिषद् में केन्द्रित हो गई।

सन् १९३९ की **युद्ध परिषद्**—फिर सन् १९३९ में जब इंगलैण्ड ने जर्मनी से युद्ध करने की घोषणा की तो मिस्टर चैम्बरलैन ने अपनी युद्ध-परिषद् बनाई जिसमे ९ सदस्य थे। चैम्बरलैन, लार्ड हैलीफैक्स, होर बैलीशा, चर्चिल, सर चार्ल्स किंग्सले वुड, लार्ड चैटफील्ड, सर जोन साइमन, सर सैमुअल होर, लार्ड माक। एन्थोनी ईडिन को यद्यपि उसका सदस्य नहीं बनाया गया पर उन्हें बैठकों में बुलाया जाता था। पर इस छोटी परिषद् की भी विरोधी पक्ष ने कटु आलोचना की और कहा कि युद्ध का अच्छी प्रकार सचलन करने के लिए यह संख्या बहुत बड़ी है।

मन्त्रिपरिषद् और मन्त्रिमडल के भेद.—

मन्त्रिपरिषद् १७ सदस्यों की छोटी संख्या है परन्तु मन्त्रिमण्डल में इन १७ व्यक्तियों के अतिरिक्त १५ अन्य मंत्री जिनका कैबिनेट में स्थान नहीं है और कई पदाधिकारी और पार्लियामेण्टरी सेक्रेटरी होते हैं। सन् १९१४ के युद्ध से पूर्व मन्त्रिमण्डल में ६० से ७० व्यक्ति तक होते थे। पर युद्धोत्तर काल में सरकारी काम के बढ़ जाने से नये विभाग व नया जगह बनानी पड़ी। नये मन्त्रिमण्डल में श्रम-मन्त्री और पेंशन मन्त्री व खाद्य, नौपरिवहन (Shipping) कण्ट्रोलर भी शामिल हो गये। एक वायुयान बोर्ड भी बनाया गया और उसके पश्चात् राष्ट्रीय सेवा (National Service), पुनर्निर्माण (Reconstruction), यातायात और एकीकरण विभाग भी खुले। इन सबके खुल जाने के फलस्वरूप मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या १०० से अधिक हो गई। मन्त्रिमडल की संख्या किसी कानून से निश्चित नहीं होती पर यह केवल प्रधान-मन्त्री से की हुई व्यवस्था पर निर्भर रहती है। जब मन्त्रिपरिषद पदत्याग करती है तो मन्त्रिमण्डल के सब पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी और दूसरे राजकर्मचारी जो मन्त्रि-परिषद् के आने पर नियुक्त हुए थे त्याग पत्र दे देते हैं।

अतएव मन्त्रिमण्डल और मन्त्रिपरिषद् की रचना में जो भारी परिवर्तन हुआ है, उस पर लिखते हुए सिडनी लो ने कहा है "शासन प्रबन्ध करने वाली पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी पार्लियामेण्ट के सदस्यों में से चुन कर बनाई गई, हाउस आफ कामन्स से निकट सम्बन्ध रखने वाली पक्ष प्रणाली पर संगठित हुई और गुप्त रूप से मन्त्रणा करने वाली मन्त्रिपरिषद् के स्थान पर अब हमारे यहाँ ऐसी परिषद् है जो

मत्रिमण्डल नही कही जा सकती और ऐसा मंत्रिमण्डल है जिसे मन्त्रिपरिषद् नहीं कह सकते। अब परिषद् (Inner Cabinet) केवल निर्देश करती है, शासन नही करती, और मत्रिमण्डल के सामूहिक उत्तरदायित्व के स्थान पर वैयक्तिक उत्तरदायित्व का भार ले लिया है। अब अन्तरीय परिषद् व हाउस आफ कामन्स का सम्बन्ध बड़ा दूरवर्ती हो गया है और किन्ही बातों में तो परिषद् हाउस से बिलकुल स्वतः होकर कार्य करती है क्योंकि यह परिषद् दलबन्दी के प्रतिबन्धों से दूर रहती है और अपनी गुप्त मत्रणाओ में देश के तथा साम्राज्य के उपराष्ट्रों के प्रतिनिधियो को भी बुलाती है। और दूसरी अनेकों क्रान्तियों के समान यह क्रान्ति भी एक लम्बे क्रमिक विकास के फलस्वरूप हुई है। अन्तरीय परिषद् तो पहिले से ही थी हालाँकि उसका अस्तित्व मान्य नही हुआ था। मिस्टर एस्क्विथ ने उसको व्यवस्थित रूप देकर मान्य कर दिया। उन्होंने इसके अमान्य गुप्त रूप को तोडने में एक कदम और आगे बढ़ाया और इस परिषद् का एक मत्री (सेक्रेटरी) भी नियुक्त कर दिया।"

मन्त्रिपरिषद् और मंत्रिमंडल का आकार—मन्त्रिपरिषद् और मत्रिमडल का आकार काम के अनुसार समय समय पर बदलता रहा है। परन्तु मत्रिमडल व्यवस्था का विकास होने से प्रशासन पर पार्लियामेण्ट का नियत्रण बढ़ गया और राज्य के कार्यों में महान परिवर्तन हो गया। वह पुलिस-राज्य से कल्याणकारी राज्य बन गया। मत्रिपरिषद् के मत्रियो और छोटे मन्त्रि-पदों की सख्या भी बढ़ गई। वालपोल जिसको कैबिनेट व्यवस्था के विकास करने का श्रेय है और जो इगलैंड में प्रथम प्रधान मन्त्री बना, अपने मत्रिपरिषद् में ७ से दस तक मन्त्री रखता था। बाद में यह सख्या बढने की प्रवृत्ति हुई और मत्रिपरिषद् बनाने वाले राजा के वास्तविक सलाहकारो के अलावा अन्य मत्रिपद भी बनाये गये। इस प्रकार मन्त्रिपरिषद् और मत्रिमडल का अन्तर स्पष्ट हो गया। १९वी शताब्दी के अन्त में कैबिनेट मत्रियो की सख्या बीस कर दी गई यद्यपि मत्रिमडल में अन्य सदस्य भी थे। जिससे कुल मिला कर ५० सख्या बनती थी। शान्ति काल में गुप्त रूप से एकत्रित परामर्श करके बीस मन्त्रियो द्वारा प्रशासन चलाना सम्भव था परन्तु प्रथम महायुद्ध की आवश्यकताओं ने बाध्य होकर तत्कालीन प्रधान मन्त्री लॉयड जार्ज को मत्रिपरिषद् का आकार घटा कर पांच कर देना पड़ा जिससे युद्ध के रहस्यो को अधिक अच्छी तरह गुप्त रखने की आशा की जा सकती थी। परन्तु मत्रिमडल एक बड़ी समिति बना रहा जिसमें कैबिनेट पद से रहित मत्री और पार्लियामेंट्री सचिव भी थे। मन्त्रिपरिषद् के मन्त्रियों की सख्या में कमी करने की उपयुक्तता को लायड जार्ज ने इस प्रकार समझाया है "आप यहूदियो की एक बडी पचायत (Sanhedrin) को लेकर युद्ध नही छेड़ सकते। १९वीं शताब्दी में भी केबिनेट मत्रियो की सख्या को

नौ या दस तक सीमित रखने के पक्ष में विचार प्रगट किये गये। १९१४–१८ के बाद मंत्रिपरिषद का आकार बढ़ा, परन्तु १९३१ में रैमजे मैंकडोनल्ड ने अपने मंत्रि-परिषद में मंत्रियों की संख्या दस तक घटा दी। पाँच साल के अन्दर यह संख्या २३ हो गई और द्वितीय महायुद्ध के छिड़ने तक लगभग यही रही।

'सरकार" शब्द में मंत्रि परिषद् के मंत्रिगण तथा अन्य मंत्रिगण और पार्लियामेन्ट्री सचिव शामिल होते हैं। १९३७ के मिनिस्टर्स आफ दी क्राउन एक्ट ने जो कि १९३९–१९४७ में पास हुए अधिनियमों द्वारा संशोधित किया गया। कैबि-नेट तथा अन्य पद के मंत्रियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया और प्रत्येक श्रेणी में नियुक्तियों की संख्या तथा वेतन निश्चित कर दिया। इन परिनियमों ने आठ राज्य सचिवों तथा ९ अन्य मंत्रियों के लिए वेतन की व्यवस्था की जिनमें से सब (१७) मिलकर मंत्रिपरिषद बनाते थे। कैबिनेट पद के परन्तु कैबिनेट में सदस्यता न रखने वाले पाँच मंत्रियों के लिये (जिनको आवश्यकता पड़ने पर कैबिनेट की बैठकों में उपस्थित होने के लिये बुलाया जाता था।) तथा अनुसूची में दिये हुए विभागाध्यक्षों के रूप में सत्रह मंत्रियों के भी वेतन निश्चित किये गये। छोटे मंत्रियों की संख्या तीस निश्चित कर दी गई जो कि संसदीय सचिव और संसदीय उप सचिव कहलाते थे। *इस तरह वर्तमान मंत्रिमंडल की रचना इस प्रकार है:*— (१) सत्रह कैबिनेट मंत्रिगण, (२) पाँच कैबिनेट पद के राज्य सचिव जिनका कैबिनेट में स्थान नहीं होता या जो कि उन विभागों में उपमंत्री हैं जहाँ काम अधिक और पेचीदा है और जिनमें बहुधा दौरे करने की आवश्यकता पड़ती है। (३) सत्रह विशिष्ट विभागों के अध्यक्ष सत्रह मंत्रिगण (४) तीस संसदीय सचिव और संसदीय उपसचिव। अंतिम श्रेणी के सदस्य विभिन्न कैबिनेट मंत्रियों तथा विभागीय अध्यक्षों के साथ लगे होते हैं। ये छोटे मंत्रिगण हैं जिनका मुख्य काम संसदीय वादविवाद में भाग लेकर और प्रश्नों का उत्तर देकर तथा विभागीय कर्तव्यों को करने में सहा-यता देकर अपने बड़े मंत्रियों को उनके कार्यभार से मुक्त करना है। इस प्रकार ६९ की यह संख्या निश्चित हो जाने से, काम बढ़ जाने पर प्रधान मंत्री को इस सीमा को बढ़ाने का क्षेत्र नहीं बचा है। इस प्रकार की आवश्यकता उठने पर इन परि-नियमों द्वारा प्रधान मंत्री को यह प्रमाणित करने का अधिकार दिया गया है कि काम के बढ़ जाने से प्रशासन में भाग लेने के लिये अधिक वैतनिक सदस्यों की आवश्यता है और वह उनके वेतनों के लिये पार्लियामेंट की स्वीकृति प्राप्त कर सकता है। सम्पूर्ण मंत्रिमंडल एक संगठित दल के रूप में काम करता है। जब एक मंत्रि-परिषद हार जाती है या त्यागपत्र दे देती है तो उससे मंत्रिमंडल के समस्त सदस्यों करीब ७० व्यक्तियों को निकलना पड़ता है।

पहले राजा के मरने से मंत्रिपरिषद अपने आप भंग हो जाता था। परन्तु १९०१ के डिमाइस आफ दी क्राउन एक्ट से राजा के मरने से राजमुकुट के अधीन किसी पद पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वर्तमान काल में मंत्रिमंडल निम्नलिखित कारणों में से किसी से भंग हो सकता है —

(१) **पार्लियामेण्ट का भंग होना**—जब एक पार्लियामेंट भंग हो जाती है तो मंत्रिमंडल सार्वजनिक चुनाव तक चलता रहता है जब कि यदि उसका पक्ष ही *पार्लियामेंट में बहुमत से लौटा है तो वह नवीन पार्लियामेंट से विश्वास* का मत मांग सकता है। यदि देश ने मंत्रिमंडल की नीति का समर्थन नहीं किया है तो मंत्रिमंडल नई पार्लियामेंट की बैठक मे पहले (जैसा कि १९४५ में विन्सटन चर्चिल ने किया था) अथवा नई पार्लियामेंट द्वारा विरोध में मत पास हो जाने पर त्याग पत्र दे देता है।

(२) **प्रधान मंत्री की मृत्यु, पदच्युति अथवा त्यागपत्र**—क्योंकि प्रधान *मंत्री ही सरकार (अर्थात् प्रशासन) का अध्यक्ष होता है अतः उसकी मृत्यु, त्यागपत्र* या पदच्युत होने से मंत्रिमंडल अपने आप भंग हो जाता है चाहे मंत्रिमंडल का पार्लियामेंट में बहुमत ही क्यों न हो। इस प्रकार जब १९५६ में (स्वेज संकट के बाद) ईडेन ने त्याग पत्र दिया तो अनुदार दल का मंत्रिमंडल अपने आप समाप्त हो गया और हैरोल्ड मैकमिलन ने नया अनुदार मंत्रिमंडल बनाया।

(३) **किसी सरकारी प्रविधान पर मंत्रिमंडल की हार**—यदि कामन्स मंत्रिपरिषद् के किसी छोटे प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दें जिसमें नीति अथवा प्रशासन का कोई सिद्धान्त न शामिल हो तो मन्त्रिपरिषद् अपने पद पर बना रहता है, परन्तु जब वह किसी बड़े प्रविधान पर हरा दिया जाता है तो उसका अर्थ यह होता है कि कामन्स मन्त्रिपरिषद् की नीति को स्वीकार नहीं करते और उसको अवश्य त्याग पत्र देना चाहिये। कामन्स में मंत्रिपरिषदों के मामले में ऐसे अवसर आते हैं जबकि मिली जुली सरकार में से एक पक्ष अपनी सहायता हटा लेता है। १९२३ के सार्वजनिक चुनावों के परिणाम स्वरूप कोई भी पक्ष कामन्स में बहुमत न पा सका। श्रमिक दल (जो कि नई पार्लियामेण्ट में दूसरा सबसे बड़ा दल था) के नेता रैमजे मैक्डोनेल्ड ने उदार पक्ष की सहायता से प्रथम श्रम मन्त्रिपरिषद बनायी परन्तु जब १९२४ में उदार पक्ष ने अपनी सहायता वापस कर ली तो मैक्डोनेल्ड मन्त्रिमण्डल ने इस्तीफा दे दिया और सार्वजनिक चुनाव हुये। चुनावों में अनुदार दल विजयी हुआ। फिर, १९२९ के सार्वजनिक चुनावों के बाद किसी पक्ष को भी बहुमत नहीं मिला और मैक्डोनल्ड ने एक त्रिदलीय राष्ट्रीय मिली जुली सरकार बनाई जो १९३५ तक सत्तारूढ़ रही।

(४) **चुनाव में मन्त्रिमण्डल की हार**—जब सामान्य चुनावों के परिणाम स्वरूप, मन्त्रिमण्डल का पक्ष हार जाता है तो मन्त्रिमण्डल पालियामेण्ट की बैठक के पूर्व या पश्चात् त्यागपत्र दे देता है। यद्यपि आम रिवाज यह है कि वह पालियामेण्ट के विरुद्ध मत पास हो जाने पर ही त्यागपत्र देता है परन्तु १८७४ और १८७६ में ग्लैडस्टोन ने, १८८६ में डिज्रेली ने और १९४५ में चर्चिल ने नई पालियामेण्ट से भेंट करने से पूर्व ही त्यागपत्र दे दिया था। परन्तु १८८६ और १८९२ के प्रथम और द्वितीय सैलिसबरी मन्त्रिमण्डल ने पद त्याग करने से पूर्व नये सदन के विरोधी मत की प्रतीक्षा की।

(५) **अपने विशेषाधिकार के प्रयोग से राजा द्वारा पदच्युत होने पर**—ऐसा अब नहीं हो सकता। इस प्रकार की पदच्युतियाँ जार्ज तृतीय द्वारा १७८३-८४ और १८०७ में की गई थी। शादी के प्रश्न पर बाल्डविन से मुठभेड होने पर एडवर्ड अष्टम ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। बाल्डविन को पदच्युत करने और देश मे अपील करने का अपना विशेषाधिकार प्रयोग न करके उसने राजनीति में राजतन्त्र की तटस्थता कायम रखी।

मन्त्रित्व के उत्तरदायित्व की प्रकृति—यथार्थ व्यवहार में सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल पालियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी है क्योंकि मन्त्रिपरिषद् की नीति सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल की नीति होती है। जब एक विशेष कैबिनेट मन्त्री अपने सहयोगियो से मौलिक रूप से भिन मत रखता है तब उसको नई नियुक्ति के लिये स्थान खाली कर देना चाहिये। परन्तु एक बार मन्त्रिपरिषद् के एक निर्णय पर पहुँच जाने के बाद यदि भिन्न मत रखने वाले मन्त्री इस्तीफा न दे तो उन सबको पालियामेण्ट के सम्मुख उसी नीति का समर्थन करना पडता है क्योंकि मन्त्रिपरिषद् की गुप्त बैठक में चाहे जो भी मतभेद जाहिर किये जायें, उसके निर्णय सब प्रयोजन के लिये अन्तिम निर्णय होते हैं। जब किसी विशेष विभाग के प्रशासन की कामन्स में आलोचना होती है तब मन्त्रिपरिषद् तत्सम्बन्धी मन्त्री की सहायता करता है जिस मामले में उस विशेष विषय पर कामन्स में विरोधी मत पास हो जाने से भी सम्पूर्ण मन्त्रिपरिषद् को त्यागपत्र देना पडता है अथवा तत्सम्बन्धी मन्त्री अकेला ही त्यागपत्र दे सकता है और, मन्त्रिपरिषद् को आलोचना की गई नीति बदलनी पडती है। सक्षेप में, मन्त्रिपरिषद् का उत्तरदायित्व आमतौर से सामूहिक होता है यद्यपि मन्त्रिगण व्यक्तिगत रूप से भी त्यागपत्र दे सकते हैं। इस प्रकार सन् १९२२ में मन्त्रिपरिषद् की आज्ञा बिना एक महत्वपूर्ण तार के छप जाने से भारत के राज्य सचिव माण्टेग्यू को त्यागपत्र देना पडा था। अबीसीनिया के प्रश्न पर फ्रेन्च मन्त्री लोवल से मन्त्रिपरिषद् की आज्ञा बिना सन्धि कर लेने पर सन् १९३५ में सेमुएल होर को त्यागपत्र देना पड़ा था।

शासन प्रणाली में मन्त्रि परिषद् का स्थान—ब्रिटिश शासन प्रणाली में जो स्थान व शक्ति मन्त्रिपरिषद् को प्राप्त है उसे देखकर राजनीतिज्ञो को आश्चर्य होता है और वे उसकी प्रशसा भी करते हैं। यद्यपि सिद्धान्तत, मन्त्रिपरिषद् पार्लियामेण्ट की सेवक है क्योकि वह पार्लियामेण्ट (वस्तुत हाउस हाआफ कामन्स) की निश्चितकी हुई नीति को कार्यान्वित करती है और उसी समय तक अपने स्थान पर आरूढ रहती है जब तक हाउस आफ कामन्स का उसमे विश्वास रहता है, पर व्यवहार में मन्त्रिपरिषद् सेवक न रह कर सदन की स्वामिनी बन जाती है और अनेको प्रकार से उसका नियत्रण करती है। मन्त्रिपरिषद् मे बहुमत वाले पक्ष के व्यक्ति होते हैं और प्रधान मन्त्री उन सबका नेता होता है। पक्ष की नियम निष्ठा के अनुसार पक्ष के छोटे बडे सब व्यक्ति हाउस में मन्त्रिपरिषद् की नीति का समर्थन करते हैं। मन्त्रिपरिषद् ही पक्ष के सचेतकों (Whigs) को यह बतलाती है कि पक्ष के सदस्य किसी योजना पर किसकी ओर अपना मत दें। इसके अतिरिक्त बहुमत वाला पक्ष स्वय भी उत्सुक रहता है कि उसको परिषद् ही अधिक से अधिक समय तक पदासीन रहे इसलिये पक्ष के व्यक्ति स्वय भी बिना हिचकिचाये सचेतको की आज्ञाओ का अक्षरश पालन करते है। मन्त्रि-परिषद् का पद महान और सम्मानास्पद बनाने में उसके सदस्यो की योग्यता और दृढ चरित्र का भी कम हाथ नही है। पक्ष तथा पार्लियामेण्ट में आदर और प्रभाव प्राप्त करने के लिये मन्त्रियों को साधारण स्तर से ऊँचा होना चाहिये। उनको सच्चाई से काम करना चाहिये और व्यक्तिगत विजय तथा लाभ की चिन्ता नही करनी चाहिये। श्री एसक्विथ ने उनके व्यवहार के लिये पाँच नियम निश्चित किये हैं (१) मन्त्रियों का किसी ऐसे लेन देन में शामिल नही होना चाहिये जिससे उनके निजी हितों का उनके सार्वजनिक कर्तव्यो से कुछ भी सघर्ष हो (२) किसी भी मन्त्री के लिये किन्ही भी परिस्थितियो में सरकारी समाचारो को अपने या अपने मित्रो के निजी लाभ के लिये इस्तेमाल करना कभी भी उचित नही है। (३) किसी भी मन्त्री को किसी ऐसी योजना की सहायता करने या किसी ऐसे ठेके को आगे बढाने के लिये अपने सरकारी पद को इस्तेमाल नही करना चाहिये जिसमे कि उसका कोई गुप्त हित हो। (४) किसी भी मन्त्री को राज्य से किसी प्रकार के भी ठेके आदि लेने का प्रयत्न करने वाले व्यक्तियों से किसी प्रकार की भेंट आदि स्वीकार नही करनी चाहिये। (५) मन्त्रियो का इस प्रकार के सट्टेबाजी के कामो में रुपया लगाने से बचना चाहिये जिसमे वे अपने पद के कारण अथवा अपनी गुप्त जानकारी के कारण बाजार के उतार चढावो या जान जाने में अन्य लोगो से अच्छी स्थिति में हो। इन कर्तव्यो के उल्लघन से सरकार की बदनामी होती है।

मन्त्रि परिषद की निरकुशता—ऐसा होने से पक्ष के सदस्यो की वैयक्तिक

स्वतन्त्रता जाती रहती है। विशेषकर मन्त्रिपरिषद् की नीति की आलोचना करने के लिये तो वे बिलकुल मुँह ही नहीं खोल सकते। मन्त्रिपरिषद् ही यह निर्णय करती है कि *किस दिन गैर सरकारी विधेयकों पर विचार किया जा सकता है।* सदन का अधिकतर समय तो परिषद् से प्रस्तुत की हुई साधारण तथा अर्थ सम्बन्धी योजनाओं पर विचार करने में ही लगा रहता है। विरोधी पक्ष वाले चाहे तो परिषद् के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव सदन में रख सकते हैं पर मन्त्रिपरिषद् यह जानती है कि उसके पक्ष के व्यक्ति तो आँख बन्द करके उसका समर्थन करेंगे और इस समर्थन के बल पर वह विरोधी पक्ष की *आलोचना* और दोषारोपण को हँस कर टाल सकती है। यदि किसी गैर सरकारी सदस्य को अपनी योजना हाउस में पास करानी हो तो उसे मन्त्रिपरिषद् को अपनी ओर झुकाना पड़ेगा वरना उसे अपनी योजना को स्वीकार कराने की किञ्चित भी आशा न करनी चाहिये। इस प्रकार मन्त्रिपरिषद् सदन नियन्त्रण करती है। इस नियन्त्रण को प्रायः मन्त्रिपरिषद् की निरंकुश सत्ता कह कर पुकारा जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय हाउस मन्त्रिपरिषद् की इच्छा पर अपनी मुहर भर लगा देता है, यद्यपि कभी-कभी परिषद् को अपनी नीति की कटु आलोचना भी सुननी पड़ जाती है। अक्टूबर १९५६ में स्वेज कैनाल पर आंग्ल-फ्रेंच आक्रमण का कामन्स में और देश में बड़ा विरोध हुआ। प्रधान मन्त्री ईडेन को हैरोल्ड मैकमिलन (जो कि टोरी दल के थे) को मन्त्रिपरिषद् बनाने देने के लिये इस्तीफा देना पड़ा। जब मन्त्रिपरिषद् को सदन में भारी बहुमत की सहायता मिल जाती है तब वह आसानी से विरोधी आलोचनाओं की उपेक्षा कर सकता है और निर्भय होकर *अपनी नीति पर अमल कर सकता है जैसा कि १९४५ तक श्रम मन्त्रिपरिषद्* ने किया। परन्तु यदि बहुमत बहुत थोड़ा है (उदाहरणार्थ २३ फरवरी सन् १९५० में श्रम मन्त्रिपरिषद् का केवल ६ का बहुमत था) तो मन्त्रि-परिषद् को सावधानी से काम करना पड़ता है। वास्तविक परिस्थिति का इस प्रकार बयान किया जा सकता है। पिछले कुछ दिनों से काम बहुत बढ़ जाने से मन्त्रिपरिषद् की शक्तियाँ बहुत बढ़ गई और सदस्य की शक्ति बहुत कम हो गयी विशेषतः यदि वह विरोधी बैन्चों पर बैठता हो। परन्तु पार्लियामेण्ट में विरोधी दल और देश में समाचार पत्र मन्त्रिपरिषद् पर इस बात का बराबर दबाव डालते हैं कि वह मतदाताओं के सामान्य मत के अनुसार ही अपनी शक्तियों का प्रयोग करें।

पाठ्य-पुस्तकें

Anson, W R.—Law and Custom of the Constitution, chs. on King, Cabinet and Ministers
Bagehot, W —English Constitution, chs. I, VI, VIII, IX
Courtney,—Working Constitution of the United Kingdom, chs. XII-XIII.
Dicey, A. V.—Law of the Constitution (Ed. 1936) pp. XCVII, CXV-CXX, CXIII-IV, 156, 463-466.
Emden, Cecil. S.—Select Speeches on the Constitution, (World Classics), Vol. I pp. 1-66.
Finer, H.—Theory & Practice of Modern Governments, pp. 953-94 and 1110-28.
Greaves, H.R.G.,—The British Constitution, chs.IV & V.
Jennings, W. I.—Cabinet Government (Conlidge, 1937.)
Laski, H J.—Parliamentary Government in England, chs. V and VIII.
Marriot, J. A. R—English Political Institutions, chs. III & V.
Muir, Ramsay—*How Britain is Governed*, chg. III.
Yu Wengteh—The English Cabinet System (1936)

अध्याय ११

व्हाइट हाल और प्रशासन सेवा

(The White Hall and Civil Service)

"इगलैण्ड की सब वर्तमान राजनैतिक परम्पराओं में सब से कम विदित परन्तु सबसे अधिक जानने योग्य वह है जिससे विशेषज्ञ और साधारण आदमी का सम्बन्ध स्थिर होता है।" —प्रेसीडेण्ट लावेल

"दृष्टिकोण, शक्ति, बुद्धि की तत्परता, मनुष्यों से व्यवहार की कुशलता किसी कार्य को प्रारम्भ करने और उसकी जिम्मेदारी लेने की तत्परता ये सब गुण तभी विकसित होते हैं जब राजकीय कर्मचारी को अपने कार्य की पृष्ठभूमि में वह ज्ञान होता है जिससे उसका मस्तिष्क विकसित हुआ है।" —लार्ड हल्डेन

दी व्हाइट हाल (The White Hall)

व्हाइट हाल क्या है ?—यदि ब्रिटिश प्रधान-मन्त्री के राजकीय निवास न० १० डाउनिंग स्ट्रीट में (जहाँ मन्त्रिपरिषद् की बैठकें प्रायः हुआ करती हैं) शासन नीति की रूपरेखा निश्चित होती है और यदि यह नीति पार्लियामेण्ट में स्वीकृत होती है तो व्हाइट हाल में उस नीति के अनुसार विभागाधिकारियों, राजकर्मचारियों और शासन विशेषज्ञों द्वारा शासन प्रबन्ध परिचालित होता है। चाहे पार्लियामेण्ट में कैसा ही राजनैतिक सघर्ष क्यों न हो रहा हो और चाहे मन्त्रिपरिषद् में कैसी ही गुप्त मन्त्रणा क्यों न हो रही हो व्हाइट हाल के अफसर अपने काम में लगे रहते हैं। कोई मन्त्रि-परिषद् रहे या जाय और चाहे शासन विभागों के अध्यक्ष बदलते रहें परन्तु स्थायी शासन विशेषज्ञ अपने शासन प्रबन्ध के कार्य बराबर करते रहते हैं।

प्रशासन के विभागाध्यक्ष (Departmental Heads of Administration) जबकि शासन नीति का निश्चय करना मन्त्रिपरिषद् का काम है, उसको कार्यान्वित करना और उसके सम्बन्ध में दिन प्रतिदिन की कार्यवाही करना विविध प्रशासन विभागों पर छोड दिया जाता है। प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष सरकार का एक सदस्य होता है जो कि उस विभाग के कार्य अकार्य का उत्तरदायी होता है। अधिकांश विभागों में एक उपसचिव भी रहता है वह भी सरकार का सदस्य होता है। प्राय इन दोनों व्यक्तियों में एक हाउस आफ लार्ड्स से और एक हाउस आफ कामन्स से नियुक्त किया जाता है। जिससे प्रत्येक सदन में ऐसा एक व्यक्ति रहे जो उस विभाग के कार्य के सम्बन्ध में प्रश्नों का उत्तर दे सके। परन्तु होम आफिस और बोर्ड आफ ट्रेड के दोनों सदस्य

अब कामन्स सभा में हैं। ये ससदीय विभागाध्यक्ष वर्तमान मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते हैं और व मन्त्रिमण्डल के साथ ही पदग्रहण करते और उसके साथ ही छोड देते हैं। ये अव्यवसायिक होते हैं तथा नीति बनाने से सम्बन्धित होते हैं। और उन्हे उस विभाग के किसी प्रोयौगिक ज्ञान को आवश्यकता नही रहती। उदाहरण के लिये युद्ध विभाग का अध्यक्ष एक दार्शनिक हो सकता है। एक्सचेकर का चान्सलर गणित मे कमजोर हो सकता है और पोस्ट मास्टर जनरल इस बात से भी अनभिज्ञ हो सकता है कि एक खत पर कितने टिकट लगाने चाहिये। इनमे से प्रत्येक इसलिये विभागाध्यक्ष बनाया जाता है कि वह यह देखे को मन्त्रिमण्डल की नीति का अनुसरण किया जाता है और इसलिये प्रत्यक पालियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी होता है।

इन ससदोय विभागाध्यक्षो के अतिरिक्त, एक बडी सख्या उस विभाग के प्रोयौगिक पक्ष मे दक्ष स्थायी राज्य कर्मचारियो की होती है,और क्लर्क भी होते हैं। प्राय ससदीय विभागाध्यक्षो को शासन विभाग के कार्य सचालन की जानकारी व अनुभव नही होता। उनका समय अन्य ससदीय कार्यों में भी लगा रहता है। इसलिये एसे स्थायी अफसरो का होना बडा आवश्यक है जिनके ऊपर विभागाध्यक्ष विश्वास कर सके और जो प्रत्येक विभाग के काय का क्रम बनाये रहे। वास्तव मे ये ही लोग अधिकतर शासन प्रबन्ध चलाते हैं परन्तु जबकि ये लोग अपने काम के लिये सचिव या उपसचिव के प्रति उत्तरदायी रहते हैं, सचिव या उपसचिव पालियामेण्ट और इस प्रकार राष्ट्र के प्रति उपर्युक्त दक्ष शासन के लिये उत्तरदायी होता है।

वर्तमान प्रशासन विभागो का उस समय से धीरे धीरे विकास हुआ जबकि जिन्हें हम अब सिविल सर्वेण्ट कहते हैं वे लोग कर वसूल करने वाले राजा के कोष मुन्शी या राजा का सन्देश प्रजा तक पहुँचाने वाले सेक्रेटरी होते थे। पर अब इन लोगो का वेतन राजा की आय से न दिया जाकर पालियामेण्ट में प्रजा के प्रतिनिधियो द्वारा मजूर होता है। सन् १८४८ के बाद से ही विभागो के विस्तृत आगमन (Estimate) पालियामेंण्ट के सामने रखे जाने लगे हैं। इन विभागो का आधार पहले से नया है परन्तु उनके कर्तव्य बहुत प्राचीन हैं।

विविध विभागो के कर्तव्यो को साधारणतया पालियामेण्ट निश्चित करती है। पालियामेण्ट के सदस्य और साधारण जनता प्रायः यह भूल जाती है कि जब कोई नयी सरकारी योजना तैयार होती है तो उसको कार्यान्वित करने के लिये किसी न किसी को नियुक्त करना पडता है। शासन नीति या योजना तो पालियामेण्ट के एक्ट के रूप में आ गयी पर वह एक्ट स्वसचालनशील तो होता नही। कोई व्यक्ति या व्यक्तिया का सगठन ही उसे कार्यरूप देता है। जब पालियामेण्ट किसी एक्ट को पास करती है तो प्राय यह भी निश्चित कर देती है कि किस विभाग में इसका सचालन

किया जावेगा। कभी-कभी एक नया विभाग ही खोलना पड जाता है, पिछले बीस वर्षों में अनेक नए विभाग उत्पन्न हो चुके हैं। इस समय निम्नलिखित प्रशासन-विभाग वर्तमान हैं जिनमें उनके सामने लिखा हुआ काम होता है—

होम आफिस (गृह विभाग)—पुलिस, जेल, घरेलू शान्ति व सुव्यवस्था, कारखानों मे श्रमिको को काम को सुविधायें इत्यादि।

फौरिन आफिस (वैदेशिक विभाग)—विदेशी राज्यों से सम्बन्ध।

कोलोनियल आफिस (उपनिवेश विभाग)—उपनिवेशों का शासन प्रबन्ध।

वार आफिस (युद्ध विभाग)—सेना का प्रबन्ध।

एयर मिनिस्ट्री (वायु विभाग)—वायु सेना का प्रवन्ध तथा वायुयानों से यातायात सम्बन्धी शासन।

कामनवैल्थ रिलेशन्स आफिस—कामनवैल्थ के सदस्यों से सम्बन्ध। इम्पीरियल कान्फ्रेंस का काम।

एडमिरलटी (नौसेना विभाग)—नौसेना सम्बन्धी प्रशासन।

मिनिस्ट्री फार दी कोआरडीनेशन आफ डिफेंस—सुरक्षा सम्बन्धी विभागों का संयोजन।

बोर्ड आफ ट्रेड (व्यापार विभाग)—व्यापारिक व औद्योगिक नीति, नाविक यातायात, मुख्य उद्योगो और पेटेन्टो इत्यादि से सम्बन्धित प्रशासक परिनियम, समुद्र पार का विदेश व्यापार, खानें व आकडे एकत्रित करना।

मिनिस्ट्री आफ सप्लाई—युद्ध विभाग के लिये सामग्री जुटाना।

लार्ड प्रीवी सील—*(बिना विभाग का मन्त्री)—इस समय लार्ड प्रिवी सील* हवाई हमलो से बचाव के उपायो का इन्चार्ज है।

प्रिवी कौंसिल—आर्डर्स इन कौंसिल के बारे में औपचारिक कर्तव्य वैज्ञानिक अनुसंधान (लार्ड प्रेसीडेन्ट मन्त्रिमण्डल का सदस्य है और विभागहीन मन्त्री के रूप में काम करता है)।

मिनिस्ट्री आफ हेल्थ—(स्वास्थ्य विभाग)—स्थानीय शासन, स्वास्थ्य, घर-निर्माण और नगर-निर्माण का प्रशासन।

मिनिस्ट्री आफ ट्रान्सपोर्ट (यातायात विभाग)—यातायात के साधनों का प्रबन्ध, सडकें, तार इत्यादि।

बोर्ड आफ एज्यूकेशन (शिक्षा विभाग)—सब शिक्षा सेवाओं का प्रबन्ध, श्रमिकों के झगडे।

मिनिस्ट्री आफ पेन्शन्स—पेन्शनों का प्रबन्ध।

मिनिस्ट्री आफ एग्रीकल्चर एण्ड फिशरीज (कृषि व मत्स्य विभाग))—कृषि व मछली पैदा करने का प्रबन्ध, बाजार सम्बन्धी योजनाओं का नियन्त्रण।

ट्रेजरी (अर्थ विभाग)—आय व्यय का प्रबन्ध।

स्काटलैण्ड विभाग—स्काटलैण्ड से सम्बन्धित सब विभागों का प्रबन्ध।

आफिस आफ वर्क्स—सरकारी इमारतों, प्राचीन स्मृति सदन, शाही बाग आदि का प्रबन्ध।

कुछ दिनों से यह भावना बढती जा रही है कि विभागों की सख्या बढने से *सयोजन की कमी के कारण शासन-प्रबन्ध में अक्षमता* (*Inefficiency*) आती जाती है। इसलिये कभी-कभी इस सख्या को कम करने और विभागों का पुनगठन करने के सुझाव रखे गये हैं पर अभी कोई सुझाव कार्यान्वित नहीं हो पाया है।

वर्तमान विभागों का वर्गीकरण कैसे किया जा सकता है? (How present Departments may be classified ?) अर्थ विभाग को *छोडकर (जो एक प्रकार से सब विभागों का नियन्त्रण करता है बचे हुये विभागों* को चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। प्रथम, वे विभाग हैं जो सरकार के सबसे प्राचीन काम करते हैं जैसे सुरक्षा व शान्ति का प्रबन्ध। इस श्रेणी में युद्ध विभाग, नौसेना विभाग, वायुसेना विभाग, गृह विभाग व स्काटलैण्ड विभाग और दूसरी श्रेणी में वैदेशिक मामलों से सम्बन्ध रखने वाले, वैदेशिक विभाग, स्काटलैण्ड के सेक्रेटरी का आफिस, इण्डिया आफिस व कोलोनियल आफिस (उपनिवेश विभाग) रख जा सकते हैं। तीसरी श्रेणी में व्यापारिक विभाग (बोर्ड आफ ट्रेड), श्रम विभाग, कृषि विभाग व यातायात विभाग और चौथी में शिक्षा विभाग व स्वास्थ्य विभाग रखे जा सकते हैं। इनमें पोस्टमास्टर जनरल का दफ्तर भी जोडा जा सकता है जिसे तीसरी श्रेणी में रखा जा सकता है हालाकि उसका काम अर्थ-विभाग से सम्बन्धित है। अन्त में वे विभाग हैं जो कि सामाजिक सुधार के मामले सुलझाते हैं जैसे स्वास्थ्य विभाग और शिक्षा बोर्ड आदि।

इन विभागों का सगठन विविध प्रकार का है। कुछ के ऊपर एक सचिव होता है जैसे गृह विभाग, वायु, वैदेशिक युद्ध, स्काटलैण्ड, अधिराज्य, उपनिवेश-विभाग। दूसरे बोर्ड के रूप में सगठित हैं, हालाकि उन पर एक ही व्यक्ति का नियन्त्रण रहता है जैसे अर्थ विभाग, शिक्षा विभाग, व्यापार विभाग, नौसेना विभाग। इनके अतिरिक्त कुछ के अध्यक्ष मन्त्री होते हैं जैसे कृषि, स्वास्थ्य, यातायात तथा पेन्शन विभाग। प्रत्येक विभाग एक पृथक इकाई है पर एक से अधिक विभागों से सम्बधित विषयों के लिये (उदाहरणार्थ स्कूल के बच्चों के स्वास्थ्य के लिये मिली-जुली समितियाँ है। पिछले

वर्षों में ये समन्वयकारी समितियाँ बराबर बढती गई हैं जिससे सम्पूर्ण प्रशासन यंत्र अत्यधिक पेचीदा बन गया है।

सब विभागो के संगठन और कर्तव्यो का विस्तृत विवरण करने के लिए एक पूरे ग्रन्थ की आवश्यकता है। आजकल छब्बीस विभाग हैं और यदि विभाग शब्द को विस्तृत अर्थों में लिया जाय तो इससे भी अधिक विभाग निकलेंगे। अत यहाँ पर कुछ ही विभागो के ढाँचे और मुख्य कार्यों का वर्णन करना पर्याप्त होगा।

(१) अर्थ विभाग (The Exchequer)—वित्त (Finance) की अंग्रेजी व्यवस्था की धुरी एक्सचेकर है। नार्मनकाल में उत्पन्न होने के कारण यह वर्तमान सरकार का सबसे पुराना विभाग है। पहले यह केवल राजा के करो को वसूल करने का काम करता था पर कालान्तर मे यह राज्य के कर वसूल करने का काम करने लगा, तब भी उस पर नियन्त्रण स्वयं राजा का ही रहा। अन्त मे सन् १६८९ में वह पालियामेण्ट और विशेषतः कामन्स सभा के प्रति उत्तरदायी हो गया। पालियामेण्ट के इस नियन्त्रण का आधार यह तथ्य है कि पालियामेण्ट की अनुमति के बिना न तो राजकोष मे कोई धन आ सकता है न बाहर जा सकता है। चाहे कर लगाने से मिले या ऋण के द्वारा, वित्त पहले राजकोष मे जमा होना चाहिये, जहाँ कि वह एक संगठित फण्ड (Consolidated Fund) में जाता है। पालियामेण्ट की अनुमति के बिना इस राशि मे से एक पेनी भी बाहर नही दी जा सकती। कभी-कभी पालियामेण्ट एक बार यह निश्चय कर देती है कि अमुक-अमुक व्यय कोष में से बराबर दे दिया जाया करे पर अधिकतर व्यय पालियामेण्ट प्रतिवर्ष मंजूर करती है।

इस विभाग का अध्यक्ष अर्थमन्त्री, एक्सचेकर का चान्सलर (Chancellor of the Exchequer) होता है जोकि मन्त्रिपरिषद् का एक प्रमुख सदस्य होता है। सम्भवतः विदेश-सचिव को छोड़कर वही मन्त्रिपरिषद् में सबसे महत्वपूर्ण अध्यक्ष होता है। यह आवश्यक नही है कि इस विभाग का अध्यक्ष मुद्रा सम्बन्धी मामलो का विशेषज्ञ ही हो क्योकि चान्सलर के अधीन लोगो में कई विशेषज्ञ इस विभाग में रहते हैं और वह इनसे प्रत्येक पचीदा विषय में उचित सलाह ले सकता है। फिर भी संख्याओ से प्रेम, उनको समझने और याद रखने की शक्ति और सूक्ष्म से सूक्ष्म बातो मे रुचि होना किसी राजनीतिज्ञ को चान्सलर के पद के लिये अधिक योग्य बना देता है। परन्तु सबसे बडी बात जो अर्थमन्त्री में होनी चाहिए वह है विचार करने में तत्परता और सदन में अपने विचार को भली-भांति प्रकट करने की योग्यता। हाउस आफ कामन्स मे सब ओर से सब प्रकार के प्रश्न किये जायेंगे। उसमे उन सबका सही उत्तर थोडे से शब्दो में देने की योग्यता होनी चाहिये। इनमें से बहुत से प्रश्न उसको परेशान करने के लिये नहीं किए जाते बल्कि इसलिये कि ऐसे मामलो का

जानकारी हो जाय जिनको पार्लियामेण्ट के साधारण सदस्य नहीं जानते। बहुत ही कम व्यक्तियों में अपनी बात को समझाने की योग्यता होती है। अधिकतर लोग जब उनसे श्रोताओं के दिमाग की किसी कठिनाई को समझाने को कहा जाता है तो वे समझाते समय समझाने वाले को उल्टा और भी अधिक चक्कर में डाल देते हैं।

चान्सलर आफ दी एक्सचैकर इस प्राचीन विभाग का परम्परागत अध्यक्ष ही नहीं है बल्कि वह ट्रेजरी अर्थात् राजकोष विभाग का वास्तविक अध्यक्ष है। यहाँ अर्थ विभाग और राजकोष विभाग इन दोनों नामों से समझने में कुछ गड़बड़ी हो सकती है जोकि अंग्रेजी सरकार का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को बड़ी असुविधाजनक है। वाशिंगटन में ट्रेजरी नाम से पुकारा जाने वाला एक विभाग है जिसका अध्यक्ष सेक्रेटरी आफ ट्रेजरी कहलाता है जो प्रेजीडेण्ट की मन्त्रिपरिषद् का सदस्य होता है। वही संयुक्त राज्य अमरीका का अर्थ मन्त्री (Finance Minister) होता है। परन्तु इंगलैण्ड में संगठन इतना सरल नहीं है। वहाँ राजकोष नाम के लिये एक बोर्ड या समिति के आधीन है जिसका अध्यक्ष फर्स्ट लार्ड आफ दी ट्रेजरी (First Lord of the Treasury) होता है। यह पद प्रायः यद्यपि सदैव नहीं, प्रधान मन्त्री ग्रहण करता है परन्तु वास्तव में फर्स्ट लार्ड कभी भी राजकोष का असली अध्यक्ष नहीं होता। ट्रेजरी के जूनियर लार्ड भी ट्रेजरी बोर्ड के सदस्य के रूप में काम नहीं करते हैं। यह बोर्ड केवल नाममात्र का बोर्ड है। इस बोर्ड तथा इसके अध्यक्ष का सारा काम चान्सलर आफ एक्सचैकर अर्थात् अर्थ-मन्त्री ही करता है। वही असली अर्थमन्त्री है। वही खर्चे को पूरा करने के लिये आवश्यक मुद्रा कर आदि साधनों से एकत्रित करने के लिये और उसके लिये आवश्यक कानून आदि की योजना बनाने के लिये उत्तरदायी है। वही कामन्स में सरकार की आय-व्यय सम्बन्धी नीति की उपयुक्तता को सिद्ध करने के लिये उस नीति पर दोषारोपण का उचित उत्तर देता है। उसके आय-व्यय सम्बन्धी प्रस्ताव केवल अर्थ विभाग के बनाये हुए प्रस्ताव ही नहीं होते, वे सारे मन्त्रिमण्डल की ओर से स्थिर किये हुये प्रस्ताव होते हैं। मन्त्रिपरिषद् के सदस्य के नाते वह ऐसे प्रस्तावों को पहले परिषद् के सम्मुख उपस्थित करता है और वहाँ उसके मित्र अनुरोध करके उन प्रस्तावों में परिवर्तन करा सकते हैं। विशेषकर जहाँ तक महत्वपूर्ण विषयों का सम्बन्ध है, प्रायः मन्त्रिपरिषद् अर्थमन्त्री के प्रस्ताव का उचित आदर करती है। ऐसा करना अनिवार्य भी होता है क्योंकि वे प्रस्ताव अर्थ मन्त्री के बड़े विचार-पूर्वक अनुमान के फलस्वरूप बनाये हुए होते हैं। वह अपने अधीन लोगों से आकड़े इकट्ठा कराये रहता है। वह सब पेचीदा मामलों पर विशेषज्ञों की राय लिये रहता है। इसलिये उन सबको जितना वह समझता है, उसके दूसरे सहयोगी मन्त्रिगण उनकी पेचीदगी को उतना नहीं समझ सकते।

(२) गृह विभाग (The Home Office)—गृह विभाग या होम आफिस एक अपेक्षाकृत छोटा सा विभाग है जिसमें कई छोटे-छोटे काम होते हैं। इसका अध्यक्ष एक गृह सचिव (होम सेक्रेटरी) होता है जो अनिवार्यरूप से मन्त्रिपरिषद् का सदस्य हुआ करता है। उसके आधीन एक संसदीय उप-सचिव, एक स्थायी उप-सचिव, एक बन्दी गृह कमिश्नर, एक पुलिस कमिश्नर, एक चीफ इन्सपेक्टर आफ फैक्टरीज, आदि अफसर होते हैं। केवल होम सेक्रेटरी और संसदीय उप-सेक्रेटरी ही राजनैतिक अफसर होते हैं। बाकी अफसर स्थायी अफसर होते हैं जोकि मन्त्रिमण्डल के बदलने पर अपने पद से नहीं हटाये जाते। आमतौर से गृह विभाग, पुलिस, पुलिस-न्यायालय, बन्दीगृह, क्षमा प्रदान, विदेशी व्यक्तियों का देशीयकरण करना, अपराधियों का प्रत्यर्पण (Extradition) शराब के लाइसेन्सों और मुसीबत पैदा करने वालों की रोक टोक के द्वारा देश में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित करने से सम्बन्धित होता है। मुख्यत उसके काम एक न्याय विभाग के से हैं। परन्तु वे पूरी तरह ऐसे नहीं हैं क्योंकि गृह विभाग पर कारखानों का मुआयना करने और फैक्टरी कानून को लागू करने का भी भार होता है। यह अनोखी सी बात है कि इस विशुद्ध औद्योगिक कार्य का भार गृह-विभाग पर डाला गया है, पर इसका एक ऐतिहासिक कारण है। एक शताब्दी पूर्व सन् १८३३ में जब पहले फैक्टरी कानून पास हुये तो इनके इन्सपेक्टर गृह-विभाग के आधीन कर दिये गये क्योंकि उनको और किसी विभाग के आधीन करने का सुभीता नहीं दिखाई पड़ता था और क्योंकि उस समय कारखानों की देख-भाल का काम अपराध और अनैतिकता को रोकने के लिये पुलिस के काम जैसा समझा जाता था। आजकल इस काम का उद्देश्य अधिक व्यापक है और शान्ति तथा सुव्यवस्था से शाब्दिक अर्थ में बहुत कम सम्बन्ध है। पर फिर भी वह काम पहले की तरह अभी उसी विभाग में होता चला आ रहा है। यूरोप के राष्ट्रों के गृह विभागों के विपरीत जोकि आन्तरिक मन्त्रालय (मिनिस्ट्री आफ दि इन्टीरियर) कहलाते हैं इंगलैण्ड में गृह विभाग का स्थानीय शासन से पुलिस की देखभाल को छोड़कर और कोई सम्बन्ध नहीं है।

३—वैदेशिक विभाग (The Foreign Office)—वैदेशिक विभाग का अध्यक्ष सेक्रेटरी आफ स्टेट फौर फौरिन एफेअर्स (Secretary of State for Foreign Affairs) या वैदेशिक मन्त्री होता है जोकि हमेशा मन्त्रिपरिषद् का सदस्य होता है। प्रधान मन्त्री भी इस पद का भार अपने ऊपर ले लेता है। वैदेशिक मन्त्री को सहायता देने के लिये बहुत से अन्य कर्मचारियों के अलावा एक पार्लियामेण्टरी उपसेक्रेटरी, एक स्थायी उपसेक्रेटरी, कुछ परामर्शदाता आदि होते हैं। इस विभाग का काम सार्वभौम होता है और उसके काम का विभाजन वस्तु विषय के प्रकार के आधार पर न होकर देशों के आधार पर होता है। इसलिये वैदेशिक विभाग का प्रत्येक

उप-विभाग ससार के किसी विशेष देश से ब्रिटिश सम्बन्धो के लिये आवश्यक पत्र व्यवहार और सामान्य नीति की देखभाल करता है। अर्थात् इस विभाग का एक भाग अफ्रीका, दूसरा जापान, तीसरा अमरीका आदि से सम्बन्धित पत्र-व्यवहार आदि के काम को निबटाता है। युद्ध या अन्तर्राष्ट्रीय तनातनी के समय मे यह विभाग सब प्रशासन विभागों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वैदेशिक विभाग सब देशो के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करता तथा उसकी समालोचना करता है। इस निरीक्षण के आधार पर इस विभाग से विदेश-स्थिति अँगरेजी राजदूतो, मन्त्रियो और कूटनीतिक कर्मचारियो को आवश्यक आदेश भेजे जाते हैं। इगलैण्ड स्थित विदेशो के राजदूतो से भी यही विभाग सम्पर्क रखता है। विदेशी राज्यो से सन्धि करना, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनो मे इगलैण्ड के प्रतिनिधि नियुक्त करके भेजना आदि काम भी इसी विभाग मे होते हैं। कुछ समय पहले इगलैण्ड के व्यापारिक प्रतिनिधियो की देखभाल भी इसी विभाग से होती थी पर इन प्रतिनिधियों का प्रमुख काम अर्थात् विदेशी व्यापार की उन्नति और व्यापार सम्बन्धी सधियो की बातचीत करना अब बोर्ड आफ ट्रेड के विदेशी व्यापार विभाग द्वारा होता है। गृह विभाग के विरुद्ध वैदेशिक विभाग केवल इगलैण्ड के लिये ही नही बल्कि सारे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिये कार्यवाही करता है। परन्तु इधर कामनवेल्थ के अधिराज्य और भारत तथा पाकिस्तान के समान गणतन्त्र सदस्य विदेशी राज्यो से अपने व्यवहार में स्वतन्त्र हो गए हैं।

४—श्रम-विभाग (The Ministry of Labour)—यह नया विभाग है जो सन् १९१७ मे स्थापित हुआ। आरम्भ से ही इस विभाग का अध्यक्ष श्रम मन्त्री मन्त्रिपरिषद् का सदस्य होता चला आ रहा है। इस विभाग के कर्तव्य बिलकुल नये नही हैं, उनमें बहुत से बोर्ड आफ ट्रेड विभाग से लिए गए हैं। साधारणत यह विभाग उद्योगो से उठने वाले वैयक्तिक प्रश्नो से या कच्चे माल को जुटाने या सगठन के प्रश्नो से, सम्पर्क रखता है। श्रमिको और उद्योगपतियो के बीच झगडो को निबटाना, एम्प्लायमण्ट एक्सचेंज, बेकारी का बीमा, व्यापारिक समितियो और श्रमिको की सख्या एकत्रित करना आदि बातो मे इस विभाग का अधिक सम्बन्ध रहता है। एक शब्द में यह विभाग औद्योगिक उत्पादन, बिक्री या पूजी आदि के प्रश्नो से नहीं बल्कि उद्योगो में काम करने वालो की समस्याओ को सुलझाने से सम्बन्ध रखता है। उद्योग-न्यायालय सम्बन्धी सन् १९१९ के एक्ट के अन्तर्गत कार्यवाही यही विभाग करता है जोकि श्रम के झगडो व ह्विट्ले कौसिलो (Whtiley Councils) के विषयो में जाँच पडताल व मध्यस्थता करता है उद्योग समितियो से भी इसका सम्बन्ध रहता है जो कि सयुक्त राज्य में न्यूनतम वेतन आयुक्त कहलाते हैं। ये समितियाँ इस विभाग के आश्रय में बनाई जाती हैं और इनमें उद्योगपतियो, श्रमिको व साधारण जनता के प्रतिनिधि

सदस्य होते हैं। जब यह समिति किसी उद्योग के लिये न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर देती है तो श्रम विभाग यह आज्ञा निकाल देता है कि प्रत्येक उद्योगपति को अपने काम करने वालो को वह मजदूरी अवश्य देनी होगी। एम्प्लायमेंट एक्सचेंज सबसे पहले सन् १९०९ मे स्थापित किए गये थे। युद्ध के पश्चात् इनकी सख्या बहुत बढ गई और अब सारे देश मे इनका जाल सा बिछा हुआ है। इनका काम मजदूरो को काम दिलाना और काम के लिये मजदूरो की व्यवस्था करना है। इनका खर्चा सार्वजनिक कोष से चलता है। सन् १९२० मे बकारी बीमा एक्ट पास हो जाने से इस विभाग का काम और खर्चा और अधिक बढ़ गया है।

बेकारी बीमे के पक्ष के तर्क का सार निम्नलिखित है :—व्यापार और मौसम मे उतार चढाव अथवा कारखानो के कुशासन से बेकारी आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का एक साधारण परिणाम है। बेकारी से पीडित व्यक्ति केवल वही व्यक्ति नही है जो कष्ट उठाते हैं और कुछ भी नही कमाते बल्कि वे समाज की औद्योगिक सेना के सिपाही की तरह हैं जोकि चढाव के काल मे बुलाये जाने के लिये उतार के काल में प्रतीक्षा कर रहे हैं और जिनको देख भाल करना राज्य का कर्तव्य हो जाता है। इसलिये बीमा के लिये एकत्रित धन इस सरक्षित औद्योगिक सेना को ठीक प्रकार मे रखने में व्यय किया जाता है। सरक्षित औद्योगिक सेना किसी विशेष उद्योग के लिये ही नहीं रहती पर सारे समाज के हित के लिये ही सरकार इसका पालन-पोषण करती रहती है। नि.सन्देह इस कार्य को अधिक सम्मानित और बेहतर बनाया जा सकता है परन्तु इस अवस्था में भी वह बेरोजगारी द्वारा उपस्थित दु खो को दूर करने की ओर एक कदम है जो कि बीसवी शताब्दी तक केवल सामयिक दया के कामो से होता था।

सब बातो को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि श्रमिक-विभाग काम दिलवाने और उद्योगपतियो व श्रमिकों के पारस्परिक सम्बन्ध को सहयोगपूर्ण बनाने का काम करता है। कुछ सीमा तक इन सम्बन्धो पर यह विभाग अपना नियन्त्रण भी रखता है जैसा कि ट्रेड बोर्ड की आज्ञाओ के विषय में होता है। पर अधिकतर प्रवृत्ति यह रहती है कि सरकारी नियन्त्रण न रह कर स्वतः ही उद्योगपतियो व श्रमिकों को सहयोग-समितियाँ आदि बनें जिनमें वे स्वय आपस के मामलो को प्रेमपूर्वक निबटा लें।

५—स्वास्थ्य विभाग (The Ministry of Health)—यह विभाग सन् १९१९ में स्थापित हुआ है। इसका काम स्वास्थ्य सम्बन्धी कामो का निर्देशन करना है पर वास्तव मे स्वास्थय सम्बन्धी काम की मात्रा बहुत थोडी है, प्रमुखत तो यह विभाग स्थानीय शासन से सम्पर्क रखता है। जो काम पहले स्थानीय शासन बोर्ड करता था अब वह इस विभाग ने ले लिया है और इसको नेशनल इन्श्योरेन्स कमिश्नरो

के काम मे मिला दिया है। स्वास्थ्य विभाग ने दूसरे शासन-विभागों से भी कुछ काम लिये हैं उदाहरणार्थ, शिक्षा-विभागो से विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की देखभाल का काम व गृह-विभाग से पागलो आदि के सम्बन्ध का काम। दूसरी ओर स्थानीय शासन के कुछ काम इस विभाग में न आकर दूसरे विभागों में भी बाँट दिये गए जैसे ट्राम गाड़ियों का काम यातायात विभाग में कर दिया गया।

स्वास्थ्य विभाग की शक्तियाँ (Powers of Health Ministry)—साधारणतया इस विभाग में निर्धनों की सहायता से सम्बन्धित कानूनो को लागू करना, स्थानीय शासन संस्थाओ के हिसाब की जाच, संक्रामक रोग सम्बन्धी प्रतिबन्ध लगाना, संक्रामक बीमारियों के रोकने का प्रबन्ध करना तथा नगर व ग्राम की शासन-संस्थाओ से सम्बन्ध रखने वाली दूसरी बातों की देखभाल करना आदि काम होते हैं। नया स्वास्थ्य मन्त्रालय उत्तरदायित्व निश्चित करने और प्रशासन में सामंजस्य करने के लिये बनाया गया था। १९१९ के स्वास्थ्य मन्त्रालय अधिनियम के अनुसार कुछ प्रविधानों की शर्त पर उसको ये शक्तियां दे दी गई थी। स्थानीय सरकारी बोर्ड की सब शक्तियां और कर्तव्य, बीमा कमिश्नरो की सब शक्तियाँ और कर्तव्य, मातृत्व और शिशु कल्याण और बालकों तथा अल्पायु व्यक्तियों केस्वास्थ्य के निरीक्षण और इलाज से सम्बन्धित शिक्षा बोर्ड की सब शक्तियाँ, १९०२ व १९१८ के मिडवाइव्ज अधिनियम के अन्तर्गत प्रिवी कौंसिल और लार्ड प्रेसीडेंट की सब शक्तियाँ, १९०८ के बाल-अधिनियम के प्रथम भाग के प्रशासन के निरीक्षण की वे शक्तियाँ जो अबतक राज्य सचिव द्वारा प्रयोग की जाती थी। मन्त्री की कुछ विशेष शक्तियाँ भी हस्तान्तरित की जा सकती है विशेषतया रोगी सैनिको की देखभाल (जो अब पेंशन मन्त्रालय के आधीन है), और पागलपन पर नियन्त्रण (जो पहले गृह विभाग के द्वारा किया जाता था) और इगलैण्ड या वेल्स में किसी सरकारी विभाग की जनता के स्वास्थ्यसे सबन्धित या उस पर प्रभाव डालने वाली कोई भी शक्ति अथवा कर्तव्य।

परामर्शदात्री समितियाँ (Consultative Councils)—इस विभाग के आधीन चार परामर्शदात्री समितियाँ स्थापित की गई हैं जो स्थानीय स्वास्थ्य-प्रबन्ध, चिकित्सा तथा औषधि सम्बन्धी काम, मान्य-समितियो की कार्यवाही की देखभाल और सामान्य स्वास्थ्य की समस्याओं पर ध्यान रखती हैं। वृद्धावस्था की पेंशन का प्रबन्ध भी इस विभाग में होता है। अन्धो की देखभाल के लिये भी एक विभाग बनाया गया है। आवास का प्रबन्ध (Housing) इसका एक मुख्य काम है। इस विभाग को अन्वेषण को आरम्भ करने व उसके लिये आवश्यक सहायता देने का अधिकार भी दिया गया है। इस विभाग के मन्त्री को सहायता देने के लिये एक पार्लियामेण्ट्री सेक्रेटरी और अनेक चिकित्सा अफसर होते हैं।

सन् १९१४ के युद्ध काल में कई नये विभाग खोले गये थे पर उनमें से अधिकतर युद्ध के समाप्त होने पर तोड दिये गये। इनके उदाहरण किलेवन्दो राष्ट्रीय सेवा, शस्त्रास्त्र, नाविक यातायात और खाद्य के मन्त्रालय हैं। पुनर्निर्माण का अल्पायु मन्त्रिमण्डल तोड दिया गया है और उसका काम विभिन्न विभागो को बाँट दिया गया है। जो बचे उनमे पेंशन विभाग व यातातात विभाग मुख्य थे जो स्थायी रूप से स्थापित हो गये। पेंशन विभाग सन् १९१६ में पार्लियामेण्ट के एक एक्ट द्वारा स्थापित हुआ और पेंशन सम्बन्धी सारा काम युद्ध-विभाग, नौसेना विभाग व चेलसिया-कमिश्नरो से हटा कर इसको सौंप दिया गया। वैज्ञानिक व औद्योगिक अन्वेषण एक दूसरा युद्धोत्तर विभाग जो बडे महत्व का है सन् १९१५ मे इसके लिये एक समिति नियुक्त कर दी गई थी। इस समिति को यह काम दिया गया था कि वह पार्लियामेण्ट से मजूर किये हुये अनुदानो को अर्थ विभाग के आदेशानुसार वैज्ञानिक व औद्योगिक अन्वेषण के काम मे व्यय करे। इस समिति का अध्यक्ष कौंसिल का लार्ड प्रेसीडेण्ट होता है। दूसरे सदस्यो मे उपनिवेश-मन्त्री, अर्थ-मन्त्री, स्काटलैण्ड-मन्त्री, आयरलैण्ड का प्रधान सचिव, शिक्षा तथा व्यापार बोर्ड के अध्यक्ष और पाँच दूसरे व्यक्ति होते हैं। *इस समिति की स्थापना के साथ ही साथ* एक परामर्श देने वाली समिति तथा एक पृथक विभाग भी स्थापित किया गया जिनको अन्वेषण सम्बन्धी सब प्रस्ताव भेजे जाते थे। विभाग के आश्रय में विशेष अन्वेषण करने के प्रयोजन से अनेक अन्वेषण बोर्ड जैसे इंधन-अन्वेषण बोर्ड (Fuel Research Board) इत्यादि विशेष बोर्ड नियुक्त किये गये।

६—अन्य विभाग (Other Departments)—इन विभागों के अतिरिक्त कई दूसरे विभाग भी हैं जैसे व्यापार विभाग या बोर्ड आफ ट्रेड (जिसके दो भाग है (१) नौकरियो का प्रबन्ध व (२) व्यापार और उद्योग), कृषि-विभाग, शिक्षा विभाग, पोस्टमास्टर जनरल, कमिश्नर आफ वर्क्स इत्यादि। ये विभाग अपने-अपने नाम के अनुसार काम करते हैं। प्रथम महायुद्ध के समय यह प्रथा चल गई कि किसी बडे राजनीतिज्ञ को मन्त्रि-परिषद् का मन्त्री बना दिया जाता था पर उसके आधीन किसी शासन विभाग का प्रबन्ध न होता था। श्री लॉयड जार्ज के—युद्ध कैबिनेट—मे आमतौर से इस प्रकार के दो—विभागहीन मन्त्री—होते थे और यह प्रथा द्वितीय महायुद्ध में भी चालू रही।

कामनवेल्थ सम्बन्ध आफिस (Commonwealth Relations Office)—सन् १९४७ के अगस्त मास तक इण्डिया आफिस सेक्रटरी आफ स्टट फार इण्डिया का कार्यालय था जिसकी गिनती प्रमुख पाँच सेक्रटरियों में होती थी। इसके कार्यालय से ही भारतवर्ष के शासन प्रबन्ध का नियन्त्रण होता था। सेक्रेटरी आफ स्टट फार इण्डिया

जो कि मन्त्रि-परिषद् का सदस्य था इस कार्यालय का अध्यक्ष होता था। इसके आधीन दो उप-सेक्रटरी, एक पार्लियामेण्टरी सचिव और एक स्थायी सचिव होता था। पार्लियामेण्टरी सेक्रेटरी पार्लियामेण्ट का सदस्य होता था पर मन्त्रिपरिषद् का सदस्य न बनाया जाता था। एक परामर्श देनेवाली समिति भी थी जिसमें कम से कम तीन और अधिक से अधिक छ व्यक्ति होते थे जिनको सेक्रेटरी आफ स्टेट पाच वर्ष के लिये *नियुक्त करता था।* यह समिति सेक्रेटरी को अपने काम को अच्छी प्रकार पूरा करने में सलाह दिया *करती था। भारतवर्ष के सब मामलों में* सेक्रेटरी आफ स्टेट सम्राट् का वैधानिक सलाहकार था और वह गवर्नर, जनरल व गवर्नरों के काम की देखभाल रखता तथा उनको आदेश देता था। वही इण्डियन सिविल सर्विस की नौकरियों के लिये भर्ती करता था, जैसा कि १९३५ के गवर्नमेन्ट आफ इंडिया एक्ट की धारा २४३, २४६, २६९, २७३ और ३१४ में दिया गया है। १९४७ के भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम (Indian Independence Act) पास होने के बाद इंडिया आफिस भग कर दिया गया तब से ब्रिटिश सरकार से भारत सरकार के सब सम्बन्धो को कामनवैल्थ *रिलेशन्स मत्रालय नियन्त्रित करता है जो कि सब स्वशासित अधिराज्यों* और भारत के मामलो की देख भाल करता है। २६ जनवरी सन् १९५० से भारत एक गण तन्त्र बन गया है परन्तु अप्रैल १९४९ की प्रधानमन्त्री को घोषणा के अनुसार (जो कि बाद मे भारत की विधान की सभा ने भी मंजूर कर ली थी) भारत राष्ट्रों के कामनवैल्थ (जिसका एकता का चिन्ह राजा है) सदस्य रहा चला जाता है। इससे यह बात समझ में आ जाती है कि क्यों विदेश मंत्रालय के स्थान पर कामन वैल्थ सम्बन्धों का मत्रालय भारत से ब्रिटेन के सम्बन्धों की व्यवस्था करता है। वह *भारतीय मामलो में मन्त्रियो के समान पार्लियामेन्ट के प्रति उत्तरदायी था।*

सिविल सर्विस (The Civil Service) प्राचीन व्यवस्था मे दक्षता नहीं थी (The old system lacked efficiency) इगलैन्ड में वास्तविक कार्य पालिका के हाथ, जो विभिन्न विभागो को सफलतापूर्वक कार्य करने योग्य बनाने में सहायक होते हैं, सिविल सर्विस है जोकि अपनी कार्य कुशलता के लिये प्रसिद्ध है। इस सिविल सर्विस का प्राचीन इतिहास बडा रोचक और आश्चर्यजनक है। सोलहवी शताब्दी से पूर्व ऐसे व्यक्ति देश के दूरवर्ती भागो में शासन प्रबन्ध करते थे जो राजा के दरबारियो में मनोनीत हुए होते थे। यह प्रणाली बडी दोषपूर्ण व असफल थी। इगलैण्ड को राज्य कर्मचारियो का काम सोलहवी शताब्दी के बीच से १८वी शताब्दी के अन्त तक इतना खराब था कि केन्द्रीय शक्ति को बार-बार नये कानून बनाने पडते थे जिनमें से प्रत्येक में यह शिकायत की जाती थी कि पिछले पर ठीक ठीक अमल नहीं हुआ है। इन कानूनो की प्रस्तावना मे शिकायतें

झिडकियां व धमकियां भरी रहती थी। स्थानीय अफसरों के काम की देखभाल करने वाले केन्द्रीय शासन का कोई भी अफसर न होने से राज्य कर में बडा घाटा पडता था और प्रजा पर बडा अनाचार तथा अत्याचार होता था। राज्य के कानून प्राय अकुशल और अवैतनिक व्यक्तियों के द्वारा कार्यान्वित होते थे। इस समय न्यायकारी तथा कार्यकारी कर्त्तव्यो का पृथक विभाजन न हुआ था।

केन्द्रीय नियंत्रण का प्रारम्भ (Beginnings of Central Control —स्थानीय शासन पर केन्द्रीय नियत्रण १६वी शताब्दी से आरम्भ होने लग गया था। यह नियत्रण अकाल पीडित व्यक्तियो के कष्ट को दूर करने के लिए पूअर ला (Poor law) अर्थात् निर्धनो के कानून को अच्छी तरह कार्यान्वित करने के लिए विशेषरूप से आरम्भ किया गया। सन् १६३१ में निर्धन-सहायता सम्बन्धी सूचना एकत्रित करने के लिए तथा न्याय-प्रबन्ध को सुधारने के लिए आदेश पुस्तक (Book of Orders) में तत्सम्बन्धी आदेश तथा निर्देश प्रकाशित किए गए। गृह-युद्ध के छिड जाने से इन केन्द्रीयकरण की गति रुक गई १७वी व १८वी शताब्दी में उपनिवेश-सबधी विषयों में पार्लियामेण्ट का अधिकतर ध्यान लगा रहा। १८वी शताब्दी के अन्त के दिनो में इगलैण्ड की शासन व्यवस्था विकेन्द्रित, अव्यवसायिक, अशासकीय उदार और अव्यवस्थित तथा स्वेच्छाचार से बिखरी हुई थी। वैधानिक सुधार के साथ शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी सुधार हुए क्योकि पहले के बिना दूसरे में सुधार करना असम्भव था और दोनो ही बडे दोषपूर्ण हो चुके थे। उस समय वेतन-भोगी राजकर्मचारियो की न कोई लिखा-पढी थी न हिसाब-किताब। इसलिये केन्द्रीय शासन का उन पर नियत्रण भी कैसे हो सकता था और अमरीकन उपनिवेश बहुत से अनुपस्थित रहने वाले वेतन भोगी राजकर्मचारियो के शिकार गाह थे।

सिविल सर्विस में १८५५ का सुधार (The Reform of 1855 in the Civil Services)—सन् १८५५ में वर्तमान ब्रिटिश सिविल सर्विस का श्रीगणेश हुआ। यह बडे आश्चर्य की बात है कि मैकाले ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन भारतीय सिविल सर्विस की भर्ती के लिये जो योजना बनाई उसी के अनुरूप ब्रिटिश सिविल सर्विस के सुधार करने की योजना बनाई गई। प्रधान-मन्त्री लार्ड जॉन रसल (Lcod John Russel) व अर्थ-मन्त्री सर चार्ल्स वुड ने शासन प्रबन्ध के विभिन्न विभागों में पूछ-ताछ करने का काम सर चार्ल्स ट्रेविल्यान व सर स्टेफार्ड नार्थकोट को सौंपा। सन् १८५३ में उनकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई और इनकी योजना को जान स्टुअर्ट मिल ने सार्वजनिक मामलो पर किसी भी सरकार द्वारा कभी भी उपस्थित किए हुए प्रस्तावो में सबसे अधिक उन्नत में से एक कह कर स्वागत किया। सरकार की विभिन्न नौकरियो में भर्ती के लिये एक

विशेष परीक्षा का आयोजन किया गया उन्होंने यह सिफारिश भी की कि प्रतियोगितात्मक परिक्षाओं के लिए सामान्य शिक्षा न कि विशेष शिक्षा का मापदंड रखा जाय। इन परीक्षाओं का प्रबन्ध करने के लिये सन् १८५५ में तीन व्यक्तियों के एक सिविल सर्विस कमीशन की नियुक्ति कर दी गई जो कि सिविल पदों के किसी भी निचले स्थानों पर नियुक्ति के लिए प्रस्तावित नवयुवकों की परीक्षायें लेने के लिये जब तक राजा की इच्छा हो तब तक काम करते थे। कमीशन को प्रतियोगिताओं की योग्यता, आयु, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा साधारण जानकारी आदि को निश्चय करने का भार सौंप दिया गया। परन्तु प्रतियोगिता केवल अनुमतिदायक थी, परिपक्व आयु के स्थान पर बिना कमीशन के प्रमाणपत्र पाये हुए व्यक्ति भी नौकरियों में भर्ती किये जा सकते थे।

१८७० में व्यवस्था का पूर्ण होना (Completion of the System in 1870)—४ जून सन् १८७० में एक दूसरे आर्डर इन कौंसिल से नौकरियों में नियुक्ति करने की प्रणाली की ठीक व्यवस्था हो गई जब (१) नौकरियों में भर्ती होने से पूर्व प्रतियोगितात्मक परीक्षा अनिवार्य कर दी गई। (२) व्यवसायी पदों के कर्मचारियों के लिये इस परीक्षा के बन्धन हटाने का अधिकार कमीशन को दे दिया गया (३) कुछ कर्मचारियों की नियुक्ति सीधे राजा द्वारा होने का आयोजन कर दिया गया (४) विभागाध्यक्षों को यह अधिकार दे दिया गया कि कमीशन की सम्मति से वे कुछ पदों के लिये परीक्षा का प्रतिबन्ध हटा सकें और (५) अर्थ विभाग को विभागों के संगठन करने का अधिकार दे दिया गया। इसके पश्चात् भी (उदाहरण के लिये १८७५, १८८४–९०, १९१०–१४ और १९१८ में) कई कमीशन नियुक्त किये गये जिन्होंने नौकरियों के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक नियमावली आदि बनाकर सिविल सर्विस को बिल्कुल व्यवस्थित रूप दे दिया।

लोक सेवा आयोग (Public Service Commission) आजकल लोक सेवकों (Public Servants) की भर्ती एक लोक सेवा आयोग के द्वारा की जाती है जिसमें तीन सदस्य होते हैं। आयोग एक प्रतियोगिता परीक्षा करता है जिसमें पहले लिखित परीक्षा होती है और फिर मौखिक परीक्षा तथा इन्टरव्यू। लिखित परीक्षा परीक्षार्थी की अध्ययन के विभिन्न विषयों और सामान्य ज्ञान में योग्यता की परीक्षा करने के लिये होती है। इन्टरव्यू और मौखिक परीक्षा परीक्षार्थी के व्यक्तित्व, चौकन्नापन, सामान्य बुद्धि और सामर्थ्य देखने के लिये की जाती है। इन परीक्षाओं के बाद आयोग परीक्षाओं का प्रकाशित कर देता है और सरकार पूर्वता (Priority) के क्रम से सूची से नियुक्तियाँ करती है। सब नौकरियों के लिये केवल एक परीक्षा होती है। पदक्रमों (Grades) वेतनों अथवा नौकरियों

की शर्तें तथा परिस्थितियों को निश्चित करना आयोग का काम नहीं है।

इंगलैण्ड में वर्तमान सिविल सर्विस (The Present Civil Services in England)—इस प्रकार खुली प्रतियोगिता पर आधारित वर्तमान सिविल सर्विस प्रणाली ने विभिन्न श्रेणियों के कुशल राजकर्मचारी प्रदान किये हैं। इस समय इंगलैण्ड में विभिन्न शासन विभागों में लगभग ५ लाख या इससे भी अधिक व्यक्ति काम करते हैं। इनमें से लगभग ३,३०,००० औद्योगिक विभागों में हैं जिनमें जल पोतों के ठहरने के स्थानों शस्त्रागारों और डाकघरों के कर्मचारी भी शामिल हैं। ७०,००० क्लर्क के स्थानों पर हैं, १६००० कार्यपालक अधिकारी हैं, १,३०० प्रशासक अधिकारी हैं, २,५०० विभिन्न विभागों के निरीक्षक हैं और ७,००० व्यवसायिक, औद्योगिक तथा वैज्ञानिक कार्य-कर्त्तागण हैं। प्रबन्धकर्ता अफसर नौकरियों के लिये वही काम करते हैं जो काम शरीर में मस्तिष्क करता है और ये लोग अधिकतर आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज के विश्वविद्यालयों में शिक्षा पाये हुए होते हैं।

ह्विटले कौंसिलें (Whitley Councils)—राजकर्मचारियों को किसी राजनैतिक दल में शामिल होने की अनुमति नहीं होती। 'सिविल सर्विस की नैतिकता तटस्थता है। इस कारण से एक प्राचीन परम्परा जो कि अब प्रतिरक्षा सेवाओं तक भी फैला दी गई है, एक सिविल कर्मचारी को पार्लियामेण्ट के चुनाव के लिये खड़े होने से रोकती है और कुछ विभागों में उदाहरण के लिए स्वास्थ्य और श्रम-मन्त्रालय जिनका जनता से विशेष सम्पर्क होता है अपने सदस्यों को स्थानीय सरकारी संगठनों का सदस्य होने से रोक दिया है।"[1] स्थायी नौकर होने के कारण उनको अपने मन्त्रियों व विभागाध्यक्षों की नीति और आज्ञाओं का पालन करना पड़ता है। एक पद से दूसरे पद पर तरक्की प्रायः यन्त्रवत होती है। प्रतिनिधिक कौंसिल द्वारा नौकरियों के अधिकार, विशेषाधिकार तथा सुरक्षा की रक्षा की जाती है। १९१७ तक व्यक्तियों को अपने कष्टों के निवारण के लिये विभाग अथवा ट्रेजरी के अध्यक्ष के पास स्मृति-पत्र (Memorials) भेजने पड़ते थे। परन्तु १९१९ में ह्विटले कौंसिलों के लाभ सिविल सर्विस तक भी बढ़ा दिये गए। १९१७ में सरकार ने निजी उद्योग में मालिक और कर्मचारियों में सहयोग की तरकीब सुझाने के लिये जे० एच० ह्विटले (J H Whitley) की अधीनता में एक कमेटी नियुक्त की। सन् १९१७ में प्रकाशित इस कमेटी की रिपोर्ट ने ह्विटले कौंसिल योजना प्रस्तुत की जिसमें प्रत्येक उद्योग में दोनों दलों के प्रतिनिधियों की कौंसिलों की स्थापना का विधान किया गया। इस योजना के कार्यान्वित होने से उद्योगों में अनेक सुधार हुए। लोक सेवक समिति

[1] लास्की—पार्लियामेण्टरी गवर्नमेण्ट इन इंगलैण्ड पृ० ३३८–३९।

(Civil Servant Association) के जोर देने पर ह्विटले कोंसिल योजना सरकार की सिविल सर्विस में भी लागू कर दी गई "ताकि नियोजक (Employer) के रूप में प्रशासन और साधारण कर्मचारी मडल में अधिकाधिक सहयोग प्राप्त हो जिससे कि नियोजितो (Employed) के कल्याण के साथ विभाग मे कार्यदक्षता वढे कष्टो का निवारण करने की व्यवस्था हो और आमतौर से प्रशासक, प्रलेखक (Clerical) और मयोजक (Manipulative) सिविल सर्विस के विभिन्न दृष्टिकोणों और अनुभव में सामजस्य किया जा सके।"[1]

फलत प्रशासन के प्रत्येक विभाग में उस विभाग के कर्मचारी मण्डल के सदस्यो के सामान्य कल्याण से सम्बन्धित एक ह्विटले कौंसिल है। निर्णय दोनों पक्षों की सहमति से होते हैं और विभागाध्यक्ष को उनकी सूचना दे दी जाती है। तथा वे कार्यान्वित कर दिये जाते हैं। सब विभागीय ह्विटले कौंसिलों के ऊपर एक राष्ट्रीय कौंसिल होती है। अब सरकारी कर्मचारियों के सघो के सदस्यों के रूप में भिन्न भिन्न श्रेणियों के दस लाख से अधिक लोक सेवक हैं। इस प्रकार श्रमिक सघवाद सरकारी विभागों में भी प्रवेश कर गया है। इस व्यवस्था को अपने लाभ और हानि हैं। कौंसिल की मांग स्वीकार करने के लिये सरकार को बाध्य करने के लिये हड़ताल करने की प्रवृत्ति चल गई थी क्योंकि इन लोक सेवको की कुछ कौंसिलें निजी उद्योग मे औद्योगिक व्यापारिक सघो से सयुक्त थी। इसलिये स्टेनली बाल्डविन के मत्रिमडल ने १९२७ का ट्रेड डिस्प्यूट्स एण्ड ट्रेड यूनियन एक्ट पास किया जिसकी धारा ५ ने लोक सेवको को न केवल ऐसे व्यापारिक सघो का सदस्य होने से रोक दिया जो गैर सरकारी कर्मचारियों की सदस्यता स्वीकृत करता था, बल्कि साथही साथ उन्हें किसी ऐसे सगठन से सम्बन्ध रखने से भी रोक दिया जो कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी राजनैतिक दल से सम्बन्धित हो। परन्तु १९४६ में यह एक्ट रद्द कर दिया गया और सिविल सर्विस सगठन को केवल बाहरी व्यापारिक सघो मे ही नहीं वल्कि किसी भी राजनैतिक दल मे गठबन्धन करने के लिये खुला छोड दिया गया।

१ नेशनल ... के सविधान का पैरा ४।

पाठ्य पुस्तकें

Allen, C K—Bureaucracy Triumphant (1931)
Allen, C. K— Law in Making (1927)
Allen, C. K—The Development of Civil Service (1922)
Cripps, Sir Stafford—Democracy upto-date (1939)
Finer, H— Theory and Practice of Modern Government pp, 1162–1514
Greaves, H R. G—The British Constitution, ch. VII.
Gretton—The King's Government
Laski J H.—Parliamentary Government in England (1938) pp 309–359.
Low, Sir Sidney–Governance of England, ps 199–217
Marriolt—English Political Institutions, ch V
Ogg and Zink—Modern Foreign Governments (1953) chs. VI–VIII

अध्याय १२

अंग्रेजी न्यायपालिका

(The English Judiciary)

पार्लियामेंट मे एक्ट स्वय-परिचलित नही होते, उन्हे मनुष्यो द्वारा प्रयोग मे लाना पडता है और प्रयोग करने में न्यायालय द्वारा उनकी व्याख्या का भी समावेश किया जाता है क्योंकि ब्रिटिश शा[illegible]
व संदेह रहित शब्द हो और स्यात्
सकते हैं कि वह धारा सभा के अभि[illegible]

—एच० जे० लास्की

"जहां न्यायाधीशो की दृष्टि के सामने ही न्याय का अन्याय से व सत्य का असत्य से हनन होता हो और न्यायाधीश किंकर्त्तव्य-विमूढ की तरह यह सब देखते रहते हो वहां न्यायाधीशो को मरा हुआ ही समझना चाहिये न्याय के हनन से हनन करने वाले का हनन हो जायगा। न्याय की रक्षा से रक्षक की रक्षा होगी।"

—स्वामी दयानन्द

"राजा को केवल इसी उद्देश्य से उत्पन्न और निर्वाचित किया गया है कि वह सबके प्रति न्याय कर सके।

—ब्रक्टन

ग्रेट ब्रिटेन की न्याय प्रणाली परम्परागत नीति नियमो पर आधारित है जिसका मूलभूत सिद्धान्त न्याय शासन (Rule of Law) है और जिसमे वे संस्थायें और न्यायालय हैं जो समय-समय पर प्राचीन काल में किसी पूर्व निश्चित योजना के बिना स्थापित होते गए और इसलिए ऐसा भूल-भुलैया का ढेर बन गए जिसको ठीक करने के लिये सन् १८७० में इनमे बड़ा सुधार करना पड़ा।

विधि-शासन (Rule of Law)

अंगरेजी न्याय-संगठन तब तक अच्छी तरह बुद्धि गम्य नहीं हो सकता जब तक हम रूल आफ ला अर्थात् विधि-शासन के इस मूलभूत सिद्धान्त[1] के सब निगमनो को स्पष्ट रूप से न समझ लें। इस सिद्धान्त से स्वेच्छानुसार के स्थान पर चार विधिपूर्वक बनाये हुए कानून को प्रतिष्ठित किया जाता है। यह कानून की दृष्टि में सब श्रेणियो व वर्गों

---

१ प्रोफेसर डायसी द्वारा समझाये हुये तीन सिद्धांतो को पिछले पृष्ठो पर देखिये।

के व्यक्तियों को समानता स्थापित करता है और अन्त में संविधान को देश के साधारण कानून की नींव पर ही खड़ा कर देता है।

विधि-शासन के अपवाद (Exceptions to the Rule of Law) —विधि-शासन में कुछ अपवाद भी मान लिये गये हैं। (१) राजा—राजा कोई गलती नहीं करता इस कानूनी सिद्धान्त के अनुसार राजा पर कोई माल या फौजदारी का अभियोग नहीं लगाया जा सकता। राजा कैसा भी कोई अपराध करे तो भी उसे किसी न्यायालय में उपस्थित होने के लिये आदेश नहीं दिया जा सकता। उसे पागल करार देकर डाक्टरों की देख रेख मे रखा जा सकता है पर अंग्रेजी कानून में किसी भी पद्धति से उसपर उसी के न्यायालयों में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। इसी प्रकार सम्पत्ति सम्बन्धी मामलों में या प्रजा के किसी व्यक्ति की राजा द्वारा हानि हो जाय तो वह केवल राजा से प्रार्थना कर सकता है और राजा चाहे तो अपनी कृपा दृष्टि से, न कि प्रार्थी के अधिकार की रक्षा के लिये, उस क्षति को पूरा कर दे। (२) सार्वजनिक अफसर—अपने सरकारी काम में यदि वे किसी कानून का उल्लंघन करने वाला कोई काम करते हैं तो वैयक्तिक रूप से उन पर कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। उनके ऐसे सब कामों के लिये राज्य ही जिम्मेदार समझा जाता है और वे व्यक्तिगत रूप से किसी अदालत में उत्तरदायी नहीं ठहराये जा सकते यह मैकबेथ बनाम हल्डीमन्ड के मामले में स्थापित किया गया था। (३) न्यायाधीश—न्यायाधीश अपने सरकारी काम में किसी अदालत के सामने व्यक्तिगत राय से दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यदि न्यायाधीश अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर भी अनजाने कोई अपराध कर दें तो वे वैयक्तिक रूप से अपराधी नहीं ठहराये जा सकते। (४) छोटे मजिस्ट्रेट (Justices of the Peace) भी यदि द्वेषपूर्ण व्यवहार न करें तो अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर किसी राजकीय कार्यवाही के लिये अपराधी नहीं ठहराये जा सकते।

विधि-शासन से अनुमानित नागरिक अधिकार (Rights of citizens deduced from the Rule of Law) यह कहा जाता है कि इंगलैण्ड में नागरिक अधिकारों की घोषणा के अभाव की पूर्ति विधि-शासन द्वारा होती है। विधि-शासन के सिद्धान्त से निगमन द्वारा कुछ नागरिक अधिकार निकलते हैं। जिनको अंग्रेजी न्यायालय निर्णय देते समय शिरोधार्य करते हैं। ये अधिकार हैं—(१) दैहिक स्वतन्त्रता का अधिकार (२) वाक् स्वातन्त्र्य का अधिकार (३) सार्वजनिक सभा करने का अधिकार। दैहिक स्वतन्त्रता के अधिकार के कारण कोई भी व्यक्ति निश्चित रूप से किसी कानून-भंग का अपराधी ठहराये गये बिना बन्दी नहीं बनाया जा सकता जिसका निर्णय न्यायालय करेगा।

और कोई भी न्यायालय किसी व्यक्ति को दण्ड देने की आज्ञा नही दे सकता जब तक उस व्यक्ति का अपराध सिद्ध न हो जाय जबकि अपराधी को अपने बचाव का पूरा अवसर मिल चुका हो। यदि कोई सरकारी कर्मचारी किसी नागरिक को पकड कर बिना मुकदमा चलाये जेल में बन्द कर दे तो नागरिक की ओर से कोई भी हैबियस कारपस को लिखित आज्ञा के लिए न्यायालय से प्रार्थना करके उसको न्यायालय के सम्मुख उपस्थित करने की माग कर सकता है। इसके पश्चात् उसके अपराध की परीक्षा आरम्भ होगा। विधि शासन के अनुसार व्यक्ति को अपनी रक्षा करने का भी अधिकार है और एक नागरिक अपने ऊपर किये आक्रमण से बचने के लिये आवश्यक बल प्रयोग भी कर सकता है।

वाक्स्वातन्त्र्य एक दूसरा अमूल्य अधिकार है जो अंगरेजों को विधि-शासन द्वारा प्राप्त है यद्यपि फ्रांस, बेलजियम आदि देशों में इसका उल्लेख शासन-विधान में कर दिया गया है। इंगलैण्ड में प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक के बारे में प्रत्येक चीज कह या लिख सकता है, शर्त यह है कि यदि कोई ऐसी बात कहे या लिखकर प्रकाशित करे जिसके कहने या प्रकाशित करने का उसे कानून से अधिकार प्राप्त न हो तो एसी दशा मे वह दण्डनीय समझा जायगा, उदाहरण के लिये कोई एसी बात नही कही जा सकती जो किसी व्यक्ति की निन्दा करती हो, झगडा-फिसाद फैलाती हो या धम के विरुद्ध हो। इंगलैण्ड में समाचारपत्रो पर कोई विशेष नियंत्रण नही लगाये गये हैं और वे साधारण कानूनो से ही प्रतिबन्धित हैं।

इसी प्रकार दैहिक स्वतंत्रता और वाक्स्वातन्त्र्य के अधिकार से ही सार्वजनिक सभा करने का अधिकार निकलता है। नागरिक एक सार्वजनिक सभा में एकत्रित हो सकते हैं और साधारण कानून के अनुसार अपने मन की बात कह सकते हैं। दूसरे देशों मे यह अधिकार शासनविधान द्वारा दिया जाता है। इसलिये जब तक शान्ति भग होने का अत्यधिक भय न हो और केवल सन्देह ही न हो तब तक किसी भी सम्मेलन या सभा को होने दिया जाता है और उसे अवैध घोषित नही किया जाता जब तक कि उस सभा या सम्मेलन का उद्देश्य वैध है और सभा करने वाला का अभिप्राय ऐसा है जो किसी कानून के विरुद्ध नही है।

सब व्यक्ति एक ही कानून और एक प्रकार के न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में रहते हैं (All persons amenable to the same courts of law and the same code of Law)—निजी नागरिक अथवा सरकारी कर्मचारी सभी लोगों के लिए एक ही न्यायालय बने हुए हैं। इन की परीक्षायें साधारण कानून के अनुसार ही की जाती हैं इसलिये किसी राजकर्मचारी से कोई भी हानि पहुँचने पर साधारण नागरिक भी किसी भी न्यायालय में उस कर्मचारी के विरुद्ध अभियोग

लगा सकता है। इसके विपरीत फ्रांस और बेलजियम जैसे देशों में सरकारी कर्मचारियों पर लगाये हुए अभियोगों की सुनवाई के लिए अलग न्यायालय हैं जो प्रशासन न्यायालय कहलाते हैं और जिनमें प्रशासन न्याय (Administrative Law) के अनुसार न कि साधारण कानून के अनुसार अपराध की परीक्षा होती है।

विधि शासन का गिरता हुआ सम्मान–(Declining prestige of the Rule of Law) परन्तु इंगलैण्ड में अब कुछ समय से विधि-शासन प्रभुत्व धीरे धीरे घटता जा रहा है। उसके कई कारण हैं। पहला, हाल ही में पार्लियामेंट ने कुछ ऐसे एक्ट, जैसे फैक्टरी एक्ट व एजूकेशन एक्ट पास कर दिये हैं जिनमें राजकर्मचारियों को न्याय करने के अधिकार दे दिये गये हैं। इन एक्टों के अन्तर्गत मामले न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र के बाहर रख दिये गये हैं। उन मामलों को उन विभागों के अधिकार प्राप्त अफसर तय करते हैं। दूसरे, मजदूर संघ जैसे कुछ सार्वजनिक संगठनों में अपने आन्तरिक संगठन में न्यायालयों का हस्तक्षेप सहन न करने की प्रवृत्ति बढती जा रही है। इन सबों की यह मांग है कि उनके अनुशासन के नियमों में न्यायालयों का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये चाहे संगठन के नियमों से किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता कितनी ही प्रतिबन्धित होती हो। तीसरे, कुछ विरासी व्यक्ति ऐसे हैं जिनके काय कानून की दृष्टि में हय है परन्तु समाज के लिये हितकारक हैं। चौथे, प्रतिनिधि द्वारा नियमावली बनाना, अस्थाई आदेश, आर्डर्स-इन-कौंसिल आदि जिनमें से बहुत से वास्तव में कानून नहीं हैं पर कोई न्यायालय इनकी वैधानिकता में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। इस प्रकार इंगलैण्ड में वर्तमान समय में प्रचलित विधि-शासन का सम्मान धीरे-धीरे घटता जा रहा है।

अंग्रेजी न्यायपालिका के अन्य सिद्धान्त (Other principles of English Judiciary)—न्यायशासन के सिद्धान्त के अतिरिक्त अंग्रेजी न्याय-प्रणाली के कुछ दूसरे सिद्धान्त भी हैं जो दूसरी किसी न्याय-प्रणाली में नहीं मिलते। सारा न्याय संगठन इस प्रकार संगठित किया गया है कि सब व्यक्ति उस तक आसानी से पहुँच सकते हैं। न्यायालय दो प्रकार के हैं (माल व फौजदारी) और इन दोनों की सबसे छोटे न्यायालय से प्रारम्भ करके पुनर्विचार न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय तक कई श्रेणियां हैं।

न्यायधीशों की निष्पक्षता और स्वतन्त्रता (Impartiality and Independence of the Judges)—फिर न्यायालयों के न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता व निरपेक्षता का सिद्धान्त है। उन पर कार्यपालिका का किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं रहता न उनके काम में वह हस्तक्षेप कर सकती है परिणाम स्वरूप न्याय अन्धा रह सकता है अर्थात् सब के साथ एकसा न्याय बरता जाता है। जैसा कि ड्रायडन (Dryden) ने कहा है, "न्याय अन्धा है, वह किसी को नहीं जानता।"

एडीसन (Addison) इसका समर्थन करते हुए कहता है—"न्याय दल, मैत्री और रक्त सम्बन्ध की अवहेलना करता है और इसलिये अन्धा माना जाता है।" यह तभी सम्भव है जब कि न्यायाधीशों को तब तक उनके पद से हटाया नहीं जा सकता हो जब तक कि उनके विरुद्ध पक्की तरह से अपराध सिद्ध न हो गया हो। जब तक वे अपने पद पर रहते हैं उनके वेतन में कमी नही की जा सकती। पालियामेंट के दोनों सदनों की प्रार्थना पर ही वे राजा द्वारा हटाये जा सकते हैं। परिणाम यह हुआ जैसा कि लास्की ने संकेत किया है कि "१६८८ की क्रांति के बाद से ब्रिटिश न्यायाधीशों की स्वतंत्रता और निष्पक्षता इस देश में विवाद से परे रही है। कठोर और मूर्ख न्यायाधीश हुए हैं, झक्की भी इस आसन पर बैठे हैं और कभी कभी मि० जस्टिस ग्रन्थम जैसी मूर्तियाँ भी रही हैं जिनका राजनैतिक गन्ध वाले मुकदमों में पक्षपात इतना स्पष्ट रहता था कि वह अत्यन्त आपत्तिजनक हो सकता था। अवकाश प्राप्त करने की आयु निश्चित न होने के कारण ऐसे न्यायाधीश भी हुए हैं जो जनता को यह मालूम होने के बहुत दिनों बाद तक अपने पद पर रहे कि उनकी सामर्थ्य उनके काम के लिये अपर्याप्त है परन्तु फिर भी यह सत्य है कि इगलैण्ड की न्यायपालिका के इतिहास में ऐक्ट आफ सैटिलमेंट से अब तक सिवाय लार्ड मैक्लसफील्ड के किसी भी न्यायाधीश की सत्यतत्परता पर सन्देह नहीं हुआ और पालियामेंट में न्यायाधीशों के पक्षपात व्यवहार के सम्बन्ध में आधी दर्जन बार भी वाद-विवाद के अवसर नहीं आये हैं।"[१]

इंग्लैण्ड में जूरी (पंच) प्रणाली (The Jury System in England)—अंग्रेजी न्यायपालिका की एक दूसरी विशेषता जूरी पंचप्रणाली है जिसका जन्म १३वीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में हुआ। अब की तरह पहले पंच गवाही सुनकर निर्णय न दिया करते थे, वे अपनी जानकारी के आधार पर या परम्परा का सहारा लेकर निर्णय दिया करते थे। बाद में वे गवाह की हैसियत को छोड़ कर वास्तविकता का निर्णय करने वाले बन गये। परन्तु न्यायाधीशों की उन्मुक्ति सन् १६७० में बुशैल के मामले में प्रधान न्यायाधीश वौह्गन (Vaughan) के फैसले से स्थापित हुई। पंच प्रणाली अब माल व फौजदारी दोनों प्रकार के मुकदमों में प्रचलित है। पंच समुदाय में १२ व्यक्ति होते हैं जिनका यह कर्तव्य होता है कि वे वास्तविकता का पता लगावें और न्यायालय के निर्देश के लिये निर्णय देकर सहायता करें। सन् १९३३ तक एक फौजदारी मामले में दो पंच होते थे बड़ा पंच और छोटा पंच। उस साल बड़े जूरी को भंग कर दिया गया जिसमें १२-१३ सदस्य होते थे। पंच समुदाय सारे मुकदमे को

१ लास्की—पार्लियामेंटरी गवर्नमेन्ट इन इंगलैण्ड, पृ० ३६१।

सुनता है और सुनने के बाद वह यह बतलाता है कि वह व्यक्ति जिसपर अभियोग लगाया गया है अपराधी है या नही। न्यायाधीश को बाध्य करने के लिये उनका निर्णय एकमत से होना चाहिये।

न्यायपालिका का संक्षिप्त इतिहास (Brief History of the Judiciary)—सैक्सन-काल में राजा की निर्बलता के कारण गांवो, नगरो व जिलो मे न्यायप्रबन्ध राजा के नियत्रण से परे रहता था और राजा की इन स्थानो के न्यायालय तक पहुँच न थी। जब नौर्मन विजय के पश्चात् नौर्मन राजाओ ने शान्ति स्थापित कर अपने आप को अच्छी तरह प्रतिष्ठित कर लिया तब से राजा की शक्ति का प्रभाव राज्य के कोने-कोने में जमने लगा। पहले-पहल तो राजा ने जहाँ-तहाँ न्यायालय के कामो में हस्तक्षेप करना आरम्भ किया। जब हेनरी प्रथम गद्दी पर बैठा तो उसने न्याय प्रबन्ध को केन्द्रस्थ व सुव्यवस्थित करने का काम अपने हाथ मे लिया। इस ओर कदम बढ़ाने में सबसे पहला काम यह था कि क्यूरिया रेजिस (Curia Regis) के सदस्य भ्रमणशील न्यायाधीशो को घूम-घूम कर अभियोगो की सुनवाई करने के लिये और उनका निबटारा करने के लिये चारो ओर भेजना आरम्भ किया गया जिससे राजा को देश की परिस्थिति के बारे मे जानकारी भी प्राप्त करने का अवसर मिला। जब इन न्यायाधीशो का काम बढा और क्यूरिया रैजिस को राजकीय शासन प्रबन्ध के साथ-साथ न्याय-सम्बन्धी काम भली प्रकार करने में कठिनाई होने लगी तो इस काम को पहले दो, फिर तीन शाखाओ में बांट देना जरूरी पाया गया और प्रत्येक शाखा का काम पृथक्-पृथक् व्यक्तियो को सौंप दिया गया। पर मैग्नम कौंसिलियम (Magnum Concilium) न्याय-सम्बन्धी व दूसरे शासन-सम्बन्धी सब मामलो में सर्वोच्च सत्ता बनी रही और बाद में जब यह पार्लियामेण्ट के रूप में परिणित हो गई तब भी इसके न्याय सम्बन्धी कर्तव्य ज्यो के त्यो बने रहे। इस प्रकार पार्लियामेण्ट के अतिरिक्त कई न्याय सस्थायें स्थापित हो गई जिनमें विभिन्न प्रकार के मुकदमो की सुनवाई होती थी। इस विकास को इस प्रकार आसानी से समझाया जा सकता है —

क्यूरिया रैजिस यानी राजा का न्यायालय

सम्पूर्ण सत्र (मैग्नम कौंसिलियम) | सीमित सत्र

हाउस आफ लार्डस | हाउस आफ कामन्स | प्रिवी कौंसिल (मन्त्रि-परिषद्) | उच्च न्यायालय (हाई कोर्ट)

कौमन प्लीज | किंग्स बेंच | चान्सरी | एक्सचेकर
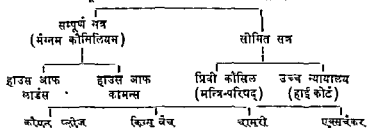
हाउस आफ लार्ड्स और हाउस आफ कामन्स के इतिहास का वर्णन पहले ही किया जा चुका है।

एक्सचेकर क्यूरिया रेजिस का आर्थिक अग था और राजकीय कर आदि से सम्बन्ध रखने वाले सब मुकदमों को निबटाता था।

किंग्स बेंच को हेनरी द्वितीय ने सबसे पहले सन् ११७८ में पृथक् रूप से स्थायी न्यायालय के रूप में स्थापित किया। इसमें क्यूरिया के सदस्यों में से पाँच व्यक्ति न्यायाधीश नियुक्त होते थे और इसके निबटाये हुये मुकदमों की अपील सीधी राजा के पास हो सकती थी।

मैग्नाकार्टा ने समय-समय पर प्रजा के लोगों के पारस्परिक झगड़ों का निबटारा करने के लिये कॉमन प्लीज के न्यायालयों की स्थापना का प्रबन्ध करा दिया था।

उपर्युक्त तीनों न्यायालय क्यूरिया रेजिस से ही उत्पन्न हुये थे। यद्यपि अन्तिम न्यायिक अधिकार अब भी राजा के पास सुरक्षित थे। हेनरी तृतीय के समय में इन तीनों में अलग-अलग न्यायाधीश नियुक्त कर दिये गये, पर इनके केन्द्रीकरण में केवल इसी बात की कमी थी कि सगठन में समानता न थी और इनका अधिकार क्षेत्र स्पष्ट रूप से निर्धारित न किया गया था। इस दोष को दूर करने के लिये पार्लियामेन्ट ने सन् १८७३ का जुडिकेचर ऐक्ट पास किया जिससे और सुधारों के साथ-साथ ये तीनों न्यायालय मिला कर एक न्यायालय के रूप में कर दिये गये। सन् १८८१ के एक दूसरे ऐक्ट से ये हाईकोर्ट उच्च न्यायालय के एक विभाग में मिला दिये गये।

कोर्ट आफ चान्सरी तेरहवीं शताब्दी के अन्त में स्थापित हुई। जब कामन ला (Common Law) न्यायालयों के निर्णयों से लोगों को सन्तोष न था तो वे राजा से अपील करते थे और राजा उनकी अपीलों को चांसलर के पास भेज दिया करता था इस प्रकार कुछ दिनों में चांसलर स्वयं एक पृथक् न्यायालय बन गया। १८७३ के एक्ट ने चान्सरी के न्यायालय को हाईकोर्ट का ही एक विभाग बना दिया।

यद्यपि उपर्युक्त सब न्यायालय क्यूरिया रेजिस से ही उत्पन्न हुये पर फिर भी क्यूरिया बड़े मुकदमों में न्याय का कार्य करती रही क्योंकि अन्य न्यायालय हस्तान्तरित सत्ता का प्रयोग करने के कारण न तो राजा की कौंसिल के अधिकार छीनते थे और न पूरी तरह स्वतन्त्र थे। न्याय के श्रोत के रूप में राजा न्याय के बारे में निर्बाध सत्ता का प्रयोग करता था। जब हेनरी सप्तम सिंहासनारूढ़ हुआ तो उसने कौंसिल की एक समिति बनाई जिसको देश में शान्ति स्थापित करने के हेतु बड़े-बड़े न्यायकारी व दण्ड देने वाले अधिकार दे दिये। यह समिति कोर्ट आफ स्टार चैम्बर के नाम से प्रसिद्ध हुई और निश्चित रूप से राजनैतिक उद्देश्य के लिये इस्तेमाल की गई। बाद में इसका नाम हाई कमीशन कोर्ट पड़ा, पर इसने बड़े कठोर दण्ड दिये जिससे यह बड़ी अप्रिय

हो गई जिस कारण पार्लियामेंण्ट ने सन् १६४१ में इसे तोड़ दिया। पर इससे राजा का अपनी प्रजा की प्रार्थना सुनने का विशेष कर इंगलैण्ड से बाहर रहने वाली प्रजा की प्रार्थना सुनने का अधिकार नहीं छीना गया। इसलिए प्रिवी कौंसिल की जुडिशियल कमेटी की स्थापना हुई जो ब्रिटिश साम्राज्य की सबसे ऊंची अदालत है और साम्राज्य के भिन्न भागों में न्याय का सूत्र है। वह अधिराज्यों, उपनिवेशों और सरक्षित राज्यों (Protectorates) के अपील करने के सर्वोच्च न्यायालय के रूप में काम करती है (दक्षिणी अफ्रीका संघ जैसे कुछ अधिराज्यों ने प्रिवी कौंसिल में अपील करना बन्द कर दिया है।) उसका अधिकार क्षेत्र प्राचीन राजकीय कौंसिल (King-in-Council) का अधिकार क्षेत्र है जो कि समुद्र पार के आधीन राज्यों से अपील सुनती थी। यह १८३३ के जुडीशियल कमेटी एक्ट द्वारा परिनियमित बना दिया गया जिसमें बाद में सशोधन किया गया। वह प्रिवी कौंसिल के सब सदस्यों को मिलाकर बनता है जोकि उच्च न्यायिक पद पर आरूढ़ रह चुके हैं। इनमें सात अपील के लार्ड भी शामिल हैं। लार्ड चांसलर इसका अध्यक्ष होता है। कमेटी की रिपोर्ट पर राजा स्वयं निर्णय देता है, जबकि कमेटी के निर्णय सयुक्त आम्ल राज्य से बाहर साम्राज्य के सब न्यायालयों पर लागू होते हैं। स्वयं कमेटी अपने निर्णयों को मानने के लिये बाध्य नहीं हैं।

इन न्यायालयों के अतिरिक्त विशेषत १९वी शताब्दी में कुछ दूसरे न्यायालय भी स्थापित हुये जैसे कोर्ट ऑफ एडमिरल्टी जिसमें समुद्र में किये गये अपराधों के दण्ड की व्यवस्था होती थी, और धर्म न्यायालय जिसमें राजकीय धर्मसंघ के अधिकार क्षेत्र में आने वाले मामले निपटाये जाते थे। इन सारी न्याय संस्थाओं को एक सूत्र में बांधने के लिए व इनके सगठन और कार्य पद्धति में समानता लाने के लिए ही पार्लियामेण्ट ने सन् १८७३ और १८७९ के बीच न्यायपालिका का पुर्नसगठन किया।

सयुक्त आम्ल राज्य की वर्तमान न्यायपालिका का सगठन नीचे दिये हुये रेखा चित्र से भली प्रकार समझाया जा सकता है—

(१) फौजदारी या दण्ड-न्यायालय—

हाउस आफ लार्ड्स
|
कोर्ट आफ क्रिमिनल अपील
|
क्वार्टर सैशन्स - ऐसाइजेज आफ दी हाई कोर्ट
|
पैटी सैशन्स — स्टाइपेंडरी

(२) माल या व्यवहार न्यायालय—

हाउस आफ लार्ड्स
|
कोर्ट आफ अपील
|
- एसाइजेज हाई कोर्ट
- किंग्ज बेंच विभाग
  - क्वार्टर सेशन्स हाई कोर्ट आफ जस्टिस
  - काउन्टी सेशन्स
- चासरी विभाग
- प्रोबिट, तलाक और एडमिरल्टी विभाग

(३) विशेष मुकदमों के न्यायालय—
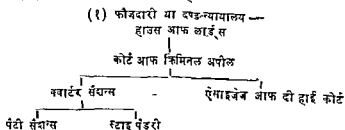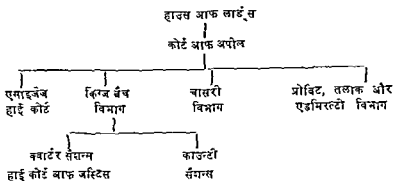
जुडिशियल कमेटी आफ प्रीवी कौंसिल
|
- प्राइज कोर्ट (युद्धकाल के लिये)
- धर्म-न्यायालय
- अधिराज्यों व उपनिवेशों का सर्वोच्च न्यायालय
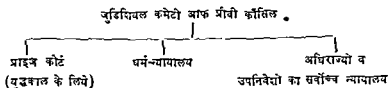
इस प्रकार यह मालूम पड़ता है कि माल व फौजदारी के मुकदमों के लिये इंगलैण्ड में हाउस आफ लार्ड्स ही सर्वोच्च न्याय संस्था है। जब हाउस इस काम के लिए बैठता है तो लार्ड्स चांसलर प्रधान का पद ग्रहण करता और लार्ड्स आफ अपील-इन आर्डिनरी व पीयर जो न्यायाधीशों का पद प्राप्त किये हुये होते हैं या कर चुके होते हैं उनकी उपस्थिति से ही सदन की बैठक हो जाती है चाहे और दूसरे पीयर उपस्थित हों या न हों। अधिराज्यों अथवा समुद्र पार के अन्य उपनिवेशों से अपील सुनने के लिये प्रीवी कौंसिल की न्यायकारी समिति साम्राज्य में सबसे बड़ा न्यायालय है।[1] लार्ड चांसलर भी प्रिवी कौंसिल की जुडिशियल कमेटी का सदस्य होता है और उसके अतिरिक्त वे ही लार्ड्स आफ अपील इन आर्डिनरी भी होते हैं जो हाउस आफ लार्ड्स

---

१ गणतन्त्र बन जाने से भारत प्रीवी कौंसिल के अधिकार क्षेत्र में न रहा। कुछ अधिराज्यों ने भी प्रीवी कौंसिल को अपील करना बन्द कर दिया है।

में सदन के अपील सुनने के लिए बैठने पर उपस्थित रहते हैं। इस कमेटी मे साम्राज्य के जिस देश से मुकदमा आता है वहाँ का एक न्यायाधीश बैठता है।

कोर्ट आफ अपील में एक मास्टर आफ रौल्स और पाँच लार्ड न्यायाधीश होते हैं। इस न्यायालय मे कानून की व्याख्या-सम्बन्धी पुनर्विचार ही नही होता बल्कि घटना सम्बन्धी प्रश्नो पर भी पुनर्विचार होता है।

चासरी विभाग मे पाँच न्यायाधीश होते हैं और चासलर अध्यक्ष होता है। किंग्स बंच विभाग में १५ न्यायाधीश होते हैं और प्राइवेट कोर्ट मे दो। इस प्रकार हाई कोर्ट २३ न्यायाधीशो से बनती है जो कि काम की सुविधा के लिये इन तीन विभागो में बाँट दिया गया है जिनमे अपने-अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत मुकदमो की सुनवाई होती है। प्राय. एक ही न्यायाधीश एक मुकदमे को सुनता है इसलिये हाई कोर्ट २३ न्यायालयो जितना काम करती है।

अपील के सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त विवरण से यह मालूम पड़ता है कि इगलैण्ड मे न्यायपालिका में लार्ड चासलर सबसे महत्वशाली व्यक्ति है क्योकि वह अपने पद के कारण ही बहुत से न्यायालयो का अध्यक्ष रहता है। इसके अतिरिक्त वह मन्त्रिपरिषद् का सदस्य भी होता है। उसका कानूनी ज्ञान बड़े ऊँचे दर्जे का होता है। उसको न्यायमन्त्री कहा जा सकता है क्योंकि वह परिषद् के साथ ही साथ अपना पद ग्रहण और पदत्याग करता है। वह निश्चय ही अपने दल का सदस्य होता है पर न्याय के मामलो म कानून का पक्का समर्थक बना रहता है।

नीचे दर्जों की अदालतो के लिये काउण्टी कोर्ट होते है जिनमे ५० पौंड तक के मुकदमो का निवटारा होता है यद्यपि किन्ही में १०० पौण्ड तक के मुकदमे भी सुने जाते हैं। जिन मुकदमो मे २० पौण्ड से अधिक का मामला होता है उनको अपील हाई कोर्ट मे की जा सकती है। ५० पौण्ड से अधिकवाले मुकदमो की प्रथम सुनवाई हाई कोर्ट में ही होती है।

एसाइजेज (Assizes)—वे भ्रमणशील न्यायालय हैं जिनके न्यायाधीश वर्ष मे तीन या चार बार निश्चित नगरो मे जाकर माल व फौजदारी के मुकदमे सुनते और तय करते है। इस काम के लिये काउण्टीकोआठ जिलो या सरकिटो (Circuits) मे बाँट दिया जाता है। कौंसिलो का काम करने के लिये बैरिस्टर भी भ्रमण पर जाते हुए न्यायधीशो के साथ लग जाते हैं। ये न्यायालय बड़े-बड़े अपराधो के मुकदमों की परीक्षा करते हैं। दूसरे छोटे मुकदमे क्वार्टर सैशन्स (Quarter Sessions) कहाने वाले न्यायालयो मे सुने जाते हैं। इनमें उस काउण्टी के दो या दो से अधिक मजिस्ट्रेट न्याय करते हैं। महत्वपूर्ण नगरो के अपने क्वार्टर सैशन्स कोर्ट होते हैं।

जैसे हमारे देश में कुछ उच्च व्यक्ति अपने नगर या जिले में अवैतनिक

मजिस्ट्रेट (Honorary Magistrate) बनाये जाते हैं ऐसे ही इंगलैंड में जस्टिसेज आफ दी पीस (Justices of the Peace) नियुक्त किये जाते है। वे कोई वेतन नही पाते और प्राय जीवन भर इस पद को ग्रहण किये रहते हैं। वे अपने नगर के छोटे मुकदमे सुनने और अपनी बुद्धि व सद्भावना के सहारे अधिकतर असाधारण सन्तुलन, उद्योगशीलता और प्रभावोत्पादकता के साथ उनको तय करते है।

सब फौजदारी मुकदमों मे पंच-प्रणाली अपनायी जाती है। यद्यपि माल के मुकदमों में ऐसा नही किया जाता। प्राय २० पौण्ड से अधिक के मुकदमे में पाँच पंचो की सहायता ली जाती है। न्यायाधीश जन्म भर के लिये नियुक्त किये जाते हैं और वे अपने काम में स्वतन्त्र व सुरक्षित रहते हैं। इंगलैण्ड-में न्यायालय परम्परा और व्यवहार से लिये हुए सर्वसाधारण कानून (Common Law) को सबसे अधिक महत्व देते है। इसी कारण अंग्रेजी न्याय व्यवस्था सीधी सादी है। इन सब बातो के कारण अँगरेजी न्यायपालिका राजनैतिक प्रभावों से परे और स्वतन्त्र है। यह याद रखने की बात है कि जहाँ जहाँ अंग्रेजो ने राज्य किया है वहाँ अंग्रेजी न्यायपालिका के सिद्धान्त अपना लिये गए है। भारत में भी अंग्रेजी न्याय व्यवस्था के सिद्धान्त अपना लिये गए हैं।

पाठ्य-पुस्तके

Blackstone–Commentaries.
Carter, A. T–History of the English Courts (1935 Ed.)
Dicey, A.V.–Law of English Constitution (1939 Ed.)
Finer, H.–Theory and Practice of Modern Government (Selected portions).
Greaves, H.R.G.–The British Coustitution, pp. 211–221.
Holdsworth–History of English Law.
Laski, H.J.–Parliamentary Government in England, ch. VII.
Marriot, J. A R–English Political Institutions, ch. XI.
McIlwain, C.H.–High Court of Parliament and its Supermacy (1910).
Potter, C. H.–Historical Intorduction to English Law and its Background (1932).
Poole, A.L.–English Constitutional History (9th Ed) pp. 130–161, 726–743.

अध्याय १२

अंग्रेजी स्थानीय शासन

(English Local Government)

"स्वतन्त्र राष्ट्रो की शक्ति उनके नागरिको की स्थानीय सभाओ मे रहती है। विज्ञान के लिए जो काम प्रायमिक शिक्षालय करते है वही काम नगर सभाये स्वतन्त्रता के लिये करती है। ये स्वतन्त्रता को जनता तक पहुँचाती हैं, वे मनुष्यो को यह सिखाती है कि इस स्वतन्त्रता को किस प्रकार प्रयोग व भोग किया जाय। कोई राष्ट्र स्वतन्त्र सरकार भले ही स्थापित कर ले पर स्थानीय शासन सस्थाओ के बिना उसमे स्वतन्त्रता की भावना नही रह सकती।" —टोकविलि

स्थानीय शासन का प्रयोजन—स्थानीय शासन प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति और सामाजिक नियन्त्रण तथा शक्ति और विकास के बीच एक समझौता है। जिस श्रेणी मे सघ शासन, अनुपाती प्रतिनिधित्व आदि की युक्तियाँ आती हैं उसीमें इसकी भी गिनती है। अभेदकारी समूह के अत्याचारो से, एकता बनाने वाली प्रथाओ मे परम्परात घृणा से और व्यक्तियो तथा समूहो की मौलिकता के नाश से इनके द्वारा ही बचत हो सकती है। स्थानीय सरकारी सस्थाओ मे भाग लेकर लोग स्वायत्त शासन की कला सीखते है, उन्हे नागरिकता का व्यावहारिक प्रशिक्षण मिल सकता है यही प्रशिक्षण ही बहुत बार राष्ट्रीय स्तर पर एक उच्च जनतन्त्र के निर्माण की ओर ले जाता है। स्थानीय शासन के बिना जनता में नागरिक भावना जाग्रत नही हो सकती और राष्ट्र की वही प्राकृतिक स्थिति होगी जिसका वर्णन हौब्स ने किया है। यह बात अब सब मानने लग गये है कि नगर हो या ग्राम, जिला हो या प्रान्त स्थानीय शासन जितना ही अच्छा होगा उतने ही वहाँ के निवासी सुखी व सम्पन्न रहेगे। इसीलिये ससार के सब सभ्य देशो में (भारतवर्ष को छोडकर) शासन का बहुत बडा भाग राजधानियो में बैठी हुई सरकार द्वारा न होकर सारे देश में फैली हुई स्थानीय शासन सस्थाओं द्वारा सम्पादित होता है। ये ही वे सस्थाये है जो एक स्वतन्त्र राष्ट्र की शक्ति का आधार है।

अंग्रेजी स्थानीय शासन का इतिहास—"स्थानीय शासन उतना ही प्राचीन है जितनी कि पहाडियाँ", सर सिडनी वैब का यह कथन इगलैण्ड में स्थानीय स्वायत्त शासन पर लागू हो सकता है जो कि ससार भर के स्थानीय लोकतन्त्र की जन्मदात्री

है। ससार के सब देशो में अग्रेजी म्यूनिसपल सस्थाओ का इतिहास सबसे अधिक लम्बा और क्रमिक है फिर "स्थानीय शासन की अग्रेजी व्यवस्था एक बडे लम्बे ऐतिहासिक विकास का फल है जो कि अधिकतर अरक्षित और बिना योजना के रहा है।"[1] सैक्सन काल में शायर, हण्ड्रेट, नगर (Township) व बरो थे जो स्वतन्त्र राज्य थे। नार्मन विजय के पश्चात् शायर काउण्टी मे, नगर मैनरो मे और बरो सनद प्राप्त म्यूनिसिपैल्टियो अर्थात् नगर पालिकाओ में परिणत हो गये। नार्मनो ने इग्लैण्ड को एक सम्राट के आधीन एकता के सूत्र में बाँध दिया। दो हण्ड्रेट तो समाप्त ही हो गये। इसी बीच मे पैरिश का जन्म हुआ और उसने नगरो (Townships) का स्थान ले लिया प्रारम्भ में इसकी स्थापना का अभिप्राय धर्म सघ के मामलो की देखभाल करना था। १८वी शताब्दी के अन्त तक केवल काउण्टी (County) बरो (Borough) और पैरिश (Parish) ही जीवित रह गये। काउण्टी का शासन जस्टिस आफ दी पीस (Justice of the Peace) करते थे और बरो का शासन उसका फ्रीमैन (Freeman) करता था। बरो और पैरिश का शासन सगठन लोकतन्त्रात्मक था और लोग अपने अफसरो को स्वय ही चुनते थे। टयूडर और स्टुअर्ट राजाओं की निरकुशता का उन पर कोई हानिकारक प्रभाव नही पडा। पर १८वी शताब्दी के अन्त मे औद्योगिक क्रान्ति ने सारी परिस्थिति को बदल डाला। गाँव के रहने वाले शहरो में जाकर रहने लगे जहाँ पर शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा, निर्धनो की देखभाल आदि की समस्याये पेचीदा होने लगी। पार्लियामेण्ट ने पुरानी सस्थाओ को तोन मिटाया पर नई सस्थाये बना दी जैसे स्थानीय सुधारक जिले जो स्वास्थ्य आदि सार्वजनिक सुविधाओ की देखभाल करते थे और सारे देश में पूअर ला युनियनें (Poor Law Unions) आदि। इसका परिणाम यह हुआ उनका अधिकार क्षेत्र पृथक् पृथक् न होकर एक दूसरे से मिल गया, यहाँ तक कि इन सस्थाओ की सख्या सन् १८३३ मे बढा कर,२७,००० हो चुकी थी।

१९वी शताब्दी में स्थानीय शासन का सुधार—इन कठिनाइयो के कारण विशेषकर उदार आन्दोलन (Libral movement) के उठने से पार्लियामेण्ट ने स्थानीय शासन-सस्थाओ को नया रूप देकर उनमें सुधार करने का काम अपने हाथ में लिया। सबसे पहला कदम सन् १८८५ का कौरपोरेशन ऐक्ट था जिससे बरो (नगरो) को स्थानीय शासन सम्बन्धी वह प्रणाली मिली जो अब तक बिना परिवर्तन के ज्यो की त्यो चलती आ रही है। सन् १८८८ के लोकल गवर्नमेण्ट ऐक्ट से काउण्टी के शासन का पुनर्सगठन किया गया और उनको वे अधिकार सौप दिये गये जो तब से पहले जस्टिसेज आफ दी पीस (Justices of the Peace) को प्राप्त थे। उसके

१. मुनरो,—"गवर्नमेण्ट आफ यूरोप" १९५४ का सस्करण पृष्ठ २७३।

पश्चात् सन् १८९४ के डिस्ट्रिक्ट एण्ड पैरिश कौंसिल ऐक्ट से उस समय तक जो छोटे छोटे विशेष जिले चलते आ रहे थे उनको तोड दिया गया। वर्तमान शताब्दी में तीन कानून पास किये गए हैं। १९३३ के स्थानीय सरकार अधिनियम (जो कि अब भी मुख्य अधिनियम कहलाता है) ने स्थानीय अधिकारियो के लिये एक सामान्य कोड बना दिया, और १९३६ के सार्वजनिक स्वास्थ्य और निवास अधिनियम ने उनके कामो को और भी स्पष्ट कर दिया। इनमें से किसी भी अधिनियम ने स्थानीय सरकार के मूल ढाचे को प्रभावित नहीं किया है। १९५० के स्थानीय सरकार अधिनियम ने स्थानीय सरकार के क्षेत्रो और अधिकारो के परिवर्तन के लिये और निरीक्षण के लिये व्यवस्था स्थापित की है, और काउण्टी सेवाओ को कुछ जिम्मेदारी सौंपने का प्रबन्ध किया है तथा स्थानीय सरकार की आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन किया है।

वर्तमान प्रणाली, विकास का परिणाम—इस प्रकार यह जाहिर है कि वर्तमान प्रणाली क्रमिक विकास का फल है। यह किसी क्रान्ति के फलस्वरूप प्राप्त नही हुआ है। इसकी स्थापना पार्लियामेण्ट के किसी एक ऐक्ट से न होकर इसको कई ऐक्टो के बाद अपना वर्तमान रूप प्राप्त हुआ है। परन्तु यह सब होते हुये भी इस विषय में बहुत प्राचीन काल से यही प्रवृत्ति रही कि शासन क्षेत्र में स्थानीय स्वतन्त्रता की रक्षा अधिकाधिक वृद्धि की जाय। यूरोप में इसके विपरीत यह प्रयत्न किया गया कि जहा तक हो सके शासन का केन्द्रीकरण किया जाय। "अमरीका की स्थानीय शासन-कर्मचारियों पर अविश्वास रख कर कानून की सहायता से शासन के दोष मिटाने की प्रवृत्ति के विपरीत अंग्रेजी शहर और राष्ट्र की यह विशेषता रही है कि नागरिको के प्रतिनिधियो पर जनमत का दबाव डाल कर दोषो को सुधारने का प्रयत्न किया गया।"[1]

स्थानीय शासन के वर्तमान क्षेत्र—इस समय इंगलैण्ड में स्थानीय शासन के पाँच मुख्य क्षेत्र हैं . पैरिश (Parish), रूरल डिस्ट्रिक्ट (Rural District), अरबन डिस्ट्रिक्ट (Urban District), बरो (Borough) और काउण्टी (County)। अंग्रेजी स्थानीय शासन के सम्बन्ध में यह जानने योग्य बात है कि "अंग्रेजी स्थानीय शासन कानूनी है विशेषाधिकार से नही है। कोई भी स्थानीय शासन सस्था या अधिकारी व्यक्ति कानूनी अधिकारो के बिना कोई कार्य नही कर सकता। उसकी इच्छा कानून की सीमा से प्रतिबन्धित रहती है। दूसरे अंग्रेजी स्थानीय शासन स्वतन्त्र है, श्रेणी बद्ध नही। आम तौर से प्रत्येक इकाई को अपने अधिकार क्षेत्र में इच्छानुसार काम करने की स्वतन्त्रता है, केवल शर्त यह है कि उसकी एक कार्यवाही सद्भावना

---

१. जो० एस० ग्रिफिथ; माडर्न डेवलपमेन्ट आफ सिटी गवर्नमेण्ट Vol II (१९२७), पृ० ४३०।

से होनी चाहिये।"[1] आजकल निम्नलिखित पांच प्रकार के स्थानीय शासन क्षेत्र हैं जिनमें से प्रत्येक स्थानीय सत्ता के आधीन है, जो एक कानूनी व्यक्ति के रूप में सगठित है, समझौते करती है, मुकदमे चलाती है और उस पर मुकदमे चलाये जा सकते हैं।

रूरल पैरिश (Rural Parish)–एक ग्रामीण जिले का सबसे छोटा भाग एक पैरिश कहलाता है। पैरिश कई प्रकार के हैं नागरिक (civil) पैरिश, धर्म पुजारियों के पैरिश और भूमिकर पैरिश। स्थानीय शासन मे हमारा अभिप्राय केवल नागरिक पैरिश से ही है। नागरिक पैरिश के भी दो विभिन्न रूप हैं, एक ग्रामीण दूसरा नागरिक। दूसरा तो अरबन डिस्ट्रिक्ट के शासन में मिलकर विलीन हो गया पर पहला अभी तक चलता चला आ रहा है। इसका शासन सगठन निजी है। ग्रामीण पैरिश छोटे बडे कई प्रकार के हैं। सबसे बडे पैरिश की जन सख्या २७,००० और सबसे छोटे की चार है। एक पैरिश कौंसिल के आधीन सबसे बडा क्षेत्र ९९ वर्ग मील और सबसे छोटा ११ एकड है। जिस ग्रामीण पैरिश में १०० निवासी से अधिक हैं वहाँ साधारणतया एक पैरिश कौंसिल रहती है, जहाँ १०० से कम लोग रहते हैं ऐसे एक से अधिक पैरिश को मिला कर उनके लिये एक पैरिश कौंसिल बना दी जाती है। पैरिश कौन्सिल में ५ से कम व १५ से अधिक सदस्य नहीं होते। इसकी अवधि एक वर्ष होती है और सदस्यो का निर्वाचन मार्च में पैरिश के वार्षिक सम्मेलन में होता है। वोट हाथ उठा कर दिये जाते हैं। प्रतिवर्ष कौंसिल की कम से कम तीन बैठकें अवश्य होनी चाहियें। पैरिश कौंसिल के अधिकार विभिन्न प्रकार के और बहुत कुछ विस्तृत हैं परन्तु उन पर डिस्ट्रिक्ट कौंसिल और काउन्टी कौंसिल इन दो उच्चाधिकारी सस्थाओं का नियन्त्रण रहता है। वे पैरिश सभाभवन, पुस्तको आदि का इन्तजाम कर सकती है। वे निम्न शिक्षा अधिकारी के रूप मे कार्य करती हैं और शिक्षा, सार्वजनिक निर्माण, उद्यान आदि का प्रबन्ध भी कर सकती है। पैरिश कौंसिल के न होने पर पैरिश सम्मेलन ही काम करते हैं। पैरिश के हिसाब-किताब की जाँच स्वास्थ्य विभाग के डिस्ट्रिक्ट आडीटर करते हैं। पैरिश के कर की दर आमतौर से एक पौण्ड में ३ पैंस तक सीमित होती है।

(२) रूरल डिस्ट्रिक्ट (Rural District)—जितने ग्राम-पैरिश हैं वे सब रूरल डिस्ट्रिक्ट अर्थात् ग्राम-जिलो में सगठित हैं। इन ग्राम जिलो की अपनी-अपनी प्रतिनिधिक कौंसिलें हैं। इनका क्षेत्रफल भी तीन से ४५० वर्गमील तक होता है जिसमें सबसे बडा १६० और सबसे छोटा ८० वर्गमील है। उनकी जनसख्या १५००

१. एडवर्ड जेन्कस, आउट लाइन आफ इगलिश लोकल गवर्नमेण्ट; (१९१७) पृष्ठ १४।

२. केट रोजेनबर्ग; हाउ दि रेट पेयर इज गवर्न्ड; (१९३०) पृष्ठ २८-२९।

से ६२,००० तक है। इन कौसिलो मे ३०० निवासियो वाले पैरिश का एक प्रतिनिधि होता है। इन प्रतिनिधियो का निर्वाचन तीन साल के लिये होता है और सब प्रतिनिधियो मे एक तिहाई प्रति वर्ष अपने पद से हट जाते हैं और उनके स्थान पर नये प्रतिनिधियो का चुनाव हो जाता है। चुनाव शलाका पद्धति (Ballot) द्वारा होता है। कौसिल का सभापति जस्टिस आफ दी पीस भी होता है। कौसिल के सदस्य अपने में से किसी व्यक्ति को या बाहर के व्यक्ति को सभापति चुनते हैं। काउण्टी-कौसिल की स्वीकृति से रूरल डिस्ट्रिक्ट का प्रतिवर्ष एक तिहाई के स्थान पर तीन साल मे पूरा चुनाव हो सकता है। कौसिल की एक महीने में एक बैठक अवश्य होनी है। अधिकतर काम कौसिल की समितियाँ करती हैं। सफाई, जल, जन स्वास्थ्य आदि का प्रबन्ध, छोटी सडको की देखभाल और मरम्मत, कुछ लाइसेन्सो (अनुज्ञापत्र) का देना आदि काम ये कौसिलें करती हैं। उद्योग के बढने से इन सस्थाओ के कर्तव्य और महिमा कम होती जा रही है, और कम होती जायगी। यदि कौसिलें अपनी कम से कम कार्यवाही को पूरा करने मे बेपरवाही दिखाती हैं तो केन्द्रीय सरकार उन्हे डॉट कर या उनके हिसाब की जाँच कराकर या कानून के द्वारा उनके काम में हस्तक्षेप कर सकती है। डिस्ट्रिक्ट कौसिल का क्षेत्र बडा विस्तृत है यदि वह स्थानीय विकास के लिये एडौप्टिव एक्ट्स को लागू करे और उस धन से लाभ उठायें जो कि कुछ शर्तों पर उसको सरकार से मिल सकता है।

(३) **अरबन डिस्ट्रिक्ट (Urban District)**—नगर जिलो की कौसिल बनावट में व अधिकार में ग्रामीण जिलो की कौसिल से लगभग मिलती जुलती हैं। किन्तु ग्राम जिलो का क्षेत्रफल नगर-जिले से बहुत अधिक होता है। नगर मे जितने पैरिश (मोहल्ले) होते हैं उनका कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य नगर जिले के कौसिल का सदस्य होता है। कौसिल को छोटी सडकों, मकानो, सफाई, जनस्वास्थ्य और लाइसेन्स देने आदि के सम्बन्ध में विविध प्रकार के स्थानीय अधिकार प्राप्त होते हैं। नगर जिले व बरो में कोई विशेष अन्तर नही होता केवल म्यूनिसिपल कारपोरेशन ऐक्ट के अन्तर्गत उसे बरो का रूप नही दिया होता, बरो और नगर जिले की कौसिल का ढाँचा एक समान ही होता है। प्रत्येक बरो नगर जिला अवश्य होता है।

(४) **काउण्टियाँ (Counties)**—सब ग्राम व नगर जिलो को मिला कर एक काउण्टी बनती है जो कि स्थानीय शासन की सब से बडी इकाई है। यह दो प्रकार की होती है—ऐतिहासिक और प्रशासकीय। ऐतिहासिक काउण्टी (Historical Counties) अथवा भौगोलिक काउण्टी की सीमा प्राचीन काल से निश्चित है। ये न्याय प्रबन्ध की इकाई है। ऐसी ६२ काउण्टी इस समय वर्तमान हैं। वे पार्लियामेण्ट के चुनाव के लिये निर्वाचन क्षेत्र का काम देती है। ऐसी प्रत्येक काउण्टी के लिये एक

अवैतनिक लार्ड लेफ्टिनेण्ट और एक शैरिफ होता है जिनका कोई काम नही होता। इन काउण्टियो में कोई कौसिल या और कोई ऐसा अफसर नही होता जो इनका प्रबन्ध करे। प्रशासक काउण्टी (Administrative County) "एक निगमित क्षेत्र" है। उसका प्रशासन कौसिल द्वारा होता है जिसमे सभापति एल्डरमैन (Alderman) और कौसिलर्स होते हैं। कौसिलर्स चुने हुए होते है और उनका चुनाव करने के लिये सारी काउण्टी को निर्वाचन क्षेत्रो में बाट दिया जाता है और प्रत्येक क्षेत्र से एक प्रतिनिधि चुना जाता है। इसलिए जनसख्या के अनुसार प्रत्येक काउण्टी के कौसिलर्स को सख्या भिन्न भिन्न है। काउण्टी में ये कौसिलर्स अपने में से अपनी सख्या के तीसरे हिस्से के बराबर एल्डरमैन चुन लेते है। रिक्त स्थानो को पूर्ति फिर चुनाव से होती है। ये एल्डरमैन बाहर के व्यक्ति भी चुने जा सकते है आमतौर से कौसिलर्स तीन साल तक और एल्डरमैन ६ साल तक अपने पद पर रहते है। हर तीसरे साल एल्डरमैन में से आधे रिटायर हो जाते है। परन्तु दोनो को मत देने का अधिकार एक समान है। दोनो मिल कर अपने मे से किसी एक को या बाहरी व्यक्ति को अपना सभापति चुनते है। काउण्टी कौसिल साल मे कम से कम चार बार अपनी सभा करती है। इसके अधिकार विस्तृत है और विभिन्न प्रकार के काम इसको करने पडते है। ग्राम-जिलो की कौसिलो के काम की देख भाल करती है। बड़ी सडको की मरम्मत, पुलो की मरम्मत, आश्रमो, बाल-अपराधियो के चरित्र सुधारने के स्कूल व औद्योगिक स्कूलो को खोलना, पुलिस का इन्तजाम करना, काउण्टी के भवनो की देख-रेख करना आदि काम इस कौसिल को करने पडते है। शिक्षा का काम केवल इसी को करना पडता है, वृद्धावस्था की पेंशन का भी काम यही करती है। यही कर लगा सकती है। इसका अधिकाश काम इगलैण्ड की प्रसिद्ध और आदर्श व्यवस्था द्वारा होता है। प्रत्यक सेवा के लिये एक स्थायी समिति होती है जो विस्तार पूर्वक सब बातो का छान-बीन करती है और प्रबन्ध की योजना बनाती है। बारह स्थायी समितियां होती है जिनमें से प्रत्यक को इस प्रकार के कामो की देखभाल दी जाती है जैसे वित्त, शिक्षा, सार्वजनिक सहायता, मकान, खेती इत्यादि। प्रत्येक कौसिल अन्य कामो जैसे सड़को और पुलो तथा बाटो और नापो की देखभाल के लिये अन्य समितियां नियुक्त कर सकती है। इन समितियों के अतिरिक्त स्थायी कर्मचारियो द्वारा भी काम होता है। ये कर्मचारी पक्ष पद्धति के आधार पर नियुक्त नही होते। इनमें एक क्लर्क, एक खजान्ची, एक पर्यवेक्षक, एक शिक्षा सचालक और एक बाटो तथा नापो का निरीक्षक तथा एक स्वास्थ्य अधिकारी शामिल होता है। कौसिल इनको स्वय नियुक्त करता है परन्तु ये सिविल के अन्तर्गत नही गिने जाते। कौसिल स्वास्थ्य अफसर को छोडकर इनमें से किसी को भी अपने पद से हटा सकती है। इगलैण्ड का स्थानीय शासन प्रबन्ध

बहुत उत्तम है और अमरीका की अपेक्षा बहुत अधिक अच्छा है। इसका एक कारण यह है कि अमरीका की तरह इगलैण्ड मे स्थानीय शासन कर्मचारियो को अपने पदो पर बने रहने के लिए प्रति वर्ष राजनीति के पचडे मे पडने की आवश्यकता नही होती क्योकि उनकी नियुक्ति योग्यता के आधार पर होती है और वे स्थायी रूप से अपने पद पर सुरक्षित रहते हैं।

५—नगर बरो (Urban Boroughs)—नगरो में बरो सबसे अधिक महत्वशाली है। प्रत्येक बरो एक शाही चार्टर से स्थापित हुआ होता है जो कि बडी पेचीदा और लम्बी कार्यवाही के पश्चात् प्रदान किया जाता है। चार्टर लेने के लिये निम्नलिखित बातें पूरी करनी पडती हैं :—

(१) जिस नगर जिला को यह चार्टर लेना हो वहाँ के निवासी या वहाँ की कौंसिल स्वम इसके लिये एक प्रार्थना पत्र भेजती है।

(२) इस प्रार्थना का नोटिस जनता की जानकारी के लिये लन्दन गजट में छाप दिया जाता है।

(३) इस प्रार्थना के विरोध में यदि किसी को कुछ कहना होता है तो उसके लिये एक मास का समय दिया जाता है।

(४) तब एक कमिश्नर जाच करता है और अपनी रिपोर्ट देता है।

(५) यह रिपोर्ट स्वास्थ्य मत्रालय के पास आलोचना और सलाह के लिये भेज दी जाती है।

(६) चार्टर का मसविदा, विस्तृत योजना और एक मानचित्र तैयार किया जाता है।

(७) तब प्रीवी कौंसिल से उन्हें स्वीकृत कराया जाता है।

(८) यदि चार्टर की प्रार्थना का किसी ने विरोध किया हो तो चार्टर देने के निर्णय को पार्लियामेण्ट से समर्थन कराने की भी आवश्यकता पडती है।

चार्टर इसलिये मांगा जाता है क्योकि बरो को चार्टर के मिल जाने से कई सुविधायें प्राप्त हो जाती हैं। बरो नगर की कारपोरेशन है जिसका शाश्वत उत्तराधिकार (Perpetual Succession), निजी मुद्रा (Seal), नगर-भवन, विशिष्ट चिन्ह और दूसरी परिचायक विभूतियाँ होती हैं। नगर जिले की अपेक्षा बरो को यह विशेष सुविधा प्राप्त रहती है कि वह अच्छे शासन के हित मे दिये हुये सामान्य अधिकार के बल पर उप विधि बना सकता है। बरो को स्थानीय शासन सस्थाओ में ऊँचा स्थान प्राप्त रहता है। यह कहा जाता है कि जब किसी नगर निवासी बरो के रूप मे सगठित हो जाते हैं तो वे स्थानीय शासन में अधिक दिलचस्पी लेते हैं। बरो में

कौंसिल अधिक बड़ी होती है इसलिये अधिक व्यक्ति शासन में भाग ले सकते हैं। एक *बरो का बड़ा ऐतिहासिक महत्व है जैसा कि नगर-जिले का नहीं होता।* कुछ हजार की आबादी के छोटे कस्बों से लेकर विशाल औद्योगिक नगरों तक २९२ भिन्न-भिन्न आकार के बरो हैं।

बरो का शासन—बरो का प्रबन्ध एक कौंसिल की सहायता से होता है। बरो के अधिकार कामन ला, कारपोरेशन ऐक्टों और पार्लियामेण्ट के स्थानीय शासन *सम्बन्धी या वैयक्तिक* कानूनों से प्राप्त होते हैं। इस अन्तिम श्रोत से अधिकार लेने में बड़ा समय और धन नष्ट होता है। कुछ अधिकार केन्द्रीय सरकार के विभिन्न शासन विभागों के आदेश से भी मिल जाते हैं जिनको पार्लियामेण्ट इन आदेशों के देने की अनुमति दे चुकी है। इनके कारण नगरपालिकाओं (Municipalities) के अधिकारों में समानता न रह कर विभिन्नता आ जाती है। बरो कौंसिल के सदस्य तीन वर्ष के लिये निर्वाचित होते हैं। निर्वाचन के लिये बरो को वार्डों में बाँट दिया जाता है और गुप्त शलाका (Secret Ballot) द्वारा निर्वाचन होता है। यह निर्वाचन पक्ष-प्रणाली (Party System) पर आधारित नहीं समझा जाता, फिर भी *पक्षबदी का असर आये बिना नहीं रहता। कौंसिल के सदस्यों का निर्वाचन* हो जाने के पश्चात् ये सदस्य आपस में या बाहर से अपनी संख्या के छठे भाग के बराबर संख्या में व्यक्तियों को चुनते हैं जो एल्डरमैन (Alderman) कहलाते हैं। ये छः साल के लिये चुने जाते हैं और उनमें से आधे तीन वर्ष बाद हट जाते हैं। कौंसिलर्स और एल्डरमैन दोनों के अधिकार समान हैं परन्तु अधिक अनुभवी होने के कारण नीति-निर्णय में एल्डरमैन का अधिक प्रभाव रहता है। एल्डरमैन और कौंसिलर्स मिल कर एक व्यक्ति को चुनते हैं जो मेयर (Mayor) कहलाता है। उसका निर्वाचन एक साल के लिये होता है पर एक ही व्यक्ति पुनर्निर्वाचन के लिये फिर खड़ा हो सकता है। प्राय प्रति वर्ष एक नया व्यक्ति ही चुना जाता है क्योंकि यह पद प्रतिष्ठा व सम्मान का है। मेयर नाम मात्र के लिये नगर का अध्यक्ष रहता है। वह प्रधान नागरिक होता है और उत्सवों पर नगर का प्रतिनिधित्व करता है। वह कार्यकारी प्रधानाधिकारी नहीं होता। वह किसी नयी नीति को कार्यान्वित करने के लिये कौंसिल पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिये या किसी पक्ष का प्रतिनिधित्व करने के लिये निर्वाचित *नहीं किया जाता है। वह उसकी बैठकों में सभापति का आसन ग्रहण करता* है और उसकी नीति को कार्यान्वित करने में प्रमुख भाग लेता है। डा० शॉ (Shaw) के शब्दों में वह एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसने कौंसिल और एल्डरमैन के रूप में योग्यता व उत्साह पूर्वक अपने नगर की सेवा कर चुका है। वह बरो के अफसर या कर्मचारियों की नियुक्ति भी नहीं करता। वह केवल एक आडीटर (Auditor)

अर्थात् लेखा परीक्षक और अस्थायी नगर लेखक की ही नियुक्ति कर सकता है। वह आय व्यय का लेखा (Budget) बनाने में कोई विशेष काम नहीं करता। उसके दो वोट होते हैं। कौंसिल अपना काम स्थायी समितियों द्वारा करती है। प्रत्येक नगर में ६ से १२ तक समितियाँ हो सकती हैं। कानून से इनके सदस्यों की संख्या निर्धारित नहीं होती पर स्थायी आदेशों से यह संख्या प्रतिबन्धित है। विशेष विषयों पर विचार करने के लिये भी अलग समितियाँ बना दी जाती हैं। बरो कौंसिल और काउण्टी कौंसिल की मिली जुली समितियाँ होती हैं। ये समितियाँ बड़ा काम करती हैं परन्तु वे परामर्श ही दे सकती हैं इनको अन्तिम निर्णय का अधिकार नहीं होता यद्यपि वे नगर के शासन का सारा काम करती हैं। समितियों में आपस में मतभेद होने पर कौंसिल अपने निर्णय से मतभेद को मिटाती है। निरीक्षण व सन्तुलन की कोई व्यस्था नहीं है।

कौंसिल के अधिकार—कौंसिल को उप-विधियाँ (Bye-Laws) बनाने का अधिकार रहता है जिनमें से कुछ के लिये केन्द्रीय सरकार के किसी विभाग की स्वीकृति लेनी पड़ती है। अर्थ सम्बन्धी मामलों में कौंसिल ही प्रमुख अधिकारी है। बरो के फंडो की रक्षक यही कौंसिल है। कुछ खर्चे के लिए कौंसिल को केन्द्रीय सरकार के स्वास्थ्य विभाग की अनुमति लेनी पड़ती है और कुछ मामलों के लिये कौंसिल को अनिवार्य रूप से खर्चा करना पड़ता है। यदि बरो के पास उपर्युक्त खर्चे के लिये पर्याप्त फण्ड नहीं होता तो उसे स्थानीय टैक्स लगाने का अधिकार रहता है। प्रति-वर्ष सब विभिन्न समितियाँ पदाधिकारियों से परामर्श कर अनुमान से अपने वार्षिक व्यय का लेखा तैयार करती हैं। तब आर्थिक समिति उसकी परीक्षा कर आवश्यकता-नुसार उसमें परिवर्तन करती है और उसे बजट का रूप देती है जो कौंसिल के सामने रखा जाता है और साधारण बहुमत से स्वीकृत हो जाता है। यद्यपि कर्ज लेने का अधिकार पार्लियामेण्ट पृथक्-पृथक् बरो की योग्यतानुसार प्रदान करती है किन्तु फिर भी केन्द्रीय सरकार इस कार्य के लिये कुछ नियम बना देती है। कौंसिल के प्रबन्ध कार्य के अन्तर्गत सड़कों का बनवाना, पानी का इन्तजाम, सार्वजनिक स्वास्थ्य, मनो-विनोद की सुविधायें देना, उद्यान, शिक्षणालयों व दूसरे सार्वजनिक भवनों का बनवाना, लाइसेन्सों का देना, निर्धनों की देखभाल करना आदि काम आते हैं। पुलिस, शिक्षा तथा मद्य लाइसेन्सों पर कौंसिल का अधिकार नहीं होता। सार्वजनिक कामों के लिये कौंसिल दान अथवा भेंट भी ग्रहण कर सकती है। सफाई के सम्बन्ध में कौंसिल ही स्थानीय अधिकारी संस्था है। यह श्रमिकों के लिये मकान बनवाती है और उनकी मरम्मत आदि की देखभाल करती है। यह बाजारों का नियमन करती है और उच्च अधिकारियों की नियुक्ति करती है।

प्रशासक काउन्टी (Administrative County) :—जब कोई बरो बहुत बडा हो जाता है और उसकी सख्या बढ जाती है (लगभग ५०,०००) तो उसे काउण्टी से पृथक् कर दिया जाता है और वह स्वय ही एक प्रशासक काउण्टी बन जाता है। तब इसको काउन्टी बरो के रूप में सगठित कर दिया जाता है। उसकी कौंसिल के लगभग वही कर्तव्य व अधिकार होते हैं जो बरो कौंसिल के होते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से यह प्रकट हो जायगा कि इगलैण्ड में स्थानीय शासन सस्थाओ का गोरखधन्धा सा बना हुआ है और वे फ्रास के समान श्रेणीबद्ध नही हैं। उदाहरण के लिये पैरिश (Parish) को कई छोटे बडे राज पदाधिकारियो के अत्याचार का कष्ट नही उठाना पड़ता वरन् उसका सम्बन्ध सीधे केन्द्रीय सरकार से रहता है। इगलैण्ड की पेचीदा स्थानीय शासन प्रणाली को निम्नलिखित रेखाचित्र से सुगमता से समझाया जा सकता है।

ऐतिहासिक काउण्टी

काउण्टी बरो — प्रशासन बरो

बरो — अरबन डिस्ट्रिक्ट — रूरल डिस्ट्रिक्ट

अरबन पैरिश — रूरल पैरिश

पूअर ला यूनियन
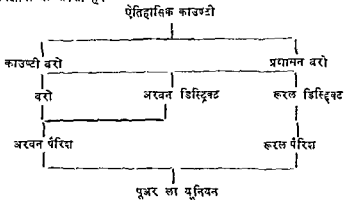
इगलैण्ड में स्थानीय सरकारों पर नियन्त्रण—इगलैण्ड में शासन प्रबन्ध स्थानीय शासन सस्थाओ पर छोड दिया जाता है पर केन्द्रीय सरकार सामान्य नियन्त्रण रखती है। स्थानीय सस्थाओ के शासन प्रबन्ध की देख भाल केन्द्रीय सरकार के विभिन्न शासन विभाग करते हैं। इससे यह भ्रम न होना चाहिये कि केन्द्रीय सरकार और स्थानीय शासन सस्थाओ के कर्तव्यो या उद्देश्यो में भिन्नता है। उन दोनों का अन्तिम उद्देश्य एक ही है अर्थात् और वह यह है कि देश पर अच्छे से अच्छे ढग से शासन करना और जनता को अधिक से अधिक सुख पहुँचाना। इसलिये वे दोनो बडे सामजस्य से सब काम करते हैं।

स्थानीय शासन संस्थाओ पर केन्द्रीय नियन्त्रण की प्रवृत्ति—इगलैण्ड में स्थानीय शासन सस्थाओ पर केन्द्रीय नियन्त्रण न तो यूरोप के समान कडा है न अमरीका की तरह बिलकुल ढीला है। अंग्रेजी नगरपालिकाओ पर धारा सभा का नियन्त्रण नहा

रहता परन्तु उनके काम में केन्द्रीय सरकार का प्रशासन सम्बन्धी हस्तक्षेप अधिक रहा करता है। अंग्रेजी बरो को बहुत से विस्तृत अधिकार सौंपे हुये रहते हैं परन्तु उन अधिकारों को कार्य रूप में व्हाइट हाल में स्थित किसी केन्द्रीय सरकारी विभाग का उस पर नियन्त्रण रहता है। वह बरो उन अधिकारों को स्वेच्छानुसार नहीं भोग सकता। यह हम पहले ही बतला चुके हैं कि महाद्वीपीय प्रकार के विरुद्ध अंग्रेजी शासन संस्थायें श्रेणीबद्ध (Hierarchical) नहीं हैं। उदाहरणार्थ, फ्रांस में कई अधिकारी लगभग हिंदू देवताओं की श्रेणी के समान छोटी से छोटी स्थानीय शासन की इकाई कम्यून पर अपना नियन्त्रण रखते हैं। प्रोफेसर मनरो के शब्दों में "इंगलैण्ड स्थानीय शासन की विकेन्द्रित प्रणाली के साथ शासन की उत्तमता व व्यवस्था का सामंजस्य करने में सफल होने वाला पहला देश था।"[1] इस तुलना को इण्डियन स्टेचुटरी कमीशन की रिपोर्ट के लेखकों के शब्दों में सबसे अच्छी तरह बयान किया जा सकता है, वे कहते हैं "स्थानीय स्वायत्त शासन दो प्रकार का कहा जाता है, एक अंग्रेजी, दूसरी यूरोपीय। अंग्रेजी प्रणाली में सरकार विकेन्द्रित है। स्थानीय संस्थायें स्वयं अपनी नीति निर्धारित करती हैं, केवल उन पर केन्द्रीय सरकार का सामान्य नियन्त्रण रहता है। वे योग्यता के नियमों के अनुसार अपने कर्मचारियों को स्वयं ही नियुक्त करती हैं और खर्चे का अधिकतर भाग स्वयं ही टैक्स लगाकर पूरा करती हैं। असल में उनका एक पृथक् शासन संगठन और शासन प्रणाली ही है। वे केन्द्रीय सरकार की आधीन संस्थायें मात्र ही नहीं हैं इसके विपरीत यूरोपीय स्थानीय शासन प्रणाली केन्द्रित है स्थानीय शासन का प्रमुख अधिकारी, जनता के चुने हुये प्रतिनिधियों का सेवक नहीं होता वरन् वह केन्द्रीय सरकार का अफसर ही होता है, जिसे केन्द्रीय सरकार के आदेशों को कार्यान्वित करने के लिये अमुक स्थान पर नियुक्त कर दिया जाता है। इसलिये यूरोप में स्थानीय शासन में केन्द्रीय सरकार की ही प्रेरक शक्ति काम करती है न कि जनता की।"[2]

अमरीका में जहाँ इंगलैण्ड जैसा अलिखित एकात्मक शासन-विधान न होकर लिखित व संघात्मक शासन विधान है, वहाँ स्थानीय शासन संस्थाओं को अधिक स्वतन्त्रता मिली हुई है। वहाँ नगरपालिकाओं पर केन्द्रीय अर्थात् संघ सरकार की धारा सभा का अधिक आधिपत्य रहता है परन्तु निश्चित प्रशासन मर्यादा के भीतर वे स्वेच्छानुसार कार्य करने को स्वतन्त्र रहती हैं। यदि हम उसे स्थानीय-शासन की अराजकता कहें तो अनुचित न होगा। परन्तु अमरीकन-स्थानीय शासन प्रणाली अन्तवर्ती युग से गुजर रही है। नित नई योजनायें बनायी जाती हैं और ठुकरा दी जाती

१. मुनरो : दि गवर्नमेन्ट आफ यूरोपियन सिटीज, पृष्ठ १।
२. दि इण्डियन स्टेच्यूटरी कमीशन रिपोर्ट Vol I पृ० ३०१।

है। इगलैण्ड और अमरीका की प्रणालियों में भेद का कारण यह है कि अमरीका में जनता अपनी सरकार का विश्वास नहीं करती और उसके अधिकारों को बहुत सीमित कर देती है। इगलैण्ड में सरकार जनता पर विश्वास नहीं करती और लोकसत्ता के क्षेत्र को बढाने से हिचकती है।'[1]

निर्धन विधियों और वित्त के प्रबन्ध में केन्द्रीय नियन्त्रण—"स्थानीय शासन के किसी भी भाग में केन्द्रीय नियन्त्रण उतना अधिक नहीं है जितना कि निर्धन विधियों में'[2] और ये स्वास्थ्य मन्त्रालय के निर्देश में हैं। अत इगलैण्ड में स्थानीय शासन की संस्थाओं के ऊपर जितना नियन्त्रण स्वास्थ्य विभाग का है उतना किसी दूसरे विभाग का नहीं है पर फिर भी यह नियन्त्रण फ्रान्स के गृह-विभागों का सा कठोर नहीं है। उसका काम निरीक्षण करना और निर्देश देना है, प्रशासन करना नहीं। मुनरो (Munro) के कथनानुसार "यह स्वास्थ्य विभाग स्थानीय शासन के इञ्जन का काम नहीं करता, केवल सतुलन-चक्र का ही काम करता है। स्वास्थ्य विभाग का काम यह नहीं है कि शासन सगठन की रूप रेखा निश्चित करे पर उसका इतना ही काम है कि वह यह देखता रहे कि नगर कौंसिल या दूसरी अधिकारी संस्थायें उस शासन यन्त्र को अच्छी तरह परिचालित करती हैं या नहीं।"[3] स्वास्थ्य विभाग को यह अधिकार है कि वह *सार्वजनिक स्वास्थ्य, निर्धन विधि (Poor-Law)*, सफाई, सीमायें और दूसरी नई शासन सस्थाओं के बारे में कानून बनावे। यह विभाग पार्लियामेण्ट के एजेण्ट की तरह काम करता है और पार्लियामेण्ट ही इस विभाग के अधिकारों को छीन सकती है स्वास्थ्य विभाग शासन सस्थाओं की उप-विधियों को रद्द कर सकता है परन्तु प्राय वही उप विधियाँ अस्वीकृत होती हैं जो राष्ट्रीय विधियों के प्रतिकूल पड़ती हैं। वह पार्लियामेण्ट व स्थानीय सस्थाओं दोनों को शासन व अर्थ सम्बन्धी मामलों में सलाह देता है। वह इन सस्थाओं के विरुद्ध व्यक्तियों की प्रार्थनाओं पर विचार कर के निर्णय भी देता है। इस विभाग को अर्थ सम्बन्धी बड़े विस्तृत अधिकार प्राप्त हैं। इसको ऋण की स्वीकृति देने का अधिकार प्राप्त है। यातायात विभाग के अतिरिक्त और जिन जिन सेवाओं के लिये सस्थाओं को ऋण की आवश्यकता होती है उसे मंजूर करने का अधिकार स्वास्थ्य विभाग को होता है। एक स्वास्थ्य मन्त्री के शब्दों में "ऋण स्वीकृत करने की शक्ति को एक विभाग में केन्द्रित करने का पर्याप्त कारण है क्योंकि वही एक तरीका है जिससे किसी स्थानीय सत्ता की आर्थिक स्थिति

१ ई० ए० ग्रिफिथ; माडर्न डेवलपमेण्ट ऑफ सिटी गवर्नमेण्ट; (१९२७) पृष्ठ ४३१

२ डब्लू० आई० जेनिंग, लोकल गवर्नमेण्ट ला, पृष्ठ १५७।

३. डब्लू बी० मनरो, गवर्नमेण्ट ऑफ यूरोपियन सिटीज; पृष्ठ ५८।

पूरी तरह मालूम हो सकती है।" इस विभाग को यह भी अधिकार है कि प्रत्येक बरो से उसके निश्चित खर्चे का ब्योरा मगा कर देखे। जहाँ तक सहायक अनुदानो का सम्बन्ध है यह नियन्त्रण बडा प्रभावशाली है जैसा कि इस अध्याय में बाद में बतलाया जायेगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वास्थ्य मन्त्रालय और एक स्थानीय शासन में सम्बन्ध इतना दृढ है कि मन्त्री के सामने अनेक ऐसे सवाल भी रखे जाते हैं जिन पर उसे किसी प्रकार का कानूनी अधिकार नही है सत्ता का काम चाहे कानून के गलत पक्ष पर क्यो न हो परन्तु वह मन्त्री के सही पक्ष पर रहता है।" स्वास्थ्य विभाग के अतिरिक्त बोर्ड आफ ट्रेड सस्थाओ के व्यापार और उद्योग की उन्नति मे सहायता देता है। माप तौल व गैस और बिजली के ऊपर भी इस विभाग का सामान्य नियन्त्रण रहता है। यातायात विभाग बिजली की गाडियो, रेल, बिजली, प्रकाश आदि से सम्बन्ध रखता है। होम आफिस पेंशन, बाल अपराधियो के न्यायालयों उत्पादविलि (Excise), पुलिस, रजिस्ट्रेशन, आचार, निर्वाचन, कारखाने और खानो से सम्बन्ध रखता है। पुलिस का प्रबन्ध इस विभाग का मुख्य काम है। केन्द्रीय सरकार के दूसरे विभाग स्थानीय शासन की दूसरी शाखाओ का नियन्त्रण करते हैं जैसे कृषि विभाग, शिक्षा विभाग इत्यादि।

पार्लियामेंण्ट का नियत्रण—ब्रिटिश पार्लियामेण्ट स्थानीय शासन की इकाइयो पर काफी नियन्त्रण रखती है। जिस जिस सेवा की योजना की जाती है उसके लिये पार्लियामेण्ट कानून से तत्सम्बन्धी एक केन्द्रीय शासन विभाग स्थापित कर देती है, उदाहरण के लिये कानून इस प्रकार होता है "इगलेण्ड और वेल्स में शिक्षा से सम्बन्धित मामलो के निरीक्षण के लिये एक शिक्षा विभाग स्थापित किया जायगा।" वह शासन विभाग इस कानून को आदेशो द्वारा व नियम-उपनियमो द्वारा कार्यान्वित करता है। प्रत्येक केन्द्रीय शासन विभाग में अफसरो की एक बडी भारी सख्या होती है जिसका यही काम है कि वह अपने वैज्ञानिक अन्वेषणो से स्थानीय शासन सस्थाओ की सहायता करे, सलाहकार समितियाँ होती हैं जैसे स्वास्थ्य विभाग का तपेदिक सम्बन्धी काम पार्लियामेण्ट प्रौविसियल तथा स्पेशल आर्डर्स से या प्राइवेट विधेयको से स्थानीय शासन सस्थाओ को बहुत से अधिकार प्रदान करती है। स्थानीय सस्थाओ के क्षेत्रो में परिवर्तन करने के लिये, उपविधियों के बनाने और नयी शासन प्रणालियों की स्थापना करने के लिये, केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति आवश्यक है। स्थानीय शासनाधिकारियो की योग्यता व अवधि को हाउस आफ कामन्स ही निश्चित करता है क्योकि इस सम्बन्ध में लोग स्थानीय सस्थाओं का विश्वास नही करते। जब कोई शासन-सस्था अपने कर्तव्य को पूरा नही करती तो पार्लियामेण्ट हाइकोर्ट के आदेश से उस सस्था का प्रबन्ध न्यायालय

१. डब्लू० आई० जेनिंग; लोकल गवर्नमेण्ट लॉ, पृष्ठ १९६-१९७।

के आधीन रख सकती है। केन्द्रीय सरकार कानून के तोडने या उसकी ठीक व्याख्या करने के प्रश्नों में अपना निर्णय देती है। केन्द्रीय सरकार स्थानीय मामलो की छान-बीन करा सकती है और रिपोर्ट प्रकाशित करती है। उनके आय-व्यय की जाँच करना और सस्थाओ के लिये ऋण देना भी केन्द्रीय सरकार का ही काम है। केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण इसलिये और अधिक बढता जाता है क्योकि अब इन सस्थाओ को राष्ट्रीय कोष से सहायक अनुदान देने की रीति चल पडी है। जब सरकार धन से सहायता करती है तो उनके ऊपर अपनी शर्तें लादने का अधिकार भी प्राप्त कर लेती है। सिडनी वैब कहते है कि इस प्रकार के सम्बन्ध से वे एक नये प्रकार का प्रशासकीय क्रम विकसित करते है "जो स्वतन्त्रता और कुशलता के एक शानदार सयोग का फल पैदा करता है जो फ्रास अथवा जर्मनी की प्रशासकीय व्यवस्था के कार्यों से कहीं अधिक है।"[1] कुछ लोगो का मत है कि इस पद्धति से केन्द्रीय सरकार स्थानीय सरकारो से निरीक्षण करने का लेखा जोखा देखने का और नियन्त्रण करने का अधिकार खरीद रही है। वास्तव मे "केन्द्रीय सरकार अनावश्यक हस्तक्षेप नही करती और प्राय इन सस्थाओं की स्वतन्त्रता का समुचित आदर करती है और यह पसन्द करती है कि ये सस्थाये इस स्वतन्त्रता का बिना हस्तक्षेप के सदुपयोग करें।"[2] जब तक बरो कौंसिल अपने वैध अधिकारो की सीमा के भीतर काम करती है जब तक केन्द्रीय हस्तक्षेप से बची रहती है जब वह जाने या अनजाने इस सीमा का उल्लघन करती है तो केन्द्रीय हस्तक्षेप का स्वागत ही करना चाहिये न कि उसके प्रति विरोध। फिर भी अंग्रेजी जनता इस हस्तक्षेप को पसन्द नही करती और उसका विरोध करती है। प्राय यह कहा जाता है और ठीक भी है कि स्थानीय सस्थाओ में जो स्थानीय व्यक्ति है वे स्थानीय मामलो को हाउस आफ कामन्स के सदस्यो की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह समझते है। पिछले पचास वर्षों में विकेन्द्रीकरण की मात्रा बढाने के लिये समय समय पर प्रयत्न किये गये परन्तु कोई विशेष परिवर्तन अभी तक नही हो पाया है। सन् १८९८ में काउण्टी कौंसिलो को कुछ विषयो को सौंपने का प्रस्ताव काउण्टी कौंसिल एसोसियेशन ने किया था। सन् १९२० की डिवौल्यूशन कान्फ्रेंस के द्वारा यह प्रस्ताव रखा गया कि पार्लियामेण्ट के ढग पर स्थानीय धारा सभायें स्थापित की जायें। तीसरा, मैकडौनैल्ड की योजना थी जिसमें यह कहा गया कि प्रदेशीय एक सदन वाली (Regional Unicameral) धारा सभायें बनाई जायें जिनके सदस्य पार्लियामेण्ट के चुने हुये व्यक्ति हो। यह अनुमान किया जा सकता है कि जब श्रमिक दल स्थानीय सरकारो

---

१. डब्लू० बी० मनरो, गवर्नमेण्ट्स आफ यूरोपियन सिटीज; पृष्ठ २७।
२. एच० फाइनर, इगलिश लोकल गवर्नमेण्ट (१९३३) पृष्ठ २९९।

के सुधार का सवाल उठायेगा तब केन्द्रीय नियन्त्रण की वर्तमान पद्धति और स्थानीय सरकारों की शक्ति, संगठन तथा कार्यों में कुछ परिवर्तन होंगे।

लन्दन का शासन प्रबन्ध

लन्दन का स्थानीय शासन उसके ऐतिहासिक विकास, उसके आकार और कुछ दूसरे विषयों के कारणों से इंगलैण्ड में अपने ढंग का अनुपम है। लन्दन का अपना विशेष स्थानीय शासन है और अपनी विशेष समस्यायें तथा योजनायें हैं। शासन प्रबन्ध के लिये लन्दन तीन भागों में बंटा हुआ है जो कि जनसंख्या व क्षेत्रफल में एक दूसरे से बहुत ही भिन्न हैं और उनका शासन संगठन भी एक दूसरे से भिन्न है। इन तीनों भागों को सिटी आफ लन्दन, काउण्टी आफ लन्दन और लन्दन मैट्रोपोलिटन डिस्ट्रिक्ट कहते हैं।

सिटी आफ लन्दन—कारपोरेशन एक्टों ने उसकी सरकार पर कोई प्रभाव नहीं डाला है। लन्दन का शहर जिसका क्षेत्रफल एक वर्गमील है और १९५९ में जिसकी रात की आबादी केवल १५,००० थी जबकि नजदीक के गांवों से आने वाले लोगों व श्रमिकों के कारण लंदन में उसकी आबादी बहुत बढ़ जाती थी, एक आधुनिक जनतन्त्र की अपेक्षा मध्यकालीन का ही अधिक प्रतिनिधित्व करता है। वह आधुनिक राज्य का केवल प्राचीन रूप है जिसकी पुरानी सीमायें और पुराने ढंग की सरकार बिल्कुल नहीं बदली है। म्यूनिसिपल सिटी आफ लन्दन एक कार्पोरेशन है जिसमें नगर के फ्रीमेन (Freeman) हैं। उसका शासन प्रबन्ध लार्ड मेयर और तीन समितियों द्वारा होता है। इन तीनों समितियों को कोर्ट आफ एल्डरमैन, कोर्ट आफ कामन कौंसिल और कोर्ट आफ कामन हाल कहते हैं। कोर्ट आफ एल्डरमैन में लार्ड मेयर (Lord-Mayor) और २० आजीवन एल्डरमैन होते हैं। इसके अधिकार नहीं के बराबर हैं। यह शहर के लेख्यों को सुरक्षित रखती है। काउण्टी कामन कौंसिल सिटी की मुख्य शासन संस्था है। इसमें २०६ कौंसिलर्स होते हैं जिनका सालाना चुनाव होता है और २६ वही एल्डरमैन होते हैं जो कोर्ट आफ एल्डरमैन में होते हैं यह संस्था नगर के लिये उप-विधियाँ (Bye Laws) बनाती है, और अग्नि रक्षा, नालियों, पानी, सार्वजनिक स्वास्थ्य और शहर की रेलों को छोड़ कर सब काम करती है। प्रत्येक सेवा के लिये पृथक्-पृथक् समिति बनी हुई है और उसके स्थायी कर्मचारी हैं जिनमें शैरिफ के अलावा सबको कौंसिल नियुक्त करती है। कोर्ट आफ कामन हाल में लार्ड मेयर, एल्डरमैन, शैरिफ और लन्दन के सब लाइवरीमैन (Liverymen) होते हैं। साल में एक बार इसकी बैठक होती है जब यह अपने दो ज्येष्ठ एल्डरमैन के पास लार्ड मेयर के पद के लिये प्रस्ताव करके भेजती है। कोर्ट आफ एल्डरमैन इन दोनों में से एक

को लार्ड मेयर चुनती है। लार्ड मेयर को कोई स्वतन्त्र अधिकार नहीं मिले हुये हैं। उसका पद अवैतनिक है। वह केवल सम्मानसूचक है। वह नगर के किसी पदाधिकारी की नियुक्ति नहीं करता और न कोई दूसरा कार्यकारी कर्त्तव्य करता है। वह तीनों कौंसिलों की बैठकों में केवल अध्यक्ष का काम करता है और उत्सवों में नगर का प्रतिनिधित्व करता है।

काउन्टी आफ लन्दन—११६ वर्गमील क्षेत्रफल की लन्दन की प्रशासन काउन्टी का शासन कौंसिल करती है जिसमें १२४ निर्वाचित सदस्य व २० एल्डरमन होते हैं। कौंसिल के सदस्य तीन वर्ष के लिये चुने जाते हैं और चुने जाने के बाद वे अपने में से या बाहर से एल्डरमैन चुनते हैं जो ६ वर्ष तक अपने पद पर बने रहते हैं, केवल प्रति तीन वर्ष बाद उनमें से आधे हट जाते हैं। कौंसिल के निर्वाचित सदस्य और एल्डरमैन मिल कर अपने में से या बाहर से किसी व्यक्ति को सभापति चुनते हैं। कौंसिल में और एल्डरमैनों को समान अधिकार मिले होते हैं केवल शिष्टाचार की दृष्टि से ही उनमें भेद होता है। कौंसिल में तीन दल हैं म्युनिसिपल रिफार्म्स (Municipal Reforms) प्रोग्रेसिव्ज (Progressives) और लेबर (Labour)। कौंसिल स्वयं शासनाधिकारिणी संस्था है और स्वयं अपने कर्मचारियों को नियुक्त करती है। कौंसिल का अधिक समय सामान्य शासन सिद्धान्तों को निश्चित करने में ही व्यतीत हो जाता है। उनको कार्यान्वित करने का भार समितियों पर छोड़ दिया जाता है। इसके लिये १८ स्थायी समितियाँ बनी हुई होती हैं और एक कार्यकारिणी समिति भी है। इस कार्यकारिणी समिति में १८ स्थायी समितियों के सभापति रहते हैं। इन समितियों के सभापति व उपसभापतियों को कौंसिल चुनती है। अधिकतर समितियाँ अपनी उपसमितियाँ बना लेती है जिनमें से कुछ को शासन सम्बन्धी अन्तिम निर्णय करने का अधिकार भी रहता है। ये समिति केवल परामर्श देने वाली संस्थाएँ हैं, उनको ऋण आदि लेने का अधिकार नहीं होता। कौंसिल का कार्यक्रम पार्लियामेण्टरी ढंग पर चलता है।

लन्दन काउन्टी कौंसिल के कर्तव्य—काउन्टी कौंसिल के अधिकार में राजधानी सम्बन्धी सब सड़कें रहती हैं। नालियों व कूड़े आदि का प्रबन्ध भी इसी के हाथ में रहता है। सुरंगों, नाव के पुलों व दूसरे पुलों, अग्नि-रक्षा, सफाई, सार्वजनिक स्वास्थ्य, गृह-निर्माण, म्यूनिसिपल-गृह-शिक्षा, मनोविनोद के उद्यान, मेले आदि का प्रबन्ध भी ये कौंसिल ही करती हैं। ये ट्रामवे चलाती है, पर मोटरों और भूमि के नीचे चलनेवाली रेल गाड़ियों पर इसका अधिपत्य नहीं है। अपने सब कामों में यह बिलकुल तन्त्रहीन नहीं रहती क्योंकि इस पर सरकार का नियन्त्रण रहता है। फिर भी इसने बड़े-बड़े काम किये हैं और लन्दन के शासन सम्बन्धी कई कानूनों के बनने में इसने

बडी सहायता दी है। "उसकी सत्ता पर इन सीमाओ के होते हुए भी पिछले पंतीस वर्षों से लन्दन काउन्टी कौसिल ने काम का आश्चर्यजनक रिकार्ड स्थापित किया है।"[1] वह निजी हित के खिलाफ अनेको और गरीबो के हित की रक्षक है। श्री फॉक्स (Fox) ने एक बार कहा था कि कौसिल ने "लन्दन निवासियो में नागरिक कर्तव्य और म्यूनिस्पल देशभक्ति की भावना जगाने के लिये बडा काम किया है जबकि राजनैतिक कॅरियर की आकांक्षा करने वाले नौजवानो को कौसिल ने कुशल सेना ने कामन्स सभा की ओर एक उत्तम बना दिया है।" इस प्रकार लन्दन की प्रशासक काउन्टी ने सफाई, सार्वजनिक कार्य और उपयोगिता, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा और प्रशासन के क्षेत्र में अत्यन्त मूल्यवान कार्य किया है।

लन्दन मैट्रोपोलिटन बरो—सन् १८९९ के लन्दन गवर्नमेण्ट ऐक्ट के अनुसार लन्दन को २८ मैट्रोपोलिटन बरो में बाट दिया गया है। प्रत्येक बरो में एक कौसिल है जिसमें मेयर एल्डरमॅन और दूसरे सदस्य होते हैं। चुनाव की पद्धति वही है जो देश के अन्य बरो में हैं। दूसरे बरो कौसिलो की अपेक्षा इनके अधिकार अधिक सीमित हैं। "सामान्य तौर से बरो कौसिल स्थानीय सडका की सत्ता है।" कौसिल मुख्य-मुख्य सडको को बनवाती है व उनकी सफाई, मरम्मत व उन पर प्रकाश आदि का प्रबन्ध भी कराती है। वह नालियो को बनवाती तथा ठीक रखती है तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य अधिनियम को लागू करती है। सार्वजनिक स्नानगृहो, वाचनालयो, श्रमिको के रहने के मकानो और स्थानीय समाधि क्षेत्रो का भार इसी के ऊपर रहता है।

इन तीन शासन सस्थाओ के अतिरिक्त कई स्वतन्त्र बोर्ड भी हैं जैसे पानी बोर्ड, मैट्रोपोलिटन आश्रम बोर्ड थेम्स कन्जर वैन्सी, लन्दन बन्दरगाह को सत्ता पूअर ला यूनियन के ३१ बोर्ड, और १०० से अधिक पैरिश वैस्ट्री आदि।" जिस शासन में इतनी पृथक्-पृथक् स्वतन्त्र सस्थायें हो वह स्वभावत सतोषजनक नहीं हो सकता। इसको अधिक उत्तम बनाने के लिये सारे सगठन को अधिक सीधा सादा बनाने की आवश्यकता है जिसका अधिकतर लन्दन वासियो को निश्चय है। लन्दन का शासन, प्रशासन-काउन्टी के शासन से कही अधिक विशाल हो गया है इसलिये ग्रेटर लन्दन (Greater London) शासन सस्थाओ का एक गोरख धन्धा बन गया है जिसको समझने में राजधानी के शासन के अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को बडी असुविधा पड़ती है।"[2] श्रमिक सरकार के पिछले कुछ कानूनो से अनेक स्थानीय सस्थाओ की शक्तियाँ और कर्तव्य बहुत कुछ बदल गए हैं। उदाहरण के लिये १९४६ के राष्ट्रीय

---

१. डब्लू० बी० मुनरो; गवर्नमेण्ट आफ यूरोपियन सिटीज पृ० १५५।

२ डब्लू० बी० मुनरो—गवर्नमेण्ट ऑफ यूरोपियन सीटीज, पृ० १५७।

स्वास्थ्य सेवा अधिनियम से स्वास्थ्य सेवाओ के प्रबन्ध करने का काम स्वास्थ्य मन्त्रालय के आधीन कर दिया गया है। और ५ जुलाई १९४८ से इगलैण्ड और वेल्स के सब अस्पताल मन्त्री को सौंप दिये गये है जिसने इन सस्थाओ को चलाने का काम क्षेत्रीय बोर्ड को सौंप दिया है। काउण्टी कौसिल और काउण्टी बरो कौसिले स्वास्थ्य अधिकारी भी बन गई है।

१९४८ के राष्ट्रीय सहायता अधिनियम निर्धन कानून सविधान और अन्य व्यक्तियो के अधिनियम को रद्द कर दिया है। काउण्टी और काउण्टी बरो कौसिलो को अतिरिक्त कार्य सौप दिये गये हैं जैसे वृद्ध और अपाहिजो के लिये निवास स्थानो का प्रबन्ध, अन्धे, बहरे और गूंगे लोगो का कल्याण आदि। सक्षेप में, इगलैण्ड में वर्तमान स्थानीय शासन एग्लो सैक्सन काल से अब तक एक लम्बे क्रमिक विकास के फलस्वरूप प्राप्त हुआ है। यह विकास इतना आकस्मिक ढग से हुआ है कि बहुत सी अनोखी समय-भ्रमकारक बाते पाई जाती हैं। इन स्थानीय सस्थाओं में अब भी इतना स्वतन्त्रता पाई जाती है लोग अपने मत व असुविधाओ को खुल कर प्रकट कर सकते हैं। इन सस्थाओ पर केन्द्रीय नियन्त्रण न कठोर है और न बहुत ढीला। लन्दन का शासन सगठन इगलैण्ड में ही नहीं वरन् ससार में अनुपम है। कुछ समय से समाजवादी प्रवृति के कारण सुधारो की माँग होने लगी है। श्रमिक सदस्य स्थानीय कौसिल के चुनाव म भाग लेने से झिझकते है क्योंकि उन्हे उस पर शर्म आती है। वे म्युनिसिपल समृद्धि या व्यावहारिक कुशलता नही चाहते बल्कि म्युनिसिपल पतन को हटाना चाहते हैं। स्थानीय जीवन का स्तर इतना नीचा हो गया है कि इसके बडे उत्साही समर्थक भी इसकी टीका टिप्पणी करने लगे है और इस शासन की खुले ढग से बुराई करते हैं। म्युनिसिपल शासन के अच्छे परिणाम भी नही देखे जाते।[२]

स्थानीय निकायो की अर्थव्यवस्था :—स्थानीय निकायो (Local Bodies) के कार्यों के बढ़ने के साथ साथ उसी अनुपात से उनके खर्चे भी बढ़ गये हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि इससमय चालू तथा सम्पत्ति दोनों के मदो में विभिन्न स्थानीय निकायो का सालाना खर्चा १२,००० मिलियन पौण्ड से ऊपर बैठता है। जाहिर है कि इस विशाल धन राशि को स्वय अपने साधनो द्वारा अर्थात् अपने क्षेत्र रहने वाले लोगो पर कर लगाकर एकत्रित करना स्थानीय निकायो की सामर्थ्य से बाहर है और क्योंकि स्थानीय निकाय जनता की स्थानीय आवश्यकताओ और सार्वजनिक कल्याण के कामो को करती है इसलिये उनको अपने काम कुशलता पूर्वक करने के

१. डब्लू० बी० मुनरो—गवर्नमेण्ट आफ यूरोपीयन सिटीज, पृ० १९०।

२. सिडनी और बिट्रिस वेब; ए कन्सटीटयूशन आफ दि सोशलिस्ट वैल्थ आफ ग्रेटर ब्रिटेन, पृ० ३००-७।

योग्य बनाने के लिये केन्द्रीय सरकार उनको आर्थिक सहायता देने लगी है। दो अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य जो ये निकाय करती हैं प्रारम्भिक शिक्षा (जो कि अनिवार्य है) और स्वास्थ्य है जिसमें पानी का प्रबन्ध, सामान्य सफाई, शुद्ध भोजन आदि आता है। इन दोनों कामों में धन का एक बड़ा भाग खर्च हो जाता है। ये वे सेवायें हैं जो कि एक कल्याणकारी राज्य में केन्द्रीय सरकार के कर्तव्यों में आती हैं परन्तु उनके प्रशासन की स्थानीय प्रवृति के कारण स्थानीय निकायों को सौंप दी गई हैं। पहले स्थानीय निकायों को केन्द्रीय खजाने से विशेष कामों के लिये विशेष अनुदान मिलते थे, बाद में इस व्यवस्था के स्थान पर कुछ सालों के लिये इकट्ठा धन दिया जाने लगा। परन्तु क्योंकि स्थानीय निकायों की सेवाओं का क्षेत्र बढ़ गया, विशेषत द्वितीय महायुद्ध के बाद, इन निकायों के आर्थिक साधन पर्याप्त नहीं पाये गये। परिणाम स्वरूप इकट्ठा धन देना भी शुरू किया गया। केन्द्रीय सरकार ने सन् १९५८ में स्थानीय सरकार अधिनियम (Local Government Act) पास किया जिससे कि उसने शिक्षा, स्वास्थ्य, कल्याणकारी सेवायें, नगर-नियोजन, अग्नि रक्षा सेवायें, शिशु कल्याण, सड़क पर सुरक्षा, शारीरिक प्रशिक्षण और मनोरंजन तथा १९४८ के राष्ट्रीय सहायता अधिनियम १९४४ के जनता के प्रतिनिधित्व के अधिनियम और १९५३ के स्कूल वोंमिंग पेट्रोल्म एक्ट आदि को कार्यान्वित करने के सम्बन्ध में विशेष अनुदानों के स्थान पर सामान्य अनुदान देने की व्यवस्था स्थापित की। सामान्य अनुदान एक समय में दो या तीन वर्षों के लिये निश्चित कर दिये गए परन्तु मन्त्री को किसी असाधारण परिस्थिति जैसे मूल्यों के स्तर में सामान्य वृद्धि की अवस्था में धन को उसी के अनुसार बढ़ाने का अधिकार मिला हुआ है। यदि वह यह पाये कि स्थानीय निकाय किन्हीं सेवाओं के मामले में आवश्यक मानदण्ड बनाये रखने में असफल हुई है तो वह अनुदान को घटा भी सकता है। यहाँ पर बतलाए गये सामान्य अनुदानों के अलावा केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित अनुदान भी देती है।

प्रतिशत अनुदान (Percentage grants)—जो कि पुलिस तथा प्रतिरक्षा आदि विशेष सेवाओं पर व्यय हुये धन का एक निश्चित अनुपात होता है।

इकाई अनुदान (Unit grants)—जो कि प्रत्येक इकाई सेवा जैसे मकानों का प्रबन्ध-(Housing) आदि के बारे में निश्चित धन के रूप में दिये जाते हैं।

दर न्यूनता अनुदान (Rate Deficiency grants)—जो कि प्रति व्यक्ति उत्पादन की दर में न्यूनता को पूरा करने के लिये निर्धन अधिकारियों को दिया जाता है। काउण्टी कौंसिलों तथा काउण्टी बरों के मामले में ये समानीकरण अनुदान (*Equalisation grants*) कहलाते हैं जो कि आमतौर से कम धनी आबादी वाले क्षेत्रों और अन्य निर्धन स्थानीय अधिकारियों को उनकी सेवाओं को निश्चित स्तर

तक लाने के योग्य बनाने के लिये दिये जाते हैं।

निर्धात कर (Assigned Revenues)—जिसमे कुछ राष्ट्रीय कर शामिल हैं जो कि स्थानीय निकायो को दे दिये जाते हैं जैसे कुत्ते, बन्दूक व शिकार के लाइसेन्सो का शुल्क, फेरी वालो, गिरवी दलालो (Pawn Brokers) ऋण दाताओ और अल्पहार गृहो से मिला शुल्क।

केन्द्रीय सरकार विशेष सेवा को उपयुक्त कुशलता के साथ कार्यान्वित करने के लिये भी अनुदान दे सकती है।

स्थानीय निकाय अपने स्थानीय करो को जमीन और इमारतो, रहने के मकानो तथा सम्पत्ति पर लागू करती है।

स्थानीय निकाय बडे खर्चों जैसे जमीन प्राप्त करने, इमारतें खडी करने और इसी प्रकार के अन्य स्थायी काम के लिये धन का प्रबन्ध करने को ऋण ले सकती है। इन कर्जों के लिये गृह निर्माण विभाग और स्थानीय सरकार के मन्त्रालय से स्वीकृति लेनी पडती है और स्कन्ध निर्माण (Stock exchange) में स्कन्ध (Stock) जारी करके, आन्तरिक कर्ज लेकर अथवा सार्वजनिक निर्माण, ऋण बोर्ड पर बन्धक (Mortgage) से ये कर्ज उगाहे जा सकते है। कर का लेना स्थगित करके बैंक-अधिविकर्ष (Bank-Overdraft) अथवा ऋण उगाहने की भी अनुमति है।

स्थानीय निकायों की आमदनी के अन्य जरिये उपविधियो को तोडने पर जुर्माने, शुल्क तथा अन्य कर आदि है।

एक स्थानीय निकाय के अर्थ सम्बन्धी मामलो पर उसकी वित्तीय कमेटी नियन्त्रण रखती है और गृहनिर्माण तथा स्थानीय सरकार के मन्त्रालय द्वारा नियुक्त लेखा परीक्षको (Auditors) द्वारा अथवा किसी किसी मामले मे लेखा परीक्षको की व्यवसायिक फर्म द्वारा उनकी लेखा परीक्षा की जाती है, यद्यपि यह आखिरी प्रणाली अधिक इस्तेमाल नही होती।

स्थानीय निकायों पर केन्द्रीय नियन्त्रण—इगलैण्ड में केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय निकायो पर नियन्त्रण की प्रकृति को समझने के लिये दो बातें याद रखने की जरूरत है अर्थात् अधिकतर स्थानीय निकाय केन्द्रीय सरकार की स्थापना के पहले से थी और वे अपना काम प्राचीन काल से ही स्वतन्त्र रूप से करती आ रही थी और दूसरी कि बाद में पार्लियामेण्ट के विधानो द्वारा केन्द्रीय सरकार ने विभिन्न क्षेत्रो के निवासियो की प्रार्थना पर अनेक स्थानीय निकाय स्थापित की परिणाम स्वरूप इगलैण्ड में स्थानीय निकायो पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण सयुक्त राज्य की अपेक्षा अधिक है परन्तु फ्रान्स जैसे अधिकतर महाद्वीपीय देशो की अपेक्षा कम है।

इगलैण्ड में स्थानीय निकायो पर केन्द्रीय नियन्त्रण इसलिये किया जाता है

(१) जिससे कि स्थानीय निकायो को पार्लियामेण्ट द्वारा सौपे हुये कामो जैसे स्वास्थ्य सेवाओ, पुलिस के कामो, यातायात का प्रबन्ध आदि में एक रूपता (Uniformity) रहे। (२) जिससे कि कुशलता का निश्चित स्तर कायम रहे। (३) जिससे कि निश्चित रहे कि विशेष कामो के लिये दिये हुए अनुदानो को पूरी तरह और भली प्रकार खर्च किया जायेगा।

केन्द्रीय नियत्रण की विभिन्न पद्धतियाँ ये हैं :—

(१) निरीक्षण (Inspection)—सम्बन्धित मन्त्रालय के अधिकारियो द्वारा निरीक्षण जिनको यह निरीक्षण करने का आदेश दिया जाता है कि सम्बन्धित मन्त्रालय के अन्तर्गत सेवाओ के सम्बन्ध में स्थानीय निकाय अपने काम कैसे कर रहे हैं। निरीक्षक मन्त्रालय के पास अपनी रिपोर्ट भेजते हैं जो कि स्थानीय निकाय से जवाब तलब कर सकता है या और कोई कदम उठ सकता है और यदि काम ठीक से नही किया जा रहा है तो उस विशेष अनुदान को वापस भी ले सकता है। गृह निर्माण और स्थानीय सरकार मन्त्रालय, शिक्षा मन्त्रालय, स्वास्थ्य मन्त्रालय, गृह आफिस (यह निश्चित करने के लिये कि कानून और व्यवस्था कायम है अथवा कि पुलिस का काम अच्छी तरह किया जा रहा है), और यातायात तथा नागरिक उड्डयन के मन्त्रालय क्रमश अपने अपने क्षेत्रों में पडने वाले कामो के सम्बन्ध में स्थानीय निकायो का निरीक्षण करती हैं।

(२) परिपत्र (Circulars) अथवा आदेश भेजकर—केन्द्रीय सरकार स्थानीय सरकारो को उनको सौपे गये किसी नए कर्त्तव्य के बारे में परिपत्र अथवा आदेश भेज सकती है और उनके काम के विशेष पहलुओ के बारे मे उनको आकडे और सूचनायें भेजने की आज्ञा दे सकती है।

(३) परीक्षण (Examination)—स्थानीय निकायो को सौपे गए किन्ही योजनाओ अथवा प्रस्तावो का केन्द्रीय सरकार के सम्बन्धित विभाग के कर्मचारियों द्वारा परीक्षण।

(४) वित्तीय नियन्त्रण (Financial Control)—वित्तीय नियन्त्रण केन्द्रीय सरकार द्वारा दिये गये अनुदानो का स्वाभाविक परिणाम है। लेखा परीक्षण तथा अन्य साधनो के द्वारा केन्द्रीय सरकार यह देखती है कि स्थानीय सरकार ने विशेष अनुदानो से मिले धन को उन्ही विशेष कामो में खर्च किया है जिनके लिये वह मजूर किया गया था। जो धन देगा वह स्वर भी देगा। इस कहावत के अनुसार केन्द्रीय सरकार किसी विशेष प्रयोजन के लिये अनुदान मजूर करते समय कुशलता के स्तर की शर्तें और विशेष कामो को करने का तरीका और पद्धति भी निश्चित कर देती है और बहुधा यह विधान कर देती है कि निकाय के काम का समय समय पर

निरीक्षण किया जायेगा। यदि केन्द्रीय सरकार यह पाये कि विशेष प्रयोजन के लिये दिया हुआ धन या तो उस पर खर्च नहीं किया गया है या यदि खर्च किया गया है तो उसको शर्तों को पूरा करने मे पूरी सावधानी नहीं रखी गई है, तो वह अनुदान को वापस ले सकती है।

विभिन्न सरकारी विभाग विभिन्न वर्गों के स्थानीय निकायो के कामों से सम्बन्धित होते हैं। इगलैण्ड मे इन निकायो द्वारा किये जाने वाले सबसे अधिक महत्वपूर्ण काम ये हैं—वायु का दूषित होना रोकना, रोगी वाहनों (Ambulances) का प्रबन्ध, तैरने के तालाब और गुसलखानों का प्रबन्ध, कला कक्षो (Art galleries) का निर्माण और निरीक्षण, अन्धों का कल्याण, पुलो का निर्माण और मरम्मत, इमारतो का नियन्त्रण, समाधि स्थानो और कब्रिस्तानो की देखभाल, शिशु कल्याण, नागरिक प्रतिरक्षा, अमरणान्वेषकों (Coroners) की नियुक्ति, सिनेमाओ और थियेटरो, गान तथा नृत्य को लाइसेन्स देना; खाद्य और खाद्यो का विश्लेषण, स्वास्थ्य सदन, वृद्ध और अपाहिजो के लिये गृहो का प्रबन्ध, गृह निर्माण और स्लमो की सफाई छूत की बीमारियो के स्थानो का विज्ञापन और उनके रोगाणुओं का नाश, पुस्तकालयो तथा बाजारो का निर्माण और निरीक्षण, कसाई खानो मे गोश्त का निरीक्षण, मातृत्व कल्याण, दुग्ध शालाओ और दूध की दूकानो का निरीक्षण, मरघटो का निरीक्षण, अन्य व्यवस्थाओ का दमन, पार्कों और खुली जगहो का प्रबन्ध, कुछ मामलो मे पुलिस का प्रबन्ध, कूडे को हटाना और उसका प्रबन्ध करना, सफाई सेवायें, गलियों का निर्माण, उन्हे ठीक रखना और उनमे रोशनी का प्रबन्ध करना, टीके लगाना और प्रतिरक्षित करना (Immunisation), बाटो और नापो का निरीक्षण, बूढ़ों और अपाहिजो को कल्याण सेवाय इत्यादि इत्यादि। इस सूची से विभिन्न स्थानीय अधिकारियो का सौंपे गये उत्तरदायित्व की सीमायें मालूम पडती है। समुदाय के जीवन के लिये उनके महत्व के स्वभाव के कारण यह उपयुक्त ही है कि केन्द्रीय सरकार को जिस पर नागरिकों के हितो तथा अधिकारो की सुरक्षा तथा उनके सार्वजनिक कल्याण का अन्तिम उत्तरदायित्व है, इन स्थानीय निकायो पर आवश्यक नियन्त्रण अवश्य रखना चाहिये।

परन्तु सामान्य रूप से यह समझा जा सकता है इगलैण्ड में स्थानीय सरकारें फ्रांस के समान केन्द्रीय सरकार की एजेन्ट मात्र नहीं है। वे ऐसी सस्थायें हैं जिनके द्वारा केन्द्रीय सरकार की निरीक्षक शक्तियों के आधीन नागरिक स्वय अपने पर शासन करने के योग्य बनते हैं।

पाठ्य-पुस्तकें

Clarke, J J.—The Local Government of the United Kingdom, (1955, Pitman)
Finer, Herman—Theory and Practice of Modern Government (Portions dealing with Local Government in Engnand)
Harris, G. Montagu— Municipal Self-Government in Britain- (1939 Ed.)
Harris, P A - London and its Government (1933).
Jackson, R M —The Machinery of Local Government (1951)
Jackson, R M — The structure of Local Government in England & Wales (1953).
Laski, H. J -- A Century of Municipal Progress (1935)
Lowell, A L -Government of England.
Maud, J. P R —Local Government in England (1932).
Muir, Ramsay- How Britain is Governed (Constable, London), Ch. on Local Government
Munro, W. B —Governments of Europe (Macmillan) 1930 edition pp. 310–333 & 1954 edition pp 272–790.
Munro, W B —Government of European Cities (Macmillan) pp. 1- 204
Ogg, F A --Governments of Europe (Macmillan) chs. on Local Government.
Robson, R. A.--The Development of Local Government (1931.)
Sidney, Low—Government of England- (Chs. on Loeal Government).

तृतीय पुस्तक

राष्ट्रमंडल (कामनवैल्थ) की सरकारें

अध्याय १४

साम्राज्य से राष्ट्रमंडल (कामनवैल्थ) की ओर

(From Empire to Commonwealth)

"थोडी सी भी राष्ट्रीयता की भावना रखने वाला समाज दूसरे राष्ट्र की आधीनता मे उस स्थिति की अपेक्षा सम्भवत अधिक हटी और अपनी नीति मे कम जिम्मेदार सिद्ध होगा जबकि अपनी समस्याओ के सुलझाने का भार पूरी तरह से उसके ही ऊपर हो।" —राइट ऑनरबिल जे० जी० लैथम

"आप कुछ भी कहे पर स्वराज्य सब प्रकार से सबसे उत्तम है। विदेशी सरकार पूर्णतया धार्मिक पक्षपात से रहित हो, देशी व विदेशी व्यक्तियों के प्रति समान व्यवहार करती हो, प्रजा के लिये माता पिता के समान दयालु ,हितैषी और न्यायप्रिय हो, पर फिर भी वह उसको पूर्णरूप से सुखी नही बना सकती।" —स्वामी दयानन्द

ब्रिटिश साम्राज्य—क्षेत्रफल, जनसख्या, निवासियो की भाषा, रीति-रिवाज रहन-सहन, आर्थिक व सास्कृतिक विभिन्नता आदि को दृष्टि में रखते हुये ब्रिटिश साम्राज्य ससार के राजनैतिक इतिहास मे सबसे अधिक आश्चर्यजनक घटना है। इसका क्षेत्रफल १,३२,९०,००० वर्गमील है जो ससार की कुल भूमि का पाँचवाँ भाग है। इसकी जन सख्या ४,८७० लाख है जो ससार की जनसख्या का पाँचवाँ भाग है। उसकी विशालता से यह कहावत प्रचलित हो गई,कि ब्रिटिश साम्राज्य मे सूर्य कभी अस्त नही होता, और कुछ लोगो ने इस मजाक म इसका यह कारण बताया है कि उसको ब्रिटिश साम्राज्य के शासको पर विश्वास नही है। ब्रिटिश साम्राज्य का आधुनिक नाम कामनवैल्थ आफ नेशन्स (Commonwealth of Nations) हो गया है। इस कामनवैल्थ अर्थात् राष्ट्रमण्डल के अन्तर्गत ये देश है—(१) यूनाइटेड किंगडम आफ ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैण्ड (२) स्वायत्त शासन करने वाले अधिराज्य (Dominion) जैसे कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका, लका, घना और मलाया सघ (३) भारतवर्ष और पाकिस्तान गणतन्त्र (४) उपनिवेश साम्राज्य जिसमे आग्लाधीन उपनिवेश (Crown Colonies) सरक्षित राज्य (Protectorates) व न्यासधारी राजक्षेत्र (Trusteeship territories) गिने जाते है।[1] ब्रिटिश राष्ट्-

---

१. जनवरी २६ सन् १९५० से भारत एक गणराज्य बन गया है और पाकिस्तान उसके कुछ साल बाद से परन्तु दोनो कामनवैल्थ के सदस्य है। ४ जनवरी १९४८ से बर्मा कामनवैल्थ के बाहर स्वतन्त्र हो गया है।

मण्डल का संगठन ऐसा अपूर्व है कि उसको राजनीति-शास्त्र में किसी पूर्व परिचित नाम से नहीं पुकारा जा सकता। न यह राष्ट्र है न संघ शासन। इसका कोई लिखित शासन विधान नहीं है न कोई पालियामेण्ट, न कोई निजी सामूहिक सरकार, न निजी संरक्षक सेना या कार्यकारिणी सत्ता है। वह ऐतिहासिक घटनाओं और क्रमिक विकास की उपज है। वह विकसित है न कि पूर्व निश्चित और उसके सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध अब भी विकास की प्रक्रिया में हैं।

साम्राज्य की स्थापना के आधारभूत अभिप्राय (Purposes underlying formation of Empire) पिछली तीन शताब्दियों में अंग्रेजों ने अनेक अभिप्रायों की सिद्धि के लिये इस साम्राज्य की स्थापना की थी जिनको संक्षेप में व्यापार-वृद्धि, बढ़ती हुई जन संख्या के लिये स्थान, अपराधियों को दूर बसाने के लिये स्थान और वायु तथा स्थल सेनाओं को रखने के लिये सामरिक स्थान प्राप्त करना कहा जा सकता है। इस लम्बे समय में ब्रिटिश उपनिवेश नीति कई अवस्थाओं से गुजरी।

समुद्र पार साम्राज्य से इंगलैण्ड को लाभ (Advantages to England from the possessions overseas) सबसे पहले इंगलैण्ड को अपने समुद्र पार के साम्राज्य से आश्रित राज्यों द्वारा दिये गये करके रूप में बड़ा आर्थिक लाभ हुआ। आरम्भ में ब्रिटेन ने उपनिवेशों पर कर न लगाया था परन्तु बाद में क्रान्ति के युद्धों से आर्थिक अवस्था गिर जाने पर उसे उत्तरी अमरीका के उपनिवेशों पर कर लगाना पड़ा इस नीति का परिणाम अमरीकन स्वतन्त्रता युद्ध हुआ जिससे अमरीका ब्रिटेन के आधिपत्य से निकल गया। प्रभुत्वशाली देश को इन उपनिवेशों से दूसरा लाभ नाविक अथवा सैनिक सहायता थी जो कि उसको नाविक व स्थल सेना के अड्डों के रूप में प्रयोग करने को मिली। जिब्राल्टर माल्टा और भूमध्यसागर में आयोनियन द्वीप ब्रिटिश साम्राज्य के सैनिक अड्डे हैं। तीसरा लाभ व्यापार करने की सुविधा थी। जब यूरोप के आधुनिक राष्ट्रों को यह अनुभव हुआ कि उपनिवेशों से कर उगाहना सम्भव नहीं है तब उन्होंने उन्हें व्यापारिक लाभ का साधन बनाने का प्रयत्न किया। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए स्वामी राष्ट्र ने आश्रित राज्यों में दूसरे राष्ट्र के जलयानों पर रोक लगा दी। उन्होंने आश्रित राज्यों के जलयानों को स्वामी राष्ट्र को छोड़कर संसार के अन्य देशों में व्यापार करने में रोक दिया। औपनिवेशिक एकाधिकार की नीति का दूसरे किसी यूरोपियन राष्ट्र ने इतनी कड़ाई के साथ पालन नहीं किया जैसा स्पेन ने किया। परन्तु जिन सिद्धान्तों के अनुसार इंगलैण्ड ने अपने औपनिवेशीय आश्रित राज्यों से सम्बन्ध निर्धारित किया वे भी अधिक उन्नत नहीं थे। ब्राउन एडवर्ड ने अपनी वैस्टइण्डीज का इतिहास नामक पुस्तक में लिखा है कि यूरोप के सब साम्प्रदायिक राष्ट्रों (जिसमें इंगलैण्ड भी शामिल है) की औपनिवेशिक नीति का मूलमन्त्र

व्यापारिक एकाधिकार था। इस एकाधिकार की परिभाषा बड़ी व्यापक थी। इसके अन्तर्गत उपनिवेश को हर प्रकार की वस्तुओं को देना, उनके कच्चे माल को खरीदना और उसमें पक्के माल का बनाना आदि सब बातें आती थीं। उपनिवेशों के निवासी अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को दूसरे देशों से न मगा सकते थे। उन्हें अपनी उपज स्वामी-राष्ट्र को ही बेचनी पड़ती थी और उन्हें पक्का माल बनाने का अधिकार न था, केवल स्वामी राष्ट्र ही उनके कच्चे माल को अपने कारखाने में पक्का करके उससे लाभ उठा सकता था। यह अन्तिम नीति इतनी कड़ाई के साथ बरती गई कि एक बार अर्ल चैथम को पालियामेण्ट में यह शिकायत करने के लिये बाध्य होना पड़ा कि उत्तरी अमरीका के उपनिवेशों के निवासियों को घोड़े की नाल में लगने वाली कील भी बनाने का अधिकार नहीं है। इन उपनिवेशों से एक लाभ यह भी था कि स्वामी राष्ट्र की बढ़ती हुई आवश्यकता से अधिक जन संख्या को बाहर जाकर बसने का अवसर व सुविधा मिली। पाँचवीं सुविधा यह थी कि स्वामी राष्ट्र के अपराधी इनमें भेज दिये जाते थे। इस प्रकार इंगलैण्ड अपने अपराधियों को आस्ट्रेलिया भेजा करता था। एक छठा लाभ स्वयं अधिकार का गौरव था।

उपनिवेशों की समृद्धि में परिवर्तन हुआ (Prosperity of the colonies brought a change)—परन्तु यह नीति अर्थात् उपनिवेशों को स्वयं उपनिवेश के निवासियों के कल्याण का साधन न मानकर इंगलैण्ड के ही स्वार्थ का साधन बहुत दिन मानना न चल सकी। कालान्तर में इस नीति में बड़ा परिवर्तन हुआ। उपनिवेशों को प्राकृतिक समृद्धि के उपयोग से उनकी आर्थिक स्थिति सुधरने लगी। उपनिवेशों का निवासी स्वामी राष्ट्र के अनुचित हस्तक्षेप का विरोध करने लगे। सबसे बड़ी झगड़े की जड़ उपनिवेश के निवासियों की अपनी मातृभूमि इंगलैण्ड की लोकतन्त्रात्मक संस्थाओं को अपने यहाँ स्थापित करने की माँग थी और इंगलैण्ड ने इस माँग का विरोध किया। उपनिवेशों पर पालियामेण्ट का प्रभुत्व सुरक्षित रखने की चिन्ता में जार्ज तृतीय के मन्त्रियों ने अमरीका के १३ उपनिवेशों पर नये कर लगाये। उपनिवेश के निवासियों ने अपनी राजनैतिक स्वतन्त्रता पर इस आघात का विरोध किया और ब्रिटिश प्रजातन्त्र के प्रथम सिद्धान्त 'बिना प्रतिनिधित्व के कोई कर नहीं" की दुहाई मचाई।

उदार राजनीतिज्ञों ने १८ वीं शताब्दी की औपनिवेशीय नीति का विरोध किया (Liberal statesmen opposed the colonial policy of the 18th centuary)—ब्रिटिश पालियामेण्ट में दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी थे जिनको उपनिवेशों पर उन्हें लोक राज्य में प्रतिनिधित्व दिये बिना कर लगाने की बुराइयों का आभास मिल चुका था। उदाहरणार्थ लार्ड कैमडन (Lord Camden) ने इस विषय पर बोलते हुए पालियामेण्ट में कहा था—'किसी मनुष्य की वस्तु पूर्णतया उस

की ही है दूसरे किसी मनुष्य को उस वस्तु को उससे बिना उसकी सम्मति के लेने का अधिकार नहीं है जो कि या तो स्वय वही जाहिर करे या उसके प्रतिनिधि लोग जो कोई भी ऐसा करने का प्रयत्न करता है वह हानि पहुँचाता है, जो कोई ऐसा करता है वह डाका डालता है, वह स्वाधीनता व पराधीनता के भेद को फेंक कर चूर-चूर करता है। कर लगना और प्रतिनिधित्व देना इस शासन विधान के लिये अत्यावश्यक है और विधान के साथ ही साथ उसका जन्म भी हुआ है ———— माई लार्ड्स, मैं चुनौती देता हूँ कि कोई भी मुझे ऐसा समय बतलावे जब पार्लियामेंट ने किसी व्यक्ति पर बिना उस व्यक्ति का पार्लियामेंट में प्रतिनिधित्व हुये कर लगाया हो।[1] आठ वर्ष बाद हाउस आफ कामन्स में विरोधी पक्ष ने अमरीकन चाय कर ऐक्ट को रद्द करने के लिये एक प्रस्ताव रखा जो कि बहुमत से हरा दिया और पास न हो सका। प्रस्ताव का समर्थन करते हुये एडमंड बर्क ने सरकार की नीति की इन शब्दों में कटु आलोचना की "महोदय! दूसरी ओर बैठे हुये महानुभाव अपनी योग्यता को सामने लायें और उनमें से सबसे अधिक कुशल व्यक्ति खड़ा होकर मुझे बतलाये कि यदि व्यापार पर जितनी भी रुकावटें हो सकती हैं उनको लगाकर उन उद्योगशील निर्धनों को बाँध कर रखा जाय और साथ साथ उनको प्रतिनिधित्व दिये बिना आपकी स्वेच्छा से लादे हुये करों का ढोने वाला टट्टू भी बनाया जाये तो अमरीकनों के पास स्वतन्त्रता का कौनसा एक भी चिह्न है और परतन्त्रता का कौन कलंक उन पर नहीं है। अमरीका में बसने वाला अंग्रेज यह समझेगा कि यह दासता है, वह दासता कानूनी है ऐसा समझने से उसके मन व मस्तिष्क पर पड़े आघात की कोई क्षतिपूर्ति नहीं होगी।"[2] पर उस समय की सरकार ने इन सब विरोधों और चेतावनियों की उपेक्षा करके दूसरी ही नीति को अपनाना ठीक समझा जिससे स्थिति संकटपूर्ण हो गई। अन्ततोगत्वा अमरीकी स्वतन्त्रता का युद्ध (१७७३-१७८३) छिड़ा जिसमें इंगलैण्ड को उन १३ उपनिवेशों में हाथ धोना पड़ा।

डरहम की रिपोर्ट और औपनिवेशिक नीति में परिवर्तन (Durham's Report and the change in colonial Policy) इस महँगे अनुभव ने ब्रिटेन की १९ वीं शताब्दी की औपनिवेशिक नीति में बड़ा भारी परिवर्तन करके बिलकुल उसका रूप ही बदल दिया। इस नीति परिवर्तन का सूत्रपात लार्ड डरहम की उस रिपोर्ट से हुआ जो उन्होंने कनाडा की राजनैतिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए ब्रिटिश सरकार के सम्मुख उपस्थित की थी। राजनीति शास्त्र के लिये अत्यन्त महत्वशाली इस रिपोर्ट के अन्तिम शब्द ये थे "यदि उस विवेक के विधान में जिसमें इस जगत का नियमन

1 Speech in the House of Lords: 24 th February, 1776
2 Speech in the House of Lords, 19 th April, 1774

होता है, यह लिखा हुआ है कि ये देश सर्वदा ब्रिटिश साम्राज्य के अग नही रहेगें तो हमें अपने सम्मान की रक्षा के लिये ऐसा कदम उठाना उचित है जिससे जब ये देश हमसे अलग हो तो अमरीका महाद्वीप में ये ही ऐसे देश न रह जायें जिनमें अपने शासन भार सभालने की योग्यता न हो।" इस प्रकार लार्ड डरहम ने उपनिवेशो के शासन की उस उत्तम नीति का समर्थन किया जिससे कुछ समय बाद वे अपना शासन भार स्वय सभालने के योग्य हो जाये। सर सी० पी० लूकस ने इस कथन की सही आलोचना करते हुए कहा कि "ये शब्द कनाडा व अमरीका के बाहर भी लागू होते हैं। इनमें निहित भावना किसी देश प्रदेश की सीमा से बँधी हुई नही है। यह सम्पूर्ण ब्रिटिश साम्राज्य की जीती जागती शक्ति है।" ये शब्द एक महान अंग्रेज का अपनी जाति वालो को सदेश है कि हमारे लिए सबसे आवश्यक बात यह है कि हम अपने पीछे वह वसीयत छोड जायें जो सब समय और सब तरह से महान और उत्तम हो।[१] सन् १८४२ ई० में ब्रिटेन ने कनाडा के लिये ऐसे शासन-विधान की व्यवस्था की, जिससे आगे चल कर सन् १८६७ ई० में कनाडा में सघ शासन प्रणाली स्थापित की गई और वह एक स्वशासित उपनिवेश बन गया[२] और पहले के साम्राज्य के अनेक भागो में बाद में स्वायत्त शासन के विकास न यह सिद्ध कर दिया कि डरहम की भविष्य वाणी कितनी सच्ची थी।

१९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में औपनिवेशिक नीति (Colonial policy in the second half of 19th centuary)—इसमें सशय नही कि १९ वी शताब्दी के आरम्भ मे औपनिवेशिक नीति मे बडा परिवर्तन हुआ पर फिर भी बहुत से उपनिवेशो की स्थिति में अधिक सुधार नही हुआ। इसलिये कुछ अंग्रेजो को यह विश्वास होने लगा था कि ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति बडी दोष पूर्ण है ग्रेट ब्रिटेन के २,०००,००० निवासियो ने बाहर जाकर इन उपनिवेशो को बसाया था इसलिये जनता का ध्यान भी उपनिवेशो की सरकार की व्यवस्था की ओर आकर्षित होने लगा यह विश्वास दृढ होने लगा कि इन उपनिवेशो की शासन प्रणाली में निरकुश शासन के सब दोष है क्योंकि शासन सूत्र ऐसे व्यक्तियो के हाथ में था जिनको शासित व्यक्तियो की समृद्धि व सुख में तनिक भी रुचि नही थी, जो उनसे दूर रहते थे और जिन्हे उनकी दशा का अनुभव न था तथा जिन पर उन सब बुरी बातो का प्रभाव था जो स्वतन्त्रता और लोक-प्रशासन के अभाव में फैल जाया करती है। शासन करने वाले व्यक्ति अपनी

---

१. Sir C P Lucas in his Introduction to Lord Dulhausi.

२ कनाडा के पूर्वोदाहरण को बाद मे दूसरे उपनिवेशो जैसे न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका को उत्तरदायी स्वायत्त शासन देने से प्रयोग किया गया।

शासन शक्ति का वैसे ही दोषपूर्ण ढंग से उपयोग करते थे जैसे कि स्वेच्छाचारी निरंकुश शक्ति दूर स्थित निवासियों पर प्रयोग की जाती है। परन्तु १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उपनिवेशों की शासन नीति में सुधार करने का प्रयत्न किया गया।

उदारपक्ष के प्रसिद्ध प्रधानमन्त्री विलियम एवर्ट ग्लैडस्टन ने २६ अप्रैल सन् १८७० को हाउस आफ कामन्स में बोलते हुए सरकार की औपनिवेशिक नीति का इन शब्दों में स्पष्टीकरण किया था —

"हमें यूरोपियन देशों द्वारा उनके उपनिवेशों पर लगाई हुई प्रतिबन्धों वाली नीति का अनुभव हो चुका था। पहले का यह अनुभव ही हमारा पथ प्रदर्शक न था परन्तु हमें विशेषकर कनाडा के सम्बन्ध में बहुत भारी चेतावनियां भी मिल चुकी थी इसलिये हमारे समय के इतिहास में यह एक गौरवपूर्ण अध्याय है कि दलबन्दी का विचार किये बिना हमारे राजनीतिज्ञों की ऐसी नीति कार्यान्वित करने का सतत प्रयत्न रहा है कि जिससे जब कभी भी ये उपनिवेश पृथक् हों तो उस विपत्ति और कलंक से बचाव हो जाय जो हिंसा और रक्त प्रवाह द्वारा पृथक् होने पर उत्पन्न होता है। यही नीति अब भी अपनाई जा रही और वह, जैसा कि समझा जाता है, कोई नई नीति नहीं है बल्कि उन्हीं पुराने सिद्धान्तों को फिर से लागू करना है जिनको विभिन्न प्रकार की राजनीति के समर्थक सत्ताधिकारियों ने स्वीकार करके स्थापित किया है और जो सर्व सम्मति से मान्य हो चुके हैं। यही बात उस नीति के बारे में सत्य है जो हमने नम्रता से अपनाने की कोशिश की है और मेरी राय में यह नीति मातृभूमि व उपनिवेशों के परस्पर सम्बन्धों को शिथिल और कटु नहीं बनाती बल्कि इसके विपरीत जब कभी पृथक् होने का समय आवेगा तो पूरी तरह शान्तिपूर्वक पृथक्करण हो सकने की सबसे अधिक संभावना सुरक्षित करके और साथ ही साथ पृथक् होने के पश्चात् अनिश्चित काल तक उन उपनिवेशों से स्वतन्त्रतापूर्वक सम्बन्ध चलने का सबसे उत्तम अवसर देती है। यही वह आधार है जिस पर हमने अपने पूर्वगामियों के समान अपनी औपनिवेशिक नीति को स्थापित करने की कोशिश की है। स्वतंत्रता और स्वेच्छा हमारे पारस्परिक सम्बन्ध के मुख्य चिह्न हैं और हमारी नीति उपनिवेशों को दूर करने के पूर्व निश्चित उद्देश्य को पूरा करने का गुप्त और प्रच्छन्न साधन नहीं समझा जाना चाहिये बल्कि अद्वितीय न भी तब भी सबसे उत्तम व सच्चा साधन समझा जाना चाहिए।

औपनिवेशीय सम्मेलन का युग (Era of Colonial Conference) ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति में इस परिवर्तन से ब्रिटेन और उसके समुद्र पार स्थित उपनिवेशों में सहयोग की सम्भावना बढ़ गई। इसलिए रानी विक्टोरिया की जयन्ती के अवसर पर पहला औपनिवेशिक सम्मेलन बुलाया गया। यह सम्मेलन ब्रिटेन और उपनिवेशों के

समान हित वाले मामलों पर विचार करने के लिये बुलाया गया था। सब उपनिवेशों के प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में भाग लिया और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल से बातचीत करने के इस अवसर का लाभ उठाया। इसके दस वर्ष बाद सन् १८९७ में दूसरा औपनिवेशिक सम्मेलन हुआ जिसमें कनाडा न्यूसाउथ वेल्स विक्टोरिया, न्यूजीलैंड, क्वीन्सलैण्ड, केप कौलोनी, दक्षिणी आस्ट्रेलिया, न्यूफाउण्डलैण्ड, टसमानिया, पश्चिमी आस्ट्रेलिया और नैटाल के प्रधान मन्त्रियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य उपनिवेशों के प्रतिनिधियों में अनौपचारिक और मैत्रीपूर्ण ढंग से विचार विनिमय करना था न कि किसी प्रकार के बाधित निर्णयों पर पहुँचना जिन्हें कार्यान्वित करने के लिए उपनिवेशों की सरकारें इच्छुक न हों। इस विचार विनिमय के परिणामस्वरूप साम्राज्य संघ शासन (Imperial Federation) का विचार निश्चित रूप से ठुकरा दिया गया। परन्तु सुरक्षा, व्यापार व विदेश वास सम्बन्धी विषयों में पारस्परिक सहयोग के कई लाभदायक सुझाव रखे गये।

सन् १९०२ में सप्तम एडवर्ड के राजतिलक के लाभदायक अवसर पर तीसरा औपनिवेशीय सम्मेलन हुआ जबकि सहयोग की भावना को बराबर जाग्रत करने के लिए एक स्थायी परामर्श देने वाली समिति की स्थापना करने का निश्चय हुआ। यहाँ यह बतलाया जा सकता है कि इस समय तक ये उपनिवेश स्वायत्त शासन की बाल्यावस्था को पार कर चुके थे और ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा दी हुई प्रजातन्त्रात्मक संस्थाओं को सफलतापूर्वक चला चुके थे। इसलिए ब्रिटन को अब साम्राज्य के भीतर इन पूर्ण विकसित उपनिवेशों से निबटना पड़ता था। इस सम्मेलन के बाद १९०७ में एक और सम्मेलन हुआ जो बड़ा महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। इसने इस तथ्य पर जोर दिया कि साम्राज्य की उन्नति जितनी राजनैतिक संगठन के परिवर्तन पर निर्भर है उतनी ही आर्थिक सहयोग पर भी निर्भर है। इस सम्मेलन ने साम्राज्य के इतिहास में एक नये युग का आरम्भ किया क्योंकि उसने अपने आप को इम्पीरियल कान्फ्रेंस अर्थात् साम्राज्य सम्मेलन के रूप में परिवर्तित कर लिया और स्वायत्त शासन वाले उपनिवेशों को उनके उन्नत पद के समुचित आदर की मान्यता के रूप में डोमिनियन (Dominion) अर्थात् अधिराज्य की उपाधि दी।[1] इस सम्मेलन में यह भी निर्णय हुआ कि साम्राज्य सम्मेलन प्रति चार वर्ष बाद हुआ करे। सन् १९११ में द्वितीय साम्राज्य सम्मेलन हुआ परन्तु १९१५ में होने वाला सम्मेलन युद्ध के कारण न हो सका।

सन् १९१७ का साम्राज्य सम्मेलन (Imperial Conference of 1917)— सन् १९१४-१९१८ के महायुद्ध के छिड़ने के पहले पार्लियामेन्ट के विभिन्न ऐक्टों के अनुसार कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और दक्षिणी अफ्रीका स्वायत्त-शासन वाले

१ कीथ : कान्सटीट्यूशन, एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड लॉ आफ दी एम्पायर, पृ० १०३।

उपनिवेश बन चुके थे जिनमें उत्तरदायी सरकारें शासन करती थी। अधिराज्यों ने युद्ध में जिस स्वेच्छाकृत अनुराग और भक्ति का प्रदर्शन किया उससे उन ब्रिटिश राजनीतिज्ञों की बुद्धिमानी का पर्याप्त परिचय मिल गया जिन्होंने लार्ड डरहम की रिपोर्ट में सुझाई गई उत्तरदायी स्वायत्त-शासन देने की नीति को कार्यान्वित किया था। सन् १९१७ के सम्मेलन में यह निर्णय किया गया कि इंगलैण्ड और अधिराज्यों के बीच वैधानिक सम्बन्धों में कोई भी परिवर्तन घरेलू मामलों में पूर्ण अधिकार व स्वायत्त-शासन के साथ साथ इस मान्यता पर आधारित होना चाहिये कि अधिराज्य इम्पीरियल कामनवैल्थ (Imperial Commonwealth) स्वतन्त्र देश है। वैदेशिक नीति और विदेशी सम्बन्धों के बारे में अपनी राय देने के अधिकार को भी स्वीकार कर लिया जाना चाहिये और ऐसा आयोजन होना चाहिये जिससे साम्राज्य के समान हित वाले मामलों में बराबर पारस्परिक परामर्श सम्भव हो सके और उस परामर्श के फल-स्वरूप ऐसी सम्मिलित कार्यवाही हो सके जिनका निर्णय विभिन्न सरकारें कार्यान्वित करें।

१९२६ की इम्पीरियल कान्फ्रेंस (Imperial Conference of 1926)—सन् १९२६ में फिर एक सम्मेलन हुआ हालांकि सन् १९१७ व १९१८ को युद्ध परिषद् युद्ध-सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण विषयों पर अधिराज्य प्रधान मन्त्रियों से परामर्श करती रही थी। सन् १९२६ के सम्मेलन ने एक नया कदम उठाया और लार्ड बालफोर की अध्यक्षता में अन्तर्साम्राज्य सम्बन्धों के बारे में छान बीन करने के लिये एक समिति की स्थापना की। साम्राज्य में पूर्ण सत्ताधिकारी अधिराज्यों के स्थान के विषय पर इस समिति ने एक बहुत महत्वपूर्ण निर्णय किया जिसको बालफोर घोषणा (Balfour Declaration) के नाम से पुकारा जाता है। इस समिति ने अधिराज्यों के पद की यह व्याख्या की :—ये ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वतन्त्र समाज हैं जो पद में एक दूसरे के बराबर हैं, अपने घरेलू व वैदेशिक मामलों में किसी प्रकार भी एक दूसरे के अधीन नहीं हैं यद्यपि राजमुकुट के प्रति एक समान भक्तिभाव रखने से वे एक दूसरे से मिले हुए हैं और ब्रिटिश कामनवैल्थ आफ नेशन्स (British Commonwealth of Nations) अर्थात् ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल के स्वेच्छा से बने हुए सदस्य हैं। इस परिभाषा को स्पष्ट करने के लिये कान्फ्रेंस ने उसमें यह भी जोड़ दिया "केवल इसी सूत्र की सहायता से ब्रिटिश साम्राज्य के वास्तविक चरित्र का समझने की कोशिश करने वाला एक विदेशी यह सोचने के लिये आकर्षित होगा कि वह परस्पर सहयोग को आसान बनाने के लिये नहीं बल्कि परस्पर संघर्ष को असम्भव—बनाने के लिये बनाया गया है। ब्रिटिश साम्राज्य नकारों पर आधारित नहीं है। वाह्यरूप में नहीं तो मूल रूप में वह सकारात्मक (Positive) आदर्शों पर आधारित है। स्वतन्त्र संस्थायें उसका जीवन है। शान्ति सुरक्षा और प्रगति उसके आदर्श हैं।' इस समिति ने साथ

ही साथ यह मत प्रकट किया कि उस समय (१९२६ में) जो प्रबन्ध चल रहा था वह इस घोषणा में वापस की हुई स्थिति के अनुसार न था। कुछ ऐसे प्रतिबन्ध उस समय मौजूद थे जिनमें महत्वपूर्ण परिवर्तन करना था, विशेषकर राजसी उपाधियां और गवर्नर जनरल के पद के सम्बन्ध में। इस समिति के सुझाव पर सम्मेलन ने एक समिति बनाने की सिफारिश की जिसमें ब्रिटेन और डोमिनियनों के प्रतिनिधि हों जो इस प्रश्न पर विचार करें और अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करें।

१९३० की इम्पीरियल कान्फ्रेन्स (Imperial Conference, 1930)– तदनुसार लन्दन में सन् १९२९ में अधिराज्यों के कानूनों और व्यापार पोतों से सम्बन्धित कानून (Merchant Shipping Legislation) के कार्यान्वित होने की परीक्षा करने के लिए एक कान्फ्रेन्स हुई। उसने अपनी रिपोर्ट तैयार की जो सन १९३० के साम्राज्य-सम्मेलन में विचारार्थ उपस्थित की गई और यह सुझाव सामने रक्खा गया कि पार्लियामेण्ट बालफोर घोषणा में दिए हुए समानता के पद को कानून द्वारा अंगीकार करे और उन वैधानिक प्रतिबन्धों को हटावे जिससे अधिराज्य इस पद को प्राप्त कर सकें।

१९३१ की वैस्टमिन्स्टर व्यवस्था (Statute of Westminster of 1931)—तदनुसार पार्लियामेण्ट ने प्रसिद्ध वैस्टमिन्स्टर की व्यवस्था स्वीकार की जिस पर सन् १९३१ में राजा ने सम्मति सूचक हस्ताक्षर किये। इस व्यवस्था के पास हो जाने से, जो ब्रिटिश शासन-विधान के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना थी, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल (British Commonwealth of Nations) में अधिराज्यों ने घरेलू व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही विषयों में ग्रेट ब्रिटेन के बराबरी का पद प्राप्त कर लिया।

सन् १८६७ के ब्रिटिश नार्थ अमरीका एक्ट (British North America Act 1867) से लेकर सन् १९०९ में दक्षिणी अफ्रीका को उत्तरदायी शासन का अधिकार मिल जाने तक अधिराज्यों की सरकारों के अधिकारों व शक्तियों पर कुछ कानूनी प्रतिबन्ध बने हुए थे। ये प्रतिबन्ध विधि-प्रशासन व न्याय सम्बन्धी थे। जितने कानून पास होते थे उन पर राजा की स्वीकृति लेना आवश्यक होता था जिसका प्रतिनिधि गवर्नर जनरल होता था। इसलिये गवर्नर जनरल अधिराज्य की धारा सभा द्वारा पास किये कानून पर राजा के नाम से अपनी स्वीकृति रोक सकता था। दूसरे कभी-कभी गवर्नर जनरल राजा के नाम पर आधीन राज्य के मन्त्रिमण्डल की इच्छा की अवहेलना कर दिया करता था। अधिराज्य की विधान सभा इंगलैण्ड की पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये हुए कानून के विरुद्ध और सन् १८९४ ई० के व्यापार पोत एक्ट (Merchant Shipping Act 1894) या १८६५ के कौल नियल लाज वैलिडिटी एक्ट (Colonial Laws Validity Act of 1895) के विरुद्ध कोई कानून

न बना सकती थी। न्याय के क्षेत्र में अधिराज्य के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध प्रिवी कौसिल की न्याय समिति मे अपील हो सकने के कारण अधिराज्यो की न्याय शक्ति बहुत सीमित हो गई थी। फिर कनाडा की पार्लियामेण्ट१८६७ के ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट(British North America Act 1867) में सशोधन न कर सकती थी बल्कि उसको सब वैधानिक सशोधन के लिए ब्रिटिश पार्लियामेण्ट का मुंह ताकना पडता था। वैस्टमिनिस्टर की व्यवस्था ने अब कई महत्वपूर्ण और दूर तक प्रभाव करने वाले कानूनी परिवर्तन किये हैं। इस एक्ट मे किसी भी अधिराज्य पार्लियामेण्ट के बनाये हुए कानून के लिए १९६५ का कौलोनियल लाज वैलिडिटी एक्ट(Colonial Laws Validity Act) लागू न हो सकता था। वह यह घोषणा करता है कि किसी उपनिवेश का कानून इसलिये रद्द नही समझा जा सकता वह किसी वर्तमान या भविष्य में बनने वाले इगलैण्ड के कानून के विरुद्ध है। यह एक अधिराज्य की पार्लियामेण्ट को यह अधिकार भी देता है कि वह इगलैण्ड की पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये हुए अपने यहां लागू कानून को सशोधित या रद्द कर सकती है। इस व्यवस्था के पश्चात इगलैण्ड की पार्लियामेण्ट का कोई भी कानून अधिराज्य मे लागू नही हो सकता था जब तक उस अधिराज्य ने इसके हेतु स्पष्ट रूप से अपनी सहमति प्रगट न की हो। अत्यन्त महत्वपूर्ण होने के कारण इस परिनियम (Statute) का यहां पूर्ण रूप से बयान किया जा रहा है वैस्टमिनिस्टर का परिनियम, (22 geo. 5. C 4) (११ दिसम्बर १९३१)।

जबकि सयुक्त आग्ल राज्य, कनाडा का अधिराज्य, आस्ट्रेलिया का कामनवैल्थ, न्यूजीलैण्ड का अधिराज्य, दक्षिणी अफ्रीका का सघ, आयरिश फ्री स्टेट ऑफ न्यूफाउण्डलैण्ड की हिज मैजेस्टी की सरकारों के प्रतिनिधियों ने वैस्टमिन्स्टर मे उन्नीस सौ छब्बीस और उन्नीस सौ तीस में हुए सम्मेलनो मे उसकी रिपोर्टों में उपस्थित घोषणाओ और प्रस्तावों से एक राय जाहिर की

और जबकि इस अधिनियम की प्रस्तावना (Preamble) के साथ मे यह निश्चित करना उपयुक्त माना गया कि जहां तक राजमुकुट राष्ट्रों के ब्रिटिश कामनवैल्थ में सदस्यो के स्वतन्त्रता से शामिल होने का चिह्न है और क्योंकि वे राजमुकुट के प्रति एक सामान्य आधीनता मे बन्धे हुए हैं तब यह कामनवैल्थ के सदस्यो के परस्पर सम्बन्धो में उनकी निश्चित वैधानिक स्थिति के अनुकूल होगा कि सिहासन के उत्तराधिकार अथवा राजकीय तौर तरीके और उपाधियो के छूने वाले कानूनो म किसी प्रकार के परिवर्तन के लिय इसके बाद स सयुक्त आग्ल राज्य की पार्लियामेण्ट के साथ सब अधिराज्यों की पार्लियामेण्टो की भी स्वीकृति लेनी पडेगी।

और जब कि यह स्थापित वैधानिक स्थिति के अनुकूल है कि इसके बाद से सयुक्त आग्ल राज्य की पार्लियामेण्ट द्वारा बनाया हुआ कोई भी कानून किसी अधि-

राज्य में उस अधिराज्य के कानून के एक भाग के रूप में लागू नही होगा जब तक कि वह अधिराज्य उसके लिये प्रार्थना न करे और अपनी स्वीकृति न दे।

और जबकि उन सम्मेलनो की कुछ घोषणाओ और प्रस्तावो को अनुसमर्थित, स्वीकृत और स्थापित करने के लिये यह आवश्यक है कि एक कानून बनाया जाय और सयुक्त आग्ल राज्य की पालियामेण्ट के अधिकार से उचित रूप मे अधिनियमित किया जाय।

और जबकि कनाडा के अधिराज्य, आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ, न्यूजीलैण्ड के अधिराज्य, दक्षिणी अफ्रीका सघ और आयरश फ्री स्टेट तथा न्यू फाउण्डलैण्ड ने क्रमश प्रार्थना की और सयुक्त आग्ल राज्य को पालियामेण्ट के सामने उपरोक्त विजयों मे ऐसे सविधान बनाने का एक विधान उपस्थित करने को सहमति प्रकट की जो इसके बाद से इस एक्ट मे शामिल है।

अब इसलिये आध्यात्मिक और भौतिक लार्डो की तथा कामन्स की सहमति और परामर्श और राजा की मोस्ट एक्सेलैन्ट मैजेस्टी के द्वारा इस वर्तमान पालियामेण्ट मे उपस्थित होकर और उसी की शक्ति से यह एक्ट निम्नलिखित रूप से अधिनियमित किया गया —

१—इस एक्ट में "अधिराज्य" शब्द का अर्थ किसी भी निम्नलिखित अधिराज्य मे लिया जा सकता है जैसे कनाडा का अधिराज्य, आस्ट्रेलिया का कौमनवैल्थ, न्यूजीलैण्ड का अधिराज्य, दक्षिणी अफ्रीका सघ, आयरश फ्री स्टेट और न्यू फाउण्ड लैण्ड।

२—(1) इस ऐक्ट के जारी होने के बाद सन १८६५ का कालोनियल लाज वैलिडिटी एक्ट एक अधिराज्य की पालियामेण्ट के द्वारा बनाये हुए किसी भी कानून पर लागू नही होगा।

(ii) इस कानून के जारी होने के बाद किसी अधिराज्य की पालियामेण्ट द्वारा बनाया हुआ कोई भी कानून अथवा कानून का प्रविधान इस आधार पर अवैध या रद्द नही होगा कि वह इगलैण्ड के कानून, अथवा सयुक्त आग्ल राज्य की पालियामेण्ट के किसी वर्तमान या भविष्य के अधिनियम के प्रविधानो अथवा ऐसे किसी अधिनियम की आज्ञाओ अथवा नियमो के विरुद्ध है।

३—अब यह घोषणा की जाती है और अधिनियमित किया जाता है कि एक अधिराज्य की पालियामेण्ट को भू क्षेत्र से बाहर चलने वाले कानून बनाने की पूरी शक्ति मिली हुई है।

४—इस एक्ट के जारी होने के बाद स्वीकृत हुआ कि सयुक्त आग्ल राज्य की पालियामेण्ट का कोई भी अधिनियम तब तक किसी अधिराज्य के कानून के अश के रूप में अधिराज्य तक फैला हुआ या लागू होने लायक नही माना जा सकता जब तक

कि उस अधिनियम में यह स्पष्ट रूप से घोषित न कर दिया गया हो कि उस राज्य ने उस अधिनियम के लिये प्रार्थना की है और उसे स्वीकार किया है।

५—इस ऐक्ट के उपरोक्त प्रविधानो की सामान्यता से पक्षपात किये बिना १८६४ के मर्चेन्ट शिपिंग एक्ट की सात सौ पैंतीस और सात सौ छत्तीसवी धारायें इस प्रकार बनाई जायेगी कि जिससे उसमे एक ब्रिटिश आधीन प्रदेश की धारा सभा के संकेत म एक अधिराज्य की पालियामेण्ट का संकेत नही शामिल होगा।

६—इस एक्ट के उपरोक्त प्रविधानो की सामान्यता से पक्षपात किये बिना १८९० के कालोनियल कोर्ट आफ इडमिरेल्टी एक्ट की चौथी धारा (जो कि कुछ कानूनो का हिज मैजेस्टी की इच्छा के अनुसार सुरक्षित रखने अथवा समाप्त (suspend) करने का एक खण्ड रखना आवश्यक समझती है,) और उस एक्ट की सातवी धारा का उतना भाग जो कि एडमिरेल्टी के एक औपनिवेशिक न्यायालय के व्यवहार को नियन्त्रित करने के लिये न्यायालय के किसी भी नियमो के लिये कौसिल में हिज मैजेस्टी की स्वीकृति आवश्यक मानता है, इस एक्ट के लागू होने के बाद से किसी भी अधिराज्य में कोई भी प्रभाव नही रखेगा।

७—(I) इस एक्ट में से कुछ भी १८६७ से १९३० तक के ब्रिटिश नार्थ अमरिका एक्टो के रद्द होने, संशोधित होने अथवा बदलने में अथवा उसके आधीन किसी आज्ञा, कानून अथवा नियम पर लागू नही हो सकता।

(II) इस एक्ट के दूसरे भाग के प्रविधान कनाडा के किसी भी प्रान्त के बनाये हुए कानूनो और इस प्रकार के प्रान्तो की धारा सभाओ की शक्तियो पर लागू होंगे।

(III) इस एक्ट द्वारा कनाडा की पालियामेण्ट अथवा प्रान्तो की धारा सभा को दी हुई शक्तियां क्रमश कनाडा की पालियामेण्ट या प्रान्तो की धारा सभाओं की सामर्थ्य के अन्दर मामलों के सम्बन्ध में कानून बनाने तक सीमित कर दी जायेंगी।

८—इस एक्ट के जारी होने के पहले से उपस्थित कानून के अतिरिक्त इस एक्ट म किसी भी बात से आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ के कान्सटीटयूशन एक्ट अथवा न्यूजीलेण्ड के अधिराज्य के कान्सटीटयूशन एक्ट को बदलने या रद्द करने की शक्ति नहीं मिलेगी।

९—(I) इस एक्ट मे किसी भी बात से आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ की पालियामेण्ट को किसी ऐसे विषय पर कानून बनाने का अधिकार नही मिलेगा जोकि आस्ट्रेलिया कामनवैल्थ की सरकार अथवा पालियामेण्ट के अधिकार क्षेत्र में न होकर आस्ट्रेलिया के राज्यो के अधिकार में हो।

(II) इस एक्ट में किसी भी बात के लिये संयुक्त आंग्ल राज्य की पालिया-मेण्ट द्वारा आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ अथवा सरकार के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत

किसी विषय के बारे में बनाये हुए किसी भी कानून से आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ या सरकार की सहमति (Concurrence) की आवश्यकता नहीं होगी, किसी भी मामले में यहाँ कि यह इस एक्ट के जारी होने के पहले की वैधानिक प्रथा के अनुसार सयुक्त आग्ल राज्य की पार्लियामेण्ट इस प्रकार की सहमति के बिना वह कानून बना सकती।

(iii) आस्ट्रेलिया के कामनवैल्थ में एक्ट को लागू करने में धारा ४ म निर्देशित प्रार्थना और स्वीकृति का अर्थ कामनवैल्थ की पार्लियामेण्ट और सरकार की प्रार्थना और स्वीकृति से होगा।

१०—(i) इस एक्ट के निम्नलिखित भागो अर्थात भाग दो, तीन, चार, पाच, छ मे से कोई भी किसी भी अधिराज्य पर लागू नहीं होगा जिसमें कि यह भाग उस अधिराज्य के कानून के एक अश के रूप मे लागू होता है जब तक कि उस भाग को अधिराज्य की पार्लियामेण्ट ने ग्रहण नही कर लिया है और इस एक्ट के किसी भाग को ग्रहण करने वाला उस पार्लियामेण्ट का कोई भी एक्ट यह प्रविधान कर सकता है कि यह ग्रहण या तो इस एक्ट के प्रारम्भ होने से लागू होगा या बाद की किसी ऐसी तिथि से जारी होगा जोकि ग्रहण करने वाले एक्ट में स्पष्ट कर दी गई हो।

(ii) उपर्युक्त किसी भी ऐसे अधिराज्य की पार्लियामेण्ट किसी भी समय इस सेक्शन के उपविभाग

(१) में निर्देश किये हुए किसी भी सेक्शन का ग्रहण करना रोक सकती है।

(iii) जिन अधिराज्यो में यह सेक्शन लागू होता है वे हैं आस्ट्रेलिया का कामनवैल्थ, न्यूजीलैण्ड और न्यूफाउण्डलैण्ड का अधिराज्य।

(११)—१८८९ के इन्टरप्रीटेशन एक्ट की किसी भी बात का ख्याल किये बिना 'उपनिवेश" अभिव्यक्ति, इस एक्ट के जारी होने के बाद सयुक्त आग्ल राज्य की पार्लियामेण्ट के द्वारा पास किये हुए किसी भी एक्ट मे एक अधिराज्य अथवा किसी अधिराज्य का कोई प्रान्त या राज्य शामिल नही होगा।

१२—इस एक्ट को १९३१ का वैस्ट मिन्सटर परिनियम कहा जा सकता है। इस एक्ट की प्रस्तावना यह स्वीकृत करती है कि "राजमुकुट राष्ट्रो के ब्रिटिश कामनवैल्थ के सदस्यो के स्वतन्त्र सम्मिलन का प्रतीक है।" और यह घोषणा करती है कि क्योंकि 'वे राजमुकुट मे एक सामान आधीनता से सम्बद्ध हैं, यह सब कामनवैल्थों की एक दूसरे के सम्बन्ध में वैधानिक स्थिति के अनुकूल होगा कि राज्य सिंहासन अथवा राजकीय पदो के उत्तराधिकार को छूने वाले कानूनो में किसी भी परिवर्तन के लिये अब से सब अधिराज्यो की पार्लियामेण्टो तथा सयुक्त आग्ल राज्य की पार्लियामेण्ट

की सहमति की आवश्यकता होगी। वैस्टमिन्स्टर की व्यवस्था (Statute of Westminster) ने उपनिवेशो के व्यवस्थापन कार्य के ऊपर से वे सब प्रतिबन्ध हटा लिये जो कोलोनियल लाज वैलिडिटी एक्ट से लगे हुए थे। सक्षेप में, व्यवस्था ने स्वशासित अधिराज्यो के पद की व्याख्या कर दी और निश्चितकर दिया कि ये अधिराज्य अर्थात् कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी आयरलैण्ड, न्यूजीलैण्ड व न्यूफाउण्डलैण्ड, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल (British Commonwealth Nations) में ब्रिटेन के बराबरी के पद रखते है। सन् १७७३ की उपनिवेश सम्बन्धी नीति और १९३१ की इस वैस्टमिन्स्टर व्यवस्था मे कितना भारी अन्तर है।

पार्लियामेन्ट की कानूनी सर्वोच्चसत्ता अछूती है (Legal Sovereignty of Parliament)—कानूनी-तौर से वैस्टमिन्स्टर का परिनियम अधिराज्यो पर ब्रिटिश पार्लियामण्ट की सर्वोच्च सत्ता को समाप्त नही करता क्योकि कोई भी पालियामेण्ट अपने उत्तराधिकारियो पर प्रतिबन्ध लगाने वाला कोई भी कानून नही बना सकती। पालिग्रामेण्ट की इस सर्वोच्च सत्ता को स्थिर रखते हुए यह परिनियम उसका प्रयोग करने की पद्धति को स्पष्ट करता है, धारा ४ में लिखा है कि इस एक्ट के चालू होने के बाद सयुक्त राज्य की पालियामेण्ट का पास किया हुआ कोई भी अधिनियम किसी अधिराज्य का अथवा उस अधिराज्य के कानून का भाग नही माना जायगा। और न माना जा सकता है जब तक कि उस अधिनियम मे स्पष्ट रूप से यह घोषणा न कर दी गई हो कि उस अधिराज्य ने उसके लिये प्रार्थना की है और उसके अधिनियमित होने मे सहमति प्रकट की है।

द्वितीय विश्व महायुद्ध के प्रभाव (Effects of World War II)—यदि प्रथम विश्व महायुद्ध ने अधिराज्य के पद की वह धारणा उपस्थित की जो कि १९३१ के वैस्टमिन्स्टर के परिनियम में शामिल है तो द्वितीय विश्व महायुद्ध ने एक नवीन वैधानिक प्रत्यय अर्थात् कामनवैल्थ प्रस्तुत किया। साम्राज्य मे एशिया और अफ्रीका के अब तक पराधीन लोगों में राजनीतिक स्वतन्त्रता के अपने अधिकार के प्रति चेतना जाग्रत हो गई। यद्यपि युद्ध के बीच मे (१९४२-४४) विन्सटन चर्चिल ने भारत को पूर्ण स्वायत्त शासन देने के विचार का एकदम रद्द कर दिया और यह घोषणा की कि वह साम्राज्य विघटन का सभापतित्व नही करेगा, परन्तु उसका विश्व की शक्तियाँ अत्यन्त बलिष्ट मालूम हुईं। युद्ध समाप्त होने के १२ वर्ष के अन्दर भारत और पाकिस्तान गणतन्त्र बन गये। बर्मा साम्राज्य से अलग हो गया, लका, घना, और मलाया पुराने अधिराज्यों के समान स्वतन्त्र हो गये। इसका अनिवार्य परिणाम था अधिराज्यों का कामनवैल्थ में रूपान्तर जिसमें सदस्यता की नई धारणा थी और भारत तथा पाकिस्तान के अधिकारो को विशेष रूप से मान्यता दी गई थी। कामनवैल्थ अब

"कुछ थोडे से प्रयोजनो के लिये सयुक्त और अधिकाश प्रयोजनो के लिये वियुक्त" थी। वह किसी पूर्व निश्चित योजना का परिणाम नही थी बल्कि एक विकास की प्रक्रिया की उपज थी। वह परिवर्तनशील परिस्थितियो से अपना सामजस्य करने के योग्य है और यह गुण उसको एक ऐसा स्थायित्व प्रदान करता है जो कि किसी प्रकार की दबाव डालने वाली शक्ति अथवा स्थिर परिभाषा मे सभव नही था। अत प्रत्येक सदस्य राज्य में राजा के स्थान का एक नवीन अर्थ हो गया। यह अब प्रत्येक सदस्य राज्य का राजा समझा जाने लगा। उदाहरणार्थ कनाडा मे राजा का अधिकार कनाडा के राजा के रूप मे है न कि इगलैण्ड के राजा के रूप मे। इसलिये कनाडा का राजा कनाडा के मन्त्रियो की सलाह से कार्य करता है। जैसा कि कीथ ने कहा है, सन १९३२ म जब राजा ने लन्दन में स्थित दक्षिणी अफ्रीका सघ के कुछ नये सरकारी भवनो का उद्घाटन किया उस समय राजा के पार्श्व मे इगलैण्ड का गृह मन्त्री न था वरन् दक्षिण अफ्रीका की सरकार का प्रतिनिधि था। इसी प्रकार जब सम्राट् १९३९ में कनाडा गया तो उसने स्वय राजसी कार्य किये। वह कनाडा की पालियामेण्ट मे स्वय उपस्थित हुआ, विधेयको का प्रवर्तन किया और कनाडा भेजे हुए अमरीकी राजदूत के अधिकार पत्रो को ग्रहण किया और कनाडा की प्रिवी कौसिल की बैठक में भाग लिया। यह सब उसने कनाडा के राजा की हैसियत से किया न कि इगलैण्ड के राजा की हैसियत से।

कामनवैल्थ राष्ट्रो की बाह्य स्वतन्त्रता (External Independence of Commonwealth Nations)—वैसे तो सन् १९३१ से पूर्व भी अधिराज्य वैदेशिक मामलो मे पूर्ण सत्ताधारो की तरह से व्यवहार करते थे पर वैस्ट मिन्सटर के परिनियम में इसको वैध रूप दे दिया। उनकी इस स्वतन्त्रता का परिचय उस समय मिला जब वे स्वतन्त्र रूप से लीग आफ नेशन्स (League of Nations) अर्थात् राष्ट्रसघ के सदस्य हुए और उनको लीग की कौसिल में निर्वाचित स्थान दिया गया। सन् १९३६ मे जब राज-त्याग एक्ट पास हुआ तो मन्त्री परिषद् ने अधिराज्यो की सम्मति पहले से ही प्राप्त कर ली थी क्योकि इस अधिनियम से राजतन्त्र मे एक महत्वपूर्ण वैधानिक परिवर्तन किया गया था। जब सन् १९३९ में युद्ध की घोषणा हुई तो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो की दृष्टि से अधिराज्यो की वैधानिक स्थिति का परीक्षा का समय आया। इगलैण्ड ने न कि उपनिवेशो ने ३ सितम्बर १९३९ को युद्ध की घोषणा की। आस्ट्रेलिया ने स्वय अपने प्रस्ताव से ५ सितम्बर को जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। दक्षिणी अफ्रीका मे जनरल हर्टजोग के मन्त्रिमण्डल ने पालियामेण्ट में तटस्थ रहने का प्रस्ताव उपस्थित किया जो अस्वीकृत हो गया। प्रस्ताव के अनुकूल ६७ मत थे और ८० विरुद्ध थे।

मन्त्रिमण्डल ने त्यागपत्र दे दिया, जनरल स्मट्स ने एक नया मन्त्रिमण्डल बनाया और ६ सितम्बर को दक्षिणी अफ्रीका ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की। कनाडा की पार्लियामेण्ट ने युद्ध में भाग लेने के प्रश्न पर विचार किया और ९ सितम्बर को जरमनी के विरुद्ध युद्ध-घोषणा का अनुमोदन किया। आयरलैण्ड की पार्लियामेण्ट ने आयर की तटस्थता की घोषणा की। ये सब निर्णय डोमिनियनों ने स्वयं किये, ब्रिटेन का इस सम्बन्ध में उनके ऊपर कोई दबाव न था।

कामनवैल्थ के कई सदस्य विदेशों में अपने निजी राजदूत रखते हैं। व्यापारिक तथा दूसरे सम्बन्धित विषयों में उन्होंने विदेशी राष्ट्रों से स्वतन्त्र समझौते किये हैं। सब संविधानवादी यह मानते हैं कि वैस्टमिन्स्टर के परिनियम से अधिराज्यों को ब्रिटिश राष्ट्र संगठन से पृथक् होने का अधिकार प्राप्त हो गया है। दक्षिणी अफ्रीका में इस ओर कुछ बात चीत चली थी पर यह सम्भव नहीं होता कि कोई अधिराज्य पृथक् होने का निश्चय करेगा और विदेशी आक्रमण के विरुद्ध राष्ट्र संगठन की सुरक्षा सम्बन्धी सहायता को खोना चाहेगा। कनाडा के अधिराज्य ने प्रिवी कौंसिल में अपीलों को समाप्त कर दिया और अपने संविधान में संशोधन करके कनाडा के विधान में संशोधन करने की ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की शक्ति छीन ली है।

गवर्नर जनरल का पद (Position of Governor General)–वैस्टमिन्सटर का परिनियम पास हो जाने के पश्चात् कामनवैल्थ में गवर्नर जनरल के पद का महत्व बढ़ गया है। वह अब इंगलैण्ड के राजा का नहीं वरन् सदस्य राज्य के राजा का प्रतिनिधित्व करता है। गवर्नर-जनरल की नियुक्ति राजा द्वारा होती है पर उसके चुनने में राजा उसकी अधिराज्य के मन्त्रियों से परामर्श लेता है जिसके गवर्नर जनरल को नियुक्त करना हो। सन् १९३० के साम्राज्य सम्मेलन (Imperial Conference) ने अधिराज्य को अपने गवर्नर जनरल को स्वयं चुनने का अधिकार दे दिया। इसके बाद ही आस्ट्रेलिया में सर आइजक आइजक्स (Sir Issac Issacs) व कनाडा में लार्ड बेसबोरो (Lord Bessborough) आस्ट्रेलिया व कनाडा के मन्त्रियों की सलाह से गवर्नर-जनरल नियुक्त किये गये। गवर्नर जनरल को अब सेक्रेटरी आफ स्टेट (Secretary of State) की मध्यस्थता से छुट्टी नहीं मिल सकती, प्रधान मन्त्री ही ये कार्य करता है। इस प्रकार राजा का प्रतिनिधित्व करने वाला गवर्नर जनरल अपने मन्त्रिमण्डल की सलाह से कार्य करने वाला, वैसा ही वैधानिक अध्यक्ष है जैसे इंगलैण्ड का राजा ब्रिटिश मन्त्रि-परिषद् की सलाह से काम करता है।

राष्ट्रमंडल (कामनवैल्थ) (The Commonwealth)

स्टोवेल(Stowell)की परिभाषा के अनुसार वैस्टमिन्सटर का परिनियम अधिराज्यों की प्रभुता की मान्यता है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून में मान्यता के प्रयोजन से प्रभुता की तीन परीक्षायें[1] लागू करने पर हम आसानी से यह अनुमान कर लेते हैं कि अधिराज्य वे प्रभुता सम्पन्न राज्य हैं जिनमें प्रत्येक अधिराज्य के राजा की सामर्थ्य में इगलैण्ड का राजा राज्य का अध्यक्ष है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की सदस्यता से अधिराज्यों को प्रभुता-सम्पन्न राज्यों के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता मिल गई। १५ अगस्त १९४७ में भारत और पाकिस्तान भी अधिराज्य बन गए जिनको ब्रिटिश कामनवैल्थ संघ से अलग हो जाने की आजादी थी। जब भारत ने इस विकल्प का प्रयोग किया और २६ जनवरी १९५० को एक गणतन्त्र बन गया तब उसको कामनवैल्थ में अपनी सदस्यता बनाये रखने की आज्ञा मिल गई यद्यपि उसकी ब्रिटिश राज्य-सत्ता की आधीनता समाप्त हो चुकी थी। भारतीय संविधान ब्रिटिशराज्य सत्ता का कोई जिक्र नहीं करता। भारतीय गणतन्त्र को अपनी सदस्यता जारी रखने की सुविधा देने के लिये "ब्रिटिश" विशेषण हटा दिया गया और अब राज्यों के समूह के लिये कामनवैल्थ शब्द प्रयोग किया जाता है जिसमें कि वे भी शामिल हैं जो वैस्टमिन्स्टर के परिनियम में परिभाषित पद का उपभोग कर रहे हैं और भारत तथा पाकिस्तान भी जो कि ब्रिटिश राजा के आधीन नहीं हैं परन्तु उसको एकता के चिह्न स्वरूप कामनवैल्थ का प्रतीकात्मक अध्यक्ष मानते हैं। कामन वैल्थ के प्रधान मन्त्रियों की दो सप्ताह की कान्फ्रेंस के बाद जारी किये गये २२ अक्टूबर सन् १९४८ के घोषणा पत्र का कामनवैल्थ के बन्धन की प्रकृति को समझने में बड़ा महत्व है। इस घोषणा पत्र में कहा गया था "पिछले दो सप्ताहों में हुई मीटिंगों ने सामान्य हित के अनेक मामलों का विवेचन किया है जिनमें अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, आर्थिक मामले और प्रतिरक्षा भी शामिल हैं। इन विवादों से कामनवैल्थ की सरकारों में विश्व की समस्याओं के प्रति पहुँच में दृष्टिकोण की बहुत कुछ सामूहिकता दिखाई पड़ती है यूनाइटेड किंगडम की सरकार ने दूसरे पश्चिमी योरोपीय राष्ट्रों से ब्रूसेल्ज की सन्धि के अन्तर्गत अपने सम्बन्ध की प्रकृति को संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर

---

१ ये तीन परीक्षायें ये हैं (१) समूह की प्रतिनिधित्व करने और उसके सदस्यों पर अन्तर्राष्ट्रीय कानून की बहुत कुछ मान्यता लादने की सामर्थ्य रखने वाले अधिकारियों के निर्देशन में एक स्थायी संगठन, (२) इस प्रकार से संगठित समूह विदेशी अथवा बाह्य नियन्त्रण से स्वतन्त्र होना चाहिए (३) एक निश्चित भूखण्ड पर अधिकार जिस पर समूह की सरकार नियन्त्रण रखती हो और अंतर्राष्ट्रीय कानून के सिद्धान्तों के अनुकूल नीतियाँ।

इन्टरनेशनल ला, पृ० ३४।

की शर्तों के अनुसार एकप्रादेशिक सगठन के रूप मे निश्चित किया है सामान्य तौर से यह मान लिया गया था कि सयुक्त आग्ल राज्य का अपने पडोसियो से यह सम्बन्ध कामनवैल्थ के दूसरे सदस्या तथा सयुक्त राष्ट्र सघ के अनुकूल था और विश्व शान्ति की रक्षा करने के हित म था। जब कि कामनवैल्थ के सदस्या मे इस तथ्य के कारण हितो की समानता है कि प्रत्येक किसी न किसी समय ब्रिटिश शासन के आधीन था और इसलिये उनमे एक सामान्य राजनैतिक भाषा और एक सी राजनैतिक सस्थाये है, प्रत्येक अपने मामलो पर निर्बाध नियत्रण का उपभोग करता है। इस प्रकार वह स्वय अपनी विदेशी, गृह और राजकोषीय (Fiscal) नीतियों को निश्चित करता है अपने नागरिकता और आप्रव्रजन (Immigration) के नियमा को परिभाषित करता है, अन्य राष्ट्रो से सन्धियों के समझौते की बात चीत करता है और उन पर हस्ताक्षर करता है। स्वय अपनी कूटनीतिक सेवाये रखता है और स्वय ही शान्ति और युद्ध के मसला को हल करता है। यह तथ्य कि सयुक्त आग्ल राज्य और पाकिस्तान तथा कुछ अन्य अधिराज्य सीयाटो (Seato) तथा बगदाद पैक्ट की अपनी सदस्यता को अपनी नीति का समर्थन करते है जब कि भारत इस प्रकार की उपसन्धियो (Pacts) के विरुद्ध है और अपनी तटस्थता तथा सम्बन्धो (Power blocks) में शामिल न होने की घोषणा कर चुका है, यह स्पष्ट कर देता है कि कामनवैल्थ के सदस्य प्रभुत्व सम्पन्न राज्य है। कामनवैल्थ के सदस्य पूरी तरह प्रभुत्व सम्पन्न और स्वतन्त्र है और उनकी सदस्यता उनकी अपनी इच्छा से है। यह अत्यधिक स्पष्ट हो गया था जब कि बर्मा ने कामनवैल्थ के बाहर एक गणराज्य बनाने का निश्चय किया। २५नवम्बर १९४७ को लार्ड सभा मे बर्मा स्वतन्त्रता-विधेयक (Burma Independence Bill) को दूसरे वाचन के लिये पेश करते हुए उस समय के बर्मा के राज्य सचिव लार्ड लिस्टौवैल ने बतलाया था" हम यहाँ कामन वैल्थ की सदस्यता को किसी अनिच्छक जनता पर बल-प्रयोग द्वारा लादा हुआ नही मानते बल्कि एक अमूल्य अधिकार मानते है जो कि उन्ही को मिलता है जिनको उसकी तीव्र इच्छा है और जो उसके कर्तव्यों और अधिकारो को समझते है। जैसा कि कैरिगटन (Carrington) ने सकेत किया है "कामनवैल्थ कठोर व्यवहारिक सम्बन्धों द्वारा सगठित है।" स्वय कामनवैल्थ में भारत, सयुक्त आग्ल राज्य, पाकिस्तान और बर्मा ने चीन गणतन्त्र को मान्यता दी जबकि आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका सघ और कनाडा ने मान्यता नही दी इससे कामनवैल्थ के विभिन्न सदस्या की विदेशी मामलो में स्वतन्त्रता और भी स्थापित हुई। कामन-

१. कैरिगटन, सी० ई०—ए न्यू थ्योरी आफ दि कामनवैल्थ—इन्टर नेशनल अफयर्स Vol XXXI १, २ (अप्रैल १९५५) पृ० १४८।

वैल्थ के सदस्यों के आपसी झगडे (जैसे काश्मीर का मामला) सीधे सयुक्त राज्य सघ मे ले लिये जाने से कामनवैल्थ के सदस्यों की प्रभुसत्ता के बारे मे कोई सन्देह नही रह गया। २७ दिसम्बर १९५० को नई दिल्ली मे आस्ट्रेलियन प्रधान मन्त्री के सम्मान मे हुई एक राजकीय दावत मे बोलते हुए भारत के प्रधान मन्त्री नेहरू ने सयुक्त राष्ट्र सघ म भारत की सदस्यता के अथ को इन शब्दो मे बयान किया "हम कामनवैल्थ के सदस्य है—राष्ट्रो का वह विचित्र और प्राचीन सघ जो कि विपत्तियो मे सबसे अधिक पुष्ट मालूम पडता है । व्यवहार रूप मे कोई भी सूत्र न देखकर और अपने प्रत्येक भाग का पूरी स्वाधीनता देते हुए उसने जैसे तैसे किसी प्रकार का एक अदृश्य सूत्र पा लिया ह । यह कामनवैल्थ बार बार बढती और बदलती रही है और जब कि कामनवैल्थ के सदस्य कभी असहमत होते है, कभी एक दूसरे के विरोधी हित रखते है, कभी भिन्न-भिन्न दिशाओ मे सोचते है फिर भी यह मूलभूत तथा बना रहता है कि वे मित्रो क रूप मे मिलते है और जहाँ तक सभव हो सकता है, काम करने का एक सामान्य ढग धान की कोशिश करते है।" एक दूसरे अवसर पर बोलते हुए उन्होने यह बतलाया कि भारत न कामनवैल्थ में रहना क्यो पसन्द किया। "कामनवैल्थ में रहन न भारत कामनवैल्थ की कान्फ्रेसो मे प्रतिनिधि भेजने के अधिकार का और कामनवैल्थ की समस्याओ को जानने और उन पर राय देने के अधिकार का उपभोग करेगा। उसकी स्पष्ट सहमति के बिना कामनवैल्थ के किसी सदस्य द्वारा युद्ध की घोषणा अथवा किसी विदेशी शक्ति से सधि उस पर बाधित नही होगी। प्रशुल्क (Tarrif) के मामले में भारत कामनवैल्थ के विशेषाधिकारो का उपभोग करता रहेगा और भारतीय लोग उन्ही अधिकारो का उपभोग करगे जाकि उन्हे गणराज्य के प्रारम्भ से पहले कामनवैल्थ के देशो मे मिले हुए थ।[1] १७ मार्च सन् १९५३ में एक विरोधी प्रस्ताव कि भारत को कामनवैल्थ से अपना सूत्र तोड लेना चाहिये, पर लोक सभा मे बोलते हुए नेहरू जी ने कहा "मै सोचता हूँ कि कामनवैल्थ मे रहने से हमने निश्चित रूप मे लाभ उठाया है, निश्चय ही मै सोचता हूँ कि हमने विश्व नीतियो पर भी कुछ न कुछ प्रभाव डाला है, जहाँ तक हम कर सकते है वहाँ तक प्रत्यक्ष रूप से ही नही परन्तु कुछ हद तक अप्रत्यक्ष रूप स कामनवैल्थ के द्वारा भी। और मै सोचता हूँ कि यह हमारे लाभ में है और दुनिया क लाभ में भी है हम पर अथवा दूसरे दल पर समय समय पर दोस्ती से मिलने जुलने और दोस्ताना बातचीत करने के अलावा और कोई फर्ज नहीं है।"

१९५९ में जनसख्या और क्षेत्रफल के अनुसार कामनवैल्थ की रचना निम्नलिखित थी —

---

१. ग्लैड हिल, ए—कामनवैल्थ रिलेशन्स पृष्ठ १९।

क्षेत्र	स्थिति	क्षेत्रफल १०० वर्गमील में	जनसंख्या (लाखों में
संयुक्त आंग्ल राज्य	स्वतन्त्र	९४	५१
कनाडा	अधिराज्य	३८४६	१७
आस्ट्रेलिया	अधिराज्य	२९७५	१०
भारत	स्वतन्त्र	१२२१	३७७
दक्षिणी अफ्रीका[1]	अधिराज्य	४७३	१४
घना[1]	अधिराज्य	९२	४७
पाकिस्तान	स्वतन्त्र	३६१	८४
रोडेशिया न्यासालैण्ड	अधिराज्य	४८८	७
न्यूजीलैण्ड	अधिराज्य	१०४	२
मलाया	अधिराज्य	५१	६
लंका[1]	अधिराज्य	२५	९
	योग	९७३०	६१४

कामनवैल्थ का अपना कोई संविधान नहीं है। वह सामान्य हितों के मामलों का विवेचन करने के लिये समय समय पर होने वाली कान्फ्रेन्सों के द्वारा रूढ़ियों के आधार पर चलती है। परन्तु कुछ बातें ऐसी हैं जो विभिन्न सदस्यों की राजनैतिक व्यवस्थाओं में सामान्य रूप से हैं अर्थात् संसदीय संस्थायें, कानून का शासन, व्यक्ति की स्वतन्त्रता तथा कानून के सामने उसकी समानता की मान्यता (दक्षिणी अफ्रीका में काले और एशियाई देशों की दुर्भाग्य पूर्ण अवस्था एक अपवाद है) वयस्क मताधिकार के आधार पर खुले चुनाव, कार्यकारिणी पर विधान मंडल की महत्ता, दल व्यवस्था (Party System) और आमतौर से संयुक्त आंग्ल राज्य की कामन्स सभा की प्रथा और प्रेरणा पर आधारित संसदीय प्रक्रिया (Parliamentary Procedure) ब्रिटिश संसदीय प्रक्रिया का मैनुअल—एर्सकिन मे (Erskine May) आमतौर से कामनवैल्थ की पार्लियामेंटों में माना जाता है जो १९११ में स्थापित कामनवैल्थ पार्लियामेंट समिति के द्वारा सम्पर्क बनाए रखती है, जिसकी कामनवैल्थ के सदस्यों में ६० शाखायें हैं और जो समय समय पर कान्फ्रेंस करती है। उदाहरण के लिये १९५० में वैलिंगटन में, १९५१ में ओटावा में, १९५४ में नैरोबी में और १९५७ में नई दिल्ली में सभायें हुई।

कामनवैल्थ में नागरिक (Citizenship in the Commonwealth)

कामनवैल्थ का प्रत्येक सदस्य स्वयं अपने लोगों की राष्ट्रीयता और नागरिकता की परिभाषा करता है और दूसरे सदस्यों के नागरिकों की स्थिति का निश्चय करता

१. इन अधिराज्यों को स्वतन्त्र बनाये जाने की घोषणा हो चुकी है।

है। संयुक्त आंग्ल राज्य में कामनवेल्थ के सब देशों के नागरिकों को मू० के० का पूर्ण नागरिक माना जाता है जिनको वोट देने तथा कामन्स सभा में निर्वाचन के लिये खड़े होने का अधिकार है। यह विशेषाधिकार पारस्परिकता पर आधारित नहीं है, आयरिश गणतन्त्र के नागरिकों तक को ब्रिटिश लोगों के समान माना जाता है यद्यपि यह 'कामनवेल्थ के इतिहास म एक अभूतपूर्व असंगत स्थिति है" परन्तु यह कामनवेल्थ की बदलती हुई परिस्थितियों से अनुकूलन करने की सामर्थ्य का एक उदाहरण है। अपनी नमश सदस्यता की परिभाषा करने के लिये सदस्यों ने निम्नलिखित विधान स्वीकार किये हैं १९४६ का कनाडा का नागरिक अधिनियम, १९४८ का ब्रिटिश राष्ट्रीयता और न्यूजीलैण्ड नागरिकता अधिनियम,१९४८ का आस्ट्रेलिया का राष्ट्रीयता और नागरिकता अधिनियम, १९४८ का लंका नागरिकता अधिनियम, १९४९ का दक्षिणी अफ्रीका का नागरिकता अधिनियम,१९४८ का दक्षिणी रोडेशिया नागरिता और ब्रिटिश राष्ट्रीयता अधिनियम, १९५१ का पाकिस्तान नागरिकता अधिनियम, १९५१ का भारतीय नागरिकता अधिनियम।

कामनवेल्थ में सहयोग(Cooperation in Commonwealth)—कामनवेल्थ के सदस्यों के सहयोग करने के मामले निम्नलिखित हैं —

(१) राजनैतिक मामले(Political matters)—समय समय पर कामनवेल्थ कान्फ्रेन्स की जाती है जबकि सदस्य देशों के प्रधान मन्त्री (कोलम्बोयोजना के समान) परस्पर सहायता और विकास के कार्यक्रम बनाते हैं। संयुक्तराष्ट्र के समान अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में कामनवेल्थ के सदस्य अनिवार्य रूप से नहीं परन्तु फिर भी आमतौर से उनके अपने वचनों और मौलिक विदेशी नीतियों को प्रभावित न करने वाले प्रश्नों पर समान राह पर चलते हैं।

(२) आर्थिक(Economic)—अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार वाणिज्य में सदस्य सबसे अधिक वांछित राष्ट्र के रूप में एक दूसरे की ओर विशेष उदारता दिखलाते है। अधिकांश सदस्य स्टर्लिंग मुद्रा के क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। अधिक विकसित सदस्य कम विकसित क्षेत्रों को सहायता देने को राजी हो गए हैं।

(३) औद्योगिक सहायता(Technical Assistance)—१९५० में कोलम्बो में हुए कामनवेल्थ के विदेश मन्त्रियों के सम्मेलन ने एक विचारक समिति स्थापित की जो कि सिडनी में मिली और तब उस वर्ष बाद में लन्दन में मिली और दक्षिणी तथा इन अधिराज्यों को स्वतन्त्र बनाये जाने की घोषणा हो चुकी है।
दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों के लिए वित्तीय और औद्योगिक सहायता के प्रविधान की सिफारिश की।

(४) विविध (Miscellaneous)—सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्रों में

अध्याय १५

राष्ट्रमंडल (कामनवैल्थ) की सरकारें

न तो विधि (Statute) और न राजा के विशेषाधिकार (Prerogative) अर्थात् लोक विधि, उपराष्ट्रों (Dominions) की शासन-पद्धति के मूल तत्व को स्पष्ट करते है। उनकी शासन पद्धति इगलैण्ड (United Kingdom) की भाँति उन रूढियो अथवा अभिसमयो (Conventions) पर स्थित है जो विधि के अनुरूप नही है क्योकि वे किसी कानूनी कृत्य द्वारा लागू नही किये जा सकते।

—ए० बी० कीथ

राष्ट्रमण्डल (Commonwealth) की सरकारो की स्थापना विभिन्न कालो और विभिन्न परिस्थितियो में हुई है। परन्तु उनमें कई लक्षण समान है, ससदीय शासन प्रणाली, विधि का नियम (Rule of Law), सिद्धान्त और कार्यरूपता (जहाँ तक लिखित सिद्धान्त से अभिप्राय है इन दोनो में अन्तर, यद्यपि शासन-प्रणालियो की स्थापना लिखित सविधानो द्वारा हुई है फिर भी अनेक रूढियो अथवा अभिसमयो (Conventions) को इगलैंड की शासन पद्धति से लिया गया है। इस अध्याय में कुछ राष्ट्रमडलो की सरकारो का विवेचन किया गया है, विशेषतया कनाडा का जो कामनवैल्थ का प्राचीनतम सदस्य होने के अतिरिक्त एक ऐसा राज्य है जिसने अपनी शासन पद्धति में सघवाद (Federalism) और ससदीय प्रणाली (Parliamentarianism) का सम्मिश्रण किया है।

(१) कनाडा का शासन विधान

"सघ शासन की विशेषता यह है कि इससे एक ऐसी शासन पद्धति प्राप्त हो गई जिससे फ्रासीसी अपना पृथक राष्ट्रीय जीवन सुरक्षित रखते हुये इस योग्य बने रहे कि वे अग्रेजो के साथ मिल कर रह सकें और कनाडा की विशेष राष्ट्रीयता मे उनके हिस्सेदार बन कर उस राजभक्ति व अनुराग का परिचय दें जो जाति व समूह की सीमा को लाँघ कर सारी डोमिनियन के प्रति दृढ़ हो जाय।'

—अलैग्जैण्डर ब्रैडी

कनाडा ब्रिटिश साम्राज्य मे सबसे पहला उपनिवेश था जिसको उपनिवेश का रूप प्राप्त हुआ और जहाँ सघ-शासन स्थापित हुआ। इसीलिए इसके शासन विधान मे कुछ नवीन बातें भी मिलगी। इस नवीनता का एक विशेष कारण यह है कि कनाडा मे फ्रासीसी लोगो की सख्या अधिक है। ये लोग क्विबैक के प्रान्त में बहुत अधिक सख्या म रहते हैं जिनमें वहाँ इनका बहुमत है।

शासन-विधान का इतिहास

कनाडा के उपनिवेश को फ्रांसीसियों ने ही सन् १६०८ में बसाया था। प्रारम्भ में इसका शासन फ्रांस के एक दूसरे सूबे की तरह फ्रांस के राजा द्वारा होता था। पर जब यूरोप में फ्रांसीसियों और अंग्रेजों में सप्त वर्षीय युद्ध छिड़ा तो कनाडा में इन दोनों जातियों के लोगों में लड़ाई आरम्भ हो गई। जनरल वुल्फ ने १७५९ में क्विबैक पर आक्रमण किया और उस पर अपना अधिकार कर लिया। एक वर्ष बाद मौन्ट्रीयल भी अंग्रेजों के हाथ आ गया। सन् १७६३ की पैरिस की सन्धि से फ्रांस ने इंगलैण्ड के राजा को कनाडा सौंप दिया परन्तु साथ ही साथ यह समझौता भी हुआ कि कनाडा के लोगों को कैथोलिक सम्प्रदाय में रहने की स्वतन्त्रता रहे। इसके पश्चात् कनाडा का एक गवर्नर नियुक्त कर दिया गया और उसकी सहायता करने के लिये एक कौंसिल व एक असेम्बली भी बना दी गई। परन्तु इसके बाद अंग्रेज एक बड़ी सख्या में कनाडा में आकर बस गये, जिससे राजनैतिक समस्या अधिक पेचीदा हो गई। न बहुसख्यक फ्रांसीसी शासन पद्धति से सन्तुष्ट थे और न अल्प सख्यक अंग्रेज। सन् १७७४ में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने क्विबैक एक्ट (Quebec Act) पास किया जिससे रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के अनुयायियों की बहुत सी शिकायतों को दूर कर दिया गया। जब अमरीकी स्वतन्त्रता युद्ध हुआ तो कनाडा की राजनीति में और भी परिवर्तन हुआ क्योंकि अमरीका से बहुत से ब्रिटिश राजभक्ति रखने वाले अंग्रेज कनाडा में आकर बस गये थे। ब्रिटिश पार्लियामेंट ने सन् १७९१ में फिर एक शासन-विधान अधिनियम पास किया। इस एक्ट से कनाडा को दो प्रान्तों में विभाजित कर दिया गया, एक ऊपरी कनाडा जिसमें अंग्रेज बहुसख्यक निवासी थे और दूसरा निचला कनाडा जिसमें फ्रांसीसी बहुसख्या में रहते थे। प्रत्येक प्रांत में एक निर्वाचित असेम्बली और पैतृक कौंसिल बनाने की योजना कर दी गई। गवर्नर को स्वतन्त्र अधिकार दे दिया गया क्योंकि वह बिना धारा सभा की अनुमति की प्रतीक्षा किये खर्च के लिये मालगुजारी और सेना-अनुदानों को ले सकता था। इसका परिणाम यह हुआ कि कनाडा की कार्यपालिका (Executive) स्वतन्त्र और अनुत्तरदायी बना दी गई और वह कौलोनियल आफिस से निर्देश प्राप्त करती थी जो सहस्त्रों मील दूर स्थित होने से वास्तविक स्थिति से पूरा अनभिज्ञ रहता था। निचले कनाडा में अंग्रेजों की प्रधानता कौंसिल में थी और फ्रांसीसियों की असेम्बली में। इसलिये ये दोनों सदन एक दूसरे से अधिक अधिकार प्राप्त करने का प्रयत्न करते रहते थे। इसके फलस्वरूप प्राय प्रतिनिधिक असेम्बली और अनुत्तरदायी कार्यपालिका में ऐसी मुठभेड़ हो जाती थी कि कार्य-

वाही आगे चलने से रुक जाती थी। अंग्रेज-फ्रांसीसी विरोध निचले कनाडा में भयकर रूप धारण करने लगा और फ्रांसीसियों के नेता व असेम्बली के निर्वाचित स्पीकर पैपीनो (Papineau)ने विद्रोह खड़ा कर दिया। यह विद्रोह दबा दिया गया। पैपीनो भाग गया पर असन्तोष की आग सुलगती रही ऊपरी कनाडा में भी असन्तोष था और वहाँ भी बहुसंख्यक अंग्रेज शासन में लोकाधिकार प्राप्त करने के लिये आवाज उठा रहे थे।[1]

लार्ड डरहम की रिपोर्ट—इस जटिल समस्या का सामना करने के लिये कनाडा के शासन-विधान का स्थगन कर दिया और लार्ड डरहम को समस्त शासनाधिकारों से सुसज्जित कर कनाडा भेजा। अपनी नियुक्ति से दो वर्ष के भीतर लार्ड डरहम ने सारी स्थिति का अध्ययन किया और उसके पश्चात् ब्रिटिश सरकार को अपनी प्रसिद्ध रिपोर्ट भेजी जिससे ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति में एक नये युग का प्रारम्भ हुआ। लार्ड डरहम ने अपनी रिपोर्ट में सेना के बुरे सगठन व अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच वैरभाव के कारण न्याय के पथभ्रष्ट होने की शिकायत की। रिपोर्ट में यह भी बतलाया गया कि गवर्नर किस प्रकार कौलोनियल आफिस(Colonial Office) पर निर्भर रहता था, और कार्यपालिका किस प्रकार अनुत्तरदायी और स्वेच्छाचारी थी। इन सब बुराइयों को दूर करने के लिये रिपोर्ट में यह सुझाव रखा गया कि प्रारम्भ में एक दो गलती भी हो जाय परन्तु इस उपनिवेश को ऐसी शासन-प्रणाली दी जाय जिससे उत्तरदायी सरकार बन सके। लार्ड डरहम को यह आशा थी कि ऐसी उत्तरदायी सरकार बनने से ही अंग्रेज और फ्रांसीसी एक दूसरे के विचारों और भावनाओं का आदर करना सीखेंगे।

लार्ड डरहम की रिपोर्ट में दिये हुये सब सुझावों को यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने स्वीकार कर लिया परन्तु पार्लियामेण्ट ने सन्१८४० में एक एक्ट पास किया जिससे ऊपरी और निचले कनाडा को फिर से सयुक्त कर दिया। इस एक्ट की प्रस्तावना में यह स्पष्ट था कि उस समय ब्रिटिश सरकार को यह विश्वास हो चला था कि दोनों प्रान्तों के मिलाने से कनाडा की राजनैतिक स्थिति सुधर जायगी और शान्ति स्थापित हो जायगी। लगभग बीस वर्ष तक इस नई व्यवस्था को चालू रखा गया। परन्तु दोनों भागों की जनसख्या की बनावट में जो भेद और उन दोनों के हितों में जो विभिन्नता थी उससे यह योजना सफल न हो सकी और नई नई समस्यायें खड़ी हो गई। कनाडा के निवासी इससे सन्तुष्ट न हुये और उनको यह आवश्यकता प्रतीत होने लगी कि अमरीका स्थित सब उपनिवेशों को एक सघ-शासनप्रणाली के द्वारा सगठित किया जाय।

---

१. शर्मा . फेडरल पालिटी, पृ० ८६।

क्विबेक के प्रस्ताव व उसके पश्चात्—यातायात के मार्गों के खुलने और पश्चिम की ओर कृषि के बढ़ने से उपनिवेश-निवासी एक दूसरे के अधिक पास आ गये। सन् १८६० में इन सब उपनिवेशो को मिलाने के लिये प्रकट रूप मे आन्दोलन होने लगा। सन् १८६४ में सब बड़े बड़े उपनिवेशो के प्रतिनिधि २४ अक्टूबर के दिन क्विबेक में एकत्रित हुये और उन्होंने मिलकर प्रसिद्ध क्विबेक प्रस्ताव पास किये जिनमें सयुक्त एव बृहत् कनाडा के सघात्मक शासन विधान के मुख्य मुख्य सिद्धान्तों की रूप रेखा तैयार की गई। मुख्य मुख्य उपनिवेशों के प्रतिनिधि इसके पश्चात् इगलैण्ड गये जिससे वे ब्रिटिश सरकार के साथ अपनी शासन-विधान सम्बन्धी समस्याओं पर बातचीत कर सके। इस बातचीत का फल यह हुआ कि पार्लियामेण्ट ने सन् १८६७ मे ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट (British North America Act) पास करके कनाडा के लिए ऐसा शासन विधान बनाया जिससे सघ शासन स्थापित हो। "सन् १८६७ का एक्ट ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति मे एक नये सिद्धान्त का प्रवर्तक था। इससे यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश मन्त्रिपरिषद् ने अमरीकन राज्य क्रान्ति से एक सबक सीखने मे चूक नहीं की। इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि ब्रिटिश सम्राट् के प्रति निष्ठा रखते हुए भी उपनिवेश ऐसी शासन प्रणाली का विकास कर सकते थे जिसमें उन्हे अपनी आकाक्षाये पूरी करने का पर्याप्त अवसर मिले। कनाडा की सघ-शासन योजना से साम्राज्य के दूसरे उपनिवेशों के लिये भी उदाहरण उपस्थित हो गया और जल्दी इसके अनुकूल उन्होंने कार्यवाही की।"

सन् १८६७ का शासन विधान

शासन विधान के सिद्धान्त—जैसा पहले कहा जा चुका है १८६७ का ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट सन् १८६७ के प्रसिद्ध क्विबेक-प्रस्तावों के आधार पर बनाया गया था। तीसरा प्रस्ताव इस प्रकार था—"सामान्य शासन के विधान बनाने मे यह सम्मेलन मातृभूमि से (इगलैण्ड से) सर्वदा के लिये सम्बन्ध स्थापित करने के अभिप्राय को दृष्टि में रखते हुए इन प्रान्तो के हितो की साधना के लिये जहाँ तक सम्भव है ब्रिटिश शासन विधान का अनुकरण करना चाहता है।"[1] उपनिवेशो की इस इच्छा को एक्ट की प्रस्तावना में भी अन्तर्निवेश कर दिया गया था। इस प्रकार ब्रिटिश शासन-विधान का अनुकरण करने वाला कनाडा का शासन विधान बहुत सी ब्रिटिश परम्परागत बातो को भी मानता है। कनाडा के शासन विधान की मुख्य मुख्य विशेषताये ये हैं —

(१) यह ससदात्मक कार्यपालिका की स्थापना करता है, न कि अध्यक्षात्मक की जैसी कि सयुक्त राष्ट्र अमरीका मे पाई जाती है।

(२) सघ ससद (Parliament) के दूसरे सदन मे वे सीनेटर सदस्य होने

१ शर्मा : फैडरल पौलिटी, पृष्ट ९०।

हैं जिनको गवर्नर जनरल उनके जीवन भर के लिये नियुक्त करता है। "पालियामेण्ट" शब्द इगलैण्ड से ही लिया गया और सीनेट की आजीवन सदस्यता से यह प्रयत्न किया गया है कि उसको किसी सीमा तक हाउस आफ लार्ड्स के समान रखा जाय।

(३) सघ सरकार के अधिकार इकाइयों के अधिकारो से अधिक है। इन इकाइयों का नाम प्रान्त (Province) रखा गया है, न कि स्टेट (State), क्योंकि पहले नाम से यह बोध सा होता है कि वे केन्द्रीय सरकार के आधीन हैं। सब अवशिष्ट अधिकार केन्द्रीय सरकार को सौपे गये हैं।

(४) ब्रिटिश शासन-विधान का जहाँ तक सभव हो अनुकरण किया जाय, इस उद्देश्य से एक्ट मे यह व्यवस्था की गई है कि कनाडा की एक प्रिवी-कौंसिल बनाई जाय जो ब्रिटिश प्रिवी कौंसिल के समान हो। कनाडा के शासन-विधान की यह विशेषता दूसरे उपनिवेशो के शासन-विधानो में नही पाई जाती।

(५) शासन-विधान का सशोधन सिद्धान्तत ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ही कर सकती है। इस बात मे भी यह विधान दूसरे शासन-विधानो से भिन्न है।

(६) कनाडा की न्यायपालिका के अधिकार भी आस्ट्रेलिया की न्यायपालिका के अधिकारो से कम हैं हालांकि वेस्टमिंस्टर की व्यवस्था के बाद सिद्धान्त व व्यवहार मे बहुत कुछ अन्तर हो गया है। सघीय और प्रान्तीय सरकारो पर अब इगलैण्ड की पार्लियामेण्ट का कोई अधिकार व प्रतिबन्ध नही, और उनको कानून बनाने की पूरी स्वतन्त्रता है।

(७) इसमें सघ-प्रणाली तथा ससदात्मक प्रणाली का सम्मिश्रण किया गया है जिसका उपयोग बाद में आस्ट्रेलिया, और भारत में भी किया गया है।

ब्रिटिश साम्राज्य में कनाडा पहला देश था जिसमे सघ शासन स्थापित हुआ। इसलिए सन् १८६७ में उत्पन्न होने वाली ब्रिटिश सघ-शासन प्रणाली में कुछ अद्वितीय बात देखने को मिलती हैं। सबसे प्रथम बात तो यह है कि कनाडा ने पार्लियामेण्टरी ढग की सरकार पसन्द की। दूसरे, ब्रिटिश सम्राट् कार्यपालिका का अध्यक्ष रखा गया है। निर्बन्धकारी शक्ति भी ब्रिटिश सम्राट् और डोमिनियन धारासभा में निहित कर दी गई है।

सन् १८६७ के सघ शासन विधान से क्विबेक प्रान्त के निवासी फ्रांसीसियो को अपना शासन भार स्वय सभालने का अवसर मिला। परन्तु समय के बीतने से कनाडा के ब्रिटिश और फ्रांसीसी निवासियो के पारस्परिक जातीय भेद बहुत कुछ मिट गये। यहाँ तक कि निचले कनाडा अर्थात् क्विबेक प्रान्त के निवासी फ्रांसीसी अब अपने आपको फ्रांसीसी न कह कर कनाडा निवासी कहते हैं। जहाँ तक उनके फ्रांस के नाते की बात है वे १८ वीं शताब्दी के फ्रांस का अपने आपको समझते है न कि बीसवीं शताब्दी का।

सन् १७८९ की फ्रांस की क्रान्ति के समय से और विशेषकर उस समय से जब फ्रांस में वर्तमान प्रजातन्त्र स्थापित हुआ, उनके ऊपर फ्रांसीसी राजनैतिक संस्थाओं या विचारों का बहुत कम प्रभाव पड़ा है। इसका कारण यह है कि यद्यपि शिक्षित व्यक्ति अब भी फ्रांसीसी पुस्तकों को पढ़ते हैं परन्तु पिछले चालीस वर्षों से शासन करने वाले प्रजातन्त्र वादियों के पादरी-विरोधी रुख ने उनके मन में फ्रान्स के प्रति उदासीनता उत्पन्न कर दी है।[1] यह सच है कि कनाडा की ये दोनों जातियाँ मिलकर एक नहीं हुईं, न यह सम्भव है कि वे मिल जाय, फिर भी १८४० के पहले का वैरभाव अब लगभग समाप्त हो चुका है। इस सबका श्रेय १८६७ के शासन विधान को है जिससे उन्हें अलग रहने और साथ साथ एक ही डोमिनियन सरकार में समान हिस्सेदार रहने का अवसर मिला है।

संघीय सरकार

जैसा पहले बतला चुके हैं संघ-सरकार की शक्तियाँ प्रान्तीय सरकारों की शक्तियों से अधिक हैं। जितने विस्तृत अधिकार कनाडा में संघ-सरकार को मिले हुए हैं, वैसे बहुत कम संघ-शासन विधान केन्द्रीय सत्ता को देते हैं।[2] विधान के ९१ वें अनुच्छेद के अनुसार निम्नलिखित विषयों में संघ सरकार को ही अनन्य रूप से पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं (१) राज्य ऋण और जायदाद (२) व्यापार का नियम (३) किसी भी रीति से कर वसूल कर मुद्रा एकत्रित करना (४) राज्य के मान के आधार पर ऋण उधार लेना (५) डाक सेवायें, (६) जनगणना और सांख्यिकी (Statistics), (७) स्थल व जल सेना व सुरक्षा, (८) कनाडा की सरकार के कर्मचारियों के वेतन निश्चित करना और उसके दिये जाने का प्रबन्ध करना, (९) विपदसूचक संकेतों, आकाश, द्वीपों, तैरते हुए निशानों का प्रबन्ध करना, (१०) नौतरण व नौपरिवहन, (११) छूत की बीमारियों वाले पोत से संसर्ग निषेध और नाविक चिकित्सालयों की स्थापना, (१२) सागर तट व देश के भीतर की मछलियाँ, (१३) किसी प्रान्त और दूसरे ब्रिटिश देश या विदेश के बीच या दो प्रान्तों के बीच नाव से पार जाने की व्यवस्था, (१४) चलार्थ (Currency) व मुद्रा, (१५) बैंकें और नोटों का निकालना (१६) सेविंग बैंकें, (१७) भार व माप, (१८) प्रतिज्ञा अर्थपत्र व हुंडी, (१९) ब्याज, (२०) ऋण चुकाने की कानूनी वस्तु, (२१) दिवालियापन (२२) अन्वेषणों के सुरक्षित प्रयोगाधिकार, (२३) प्रतिलिप्याधिकार, (२४) मूल निवासी और उनके लिये सुरक्षित भूमि, (२५) जानपद बनाना और अन्यदेशीय निवासी, (२६) विवाह और तलाक, (२७) केवल दण्ड देने वाले न्यायालय की स्थापना छोड़ कर परन्तु दण्ड-

१. ब्राइस : मौडर्न डैमोक्रेसीज, प्रथम पुस्तक, पृ० ५२१।
२. डौसन : कस्टीट्यूशनल इश्यूज इन कनाडा, १९०८-१९३१, पृ० ४३१।

विषयो मे कार्य-प्रणाली के निश्चित करने के काम को शामिल कर दण्डविधि, (२८) शोधनालयो की स्थापना व उनकी देखभाल करना, और (२९) वे विषय जो स्पष्टतया प्रान्तो को दिये हुये विषयो मे से निकाल कर एक्ट मे बतला दिये गये हैं। इनके अतिरिक्त वे विषय जो उपर्युक्त विषयों के अन्तर्गत आते हो वे स्थानीय विषयो की उस श्रेणी मे नही समझे जायेंगे जो प्रान्तो को ही केवल सौप दिये गये हैं।[1]

प्रान्तो पर सघ सरकार का नियन्त्रण—सघ सरकार, प्रान्तो की सरकारा के ऊपर इस बात मे नियन्त्रण रखती है कि वहा प्रान्तो के गवर्नरो को नियुक्त करती है। यह नियन्त्रण गवर्नर जनरल इन कौसिल (Governor General in Council) के द्वारा किया जाता है। गवर्नर-जनरल-इन-कौसिल गवर्नरो को हटा सकता है। और प्रान्तीय धारा सभा द्वारा बनाये हुये कानून को रद् कर सकता है। अभी तक गवर्नर जनरल ने केवल दो गवर्नरो को ही उनके पदो से अलग किया है। परन्तु सघ शासन स्थापित होने से तीस वर्ष तक कानूनो के रद् करने के अधिकार का खुले तौर पर प्रयोग किया गया और उस समय यह समझा जाने लगा कि प्रान्तीय स्थानीय स्वतन्त्रता के लिये यह अधिकार बडा घातक है। यद्यपि इस अधिकार मे कानूनी ढग से कोई कमी नही आई है परन्तु पिछली शताब्दी के अन्त होने के बाद इसका अधिक प्रयोग नही किया गया है। हाल मे डोमिनियन सरकार प्रान्तीय सरकारो के ऊपर एक नया नियन्त्रण रखने लग गई है जिस नियत्रण के लिए विधान ने कोई विचार न किया था। डोमिनियन सरकार प्रान्तीय सरकारो को सहायता के लिये अनुदान देती है और ऐसे अनुदान देते समय सघ सरकार प्रान्तीय क्षेत्र वाले विषयो मे प्रान्तीय सरकार पर प्रतिबन्ध लगा देती है जिसे प्रान्तीय सरकारे मान लेती हैं क्योकि ऐसा न करने से उन्हे अनुदान नही मिलता और वे नई योजनायें कार्यान्वित नही कर सकती।

सघीय विधान मण्डल—कनाडा में निर्बन्धकारी सत्ता राजा और पार्लियामेंट मे निहित है।

सघ (डोमिनियन) विधान मण्डल कनाडा में दो सदनो वाला है और लगभग ब्रिटिश ढग पर सगठित है। दोनो सदनो में से एक को हाउस आफ कामन्स (House of Commons) कहकर पुकारा जाता है और दूसरे को सीनेट (Senate)। दानों सदनो को मिलाकर पार्लियामेन्ट कहा जाता है। पार्लियामेण्ट की व्यवस्था सम्बन्धी शक्तियों का पहले ही वर्णन किया जा चुका है।

प्रथम सदन में प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त—सन् १९४७ के प्रतिनिधित्व के एक्ट के अनुसार इस समय कनाडा के हाउस में २५५ प्रतिनिधियो को स्थान दिया गया, जिनमे ८५ ऑन्टेरियो के, ७५ क्विबेक के, १७ सस्केचुवान के, १४ मैनीटोवा के,

[1] डौसन इश्यूज इन कनाडा पृ० ४३२

१७ एलबर्टा के, २२ ब्रिटिश कोलम्बिया के, ७ न्यूफाउण्डलैण्ड के, १२ नोवास्कोशिया के, १० न्यू ब्रुन्सविक के, ४ प्रिंस एडवर्ड द्वीप के १ यूकन का और उत्तर-पश्चिमी भाग का १ प्रतिनिधि होता है। १ मार्च १९४९ को यह निश्चय हुआ कि न्यूफाउण्डलैण्ड द्वीप भी कनाडा मे मिलाकर उसका एक प्रान्त बना दिया जाय और इस प्रकार उसके भी सात प्रतिनिधि हाउस में बैठने लगे हैं जिससे कुल प्रतिनिधियो की संख्या भी बढ कर २६५ हो गई है। प्रारम्भ मे (विधान की ३७ वी धारा के अनुसार) हाउस के सदस्यों की संख्या १८१ ही रक्खी गई थी परन्तु ५१ वीं धारा मे यह आयोजन कर दिया गया है कि कनाडा की पार्लियामेण्ट प्रति दस वर्षीय जनगणना के पश्चात् प्रतिनिधियो की संख्या को आगे बतलाये हुये नियमो के अनुसार घटा बढा सकती है। वे नियम ये हैं कि क्विबैक के प्रतिनिधियों की संख्या ६५ मे कोई परिवर्तन न होगा। दूसरे प्रान्तो मे प्रतिनिधि जनसंख्या के उसी अनुपात से होंगे जो अनुपात क्विबैक की जनसंख्या और ६५ मे होगा। इस घटती-बढती में किसी भी प्रान्त के प्रतिनिधियो की संख्या तब तक न घटाई जायगी जब तक कि जनसंख्या ५ प्रतिशत या उससे अधिक न घटी हो, परन्तु क्विबैक के प्रतिनिधियों की संख्या किसी दशा में भी ६५ से कम न की जायगी। इसका अर्थ यह निकला कि हाउस मे प्रतिनिधियो की संख्या मालूम करने के लिये कनाडा की जनसंख्या में उस संख्या से भाग देना पड़ेगा जो हमें क्विबैक की जनसंख्या में ७३ से भाग देने से लब्धि के रूप में प्राप्त होती है। इसको हम अधिक स्पष्ट करने के लिये इस प्रकार भी बतला सकते है —

$$\text{हाउस के सदस्यो की संख्या} = \frac{\text{कनाडा की जन-संख्या}}{\text{क्विबैक की जन-संख्या}}$$

इस प्रकार गणित करने से यह मालूम होता है कि इस समय कनाडा के हाउस मे प्रत्येक प्रतिनिधि लगभग ४५,६०० व्यक्तियो का प्रतिनिधित्व करता है। प्रत्येक दसवर्षीय जनगणना मे जनगणना की प्राकृतिक वृद्धि से व नये प्रान्तो के संघ शासन मे आने से हाउस मे प्रतिनिधियो की संख्या बढती रही है और इस समय यह संख्या २६५ है, सदन की बैठक मे गणपूरक संख्या २० है। सदन अपना स्पीकर अर्थात् सभापति स्वयं ही चुनता है। सदन की अवधि पांच वर्ष है परन्तु इसके पहले ही इसका विघटन हो सकता है यदि गवर्नर जनरल प्रधान मन्त्री की इस सम्बन्ध में सलाह मान ले। सदन के निर्णय बहुमत से होते हैं। स्पीकर को मत देने का तभी अधिकार है जब किसी प्रश्न के अनुकूल व उसके विरोध मे बराबर मत हो, अन्यथा नहीं। सदन के प्रतिनिधियो का निर्वाचन प्रौढ-मताधिकार के आधार पर होता है। सन् १९२० के डोमिनियन एक्ट (Dominion Act) के अनुसार प्रत्येक प्रौढ पुरुष व स्त्री का मत देने का अधिकार है यदि वह अपने आपको ब्रिटिश जानपद मानता हो और यदि वह

कनाडा में दो वर्ष व अपने निर्वाचन क्षेत्र में दो मास से वास करता हो। संसद के प्रत्येक सदस्य को ८,००० डालर वार्षिक मिलता है।

सीनेट का संगठन—सीनेट या दूसरे सदन में इस समय १०२ सदस्य हैं[1] जो इस प्रकार वितरित हैं, ओन्टेरियो २४, क्विबैक ३४, समुद्री प्रान्त २४, (नोवास्कोशिया[1] १० न्यू ब्रुसविक १०, प्रिंस एडवर्ड द्वीप ४), चौथा प्रान्त समूह २४ (प्रत्येक के ६), और न्यूफाउण्डलैण्ड के ६ प्रतिनिधि। कनाडा निवासी सीनेट को ब्रिटिश हाउस आफ लार्ड्‌स के ढंग पर बनाना चाहते थे परन्तु हाउस आफ लार्ड्‌स की पैतृक सदस्यता के अभाव में सीनेट के सदस्यों का गवर्नर जनरल उनके जीवन भर के लिये नियुक्त करता है। सीनेट के सदस्यों की नियुक्ति मन्त्रिमण्डल की सिफारिश पर ही की जाती है। इसलिये यदि कोई स्थान रिक्त होता है तो वह उन्हीं व्यक्तियों को मिलता है जिन्होंने पदारूढ पार्टी अर्थात् पक्ष की पूर्वकाल में किसी प्रकार सेवा की हो। यही कारण है कि सीनेट को मन्त्रिमण्डल का रिश्वती फण्ड कहा जाता है।

सीनेट के सदस्य की योग्यतायें—सीनेट का सदस्य बनने के लिये व्यक्ति में उच्च योग्यतायें होनी चाहियें। ये योग्यतायें विधान की २३ वीं धारा में वर्णित हैं। सीनेट का सदस्य ३० वर्ष की आयु का होना चाहिये। वह या तो जन्म से ही ब्रिटिश जानपद हो या ब्रिटिश पार्लियामेण्ट या कनाडा की किसी धारा सभा के किसी कानून से जानपद बन गया हो। क्विबैक के प्रतिनिधि को उस निर्वाचन क्षेत्र का निवासी भी होना आवश्यक है जिसके प्रतिनिधित्व के लिए वह नियुक्त हुआ हो।

गवर्नर जनरल के मनोनीत सदस्य—मृत्यु या त्यागपत्र के कारण यदि सीनेट में कोई स्थान रिक्त होता है तो गवर्नर-जनरल उस रिक्त स्थान को भरने के लिये कार्यवाही आरम्भ करता है। इसके अतिरिक्त जब दोनों सदनों में ऐसी मुठभेड़ हो जाय कि कार्य सचालन रुक जाय उस समय गवर्नर-जनरल सम्राट् की ओर से चार से लेकर ८ तक सीनेट में नये सदस्यों की नियुक्ति कर सकता है जिससे कार्याविरोध की अवस्था मिट जाये और आगे कार्यवाही चल सके। यदि सीनेट का कोई सदस्य जो लगातार सत्रों में अनुपस्थिति रहे, यदि वह किसी दूसरी सत्ता के प्रति अपनी निष्ठा रखना आरम्भ कर दे, यदि वह देशद्रोही या अपराधी हो जाय, यदि दिवालिया घोषित हो जाय या यदि वह जायदाद-सम्बन्धी योग्यता रखना बन्द कर दे तो वह सीनेट का सदस्य नहीं रहता।

सीनेट के स्पीकर की नियुक्ति गवर्नर जनरल द्वारा होती है। सीनेट में गण-पूरक संख्या १५ है। स्पीकर को एक मत देने का अधिकार होता है पर यदि किसी

१. कानूनी उच्चतम निर्धारित संख्या ११० है।

प्रश्न पर अनुकूल और विरुद्ध मत बराबर होते हैं तो निर्णय विरोध में समझा जाता है। सीनेट केवल संशोधनार्थ दोहराने वाला सदन है, यह प्रान्तीय हितो की देखभाल करने का काम नही करता।

सीनेट का सगठन और उसकी कार्यपद्धति—कनाडा की पार्लियामेण्ट की कार्यप्रणाली के नियम ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के वैसे ही नियमों से बहुत मिलते-जुलते हैं। दोनो देशो मे प्रथम सदन म ही वास्तव मे राजनैतिक सघर्ष चलता है और वही मन्त्रिमण्डल के भाग्य का निर्णय होता है। "कनाडा में हाउस आफ कामन्स ही सबसे अधिक कार्यशील वैधानिक चित्रों का चितेरा है और स्यात् ही कोई ऐसा सत्र होता हो जिसमें राजनीति शास्त्र की चित्रशाला के लिये कोई नया चित्र न बना हो। कभी गवर्नर जनरल के पद को नया रूप दिया जाता है, दूसरे समय कभी सिविल सर्विस के सुधार के सम्बन्ध मे पुराने विचारो पर नया रग कर दिया जाता है और कभी साम्राज्य के वैदेशिक सम्बन्धों के बारे में सदस्यों की कल्पना को कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार चित्रशाला की दीवारें जल्दी भरती जा रही है।"[1] हाउस आफ कामन्स और सीनेट के समान अधिकार है परन्तु धन विधेयक हाउस आफ कामन्स मे ही प्रारम्भ होते हैं। जब कोई विधेयक दोनो सदनों मे स्वीकार हो जाता है तो कानून बनने से पूर्व गवर्नर-जनरल की सम्मति उसे प्राप्त होना आवश्यक है। व्यवहार मे यह सम्मति कभी रोकी नही जाती और कनाडा की पार्लियामेण्ट को कनाडा के लिये व्यवस्था करने का पूर्ण अधिकार है।

संघ-कार्यपालिका

कार्यपालिका और राजा—ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट की ९ वी धारा यह है "कनाडा की और कनाडा में कार्यपालिका सत्ता व अधिकार रानी मे निहित बने रहने की घोषणा की जाती है।" जब यह एक्ट पास हुआ था उस समय ब्रिटिश राजा इस सत्ता के उपभोग का अधिकारी समझा गया था। परन्तु जब कनाडा के अन्तर्राष्ट्रीय या यो कहिए कि साम्राज्य-सम्बन्धी पद मे परिवर्तन हुआ तो राजा से अभिप्राय सम्राट् न समझा जाकर कनाडा का राजा समझा जाने लगा। असल मे सरकार के कार्यकारी विभाग के समान दूसरे सभी विभागों में विधान की लिखित धाराओ से प्रचलित वैधानिक-पद्धति का ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त नही हो सकता। इगलैण्ड की तरह कनाडा मे भी बहुत सी वैधानिक प्रथाये हैं जिनका अध्ययन किये बिना वास्तविक शासन पद्धति समझ में नही आ सकती। प्रधानमन्त्री का वार्षिक वेतन २५,००० डालर तथा अन्य

---

१ कस्टीटयूशनल इश्यूज इन कनाडा, पृ० २३९।

मन्त्रियों का १५,००० डालर है। मन्त्रिमण्डल के प्रत्येक सदस्य को २,००० डालर वार्षिक मोटर-कार शुल्क मिलता है।

कनाडा की प्रिवी कौंसिल—विधान की ११वीं धारा के अनुसार "कनाडा की सरकार को सहायता देने व परामर्श देने के लिये एक कौंसिल होगी जिसका नाम 'कनाडा के लिये रानी की प्रिवी कौंसिल' होगा और जो व्यक्ति इस कौंसिल के सदस्य होने जा रहे हों वे समय समय पर गवर्नर जनरल द्वारा चुने जाकर बुलाये जायेंगे और उन्हें प्रिवी कौंसिल के सदस्य बनने की शपथ लेनी पड़ेगी और इस कौंसिल के सदस्य समय समय पर गवर्नर जनरल द्वारा हटाये जा सकेंगे।" ब्रिटिश शासन-विधान के ढांचे का जितना अनुकरण कनाडा ने प्रिवी कौंसिल की स्थापना करने में किया है उतना किसी और दूसरी बात में नहीं किया। पर कनाडा की प्रिवी कौंसिल न्याय सम्बन्धी कार्य नहीं करती।

मन्त्रिमण्डल ही वास्तविक कार्यपालिका है—व्यवहार में गवर्नर-जनरल केवल वैधानिक कार्यकारी अध्यक्ष है, वास्तव में कार्य करने वाली तो कार्यपालिका समिति है जिसको डोमिनियन कैबिनेट कहते हैं जिसमें कनाडा के राजा के मन्त्री सदस्य होते हैं और प्रधानमन्त्री अध्यक्ष होता है। मन्त्रिपरिषद् (कैबिनेट) हाउस आफ कामन्स में बहुमत रखने वाले दल के नेताओं को मन्त्री नियुक्त करके बनाई जाती है। जैसे ब्रिटेन में राजा प्रधानमन्त्री की नियुक्ति करता है उसी प्रकार कनाडा में गवर्नर-जनरल कनाडा के प्रधान मन्त्री को नियुक्त करता है। नियुक्त हो जाने के पश्चात् प्रधान मन्त्री अपने मित्रों का चुनाव इस प्रकार करता है कि प्रत्येक प्रान्त का प्रतिनिधि मन्त्रि-मण्डल में अवश्य हो। हालाँकि इस सिद्धान्त का कड़ाई के साथ पालन करने में योग्य व्यक्ति परिषद् में नहीं आ पाते परन्तु परिषद् को संघात्मक रूप देने से यह पक्का हो जाता है कि परिषद् को सदन के बहुमत का समर्थन प्राप्त होता रहता है। परिषद् हाउस को उत्तरदायी है इसलिये यदि हाउस इसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दे या इसकी नीति का समर्थन न करे तो इसे पदत्याग कर देना पड़ता है। परन्तु प्रधान मन्त्री ऐसा होने से पूर्व गवर्नर-जनरल से यह प्रार्थना कर सकता है कि वह सदन का विघटन कर दे और नया सामान्य निर्वाचन करे जिससे जनता का मत मालूम हो जाय। पहले तो ऐसी प्रार्थनाएँ प्रायः अस्वीकार कर दी जाती थीं जैसा कि सन् १८५८ व १८६० में किया गया। क्षमादान के *विशेषाधिकार* का उपयोग करने में भी गवर्नर-जनरल ने प्रधान मन्त्री की सलाह मानने से इन्कार कर दिया था। परन्तु समय के बीतने से सब बातें बदल गई हैं और अब गवर्नर-जनरल व मन्त्रिपरिषद् के सम्बन्धों में बराबर उन्नति होती चली आ रही है। 'ब्रिटेन में जैसे राजा है उसी प्रकार कनाडा में गवर्नर-जनरल सरकार की सबसे महत्वशाली मूर्ति है। अपने मूल

आदर्श अर्थात् ब्रिटिश सम्राट् के समान उसका इतिहास भी निरंकुशता से धीरे-धीरे, बिना प्रदर्शन हुये व अनचाहे घटते घटते बिलकुल शक्तहीन होने की कहानी से भरा हुआ है,"[1] इस परिवर्तन से विधान के लेख पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि वह वैसा ही अब भी वर्तमान है जैसा १८६७ में था, केवल शासन-व्यवहार ही उससे प्रभावित हुआ है। "गवर्नर को जो निश्चित अधिकार दिये गये थे या जो शक्तियाँ रीत्यानुसार उसकी समझी जाती थीं वे या तो विधिपूर्वक बदल दी गयीं या अधिकतर चुपचाप त्याग दी गयीं। पूर्ववर्ती उदाहरण छूटते गये और उनके स्थानों पर उदाहरणों की संख्या बढ़ने लगी। इन सबके पीछे जो प्रेरक शक्ति थी वह कनाडा निवासियों का यह आग्रह था कि स्वायत्त शासन की अधिकाधिक मात्रा बढ़े। गवर्नर-जनरल की स्थिति पर इस इच्छा ने दो प्रकार से आघात किया। सरकार पर अधिक प्रजातन्त्रात्मक नियन्त्रण की इच्छा के बलवती होने से उसका महत्व कम होने लगा क्योंकि वही सरकार-संगठन की जंजीर में केवल तन्त्रहीन कड़ी के समान था। दूसरे राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के विकास के कारण उसके साम्राज्य सम्बन्धी कार्य बहुत कम हो गये।"[2] इस प्रकार वास्तविक कार्यपालिका सत्ता अब एक उत्तरदायी मन्त्रिपरिषद् के हाथ में आ गई। यह परिषद् धारासभा को मार्ग दिखलाती, देश पर शासन करती और दूसरी बातों में वही स्थान ग्रहण किये हुये है, जो ब्रिटेन में ब्रिटिश मन्त्रिपरिषद् को प्राप्त है। गवर्नर-जनरल की नियुक्ति भी सम्राट् अब कनाडा की मन्त्रिपरिषद् की सलाह से करता है जिसके साथ उसे वैधानिक अध्यक्ष के समान बर्तना पड़ता है। इस प्रकार वह अब ब्रिटिश सरकार का मातहत कर्मचारी नहीं रह गया है।

मन्त्रिपरिषद् की बनावट—मन्त्रिपरिषद् ही इसलिए कनाडा में वास्तविक शासन करती है। इसमें इस समय १० मन्त्री जो इस प्रकार हैं प्रधान मन्त्री, अर्थ मन्त्री, पोस्टमास्टर जनरल, व्यापार मन्त्री, सेक्रेटरी आफ स्टेट, सार्वजनिक सुरक्षा व स्वास्थ्य मन्त्री, पेंशन मन्त्री, माल मन्त्री, मात्स्य मन्त्री, श्रम मन्त्री, यातायात मन्त्री, कृषि मन्त्री और दो अतिरिक्त मन्त्री। प्रधान मन्त्री को १५,००० पौंड प्रतिवर्ष वेतन मिलता है दूसरे साधारण मन्त्रियों को १०,००० पौंड प्रतिवर्ष मिलता है। अतिरिक्त मन्त्रियों को जिसके पास कोई शासन विभाग नहीं होता, कोई वेतन नहीं मिलता। मन्त्रियों के अतिरिक्त उप सचिव भी होते हैं। मन्त्रिपरिषद् संगठित रूप में कार्य करती है और हाउस में संयुक्त रूप में उत्तरदायी रहती है हालांकि मन्त्री व्यक्तिगत जिम्मेदारी से छूटे नहीं रहते। ब्रिटेन की तरह मन्त्रिपरिषद् पक्ष प्रणाली के अनुसार कार्य करती है।

---

१ कन्स्टीट्यूशनल इश्यूज इन कनाडा, पृ० ६५।
२ कन्स्टीट्यूशनल इश्यूज इन कनाडा, पृ० ३६।

सिविल सर्विस—यदि परिषद् सरकार की सामान्य शासन नीति का निर्देश करती है तो उसके कार्यान्वित करने का काम सिविल सर्विस के अफसरो पर छोड दिया जाता है। कनाडा में सिविल सर्विस कमिश्नरो की एक स्वतन्त्र सस्था है, वे अपने पद से दोनो सदनो के निर्णय से हटाये जा सकते हैं। उनको परीक्षा सम्बन्धी विस्तृत अधिकार मिले हुए हैं और पदोन्नति देना आदि सब सिद्धान्तत. उन्ही के हाथो मे रहता है हालाकि विभाग के उपाध्यक्ष को अपनी राय देने का अवसर दिया जाता है।[1] यह प्रणाली दोष रहित नहीं कही जा सकती, विशेषकर इसीलिए क्योकि मन्त्रिमण्डल को यह सुविधा नही रहती कि अयोग्य व्यक्तियो को उनके पद से सरलता से हटा सके। सन् १९१९ से पूर्व सामान्य निर्वाचन के पश्चात् एक बडी सख्या में अफसरो को उनके पद से हटाया जाया करता था। अब कमीशन की नियुक्ति के पश्चात् नौकरी की निर्विघ्नता सुरक्षित कर दी गई है।

कनाडा की न्यायपालिका

जब ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट पास हुआ तो उसके बाद कुछ दिनो तक न्यायपालिका शासन-सगठन की पृथक् शाखा न थी जैसा इसे होना चाहिये था। "न्यायाधीश राजनीति मे भाग लेते थे और उपनिवेशो के शासन करने वाले गुट्ट के समर्थक रहते थे।" वे कानून बनाने व शासन का सचालन करने मे भाग लेते थे। ऐसी स्थिति में स्वभावत इस प्रणाली मे बडे दोष थे, इसलिये जब उत्तरदायी शासन की माँग की गई तो उसमें यह भी कहा गया कि ब्रिटिश ढग की न्यायपालिका बने। लार्ड डरहम ने भी अपनी रिपोर्ट में यह शिकायत की कि फ्रासीसी और अंग्रेज बसने वालो के जातीय वैरभाव के कारण न्याय की दुर्गति होती है। "इसी कारण से न्याय का मार्ग रुक जाता है, किसी भी राजनैतिक मुकदमे में ठीक ठीक निर्णय की आशा नही की जाती, न्यायालय भी दोनो जातियो के विचार से दो प्रतिकूल दलो मे विभाजित है जिनमें से किसी से भी प्रतिकूल दल के साधारण व्यक्ति न्याय की आशा नही रखते।"[2] जब लार्ड डरहम ने ये बात लिखी तब से स्थिति बिलकुल बदल गई है; कानून के द्वारा व प्रथा के बल पर न्याय-सम्बन्धी निष्पक्षता व स्वतन्त्रता की परम्परा सुरक्षित व विकसित होती चली आ रही है। इस मामले में भी ब्रिटिश परम्परा ने कनाडा के इतिहास पर बडा प्रभाव डाला है।

इस समय कनाडा में न्यायालयो की चार श्रेणियाँ हैं। सबसे ऊपर कनाडा का सर्वोच्च न्यायालय है जिसके न्यायाधीशो को गवर्नर जनरल नियुक्त करता है और

---

१. कीथ : कान्स्टीट्यूशनल लॉ आफ दी डुमीनियन्स, पृ० १८५।
२. लार्ड डरहम की रिपोर्ट से।

वे सद्व्यवहार करते समय तक अपने पदों पर बने रहते हैं। उनको दोनों सदनों के प्रस्ताव पर ही हटाया जा सकता है दूसरे न्यायालय को एक्सचैकर (Exchequer) न्यायालय कहते हैं, वह भी केन्द्रीय सरकार के आधीन है। इनके अतिरिक्त प्रान्तों में प्रान्तीय उच्च न्यायालय हैं और उनके नीचे जिले की कचहरियाँ हैं। इन सब न्यायाधीशों की नियुक्ति, वेतन या पदच्युत करने का जहाँ तक सम्बन्ध है, केन्द्रीय सरकार के अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत है। बचे हुये विषयों में वे प्रान्तीय सरकार के अधिकार क्षेत्र में है। सीढ़ी की अन्तिम डण्डे पर छोटे छोटे प्रान्तीय न्यायालय हैं जो पूरी तरह से प्रान्तीय नियन्त्रण में हैं। सर्वोच्च न्यायालय कनाडा का अन्तिम पुनर्विचारक न्यायालय है परन्तु प्रान्तीय उच्च न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध सीधे सम्राट् की प्रिवी कौंसिल की न्याय-समिति में अपील हो सकती है। जैसे जैसे कनाडा में राष्ट्रीय भावना जागृत हो जाती है इस प्रकार की अपीलों की संख्या कम होती जा रही है। परन्तु यह अधिकार अब भी वर्तमान है और इसके कारण यह लाभ भी हुआ कि प्रिवी कौंसिल की न्याय समिति कनाडा में न्याय सम्बन्धी एकरूपता स्थापित करने के योग्य बनी रही है। जब प्रिवी कौंसिल में ये अपीलें सुनी जाती हैं तो उस समय और न्यायधीशों के साथ कनाडा का एक न्यायधीश भी बैठता है।

प्रान्तीय सरकारें

कनाडा में नीचे लिखे प्रान्त हैं:—

प्रान्त	कुल क्षेत्र फल, वर्ग मीलों में, भूमि व जल	सन् १९५१ की जन संख्या
प्रिंस एडवर्ड द्वीप	२,१८४	९८,४२९
नोवा स्कोटिया	२१,०६८	६,४२,५८४
न्यू ब्रन्सविक	२७,९८५	५,१५,६९७
क्विबेक	५,९४,८६०	४०,५५,६८१
ओन्टेरियो	४,१२,५८२	४६,१४,४१७
मैनीटोबा	२,४६,५१२	७,७६,५४१
ब्रिटिश कोलम्बिया	३,६६,२५५	११,६५,२१०
एलबर्टा	२,५५,२८५	९,३२,५०१
समकेचुवान	२,५१,७००	८,३१,७२८
यूकन	२,०७,०७६	९,०२६
उत्तर-पश्चिमी प्रदेश (केन्द्रीय नियन्त्रण में)	१३,०४,९०३	१६,००४
न्यू फाउण्डलैण्ड	४२,७३४	३,६१,४१६
कुल योग	३७,७३३,१४४	१,४०,०९,४२९

उनकी शक्तियाँ—प्रान्तीय शासन-विधानो का क्या नया रूप होगा यह सामान्यतया ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट में निश्चित है। इसके अतिरिक्त प्रान्तों को विशेष शक्तियाँ भी दी हुई है। एक्ट की ९२ वी धारा के अनुसार प्रान्तीय विधान-मण्डलो को निम्नलिखित विषयो के अन्तर्गत आने वाले मामलो के सम्बन्ध में कानून बनाने के अनन्य अधिकार है —

(१) लैफ्टीनेन्ट गवर्नर के पद को छोडकर प्रान्तीय शासन विधान मे समय समय पर सशोधन करना।

(२) प्रान्तीय आवश्यकताओ के लिये प्रान्त में प्रत्यक्ष कर लगाना।

(३) प्रान्त की धन सम्पत्ति के आधार पर ऋण लेना।

(४) प्रान्तीय सरकारी पदो की स्थापना करना और उन पर अफसरो को नियुक्त कर उन्हे वेतन देना।

(५) प्रान्तीय भूमि व उस पर उगे हुये वन व लकडी की देखभाल करना और बेचना।

(६) प्रान्त में बन्दीगृहो की स्थापना करना व उनकी देखभाल करना।

(७) प्रान्त में अस्पतालो, आश्रमो आदि की स्थापना, प्रबन्ध व देख-भाल रखना।

(८) नगरपालिकायें।

(९) दुकानों, सरायो भोजनालयो आदि के लाइसेन्स देना जिससे प्रान्तीय, स्थानीय व नागरिक कामो के लिये धन इकट्ठा हो सकें।

(१०) स्थानीय निर्माण व योजनायें, निम्नलिखित को छोडकर —

(क) जलपोन, रेल, नहर, तार या और दूसरी योजनायें जो प्रान्त के बाहर तक जाती हो या एक प्रान्त को दूसरे प्रान्त से मिलाती हो।

(ख) जलपोत जो किसी ब्रिटिश या अन्य देश के बीच चलते हो।

(ग) वे योजनायें जो यद्यपि प्रान्त में ही स्थित हो पर उनके पूरी होने से पूर्व या बाद जिनको कनाडा की सरकार ने सारे कनाडा या एक से अधिक प्रान्त के हितार्थ में घोषित कर दिया हो।

(११) प्रान्तीय लाभ के लिये कम्पनियो को सगठित करना।

(१२) विवाहो को मान्य करना।

(१३) प्रान्त में जायदाद सम्बन्धी व नागरिक सम्बन्धी अधिकार।

(१४) प्रान्त में न्याय का प्रबन्ध करना और उसके लिये न्यायालयो को स्थापित कर उनका प्रबन्ध करना व उनमें कार्य-प्रणाली को निश्चित करना। ये न्यायालय व्यवहार व अपराध सम्बन्धी दोनो प्रकार के हो सकते हैं।

(१५) इस धारा में गिनाये हुए विषयो के अन्तर्गत आने वाले मामलो के सम्बन्ध में किसी प्रान्तीय कानून को लागू करने के लिए जुर्माना करके व कारावास करके दण्ड देना।

(१६) सामान्य वे सब मामले जो प्रान्त में स्थानीय या वैयक्तिक प्रकार के हो।

इन उपर्युक्त शक्तियो को बर्तने के अतिरिक्त कुछ शर्तों के साथ जिनसे प्रान्तीय सरकार का अधिकार कम हो जाता है, प्रान्तीय धारा सभा प्रान्त के भीतर शिक्षा सम्बन्धी कानून बना सकती है। नोवास्कोशिया, औन्टेरिया और न्यू ब्रुंसविक प्रान्तो में केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार है कि वह जायदाद व व्यावहारिक अधिकारो के सम्बन्ध में एक समान कानून बना सकती है, प्रान्तीय विधान मण्डल, कृषि व विदेशियो के बसने के सम्बन्ध मे कानून बना सकती है। इससे यह प्रकट है कि समवर्ती शक्तियो का क्षेत्र बडा विस्तृत है।

प्रान्तीय विधान मण्डल—प्रत्येक प्रान्त का अपना विधान मण्डल या व्यवस्थापक मण्डल है जिसमें एक या दो सदन और लैफ्टिनट गवर्नर होता है। इस विधान मण्डल की रचना व उसकी शक्तियो के सम्बन्ध में शासन विधान मे विस्तृत वर्णन पाया जाता है।

गवर्नर जनरल को यह अधिकार है कि वह किसी प्रान्तीय कानून के लिए अपनी अनुमति न दे। ऐसा होने पर उस कानून को लागू नही किया जा सकता। केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय अधिनियम को रद्द करने का अधिकार मिलने से प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार के बहुत कुछ अधीन हो जाती हैं।

प्रान्तीय अध्यक्ष—प्रान्तीय सरकार का अध्यक्ष लैफ्टिनेंट गवर्नर होता है जिसकी नियुक्ति ब्रिटिश सम्राट् नही करता वरन् गवर्नर जनरल मन्त्रि परिपद् की सलाह से करता है। गवर्नर जनरल किसी भी लैफ्टिनेट गवर्नर को उसके पद से हटा सकता है, जिससे प्रान्तो का मान और भी नीची श्रेणी का हो जाता है। प्रान्तीय गवर्नर केवल वैधानिक अध्यक्ष है। वास्तविक शासन-शक्ति प्रान्तीय मन्त्रि परिपद के हाथ में रहती है जो प्रान्तीय धारा सभा को उत्तरदायी होती है।

प्रत्येक प्रान्त में उच्च जिले के न्यायालय हैं जो कुछ मामलो में, जैसे न्यायाधीशो की नियुक्ति, उनका पद से हटाया जाना व उनका वेतन, केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण मे रहते हैं। इनके अतिरिक्त छोटे प्रान्तीय न्यायालय हैं जो पूरी तरह से प्रान्तीय सरकार के नियन्त्रण में है।

सक्षेप मे यह कहना चाहिये कि कनाडा में प्रान्तीय सरकारो की सत्ता इतनी प्रतिबन्धित है जितनी सघात्मक शासन विधान में न होनी चाहिये थी। केन्द्रीय सरकार

को विस्तृत व्यवस्थापन अधिकारो के अतिरिक्त अवशिष्ट शक्तियाँ भी सौपी हुई है। केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय कानूनो को रद्द कर सकती है। यह प्रान्तीय गवर्नरो की नियुक्ति करती है और उन्हे उनके पद से हटा सकती है, यह माना कि अभी तक केवल दो बार ही ऐसा हुआ है। प्रान्तीय न्यायपालिका को उच्च श्रेणियो पर भी इसका नियन्त्रण रहता है। आगम के प्राप्त कराने वाले अधिकार दोनो सरकारो में इस प्रकार बाँटे गये है कि प्रान्तीय सरकार को प्राय केन्द्रीय सरकार का मुँह देखना पडता है और उसके दिये हुए धन से ही अपनी योजनाये पूरी करनी पडती है। सर्वोच्च-न्यायालय के निर्णयो ने तो प्रान्तीय सरकारो की शक्तियो को और भी अधिक सीमित कर दिया है।

शासन विधान का सशोधन

जैसा पहले कहा जा चुका है प्रान्तो के हितो मे विभेद होने के कारण ही कनाडा का शासन विधान सघात्मक बनाया गया था अग्रेज और फ्रासीसी प्रवासियो के सघर्ष को मिटाने का उद्देश्य ही वह मुख्य कारण था जिससे चार प्रान्तो को सघीभूत किया गया, दूसरे प्रान्तो के मिलने मे यही कारण वर्तमान न था। इसलिये ब्रिटिश नार्थ अमेरिका एक्ट ने न डोमिनियन पार्लियामेण्ट को न किसी प्रान्तीय धारा सभा को यह शक्ति दी कि वह विधान शासन में परिवर्तन कर सके। क्योकि यह डर था कि ऐसी शक्ति के उपयोग से किसी प्रान्त के हितो की हानि करने का प्रयत्न किया जा सकता था। एक्ट म यह निश्चित कर दिया गया है कि ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ही सविधान मे सशोधन कर सकती है। सघ में यदि कोई नया प्रान्त आना चाहे तो कनाडा की पार्लियामेण्ट इसके लिये प्रार्थना करेगी और ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के एक्ट से ही इसकी अनुमति मिलेगी। हालांकि सशोधन करने मे ब्रिटिश पार्लियामेण्ट कनाडा की पार्लियामेण्ट व विभिन्न प्रान्तीय विधान मण्डलो मे प्रकट किये गये कनाडा निवासियो के दृष्टिकोण व विचारा का समुचित आदर करती है पर सिद्धान्तत शासन-विधान मे सशोधन करने का अधिकार डोमिनियन को नही दिया गया है। वेस्टमिस्टर की व्यवस्था से दूसरी डोमिनियन पार्लियामेण्टो की निर्बन्धकारी सत्ता अधिक विस्तृत कर दी गई है और उन पर पूर्व समय से चले आने वाले कुछ प्रतिबन्ध हटा लिये गये है, परन्तु कनाडा के सम्बन्ध में फिर भी कुछ विशेष बन्धन ज्यो के त्यो रखे है। व्यवस्था की ७ वी धारा से यह प्रगट हो जायगा कि यद्यपि कनाडा की पार्लियामेण्ट ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के किसी एक्ट के विरुद्ध भी कानून बना सकती है जहाँ तक उस एक्ट का कनाडा से सम्बन्ध है, परन्तु सन् १८६७ व १९३० के बीच म कनाडा के शासन विधान को निश्चित करने वाले या उसमे सशोधन करने वाले जो एक्ट पास हुए हो

उनको बदलने का अधिकार कनाडा की पार्लियामेण्ट को नहीं दिया गया है। पर आश्चर्य की बात तो यह है कि दूसरे खण्ड से प्रान्तीय विधान मण्डलों को यह अधिकार दे दिया गया है कि वे अपने अधिकार-क्षेत्र में कोई भी कानून बना सकते हैं चाहे वह ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के किसी कानून के विरुद्ध ही क्यों न हो। प्रान्तीय विधानमण्डल अपने शासन-विधान को बदल सकते हैं केवल लैफ्टिनेंट-गवर्नर के पद के सम्बन्ध में वे कुछ नहीं कर सकते। इससे प्रान्तीय विधान मण्डलों के अधिकार प्रान्तीय क्षेत्र में बढ़ा दिये गये, यद्यपि १८६७ के विधान ने केन्द्रीय पार्लियामेण्ट को अधिक शक्तिशाली बनाया था और अवशिष्ट शक्तियाँ भी उसी को दे दी थी पर वेस्टमिंस्टर की व्यवस्था ने केन्द्रीय पार्लियामेण्ट को कम अधिकार और प्रान्तीय विधान मण्डलों को अधिक अधिकार दे दिये। बहुत सम्भव है कि क्विबेक के प्रान्त को सन्तुष्ट करने के लिये ही ऐसा किया हो।

राजनैतिक पक्ष

जैसा ब्रिटेन में है "कनाडा के लिखित विधान में राजनैतिक पक्षों का कोई वर्णन नहीं है इसलिये उनका संगठन व कार्यवाहियाँ कानून के अतिरिक्त हैं। कनाडा में संयुक्त-राज्य अमरीका की तरह पक्षों की कार्यवाहियों को कानून से नियन्त्रित करने की आवश्यकता अभी नहीं पड़ती है क्योंकि यद्यपि इन पक्षों में बहुत-सी बुराइयाँ हैं पर वे इतनी कष्टदायक सिद्ध नहीं हुई हैं जितनी संयुक्त-राज्य अमरीका में। फिर भी यह कहना होगा कि ये अनियन्त्रित अनुत्तरदायी अर्धगुप्त संस्थायें ही बहुत-सी बातों में वास्तव में शासन करती हैं। सरकार की प्रेरक-शक्ति बहुमत वाले पक्ष के संगठन व उनके नेताओं में बसती है। ये लोग ही पिस्टन (Piston), कारब्युरेटर (Carburettor) और स्पार्क-प्लग (Spark plug) ही क्या, सभी कुछ हैं जो सुन्दर मोटर के इंजन के ढक्कन के नीचे ढके रहते हैं और मोटर गाड़ी को चलाते हैं और जिनकी परिचालन-क्रिया को वे ही चतुर मिस्त्री समझ सकते हैं जो इस काम में अपना जीवन भर बिता देते हैं।"[1] इन शब्दों में आचार्य डासन ने कनाडा की शासन प्रणाली में पक्षों की महत्ता का वर्णन किया है।

संघ शासन के प्रारम्भिक काल में ही कनाडा के राजनीतिज्ञों ने ब्रिटेन की पक्ष-प्रणाली को अपने यहाँ अपना लिया था, यहाँ तक कि उनका नाम ब्रिटेन की तरह अनुदार दल (Conservative Party) और उदार दल (Liberal Party) रखा। कनाडा निवासियों को ऐसी पार्लियामेण्टरी प्रणाली के अन्तर्गत काम करना पड़ा कि जिसमें निश्चित कार्यक्रम वाले राजनीतिक पक्षों के बनाने की आवश्यकता

१ कस्टीट्यूशनल इश्यूज इन कनाडा, पृ० ३५७।

रही। पर पक्षों के कार्यक्रम में जो बातें रक्खी गईं वे केवल अनायास ही उनमें स्थान पा गईं। अनुदारपक्ष संरक्षणवादी हुए और उदार पक्ष ने उसका विरोध किया। कनाडा की पक्ष प्रणाली में ध्यान रखने वाली बात यह है कि एक ही पक्ष बड़े लम्बे समय तक सत्ता का भोग करता रहता है अर्थात् एक ही पक्ष की मन्त्रिपरिषद् बहुत समय तक पदासीन रहती है।

केवल पिछले बीस वर्षों में ही ऐसा हुआ है कि राजनीतिक पक्ष अधिक प्रख्यात हुए हैं, कुछ तो श्रमिक पक्ष के संगठन हो जाने से और कुछ इस कारण से कि कृषक-वर्ग निश्चित उद्देश्यों के साथ एक राजनीतिक संस्था में संगठित हो गया है।

कृषक पक्ष—इस पक्ष के प्रारम्भिक उद्देश्य ये थे संसार में स्थायी शान्ति का प्रयत्न, साम्राज्य के नियन्त्रण का विरोध, कामन वैल्थ में बराबरी पर जोर, प्राकृतिक साधन व समृद्धि का विकास, विशेषकर कृषि का विकास सब वस्तुओं पर लगे हुए करों में घटती, राज्य की मालगुजारी को उस जमीन पर कर लगा कर बढ़ाना जिसका मूल्य बिना उसमें कुछ किये बढ़ गया हो, घटता-बढ़ता व्यक्तिगत कर लगाना, पैतृक सम्पत्ति व व्यापार के लाभ पर कर लगाना, केन्द्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय योजनाओं द्वारा बेकारी को कम करना, कृषि सम्बन्धी सहकारी योजनायें बनाना, युद्ध-समय के निर्वाचन एक्ट को रद्द कर अधिक स्वतन्त्रता देना, उपाधि देना बन्द करना, सीनेट का सुधार करना आश्रय देना बन्द करना, निर्वाचन में किये हुए खर्च को प्रकाशित करवाना समाचार-पत्रों की स्वतन्त्रता, अनुपाती प्रतिनिधित्व, लोकनिर्णय (Referendum) निवेदन-उपक्रम (Initiative) व प्रत्याहरण (Recall) प्रचलित करना, स्त्रियों को पार्लियामेण्ट में निर्वाचित होने का अधिकार देना। इन सब में से कुछ बातें स्वीकृत होकर प्रचलित हो गई हैं फिर भी भविष्य में कृषक पक्ष को बहुत सी बातों के लिए लड़ना है।

श्रमिक पक्ष—यह पक्ष अपने नाम को सार्थक करने के लिये जैसा संसार में और जगह वैसे ही कनाडा में सम्पत्ति अधिकारों को मानव-अधिकारों से गौण मानता है। इस पक्ष का कहना है कि प्राकृतिक साधनों का राष्ट्रीयकरण किया जाय, उसी प्रकार बड़े बड़े उद्योगों व बैंकों का भी राष्ट्रीयकरण किया जाय, बेकारों के लिये काम और बेकारी के समय जीवन-यापन के लिये धन मिलना चाहिए, युद्ध से लौटे हुए सिपाहियों के जीवन निर्वाह के लिये कुछ व्यवस्था होनी चाहिए, बिना धर्म विभेद, वर्ग-विभेद आदि के सबको बराबर सामाजिक अधिकार मिलने चाहिएँ, समाचार-पत्रों की स्वतन्त्रता, बोलने की स्वतन्त्रता, सम्मेलन करने की स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, प्रवास सम्बन्धी एक्ट को रद्द कर देना चाहिये, श्रमिकों का संगठित होने का अधिकार रहना चाहिये, जमीन की बढ़ी हुई कीमतों पर कर लगाना, थोड़ी आय पर घटाना और

जीवन की आवश्यक वस्तुओं पर से कर हटाना चाहिए। वे अनुपाती-प्रतिनिधि-प्रणाली के समर्थक हैं, सीनेट को तोड़ना चाहते हैं राष्ट्रीय सेना संगठन के विरुद्ध और जनता को प्रजातन्त्रात्मक लीग स्थापित करने के समर्थक हैं।

उदारपक्ष व अनुदारपक्ष—इन दोनों पक्षों के कार्यक्रम अप्रगतिशील हैं। इन दोनों के कार्यक्रमों में बहुत कुछ समानता है पर मतभेद करों के सम्बन्ध में, श्रमिक वर्ग के प्रति नीति के सम्बन्ध में और कुछ दूसरी छोटी बातों में है। असली बात यह है कि दोनों ही ऐतिहासिक दलों के सिद्धान्तों में अस्पष्टता और गड़बड़ है। उदार दल तो पक्की राष्ट्रीयता के पक्षपाती हैं और व्यापारिक निर्बन्ध के विरोधी हैं। और अनुदार दल इन दोनों बातों में विपरीत विचार रखते हैं और व्यापारिक निर्बन्ध चाहते हैं।[1] वास्तव में इन दोनों पक्षों में मतभेद यही है कि अनुदार पक्ष यह चाहता है कि भारी कर लगाकर देश के उद्योग-धन्धों की रक्षा की जाय और इसके विरुद्ध उदार पक्ष वाले बिना किसी रोक टोक के या कर लगाये माल के आयात-निर्यात के पक्ष में हैं।

पक्षों के नेता अपने पक्षों पर पर्याप्त नियन्त्रण रखते हैं और प्रचलित पार्लियामेण्टरी प्रथा के अनुसार चलने का पूरा प्रयत्न करते हैं।

---

१ क्वीन्स क्वार्टर्ली, स्प्रिंग, १९२९, पृ० ३६१।

पाठ्य पुस्तकें

Borden, L. R—Canadian Constitutional Studies (Marfleet Lectures, Oxford, 1921)

Bautinot, John—Canada (T Fisher & Unwin, 1917)

Bradley, A. G.—Canada (Williams & Norgate London).

Bryce, Viscount—Modern Democracies, Vol I, chs. XXIII-XXVII.

Clement, W H P—Law of the Canadian Constitution

Dawson, R. M—Constitutional Issues in Canada

Durham-Report on the Affairs of British North America.

Egerton, H. E.—Federations of Unions in the British Empire pp 17-39 and 121-161.

Keith, A. B.—The Constitutional Laws of the British Dominions (Macmillan, 1933)

Riddel, W R.-The Canadian Constitution in Form & Fact.

Sharma, B. M.—Federal Polity, chs. II, III, IV.

Trotter, R. G.—Canadian Federation (1924).

Wheare, K C—The Statute of Westminster (1933)

२ आस्ट्रेलिया का संघ-शासन

"प्रस्तावना के प्रारम्भिक शब्दों मे यह कहा है कि आस्ट्रेलिया का शासन विधान आस्ट्रेलियन जनता की इच्छा की नींव पर बनाया गया है। ग्रेट ब्रिटेन व आयरलैण्ड की पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये हुए एक्ट से इसको कानून का बाना पहिनाया गया है।
—क्विक और गारन

आस्ट्रेलिया एक ऐसा द्वीप प्रदेश है जिसको पूर्णतया विदेशियो ने ही आकर बसाया है। यह सब महाद्वीपो में सबसे छोटा है। इसका क्षेत्रफल २,९७४,५८१ वर्गमील और ३१ मार्च सन् १९५४ को इसकी जनसख्या का अनुमान ८९,६२,२८१ था। दूसरी कई बातो मे भी यह दूसरे महाद्वीपो से भिन्न है। इसके निवासी अधिकतर अग्रेज ही है। उनकी सख्या ९८ प्रतिशत है। इसमे एक बड़ा मैदान है जो न तो कृषि के लिये अधिक उपजाऊ है न उसमें खनिज पदार्थ आदि ही पाये जाते है। इस महाद्वीप को कैप्टन कुक, एक अग्रेज नाविक ने खोज निकाला था और सन् १७८८ में न्यू साउथ वेल्स (New South Wales) का उपनिवेश सबसे प्रथम स्थापित हुआ जहा अग्रेज आकर बसने लगे। समुद्री किनारे के मैदान में ही इन लोगो ने कृषि करना आरम्भ किया पर इनके बाद सोने और चांदी की खानों के मिलने से ब्रिटेन से एक बड़ी सख्या मे लोग आकर्षित हुए और आकर बसने लगे।

बहुत समय तक तो लोग इसी समुद्र तट के मैदान में ही रहे और तब तक सब बस्तिया सिडनी (Sydney) मे स्थित एक केन्द्रीय शासन मे रही। बाद में महाद्वीप के भीतर घुसे और जनसख्या बढ़ने लगी जिससे सन् १८२५ में टस्मानिया द्वीप का पृथक् करना पड़ा। कुछ समय के पश्चात् साउथ वेल्स से विक्टोरिया (Victoria) उपनिवेश भी पृथक् हो गया।

आस्ट्रेलिया की सस्थायें इगलैण्ड से लाई गई—उपनिवेश-वासी पहले अपने देश म श्रमिक वर्ग के मध्य व उच्च श्रेणी के लोगों में से थे। यद्यपि वे ऐसे लोग न थे जो पहले ही से पार्लियामेण्टरी शासन-प्रणाली मे कुशल हो पर ब्रिटिश परम्परागत भावनाओ व विचारों को अवश्य अपने साथ लाये थे। जब ब्रिटेन ने आस्ट्रेलियन उपनिवेशो को प्रतिनिधिक स्वायत्त शासन वाली सस्थाये प्रदान की तो इन लोगो ने इन्हे अपनी विशेष परिस्थितियो के अनुकूल बनाने के लिये उनमें थोड़ा परिवर्तन कर दिया जिससे वे ब्रिटिश नमूने से बहुत कुछ फिर भी मिलती रही। न्यू साउथ वेल्स (New South Wales), विक्टोरिया (Victoria), टस्मानिया (Tasmania), व दक्षिणी आस्ट्रेलिया (South Australia), १८५५–५६ में स्वतन्त्र उपनिवेश

बन गये। क्वीन्सलैण्ड सन् १८५९-६० और पश्चिमी आस्ट्रेलिया सन् १८९० ई० में स्वतन्त्र हुए। विविध उपनिवेशों की कौंसिलों ने जो शासन विधान का ढांचा अपने लिए तैयार किया था उसके विशेष लक्षणों का समावेश प्रत्येक उपनिवेश को शासन विधान देने वाले पार्लियामेण्ट के एक्ट में कर दिया गया था, जिसने निवासियों को अपने ही ढांचे को सचालित करने का काम करना पड़ा। ब्राइस ने आस्ट्रेलिया के प्रजातन्त्र का इन शब्दों में वर्णन किया है "आदर्श लोकतन्त्र जैसी कोई वस्तु नहीं है क्योंकि हर एक देश में उसकी प्राकृतिक बनावट व स्थिति तथा परम्परागत संस्थायें उस देश व राष्ट्र के राजनैतिक विकास पर ऐसा प्रभाव डालती है कि उसकी शासन प्रणाली अपने ढग की अनुपम होती है। परन्तु यदि ऐसे देश व *उसकी सरकार को चुना जाय जिसमें हमें यह देखने को मिल सके कि स्वाधीन निवासी बाहरी प्रभावों से अप्रभावित रह कर और परम्परा प्राप्त विचारों से अबाधित रहते हुये किस मार्ग का अवलम्बन कर आगे बढ़ते है, तो वह देश आस्ट्रेलिया होगा। लोकतन्त्र देशों में यह सबसे नया है। यह उस मार्ग पर सबसे तेज व सबसे आगे चल चुका है जिससे लोकसमूह के असर्यादित शासन की प्राप्ति होती है। और जगह की अपेक्षा यहाँ हमें उन प्रवृत्तियों के अध्ययन की अधिक सामग्री मिलेगी जो ऐसे असर्यादित शासन के नित्यप्रति के व्यवहार में प्रकट हुआ करती है।"*[१]

संघ शासन विचार का आरम्भ—हालाकि आस्ट्रेलिया के लोकतंत्र की प्रवृत्ति आरम्भ में एक केन्द्रात्मक (Unitary) बनने की ओर थी, क्योंकि प्रत्येक उपनिवेश की पृथक् सरकार थी पर कुछ घटनाओं के कारण यह आवश्यकता हुई कि इन उपनिवेशों में इनके भविष्य की रक्षा के हेतु कुछ पारस्परिक सहयोग होना चाहिये। घटनायें ये थी कि जर्मनी ने न्यू गिनी द्वीपपर अधिकार कर लिया, न्यू कैलेडोनिया से फ्रांसीसी अपराधी भाग कर आस्ट्रेलिया में आ गये और फ्रांस ने न्यू हैब्रेडीज द्वीप समूह में अपना शासन चाहा। इन सब बातों ने आस्ट्रेलिया निवासियों को भयभीत बना दिया। इन लोगों के सम्मुख कनाडा का उदाहरण उपस्थित था जहाँ सन् १८६७ के एक्ट से उपनिवेशों को संघात्मक इकाई में संगठित किया जा चुका था। इसके अतिरिक्त-संयुक्त-राज्य अमेरिका का भी उदाहरण था। न्यू साउथ वेल्स के फ्री ट्रेड (Free trade) दल के नेता सर हैनरी पार्कस ने आस्ट्रेलिया-संघ निर्माण का कार्य पक्की तरह से अपने हाथ में लिया।

सन् १८८९ में मेजर जनरल बीवन एडवर्ड्स (Beven Edwards) की रिपोर्ट प्रकाशित होने से आस्ट्रेलिया-संघ निर्माण करने का फिर प्रयत्न आरम्भ हुआ।

---

१. मौडर्न डैमोक्रेसीज, पुस्तक II पृ० १८१।

बीवन एडवर्ड्स को ब्रिटिश सरकार ने आस्ट्रेलिया की सुरक्षा के सम्बन्ध में रिपोर्ट तैयार करने को नियुक्त किया था। इन्होंने आस्ट्रेलिया के सब उपनिवेशों के लिए एक संयुक्त सेना बनाने की सिफारिश की थी। सर हेनरी पार्क्स ने फिर सब सम्बन्धी प्रश्न को उठाया और सब उपनिवेशों के प्रधान मन्त्रियों को एक तार भेजा जिसमें एक संयुक्त सेना के संगठन, उपनिवेशों के मध्य आयात-निर्यात करों को कम करने और कुछ मामलों में सब उपनिवेशों में समान कानून होने पर जोर दिया गया। सर हेनरी पार्क्स की प्रार्थना पर उपनिवेशों के मन्त्री मेलबार्न (Melbourne) में एकत्रित हुए और वहाँ परामर्श करने के पश्चात् सिडिनी में एक सम्मेलन किया। सन् १८९३ में आस्ट्रेलिया को आर्थिक विपत्ति का सामना करना पड़ा और वह विपत्ति लाभकर ही सिद्ध हुई क्योंकि उससे यह पूरी तरह प्रकट हो गया कि जल्दी ही उपनिवेशों के मध्य इस प्रकार के संकटों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए कोई निकट संबंध स्थापित होना आवश्यक है। उपनिवेशों के प्रधान मन्त्री इस स्थिति पर परामर्श करने के लिए होबार्ट नगर में एकत्रित हुए (१८९७) और अन्त में उन्होंने एक अपील निकाली जिसमें उपनिवेशों की सरकारों से प्रार्थना की गई कि वे विधान सम्मेलन के लिए अपने प्रतिनिधि चुन कर भेजें। इस प्रार्थना को सब ने उपनिवेशों स्वीकार किया और सम्मेलन एडिलेड नगर में हुआ जिसमें एक शासन विधान का ढाँचा तैयार किया गया।

संघ का निर्माण

उपनिवेशों की सरकार के प्रतिनिधि इंगलैण्ड गये और वहाँ ब्रिटिश सरकार को इस बात में राजी करने में सफल हुए कि उनके मसविदे को लगभग जैसा का तैसा स्वीकार कर संघ शासन स्थापित करने की उनकी इच्छा को पूरा किया जाय। उपनिवेश मन्त्री श्री चेम्बरलेन ने १४ मार्च १९०० को पार्लियामेण्ट में कामनवैल्थ आफ आस्ट्रेलिया बिल (Commonwealth of Australia Bill) पेश किया। आस्ट्रेलिया के संघ की विशेषता का उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया—"यह विधेयक जो आस्ट्रेलिया के सबसे योग्य राजनीतिज्ञों के परिश्रम का फल है, उस महाद्वीप को अंग्रेजी भाषा बोलने वाले राष्ट्रों की गिनती में आने योग्य बना देगा। अब वह ऐसे महाद्वीपों का ढेर न रहेगा जो एक दूसरे से पृथक् और पूर्णतया स्वतन्त्र हों जिस अवस्था में यह कोई भी अस्वीकार न करेगा, आपस की प्रतिस्पर्धा से एक बड़ी विपत्ति आ सकती थी या कम से कम पारस्परिक विरोध के कारण वे सब निर्बल हो सकते थे।"[१] विधेयक में अपनाई गई सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया के लिए केवल एक नीति का विवेचन करने के

[१] न्यूटन—फेडरल एण्ड यूनीफाइड कस्टीट्यूशन्स पृ० ३११-१२।

पश्चात् उन्होंने कहा "हमें विश्वास है कि यह आस्ट्रेलिया के हित में ही होगी और हमारे लिये यह सबसे बड़ी बात रही है। परन्तु हम इसे अस्वीकार नहीं कर सकते कि यह हमारे हित में भी रहेगी। हमको विश्वास है कि उन उपनिवेशों व हमारे बीच जो भविष्य में सम्बन्ध रहेंगे वे अधिक सीधे सादे हो जायेंगे, उनकी आवृत्ति बढ़ जायेगी और रुकावटें दूर हो जायेंगी और वे सम्बन्ध उस समय अधिक मैत्रीपूर्ण होंगे जब हम पृथक् पृथक् छः स्वतन्त्र सरकारों से परामर्श करने के स्थान पर एक केन्द्रीय सरकार से व्यवहार करेंगे जो आस्ट्रेलिया के हित में है वह सारे ब्रिटिश साम्राज्य के लिये भी हितकारी है"। थोड़े से परिवर्तनों के साथ ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने उस विधेयक को पास कर "कामनवेल्थ आफ आस्ट्रेलिया एक्ट" के नाम से घोषित किया। इसी एक्ट में आस्ट्रेलिया का वर्तमान संघ शासन विधान दिया हुआ है।

सन् १९०० का शासन-विधान

संयुक्त राज्य अमरीका की तरह, पर कनाडा व स्विट्ज़रलैण्ड के विपरीत आस्ट्रेलिया में भाषा, जाति या धर्म विभेदों की समस्या न सुलझानी थी। परिश्रमशील व साहसी लोग होने के कारण उनकी राजनीति में आर्थिक हित को ही सर्वोपरि स्थान प्राप्त था। आस्ट्रेलिया में श्रमिक वर्ग ने कानून से स्थापित सरकार को अपने हाथ में पहले कर लिया फिर अपनी शासन कुशलता का परिचय दिया। राज्य ने कानून से काम के घण्टे व मजदूरी निश्चित कर सारे उद्योग-धन्धों पर अपना प्रभुत्व बढ़ाने का प्रयत्न किया। मध्य श्रेणी के लोगों का बाहुल्य होने से और आदि वासियों की कोई बड़ी समस्या न होने से उन्होंने ऐसे शासन-विधान के बनाने में सफलता पाई जो वास्तव में अपनी अच्छाई के कारण "समय की सबसे अर्वाचीन उत्पत्ति" कह कर पुकारा जाता है।

शासन-विधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि "न्यू साउथ वेल्स' विक्टोरिया, दक्षिणी आस्ट्रेलिया, क्वीन्सलैण्ड और टसमानियाँ ईश्वर की दया का भरोसा लेकर ब्रिटिश राज-छत्र के नीचे अविघटनशील संघ शासन में सगठित होने पर सहमत हुये हैं।" इससे प्रकट है कि यद्यपि शासन-विधान पार्लियामेण्ट के एक्ट से बना है, इसको अपनी सारी शक्ति व अधिकार संघ में आने वाले उपनिवेशों की जनता से ही प्राप्त हुं। कामनवेल्थ (Commonwealth) की स्थापना की है जिस शब्द से एक ऐसे राज्य संगठन का बोध होता है जो संघ शासन की अपेक्षा अधिक लोकसत्तात्मक है। संघ को अविघटनशील घोषित कर दिया गया है जिसमें संघ से सम्बन्धोच्छेद कर पृथक् होने के प्रश्न को सदा के लिये समाप्त कर दिया है। इसके पश्चात् सम्राज्ञी ने १७

---

१ फेडरल एण्ड यूनीफाइड कन्स्टीट्यूशन्स, पृ० ३१२—३१३।

सितम्बर १९०१ का दिन नव-शासन-विधान के कार्यरूप देने का श्री गणेश करने के लिये निश्चित किया। बीसवीं शताब्दी का वह पहला दिवस था जो आस्ट्रेलिया की राष्ट्रीयता के जन्म के लिये विशेष अर्थपूर्ण व महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। इसीलिये वह वास्तव में 'समय की सबसे अर्वाचीन उत्पत्ति" है।

नव शासन में आने से पूर्व आस्ट्रेलिया के उपनिवेश-राज्य अपने आन्तरिक मामलों में एक दूसरे से स्वतन्त्र थे। वे स्वतन्त्रता को खोने के लिये तैयार न होते थे इसीलिये शक्ति-विभाजन (Division of Powers) में उन्होंने संयुक्त राज्य अमरीका के शासन विधान का अनुकरण किया और केन्द्रीय सरकार को निश्चित् शक्तियाँ सौंपी गई।

आस्ट्रेलिया का शासन-विधान आधुनिक विधानों में सबसे अधिक प्रजातन्त्रात्मक है। इसमें जनता को बहुत-सी बातों में पर्याप्त अधिकार दिये हुये हैं। उदाहरण के लिये सीनेट के लिये निर्वाचन, लोक निर्णय द्वारा संविधान संशोधन आदि।

संघ सरकार

शासन-विधान से एक केन्द्रीय संघ-सरकार की स्थापना कर उसको निश्चित विधायिनी, कार्यकारी व न्यायिक सत्ता सौंप दी गई है। क्योंकि केन्द्रीय सरकार की सृष्टि उपराज्यों ने की है, शेष व अन्तिम शक्तियाँ उपराज्यों ने अपने पास ही रखी हैं।

संघ-सरकारकी शक्तियाँ—संघ सरकार की विधायिनी शक्तियां आस्ट्रेलिया में वही हैं जो कनाडा में केन्द्रीय सरकार को दी गई हैं, केवल निम्नलिखित शक्तियाँ और अधिक हैं —

(१) वस्तुओं के उत्पादन व निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये सरकारी सहायता। ऐसी सहायता सब उपराष्ट्रों में एक समान होगी।

(२) समुद्रतट-प्रदेश की सीमा के बाहर मछली मारने का अधिकार।

(३) सरकारी बीमा।

(४) वृद्धावस्था व अशक्त व्यक्तियों को पेंशन।

(५) बाहरी मामले।

(६) एक उपराज्य की सीमा के बाहर तक फैले हुये औद्योगिक झगड़ों को निबटाने व रोकने के लिये पंच फैसला या राजीनामा आदि।

(७) वे मामले जिनके सम्बन्ध में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट या आस्ट्रेलिया की संघ-समितियाँ संविधान बनते समय कार्यवाही कर सकती थीं, उनमें उन सब उपराज्यों की पार्लियामेण्टों की प्रार्थना पर कार्यवाही करना जो, उस कार्यवाही से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हों।

(८) संविधान ने जो शक्ति पार्लियामेण्ट, संघ कार्यपालिका या न्यायपालिका को या किसी शासन-विभाग या अफसर को प्रदान की हो उसके उपभोग के सम्बन्ध में आवश्यक अधिकारों का प्रयोग करने की शक्ति संघ सरकार को है।

(९) किसी भी उपराज्य से अपने अधिकार में रहने के काम के लिये उचित शर्तों पर जायदाद खरीदना, जैसे रेल इत्यादि।

(१०) सेना सम्बन्धी कामों में उपराज्यों की रेलों पर आवश्यक नियन्त्रण रखना।

कुछ अधिकार ऐसे भी हैं जो कनाडा की संघ सरकार को प्राप्त हैं परन्तु आस्ट्रेलिया की संघ सरकार को स्पष्टतया नहीं दिये गये हैं। जैसे —

(१) नौतरण व नौपरिवहण।

(२) समुद्रतट व देश के भीतर मछली मारना।

(३) दण्ड विधि (Criminal law)।

(४) वे अधिकार जो उपराज्यों के अधिकारों की गिनती से बचे हों शेषाधिकार (Residuary powers)।

संघ सरकार की आर्थिक शक्तियाँ—आर्थिक शक्तियों के विषय में आस्ट्रेलिया की संघ सरकार, संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार से अधिक शक्तिशाली है। इसकी कर लगाने की शक्ति असीमित है। जब तक यह कर प्रत्येक उपराज्य में एक समान है, आयात-निर्यात करों पर उसे पूरा अधिकार है। संघ बनने के समय उपराज्यों के तत्कालीन ऋण का भार संघ सरकार ने अपने ऊपर ले लिया था परन्तु साथ ही साथ स्वयं रुपया उधार लेने की शक्ति भी प्राप्त कर ली थी। पर पहले दस वर्ष तक आयात-निर्यात कर से जो आमदनी हुई उसका चौथाई भाग ही संघ सरकार ने अपने पास रखा, बचा हुआ प्रतिमास उपराज्यों को लौटा दिया जाता था। इस प्रकार अमरीका की अपेक्षा इसके आर्थिक अधिकार अधिक हैं पर कनाडा की सरकार की अपेक्षा कम हैं। यह भी सच है कि श्रमिक पक्ष की सरकार बनने से केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। अमेरीका में भी सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों ने केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तिशाली बना दिया है जैसे अमेरिका में अंगीभूत होने वाली इकाइयाँ उपराज्य (State) कहलाती हैं, वैसा ही आस्ट्रेलिया में भी है, जिससे कनाडा के प्रान्तों की अपेक्षा उनके ऊँचे पद का निर्देश होता है।

संघ का विधान मंडल

आस्ट्रेलिया की विधायिनी सत्ता पार्लियामेण्ट में विहित है। पार्लियामेण्ट में, राजा, प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) और सीनेट (Senate),

इन तीनों की गिनती की जाती है। गवर्नर जनरल राजा का प्रतिनिधित्व करता है और वह उन अधिकारों का प्रयोग करता है जो सम्राट् ने उसको सौंप दिये हों। गवर्नर जनरल पार्लियामेण्ट के सम्मिलित होने का समय निश्चित करता है और अपनी घोषणा के द्वारा उसका अवसान भी करता है। उसी प्रकार से वह प्रतिनिधि सदन का विघटन भी करता है। पार्लियामण्ट साल में कम से कम एक बार अपनी बैठक अवश्य करती है।

सीनेट--सीनेट में जो सघक ऊपरी सदन है, आरम्भ में ३६ सदस्य थे। प्रत्येक उपराज्य ६ सदस्यों को चुन कर भेजता था परन्तु १९४८ को प्रतिनिधि अधिनियम मे यह संख्या ६० कर दी गई है और प्रत्येक उपराज्य के १० सदस्य हैं। इनकी नियुक्ति ६ साल के लिये होती है और आधे, हर तीन साल बाद हट जाते है। इस प्रकार यह अविच्छिन्न संस्था है। सीनेट के सदस्यों के निर्वाचन के लिये प्रत्येक उपराज्य एक निर्वाचन क्षेत्र रहता है, निर्वाचन अनुपातिक प्रणाली (Proportional Reprsentation) से होता है। यदि दोनों सदनों में मतभेद हो जाय तो सीनेट का विघटन हो सकता है। यह एक विशेषता है जो और राज्य संगठनों में नहीं पाई जाती। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया की सीनेट की और दूसरी विशेषता है जिसके कारण यह संसार की दूसरी संघ-सीनेटों की अपेक्षा अधिक लोकतन्त्रात्मक है। सीनेट के निर्वाचन के लिये प्रत्येक प्रौढ़ नागरिक मतधारक है और कोई भी व्यक्ति जो प्रतिनिधि सदन का सदस्य बनने योग्य है वह सीनेट के निर्वाचन के लिए खड़ा हो सकता है। कनाडा की सीनेट की अपेक्षा, जिसमें गवर्नर जनरल से मनोनीत व्यक्ति अपनी सम्पत्ति की योग्यता के सहारे सदस्य होते हैं और अपने जीवन भर सदस्य बने रहते हैं आस्ट्रेलिया की सीनेट *अधिक लोकतन्त्रात्मक है।* उपराज्यों को सीनेट में *बराबर संख्या में* प्रतिनिधि भेजने का यह अर्थ लगाया गया कि उपराज्यों की प्रभुता (Sovereignty) सर्वमान्य है और साथ ही साथ उपराज्यों के अधिकारों की रक्षा प्रत्याभूत समझी गई।

क्या सीनेट उपराज्य प्रभुता का द्योतक है?—*व्यवहार में स्थिति भिन्न है,* 'सीनेट से जो आशा की जाती थी वह पूरी नहीं हुई। उपराज्यों के हितों की रक्षा नहीं की है क्योंकि उन हितों पर कोई प्रश्न ही न उठा.....न यह ज्ञानी पुरुषों का *'सदन रहा क्योंकि कुछ राजनीतिज्ञ प्रतिनिधि सदन में न जाते हैं जहाँ संघर्ष के* पश्चात् मन्त्रिपद मिलता है। वैदेशिक नीति या उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति पर नियन्त्रण जैसा कोई विशेष कर्तव्य न होने के कारण, जिससे अमरीका सीनेट को कुछ *शक्ति प्राप्त है, आस्ट्रेलिया की सीनेट प्रतिनिधि-सदन की एक निम्न श्रेणी की* प्रतिलिपि भर ही है।"[1]

---

१. माडर्न डेमोक्रेसीज, भाग II पृ० २०४।

सीनेट अपना सभापति स्वयं चुनती है। सब प्रश्न बहुमत से निर्णित होते हैं। प्रत्येक सदस्य को एक मत देने का अधिकार है। सभापति को भी एक मत देने का अधिकार है। परन्तु जब पक्ष व विपक्ष के मत बराबर होते हैं तो प्रस्ताव अस्वीकृत समझा जाता है। सीनेट की गणपूर्ति उनकी तिहाई संख्या है

प्रतिनिधि सदन—प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) में सन् १९४८ के प्रतिनिधि कानून के अनुसार इस समय १२४ सदस्य हैं जो उपराज्यों में जनसंख्या के आधार पर वितरित हैं।

यह प्रतिनिधि सभा अपना सभापति स्वयं ही चुनती है। सभापति को साधारण तया मत देने का अधिकार नहीं होता पर जब पक्ष व विपक्ष में मत बराबर होते हैं तो उसे निर्णय देने का अधिकार है। सभा के सब निर्णय बहुमत से होते हैं और अपनी कार्य-पद्धति के नियम सभा स्वयं बनाती है।

विधान मण्डल की शक्तियां—दोनों सदनों को समान शक्तियाँ प्राप्त हैं पर कर लगाने वाले, व आगम से सम्बन्ध रखने वाले, अर्थात् मुद्राविधेयक निचले सदन में आरम्भ होते हैं। कर लगाने वाले या राजकोष से साधारण वार्षिक सेवाओं के लिये धन का प्रयोग कराने वाले विधेयकों में सीनेट संशोधन नहीं कर सकती। सीनेट किसी भी विधेयक में ऐसा संशोधन नहीं कर सकती जो जनता पर प्रस्तावित आर्थिक भार को बढ़ा दे। "राजकीय जीवन में निचला सदन ही शक्ति केन्द्र है पर इसकी शक्ति उस समय से घट गई जब श्रमिकों के गुप्त पक्ष की स्थापना हुई क्योंकि इस गुप्त पक्ष में सीनेट के श्रमिक-सदस्य व निचले सदन के श्रमिक सदस्य मिलकर नीति का निर्णय पहले ही कर लेते हैं और प्रतिनिधि सदन की कार्यवाही व्यर्थ सी रहती है।"[1] यह गुप्त पक्ष ही शक्ति का केन्द्र बन गया।

दोनों सदनों के मतभेद को सुलझाने का उपाय—जब दोनों सदनों की शक्तियां समान हैं तो सम्भावना है कि उनमें कभी मतभेद हो जाये और उनमें से कोई भी अपना मत बदलने को तैयार न हो। ऐसे मतभेद का समाधान करने की रीति संविधान की ५७ वीं धारा में दी हुई है। यदि निचला सदन किसी विधेयक को पास करे और सीनेट उसे पास न करे, रद्द कर दे या ऐसे संशोधनों से पास करे जो निचले सदन को स्वीकार न हो और यदि वह सदन तीन महीने बाद उसी सत्र में या दूसरे सत्र में उसी विधेयक को सीनेट के द्वारा किये हुये या सुझाये हुये संशोधनों सहित या उनके बिना पुनः पास कर दे और सीनेट उसे रद्द करदे या पास न करे या ऐसे संशोधनों से पास करे जो निचले सदन को पसन्द न हो, तो गवर्नर जनरल सीनेट और प्रतिनिधि-सदन दोनों

---

[1] मौडर्न डेमोक्रेसीज, भाग II पृ० २०६।

का एक साथ विघटन कर दे। पर ऐसा विघटन निचले सदन की अवधि साधारण समाप्ति के छ मास पूर्व वाले समय में नहीं हो सकता।

यदि ऐसे विघटन और नय निर्वाचन के पश्चात् निचला सदन उस प्रस्ताविक विधेयक को सीनेट से सुझाये हुय या सीनेट द्वारा स्वीकार या समावेश किये हुये संशोधनों के साथ या बिना उनके पास कर दे और सीनेट उसे पास न करे या रद्द कर दे या ऐसे संशोधनों से पास करे जो निचले सदन को स्वीकार न हों गवर्नर जनरल दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में सदस्य मिलकर विचार करेंगे और मिलकर ही मत देंगे। चाहे तो एक सदन के द्वारा वे स्वीकार किये हुये और दूसरे से अस्वीकार हुये संशोधनों पर विचार करें या न करें। सीनेट व प्रतिनिधि-सदन की कुल संख्या बहुमत (Absolute Majority) से जो संशोधन स्वीकृत हो जायेंगे वे ही पास समझे जायेंगे इससे यह स्पष्ट है कि आस्ट्रेलिया की सीनेट को कनाडा या अमरीका की सीनेट से अधिक शक्तियाँ मिली हुई हैं। सीनेट के सदस्यों की योग्यता व उनके निर्वाचन की प्रजातन्त्रात्मक विशेषता देखते हुए यही आशा की जाती थी।

गवर्नर जनरल की सम्मति—जब दोनों सदन किसी कानून को पास कर देते हैं तो लागू होने के पूर्व उसे गवर्नर जनरल की सम्मति प्राप्त होनी चाहिये। गवर्नर जनरल यदि चाहे तो अपनी सिफारिशों के साथ उस कानून को पालियामेण्ट के पास भेज सकता है जिससे उस पर फिर विचार हो या वह उसे सम्राट् की अस्वीकृति के लिये, जो एक वर्ष के भीतर मिल जानी चाहिए, अपने पास रख सकता है। वेस्ट-मिंस्टर की व्यवस्था के पास होने के पश्चात् आस्ट्रेलिया की पालियामेण्ट की व्यवस्था सम्बन्धी शक्तियों पर जो प्रतिबन्ध लगे हुए थे हट गये हैं।

संघ-कार्यपालिका

संघ की कार्यपालिका सत्ता राजा (इंगलैण्ड के क्राउन के रूप में नहीं वरन् कामनवैल्थ के क्राउन के रूप में) में विहित है और इस सत्ता का भोग गवर्नर-जनरल राजा का प्रतिनिधि होने के नाते करता है। गवर्नर-जनरल नेसेना व स्थल सेना का सेनापति भी है।

कनाडा की तरह आस्ट्रेलिया के संघ शासन में भी शासन कार्य में गवर्नर-जनरल को मन्त्रणा देने के लिये एक कार्यपालिका परिषद् का आयोजन है। इस परिषद् के सदस्यों को गवर्नर-जनरल आमन्त्रित कर उन्हें कार्यपालिका परिषद् के सदस्य बनाने की शपथ दिलाता है। ये सदस्य उसके अनुग्रह प्राप्त करते रहने पर अपने पद पर स्थित रहते हैं। यह तो कानूनी स्थिति है पर व्यवहार में जो होता है वह यह है कि गवर्नर प्रतिनिधि सदन में जो पक्ष बहुमत प्राप्त पक्ष होता है उसके नेता को

बुला कर प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है और प्रधानमन्त्री तब अपने पक्ष के लोगो की सलाह से अपने मित्र मन्त्रियो को चुनता है जिन्हे गवर्नर-जनरल विधिवत् कार्यपालिका के सलाहकार नियुक्त कर देता है। इस समय प्रधानमन्त्री समेत कुल कार्यपालिका परिषद् के सदस्य ११ हैं। प्रधानमन्त्री अपने लिये जो काम या शासन विभाग चाहता है रख लेता है। दूसरे मन्त्रियो में ये होते हैं, परिषद् का उप-सभापति और सीनेट का नेता, व्यापार-मन्त्री, एटार्नी-जनरल, उद्योग मन्त्री, वैदेशिक कार्य मन्त्री, पोस्टमास्टर जनरल, आयात-निर्यात कर व व्यापार मन्त्री, कोषाध्यक्ष व विकास और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अन्वेषण का प्रबन्ध करने वाले मन्त्री, वायुयान व निर्माण मन्त्री, सुरक्षा मन्त्री, स्वास्थ्य मन्त्री और गृह मन्त्री। प्रधान मन्त्री जिस प्रकार चाहता है इन कार्य विभागो को अपने साथी मन्त्रियो में बाँटता है वह परिषद् का अध्यक्ष रहता है और उसकी नीति निर्धारित करता है। उसे ४००० पौंड प्रति वर्ष वेतन मिलता है कुछ मन्त्री ऐसे भी नियुक्त किये जा सकते हैं जिनको किसी शासन विभाग का कार्य नही सौपा जाता। वैधानिक प्रथा के अनुसार परिषद् प्रतिनिधि सदन का उत्तरदायी है और उसका विश्वास खोने पर पद त्याग कर देती है। परिषद् ही सामान्य शासन नीति निश्चित करती है और सिविल सर्विस उस नीति को कार्यरूप देती है।

मन्त्री परिषद की रचना—परिषद् के बनाने में प्रधान मन्त्री उपराज्यो की इच्छा से समुचित आदर करता है और ऐसा प्रयत्न करता है कि प्रत्येक उपराज्य का कम से कम एक व्यक्ति मन्त्री अवश्य हो। परिषद् सामुदायिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त पर कार्य करती है पर यदि कोई मन्त्री अपने मित्रो से कोई मौलिक मतभेद रखता है तो वह पदत्याग कर देता है। परिषद् स्वय ही अपनी नीति निर्धारित करती है और विधान मण्डल के कार्य मे उसके मार्ग प्रदर्शक का कार्य करती है। पर श्रमिक पत्र के मन्त्रिमण्डल के पदारूढ होने पर यह नीति, पक्ष की गुप्त समिति द्वारा निर्धारित होने लगी है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि कामनवैल्थ की वास्तविक कार्यपालिका सत्ता मन्त्रीपरिषद् मे विहित है हालांकि सिद्धान्तत यह गवर्नर-जनरल में विहित है। गवर्नर-जनरल परिषद् की बैठक में उपस्थित नही होता वैधानिक प्रथानुसार परिषद् इतनी महत्वपूर्ण होती जा रही है कि गवर्नर-जनरल की नियुक्ति भी सम्राट् उसकी सलाह से ही करता है

सघ न्यायपालिका

सघ की न्यायकारी सत्ता आस्ट्रेलिया की हाईकोर्ट और दूसरे न्यायालयो में जिनको सघ पार्लियामेण्ट आवश्यक अधिकारो से शक्ति सम्पन्न बनाती है, विहित है। सघ मे हाईकोर्ट सर्वोच्च न्याय सस्था है। इसमे एक प्रधान न्यायाधीश व छ

और न्यायाधीश होते हैं। इन सबको गवर्नर जनरल नियुक्त करता है और ये न्यायाधीश जब तक सदाचार वर्तते हैं अपने पद पर सुरक्षित रहते हैं। यदि एक ही सत्र में दोनो सदन गवर्नर-जनरल से प्रार्थना करें कि किसी न्यायाधीश को उसके सिद्ध हुये दुराचार या अयोग्यता के कारण पद से हटा दिया जाय तो गवर्नर जनरल मन्त्रिमंडल की सलाह से उसे हटा सकता है। जब तक न्यायाधीश अपने पद पर रहते हैं उनका वेतन कम नही किया जा सकता। इन सब शर्तों से न्यायपालिका में स्वतन्त्रता व निरपेक्षता बनी रहती है। हाईकोर्ट अपने निर्णयो की निरपेक्षता के लिये प्रख्यात हो गई है, इसलिये अमरीकन उपराज्यो की तरह यहाँ इस बात का कोई पक्का प्रयत्न नही किया गया है कि न्यायाधीशो की नियुक्ति निर्वाचन के द्वारा हो। हाईकोर्ट के प्रारम्भिक अधिकार का भोग करने वाले न्यायाधीशो के निर्णयो पर, उन छोटे न्यायालयो के निर्णयो पर जो सघ-अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्य करते हैं और उन मुकद्दमो पर जो उपराज्य के सर्वोच्च न्यायालयो के पुनर्विचार करने के लिये भेजे गये हो, पुनर्विचार करने का हाईकोर्ट को अधिकार है और इस पुनर्विचार के पश्चात् हाईकोर्ट का निर्णय अन्तिम माना जाता है।

हाईकोर्ट की शक्तियाँ—यदि हाईकोर्ट स्वय ही प्रमाण-पत्र द्वारा अनुमति दे तो उसके निर्णय के विरुद्ध प्रिवी कौसिल की न्याय समिति मे अपील की जा सकती है। पर राजा स्वय भी प्रिवी कौसिल मे अपील करने की विशेष अनुमति दे सकता है। आगे कहे हुये विषयो मे हाईकोर्ट प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है: जब किसी ऐसी सन्धि के अन्तर्गत कोई प्रश्न उठा हो जो वैदेशिक प्रतिनिधियो से सम्बन्ध रखता हो, या जिसमें सघ सरकार व उसकी ओर से कोई व्यक्ति वादी या प्रतिवादी हो जब दो उपराज्यो व उनके निवासियो या एक उपराज्य के किसी निवासी के बीच झगडा हो, या जब किसी सघ सरकार के अफसर के विरुद्ध यह आज्ञा पत्र मांगा जा रहा हो, कि उस अफसर की आज्ञाओ का पालन न हो।[1]

पार्लियामेण्ट कानून बनाकर किसी भी विषय में हाईकोर्ट को प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार दे सकती है यदि वह विषय शासन विधान के अन्तर्गत उठा हो, या नावाधिकरण क्षेत्राधिकार तथा सामुद्रिक क्षेत्राधिकार सम्बन्धी पार्लियामेण्ट के किसी कानून के अन्तर्गत कोई प्रश्न उठा हो या जब उस विषय का सम्बन्ध ऐसे मामलो से हो जो दो या अधिक उपराज्यो के कानून के भीतर आता है।[2]

इससे यह प्रगट है कि हालांकि हाईकोर्ट के निर्णयो के विरुद्ध प्रिवी कौसिल में

---

१. संविधान की धारा ७५ ।
२. संविधान की धारा ७६ ।

अपील हो सकती है, पर अधिकार क्षेत्र की दृष्टि से यह हाईकोर्ट बहुत कुछ अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय से मिलती जुलती है और इसकी शक्तियाँ कनाडा के सर्वोच्च न्यायालय से निश्चय ही अधिक हैं। प्राय प्रिवी कौंसिल में अपील करने की अनुमति देने से इन्कार कर हाईकोर्ट ने वह स्वतन्त्रता व महत्ता प्राप्त कर ली है जो कनाडा की हाईकोर्ट को प्राप्त नही है।

संविधान का संशोधन

संविधान संशोधन की रीति कनाडा की रीति से भिन्न और अमरीकन रीति से मिलती जुलती है। कनाडा के संविधान में संशोधन ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ही कर सकती है, कम से कम सिद्धान्ततः तो यही ठीक है, परन्तु आस्ट्रेलिया का शासन-विधान अधिक लोकतन्त्रात्मक है, उसका संशोधन आगे दी हुई दो रीतियो में से किसी एक के अनुसार हो सकता है।

(१) प्रस्तावित संशोधन पहले दोनो सदनों मे परम मताधिक्य से पास होना चाहिये। उसके दो मास के बाद, पर छ मास से पहले यह संशोधन प्रत्येक उपराज्य के उन निर्वाचको के सम्मुख रखा जाना चाहिये जो प्रतिनिधि सदन के सदस्यों को चुनते हैं।

(२) यदि प्रस्तावित संशोधन एक सदन में परम मताधिक्य से पास हो जाय पर दूसरा सदन उसे पास न करे, या रद्द कर दे या ऐसे परिवर्तन करके पास करे जो पहले सदन को पसन्द न हो और यदि तीन मास बीतने पर पहला सदन उस प्रस्तावित संशोधन को फिर परम मताधिक्य से पास कर दे (उसी सत्र में या अगले सत्र में) और यदि दूसरा सदन पूर्व सदन की पसन्द के अनुसार उसे पास न करने पर अड़ा रहे, तो गवर्नर जनरल पूर्व सदन से अन्तिम बार प्रस्तावित संशोधन को बिना उन परिवर्तनों के या उन परिवर्तनो के साथ जो बाद में दोनों सदनों ने मान लिये हो, उप-राज्यों के निर्वाचकों के सम्मुख रख सकता है जो प्रतिनिधि सदन के सदस्यों के चुनाव में भाग ले सकते हैं।[१]

संशोधन का प्रस्ताव निर्वाचकों के सम्मुख रखे जाने पर यदि बहुसंख्यक उप-राज्यों के बहुसंख्यक मतदाता और सारे आस्ट्रेलिया संघ के मतदाताओं की अधिक संख्या उस संशोधन को स्वीकार कर ले तो वह प्रस्ताव स्वीकृत समझा जाता है। इसके पश्चात् यह स्वीकृत प्रस्ताव सम्राट की ओर से सम्मति देने के लिये गवर्नर जनरल के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है यह सम्मति अब व्यवहार में रोकी नही जा सकती।

संविधान-संशोधन के सम्बन्ध में पार्लियामेन्ट पर प्रतिबन्ध—पार्लियामेन्ट

---

१. संविधान की धारा १२९।

विधान-संशोधन के द्वारा किसी भी केन्द्रीय-सदन में किसी उपराज्य के अनुपाती प्रतिनिधित्व को या प्रतिनिधि-सदन में उसके प्रतिनिधियों की कम से कम संख्या को घटा नहीं सकती। न किसी उपराज्य की सीमा न संविधान के वे प्रविधान जिनसे उपराज्य का पद स्थिर हुआ हो, बदले जा सकते हैं, जब तक उस उपराज्य में मतदाताओं के बहुसंख्यकों ने इसे स्वीकार न कर लिया हो।

उपराज्य और स्थानीय शासन

आस्ट्रेलिया-संघ में छ उपराज्य हैं जिनकी राजधानी व ३१ मार्च सन् १९५४ को अनुमानित जनसंख्या नीचे सारिणी में दी है —

उपराज्य का नाम	राजधानी	क्षेत्रफल (वर्ग मीलों में)	अनुमानित जनसंख्या
न्यू साउथ वेल्स	सिडनी	३०९,४३३	३४,८२,०१९
विक्टोरिया	मेलबोर्न	८७,८८४	२४,२९,६३४
क्वीन्सलण्ड	ब्रिजबेन	६७०,५००	१२,७४,७७३
दक्षिणी आस्ट्रेलिया	ऐडिलेड	८८०,०७०	७,७०,९२६
पश्चिमी आस्ट्रेलिया	पर्थ	९७५,९२०	६,३७,४२९
टसमानिया	होबार्ट	२६,२१५	३,१८,९६७
उत्तरी खण्ड		५२३,६२०	१७,२४१
राजधानी खण्ड	(केनबेरा)	९३९	३१,२९२

संघ सरकार उत्तरी प्रदेश, संघ-राजधानी-प्रदेश, पैपुआ और संरक्षित प्रदेशों पर स्वयं शासन करती है।

संघ स्थापित होने से पूर्व उपराज्य स्वतन्त्र थे—कामनवैल्थ आफ आस्ट्रेलिया एक्ट जिससे आस्ट्रेलिया में संघ शासन की स्थापना हुई, उसके पास होने से पूर्व आस्ट्रेलिया के प्रान्त एक दूसरे के आश्रित न थे। उनमें उत्तरदायी स्वायत्त-शासन होता था और वे ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की आधीनता स्वीकार करते थे पर आपस में वे एक दूसरे के आधीन न थे। तात्पर्य यह है कि उनकी वही स्थिति थी जो संयुक्त राष्ट्र अमरीका के उपराज्यों की सन् १७७७ से पूर्व थी। यह हम पहले ही बतला चुके हैं कि प्रत्येक प्रान्त या राज्य की जनता की स्पष्ट इच्छा से ही संघ की स्थापना हुई। इसलिये संघ की स्थापना राज्यों की सम्मति से हुई और उन्होंने केवल वही अधिकार व शक्तियाँ केन्द्रिय सरकार के सुपुर्द किये जिनको उन्होंने देश के हित में आवश्यक समझा। सन् १९०० के एक्ट ने इसीलिए राज्यों के स्वतन्त्र पद को मान्य स्वीकार कर यह निश्चय कर दिया कि उनका शासन विधान वही रहेगा जो संघ की स्थापना के

समय या संघ में शामिल होने के समय वर्तमान था यह शासन विधान उसी संविधान में दी हुई पद्धति से बदला अवश्य जा सकता है।

उपराज्यों को शक्तियाँ—प्रत्येक राष्ट्र को वे शक्तियाँ सुरक्षित हैं जो सन् १९०० के शासन-विधान द्वारा संघ सरकार को नहीं दे दी गई हैं। ऐसी ही स्थिति संयुक्त-राष्ट्र अमरीका के उपराज्यों की है इसके विरोध कनाडा में विशेष शक्तियाँ प्रान्तों को न देकर औपनिवेशिक सरकार को दी गई हैं और प्रान्तों को वे ही शक्तियाँ व अधिकार प्राप्त हैं जो ब्रिटिश नार्थ अमरीका एक्ट ने उनको दिये हैं। इस प्रकार अमरीका संघ व आस्ट्रेलिया संघ की अंगीभूत इकाइयों का पद कनाडा के प्रान्तों के पद से ऊँचा है। *आस्ट्रेलिया व संयुक्त राष्ट्र अमरीका में उपराज्यों के बनाये हुये अधि*नियमों को संघ सरकार रद्द नहीं कर सकती पर कनाडा में गवर्नर जनरल किसी भी प्रान्तीय अधिनियमों को रद्द कर सकता है।

गवर्नर—अमरीका में उपराजकीय शासन के अध्यक्ष को जो गवर्नर कहलाता है, जनता चुनती है और वह संयुक्त-राष्ट्र अमरीका के प्रेसीडेंट के किसी प्रकार भी आधीन नहीं होता। आस्ट्रेलिया में प्रत्येक उपराज्य में एक गवर्नर होता है जिसको सम्राट् नियुक्त करता है और जो न तो उपराज्य की जनता को न गवर्नर जनरल को उत्तरदायी होता है, परन्तु कनाडा में प्रान्त का शासनाध्यक्ष लैफ्टिनेंट गवर्नर कहलाता है और गवर्नर-जनरल द्वारा ही नियुक्त होता है व हटाया जाता है। इसलिये वह गवर्नर-जनरल का मातहत ही है। उपराज्यों की न्यायपालिका आस्ट्रेलिया व कनाडा के प्रान्तों के न्यायपालिकाओं की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र है, वे संघ न्यायपालिका के उतने आधीन नहीं जितने कि कनाडा में है। संक्षेप में अमरीका के उपराज्यों को अधिक से अधिक अधिकार और स्वतन्त्रता है, उसमें कम शक्तिशाली और स्वतन्त्र आस्ट्रेलिया के उपराज्य हैं और सबसे कम शक्तिशाली कनाडा के प्रान्त हैं।

उपराज्यों के विधानमण्डल—आस्ट्रेलिया में प्रत्येक उपराज्य में दो सदन का विधानमण्डल है। ऊपरी सदन कौंसिल और निचला सदन असेम्बली के नाम से प्रसिद्ध है, इन दोनों में से असेम्बली ही अधिक प्रभावशाली है। "यह आय-व्यय पर नियन्त्रण रखती है और मन्त्रिमण्डलों को बनाती बिगाड़ती है। इसलिये इसी में योग्य व सामर्थ्यवान् व्यक्ति आने का प्रयत्न करते हैं। यद्यपि राष्ट्रीय संघ सरकार के बन जाने से उपराज्यों की असेम्बलियों का पहला सा महत्व नहीं रहा पर अब भी उनका इतना महत्व है कि कम से कम बड़े उपराज्यों में वे व्यक्ति जो जनमत से शीघ्र प्रभावित होते हैं, जो व्यवहार कुशल हैं और राजनैतिक युद्ध लड़ना जानते हैं, इनमें निर्वाचित होकर आते हैं।"[1] पर कौंसिलें, चाहे वे लम्बी अवधि वाली हों या थोड़ी अवधि वाली,

१. मॉडर्न डेमोक्रेसीज भाग II पृष्ठ २८१-२८

शान्त संस्थाएँ हैं। उनकी बैठक थोडे समय के लिये ही होती है और मन्त्रिमण्डल के बनने बिगडने से उनका सम्बन्ध न होने से वे अधिक महत्व नहीं रखती। जब दोनों सदनों में कार्यविरोधक मतभद हो जाता है उस समय ही ये राजनीति में थोडा सा भाग लेती हैं सो भी बहुत साधारण सा। ये कौंसिलें अमरीकन उपराज्यों की सीनेटों से बहुत कम मिलती जुलती है, न उनकी तुलना फ्रांस की सीनेट से की जा सकती है क्योंकि उनमें बहुत थोडी सख्या में ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं जो राजनीति में विख्यात हों। पर फिर भी उन्होंने जो काम अब तक किया है वह उनके अस्तित्व के समर्थन में पर्याप्त है। उन्होंने जल्दबाज विधायका को बाध्य कर दिया है कि वे अपने प्रस्तावों पर पुनर्विचार कर सशोधन करें और उनका पुनर्निर्माण करें।

उपराज्यों की विधायिनी शक्ति—उपराज्यों की विधायिनी शक्ति कनाडा के प्रान्तों के अधिकार से अधिक है पर अमरीकन उपराज्यों के अधिकारों से कम है। सघ-सरकार को जो मामले नहीं सौंपे गये हैं उन सबमें उपराज्यों को कानून बनाने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त कुछ समवर्ती शक्तियाँ (Concurrent powers) भी हैं जिनका उपभोग वे सघ पार्लियामेण्ट के साथ साथ करती हैं। यदि उपराज्य का कानून सघ-कानून के विरुद्ध हो, तो उपराज्य का कानून जहाँ तक ऐसा विरोध है अमान्य हो जाता है। सविधान की ११४ व ११५ वी धारा के अनुसार उपराज्य कोई स्थल या जल सेना बिना पार्लियामेण्ट की सम्मति से न भर्ती करेगा, न सगठन व पालन करेगा, न उपराज्य सघ सरकार की सम्मति पर कोई कर लगायेगा। सघ सरकार भी उपराज्यों की सम्पत्ति पर कोई कर न लगायगी। ११५ वी धारा में उपराज्य के मुद्रा बनाने पर निषेध लगाया गया है। कोई उपराज्य सिवाय सोने और चाँदी के सिक्कों के दूसरी किसी वस्तु को ऋण चुकाने का माध्यम न बनायेगा। सविधान की ११६ वी धारा के अनुसार कामनवैल्थ ऐसा कोई कानून न पास करेगी जिससे किसी धर्म विशेष को मान्य ठहराया जाय या कोई धर्म व्यवहार लोगों पर लादा जाय या किसी धर्म के आचरण पर रोक लगाई जाय। एक दूसरी धारा के अनुसार सघ सरकार उपराज्य की कार्यपालिका की प्रार्थना पर उपराज्य की बाहरी आक्रमण या भीतरी विद्रोह से रक्षा करेगी।

उपराज्य की कार्यपालिका सत्ता गवर्नर में विहित है जो उपराज्य की मन्त्रि-परिषद की सिफारिश पर सीधे सम्राट् द्वारा नियुक्त होता है। उपराज्य का निवासी उसी उपराज्य का गवर्नर नहीं बनाया जाता। गवर्नर केवल वैधानिक अध्यक्ष ही होता है, वास्तव में तो मन्त्रिपरिषद् ही सब काम करती है। यह परिषद् साधारण रीति से बनती है और असेम्बली को उत्तरदायी होती है।

न्याय सगठन—प्रत्येक उपराज्य का अपना पृथक् न्याय सगठन है जिसकी

चोटी पर एक सर्वोच्च न्यायालय रहता है और इसके निर्णयों की अपील सघ हाईकोर्ट में होती है।

सघ पार्लियामेण्ट मे नये उपराज्यों को शामिल कर सकती है और नये उपराज्य स्थापित कर सकती है।

हालांकि आस्ट्रेलिया के उपराज्यों की स्वतन्त्रता की मात्रा बहुत है, इतना होते हुये भी पश्चिमी आस्ट्रेलिया ने विद्रोह करने की ठानी। वहाँ के विधान मण्डल ने सन् १९३२ में एक एक्ट पास किया जिसके अन्तर्गत सघ से पृथक् होने के प्रश्न पर लोक निर्णय लिया गया। इस लोक निर्णय में ६७,९४७ मत पृथक होने के पक्ष में अपेक्षाकृत अधिक पडे। जब मताधिक्य से इस प्रकार जनमत पृथकीकरण की ओर झुका हुआ सिद्ध हुआ तो उपराज्य की सरकार ने यह प्रश्न ब्रिटिश सरकार के सामने रखा, पर ब्रिटिश सरकार ने सब बातों को विचार कर यह निर्णय किया कि उपराज्य का सघ से पृथक् होना सघ-शासन-प्रणाली के विरुद्ध है और इसलिए पश्चिम आस्ट्रेलिया की माँग अस्वीकृत कर दी गई। ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय ने ब्रिटिश सघ प्रणाली पर बडा प्रभाव डाला है।

पाठ्य पुस्तक

Bryce, Viscount—Modern Democracies.
Vol II chs. XLVI--LII (Macmillan & Co, 1923).
Cramp K. R — The State and Federal Constitution of Australia (1914 Sydney).
Egerton, H. E.--Federations and Unions in the British Empire pp. 40-47, and 185-230 (Oxford)
Hunt, E. M—American Precedents in the Australian Commonwealth, (1930 Columbia)
Keith, A. B.—The Constitution, Administration and Laws of the Empire (Collins, 1942)
Newton, A. P.--Federal and Unified Constitutions, pp. 295--301; 311-358 and Introduction.
Portus, G. V—Studies in the Australian Constitution, (1933 London)
Quick & Garron—Annotated Constitution of the Australian Commowealth (London 1901.)
Sharma, B M—Federal Polity, Chs. II C (vi) III & IV,
Wheare, K. C.—The Statute of Westminster, (Oxford, 1933).
Wood, F. L. W -- The Constitutional Development of Australia pp 200-254 (Harrap, London 1933).
Select Constitutions of the World, pp. 309-52.

(३) दक्षिण अफ्रीका का शासन

उपनिवेशों का यह सघ दक्षिण-अफ्रीका में बसने वाली जातियों को मिलाकर एक करने के काम में बडी उन्नति का परिचायक है। दक्षिणी अफ्रीका के निवासियों में कुछ अंग्रेज है, कुछ डच है और कुछ फ्रासीसी। इनके पूर्व पुरुषों ने इतिहास के लम्बे समय में बडे कष्ट सहे और स्वतन्त्रता के लिये सघर्ष किया। उन्होंने कारावास, निर्वासन व सम्पत्ति-हरण, यह सब सहा और युद्ध के मैदान में फासी के तख्ते पर चढ कर नागरिक व धार्मिक स्वतन्त्रता के लिये प्राण त्याग किया।" —दी अर्ल आफ क्रू

ब्रिटिश साम्राज्य के स्वायत्त-शासन वाले उपनिवेशो में दक्षिण अफ्रीका में सबसे अन्त में शासन की स्थापना हुई। दक्षिण अफ्रीका का क्षेत्रफल ४७२,४९५ वर्ग मील और जनसख्या ११,४१८,३४९ है जिसमें से २,३७२,६९० यूरोपियन लोग हैं और बचे हुये वहाँ के मूल निवासी हैं। यूरोपियनो में १८ प्रतिशत डच भाषा का अपभ्रंश भाषा जो अफ्रीकास कहलाती है, बोलते हैं और शेष अंग्रेजी भाषा बोलते हैं।

चार स्वावलम्बी उपनिवेश—दक्षिण अफ्रीका के चारो उपनिवेशों (केप कालोनी, औरेन्ज रिवर कालोनी, ट्रासवाल व नैटाल) का शासन प्रबन्ध एक दूसरे से बहुत दिनो तक पृथक् पृथक् चलता रहा। एतिहासिक विकास के भेद के अतिरिक्त इन उपनिवेशो के बहुत से हितो में पारस्परिक विरोध था जिससे ये एक दूसरे से अधिकाधिक दूर हटते जाते थे। इनकी आर्थिक स्थिति एक समान न थी। ट्रासवाल व्यापार में सबसे आगे था और डेलगोआ खाडी से सब व्यापार करता था। नैटाल का व्यापार डरबन बन्दरगाह के द्वारा होता था और केप कालोनी का केपटाउन द्वारा। इन उपनिवेशो की रेलो ने किरायो को बढाकर एक दूसरे को हानि पहुँचाना आरम्भ किया जिससे एक बडे सघर्ष की सम्भावना होने लगी। इसके अतिरिक्त इसकी कर-सम्बन्धी नीति में मौलिक विभिन्नता थी। ट्रासवाल नि शुल्क व्यापार के पक्ष में था पर नैटाल और केप कालोनी सरक्षण चाहते थे, इसलिये नही कि उनसे उनकी आय बढती पर व यह भी चाहते थे कि उनके समुद्रतट के नगरो में उद्योग की उन्नति हो। तीसरी बात यह थी कि मूल निवासियो के प्रति इन चारो उपनिवेशो की नीति में बडा भेद था। गोरे लोगो व मूल निवासियो की सख्या में १ व ४ का अनुपात होने से यह बडा भय था कि चारो उपनिवेशो की विभिन्न नीति से देश के लिये कोई बडी विपत्ति न खडी हो जाय।

सन् १९०३ की उपनिवेशों की कांग्रेस—सन् १८८४ में अफ्रीकदर नेशनल

पार्टी का सगठन हुआ जिसका उद्देश्य यह था कि सब यूरोपियनो को एक सघ सरकार की आधीनता में सगठित किया जाय। "पर डचो और अग्रेजो में बढते हुये विरोध ने ऐसे सघ की स्थापना असम्भव हो गई।" इसी में आर्थिक समस्या इतनी महत्वपूर्ण बन गई कि उपनिवेशो की एक कनवेंशन बुलाई गई जिसने सन् १९०६ में निरात्म्य-सघ स्थापित करने का प्रस्ताव पास किया। पर सन् १८७१ से लेकर किसी प्रकार के सघ के लिये भी जो प्रयत्न हुए वे उपनिवेश सरकारो द्वारा ही आरम्भ हुए थे, जनता की उसमें कोई राय न ली गई थी, इसलिए वे सब निष्फल रहे। सन् १९०७ के जून मास मे दक्षिण अफ्रीका के हाई कमिश्नर अर्ल सैलबर्न ने केप कालोनी के गवर्नर को एक पत्र भेजा जिसमे उन्होने अपना यह दृढ मत प्रकट किया कि यदि सघ का प्रयत्न सफल होगा, तो वह तभी, जब जनता स्वय इस प्रश्न को अपने हाथ में लेकर चले। सघ की आवश्यकता पर जोर देते हुए उन्होने लिखा,"असबद्ध देश का सयोजन करना कोई ऐसा कार्य नही जिसे किसी दूसरे सुविधा पूर्ण अवसर के लिये टाला जा सकता हो। यदि अलगावो को जैसे का तैसा छोड दिया जाय तोउनके दिल पर पक्के व स्थायी होने की प्रवृति उत्पन्न हो जाती और अन्त में एक दृढ सयोजन की सभावना असभव हो जाती है।'

सन् १९०८ की कान्फ्रेंस—सन् १९०८ की मई में उपनिवेशो की कान्फ्रेंस फिर हुई और रेल के किराये व कर सम्बन्धी प्रश्नोपर विचार हुआ पर सयुक्त राष्ट्र अमरीका की अनापोलिस कान्फ्रेंस के समान यहा भी यह प्रस्ताव पास हुआ कि 'इस कान्फ्रेंस की राय में दक्षिण अफ्रीका का सर्वोच्च हित-साधन व उसकी समृद्धि ब्रिटेन की छत्रछाया में उपनिवेशो के सघीभूत होने से प्राप्त हो सकती है।" इस कान्फ्रेंस में यह प्रस्ताव भी पास हुआ कि उपनिवेशो के प्रतिनिधियो का एक सम्मेलन हो जो सविधान का प्रारूप तैयार करे। इन सिफारिशो को स्वीकार करते हुये चारों उपनिवेशो व रोडेशिया की विधान मण्डलो ने अपने प्रतिनिधि नयुक्त किये।[1] ये ३३ प्रतिनिधि १२ अक्टूबर सन् १९०८ को डरबन नगर मे एक सम्मेलन म एकत्रित हुए। पहले डरबन में वाद-विवाद आरम्भ हुआ फिर सम्मेलन हट कर केपटाउन मे हुआ। इसके सामने बहुत ही जटिल समस्यायें थी। जाति-विभेद, आर्थिक मतभेद और विभिन्न अधिनियम-प्रणालियाँ, ये सब इतने महत्वपूर्ण प्रश्न थे कि उनको हल करना और तब सघ की शर्तों पर सबको सहमत करना बडा कठिन काम था। अन्त में एक सविधान का प्रारूप तैयार हुआ जो सभी उपनिवेशो के प्रतिनिधियो ने ११ मई १९०९ को अपने हस्ताक्षरो द्वारा स्वीकार किया।

१. रोडेशिया अन्त में सघ में शामिल नही हुआ।

इस प्रकार सम्मेलन का सबसे कठिन कार्य सफलतापूर्वक समाप्त हुआ। तब उपनिवेशों के प्रतिनिधि इंगलैण्ड गए और प्रारूप को पार्लियामेण्ट के सामने प्रस्तुत कराया। पार्लियामेण्ट ने इसे स्वीकार कर यूनियन आफ साउथ अफ्रीका एक्ट (Union of South Africa Act) २० सितम्बर १९०९ को पास किया। ३१ मई सन् १९१० को चारों उपनिवेश विधिपूर्वक एक संघ में सम्बद्ध हो गये जिसमे उनकी समस्यायें सदा के लिए हल हो गई। इस संघ को दक्षिण अफ्रीका का संघ (Union of South Africa) कहते है।

तब से संघ की पार्लियामेण्ट अर्थात् संसद ने १९०९ के शासन-विधान में १६ संशोधन किये है, कुछ साधारण केवल शाब्दिक व कुछ अधिक महत्वपूर्ण। सन् १९३४ में जो संशोधन हुआ वह स्टेटस आफ दी यूनियन एक्ट (Status of the Union Act) के द्वारा हुआ। इससे वैस्टमिंस्टर व्यवस्था को स्वीकार कर लिया गया। इस एक्ट की दूसरी धारा थी "यूनियनों की पार्लियामेण्ट यूनियन में सबसे सार्वभौम विधायिनी शक्ति होगी और किसी दूसरे कानून के होते हुए भी इंगलैण्ड की पार्लियामेण्ट का कोई कानून ११ दिसम्बर सन् १९३१ के बाद यूनियन के कानून के रूप में मान्य न होगा जब तक उसको यूनियन की पार्लियामेण्ट के एक्ट (अधिनियम) से मान्य न ठहराया गया हो।

सन् १९०९ का शासन-विधान

शासन-विधान की विशेषतायें—"शासन विधान की प्रमुख विशेषता स्यात् अनागत पर इसका भरोसा है।"[१] ये श्री ब्राड के वचन है जो राष्ट्रीय सम्मेलन में ट्रांसवाल प्रतिनिधि-मण्डल के मन्त्री थे। इसमें कुछ सच्चाई भी है। संघ के बनने से पूर्व इसके हिस्सेदार डच व अंगरेज दोनों एक दूसरे की ओर से व सरकार की ओर से अत्यन्त संदिग्ध-चित्त रहते थे, फिर भी भविष्य का भरोसा कर उन्होंने एक दूसरे के दृष्टिकोण का आदर करने के लिए अनेक बातों में समझौता किया। उस समय की स्थिति में कोई भी यह नहीं कह सकता था कि उनमें इतना निकट सम्बन्ध स्थापित हो सकेगा। सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने वास्तव में ऐसा शासन-विधान बनाकर विस्मयकारक काम किया क्योंकि संघ-शासन की बहुत सी विशेषताओं को रखते हुए भी इसकी मूलभावना एकात्मक है।

एकात्मक विशेषतायें—यह केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तियां देता है और प्रान्तों को केवल प्रशासन-इकाइयों जैसा पद देता है जो अपने विधायिनी कार्यकारी व न्यायिक कर्तव्यों के लिए केन्द्रीय-सत्ता पर निर्भर रहती है। *यूनियन की प्रान्तीय*

१. यूनियन आफ साउथ अफ्रीका, पृ० ११४।

सरकारें अधिकतर केन्द्र से सौंपी हुई शक्तियों का उपभोग करती हैं और उनकी विधायिनी योजनायें केवल अध्यादेश (Ordinances) ही होते हैं, अधिनियम (Law) नहीं होते। प्रान्तीय कार्यपालिकाओं के अध्यक्ष प्रशासक (Administrators) कहलाते हैं न कि गवर्नर या लैफ्टिनैण्ट गवर्नर। संघ सरकार प्रान्तीय सरकारों को कोई भी शक्ति सौंप सकती है। संविधान प्रस्तावना में संघ की प्रजा की इच्छा के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है हालांकि शासन-विधान का प्रारूप उपनिवेशी सरकारों के प्रतिनिधियों ने बनाया था और कम से कम एक उपनिवेश नैटाल में यह मसविदा लोक-निर्णय के लिये भी रखा गया था।

संघात्मक विशेषताएँ—यद्यपि राज्य संगठन की मूलभावना एकात्मक (Unitary) है पर इसमें कुछ बातें ऐसी हैं जिनसे यह संघात्मक प्रतीत होता है। स्वयं प्रस्तावना में भी "स्थानीय मामलों में व ऐसे मामलों में जो प्रान्तीय व्यवस्थापन और प्रशासन के लिए आरक्षित हों, अधिनियम व प्रशासन सत्ता वाले प्रांतों के स्थापित करने के लिए' कहा गया है। इससे स्पष्ट है कि केन्द्रीय सरकार को असीमित अधिकार नहीं हैं। डच और अंग्रेजी दोनों भाषायें मान्य हैं जिनमें सब सरकारी आलेख छपते हैं। कनाडा में भी फ्रांसीसी व अंग्रेजी भाषायें फ्रांसीसी व अंग्रेज बसने वालों को सन्तुष्ट करने के लिए मान्य करनी पड़ी थीं। इसके विपरीत आस्ट्रेलिया में भाषा का प्रश्न था न कि वहाँ जाति-सम्बन्धी समस्या सुलझानी थी। दक्षिण अफ्रीका में सीनेट असेम्बली दोनों सभागार प्रान्तीय-आधार पर बनी हैं जो निःसन्देह संघात्मक गुण है। संघ की राजधानी स्थापित करने में भी समझौता हुआ है, केपटाउन में विधान-मण्डल स्थित है, प्रिटोरिया में कार्यपालिका रहती है और ब्लोम फोनटीन में सर्वोच्च न्यायालय स्थित है। इस व्यवस्था से प्रान्तों का मान रखने का प्रयत्न किया गया है पर इसमें अधिक व्यय होता है और प्रशासन भी अच्छे ढंग से नहीं हो पाता।[1] मूलवासियों के प्रतिनिधि सम्बन्धी, शिक्षा व मताधिकार सम्बन्धी सब विषय अनन्य रूप से सब प्रान्तों के लिए उपक्षित हैं। प्रान्तों की सीमायें वही हैं जो संघ बनने से पूर्व उपनिवेशों की थीं। सीनेट में सब प्रान्तों को समान प्रतिनिधित्व दिया गया है हालांकि केन्द्रीय सरकार द्वारा आठ सीनेट सदस्यों के मनोनीत किये जाने का भी प्रावधान था परन्तु सन् १९५५ में यह समाप्त कर दिया गया। यह सब समझौते की आधारभूत विशेषतायें संविधान को कुछ कुछ संघात्मक रूप प्रदान करती हैं।

आस्ट्रेलिया के संविधान के विपरीत दक्षिण अफ्रीका के संविधान में कार्यपालिका का वर्णन पार्लियामेण्ट के वर्णन से पूर्व किया गया है। यह बहुत कुछ डच लोगों की

[1] कीथ—कन्स्टीट्यूशनल ला आफ दी डोमिनियन्स, पृ० ३६३।

प्रवृत्ति का परिणाम है जिसके वश होकर वे समय विशेष की स्थिति सरकार पर अधिक भरोसा करते हैं। उनमें यह दृढ भावना है कि सरकार की आलोचना करना विश्वासघात है।

मिला-जुला शासनविधान—सब बातों को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि शासन-विधान एकात्मक व संघात्मक सिद्धान्तों का अनुपम समन्वय है जिसका उद्देश्य दो यूरोपियन जातियों को मिलाना है। और यद्यपि तब से अब तक डच व अंग्रेज मिलकर एक नहीं हुए (हों भी कैसे सकते थे) फिर भी ब्रिटिश दक्षिण अफ्रीका ने भूतकालीन नीतियों के लिखने वाले देवदूत को कम से कम विलाप करने के लिए *काफी मसाला दे दिया है।'*[1]

केन्द्रीय सरकार

यद्यपि केन्द्रीय सरकार की सृष्टि स्वतंत्र प्रान्तों द्वारा ही हुई है पर प्रान्तीय सरकारों के ऊपर इसका पूर्ण अधिकार है। संघ शासन विधान ने इन प्रान्तीय सरकारों के स्तर को केवल स्थानीय शासन सभायें भर रहने दिया है। इसलिए मताधिकार व नीची श्रेणियों में शिक्षा आदि के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार की शक्ति पर कोई बड़ी रोक थाम नहीं है।

***केन्द्रीय विधान मंडल*--*केन्द्र की विधायिनी शक्ति पार्लियामेण्ट में विहित* है। जो राजा सीनेट व असेम्बली तीनों को मिलाकर कही जाती है। पार्लिमेण्ट की शक्ति, सुव्यवस्था व सुशासन के लिए सब प्रकार के अधिनियम अर्थात् कानून बनाने का अधिकार है।[2] इसके विपरीत संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, आस्ट्रेलिया व कनाडा में केन्द्रीय विधान मण्डलों के अधिकारों की सीमा नियुक्त कर दी गई है। और वहाँ समवर्ती व शेष शक्तियाँ भी उन्हें दे दी गई हैं।

सीनेट--सीनेट केन्द्रीय पालियामेंट का ऊपरी सदन है। इसका संगठन अनुपम है। यद्यपि चारों प्रान्तों में से हर एक को आरम्भ में समान प्रतिनिधित्व दिया गया था किन्तु सन१९५५ में यह समान प्रतिनिधित्व समाप्त कर दिया गया। सीनेट में अब ८९ सदस्य हैं जिनमें ६७ पाँच वर्ष के लिये निर्वाचित होते हैं (ट्रांसवाल २७, केप २२, नटाल ८, आरेंज फ्री स्टेट ८, दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका २) और १८ को गवर्नर-जनरल मनोनीत करता है।

सीनेट के सदस्यों की योग्यता—सीनेट के सदस्यों की आयु तीस वर्ष की

१ ईगरटन—फेडरेशन एण्ड यूनियन्स इन ब्रिटिश एम्पायर, पृ० ८९।

२. साउथ अफ्रीका एक्ट १८०९ की ५९ वी धारा।

होनी चाहिये, उसे असेम्बली के सदस्यों को निर्वाचित करने वाला मतदाता (voter) होना चाहिए, संघ का पाँच वर्ष का निवासी होना चाहिये, यूरोपियन जाति का ब्रिटिश जानपद होना चाहिए और बन्धक सम्पत्ति के अतिरिक्त ५०० पौंड या उससे अधिक मूल्य की अचल सम्पत्ति का स्वामी होना चाहिए इस प्रकार आस्ट्रेलिया और अमरीका की सीनेट की अपेक्षा अफ्रीका की सीनेट कम लोकतन्त्रात्मक है।

सीनेट की कार्यपद्धति—सीनेट की अवधि दस साल की है। यह अपना सभापति स्वयं चुन लेती है। गणपूरक संख्या के लिए १२ सदस्यों का उपस्थित होना आवश्यक है। सब निर्णय मताधिक्य से होते हैं। सभापति केवल तभी अपना निर्णायक मत दे सकता है जब कि प्रश्न के पक्ष व विपक्ष में मतों की संख्या बराबर हो अन्यथा नहीं।

हाउस आफ असेम्बली—यह पार्लियामेण्ट का निचला सदन है जिसमें इस समय १६३ सदस्य हैं। यह संख्या सन् १९५१ की जनगणना के सम्बन्ध में नियुक्त दसवीं परिसीमन कमीशन (Delimitation Commission) की सिफारिश पर निश्चित की गई थी। इन सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तीय निर्वाचन-क्षेत्रों से होता है।

मताधिकार और सदस्यों की योग्यतायें—असेम्बली के मतदाताओं की योग्यतायें सन् १९३० के ३८ वें और सन् १९३१ के ४१ वें एक्ट में निश्चित हैं। पहले एक्ट में सब प्रौढ़ यूरोपियन स्त्रियाँ भी मताधिकारिणी बना दी गईं। दूसरे से केप व नेटाल प्रान्त में मतधारकों की सम्पत्ति सम्बन्धी योग्यता की शर्त दूर कर दी गई। इस प्रकार यूरोपियनों के लिये प्रौढ़ मताधिकार प्रचलित है। असेम्बली के सदस्य प्रत्येक प्रान्त के एक प्रतिनिधिक निर्वाचन क्षेत्रों से चुने जाते हैं। प्रति पाँच वर्ष बाद गवर्नर-जनरल से नियुक्त सर्वोच्च न्यायालय के तीन न्यायाधीशों का परिसीमन कमीशन (Delimitation Commis ion) इन निर्वाचन क्षेत्रों को पुनर्संगठित करता है। प्रान्त के निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित करने में कमीशन यातायात के मार्गों, प्राकृतिक स्थिति, वर्तमान क्षेत्र सीमाओं, हितों की भिन्नता या समानता तथा आबादी का घनत्व या विरलत्व (Sparsity) आदि का उचित ध्यान रखता है। निर्वाचन-क्षेत्रों का विभाजन मतधारकों की निश्चित संख्या (अर्थात् ३१५१) आधार पर किया जाता है पर कमीशन आवश्यकता पड़ने पर इस संख्या से कम या अधिक संख्या के आधार पर भी विभाजन कर सकता है। यदि यह कमी या अधिकता निश्चित संख्या के १५ प्रतिशत की सीमा के भीतर हो। कमीशन जब ब्यौरेवार अपने प्रस्ताव तैयार कर लेता है, तो गवर्नर-जनरल उनकी घोषणा कर उन्हें अन्तिम निर्णयों का रूप दे देता है।

असेम्बली के उम्मीदवार को असेम्बली के सदस्यों के चुनने वाला मतदाता होना आवश्यक है। यह भी आवश्यक है कि वह यूनियन में पाँच वर्ष तक रह चुका हो और यूरोपियन जाति का ब्रिटिश आधीन हो।

असेम्बली का सगठन—असेम्बली की अवधि पाँच वर्ष है पर गवर्नर-जनरल इस अवधि से पूर्व भी उसका विघटन कर सकता है। असेम्बली अपने सदस्यों में से एक को अपना स्पीकर अर्थात् सभापति चुनती है। कम से कम ३० सदस्यों का गणपूरक होता है। असेम्बली के सब निर्णय मताधिक्य से होते हैं। स्पीकर को मतो की पक्ष व विपक्ष में सख्या बराबर होने पर ही मत देने का अधिकार है अन्यथा नही।

प्रत्यक सदस्य को सदन में स्थान ग्रहण करने से पूर्व निष्ठा की शपथ लेनी पड़ती है। कोई भी व्यक्ति एक समय में दोनो सदनो का सदस्य नही हो सकता पर मन्त्री जो एक सदन का सदस्य है दूसरे सदन मे भी भाषण दे सकता है पर वहाँ मत देने का अधिकार उसे नही होता। यदि कोई सदस्य ऐसा अपराध कर डाले जिसके लिये उसे कम से कम एक वर्ष के कारावास का दण्ड मिले और उसे इस कारावास के दण्ड को जुर्माना के रूप में बदलवाने की स्वतन्त्रता न दी गई हो तो वह असेम्बली का सदस्य नही रहता।

कोई सदस्य दिवालिया घोषित होने पर, मानसिक रोग से पीडित कहे जाने पर या किसी लाभदायक सरकारी पद पर आसीन किये जाने पर भी सदस्य नही रहता। पर अन्तिम निर्योग्यता मन्त्रियो, पेशन पाने वालो और अवकाश प्राप्त सैनिक अफसरो पर लागू नही समझी जाती। सीनेट और असेम्बली के प्रत्येक सदस्य को कुछ भत्ता मिलता है और सदस्य रहने के समय आमतौर पर मिलने वाली सब युक्तिया, अधिकार व सुविधाय प्राप्त रहती हैं।

पार्लियामेण्ट स्वय अपने नियम बनाती है—प्रत्येक सदन स्वय ही अपने काम करने के नियमों व कार्यपद्धति को निश्चित करता है। दोनो सदनो की शक्तियाँ एक समान हैं पर मुद्रा विधेयक असेम्बली में ही प्रथम रखे जाते हैं। जब दोनो सदन किसी विधेयक को पास कर देते है तो वह गवर्नर जनरल को अनुमति के लिये भेजा जाता है। गवर्नर जनरल को यह अधिकार है कि पार्लियामेण्ट के पास हुये किसी विधेयक में पार्लियामेण्ट से उसमे सशोधन करने की सिफारिश करे। वह किसी भी विधेयक का सम्राट् की अनुमति के लिये आरक्षित कर सकता है पर यह अनुमति एक वर्ष के भीतर ही मिलनी चाहिए।

दोनो सदनों का पारस्परिक सम्बन्ध—यदि असेम्बली किसी विधेयक को पास कर दे और सीनेट उसे पास करने से इन्कार करे या उसे ऐसे सशोधन से पास करे जिन्हे असेम्बली मानने को तैयार नही है, तो वह विधेयक असेम्बली में वापस भेज दिया जाता है। यदि उसी सत्र में असेम्बली उसे एसे रूप में फिर पास करे जो सीनेट को नापसन्द हो तो गवर्नर जनरल सदनो का सयुक्त अधिवेशन बुला सकता है। इस सयुक्त अधिवेशन में असेम्बली से अन्तिम बार प्रस्तावित योजना पर ऐसे सशोधना

पर जिनका एक सदन ने प्रस्ताव किया हो पर दूसरे ने न माना हो विचार किया जाता है। यदि दोनों सदनों के सदस्यों की संख्या के बहुमत से कोई संशोधन स्वीकार होता है तो वह सदनों से पास किया हुआ समझा जाता है और यदि विधेयक संशोधन सहित उपस्थित सदस्यों के बहुमत से स्वीकार हो जाता है तो विधिपूर्वक पास समझा जाता है। उसके बाद यह गवर्नर जनरल की अनुमति के लिये भेज दिया जाता है।

संघ-कार्यपालिका

स्टेटस आफ दि यूनियन एक्ट (Status of the Union Act) की चौथी धारा के प्रथम खण्ड के अनुसार आन्तरिक व बाहरी सब मामलों में संघकी कार्यपालिका सत्ता राजा में निहित है जो संघ के मन्त्रियों की सलाह से कार्य करता है। राजा इस सत्ता का व्यावहारिक प्रयोग स्वयं कर सकता है या अपने प्रतिनिधि गवर्नर-जनरल द्वारा कर सकता है। खंड (२) से यह स्पष्ट कर दिया गया है कि एक्ट में जहाँ कहीं राजा का वर्णन है उससे संघ के मन्त्रियों की सलाह पर कार्य करने वाला राजा का ही अर्थ लगाना चाहिए।

अब गवर्नर जनरल केवल संघ का वैधानिक अध्यक्ष भर ही रह गया है और राजा के नाम से संघ की सब सेनाओं का सेनापति होता है।

संघ के शासन कार्य में गवर्नर जनरल को सलाह देने के लिये मन्त्रियों की एक कार्यपालिका कौंसिल है। इस कौंसिल के सदस्यों को गवर्नर-जनरल चुनता है और चुने जाने पर शपथ लेकर कौंसिल के सदस्य का स्थान ग्रहण करवाता है। कम से कम सिद्धान्ततः गवर्नर जनरल का अनुग्रह रहते समय तक ये सदस्य अपने पद पर आसीन रहते हैं। कार्यपालिका के सदस्यों को, जो मन्त्रि कहलाते हैं, चुनने में गवर्नर-जनरल प्रचलित वैधानिक प्रथा के अनुसार पार्लियामेण्ट में बहुमत वाले पक्ष के नेता को प्रधान-मन्त्री का पद स्वीकार करने के लिये बुलाता है। यह प्रधान मन्त्री तब अपने साथी मन्त्रियों को चुनता है और उनके नाम गवर्नर जनरल को भेजता है जो उन्हें स्वीकार कर मन्त्री नियुक्त कर देता है। मन्त्रियों का संगठित रूप मन्त्रिपरिषद् कहलाता है। ये मंत्री आगे वर्णन किये हुये शासन विभागों का प्रबन्ध व देखभाल करते हैं। वैदेशिक विभाग, आन्तरिक विभाग, स्वास्थ्य व शिक्षा विभाग, खान विभाग, रेल व सुरक्षा विभाग, अर्थ-विभाग, न्याय विभाग, श्रमिक-विभाग, कृषि-विभाग, भूमि-विभाग, तार डाक व लोक निर्माण विभाग और मूल निवासियों के मामलों का विभाग।

मन्त्रिपरिषद् समुदायिक रूप में असेम्बली को उत्तरदायी है और उसका अविश्वास होने पर पदत्याग कर देती है। रेल, बन्दरगाह व डाकखाने का प्रबन्ध बोर्ड के द्वारा होता है जिसका अध्यक्ष तत्सम्बन्धी मन्त्री होता है। दिन प्रतिदिन के

प्रान्त की सीमा के बाहर तक फैलते हो) निर्माण कार्य करना। किन्तु यह सब पार्लियामेण्ट की उस शक्ति के आधीन है जिसके द्वारा वह किसी भी लोक-निर्माण को राष्ट्रीय घोषित कर सकती है और उसकी देख-भाल आदि के *लिये प्रान्तीय कौंसिल द्वारा या* किसी और प्रकार से प्रबन्ध करा सकती है।

(८) सड़कें, पुल आदि—उन पुलो को छोड कर जो दो प्रान्तो को मिलाने हो।

(९) बाजारू पशुओं का बाड़ा।

(१०) मछली व वनजीवो की रक्षा।

(११) इस धारा मे वर्णित विषयों के अन्तर्गत मामलों मे सम्बन्धित किसी प्रान्तीय अधिनियम को कार्यान्वित करने के लिए जुर्माने या कारावास के दण्ड का विधान करना।

(१२) सामान्यत वे सब विषय जो गवर्नर-जनरल-इन कौंसिल (Governor General-in-Council) की राय म केवल वैयक्तिक या स्थानीय सरकार के है।

(१३) वे सब विषय से जिनके सम्बन्धमें पार्लियामेण्ट किसी कानून से अधिनियम बनाने की शक्ति किसी प्रान्तीय कौसिल को सौंप दे।

प्रान्तीय कौंसिलें गाडिया, घुडदौड व मनोविनोद के स्थानो को लाइसेंस देती और उन पर नियन्त्रण रखती है। इसके अतिरिक्त शिक्षणालयो की फीस चिकित्सालय की फीस और दूसरी बहुत सी फीस भी लगती है। जब कभी कोई प्रान्तीय कौंसिल किसी ऐसे नये कानून को बनाना आवश्यक समझती है जिसके बनाने का अधिकार उसे स्वय प्राप्त नही है तो वह सघ पार्लियामेण्ट से उस कानून को बनाने की प्रार्थना कर सकती है।

एक महत्वपूर्ण वैधानिक स्थिति ऐसी है जिसमें दक्षिण अफ्रीका की प्रान्तीय कौसिलें आस्ट्रेलिया या सयुक्त राज्य अमेरिका के उपराज्यो को विधान मण्डलो की अपेक्षा केन्द्रीय सरकार के अधिक अधीन हैं। प्रान्तीय विधान मण्डल का बनाया हुआ कानून अध्यादेश (Ordinance) कहलाता है अधिनियम *अर्थात्* कानून (Law) नही। इस अधिनियम का भी कोई प्रभाव नही होता जब तक गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल अपनी अनुमति उसके लिये न दे। यदि पास होने के एक वर्ष के समय के भीतर यह अनुमति न प्राप्त हो तो अधिनियम समाप्त हो जाता है। "यह अनुमति केवल बाध्य व्यवहार ही नही होता। किन्तु इसका बडा महत्व रहता है क्योंकि इसका उपयोग इस नियम के पालन कराने में किया जा सकता है और किया गया है कि मूलनिवासियो से सम्बन्धित मामलो का और विशेषकर उन मामलो का जिनका प्रभाव एशिया निवासियो पर पडता है नियन्त्रण व प्रबन्ध गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल, कौंसिल के अधिकार मे हो। प्रान्तीय अधिनियम उसी हद तक वैध समझे जाते हैं जहाँ तक वे

पार्लियामेण्ट के किसी अधिनियम के विरुद्ध नहीं होते और इन अधिनियमों के स्थान पर पार्लियामेण्ट अपने अधिनियम बनाकर उनको व्यर्थ कर सकती है।"

प्रत्येक प्रान्त में गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल से पाँच वर्ष के लिये नियुक्त एक प्रशासक (Administrator) होता है। यह प्रशासक ही प्रान्तीय कार्यपालिका का अध्यक्ष होता है। हर प्रान्त में एक कार्यपालिका समिति होती है जिसमें प्रान्तीय कौंसिल के सदस्यों में से कौंसिल द्वारा निर्वाचित या किसी और प्रकार से चुने हुए चार सदस्य होते हैं। प्रशासक (Administrator) इस समिति का सभापति होता है। प्रान्तीय समिति गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल की स्वीकृति से इस समिति के सदस्यों का वेतन निश्चित करती है। प्रशासक व समिति के सदस्य प्रान्तीय कौंसिल की कार्यवाही में भाग ले सकते हैं और उनमें से जो कौंसिल के सदस्य हैं वे अपना वोट (मत) भी दे सकते हैं।

प्रशासक कार्यपालिका समिति की बैठकों में सभापति का आसन ग्रहण करता है। समिति के सब निर्णय बहुमत से होते हैं जिनमें प्रशासक का मत भी शामिल होता है। पक्ष व विपक्ष में मत बराबर होने पर प्रशासक को निर्णायक मत देने का भी अधिकार होता है। प्रान्त के सब कर्मचारियों की नियुक्ति आदि का प्रबन्ध यही समिति करती है। "उन सब मामलों में जिनके विषय में प्रान्तीय कौंसिल को कोई शक्ति आरक्षित या सुपुर्द नहीं की गई है प्रशासक आदेश मिलने पर गवर्नर-जनरल की ओर से काय करेगा और ऐसा करते समय यह आवश्यक नहीं कि प्रशासक कार्यपालिका समिति के दूसरे सदस्यों से सलाह ले।[1] दूसरे सब मामलों में समिति का पूरा नियन्त्रण रहता है पर एक ही राजनैतिक पक्ष के व्यक्तियों के संगठित न होने के कारण विधान-मण्डल को यह मन्त्रिपरिषद् की तरह उत्तरदायी नहीं है। इस बात में ये प्रान्त स्विट्-जरलैण्ड के कैण्टनों से बहुत कुछ मिलते हैं।

प्रान्तों को न्यायमण्डल पर कोई अधिकार नहीं है केवल छोटे छोटे न्यायालय ही प्रान्तीय अधिकार में हैं। न्यायकारी सत्ता सब संघ सरकार को प्राप्त है।

शासन विधान का संशोधन

संघ-शासन-विधान के रचने वालों ने दक्षिण अफ्रीका में कनाडा की संविधान संशोधन पद्धति की अपेक्षा आस्ट्रेलिया की पद्धति अपनाना अधिक वांछनीय समझा। संविधान की १५२ वीं धारा संघ पार्लियामेण्ट को निम्नलिखित दो शर्तों पर संविधान की किसी धारा को रद्द करने या बदलने की शक्ति देती है।

(१) पार्लियामेण्ट किसी ऐसे प्रविधान को रद्द या परिवर्तित नहीं कर सकती जिसको कार्यान्वित करने के लिये समय की एक निश्चित अवधि रखी गई हो। ऐसे

[1] विधान की १४ वीं धारा।

प्रविधान प्रथम असेम्बली व सीनेट के सगठन के बारे मे हैं और अब उसका कोई महत्व नही क्योकि एक्ट के पास होने के पश्चात् अब बहुत समय बीत चुका है।

(२) पार्लियामेण्ट असेम्बली मे प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधियो की सख्या के अनुपात को बदल या मिटा नही सकती, जब तक कि कुल सदस्यो की सख्या १५० तक न पहुँच जाय या सघ के बनने के पश्चात् दस वर्ष का समय न बीत जाय, जो कोई भी अपेक्षाकृत अधिक समय ले। और क्योंकि यह सख्या १५० तक पहुँच चुकी है, यह प्रतिबन्ध भी बेकार हो गया है पार्लियामेण्ट के व दूसरे प्रान्तो मे असेम्बली के निर्वाचकों की योग्यताओ में परिवर्तन नही कर सकती, न यह कोई ऐसा कानून बना सकती है जिससे डच और अग्रेजी दोनो राजभाषायें न रह जब तक कि इन परिवर्तनो के करने वाला विधेयक पार्लियामेण्ट के सदस्यों की सख्या के दो-तिहाई बहुमत मे स्वीकृत न किया हो।

पिछले पैंतीस वर्षों मे पालियामेट ने शासन-विधान मे कई सशोधन किये है किन्तु वे सब साधारण ढग के ही थे। या तो वे मताधिकार के सम्बन्ध में थे या उनसे प्रान्तीय सरकारों को अधिक शक्तियाँ सौंपी गई थी। कनाडा, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका तीनो उपनिवेशो मे दक्षिण-अफ्रीका ने सविधान सशोधन का सरलतम तरीका अपनाया है। यह सविधान को एकात्मक भावना के अनुकूल ही था।

पाठ्य पुस्तकें

Brand, R H —The Union of South Africa (Oxford 1909)
Egerton, H. E — Federations and Unions in the British Empire, pp. 61- 102 and 231- 291 (Oxford 1911)
Engelenburg, F V —General Louis Botha, chs XIV, XVI, XX, XXI & XXIII-XXXIII, (George Harrap 1929)
Hofmeyr, J. H —South Africa, chs VII & XI-XV, (Ernest Benn, 1931)
Newton, A. P.—Federal & Unified Constitutions
Sharma, B M —Federal Polity, ch II C (vii) III & IV.
Select Constitutions of the World, pp 309-352.
Statesman's Year Book (Latest Number).

चतुर्थ पुस्तक

संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार

अध्याय १६

संयुक्त-राज्य अमेरिका का संघ-शासन

"जैसे अमेरिका अंग्रेजो बन गया वैसे ही उपनिवेशों में अंग्रेजी संस्थायें अमरीकी बन गईं। इन संस्थाओं ने पृथक पृथक उपनिवेशों के राजनैतिक जीवन की नयी स्थितियों व नई सुविधाओं के अनुकूल अपने आपको ढाल लिया। ये उपनिवेश प्रारम्भ में कठिनाइयों से लड़े, फिर विस्तृत हुए और अन्त में विजयी हुए। इन्होंने बिना अंग्रेजी स्वभाव छोड़े अमेरिकन रूप व रस प्राप्त कर लिया।" —बुड्रो विलसन

संयुक्त-राज्य अमेरिका नई दुनिया की सबसे बड़ी इकाई है। इसका क्षेत्रफल ३६,७३,६६० वर्ग मील है और अनुमानित जनसंख्या ता० १३ सितम्बर १९५८ को वाशिंगटन जनसंख्या कार्यालय की घोषणा के अनुसार १७,४३,२६,००० है। इन संख्याओं में संयुक्त राज्य के आधीन उपनिवेशों व प्रदेशों की भी संख्यायें शामिल हैं। अमरीकी संघ के ५० उपराज्यों का कुल क्षेत्रफल ३५,५२,२३२ वर्गमील है और जनसंख्या लगभग १५,२५,६०,००० है। इसकी जनसंख्या में वृद्धि बड़े वेग से हुई है, और संसार में एक विचित्र घटना मानी गई है। परन्तु प्रतिवर्ग मील जनसंख्या केवल ५०·७ है जबकि इङ्गलैंड में ८४८, जर्मनी में ३८२, और जापान में ४०० प्रति वर्ग मील है। यह देश पश्चिम में प्रशान्त महासागर व पूर्व में अटलांटिक महासागर के मध्य स्थित है। इसकी भौगोलिक विभिन्नता से बहुत-सी राजनैतिक समस्याएं खड़ी हुईं और उसी से उन समस्याओं के सुलझाने की रीति भी निश्चित हुई। लगभग प्रत्येक राष्ट्रीय प्रश्न में भौगोलिक परिस्थिति ने संयुक्त-राज्य के राजनैतिक जीवन पर अपना प्रभाव डाला है। आधुनिक युग में संयुक्त-राज्य अमेरिका का ही प्रथम ऐसा उदाहरण है जहाँ ऐसी पृथक इकाइयों को मिलाकर एक वास्तविक जनतान्त्रिक संघ-राज्य की स्थापना हुई जिनके हितों का स्वतन्त्रता-युद्ध (War of Independence) से पूर्व कहीं भी मेल न होता था।

शासन विधान का इतिहास

पूर्व कालीन उपनिवेश—संयुक्त-राज्य अमेरिका की शासन पद्धति को कई कारणों से संसार का सबसे महान राज्य-शासन प्रयोग समझा जाता है। प्रारम्भ में अटलांटिक के तट पर अंग्रेजों द्वारा बसाये हुए १३ उपनिवेश थे। इन उपनिवेशों में

अंग्रेजों के अतिरिक्त यूरोप की कुछ दूसरी जातियों के लोग भी आकर बसे थे, पर उनकी संख्या अधिक न थी। ये प्रवासी अपने साथ अपनी मातृभूमि की राजनैतिक संस्थायें भी लाये थे और भावनायें भी। इस बात का नई दुनिया के इतिहास पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। ये उपनिवेश तीन प्रकार के थे :—

(१) सम्राट् के उपनिवेश (Crown Colonies)—जिनमें न्यू हैम्पशायर, न्यूयार्क, न्यूजर्सी, उत्तरी व दक्षिणी कैरोलीना और जौर्जिया शामिल थे। प्रत्येक में गवर्नर शासन करता था जो सम्राट की शक्ति का प्रतीक था। उसकी सहायता करने के लिए एक कौंसिल होती थी।

(२) स्वाम्याधीन उपनिवेश (Proprietory Colonies)—जिनमें पेंसिलवेनिया, डेलावेयर और मेरीलैंड शामिल थे। उनका शासन ऐसे व्यक्तियों के अधीन था जिन्होंने शासन करने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। उन व्यक्तियों का इन उपनिवेशों से वही सम्बन्ध था जो सम्राट का अपने उपनिवेशों से।

(३) चार्टर उपनिवेश (Charter Colonies)—इसमें रोडद्वीप और कनैक्टीकट शामिल थे। इनका शासन यहां के नागरिकों को सीधे सम्राट ने अपनी आज्ञा से सुपुर्द कर दिया था।

उपनिवेशों में समानतायें—शासन-संगठन की साधारण विभिन्नताएं इन उपनिवेशों में पाई जाती थीं परन्तु समानताएं अधिक थीं। "सब उपनिवेशों में निर्वाचित असेम्बलियों और राजसत्ता से नियुक्त गवर्नर व उसकी कौंसिल के बीच झगड़ा चलता रहता था। गवर्नरों को ऊपर से ऐसे आदेश मिलते थे जो प्रायः उपनिवेशों के रहने वालों के विचारों से या उनके हितों से मेल न खाते थे। उपनिवेश निवासी निस्सन्देह सम्राट के प्रतिनिधियों को हैरान करके क्रुद्ध करते थे। किन्तु साथ ही साथ यह भी बात थी कि जो अफसर इंगलैण्ड से भेजे जाते थे, वे विवेकहीन होते थे, जिनका परिणाम यह होता था कि वह अनावश्यक ही अमेरिकन भावनाओं पर आघात किया करते थे।"[१] इसका परिणाम यह हुआ था कि शासक व शासितों के हितों में बड़ा भेदसंघर्ष खड़ा हो गया। अन्त में लोग असेम्बली को अपना मित्र और गवर्नर को अपना वैरी मानने लगे। दूसरे शब्दों में, विधानमण्डल लोकप्रिय हो गई और कार्यपालिका लोक-अप्रिय बन गई। . . इस संघर्ष का एक परिणाम यह हुआ कि असेम्बली अर्थात् विधानमण्डल का अध्यक्ष जो स्पीकर के नाम से विख्यात था और जो सभा का नेता व लोकेच्छा से शक्ति पाया हुआ सबसे बड़ा अफसर था, राज्य संगठन में सबसे प्रभावशाली राजनैतिक नेता बन गया।[२]

---

१. टा० एच० राड—फौर्म्स एण्ड फन्क्शन्स आफ अमेरिकन गवर्नमेंट, पृ० १०-१८।
२. उसी पुस्तक में, पृ० १६।

उपनिवेश-निवासी अंग्रेजी संस्थायें चाहते थे—उपनिवेश निवासियों ने अपनी मातृभूमि की राजनैतिक संस्थाओं को जहाँ तक सम्भव हो सका, अपने नये देश में चलाने का प्रयत्न किया। उनकी सबसे मूल्यवान पैतृक सम्पत्ति "इंगलिश कॉमन ला" थी, जिसके अन्तर्गत अंगरेजों के वे सब मौलिक अधिकार सुरक्षित हैं, जिन्हें राजा भी नहीं छीन सकता और एक समय तो वे इतने आदरणीय थे कि यह माना जाता था कि ब्रिटिश पार्लियामेंट का अधिनियम भी उनको नहीं मिटा सकता।"[1] अन्त में इन्हीं अधिकारों के ऊपर झगड़ा यहाँ तक बढ़ा कि उपनिवेशों व मातृभूमि में विच्छेद हो गया। सन् १७५०-७५ के बीच में उपनिवेश-वासियों ने ब्रिटिश पार्लियामेंट की उन अधिकारों के कुचलने की अनाधिकार चेष्टा के विरुद्ध अपना असन्तोष प्रकट किया। उन्होंने सम्राट व पार्लियामेंट से लगाये हुए करों को शक्कर एक्ट (Sugar Act) १७७४ का, मुद्रा एक्ट १७६४ का, स्टाम्प एक्ट १७६५ का, टाउनसेन्ड ड्यूटीज (Townsend Duties) १७६७ का, चाय कर (Tea Act) १७७३ का और असह्य एक्ट्स १७७४ के मुख्य थे, देना अस्वीकार कर दिया और "बिना प्रतिनिधित्व के कोई कर नहीं" के सिद्धान्त पर अड़ गए जो अंग्रेजों की राजनैतिक बाइबिल का प्रथम आदेश है।

'मातृभूमि' के विरुद्ध युद्ध-घोषणा—अन्त में इन १३ उपनिवेशों ने इंगलैंड और उसके सम्राट् के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करदी और ४ जुलाई सन् १७७६ को एक मत होकर यह घोषणा प्रकाशित की :—

"यह कि ये संगठित उपनिवेश स्वतन्त्र व मुक्त राज्य हैं और उनका यह अधिकार है कि वह स्वतन्त्र व मुक्त रहें, यह कि वे ब्रिटिश सम्राट के प्रति किसी प्रकार की निष्ठा से प्रतिबन्धित नहीं हैं, यह कि ग्रेट ब्रिटेन व उनके बीच राजनैतिक यातायात बन्द है और बिल्कुल बन्द होना चाहिए और यह कि स्वाधीन और मुक्त राज्य होने से उन्हें युद्ध, सन्धि, सुलह और वे सब बातें और कार्य करने का अधिकार है, जिन्हें मुक्त व स्वतन्त्र राज्य अधिकारी होने से वे कर सकते हैं।"

इस प्रसिद्ध घोषणा में "मुक्त व स्वतन्त्र राज्य अधिकारी होने से कर सकते हैं" शब्दों का उपनिवेशों के वैधानिक संघर्ष पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। कनाडा में वैस्टोनाऊ और भारतवर्ष में वी० बी० पटेल का भी ऐसा ही उदाहरण है।

अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करने के बाद तुरन्त ही उपनिवेश-वासियों ने सब से प्रथम अपना ध्यान, संगठित होकर युद्ध करने की ओर दिया। इस अभिप्राय की सिद्धि के लिये उन्होंने जून सन् १७७६ को एक समिति नियुक्त कर संघ की नियमावली का लेख बनवाया। इस नियमावली को राज्यों की कांग्रेस ने १५ नवम्बर सन् १७७७

[1] उसी पुस्तक में, पृ० २१।

फिलाडेलफिया सम्मेलन बुलाया। सम्मेलन में जो प्रतिनिधि उपस्थित हुये सब लोक-कार्य में अनुभवी व्यक्ति थे इसलिए उन्होंने सारी समस्या को बड़े अच्छे ढंग से वस्तुस्थिति को देखते हुये सुलझाना आरम्भ किया। उनका उद्देश्य "एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार की स्थापना करना था जिसके साथ साथ राज्य को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता भी सुरक्षित रहे।" कई दिनों के वादविवाद के पश्चात् उन्होंने सन् १७८७ के संविधान का मसविदा तैयार किया। इस संविधान ने संयुक्त राज्य की सरकार का रूप ही बदल दिया क्योंकि इससे केन्द्रीय सरकार को सीधे उपराष्ट्रों के नागरिकों से सम्बन्ध स्थापित करने की शक्ति प्रदान कर दी गई।

१७८७ का शासन संविधान—इस मसविदे को कांग्रेस ने राज्यों की स्वीकृति के लिये भेजा और जून २१, सन् १७८७ को जब नवें उपराज्य (न्यु हैम्पशायर) ने इसे स्वीकार कर लिया तो तुरन्त ही नौ उपराज्यों में इसे लागू कर दिया गया। इस नये शासन संविधान के अन्तर्गत प्रथम कांग्रेस का अधिवेशन ४ मार्च सन् १७८९ को हुआ।

अमरीकी संविधान के विशेष लक्षण

(१) संविधान सर्वोच्च अधिनियम है—इस संविधान का सबसे महत्वपूर्ण भाग इसकी प्रस्तावना है। इस प्रस्तावना में कहा गया है कि सब राज्यों के जन (People) संयुक्त-राज्य अमेरिका के लिये यह संविधान स्थापित करते हैं। पूर्ववर्ती संघ के संविधान की अपेक्षा नये संविधान में यह एक महत्वपूर्ण सुधार था क्योंकि पुराने विधान में लोकमत को कोई स्थान न दिया गया था। दूसरी महत्वपूर्ण बात छठे अनुच्छेद की धारा २ में दी हुई है जिसमें कहा गया है कि यह संविधान और इसके अन्तर्गत बनाये हुये निर्बन्ध व वे सब सन्धियाँ संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका की सत्ता के अन्तर्गत की जायगी, राष्ट्र का सर्वोच्च अधिनियम (supreme law of the land) समझी जायेगी। प्रत्येक उपराष्ट्र में न्यायाधीश उनके प्रविधानों के अनुसार निर्णय किया करेंगे चाहे उपराज्य का प्रविधान या कोई निर्बन्ध उनके विरुद्ध ही क्यों न हो। इस धारा से संविधान बहुत ही सुरक्षित और संघ का शासन बहुत ही दृढ़ हो गया, क्योंकि जब कभी संघ सरकार के या किसी उपराज्य के कानून का संविधान से विरोध खड़ा हो जाता है, तो संविधान की विजय होती है क्योंकि ऐसे विरोध में सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) का निर्णय अन्तिम और सर्वमान्य होता है। इस प्रकार के आये हुए विरोधों को तय करने में सर्वोच्च न्यायालय संविधान को ही मान्य कसौटी समझ कर उसके विपरीत किसी भी अन्य विधि, कृत्य व आदेश को अवैध निश्चित कर रद्द कर देता है। संविधान की रक्षा

करना सर्वोच्च न्यायालय का विशिष्ट वर्णित कार्य तो नहीं है किन्तु उपरोक्त वर्णित धारा की विवेचना और व्याख्या करते हुए, न्यायालय ने कई बार यह स्पष्ट कर दिया है कि संविधान द्वारा स्थापित और शक्ति प्राप्त संस्थाऐं उसके प्राविधानों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकतीं और इस बात का निर्णय करना कि कौन विधि वा कृत्य संविधान के प्रतिकूल है, सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार है, इस निर्णय कार्य में न्यायालय संविधान की धाराओं से बाध्य है और वह किसी अन्य धारा वा अधिनियम से स्वतंत्र है।

(२) **अत्यन्त प्राचीन लिखित संविधान**—आधुनिक संविधानों में संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान सबसे प्राचीन लिखित संविधान है। सन् १७८६ में १३ स्वतंत्र संयुक्त राज्यों के प्रतिनिधियों ने पहले पहल यह निश्चय किया कि वे अपने सामान्य हित (general welfare) साधन के निमित्त और अपनी रक्षा के लिये अपने ऊपर एक संघीय सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार की स्थापना करेंगे। अतएव उन्होंने कई राज्यों तथा प्रतिनिधियों द्वारा उपस्थित किये मसविदों और संवैधानिक प्रारूपों पर गम्भीर विचार कर संविधान बनाया जिसे लिखित रूप दिया गया ताकि केन्द्रीय सरकार का रूप, उसकी शक्तियाँ तथा उसके अंगों का स्पष्टीकरण हो जावे और उसके अनुसार शासन चले। आधुनिक विश्व का यह सबसे प्राचीन संविधान है, और इस दृष्टि से फिलेडेलफिया में एकत्रित हुए १३ उपराज्यों के प्रतिनिधियों की यह एक बहुत बहुमूल्य देन राजनीति क्षेत्र में है। सन् १७८७ से अब तक जितने संविधान संसार में बने उन सब ने ही लिखित रूप धारण किया है।

(३) **अत्यन्त कठिन या अपरिवर्त्तनीय संविधान**—संसार के सभी लिखित संविधान क्लिष्ट ही हैं, अर्थात् उनमें संशोधन तो आवश्यकतानुकूल किया जा सकता है परन्तु एक विशेष विधि द्वारा ही संशोधन हो सकता है। किन्तु लिखित संविधानों में संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान सबसे अधिक क्लिष्ट है क्योंकि इसमें संशोधन करने का तरीका (प्रक्रिया) पूरा करने में बहुत कठिनाई होती है। इस संशोधन प्रणाली के दो भाग है, प्रथम तो संशोधन का प्रस्ताव, दूसरा संशोधन की अन्तिम स्वीकृति अर्थात् कम से कम तीन-चौथाई उप-राज्यों द्वारा उसका निश्चित् काल के भीतर ही अनुसमर्थन (Ratification)। यही कारण है कि पिछले लगभग पौने दो सौ वर्षों में यद्यपि सैकड़ों ही बार संविधान में संशोधन करने की चेष्टा की गई किन्तु केवल २२ ही संशोधन हुए है। इन २२ संशोधनों में पहले दस संशोधन सन् १७६१ में हुए, जो नागरिकों के मूल अधिकारों का स्पष्टीकरण करते हैं। सन् १८०४ से १८६५ तक कोई संशोधन नहीं हुआ, १८७० और १६१३ के बीच और १६२१-१६३२ के बीच भी कोई संशोधन नहीं हुआ।

(४) लिखित होते हुए भी विकसित संविधान—यद्यपि अमेरिका का संविधान लिखित है, फिर भी प्रायोगिक दृष्टि से यह बहुत कुछ विकसित भी है। सन् १७८७ को परिस्थिति में लिखित संविधान निस्सन्देह सकीर्ण था। पिछले १७५ वर्षो मे विश्व की परिस्थिति बहुत बदल गई है। वैज्ञानिक प्रगति और अनुसंधानों का मानव के जीवन पर सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रो मे, बहुत प्रभाव पडा है। व्यक्ति और राज्य के पारस्परिक सम्बन्ध पहले को अपेक्षा बहुत बदल गये हैं, जिसके फल स्वरूप राज्य के कार्य क्षेत्र म बहुत परिवर्तन हो गया है और इसी कारण राज्य का उत्तरदायित्व अब इतना बढ गया है कि शासन का रूप ही अब कुछ और है। राज्य अब केवल शांति और सुरक्षा का ही कार्य नही करता, वरन् नागरिक के कल्याण की ओर अधिक ध्यान देता है। विशेषतया संयुक्त राज्य अमेरिका जो आज विश्व का अत्यन्त शक्तिशाली और समृद्ध और धनवान देश है, इस उन्नति को नही कर सकता था यदि उसकी शासन प्रणाली १७८७ के लिखित संविधान के ही अनुरूप होती। आज विश्व के अंतराष्ट्रीय क्षेत्र मे जो परिवर्तन हुए हैं, उसके फलस्वरूप अमेरिका की केन्द्रीय सरकार की शक्तियां बहुत बढ गई हैं। इस सवैधानिक विकास के मूल श्रोत हैं (१) उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) द्वारा दिये गये वे फैसले जिनसे केन्द्रीय सरकार की शक्तियो मे बहुत वृद्धि हो गई है, (२) अमेरिका का घरेलू युद्ध, (civil war) १८६१-१८६५, जिसके कारण व्यक्ति और राज्य, तथा केन्द्र और उपराज्यो के पारस्परिक सम्बन्धो मे परिवर्तन और संघ सरकार की विशेष जिम्मेदारियां मे वृद्धि हो गई है, (३) आन्तरिक यातायात के साधनो मे वृद्धि और देश की आर्थिक उन्नति के कारण अमेरिकी नागरिको के केन्द्रीय सरकार के प्रति दृष्टि कोण म बहुत अन्तर हो गया है, (४) केन्द्रीय सरकार के प्रति उप-राज्यो की सरकारो का रुख बदल गया है क्योंकि केन्द्रीय सरकार के साधन इतने अधिक हैं कि वह उपराज्यो को सरकारो की अनेक प्रकार आर्थिक सहायता करती है, जसे प्रारम्भिक शिक्षा, नागरिको के स्वास्थ्य के लिए स्थानीय स्वशासनो को अनुदान, आदि देकर तथा आन्तरिक क्षेत्र मे विभिन्न उपराज्यो की समृद्धि के लिये नई नई योजनाएँ जारी करती है। फलतः उपराज्यो की सरकारें केन्द्रीय सरकार को अपना हितैषी ही समझती हैं। संक्षेप से यह कहा जा सकता है कि लिखित संविधान की सकीर्णता जो क्लिष्टता वा संशोधन प्रक्रिया से थी वह अन्य प्रकारो से घट ही नही गई बल्कि वह संविधान राज्य प्रगति शीलता मे कोई अड़चन नहीं डालता। ऐसे अभिसमयो से जिनके द्वारा शासन का कार्य सुचारु रूप से चलता है, संविधान म विकास होता रहा है।

(५) संघीय संविधान—संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान निर्माताओ की, राजनीति क्षेत्र म, एक बड़ी महत्वपूर्ण देन है, वहाँ का संघीय शासन प्रणाली

(federal system) है। आधुनिक विश्व में अमेरिका का संविधान सबसे प्राचीन संघीय संविधान है। इसके द्वारा केन्द्रीय सरकार की स्थापना हुई जिसको केवल परिमित और स्पष्टवर्णित शक्तियाँ (specified powers) दी गई और शेष शक्तियाँ उपराज्यों को। अमरीकी संविधान इस प्रकार संघवाद के सिद्धान्तों के अनुसार निर्मित हुआ, फलतः अमेरिका में दुमुखी नागरिकता है, प्रत्येक नागरिक उस उपराज्य का नागरिक है जहां वह स्थायी निवास करता है, और अमरीकी संघ का भी नागरिक है। सन् १७८७ से अबतक जितने संघात्मक संविधान बने हैं उनको अमरीकी संविधान से बहुत कुछ प्रेरणा और पथ-प्रदर्शन प्राप्त हुए है। किसी भी व्यक्ति को दो सरकारों के प्रतिनिष्ठा (allegiance) रखना आधुनिक संसार मे अमरीकी संघीय संविधान ने ही सिखाया है। वह दोनो सरकारों को कर देता, उनके कानूनों का पालन करता है, और दोनों के प्रदत्त अधिकारों का उपभोग करता है।

(६) शक्ति का पृथक्करण—(Separation of Powers)—आधुनिक संसार मे फ्रांसीसी दार्शनिक माटेस्क्यू (Montesquieu) ने सबसे पहले इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि किसी भी राज्य मे नागरिक के हितों की *रक्षा और शासन के सर्वप्रिय होने के लिये इस बात की आवश्यकता है कि शासन-शक्ति* का पृथक्करण (Separation of Powers) किया जाय। अर्थात् विधि का निर्माण एक विधान मंडल करे, विधि को कार्यान्वित और ही व्यक्ति या मंडल करे और न्यायकार्य तीसरा व्यक्ति या मंडल करे और ये तीनो अंग एक दूसरे से स्वतंत्र रहें, इन्ही तीनो अंगो को पृथक पृथक विधायिनी शक्ति, कार्यपालन शक्ति और न्यायकारी शक्तियां दी जावें। अमरीकी संविधान के निर्माताओं ने ही सबसे पहले इस सिद्धान्त के अनुकूल अमेरिका का संघीय संविधान तैयार किया फलतः अमेरिका की केन्द्रीय सरकार में विधान मंडल, कार्यपालिका और न्यायपालिका पृथक्-पृथक् हैं और एक दूसरे से स्वतंत्र है। परन्तु यदि इस शक्ति पृथक्करण को अधिक सीमा तक ले जाया जाता तो शासन के विभिन्न तीनों अंगो मे इतना विरोध हो जाने की सम्भावना थी कि शासन शांतिपूर्वक न चल सकता था। अतएव जहाँ संविधान ने कांग्रेस को विधायिनी शक्ति, राष्ट्रपति (President) को कार्यपालिका शक्ति और सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) को न्यायपालिका शक्ति दी है, वहाँ तीनो अंगो मे उचित संतुलन (balance) और अवरोध (check) का भी तरीका रख दिया है। यदि कांग्रेस विधि बनाती है तो राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि उचित समझे तो वह अपने अवरोध अथवा प्रतिषेधात्मक अधिकार (veto power) का उपयोग कर कानून पर हस्ताक्षर न करे। ऐसी दशा मे कांग्रेस या प्रत्येक सदन उस कानून को फिर से दो-तिहाई बहुमत से स्वीकार

कर राष्ट्रपति के अवरोध-अधिकार को निष्फल कर सकता है। राष्ट्रपति कांग्रेस का तीसरा सदन नहीं, किन्तु अपने संदेशों द्वारा वह कांग्रेस से प्रार्थना कर सकता है कि शासन-नीति के लिये अमुक कानून बनावे अथवा उसे (राष्ट्रपति को) उचित अधिकार दे। न्यायपालिका के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति, सीनेट की अनुमति से करता है, और इस प्रकार राष्ट्रपति और सीनेट न्यायपालिका पर प्रभावित होते हैं। किन्तु सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस द्वारा निर्मित विधि (Law) को अथवा राष्ट्रपति द्वारा दिये गये किसी आदेश को संविधान के प्रतिकूल समझने पर अवैध कह सकता है जिससे वह विधि अथवा आदेश निष्फल हो जाता है। कांग्रेस को यह अधिकार है कि यदि राष्ट्रपति अथवा सर्वोच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश अवैध कार्य वा देश द्रोह करे तो प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) के प्रस्ताव करने पर सीनेट उन आरोपों को सुने और (ऐसी परिस्थिति में) न्यायपालिका के अनुरूप वह उस व्यक्ति को, यदि दोषी समझे तो, पदच्युत करदे। इस प्रकार अमरीकी संविधान ने जहां शक्तियों का पृथक्करण कर शासन के तीनों अंगों को सौंप दिया है, वहाँ उन अंगों में उचित सहयोग अथवा संतुलन और अवरोध का भी प्रबन्ध किया है।

(७) अध्यक्षात्मक कार्यपालिका (Presidential Executive)—१७८७ से पहले जनतंत्र शासन की प्रणाली संसदीय थी और इसका उद्गम इंगलैंड से हुआ था। इन संसदीय प्रणाली के अनुसार कार्यपालिका विधान मंडल का भाग होती है और उसी के प्रति उत्तरदायी है। परन्तु अमरीकी संविधान ने इस प्रणाली का अनुसरण न कर अध्यक्षात्मक कार्यपालिका (Presidential Executive) स्थापित की जो राजनीति क्षेत्र में पहला प्रयोग था। अमेरिका का अध्यक्ष अथवा राष्ट्रपति, संविधान की धारा २ (अ) के अनुसार कार्यपालिका की शक्ति धारण करता है, वह न तो कांग्रेस का सदस्य है और न उसका उत्तरदायी है। वह चार वर्ष के लिये निर्वाचित होता है, और सारी शासन संचालन शक्ति का अधिकारी है। इस प्रकार की कार्यपालिका अमरीकी संविधान की विशेषता है।

(८) संघ न्यायपालिका की विशेष-शक्ति— अमरीकी संविधान की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है, उसकी न्यायपालिका की शक्तियां और स्थान। संविधान की धारा ३ (अ) के अनुसार संयुक्त राज्य की न्याय शक्ति एक सुप्रीम कोर्ट (सर्वोच्च न्यायालय) और समय-समय पर कांग्रेस द्वारा स्थापित न्यायालयों को सौंप दी गई है। सुप्रीम कोर्ट संविधान की रक्षा करती है और उसका स्पष्टीकरण करती है। संविधान के प्रतिकूल समझने पर वह किसी भी विधि (Law) अथवा कार्य वा आदेश को

अवैध ठहरा सकती है। इस शक्ति द्वारा वह संघीय शासन और संविधान के तत्वों की रक्षा करती है।

(६) मूल अधिकारों का समावेश—अमेरिका ने जब इंगलैंड के आधिपत्य का विरोध कर अपनी स्वतन्त्रता घोषित की तो उस समय स्वतन्त्रता-घोषणा पत्र मे इंगलैंड के राजा पर यह दोषारोपण किया था कि उसने नागरिकों के हितों की रक्षा नहीं की और ऐसे विभिन्न कृत्य किये जिनसे स्वतन्त्र जीवन असभव हो गया। घोषणा के आरम्भ में ही यह कह दिया गया था कि यह स्वतः स्पष्ट सत्य है कि सभी मनुष्य समान उत्पन्न किये गये हैं, उनके कुछ अविच्छेद्य (inalienable) अधिकार हैं जिनमें "जीवन, स्वतन्त्रता और सुख की खोज" विशेष हैं और "इन्हीं अधिकारों की रक्षा करने के लिये मनुष्यों के बीच सरकारों की स्थापना होती है जिनकी शक्ति शासितों की अनुमति से प्राप्त होती है—जब कोई शासन पद्धति इन अधिकारों का हरण करती है तो जन का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि ऐसे शासन का अन्त कर उसके स्थान पर नया शासन स्थापित करें जो इन तात्विक सिद्धान्तों पर आधारित हो।"[1] यह बड़े आश्चर्य की बात थी कि यद्यपि जेफर्सन (Jefferson) ने (जिसने स्वतन्त्रता का घोषणा पत्र तैयार किया था) इस बात पर जोर दिया था कि नवीन संविधान में नागरिकों के मूल अधिकार अवश्य वर्णित कर दिये जावें, फिर भी १७८७ में जो संविधान बनाया गया था उसमें मूल अधिकारों की कोई चर्चा नहीं थी। जेफर्सन ने इस बात पर खेद भी प्रगट किया और आशा की कि संविधान की यह न्यूनता शीघ्र दूर कर दी जावे। और हुआ भी ऐसा ही, क्योंकि सन् १७९१ में (अर्थात् संविधान के लागू होने के दो वर्ष बाद ही), उसमें सन् १८६५ में तेरहवीं और सन् १८७० में पन्द्रहवीं और १९२० में उन्नीसवीं दस ? संशोधन अनुच्छेद (Articles of Amendment) जोड़ दी गईं जिनमें नागरिकों के मूल अधिकार इस प्रकार स्पष्ट कर दिये गये कि :—

(क) कांग्रेस कोई ऐसी विधि नहीं बनायेगी जो किसी धर्म विशेष की स्थापना करे, अथवा धार्मिक स्वतन्त्रता में बाधक हो; अथवा विचार प्रगट करने की, मुद्रणालय

---

1. We hold these truths to be self-evident, that all men are created equal, that they are endowed by their Creator with certain [illegible] and the pur- [illegible] ernments are [illegible] n the consent [illegible] ment becomes destructive of these ends, it is the right of the People to alter, or to abolish it, and to institute new Government, laying its foundation on such principles..." *Declaration of Independence.*

को, अथवा लोगो के शांति पूर्वक एकत्रित होने को, और अपने कष्टो का निवारण के निमित्त सरकार से प्रार्थना करने की स्वतन्त्रता को कम करे;

(ख) लोगो को शस्त्र रखने और प्रयोग करने के अधिकार का उल्लघन नही होगा;

(ग) किसी भी मकान मे उसके स्वामी की आज्ञा बिना, शान्तिकाल मे कोई सैनिक नही रखे जावेगे;

(घ) लोगो के शरीर, मकानो, कागजातो और सम्पतियो की रक्षा, अकारण तलाशी और जब्ती न करने से की जावेगी, और बिना वारट के जो किसी शपथ पर आधारित हो, किसी की तलाशी नही ली जावेगी;

(ङ) बिना जूरी (Jury) की सहायता के किसी भी व्यक्ति को घृणित वा अन्य जुर्म के लिये बन्दी न किया जायगा, और न किसी को एक ही दोष के लिये दो बार दडित किया जायगा;

(च) किसी भी फौजदारी के अभियोगो मे दोषी को शीघ्रातिशीघ्र और सार्वजनिक फैसला कराने का अधिकार होगा;

(छ) असैनिक अथवा व्यवहारिक (Civil) मामलो मे बीस डालर से अधिक के झगडो मे जूरी द्वारा निर्णय कराया जायगा,

(ज) न तो अत्यधिक जमानत मागी जायगी, न अधिक जुर्माना किया जायगा और न असाधारण अथवा क्रूर दण्ड ही दिया जायगा,

(झ) इस सविधान मे वर्णित अधिकारो का यह आशय नही कि लोगो को अन्य अधिकार प्राप्त नही है अथवा उनमे कोई कमी है,

(ञ) सविधान द्वारा केन्द्रीय सरकार को न दी गई शक्तिया उपराज्यो अथवा लोगो को सुरक्षित हैं,

(ट) गुलामी वा अनेच्छा सेवा (जो किसी दड रूप मे न हो) सयुक्त राज्य मे न रहेगी;

(ठ) मताधिकार जनता को बिना जाति, वर्ण वा पूर्व स्थिति के भेदभाव के सभी को प्राप्त होगा;

(ड) सयुक्त राज्य मे नागरिको के अधिकार स्त्री-पुरुष सभी के लिये बिना भेद-भाव प्राप्त रहेगे।

इस प्रकार अमरीका के सविधान मे जनता के अधिकारो का समावेश १९ अनुच्छेदो द्वारा किया गया है जिसमे नागरिको की स्वतन्त्रता विभिन्न प्रकार से सुरक्षित हैं। इन अधिकारो की रक्षा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा होने का भी प्रबन्ध है।

(१०) संविधान जनतन्त्रवाद का प्रज्वलंत उदाहरण—अमेरिका ससार का प्रसिद्ध जनतन्त्रीय राज्य है। सविधान की प्रस्तावना मे स्पष्ट है कि हम सयुक्त राज्य अमेरिका के लोग सघ की एकता अधिक सुनिश्चित करने, न्याय व्यवस्था कायम करने के लिये, घरेलू शान्ति को रक्षित करने के निमित्त, सामान्य सुरक्षा हेतु, सामान्य हित-साधन, तथा अपने और भावी पीढ़ियो को स्वतन्त्रता की आशीर्वाद का रक्षण करने के लिये, इस सविधान को निर्दिष्ट तथा स्थापित करते हैं। इन शब्दो से सिद्ध है कि अमेरिका के सविधान का आधार लोगो की अनुमति है। वहाँ के विधान मडल के दोनो सदनो के सदस्य एक नियत समय के लिए जनता द्वारा निर्वाचित होते है, वहाँ की कार्यपालिका अर्थात् प्रेसीडेंट (President) निर्वाचन का अप्रत्यक्ष जनतत्रीय प्रक्रिया से होता है, और वहाँ का सर्वोच्च यायालय लोगो के अधिकारो की रक्षा करता है। बिना जनतत्रीय निश्चित विधि के सविधान मे कोई सशोधन नही हो सकता। किसी भी सार्वजनिक पद पर कोई भी योग्य नागरिक, बिना किसी प्रकार के कानूनी भेदभाव के, आरूढ होने का अधिकारी है। वहाँ मताधिकार सभी को प्राप्त है। किसी भी उपराज्य के नागरिक सयुक्त राज्य के नागरिक हैं।

संविधान की आलोचना

इसमे सदेह नही की १७८७ का निर्मित अमरीकी सविधान अपनी विशेषता रखता है। आधुनिक युग के सभी सविधानो से तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि यह सविधान अत्यन्त संक्षिप्त है। इसका कलेवर बहुत ही सूक्ष्म है। इसके कई कारण हैं। पहले तो यह सविधान ऐसी परिस्थिति मे बनाया गया था कि सविधान निर्माताओ ने छोटे और बडे उपराज्यो के आपसी विरोध को न बढने देने की इच्छा से ऐसी समस्याओ को सामने आने ही नही दिया जिनसे सविधान बनाने के कार्य मे अधिक समय लगे। दूसरे, सविधान मे केवल केन्द्रीय सघ सरकार की शक्तियो और रचना का ही वर्णन है, उपराज्यो के अपने निजी और पृथक सविधान हैं। तीसरे, अन्य सविधानो की अपेक्षा अमरीकी सविधान मे केवल तात्विक सिद्धान्त ही वर्णित हैं और सविस्तार व्याख्या और प्रक्रियाओ को कांग्रेस द्वारा बनाये अधिनियमो पर छोड दिया गया है। चौथे, उस शताब्दी मे राज्यो के कृत्य और शक्तियाँ सीमित थी अतएव विस्तृत व्याख्याओ और भावी आवश्यकताओ को समयानुकूल निश्चित होने के लिये देना स्वाभाविक ही था।

सविधान के कुछ सविधानो की कडी आलोचना की जाती है, जैसे सीनेट को सन्धि व पदाधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार प्रदान करना उचित नही समझा जाता। किन्तु यह ध्यान मे रखने की बात है कि सन् १७८७ के विधान निर्माता

उस समय की परिस्थितियों का सामना कर रहे थे, इसलिए "कल की सरकार को माप-दण्ड से मापना अनुचित है।" यद्यपि संविधान के संचालन में अनेक कठिनाइयां हुईं फिर भी वह असंतोषजनक सिद्ध नहीं हुआ है। पिछले १७५ वर्षों में भयंकर विवाद और संकट खड़े हुए, और एक बार तो सन् १८६१ में गृह युद्ध के समय संघ की एकता को भारी क्षति पहुँचने की आशंका भी हुई, किन्तु फिर भी महत्वपूर्ण संशोधनों द्वारा संघ सुदृढ हो गया और अमेरिका अत्यन्त धनवान और शक्तिशाली राज्य बन गया, यही संविधान के दृढ होने का प्रमाण है। इसके विपरीत फ्रांस में इसी काल में अनेकों सवैधानिक प्रयोग हुए और वहाँ का जनतंत्र अब तक अनिश्चित रूप धारण किये हुए है।

संघ सरकार की शक्तियां—संयुक्त राज्य अमेरिका की केन्द्रीय सरकार की शक्तियां निश्चित रूप से वर्णित और स्थिर की हुई हैं जिन्हें उस सरकार के भिन्न-भिन्न अंग कार्यान्वित करते हैं। विधायिनी शक्ति, अर्थात् कांग्रेस (जिसमें सीनेट व प्रतिनिधि सदन, दो सभायें हैं) की प्रथम अनुच्छेद की ८वीं धारा के अनुसार निम्नलिखित शक्तियां हैं:—

विविध प्रकार के कर लगाना और मुद्रा एकत्रित करना, ऋण चुकाना, संयुक्त-राज्य की सुरक्षा और सार्वजनिक हित साधन का प्रबन्ध करना, किन्तु सब प्रकार के कर सारे संयुक्त-राज्य में एक समान होंगे।

संयुक्त-राज्य की सम्पत्ति के आधार पर ऋण लेना।

विदेशी राष्ट्रों से उपराष्ट्रों के बीच व मूल निवासियों से व्यापार सम्बन्धी-नियमन करना।

नागरिक बनाने व दिवालिया निश्चित करने वाले एक समान नियम व अधि-नियम सारे संयुक्त-राज्य के लिए बनाना।

मुद्रा बनाना, उसका मूल्य स्थिर करना, विदेशी मुद्रा का मूल्य स्थिर करना और माप-तौल स्थिर करना।

संयुक्त-राज्य के नकली प्रचलित मुद्रा व ऋण के प्रमाणपत्रों को बनाने पर दण्ड का विधान करना।

डाकघर स्थापित करना और डाक मार्ग बनवाना।

लेखकों व वैज्ञानिकों को अपने लेख व अन्वेषण के उपयोग का कुछ समय के लिए अनन्य अधिकार देकर उपयोगी कला व विज्ञान की उन्नति करना। सर्वोच्च न्यायालय से छोटे संघ न्यायालय स्थापित करना।

समुद्री लूट-पाट की व्यवस्था करना व उसके लिए दण्ड का विधान करना, अन्तर्राष्ट्रीय अधिनियम के विरुद्ध किए अपराधों के लिए दण्ड देना।

युद्ध की घोषणा करना, बदला लेने के आज्ञापत्र देना और युद्ध में प्राप्त सम्पत्ति के सम्बन्ध में नियम बनाना।

सेना एकत्रित करना व शिक्षित करके तैयार रखना। किन्तु इस काम के लिए दो वर्ष से अधिक समय के लिए एक साथ मुद्रा का आयोजन नहीं हो सकता।

जल सेना संगठित कर उसका भरण-पोषण करना।

स्थल सेना व जल सेना के शासन व नियमन सम्बन्धी नियम बनाना।

संघ के अधिनियमों को कार्यान्वित करने के लिए, विद्रोह को दबाने के लिए, और आक्रमण से रक्षा के लिए सेना बुलाने का आयोजन करना।

सेना को संगठित, शिक्षित व सुसज्जित करने और उसके उस भाग पर नियंत्रण रखने का आयोजन करना जो संयुक्त राज्य की सेवा में उपयोग किया जा रहा हो। उपराज्यों को, बचे हुये सेना के भाग को, कांग्रेस द्वारा निश्चित शिक्षण के अनुसार शिक्षित करने का व सेना के अफसरों को नियुक्त करने का अधिकार देना।

ऐसे जिले में जिसका क्षेत्रफल १० वर्गमील से अधिक न हो, जिसको उपराज्यों ने संघ सरकार के सुपुर्द कर दिया हो व कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया हो, और इस प्रकार स्वीकृत होकर जो संघ सरकार का निवास-स्थान बन गया हो, उसमें अनन्य रूप से शासन करना। वैसा ही शासन उन सब जगहों में करना जो सरकार ने उपराज्यों की विधानमंडल की सम्मति से खरीद ली हो और जिनमें किले, बारूदखाने, शस्त्रागार, बन्दरगाह व दूसरी आवश्यक इमारतें बनी हों। और उन सब निर्बन्धों को बनाना जो पूर्वोक्त शक्तियों को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक व उचित हों और उन दूसरी शक्तियों को कार्यरूप देने के लिये आवश्यक व उचित हों जो संविधान ने सन्युक्त-राज्य की सरकार या उसके किसी शासन विभाग या अफसर में निहित कर दी हों।

प्रथम अनुच्छेद की ६वीं धारा ने नकारात्मक प्रतिबन्ध लगाकर कांग्रेस की शक्तियाँ और भी सीमित कर दी है, जैसे :—

(१) जब तक वास्तव में विद्रोह या आक्रमण न हुआ हो कांग्रेस अपराधी को न्यायालय में उपस्थित किये जाने अथवा बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) का आदेश दिलवाने की सुविधा को स्थगित नहीं कर सकती।

(२) वह कोई गतानुदर्शी अधिनियम (Expost facto law) पास नहीं कर सकती।

(३) यह उच्चता की कोई उपाधि (Title of nobility) नहीं दे सकती।

सन् १७८७ में जब संविधान का निर्माण हुआ, नागरिकों के अधिकारों को संविधान में घोषित करने का प्रश्न इतना महत्वशाली न हुआ था क्योंकि उस समय संघ सरकार की शक्तियों के विरुद्ध उपराष्ट्रों के क्या अधिकार होने चाहिये, यह प्रश्न अधिक महत्व रखता था। चार वर्ष बाद सन् १७९१ में लगभग १० संशोधन संविधान में किये गये जिनमें से नौ संशोधनों से नागरिकों के अधिकार प्रत्याभूत (Guaranteed) हुये और इस प्रकार संघ सरकार की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश रख दिया गया।

शक्तियों की सीमा में विकास—सन् १७९१ में हुये संविधान के दसवें संशोधन में कहा गया है कि संविधान ने जिन शक्तियों को संघ सरकार के सुपुर्द नहीं किया है वे जिन व्यक्तियों का उपराज्यों द्वारा कार्यान्वित किये जाने का संविधान से निषेध किया गया है वे शक्तियां उपराज्यों या जनता के लिए सुरक्षित हैं। किन्तु संघ सरकार की शक्तियों पर इन सब प्रबन्धों के रहते हुये और शेष शक्तियां उपराज्यों को दिये जाने पर भी संघ सरकार की शक्ति धीरे धीरे कई कारणों वश बढ़ती जा रही है। पहला कारण यह है कि न्यायाधीश मार्शल की अध्यक्षता में सर्वोच्च न्यायालय ने अर्थविदित शक्तियों का सिद्धान्त Doctrine of Implied Powers) प्रतिपादित किया और संविधान की धाराओं का ऐसा व्यापक अर्थ लगाया कि केन्द्रीय सरकार को अत्यन्त शक्तिशाली बना दिया। दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के बढ़ने और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की उन्नति होने से संघ सरकार बिना उपराज्यों के अधिकारों के समर्थकों को अप्रसन्न किये बिना अपनी शक्तियों को बहुत बढ़ा लिया है। तीसरे संविधान को व्यवहार में लाने से जो अनुभव हुआ उसके फलस्वरूप जो संशोधन किये गये उनसे संघ सरकार की शक्ति बढ़ गई। उदाहरण के लिये प्रथम अनुच्छेद की नवीं धारा के पैरा ४ को लीजिए। इसके अनुसार संघ सरकार कुछ कड़ी शर्तों के पालन करने पर ही प्रत्यक्ष कर लगा सकती थी, किन्तु १६ वें संशोधन ने यह शर्तें हटा दीं और कांग्रेस को यह शक्ति दे दी कि वह किसी भी प्रकार से प्राप्त हुई आमदनी पर कर लगा सकती है और इस कर से प्राप्त धन को किसी भी कारण या संख्या का ध्यान रख उपराज्यों में न बांटा जायगा। अन्तिम कारण यह है कि संसार की परिस्थिति ही कुछ समय से ऐसी हो गई है जैसे प्रशान्त महासागर की समस्या आर्थिक संकट और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, कि उसका प्रभाव सब राष्ट्रों पर पड़ा और परिणाम स्वरूप संघ सरकार ने प्रजा की अस्पष्ट सम्मति से अधिकाधिक शक्ति अपने हाथ में कर ली है।

अमरीका संविधान की इंगलैण्ड के संविधान से तुलना

राजनीति के क्षेत्र में अमेरिका और इगलैंड के सविधानो का विशेष महत्व है। कई बातो में दोनो सविधानो के सिद्धान्त एक से हैं, फिर भी कई प्रकार के भेद भी इन सविधानो को पृथक कोटियो में रखते हैं। यहाँ पर हम इसी दृष्टि से इन सविधानो की तुलना करना उचित समझते हैं:—

सादृश्यता (Similarity)—निम्न बातो में दोनो सविधानो में एक से ही सिद्धान्तो का समावेश है, जिससे वे सादृश्य हैं·

(१) दोनो ही सविधान जनतत्रीय (democratic) हैं, क्योकि दोनो देशो के निवासियो द्वारा निर्वाचित विधान मडलो द्वारा विधि अथवा अधिनियम बनाए जाते है। दोनों में मताधिकार सभी नागरिको को जाति, रग आदि के भेद भाव बिना स्त्रियों और पुरुषो को समान रूप से प्राप्त है।

(२) दोनो ही सविधानो में राजनीतिक दलबन्दी का बडा महत्व है। सारे निर्वाचन दलबन्दी की प्रथा से ही होते हैं। कार्यपालिका का निर्माण और राज्य की नीति का सचालन दलबदी पर अवलम्बित है।

(३) दोनो ही देशों में नागरिको के अधिकार सुरक्षित हैं। अमरीकी सविधान में तो इन मूल अधिकारो का समावेश कर दिया गया है। इगलैण्ड में *'विधि का शासन'* (Rule of Law) का सिद्धान्त प्रचलित है और इसी से नागरिको के सभी प्रकार के अधिकार, वक्तृता, शरीर, सम्पत्ति, प्रकाशन, धर्माचरण आदि की स्वतन्त्रता सुरक्षित है।

भेद—दोनो सविधानो में निम्न भेद हैं जिनके कारण उनका विभिन्न कोटियो में वर्गीकरण किया गया है .—

(१) इगलैण्ड के सविधान में सारी शक्तियाँ, विधि निर्माण, कार्य कारिणी का निर्माण और किसी अश तक न्यायिक कार्य पार्लियामेंट को प्राप्त हैं किन्तु अमरीकी सविधान "शक्ति पृथक्करण" के सिद्धान्तो पर आधारित है इसलिये वहाँ कॉंग्रेस विधायिनी शक्ति रखती है, प्रेसीडेंट स्वतन्त्र कार्यपालिका है और सघीय न्यायालय इन दोनो के नियत्रण से स्वतंत्र न्यायपालिका है। 2

(२) इगलैण्ड का सविधान ऐकिक प्रणाली का है, जिसके अनुसार सारी शासन शक्ति एक ही सरकार को प्राप्त है और उस शक्ति या सत्ता पर किसी प्रकार का प्रतिबध नहीं, किन्तु अमेरिका का सविधान सघीय है जिसके अनुसार शासन शक्ति का विभाजन दो सरकारो में किया गया है, सघीय सरकार जो सार्वराष्ट्रीय है और

उपराज्यों की सरकारें जो स्थानीय सरकारों की भांति राष्ट्र के पृथक २ इकाइयों पर शासन करती हैं। दोनों सरकारों की पृथक २ विधायिनी, कार्य-कारिणी तथा न्यायिक शक्तियां परिमित हैं और कोई भी सरकार दूसरी के क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकती। प्रत्येक व्यक्ति दो सरकारों का नागरिक है और दो प्रकार के अधिनियमों का पालन करता है, दो प्रकार के कर देता है और दो विभिन्न न्यायपालिकाओं के अधिकार में रहता है।

(३) इंगलैंड का संविधान किसी एक अधिनियम में वर्णित नहीं है, उसका कुछ भाग तो विभिन्न समयों पर बने स्टेट्यूट या अधिनियमों में मिलता है परन्तु वह अधिकतर अलिखित है और सामान्य कानून (Common law) और परिपाटियों (Conventions) पर आधारित है। और उसका कई शताब्दियों में समय २ पर विकास हुआ है। इसके विपरीत अमरीकी संविधान (१७८७) का लिखित है और एक प्रकार का अनुबन्ध है जो राष्ट्रीय सरकार तथा उपराज्यों की सरकारों पर प्रतिबन्ध लगाता है, यद्यपि उसमें भी समयानुकूल कुछ परिपाटियों का समावेश हो गया है।

(४) इंगलैंड का संविधान अत्यन्त लचीला (flexible) है, उसमें संशोधन उसी प्रक्रिया और सुगमता से होता है जिससे साधारण विधि या अधिनियम बनाये जाते हैं। इसके विपरीत अमेरिका के संविधान में संशोधन एक विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा होता है जिसका पूरा करना अत्यन्त कठिन है और १७५ वर्षों में उसमें केवल २२ संशोधन हुए हैं, इसलिये वह संसार के विधानों में अत्यन्त अपरिवर्तनीय (rigid) है। अमरीकी संविधान साधारण अधिनियमों और वैधानिक संशोधनों में बहुत भेद करता है।

(५) इंगलैंड का संविधान संसदीय प्रणाली (Parliamentary government) के सिद्धान्तों पर संचालित है जिसके अनुसार कार्यपालिका पर पार्लियामेंट का पूर्ण नियंत्रण है। इसके विपरीत अमेरिका की कार्यपालिका अध्यक्षात्मक (Presidential) है जो कांग्रेस के प्रति न तो उत्तरदायी है और न उसके नियंत्रण में है।

(६) इंगलैंड में कार्यपालिका के दो भाग हैं, राजा केवल नामधारी कार्यपालिका है, परन्तु सारे शासन संचालन का कार्य केबिनेट (मंत्रि मंडल) करता है जो असली कार्यपालिका है। इसके विपरीत अमेरिका में सारी वास्तविक कार्य-कारिणी शक्ति प्रेसीडेंट के हाथ में है जो स्वयं शासन करता है। इंगलैण्ड का राज्यपति (Head of state) राजा है जो पैतृक सिद्धान्त के अनुसार पदारूढ़ होता है, किन्तु अमेरिका का प्रेसीडेंट जनता के प्रतिनिधियों द्वारा चार वर्ष के लिये निर्वाचित होता है।

संविधान का संशोधन

इसमें सन्देह नहीं कि विश्व के अन्य संविधानों की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान अधिक अपरिवर्तनशील है। संविधान के जनकों (fathers)

ने यह निश्चय किया कि क्योंकि संघीय सरकार की स्थापना उपराज्यों के पारस्परिक अनुबन्ध से हो रही है और उपराज्यों ने केवल स्पष्टतया वर्णित ही शक्तियां केन्द्रीय सरकार को दी हैं, संविधान में परिवर्तन करना उस अनुबन्ध को लचीला कर देना होगा। फिर भी वे इस बात को समझते थे कि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर और अनुभव के कारण परिवर्तन करना अनिवार्य भी हो सकता है। अतएव उन्होंने संविधान के परिवर्तन की ऐसी प्रक्रिया निश्चित की जो केवल उसी दशा में पूरी हो सकती है जब संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता देश के उपराज्यों और कांग्रेस के भारी बहुमत को स्वीकार हो। इस प्रक्रिया में कांग्रेस तथा उपराज्यों (दोनों को ही) संशोधन प्रस्तुत करने तथा अन्त में उपराज्यों की विशेष बहुमत सम्मति से अनुसमर्थन (ratification) होने का ढंग रखा गया है। सारांश यह है कि अमरीकी संविधान में साधारण विधि (ordinary law) और संवैधानिक विधि (constitutional law) में बड़ा अन्तर रखा गया है जो किसी ऐकिक संविधान में साधारणतया नहीं होता, और इंगलैंड में तो ऐसा कोई भेद है ही नहीं।

अमरीकी संविधान में संशोधन (amendment) करने की प्रक्रिया संविधान के पांचवें अनुच्छेद में इस प्रकार वर्णित है :—"कांग्रेस, जब कभी उसके दोनों सदन आवश्यक समझेंगे, इस संविधान के संशोधन का प्रस्ताव रखेगी, अथवा, विभिन्न उपराज्यों के दो तिहाई उपराज्यों के विधान मंडलों की प्रार्थना पर संशोधन प्रस्तुत करने के लिये एक सभा (कन्वेंशन) बुलावेगी। ये संशोधन, कैसे भी प्रस्तुत हुये हों, तभी सर्वप्रकार मान्य और वैध होंगे जब उनका अनुसमर्थन तीन चौथाई उपराज्यों के विधान मंडलों अथवा तीन चौथाई उपराज्यों में (इसी उद्देश्य से बुलाए गये) सभा सम्मेलनों (Conventions) द्वारा हो जावेगा। यह बात कांग्रेस निश्चित करेगी कि किस प्रकार (विधान-मंडलों अथवा सभाओं द्वारा) अनुसमर्थन हो : परन्तु सन् १८०८ के पूर्व किया हुआ कोई भी संशोधन, प्रथम अनुच्छेद के खण्ड ९ के पहले और चौथे उपखण्ड में परिवर्तन न करेगा, और न किसी भी उपराज्य को, उसकी सहमति के बिना, सीनेट में समान मताधिकार से वंचित किया जावेगा"।

इससे यह स्पष्ट है कि संविधान के संशोधन की प्रक्रिया में दो अवस्थायें हैं, एक तो संशोधन में प्रस्ताव प्रस्तुत करना और दूसरी उस प्रस्ताव का अनुसमर्थन (ratification)। अनुच्छेद पांच के अनुसार संशोधन निम्नलिखित दो प्रकारों में से किसी भी प्रकार से किया जा सकता है :—

(१) कांग्रेस स्वयं ही शासन-विधान में संशोधन का प्रस्ताव कर सकती है; यदि दोनों सदनों में पृथक दो तिहाई बहुमत उसकी आवश्यकता को स्वीकार करता हो।

(२) दो तिहाई उपराज्यो के विधान-मंडल कांग्रेस मे सशोधन को प्रार्थना कर सकते हैं। ऐसा किया जाने पर कांग्रेस को इन सशोधनो का प्रस्ताव करने के लिये एक सम्मेलन बुलाना पडता है।

किन्तु दोनो अवस्थाओ मे सशोधन तभी वैध और लागू समझा जाता है जब या तो तीन चौथाई उपराज्यो की विधान-मंडलो द्वारा वह अनुसमर्थित अर्थात् स्वीकृत हो जाता है या तीन चौथाई सख्या के उपराज्यो मे इस कार्य के लिये बुलाये हुये सम्मेलनो मे वह स्वीकार हो जाता है।

उपर्युक्त सशोधन की रीति मे स्पष्ट है कि सघ-सरकार और उपराज्य दोनो ही का सविधान-सशोधन मे हाथ रहता है। यह सशोधन रीति सहज-साध्य नही है। अतएव सन् १७८९ व १९५१ के बीच यद्यपि १९०० से अधिक सशोधन प्रस्ताव रखे गये किन्तु उनमे केवल २२ सशोधन ही स्वीकृत हुये हैं शेष निरर्थक होने से रद कर दिये गये। इन २२ सशोधनो को तीन श्रेणियो मे बाँट सकते हैं। पहली श्रेणी मे नागरिको के अधिकार-सम्बन्धी सशोधन हैं (मूल सविधान मे यह अधिकार न रखे गये थे)। यह सन् १७९१ मे किये गये प्रथम १० सशोधन हैं और १७९८ व १८०४ मे किये गये ११ वे व १२ वें सशोधन हैं। दूसरी श्रेणी मे १३ वाँ (१८६५) और १५ वाँ (१८७०) जिससे सब उपराज्यो मे समान अधिकार दिये गये। इसके द्वारा ग्रह-युद्ध (Civil war) के वैधानिक परिणामो को लिखित रूप दिया गया। तीसरी श्रेणी मे बचे हुये ९ सशोधन है जिनमे से सन् १९१३ का सशोधन कांग्रेस को प्रत्यक्ष कर लगाने व वसूल करने की शक्ति देता है, सन् १९१३ के दूसरे सशोधन के अनुसार सीनेटरो का निर्वाचन प्रत्यक्ष लोकमत से होने लगा। सन् १९१९ के सशोधन से मद्य बनाना, बेचना व सयुक्त राज्य की सीमा के भीतर बाहर से मद्य मँगाने का निषध किया गया, सन् १९२९ के सशोधन से स्त्रियो को मताधिकार दिया गया, सन् १९३३ के सशोधन स १९१९ के मद्य निषेध करने वाले सशोधनो को समाप्त कर दिया आर उसी साल के दूसरे सशोधन से प्रेसीडेंट व प्रतिनिधियो की अवधि-समाप्ति के दिनाक निश्चित कर दिय गये। सन् १९५१ के सशोधन के अनुसार कोई व्यक्ति अब दो बार मे अधिक सयुक्त राज्य का राष्ट्रपति नही हो सकता।

सयुक्त-राज्य के शासन-विधान मे सशोधन करने की प्रणाली ऐसी है कि एक व्यक्ति भी सशोधन के कार्यान्वित होने मे रुकावट डाल सकता है। उदाहरण के लिये यदि सीनट के १०० सदस्यो मे से ८५ उपस्थित हो जिनमे से ५६ सशोधन के पक्ष मे मत द और २९ उसके विरुद्ध मत प्रकट करें तो वह सशोधन सीनेट मे दो तिहाई-सख्या पक्ष म न होने से स्वीकार नही समझा जा सकता चाहे प्रतिनिधि सदन मे दो-तिहाई मत से पास हो चुका हो क्योकि ८५ सीनेटरो मे से कम से कम ५७ समर्थक दो-तिहाई सख्या होगे।

अध्याय १७

विधानमंडल (कांग्रेस)

प्रशासन के बढते हुए विशिष्ट क्षेत्र, और फलतः शासन की बढती हुई शक्ति की परिस्थिति मे, यह अनिवार्य है कि शासन के कृत्यो पर नियन्त्रण रखने के लिये और उनमे सामजस्य रहने के निमित्त कोई सस्था होनी चाहिए। यह काग्रेस ही कर सकती है, और मेरे विचार मे काग्रेस का भविष्य इसी मे है कि वह अपना सगठन इसी उद्देश्य से करे।

—रोलैंड यग

यह ठीक ही कहा गया है कि अग्रेजी पार्लियामेंट आधुनिक ससार की विधायिनी सभाओं की जननी है। अमेरिका स्थित इंगलैंड के सभी उपनिवेशो मे १७७३ के पूर्व विधान मडल थे जो इगलैंड की पार्लियामेंट की भाति दो-सदनो के थे। इसलिये यह स्वाभाविक ही था कि जब इन उपनिवेशो ने अपनी स्वतत्रता प्राप्त कर सन् १७८६ मे फिलेडेल्फिया मे सघ सविधान बनाने का कार्य आरम्भ किया, तो उनके सामने जितने भी सुझाव आये उनमे विधि निर्माण के लिये दो सदनो विधान मडल का ही समर्थन किया गया। अतः १७८७ के सविधान की पहली धारा मे अमरीकी सघ की सारी विधायिनी शक्ति काग्रेस को सौप दी गई है, काग्रेस के दो सदन हैं, प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) और सीनेट (Senate)। इन दोनो की रचना मे एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त का ध्यान रखा गया है; प्रतिनिधि सदन तो समस्त सयुक्त राज्य के लोगो का प्रतिनिधित्व करता है और सीनेट सघ के उप-राज्यो (States) का प्रतिनिधित्व करती है और उसमे सभी उपराज्यो को, चाहे वे बडे हो अथवा छोटे, समता के सिद्धान्तानुकूल समान प्रतिनिधित्व दिया गया है। फलतः प्रतिनिधि सदन मे प्रत्येक उपराज्य को उसकी जनसख्या के अनुपात से प्रतिनिधित्व मिला है, किन्तु सीनेट मे प्रत्येक राज्य को दो सदस्य (Sentaors) मिले हैं।

अग्रेजी पार्लियामेंट और अमरीकी कांग्रेस की तुलना—यद्यपि काग्रेस की स्थापना साधारणतया पार्लियामेंट के उदाहरण से हुई थी और दोनो ही सभाए अपने २ राज्य के लिये विधायिनी शक्ति के कार्य करती हैं, फिर भी इन दोनो मे बहुत भेद है। (१) पार्लियामेंट अपनी सप्रभुता (Sovereignty) के लिये विश्व मे प्रसिद्ध है, अर्थात् उसकी विधायिनी शक्ति पर कोई प्रतिबन्ध नहीं, वह कुछ भी अधिनियम बना सकती है और वह अधिनियम सभी न्यायालयों को मान्य है, परन्तु अमरीकी काग्रेस की

विधायिनी शक्ति निश्चित् और अत्यन्त परिमित है। काग्रेस केवल उन्ही विषयो से सम्बन्धित अधिनियम बना सकती है जो अनुच्छेद १ के खण्ड ८ के १८ उपखडो मे लिख दिये गये है। काग्रेस का बनाया कोई अधिनियम यदि किसी भी प्रकार इन वर्णित शक्तियो के बाहर जाता है अथवा उनका उल्लघन करता है और इस प्रकार वह सविधान के प्रतिकूल है तो सघ न्याय पालिका उसे अवैध ठहराती है और फिर वह लागू नही रहता। (२) पार्लियामेंट इगलैंड की कार्यपालिका पर पूर्ण नियत्रण और अधिकार रखती है और वह कार्यपालिका (केबीनेट) तभी तक पदारूढ रहती है जब तक उसे पार्लियामेंट का विश्वास प्राप्त है, परन्तु अमरीकी कार्यपालिका (प्रेसीडेंट) पर काग्रेस का अधिकार का नियत्रण नही और प्रेसीडेंट अपनी निर्दिष्ट अवधि तक (जो चार वर्ष है) स्वतत्र नीति के अनुसार शासन सचालन करता है और काग्रेस को उत्तरदायी नही है। (३) इगलैंड की कार्यपालिका पार्लियामेंट का ही भाग है, केबिनेट के सदस्य पार्लियामेंट के किसी न किसी सदन के सदस्य होते हैं, परन्तु अमरीकी कार्यपालिका अर्थात् प्रेसीडेंट (अथवा उसके सचिव) काग्रेस के सदस्य नहीं होते क्योंकि अमेरिका मे शासन के विभिन्न अगो की रचना शक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त के अनुकूल हुई है जैसा इगलैंड मे नही है। (४) पार्लियामेंट का लोकसदन (House of Commons) पाच वर्ष के लिये निर्वाचित होता है किन्तु आवश्यकता पडने पर केबिनेट उसकी अवधि मे पूर्व भी विघटन करा सकती है, अथवा विशिष्ट परिस्थिति मे उसकी अवधि को उसकी अनुमति से बढा भी सकता है, किन्तु काग्रेस के प्रतिनिधि सदन की अवधि पूरे दो वर्ष है और अमरीकी कार्यपालिका उसे घटा-बढा नही सकती। (५) पार्लियामेंट का ऊपरी सदन (हाउस आफ लार्ड्स) अधिकतर पैतृक (Hereditary) सिद्धान्त के अनुकूल निर्मित है, उसकी सख्या ७०० से अधिक तथा अनिश्चित् है और उसकी शक्तियां सन् १९११ के बाद इतनी घट गई है कि वह सदन प्राय निरर्थक ही है। किन्तु अमरीकी सीनेट मे प्रत्येक उपराज्य के दो सदस्य होते है जो छ वर्ष के लिये वहा की जनता द्वारा निर्वाचित होते है, और प्रति दो वर्ष तक तिहाई सीनेट-सदस्यों का निर्वाचन होता है, अर्थात् वह सदन कभी पूर्णतया विघटित नही होता, आर आज कल उसकी सख्या १०० है क्योंकि हवाई (Hawai) द्वीप को उपराज्य पद मिलने से उपराज्यो की सख्या ५० हो गई है। दूसरे, सीनेट की शक्तिया प्रतिनिधि सदन से इतनी अधिक हैं और विस्तृत हैं कि अमरीका मे सीनेट की सदस्यता बहुत बडी पद समझी जाती है, क्योंकि सीनेट अन्य देशो के ऊपरी सदनो मे सबसे अधिक शक्तिशाली और महत्वपूर्ण सदन है और कार्यपालिका सदा उसकी ओर ताकती रहता है। (६) पार्लियामेंट मे हाउस आफ लार्ड्स को विलम्ब अधिकार नही है किन्तु काग्रेस मे सीनेट

को प्रायः अपरिमित वित्तीय अधिकार (Financial powers) प्राप्त हैं।

अमरीकी कांग्रेस की शक्तियां और अधिकार—जैसा कि ऊपर वर्णित है, अमरीकी संघ में विधायिनि शक्ति कांग्रेस को ही प्राप्त है। कांग्रेस की शक्तियां विभिन्न प्रकार की हैं : (क) संविधान से प्राप्त शक्तियां जिनकी गणना पिछले अध्याय में की जा चुकी है, (ख) निहित शक्तियां जिनका सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित निहित शक्तियों के सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) के अनुसार कांग्रेस उपभोग कर सकती है और करती रहती है, (ग) समवर्ती शक्तियां, (घ) वर्जित शक्तियां जिनका कांग्रेस उपभोग नहीं कर सकती क्योंकि संविधान ने उसको उन शक्तियों से वंचित कर दिया है, (ङ) स्वाभाविक अथवा अन्तर्वर्ती (inherent) शक्तियां, और (च) रक्षित (reserved) शक्तियां।

संविधान द्वारा प्राप्त शक्तियाँ - संविधान के अनुच्छेद १ खण्ड ८ के १८ उपखण्डों में ये शक्तियां स्पष्ट कर दी गई हैं। इन शक्तियों को अमेरिका के सम्प्रभुताधारी (Sovereign) लोगों ने संविधान द्वारा स्थापित केन्द्रीय विधान मंडल को सौंप दी है क्योंकि इन सभी शक्तियों का क्षेत्र और महत्व ऐसा है कि उनका उपभोग एक राष्ट्रीय सरकार (National Government) ही कर सकती है। क्योंकि वे सारे संघ के हित में अनिवार्य रूप से एक ही सरकार के हाथ में होनी चाहिये। इन्हीं शक्तियों के लिए एक संघीय, केन्द्रीय सरकार की स्थापना की गई थी। उपराज्यों ने अपनी अनुमति से ये शक्तियां अपनी ओर से केन्द्रीय कांग्रेस को दी हैं।

निहित शक्तियाँ (Implied Powers)—वे शक्तियां हैं जो स्पष्टतया दी गई उपरोक्त शक्तियों में निहित हैं। अर्थात् संविधान ने जो शक्तियां स्पष्टतया कांग्रेस को दी हैं उन शक्तियों का उपभोग करने के लिये कुछ ऐसी शक्तियां आवश्यक और उचित (necessary and proper) हैं कि उनको धारण करना कांग्रेस के लिये अनिवार्य है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस निहित शक्तियों के सिद्धान्त का प्रतिपादन कर कांग्रेस के हाथ में एक ऐसा यन्त्र दे दिया है जिसके द्वारा कांग्रेस का शक्ति-क्षेत्र बड़ा विस्तृत हो गया है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि कांग्रेस मनमानी कर किसी भी शक्ति का (उसे आवश्यक और उचित समझकर) उपभोग कर सकती है। यदि ऐसा होता तो संविधान संघीय न रहकर ऐकिक (unitary) हो जाता। निहित शक्ति केवल वही है जो किसी स्पष्टतया प्राप्त शक्ति को काम में लाने के लिए अनिवार्य है। उदाहरणार्थ, कांग्रेस को अधिकार है कि संयुक्त राज्य के विभिन्न उपराज्यों के बीच व्यापार आदि का संचालन होने के लिये अधिनियम और नियम बनावे, मुद्रा जारी करे, मुद्रा का मूल्य-निर्धारित करे और ऋण आदि ले। इन शक्तियों के प्रयोग

और उपभोग के लिये यह "आवश्यक और उचित" है कि कांग्रेस बैंक की स्थापना करे। बैंक की स्थापना का अधिकार स्पष्टतया तो कांग्रेस की वर्णित शक्तियो मे नही परन्तु वह अन्य उपरोक्त शक्तियों के प्रयोग के लिये आवश्यक और उचित है। फिर भी कांग्रेस स्वेच्छाचार नही कर सकती क्योकि सविधान द्वारा स्थापित सर्वोच्च न्यायालय को (Supreme Court) जो सविधान को सुरक्षित रखता है, यह अन्तिम अधिकार है कि वह किसी भी व्यक्ति के नियमानुकूल प्रार्थना करने पर यह निर्णय दे कि कांग्रेस ने जिस निहित शक्ति का प्रयोग किया है वह वास्तव मे "आवश्यक और उचित" है भी अथवा नही। इसमे सन्देह नही कि निहित शक्तियो द्वारा कांग्रेस की शक्तियां बढ गई है और इतनी बढ गई है कि वे कदाचित सघीय सिद्धान्त के महान प्रतिपादक अलैक्जेन्डर हैमिलटन (Alexander Hamilton) के स्वपनो से भी दूर थी। किन्तु इन्ही शक्तियों के प्रयोग से आज कांग्रेस की ससार मे प्रतिष्ठा बढ़ गई है।

समवर्त्ती शक्तियां (Concurrent Powers)—समवर्त्ती शक्तियां वे है जिनका प्रयोग राष्ट्रीय सरकार तथा उपराज्यो की सरकारें अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुसार, दोनो ही कर सकती है। उदाहरणार्थ, दिवाला (bankruptcy) अथवा लाचारी के बारे मे कांग्रेस भी अधिनियम बना सकती है और वह उपराज्यो को भी अधिनियम बनाने का अधिकार रहने दे सकती है। कुछ अन्य सघीय सविधानो मे, जैसे भारतीय गणराज्य के सविधान मे समवर्त्ती शक्तियो की सूची इतनी विस्तृत है कि सघीय और उपराज्यो के विधान मंडलो को बहुत कुछ समवर्त्ती अधिकार प्राप्त हैं। समवर्त्ती शक्तियो का क्षेत्र जितना ही अधिक होगा, उतनी अधिक एकता और एक समता शासन मे आजावेगी।

वर्जित अथवा निषिद्ध शक्तियां (Prohibited Powers)—वे शक्तियां हैं जिनका प्रयोग करना वर्जित है। ऐसा प्रतिबन्ध दोनों ही सरकारो (केन्द्रीय तथा उपराज्य) पर अथवा केवल केन्द्रीय वा उपराज्य की सरकार पर लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, अमरीकी सविधान मे स्पष्ट है कि नागरिको के मूल अधिकारो पर कोई भी सरकार प्रतिबंध नही लगा सकती, और न किसी भी नागरिक को उसकी जाति, रग आदि के भेदभाव के कारण मताधिकार से वचित कर सकती है और न ऐसा अधिनियम बना सकती है जो किसी कृत्य को दण्डित बना दे (Expost facto law) जो उस समय, जब वह किया गया था, किसी अधिनियम के प्रतिकूल न था। कांग्रेस ऐसे किसी शक्ति के प्रयोग से वर्जित है जो उपराज्यो को दी गई

है। संविधान के अनुच्छेद १ के खण्ड ९ व १० में ऐसी वर्जित शक्तियों को लिख दिया गया है। मूल अधिकार भी इस प्रकार के प्रतिबन्ध हैं।

स्वाभाविक अथवा अन्तर्वर्ती (inherent) शक्तियां—स्वाभाविक शक्तियां वे है जो संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार इसलिये प्रयोग में ला सकती है क्योंकि वह सप्रभुता सम्पन्न राज्य (Sovereign State) है और संसार के सभी राज्यों की राष्ट्रीय सरकारें इन शक्तियों का स्वाभाविक तौर से प्रयोग करती है। उदाहरणार्थ, अमरीका अन्य विदेशी राज्यों से अन्तर्राष्ट्रीय समझौते और संधियां कर सकता है और उनसे दिन प्रतिदिन के मामलों में सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। ऐसी शक्तियां एक सप्रभुता-सम्पन्न राज्य की प्रतिष्ठा की प्रतीक है और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे उसका सम्मान कायम रखती है, अन्य राज्य उसका आदर करते है और समयानुकूल उसके प्रतिनिष्ठा और आस्था रखते है। इन्ही शक्तियों के प्रयोग से आज अमरीकी कांग्रेस और सरकार का विश्व में बड़ा मान और आदर है।

रक्षित शक्तियां (Reserved Powers)—संविधान ने कुछ शक्तियां संघीय सरकार को न देकर या तो उपराज्यों की सरकारों को दी है अथवा लोगों के हाथ में सुरक्षित हैं। उदाहरणार्थ, सन् १७९१ के दसवें संशोधन में स्पष्ट कर दिया गया है कि संविधान ने जो शक्ति न तो संयुक्त राज्य को दी है और न उपराज्यों को वर्जित है वह या तो उपराज्यों अथवा लोगों को रक्षित है। इसी प्रकार संविधान का संशोधन करने की शक्ति न तो केवल कांग्रेस को मिली है और न राज्यों की सरकारों को, बल्कि उसका उपभोग एक विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा होता है जिसमे कांग्रेस तथा राज्यों के विधान मंडलों या जनता द्वारा निर्वाचित सभाएं (Convention) संशोधन का अन्तिम अनुसमर्थन करती हैं।

कांग्रेस की शक्तियों और अधिकारों पर निरोध (Restriction)—संयुक्त राज्य अमरीका की कांग्रेस को केवल सीमित तथा स्पष्टतया वर्णित शक्तियां ही दी गई हैं। इन शक्तियों और अधिकारों का उपभोग सामान्यतया बहुत कुछ विस्तृत भी हो गया है, फिर भी कांग्रेस के अधिकारों पर कई प्रकार निरोध लगा हुआ है जिनके कारण अन्य स्वतंत्र और प्रजातंत्रीय राज्यों के विधान मंडलों से तुलना करने पर यह प्रतीत होता है कि अमरीकी कांग्रेस की विधि-निर्माण शक्ति मर्यादित है।

घरेलू अथवा आन्तरिक (Domestic) मामलों में तो निस्सन्देह कांग्रेस अथवा राष्ट्रीय सरकार की शक्तियां मर्यादित है, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जैसा कि कांग्रेस तथा प्रेसीडेंट ने अनेक बार ठीक ही दावा किया है, राष्ट्रीय सरकार की शक्तियां इसलिय अत्यन्त विस्तृत हैं क्योंकि उसे ऐसी परिस्थिति का सामना करना पड़ता है जो देश की सुरक्षा तथा मान-रक्षा और अपने सप्रभुता-सम्पन्न होने के निमित्त अत्यन्त

आवश्यक है। विश्व युद्ध के काल में कई बार कांग्रेस को ऐसे अधिनियम बनाने पड़े जिनसे उपराज्यों के आपसी व्यापार पर प्रतिबन्ध लगे और सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) ने उन्हें वैधानिक ठहराया। फिर भी कांग्रेस अथवा राष्ट्रीय सरकार को संकटकालीन शक्तियां प्राप्त नहीं हैं। सन् १९३३ के आर्थिक संकट होने पर राष्ट्रपति रूजवेल्ट (Roosevelt) ने संकट उपस्थिति का कारण बता कर कांग्रेस द्वारा कुछ अधिनियम बनवाकर ऐसे आदेश जारी किये जिनसे राष्ट्रीय सरकार की शक्तियां और अधिकार घरेलू आर्थिक मामलों में बढ़ जाते। सर्वोच्च न्यायालय के सामने जब इन अधिनियमों और आदेशों पर अवैध होने का दावा किया गया तो न्यायालय ने अपने निर्णय देते समय कहा कि यद्यपि संकटकाल से ऐसी परिस्थिति हो सकती है कि सरकार अपनी वैधानिक शक्ति का विशेष प्रयोग करे, फिर भी 'संकट से कोई शक्ति नहीं मिलती क्योंकि संकट-काल न तो वर्णित शक्तियों को बढ़ा सकता है और न घटा सकता है।'[1] इससे स्पष्ट हो जाता है कि संकट-काल में भी कांग्रेस को कोई संकटकालीन अधिकार प्राप्त नहीं है। ऐसी परिस्थिति में भी वह अपनी वैधानिक शक्तियों का ही प्रयोग कर सकता है।

कांग्रेस को आरक्षक शक्ति (Police Power) प्राप्त नहीं है—ऐच्छिक सरकारों को यह अधिकार होता है कि लोगों की सुरक्षा, सुविधा, स्वास्थ्य-रक्षा आदि के लिए कोई भी ऐसा कदम उठावे अथवा आदेश जारी करे जिनको वह आवश्यक समझे। इस अधिकार को आरक्षक-शक्ति (Police Power) कहते हैं। परन्तु अमेरिका में संघीय शासन है, इसलिए यह आरक्षक-शक्ति राष्ट्रीय सरकार को प्राप्त नहीं है। आरक्षक-शक्ति का प्रयोग उपराज्यों की सरकार ही कर सकती हैं।

तीसरा विरोध यह है कि अमेरिका सरकार में कार्यपालिका (Executive) को विधायिनी शक्ति (Legislative power) प्राप्त नहीं है अर्थात् कांग्रेस कोई ऐसा अधिनियम नहीं बना सकती जिससे प्रेसीडेंट को ऐसे अधिकार प्राप्त हो जिनके द्वारा वह विधायिनी शक्ति (Legislative power) का उपयोग करे अर्थात् कांग्रेस अपनी विधायिनी शक्ति का कोई भाग प्रेसीडेंट को प्रदत्त अधिकार (delegated power) दिये सके।[2]

गैरविधायिनी शक्तियां (Non-legislative powers)—परन्तु कांग्रेस कई प्रकार से गैर-विधायिनी शक्तियों का उपभोग करती है। उसे अधिकार है कि वह किसी महत्वपूर्ण घरेलू या विदेशीय नीति-सम्बन्धी मामले की जांच करे और करावे।

1. Home Building and Loan Association vs. Blaisidell, 290 U S 393 (1934)

2. Panama Refining Co. vs. Ryan, 293 U. S. 388 (1935).

वह शासन का निरीक्षण (Supervision) करती है, निर्वाचन क्षेत्र निश्चित करती है। वह अपने कर्मचारी नियुक्त करती है, संविधान में संशोधन प्रस्तुत कर सकती है। वह अपने सदस्यों की पात्रता (eligibility) की जाँच कर सकती है, और शासन पर साधारण निगरानी रखती है।

कांग्रेस का रचना— संविधान के प्रथम अनुच्छेद के प्रथम खण्ड के अनुसार सारी विधायिनी शक्तियाँ जो संघीय सरकार को प्राप्त हैं अमेरिका की कांग्रेस द्वारा सञ्चालित है। कांग्रेस के दो सदन हैं, एक तो प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) और दूसरा सीनेट अथवा राज्य सभा (Senate)। इन दोनों सदनों की शक्तियाँ, रचना तथा पारस्परिक सम्बन्ध मूल संविधान (१७८७) के प्रथम अनुच्छेद के दूसरे और तीसरे खण्ड और सन् १९१३ के २७ वें संशोधन में वर्णित है।

प्रतिनिधि सदन (House of Representatives)—कांग्रेस का निचला सदन है जिसके सदस्य जनता से सीधे निर्वाचित होते है। प्रारम्भ में यह आयोजन था कि प्रत्येक २०,००० नागरिकों की संख्या एक प्रतिनिधि चुनेगी, किसी भी उपराज्य का कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य चुना जायेगा और यह कि प्रति १० वर्ष की जनसंख्या की गणना द्वारा प्रतिनिधियों की संख्या कम या अधिक की जायगी, किन्तु निर्वाचकों व प्रतिनिधियों की संख्या का अनुपात सब उपराज्यों में एक समान ही होगा। तदनुसार प्रतिनिधियों की प्रारम्भिक संख्या जो ६५ थी प्रति वर्ष दस के बाद बढ़ती गई क्योंकि नये उपराज्य संघ में आते गये और पुरानों में जनसंख्या बढ़ती गई। १४ वें संशोधन में निर्वाचन सम्बन्धी कुछ परिवर्तन किये गये क्योंकि आबादी इतनी तेजी से बढ़ी कि यदि २०,००० निर्वाचक एक एक प्रतिनिधि चुनते तो प्रतिनिधि सदन में सदस्यों की संख्या इतनी हो जाती कि उसको संभालना और कार्य सञ्चालन करना कठिन हो जाता। आकार की वर्तमान संख्या जो ४३५ है जो सन् १९१० की जनगणना के आधार पर निश्चित की गई है। सन् १९५१ की जनगणना के अनुसार प्रत्येक प्रतिनिधि ३,४५,००० मतधारकों का प्रतिनिधित्व करता है। यह ४३५ सदस्य विविध उपराज्यों में इस संख्याओं में निर्वाचित होकर आते हैं। ८४ वीं कांग्रेस के चुनाव में ये सदस्य इस प्रकार विभक्त थे। अलास्का १, अलबामा ९, एरीज़ोना २, अर्कन्सास ६, कैलीफोर्निया ३०, कोलोरैडो ४, कनैक्टीकट ६, डेलावेयर १, फ्लोरीडा ८, जोर्जिया १०, हवाई १, इडाहो २, इलिनोयस २५, इन्डियाना ११, आइओवा ८, कन्सास ६, केन्टकी ८, लुइसियाना ८, मेन ३, मेरीलैंड ७, मैसाच्यु सेट्स १४, मिचीगन १८, मिनेसोटा ९, मिसिसिपी ६, मिस्सौरी ११, मौन्टाना २, नेब्रास्का ४, नेवाडा १, न्यूहैम्पशायर २, न्यूजरसी १४, न्यूमैक्सिको २, न्यूयार्क ४३,

नार्थकैरोलीना १२, नार्थ डैकोटा २, ओहियो २३, ओक्लहामा ६, ओरीगन ४, पैनसिलवेनिया ३०, रोड आइलैंड २, साउथ कैरोलीना ६, साउथ डैकोटा २, टैनीसी ९, टैक्सास २२, ऊटा २, वरमौंट १, विरजिनिया १०, वाशिंगटन ७, पश्चिमी विरजीनिया ६, विसकौंसिन १० और व्योमिंग १। [1]इनमें अलस्का और हवाई उपराज्यों के प्रतिनिधि ८४ वीं कांग्रेस में न थे। क्योंकि ये दोनों उपराज्य क्रमशः जुलाई ७, १९५८ और अगस्त २१, १९५६ को संघ में शामिल किये गये थे, उपराज्यों का प्रतिनिधित्व अब फिर से निश्चित किया जायगा और पूर्ण संख्या ४३५ ही रहेगी।

निर्वाचन क्षेत्र—कांग्रेस प्रत्येक उपराज्य में चुने जाने वाले प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित करती है किन्तु उन प्रतिनिधियों के चुनने के लिये निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन प्रत्येक उपराज्य अपने आप करता है। इस कार्य में उपराज्य का विधान मण्डल प्राय किसी राजनीति पक्ष के लाभार्थ निर्वाचन क्षेत्रों में परिवर्तन कर दिया करता है। उदाहरण के लिये यदि परिसीमन विधेयक पर विचार करते समय विधान-मण्डल में रिपब्लिकन (Republican) पक्ष का बहुमत है तो वे लोग डेमोक्रेटिक (Democratic) पक्ष के बहुमत वाले जिलों को मिलाकर कम से कम निर्वाचन क्षेत्रों में इकट्ठा कर देंगे जिसमें आने वाले निर्वाचन में अधिक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों से रिपब्लिकन (Republican) प्रतिनिधि चुने जायें।[2] जब डेमोक्रेट (Democrat) पक्ष का बहुमत होता है तो वे भी अपने पक्ष में इसी प्रकार निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करते है। इस प्रकार के परिसीमन को गैरीमैंडरिंग (Gerrymandering) कहते है। सदन जनसंख्या के आधार पर संगठित होता है इसलिये उपराज्यों के प्रतिनिधियों की संख्या में बड़ा अन्तर देखने को मिलता है, उदाहरणार्थ, पूरे व्योमिंग (Wyoming) उपराज्य से केवल एक प्रतिनिधि चुना जाता है क्योंकि इसकी जनसंख्या २५०,७४२ (१९४० की जनगणना) है किन्तु अकेला न्यूयार्क (New York) नगर २५ प्रतिनिधि चुनता है। यद्यपि कई बार इस बात का प्रयास किया गया है कि बराबर के निर्वाचन क्षेत्र बनाये जावें किन्तु अभी तक सफलता नहीं मिली है। क्योंकि प्रत्येक उपराज्य अपने क्षेत्रों की सीमा स्वयं निर्धारित करता है, वहां के राजनीतिक दल ही बराबर जनसंख्या के क्षेत्र बनाने में बाधा डालते हैं। उदाहरणार्थ टैक्सास ने १९३३ में जो क्षेत्र निर्धारित किये थे वे अभी तक ज्यों के त्यों हैं, फलतः क्षेत्रों की जनसंख्या कम से कम २२६,७३९ और अधिक से अधिक सन १९५२ में ८०६,७०१ थी। दक्षिणी डकोटा के छोटे क्षेत्र की जनसंख्या केवल १५९,७९९ थी।

---

१ इनका योग ४३७ होता है।

२ हैरिकन— दी अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० ३०५।

मताधिकार—२१ वर्ष की आयु के नागरिक अधिकार-प्राप्त सब व्यक्ति मत दे सकते हैं। प्रतिनिधि की न्यूनतम आयु २५ वर्ष होनी चाहिये और वह निर्वाचन क्षेत्र का ही निवासी हो। और संयुक्त राज्य में कम से कम गत ७ वर्ष से रहता हो। इस प्रकार प्रतिनिधि क्षेत्र का ही निवासी होता है, परन्तु पहले के ऐसे भी उदाहरण हैं जहां क्षेत्र से बाहर का भी नागरिक प्रतिनिधि चुना गया है। सदन की अवधि दो वर्ष है, इसलिये प्रति दो वर्ष पश्चात् नये प्रतिनिधियों का चुनाव होता है। यह चुनाव नवम्बर मास में होता है किन्तु नये प्रतिनिधि अगली ३ जनवरी को जाकर सदन में अपना स्थान पाते हैं क्योंकि इसी दिनांक से नये सदन का जीवन प्रारम्भ होता है।

स्थानीय प्रतिनिधित्व—प्रतिनिधि जिन क्षेत्रों से निर्वाचित होते हैं उन्हीं के निवासी भी होते हैं। इसलिए वास्तव में वे उस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं हालांकि ऐसे क्षेत्र में जो इतना उन्नत नहीं कि एक योग्य व्यवस्थापक उत्पन्न कर सके इस पद्धति के कारण अयोग्य व्यक्ति का निर्वाचन करना पड़ता है। इस पद्धति से बहुत से योग्य व्यक्ति प्रतिनिधि बनने से वंचित रह जाते हैं। प्राय ऐसा देखा गया है कि कुछ क्षेत्रों में बहुत से योग्य व्यक्ति मिलते हैं और दूसरों में कोई भी नहीं होता। अतएव जब कोई उम्मीदवार अपने क्षेत्र में हार जाने से प्रतिनिधि नहीं चुना जाता तो उसके लिये कोई दूसरा क्षेत्र नहीं रह जाता। यह ठीक है कि लोकसभा के सदस्य व्यवहार-कुशल, अनुभवी व स्वाभाविक सामर्थ्य के व्यक्ति होते हैं जिनमें आधे से अधिक विश्व-विद्यालय के स्नातक होते हैं। फिर भी कांग्रेस की सदस्यता योग्य व्यक्तियों की अधिक संख्या को आकर्षित नहीं करती। कारण यह है कि इन प्रतिनिधियों से मतदाता सब प्रकार की आशा रखते हैं। कोई पेंशन चाहता है तो कोई पदवी, तीसरा अपने उद्योग में सहायता और इनके अतिरिक्त स्थानीय काम के लिये उन्हें राजकीय अनुदान दिलाने का प्रयत्न भी करना पड़ता है। यह सब काम बड़ा उकताने वाला और अरुचिकर होता है।

प्रतिनिधियों का पारिश्रमिक—प्रत्येक प्रतिनिधि को १२,५०० डालर वार्षिक आय मिलती है, २,५०० डालर अलाउन्स और ३,२०० डालर एक क्लर्क रखने के लिए मिलते हैं, कागज वगैरह लेखन सामग्री के लिए १२५ डालर और सफर खर्च २० सैंट (Cent) प्रति मील के हिसाब से दिया जाता है। अन्तिम मद में ही प्रशान्त महासागर के तट से आने वाले प्रतिनिधि का भत्ता २,५०० डालर हो जाता है। किसी भी सदन का सदस्य ६२ वर्ष की आयु में (यदि वह कम से कम ६ वर्ष सदन का सदस्य रहा हो और पेंशन फंड में अपने वेतन का ६ प्रतिशत देता रहा हो) अवकाश ग्रहण कर पेंशन (निवृत्ति वेतन) लेकर अवकाश प्राप्त (Retirement) प्राप्त कर सकता है। यह वेतन प्रतिवर्ष की सदस्यता के लिये २½ प्रतिशत के अनुपात से, और अधिकतम ७५

प्रतिशत तक, होता है। यह प्रतिनिधि सदन दुनिया में सबसे अधिक व्यय-साध्य व्यवस्थापक सभा है। प्रतिनिधियों को अपने पत्र आदि बिना डाक खर्च आदि भेजने का अधिकार है। सदन के जाते समय, वहाँ से लौटते समय उनको किसी अपराध के लिए पकड़ा नहीं जा सकता, जब तक अपराध देशद्रोह, विद्रोह या हत्या की श्रेणी का न हो। उन्हें सदन में बोलने की स्वतन्त्रता रहती है परन्तु अभद्र वचनों के लिए किसी भी सदस्य को सदन के दो तिहाई सदस्यों की सम्मति से बाहर निकाला जा सकता है।

सदन अपनी कार्यपद्धति स्वयम् निर्धारित करता है—सदन को अपनी कार्यपद्धति पर पूर्ण स्वत्व प्राप्त है। यह अपनी कार्यवाही का दैनिक लेख रखता है जिसे समय समय पर छापकर प्रकाशित किया जाता है। कभी-कभी जब कार्यवाही गुप्त रखने का निश्चय किया जाता है तो उसका विवरण प्रकाशित नहीं होने दिया जाता। वार्षिक अधिवेशन दिसम्बर मास में प्रथम सोमवार को प्रारम्भ होता है। सदन के निजी डाकघर, भोजनालय या कार्यालय होते हैं।

सदन के अधिकारी वर्ग—नया सदन निर्वाचन होने के पश्चात् ३ जनवरी को अपनी प्रथम बैठक करता है और सबसे पहला काम स्पीकर (सभापति) क्लर्क, चैपलेन, पोस्टमास्टर, सार्जेन्ट-एट-आर्म्स व द्वारपाल को चुनना होता है। यह चुनाव पक्ष-प्रणाली पर ही होता है। प्रत्येक पक्ष अपने अपने उम्मेदवार खड़ा करता है और बहुमत वाले पक्ष की जीत होती है। निर्वाचित स्पीकर रीत्यानुसार सदन के सबसे पुराने सदस्य से शपथ दिलाने की प्रार्थना करता है। बड़ी हर्ष ध्वनि के मध्य जब चारों ओर से अभिवादन सूचक रूमाल हिलते होते हैं और चित्रकारों के कैमरों की ध्वनि गूंजती है, वह क्लर्क से पदसूचक हथौड़ा लेता है। उसके पश्चात् कुछ थोड़े से शब्दों में सदस्यों को धन्यवाद देकर स्पीकर के कर्त्तव्य को सुचारु रूप से पूरा करने की शपथ लेता है। उसके पश्चात् वर्णक्रमानुसार सदस्यों के नाम पुकार कर उन्हें शपथ लेने को कहा जाता है। जब सब शपथ ले चुकते हैं तब कुछ दूसरे अफसर चुने जाते हैं। उसके पश्चात् सदन के संगठित हो चुकने की घोषणा कर दी जाती है।

पहले जब सदस्यों की संख्या कम थी प्रत्येक प्रतिनिधि के लिए एक कुर्सी व मेज मिलती थी जिस पर रखकर वह अपनी लिखा-पढ़ी व दूसरा काम कर सकता था, किन्तु अब संख्या के बढ़ जाने से सदन में स्थान की कमी हो गई और स्पीकर को सुनने में कठिनाई भी होने लगी। अतएव मेज अब सदन से हटा दी गई है। पूर्व समय में स्पीकर (Speaker) को कई काम करने का अधिकार था, यहाँ तक कि सदन की समितियों भी वही नियुक्त करता था। वह इतना शक्तिशाली था कि उसे 'जार' की पदवी दी जाने लगी थी। किन्तु कैनन (Cannon १८६९-१९११) के स्पीकर निर्वाचित होने के बाद सदन ने इस निरंकुशता को समाप्त करने

का संकल्प किया। श्री कैनन कहा करते थे कि "स्पीकर सदन की ही कठपुतली है और सदन जब चाहे तब उसके महत्व को गिरा सकता है।"

सदन की समितियाँ—सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण समिति पद्धति द्वारा काम करने की रीति अपनाई जाती है। ऐसी समितियों की संख्या १६ है जिनमें बहुसंख्यक व अल्पसंख्यक दोनों पक्षों के सदस्य होते हैं। ये समितियाँ स्थायी समितियाँ कहलाती हैं। किन्तु इनमें से कुछ ६ या ७ समितियाँ ही उल्लेखनीय हैं। सबसे प्रभावपूर्ण नियोजन विनियोग समिति (Appropriation Committee) और आगम समिति (Ways and Means Committee) ही है। छोटी समितियों की बैठकें मुश्किल से हुआ करती हैं। समितियों का महत्व सदन में विचाराधीन विधेयक या प्रस्ताव पर निर्भर रहता है, जब जैसा विधेयक या प्रस्ताव विचाराधीन होता है उस समय उस विषय से सम्बन्धित समिति महत्वपूर्ण बन जाती है।

विधि निर्माण प्रणाली— कांग्रेस का कोई भी सदस्य अपने सदन में विधेयक (Bill) प्रस्तुत कर सकता है। प्रत्येक विधेयक प्रथम वाचन के पश्चात् रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए उससे सम्बन्धित समिति के सुपुर्द हो जाता है। समिति उसकी परीक्षा व सुधार करना आरम्भ करती है। समिति से लौटने पर पांच सूचियों में से एक में इसका नाम रख दिया जाता है। इनमें पहली सूची जिसका नाम संघ सूची (Union Calendar) है सारे सदन की समिति से सम्बन्ध रखती है। यह समिति उन विधेयकों पर विचार करती है जो आय-व्यय से सम्बन्ध रखते हैं और जिन पर स्थायी समिति के अनुकूल रिपोर्ट होती है। दूसरी सूची सदन सूची (House Calendar) कहलाती है। इसमें वे सार्वजनिक विधेयक होते हैं जिनको संघ सूची में स्थान नहीं मिलता। तीसरी सूची (Calendar of the Committee of the Whole House) होती है जिसमें सब प्राइवेट (Private) विधेयक रखे जाते हैं। चौथी सूची में वे योजनायें होती हैं जो सर्व सम्मति से प्रस्तुत की जाती हैं और पाँचवी सूची में समितियों को दिये हुए आदेश मिलते हैं। इस प्रकार किसी भी सूची में रखे जाने के बाद विधेयक का दूसरा वाचन प्रारम्भ होता है। इस वाचन में सदस्य संशोधन के प्रस्ताव सामने रखते हैं और उन पर अपने विचार प्रकट करते हैं। किसी एक योजना पर कोई सदस्य एक बार बोल सकता है और वह भी एक घंटे से अधिक नहीं। जब कांग्रेस के सत्र (Session) की समाप्ति का समय आता है उस समय कांग्रेस की कार्यवाही का एक मनोरम दृश्य देखने को मिलता है। प्रायः इस समाप्ति से पहले ही काम की बड़ी अधिकता रहती है। पर विरोधी पक्ष भी उस समय अपनी विलम्बकारी चालें चलता है। आखिरी रात को इन चालों का मजा देखने में आता है। सारी रात की बैठक बड़ी असुविधाजनक होती है और प्रायः गणपूरक नहीं रहता। उस समय सदस्य

आकर, धूम्रपान कर, आपस में ठिठोली कर या झगड़ कर जगने का प्रयत्न करते हैं पर व्यवस्थापन कार्य नहीं होने देते। तीसरे वाचन के पश्चात् स्पीकर योजना पर मत लेना आरम्भ करता है। मत देने की तीन रीतियाँ हैं:—

(१) मुखोच्चारण के स्वर से, यदि दूसरे दो ढंग अपनाने की मांग न को जाय तो प्रायः उसी से निर्णय किया जाता है।

(२) सदस्यों को, स्पीकर द्वारा नियुक्त गिनने वाले व्यक्तियों के सामने चलाने से (गणपूरक के पांचवें भाग के बराबर संख्या में सदस्यों से इसकी मांग हो सकती) और

(३) सब सदस्यों का नाम पुकार कर और उनसे 'हाँ' या 'ना' कहलाकर। इसमें बड़ी देर लगती है। विरोधी पक्ष इस ढंग को अड़गा लगाने के लिये प्रयोग कराने का प्रयत्न करता है। उपस्थित सदस्यों के पांचवें भाग से मांग किये जाने पर यह ढंग काम में लाया जाता है।

दोनों सदनों का पारस्परिक विरोध—जब सदन में कोई योजना स्वीकृत हो जाता है, तब वह सीनेट को भेज दी जाती है। यदि सीनेट इसे अस्वीकार कर देती है तो वह वहीं समाप्त हो जाती है। किन्तु यदि सीनेट उसमें सुधार कर सकती है तो यह वापिस प्रतिनिधि सदन के विचारार्थ लौटा दी जाती है। यदि लोक सभा (House of Representatives) अर्थात् प्रतिनिधि सदन इन संशोधनों को अस्वीकार करता है तो इसकी सूचना सीनेट को दे दी जाती है। सीनेट इस सूचना के मिलने पर चाहे तो बराबर संख्या में दोनों सदनों के सदस्यों की कान्फ्रेंस बुलाने की मांग कर सकती है। इन सदस्यों को 'मैनेजर' कहते हैं। इस कान्फ्रेंस में किसी समझौते पर पहुँचने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार जब योजना अन्तिमतः स्वीकार हो जाती है तब उस योजना के विधेयक स्पीकर और सीनेट के सभापति के हस्ताक्षर होने के लिये प्रस्तुत किया जाता है। हस्ताक्षर होने पर यह प्रेसीडेण्ट के पास भेज दिया जाता है। यदि प्रेसीडेण्ट उसमें सहमत होता है तो वह उस पर सम्मतिसूचक हस्ताक्षर कर देता है और वह विधेयक अधिनियम (Law) बन जाता है किन्तु यदि प्रेसीडेण्ट उसमें सहमत नहीं होता तो वह विरुद्ध युक्तियाँ देकर उसे उसी सदन को लौटा देता है जिसमें वह विधेयक प्रारम्भ हुआ था। इस प्रकार लौटाये जाने पर यदि पृथक पृथक दोनों सदन दो तिहाई मताधिक्य से उसे पास कर दें तो वह विधेयक प्रेसीडेण्ट की असम्मति होने के बावजूद अधिनियम बन जाता है। यदि प्रेसीडेण्ट किसी विधेयक पर दस दिन के भीतर हस्ताक्षर नहीं करता या प्रतिवाद करके नहीं लौटाता तो वह विधेयक आप अधिनियम बन जाता है किन्तु कांग्रेस के सत्र के अन्तिम दस दिनों में जो विधेयक प्रेसीडेण्ट के पास पहुँचते हैं वे तभी अधिनियम बन सकते हैं जब प्रेसीडेण्ट उन पर

अपने हस्ताक्षर कर देता है। इस प्रकार इन विधेयकों को प्रेसीडेण्ट हस्ताक्षर न कर अपनी जेब में रखकर चुपचाप रहने से ही रद्द कर सकता है। अधिनियम बन जाने के बाद प्रत्येक विधेयक, सेक्रेटरी आफ स्टेट के दफ्तर में जमा हो जाता है।

सब मुद्रा-विधेयक प्रतिनिधि सदन में प्रारम्भ होते हैं। सीनेट को उसमें संशोधन करने का अधिकार अवश्य है। प्रेसीडेण्ट के चुनाव के अन्तिम दिन तक यदि किसी उम्मीदवार को आवश्यक मताधिक्य प्राप्त नहीं होता तो प्रतिनिधि सदन ही किसी व्यक्ति को प्रेसीडेण्ट चुनता है।

दूसरा सदन—अमेरिकन संघ विधानमण्डल का दूसरा सदन सीनेट कहलाता है। यह उपराज्यों का प्रतिनिधित्व करता है। उपराज्यों की समानता इसे मान्य है क्योंकि प्रत्येक उपराज्य को इस में दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। विधान की रचना होते समय उन लोगों ने जो उपराज्यों के अधिकारों के समर्थक थे यह जोर दिया कि सब उपराज्यों को इकाई रूप में समान समझा जाय। उनकी यह माँग पारस्परिक मेल और प्रेम-भाव बनाये रखने के हेतु स्वीकार कर ली गई थी। 'दी फेडरलिस्ट' नामक ग्रन्थ के रचयिता का यह कहना ठीक ही है कि प्रत्येक उपराज्य को एक वोट (मत) देना उनकी अवशिष्ट सत्ता को वैधानिक मान्यता प्रदान करता है और साथ साथ उस अवशिष्ट सत्ता की रक्षा करने के हेतु वह एक अस्त्र भी है।"[1] आगे चलकर वे फिर कहते हैं कि अनुचित अधिनियमों के बनने में एक और रुकावट डाली गई है हालांकि वे यह मानते हैं कि ऐसी पेचदार रुकावट हानिकारक भी सिद्ध हो सकती है और लाभदायक भी। प्रारम्भ में यह निर्णय हुआ था कि सीनेट के सदस्यों को उपराज्यों की विधानमण्डल पृथक्-पृथक् चुना करेंगे किन्तु १७ वें संशोधन में इसमें कुछ परिवर्तन हो गया है और अब इन सदस्यों का चुनाव उपराज्यों की जनता स्वयं करती है। जब स्थायी रूप से किसी सदस्य का स्थान रिक्त हो जाता है तो उपराज्यों की सरकार निर्वाचन होने समय तक के लिए उस स्थान को अपने मनोनीत व्यक्ति से भर सकती है।

सीनेट के सदस्यों की योग्यतायें—सीनेट के उम्मीदवार को ३० वर्ष की आयु का होना चाहिये। वह संयुक्त-राज्य का ९ वर्ष नागरिक रह चुका हो और निर्वाचन के समय उस राज्य में रहता हो जहाँ से वह निर्वाचित हुआ है। विधान-मंडल के अधिक संख्या वाले सदन के निर्वाचन में जो लोग मत देने के अधिकारी होते हैं वे ही इन सीनेट के सदस्यों के निर्वाचन में भाग ले सकते हैं।

---

१ फेडरलिस्ट, अध्याय ६२।

सीनेट के सदस्यों को प्राप्त सुविधायें—प्रारम्भ में जब संघ में केवल १३ ही उपराज्य थे सीनेट के सदस्यों की संख्या २६ थी किन्तु उपराज्य की संख्या के बढ़ने से सीनेट के सदस्यों की संख्या भी बढ़ती गई और इस समय ५० उपराज्यों से १०० सीनेट के सदस्य चुने जाते हैं। सीनेट के सदस्य ६ वर्ष तक सदस्य बने रहते हैं। प्रति दो वर्ष बाद एक-तिहाई सदस्य हट जाते है। अतएव सीनेट सर्वदा जीवित रहती है। सीनेट के सदस्यों को प्रतिनिधियों के समान ही १२,५०० डालर का पारिश्रमिक मिलता है। उनको प्रतिनिधियों के समान ही बोलने की स्वतन्त्रता और पकड़े जाने से मुक्ति मिलती रहती है। वे धन कमाने के लिये किसी सरकारी विभाग (Executive Department) में केवल वह ग्रासन नहीं कर सकते जिसका वेतन उस समय बढ़ाया गया हो जब वे सीनेट के सदस्य थे।[1] यदि कोई सीनेटर (सीनेट का सदस्य) ऐसे किसी सरकारी पद को स्वीकार कर लेता है तो उसे घटे हुये वेतन पर काम करना पड़ता है।

सभापति—संयुक्त-राज्य का उपराष्ट्रपति (Vice President) अर्थात् उपाध्यक्ष जिसको सारी जनता चुनती है सीनेट का सभापति होता है। किन्तु निर्णायक मत (Casting Vote) देने के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकार या शक्ति उसे नहीं होती। उपाध्यक्ष की अनुपस्थिति में सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये सीनेट आपस में से ही किसी सदस्य को अनुपस्थिति भर के समय के लिए सभापति चुन लेती है। यह अस्थायी सभापति (President Pro Tempore) उपाध्यक्ष के बराबर ही वेतन पाता है क्योंकि एक बार में किसी उपराज्य से दो में से केवल एक सीनेटर ही नया चुना जा सकता है, शपथ लेते समय पूर्व सीनेटर नये सीनेटर को उपाध्यक्ष की मेज के पास ले जाता है। कभी कभी पूर्व सीनेटर और नव सीनेटर में बड़ा वैर-भाव रहता है, वैयक्तिक और राजनैतिक भी, जिससे वे आपस में एक दूसरे का अभिवादन भी नहीं करते।

सीनेट की शक्तियाँ—सीनेट की शक्तियाँ बड़ी विस्तृत हैं। यह प्रतिनिधि सदन से अधिक शक्तिशाली है। सीनेट विधायिनी, कार्यकारी व न्यायिक तीनों प्रकार की सत्ता का उपभोग करती है। विधायक सदन की स्थिति में यह प्रतिनिधि-सदन के बराबर ही शक्तिशाली है। अन्तर केवल इतना ही है कि मुद्रा-विधेयक प्रतिनिधि-सदन में ही प्रारम्भ होता है, सीनेट में नहीं हो सकता। कार्यकारी क्षेत्र (Executive sphere) में प्रेसीडेंट जिन समझौते व सन्धियों को करता है वे सीनेट के दो-तिहाई मताधिक्य से स्वीकृत होनी चाहिये। सीनेट ने जो सबसे महत्वपूर्ण सन्धियाँ अनुसमर्थित

[1] दी अमरीकन गवर्नमेन्ट पृ० ३२१।

(Ratified) की और जिनमे संसार का ध्यान आकर्षित हुआ वे थी जो अस्त्र-परिसीमन कार्फेस के परिणामस्वरूप हुई। चतुर्गवित सन्धि (Four Power Pact) भी ऐसी ही संधि थी जिसका सीनेट ने अनुसमर्थन किया। सीनेट ने प्रेसीडेंट विलसन के उस प्रस्ताव को रद्द कर दिया था कि अमरीका के राष्ट्र-संघ (League of Nations) की सदस्यता स्वीकार कर ले और उस विशेष अवसर पर सीनेट ने अपनी कार्यकारिणी सत्ता का प्रेसीडेंट के विरुद्ध प्रदर्शन किया। जिन संघ सरकार के अफसरों को प्रेसीडेन्ट नियुक्त करता है उनकी नियुक्ति में सीनेट की सम्मति लेना आवश्यक है। प्रयोग में होता यह है कि प्रेसीडेंट जिस उपराज्य (State) के व्यक्ति की नियुक्ति करता है, उसके सीनेटीय सदस्यों (Senators) से सम्मति लेता है और उसी के अनुसार नियुक्ति का प्रस्ताव सीनेट में पेश करता है। सीनेट यह जान कर कि जिन सदस्यों से प्रेसीडेंट ने सलाह की थी, उक्त व्यक्ति की नियुक्ति चाहते हैं तो वह अपनी स्वीकृति दे देती है और कोई आपत्ति नहीं करता। इसी अभिसमय (Convention) को सीनेटीय विनय (Senatorial Courtesy) कहते हैं। इन कार्यकारी शक्तियों को सीनेट में विहित करने को ठीक ठहराते हुए ब्राइस ने कहा है, "वैदेशिक नीति का परिचालन व नियुक्ति करने का अधिकार ऐसे प्रेसीडेंट के सुपुर्द करना खतरे से खाली न होगा जो चार वर्ष तक अपने पद से हटाया नहीं जा सकता, जिसके मन्त्री विधानमंडल में नहीं बैठते और उसके उत्तरदायी नहीं होते। न ये शक्तियाँ ऐसी अल्पजीवी और बहुसंख्यक संस्था को सुपुर्द की जा सकती थी जैसा कि प्रतिनिधि-सदन है जो राष्ट्र को पर्याप्त रूप से उत्तरदायी नहीं बना सकता और जो अपनी कड़ी कार्य नियमावली के कारण विधेयकों पर व दूसरी समस्याओं पर इतनी अच्छी तरह वाद-विवाद नहीं कर सकता जिससे जनता व देश को उनका स्पष्ट ज्ञान हो जाय।"[1] न्यायिक सत्ताधारी होने के नाते सीनेट न्यायालय (Judicial power) के रूप में संघ सरकार के अफसरों पर लगाये हुए अभियोगों की जाँच करती है। सर्वोच्च न्यायालय के प्रमुख न्यायाधीश पर व अन्य न्यायाधीशों पर लगाये गए अभियोगों की जाँच भी सीनेट ही करती है। अब तक सीनेट ने ऐसे नौ अभियोगों की जाँच की है जिसमें प्रेसीडेंट एंड्रू जानसन (Andrew Johnson) और न्यायाधीश सैमुअल चेज़ (Samuel Chase) के अभियोग भी शामिल हैं। ये दोनों जाँच के पश्चात मुक्त कर दिये गये। जार्ज वाशिंगटन ने एक बार सीनेट को वह तश्तरी बताया था जिसमें प्रतिनिधि सदन में पकाई हुई चाय ठंडी होती है।

सीनेट सबसे शक्तिशाली दूसरा सदन है—सीनेट की उपरोक्त शक्तियों के कारण कुछ लोग अमेरिकन सीनेट को दुनिया का सबसे शक्तिशाली ऊपरी सदन बताते

१ मोडर्न डैमोक्रेसीज, पुस्तक २, पृ० ६६।

हैं क्योंकि सीनेट को उन बहुत-सी बातों के करने का अधिकार है जो न हाऊस ऑफ लार्ड्स (House of Lords) कर सकता है न फ्रांस की सीनेट या स्विस-सीनेट कर सकती है। अमेरिका की सीनेट की शक्ति और प्रभाव का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार किया जाता है, "कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें प्रेसीडेंट और सीनेट बिना प्रतिनिधि-सदन की सम्मति से कर सकते हैं या प्रतिनिधि-सदन व सीनेट प्रेसीडेंट की सम्मति के बिना कर सकते हैं किन्तु वे बातें अपेक्षाकृत बहुत थोड़ी हैं जिन्हें प्रेसीडेंट और प्रतिनिधि-सदन बिना सीनेट की सम्मति के कर सकते हैं।"[1] सीनेट की उपयोगिता का वर्णन करते हुए राजनीतिज्ञ ब्राइस ने लिखा है, "यह प्रतिनिधि सदन से अधिक परिवर्तन विरोधी नहीं है, इसमें २० वर्ष पहले की अपेक्षा धनी व्यक्तियों की संख्या कम है और अब इसे धनी वर्ग से सहानुभूति नहीं रह गई है। इसके सदस्यों की संख्या कम होने के कारण जहाँ योग्य व्यक्तियों को इसमें आदर अपनी सामर्थ्य व योग्यता दिखाने व ख्याति प्राप्त करने का अधिक अवसर मिलता है, वहाँ यह सरकार के शासन-यंत्र के परिचालन में स्थिरता भी लाती है। क्योंकि इसके अधिकतर सदस्य चार या छः वर्ष तक अपने स्थानों पर सुरक्षित रहने से लोक-आवेगों से जल्दी ही चंचल नहीं होते इसमें चाहे कुछ भी दोष हो किन्तु इसका अस्तित्व अपरिहार्य है।"[2]

यह बात निस्सन्देह है कि सीनेट ने कई राष्ट्रनेताओं को जन्म दिया है। संयुक्त राज्य अमेरिका के कई व्यक्ति प्रेसीडेंट होने से पूर्व सीनेट में सदस्य रह चुके थे। इनमें मुनरो, जैक्सन, हैरीसन, पियर्स, हार्डिंग के नाम उल्लेखनीय हैं।

सीनेट अपनी कार्यप्रणाली स्वयं निर्धारित करती है—अपना कार्य करने के लिए सीनेट ने स्वयं अपने नियम बना रखे हैं। विभिन्न प्रस्तावों व विधेयकों पर विचार करने के लिए सीनेट की स्थायी समितियाँ हैं जिनकी संख्या १५ है। प्रत्येक समिति में बहुमतदल पक्ष के ही लोग अधिक संख्या में रहते हैं। कौन व्यक्ति सदस्य बनाए जायेंगे यह प्रत्येक पक्ष की गुप्त समिति (Caucus) निश्चित करती है। सीनेट का सदस्य जितनी देर चाहे सीनेट में भाषण कर सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका की सीनेट ही दुनिया में ऐसा विधानमंडल है, जहाँ वाक्‌स्वतंत्रता पर कुछ भी रोक नहीं है। सीनेटर जब एक बार भाषण देने खड़ा हो जाता है तो वह जब तक बोलना चाहे बोल सकता है। वह दूसरे सीनेटर को अपनी वक्तृता में हाथ बटाने दे सकता है और उसकी वक्तृता समाप्त होने के पश्चात् वह फिर अपनी वक्तृता जारी रख सकता है। कभी कभी चमड़े जैसे मजबूत फेफड़े वाले सीनेटरों ने इस अधिकार का

---

१ दी अमरीकन गवर्नमेंट पृ० ३१७।

२ मौडर्न डेमोक्रेसीज, पुस्तक २, पृ० ६६।

ऐसा उपयोग किया है कि सबकी समाप्ति के समय जिस योजना पर बोलना आरम्भ किया उस पर इतनी देर तक बोले की सत्रावसान होने से वह योजना वहीं समाप्त हो गई।[1] जब कोई सीनेटर किसी योजना के विरुद्ध होता है तो वह इसी अधिकार का प्रयोग कर उसे समाप्त कर देता है। अल्पसंख्यक पक्ष प्रायः यही तरीका काम में लाता है। इसको फिलीबस्टर (Filibuster) कहते हैं। एक समय सीनेटर स्मूट जो ऊटा (Utah) उपराज्य का प्रतिनिधि था, बिना अपनी मेज से हटे ही सारी रात बोलता रहा। एक दूसरे अवसर पर टैक्सास का सीनेटर शर्फर्ड राष्ट्र-संघ (League of Nations) के कार्य का निरीक्षण करते हुए ६ घन्टे और ५० मिनट तक बोलता रहा और "इतने समय तक वह न बैठा, न आराम किया, यहाँ तक कि पानी तक न पिया।"[2] सन् १६०८ में विसकोंसिन के सीनेटर ला फौलिटि और दूसरे सीनेटरों ने एल्डरिच मुद्रा सम्बन्धी विधेयक (Currency Bill) का ऐसा विरोध किया कि सीनेट की बैठक २६ मई की दोपहर को आरम्भ होने के पश्चात् ३० घन्टे तक चलती रही। वाक्-स्वातन्त्र्य के इस दुरुपयोग के होते हुए भी (यदि हम इसे दुरुपयोग कहें) सीनेट ने इस नियम को अभी तक बदलने का प्रयत्न नहीं किया है और इस अधिकार को अक्षुण्ण रखा है। साधारणतया सीनेट की बैठकों में दर्शकों के लिए कोई बाधा नहीं होती। किन्तु प्रायः महत्वपूर्ण शासन कार्य होने पर गुप्त बैठकें भी होती हैं जिनमें सामान्य जनता को जाने की आज्ञा नहीं होती।

सीनेट में बीते हुए दिनों के स्मृति चिह्न अभी तक रहते आ रहे हैं। बहुत दिनों पहले सीनेटरों ने जो मेजें काम में लाई थीं उन्हें कुछ सीनेटर अब भी गर्व के साथ प्रयोग में लाते हैं। उन दिनों में सभापति की मेज पर सूंघनी की डिबिया रखी जाया करती थी वह डिबिया अब भी वैसे ही रखी जाती है हालांकि उसे अब कोई काम में नहीं लाता। इसी तरह पहले स्याही सुखाने वाले कागज का आविष्कार न होने से रेत की डिबिया सीनेटरों की मेजों पर रखी जाती थी। ये अब भी उसी तरह वहाँ रखी मिलेंगी। यद्यपि वे अब प्रयोग में नहीं लाई जातीं।

सीनेट में एक और अद्भुत प्रथा प्रचलित है, वह यह है कि सीनेटर को आज्ञा माँगने का अधिकार है कि उसकी लिखी हुई वक्तृता जिसका एक शब्द भी सीनेट में न पढ़ा गया हो कांग्रेस के आलेखों में इस रूप में शामिल कर दी जाय मानो वह सीनेट में पढ़ी गई हो। कुछ सीनेटर को इस लिखित पर न बोली हुई वक्तृता में प्रशंसासूचक क्षेपकों तक को उस जगह लिख देते हैं जहाँ वे समझते हैं कि श्रोता यदि वक्तृता को

---

१ फार्म एण्ड फंक्शन्स आफ अमेरिकन गवर्नमेंट, पृ० २६४-२६५।

२ दी अमेरिकन गवर्नमेंट, पृ० ३२४।

सुनते तो करतलध्वनि आदि में प्रशंसा करते, जिससे वह वक्तृता वास्तव में बोली हुई प्रतीत होने लगती है। दुनिया में किसी और देश के विधानमंडल में ऐसी प्रथा प्रचलित नहीं मिलेगी। ऐसी लिखित वक्तृता यदि लेख के रूप में किसी समाचार पत्र या पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी होती है तो वह सीनेट के आलेख में शामिल नहीं की जा सकती है। सन् १९२६ के फरवरी मास में सीनेटर मकेलर (Mckeller) ने यह चाहा कि विश्व-युद्ध ऋण समझौते पर लिखा उनका लेख, आलेख में शामिल कर लिया जाय। सभापति ने इस पर आपत्ति की और प्रश्न किया कि क्या सीनेटर ने स्वयं इस लेख को लिखा है? सीनेटर ने उत्तर में कहा कि यह सही है कि लेख उसने ही लिखा है; इस पर सभापति ने कहा कि 'अतएव सीनेट के नियमों के अनुसार सभापति की समझ में यह आता है कि सीनेटर के बिना पढ़े हुये इसे छापा नहीं जा सकता।'"[1]

काँग्रेस का प्रभाव—राजनीतिज्ञ ब्राइस ने काँग्रेस के महत्व के बारे में यह संक्षिप्त वर्णन दिया है। "यह वह उपद्रवकारी व जल्दबाज सभा सिद्ध नहीं हुई जिसका संविधान निर्माताओं को भय बना हुआ था। इसमें आवेगों की आँधी बहुत कम उठती है। उपद्रव आदि के दृश्य तो देखने में ही नहीं आते। राजनीतिक दलों का अनुशासन कठोर रहता है। मित्रता का वातावरण सदा बना रहता है, कार्य प्रणाली का अनादर नहीं हो जाता और इने गिने व्यक्तियों के हाथ में शक्ति रहती है। यह अनावश्यक रूप में निर्बाधक और विशेषकर विभिन्न राजनीतिक दलों की इच्छाओं को जानने व उन्हें पूरा करने को उत्सुक रहती है।"[2] इस कथन के होते हुए भी यह सच है कि प्रखर बुद्धि वाले व्यक्ति काँग्रेस में निर्वाचित होने को उत्सुक नहीं रहते। इसका एक विशेष कारण यह है कि अमेरिका में ऐसे व्यक्तियों के लिये दूसरे अधिक आकर्षक कार्य क्षेत्र खुले हैं जहाँ वे अपनी प्रतिभा का उपयोग कर सकते हैं। व्यापारिक जितने विभिन्न मार्ग अमेरिका में हैं, शायद और किसी देश में नहीं मिलेंगे जिसमें महत्वाकांक्षी सामर्थ्यवान व्यक्ति अपना अभिव्यक्ति कर सकते हैं। प्रचुर धन राशि लाने वाले औद्योगिक संस्थान, अच्छा वेतन देने वाला वकालत का कार्य व विश्व-विद्यालयों के ऊँचे पद जहाँ युवकों का मार्ग दिन-रात नहीं खुला रहता, जनता का श्रेय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को ख्याति प्राप्त होती है, जो अनवधान प्रबंध कतिपय साधन प्रतिभाशाली व्यक्तियों के लिए प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

---

१ दी अमरीकन गवर्नमेंट

२ मोडर्न डेमाक्रेसीज, पु० २, पृ० ६७।

अध्याय १८

अमरीकी संघ की कार्यपालिका

संयुक्त राज्य का प्रेसीडेंट राजा से अधिक और न्यून दोनों ही है, वह प्रधान मंत्री से अधिक और न्यून दोनों ही है। जितना ही अधिक उसके पद का अध्ययन किया जावे, उतना ही अधिक वह विचित्र दिखाई देता है। —हेरल्ड जे० लास्की

लास्की के ये शब्द ठीक ही जचते हैं। इगलैंड के राजा का वर्तमान पद और शक्तियां कई शताब्दियों के विकास का फल है। जैसे जैसे राजा की वास्तविक शक्ति घटती गई, प्रधान मंत्री के अधिकार बढ़ते गये। अमेरिका का प्रेसीडेंट इन दोनों के कुछ सदृश्य और फिर भी भिन्न है।

यद्यपि फिलैडेल्फिया सम्मेलन (Philadelphia Convention) में एकत्रित संविधान-निर्माता इगलैंड की शासन प्रणाली से भली-भांति परिचित थे फिर भी उन्होंने संविधान बनाने में अंग्रेजी सिद्धान्तों को पूर्णतया ग्रहण न कर कई महत्वपूर्ण नवीन सिद्धान्त अपने संविधान में अपनाये। इनमें विशेषतया कार्यपालिका की रचना, उसकी अवधि, उसके अधिकार और शक्तियां तथा विधान मंडल से उसका सम्बन्ध उल्लेखनीय है। इगलैंड में संसदात्मक कार्यपालिका (Parliamentary Executive) है जो संसद के प्रति उत्तरदायी है। अमरीकी संविधान निर्माताओं ने एक नवीन प्रकार की कार्यपालिका अपनाई, जिसे अध्यक्षात्मक कार्यपालिका (Presidential Executive) कहा जाता है। इन दोनों प्रकार की कार्यपालिकाओं की परिभाषा और तुलना इस पुस्तक के तृतीय अध्याय में की जा चुकी है।

प्रेसीडेन्ट ही कार्यपालिका सत्ताधारी है—संविधान के द्वितीय अनुच्छेद में लिखा हुआ है कि "कार्यपालिका शक्ति संयुक्त राज्य अमरीका के प्रेसीडेंट में विहित रहेगी। वह चार वर्ष तक अपने पद पर स्थित रहेगा। दिन प्रतिदिन के व्यवहार में शासन विभागों के अध्यक्ष ही शासन कार्य करते है। कांग्रेस इन शासन विभागों को जन्म देती है और उन पर अपना नियन्त्रण रखती है, किन्तु अध्यक्षों की नियुक्ति प्रेसीडेंट ही सीनेट की अनुमति से करता है।

प्रेसीडेन्ट पद के लिये योग्यताएँ (अर्हताएँ)— प्रेसीडेंट पद के अभ्यर्थी (Candidate) में कुछ अर्हताएं (Qualifications) होना आवश्यक है।

के संविधान के अनुच्छेद २ के पैरा ५ में वर्णित है। इसमें लिखा है कि "कोई भी व्यक्ति जो इस संविधान के अंगीकार होने के समय संयुक्त राज्य अमरीका का नागरिक नहीं है, प्रेसीडेंट के पद का पात्र न होगा, और न वह व्यक्ति पात्र होगा जिसकी आयु ३५ वर्ष की न होगी और जो १४ वर्ष तक संयुक्त राज्य अमरीका का निवासी न रह चुका हो।" इन योग्यताओं के अतिरिक्त इस पद के लिये अभ्यर्थी देखते समय राजनीतिक पक्ष उन व्यक्ति को ही छाँटते है जो अधिक से अधिक मतदाताओं को अपने पक्ष में करने म सफल हो सकता हो। इसलिये यह अभ्यर्थी ऐसा होना चाहिए जो सामाजिक जीवन के किसी क्षेत्र म सफल कार्यकर्ता सिद्ध हुआ हो, चाहे कांग्रेस म, किसी उपराज्य के गवर्नर के पद पर, किसी बडे नगर के मेयर (Mayor) के पद पर, मंत्रिपद पर समान् राजदूत या न्यायधीश के पद पर या वह एक असाधारण ख्याति प्राप्त पत्रकार रहा हो।"[1] अधिकतर सीनेट के सदस्य प्रेसीडेंट निर्वाचित हुए है। उप-प्रेसीडेंट के लिये भी ये ही योग्यताएँ आवश्यक है।

प्रेसीडेन्ट के पद की अवधि—एक प्रेसीडेन्ट का कार्यकाल ४ वर्ष है। संविधान में एक ही व्यक्ति के पुनर्निर्वाचन के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया है। किन्तु संयुक्त-राज्य के प्रथम प्रेसीडेन्ट जार्ज वाशिंगटन तथा टोमस जेफरसन ने यह प्रथा चला दी थी कि *एक ही व्यक्ति का प्रेसीडेंट के पद के लिये एक बार ही पुनर्निर्वाचित हो सकता है।* सन् १६४० तक कोई भी व्यक्ति लगातार दो बार प्रेसीडेन्ट न चुना गया था। सन् १८७५ म जनरल ग्रांट तीसरी बार चुने जाने के लिये कुछ कुछ इच्छुक था परन्तु प्रतिनिधि-सदन मे निम्नलिखित प्रस्ताव पास करके उस इच्छा की जड ही खोद दी, "इस सभा की समझ मे प्रेसीडेन्ट वाशिंगटन व अन्य संयुक्त-राज्य के प्रेसीडेन्टो ने प्रेसीडेन्ट के पद से दूसरे कार्यकाल के पश्चात् अवकाश लेने का जो उदाहरण रखा था वह सर्वमान्य होकर हमारी प्रजातन्त्र शासन प्रणाली का ऐसा अंग बन चुका है कि इस चिरकाल सम्मानित प्रथा के प्रतिकूल चलना अविवेक पूर्ण, देश प्रेम के विरुद्ध और हमारी स्वतन्त्र संस्थाओं के लिये भयपूर्ण होगा।" थियोडोर रूजवेल्ट (Theodore Roosevelt) लगातार तीसरी बार निर्वाचन के लिये खड़ा हुआ किन्तु उसके प्रतिद्वन्दी उम्मेदवार ने उसको निर्वाचन म सफल न होने दिया। किन्तु सन् १६४० मे फ्रैंकलिन रूजवेल्ट (Franklin D. Roosevelt) जिसका कार्यकाल सन् १६४१ मे समाप्त हो रहा था यूरोपियन युद्ध-जनित विपत्ति-पूर्ण अन्तः-राष्ट्रीय स्थिति के कारण तीसरी बार प्रेसीडेंट निर्वाचित हो गया और सन् १६४४ म वह चौथी बार निर्वाचित हुआ क्योकि दूसरा महासमर समाप्त नहीं हुआ था और

---

१ मोडर्न डेमोक्रेसीज, पुस्तक २ पृष्ठ ७३

अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति गम्भीर और जटिल थी। अब २७ फरवरी १९५१ के संविधान संशोधन अनुच्छेद २२ से यह निश्चित कर दिया गया है कि कोई भी व्यक्ति संयुक्तराज्य अमेरिका का राष्ट्रपति दो बार से अधिक नहीं हो सकता। इस प्रकार प्रचलित प्रथा पर आघात लगा, प्रेसीडेंटका कार्यकाल ३६६ दिन वाले वर्ष के पश्चात् आने वाले वर्ष का २० जनवरी की दोपहर को समाप्त होता है। यह दिनांक शासन-विधान के १८ वें संशोधन में निश्चित हुआ था जो १५ अक्टूबर १९३३ को लागू हुआ था।

निर्वाचन कैसे होता है—प्रेसीडेण्ट का निर्वाचन सीधे जनता नहीं करती किन्तु प्रेसीडेण्ट-निर्वाचक करते हैं। इन प्रेसीडेण्ट-निर्वाचकों को ३६६ दिन वाले वर्ष के दिसम्बर मास में प्रथम सोमवार के बाद आने वाले मंगलवार के दिन जनता स्वयं चुनती है। किन्तु प्रेसीडेण्ट के चुनाव की लड़ाई पाँच या छ. मास पूर्व मई या जून से ही आरम्भ हो जाती है। दुनिया में यह सबसे बड़ी राजनैतिक लड़ाई समझी जाती है। फिर भी "अमरीकन राजकीय जीवन की यह विशेषता है कि पूर्व शासक के शासन छोड़ने और नये शासक के शासनारूढ होने से अशान्ति की एक लहर भी नहीं उठती।" इसका कारण यह है कि अमरीकन जनता शलाका की सन्दूक (Ballot Box) की विजय को शान्तिपूर्वक शिरोधार्य कर लेती है।

प्रेसीडेन्ट-निर्वाचक का चुनाव—प्रेसीडेण्ट निर्वाचकों के चुनाव की तिथि से कुछ मास पूर्व राजनैतिक पक्ष सारे देश में अपना प्रचार आरम्भ कर देते हैं। वे गत ग्रीष्म ऋतु में प्रेसीडेण्ट व उप-प्रेसीडेण्ट के पदों के लिये अपने अपने उम्मीदवार निश्चित कर चुके होते हैं। नवम्बर मास में प्रथम सोमवार के बाद आने वाले मंगलवार के दिन सब मतधारक व्यक्ति अपने अपने उपराज्य में एकत्रित होकर इन निर्वाचकों के चुनाव के लिये अपना मत देते हैं। इस निर्वाचन में उम्मीदवारों की योग्यता पर कुछ ध्यान नहीं दिया जाता केवल उनका किस पक्ष से सम्बन्ध है इसी का ध्यान रखा जाता है। मतधारक अपने अपने झुकाव के अनुकूल रिपब्लिकन (Republican) या डेमोक्रेट (Democrat) पक्ष के उम्मीदवारों को निर्वाचक बनाने के लिये अपना मत देते हैं किसी उपराज्य से चुने जाने वाले प्रेसीडेन्ट निर्वाचकों की संख्या उस उपराज्य के प्रतिनिधि-सदन में बैठने वाले निवासी व सीनेट में भेजे हुये प्रतिनिधियों (सीनेटरों) की संख्या के योग के बराबर होती है।

प्रेसीडेन्ट और उप-प्रेसीडेन्ट का निर्वाचन—ये प्रेसीडेण्ट-निर्वाचक दिसम्बर मास के दूसरे बुद्धवार के बाद आने वाले सोमवार के दिन अपने अपने उप-राज्य की राजधानी में एकत्रित होकर प्रेसीडेण्ट व उप-प्रेसीडेण्ट चुनने के लिये अपना मत देते हैं। इसलिये निर्वाचन के परिणाम के सम्बन्ध में तीन प्रमाण-पत्र

तैयार किये जाते हैं, एक जिले के न्यायालय में रख दिया जाता है, दूसरा सीनेट के प्रेसीडेण्ट को डाक से भेज दिया जाता है और तीसरा उसी को पत्रवाहक के द्वारा भेजा जाता है। इसके बाद ६ जनवरी को सीनेट व प्रतिनिधि-सदन की संयुक्त बैठक में कांग्रेस का अधिवेशन होता है। सीनेट का सभापति उन प्रमाणपत्रों को खोलता है। तब दोनों सदनों से दो दो व्यक्ति इन्हें गिनने के लिए नियुक्त किये जाते हैं। जो उम्मीदवार मत्र प्रेसीडेण्ट निर्वाचकों का मताधिक्य प्राप्त करते हैं वे प्रेसीडेण्ट और उप-प्रेसीडेण्ट घोषित कर दिए जाते हैं। इन निर्वाचकों की संख्या ५३१ है इसलिए जिस प्रेसीडेण्ट पद के उम्मीदवार को या उप-प्रेसीडेण्ट के उम्मीदवार को २६६ या अधिक मत मिल जाते हैं, वह प्रेसीडेण्ट या उप-प्रेसीडेण्ट चुन लिया जाता है किन्तु यदि इतने मत पाने वाला कोई उम्मीदवार न हो तो प्रथम अधिकतम मत पाने वाले उम्मीदवार में से प्रतिनिधि-सदन एक को प्रेसीडेण्ट चुन लेता है। इसी प्रकार सीनेट उप-प्रेसीडेण्ट को चुनती है। इस चुनाव में उपराज्य के सब प्रतिनिधियों को एक ही मत देने का अधिकार होता है और जो उम्मेदवार बहुसंख्यक उपराज्यों के मत प्राप्त करता है वह प्रेसीडेण्ट चुन लिया जाता है। यदि प्रतिनिधि-सदन ४ मार्च तक किसी को प्रेसीडेण्ट नहीं चुन पाता तो पूर्व उप-प्रेसीडेण्ट अपने आप प्रेसीडेण्ट बन जाता है और जो उप-प्रेसीडेण्ट के पद का उम्मीदवार इस पद के चुनाव में अधिकतम मत प्राप्त कर वह सीनेट द्वारा उप-प्रेसीडेण्ट घोषित कर दिया जाता है।

इस प्रणाली से यह स्पष्ट है कि प्रेसीडेण्ट या उप-प्रेसीडेण्ट (अथवा अध्यक्ष या उपाध्यक्ष) के चुनाव के लिए प्रेसीडेण्ट-निर्वाचकों का मताधिक्य ही आवश्यक है, प्रजा के प्राथमिक मतदाताओं का मताधिक्य होना आवश्यक नहीं है। सन् १८७६ में हेज (Hayes) और सन् १८८८ में हैरिसन (Harrison) प्रेसीडेण्ट निर्वाचकों के बहुमत से चुने गये थे किन्तु उनके विरोधी टिल्डेन और क्लीवलैंड को प्रजा का बहुमत प्राप्त था। प्राथमिक मतदाताओं ने अधिक संख्या में इनको चुनना चाहा था किन्तु प्रेसीडेण्ट-निर्वाचकों की अधिक संख्या ने हेज और हैरीसन को पसन्द किया। प्रेसीडेण्ट की मृत्यु होने पर उसके पदत्याग करने पर या हटाए जाने पर उप-प्रेसीडेण्ट (उपाध्यक्ष) अपने आप प्रेसीडेण्ट बन जाता है। यदि ऐसे अवसर पर उप-प्रेसीडेण्ट भी इस योग्य न हो कि प्रेसीडेण्ट बना दिया जाय, उसके पद-त्याग करने से, मृत्यु होने से, अस्वस्थ या हटाए जाने से, तो सक्रेटरी आफ स्टेट (Secretary of State) अन्तरिम प्रेसीडेण्ट बन जाता है। यदि वह यह कार्यभार नहीं ले सकता तो युद्ध-सैक्रेटरी प्रेसीडेण्ट का पद ग्रहण करता है। इसी क्रम से एटोरनी जनरल (Attorney General) अर्थात् महान्यायवादी, पोस्टमास्टर जनरल, नौसेना-सेक्रेटरी, गृह सक्रेटरी जिसमें भी पद के लिए आवश्यक योग्यताएँ हों। आवश्यकता पड़ने पर पद के लिए नियुक्त होते

है "[१] । परन्तु जब प्रेसीडेंट रूजवेल्ट (Rosevelt) की १६४५ मे अचानक मृत्यु हो जाने पर उप-प्रेसीडेंट ट्रूमेन (Truman) उत्तराधिकारी प्रेसीडेंट हुए तो उन्होने यह समझ कर कि तत्कालीन सेक्रेटरी आफ स्टेट एडवर्ड आर० स्टेटीनियस, जुनियर, (Edward R. Stettinius, Jr.) को राजनीतिक अनुभव नही है, अपने राज्य के दशा के सदेशो मे (Messages on the State of the Uuion) अप्रैल १६४५ तथा जनवरी १६४६ मे यह सिफारिश की कि पद के उत्तिराधिकार क्रम मे परिवर्तन किया जावे । अत. १६४७ मे एक नया अधिनियम बनाया गया जिसमे यह स्पष्ट किया गया कि प्रेसीडेंट और उप-प्रेसीडेंट के पद के कर्तव्य पालन मे कोई असमर्थता हो तो प्रेसीडट पद के लिये उत्तराधिकारी निम्न क्रम मे होगे : प्रतिनिधि सदन का स्पीकर, सीनेट का प्रेसीडेंट-प्रोटेम्पोर, राज्य विभागो के अध्यक्ष (१८८६ के अधिनियम के क्रमानुसार) और सेक्रेटरी आफ कृषि, व्यापार तथा श्रम । परन्तु यदि प्रेसीडेंट के जीवित रहते हुए भी वह कार्य भार के लिये अयोग्य हो तो उस दशा मे कौन कार्य करे इसके लिये अभी तक कोई अधिनियम नही है ।

शपथ—निर्वाचन समाप्त होने के पश्चात् अभिषेक के लिए प्रेसीडेंट को एक जलूस के साथ ले जाया जाता है । उसे यह शपथ लेनी पडती है, "मैं यह शपथ लेता हूँ (या प्रतिज्ञा करता हूँ) कि मै प्रेसीडेंट के कार्य को निष्ठापूर्वक करूँगा, और अपनी सारी योग्यता से सयुक्त-राज्य के सविधान को बनाये रखूंगा, उसकी रक्षा करूँगा और उसको रक्षा के लिए प्रयत्न करूँगा "

प्रेसीडेन्ट का वेतन—प्रेसीडेण्ट का एक लाख डौलर का वार्षिक वेतन दिया जाता है । इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष यात्रा खर्च के लिए ५०,००० डौलर, ३६,००० डौलर लेखन सामग्री, तार टेलीफोन आदि के लिए और ३,००० डौलर छपाई आदि के लिए दिया जाता है । प्रेसीडेण्ट के रहने को ह्वाइट हाउस (White House) नाम का एक सुन्दर भवन मिला हुआ है जो १७ एकड भूमि घेरे हुए है और जिस पर प्रतिवर्ष १,२४,००० डौलर खर्च किया जाता है । एक विशेष पुलिस का जत्था जिसमें तीन अफसर व ३० सिपाही रहते हैं, ७५,००० डालर के खर्च पर रक्षा के लिए रखा जाता है, तिस पर भी उसके उच्चपद के कारण प्रेसीडेण्ट का व्यक्तिगत खर्च इतना अधिक है कि जब वह ह्वाइट हाउस को छोड़ता है तो उसमे प्रवेश करने के समय की अपेक्षा अधिक निर्धन होकर जाता है । अब काँग्रेस ने एक अधिनियल द्वारा अवकाश प्राप्त (Retired) प्रेसीडेण्टो की वार्षिक निवृत्ति वेतन (Pension) २५,००० डालर और मृत प्रेसीडेंटो की विधवाओं को १०,००० डालर नियत करदी है । इस

१ स्टेट—पैरा १३३३ (१६०० का सस्करण) ।

अधिनियम का लाभ पहले इन व्यक्तियों को मिला हर्बर्ट हूवर (८४ वर्ष अवस्था) जो १६२६-३३ मे प्रेसीडेंट थे, हेरी एम० ट्रूमैन [७४] जो नवम्बर १६४८ से जनवरी १६५३ तक प्रेसीडेंट थे, और प्रेसीडेंट रूजवेल्ट तथा वुडरो विलसन की विधवाएँ।'

प्रेसीडेन्ट अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति होता है—साधारण प्रेसीडेण्ट राज्य का सबसे अधिक लोकप्रिय व्यक्ति होता है। दुनिया मे जितने चित्र उसके लिये जाते हैं उतने किसी दूसरे व्यक्ति के नहीं लिये जाते। कई बार वह चलचित्रों मे भी दिखाई देता है। यह कहा जाता है कि वाशिंगटन नगर के एक दुकानदार के पास प्रेसीडेण्ट विलसन के चित्र की १५,००० प्रतिलिपियाँ थी। प्रेसीडेंट की डाक का थैला दुनिया के किसी भी शासनाध्यक्ष को डाक की अपेक्षा अधिक भारी होता है। प्रतिदिन पत्रों व तारों की संख्या ३००० से ४००० तक होती है जिनमे से केवल २०० ही प्रेसीडेंट तक पहुँचते हैं शेष उसका सेक्रेटरी देखता है। "शायद दुनिया मे ऐसा कोई दूसरा अफसर न होगा जिसके पास उतने प्रार्थना-पत्र आते हो जितने अमेरिका के प्रेसीडेंट के पास आते हैं। प्राय इनमे मनचले लेखकों की हास्यपूर्ण चुटकियाँ भी रहती हैं। सामान्यत. प्रेसीडेंटो को अनेको वस्तुएँ भेंट स्वरूप प्राप्त होती हैं। प्रेसीडेंट हार्डिंज की मृत्यु के पश्चात् ह्वाइट हाउस के तीन कमरों मे भरी हुई ऐसी उपहार वस्तुओं को बाँधने मे और भेजने मे दो सप्ताह का समय लगा। प्रेसीडेंट से मिलने वालों की संख्या बहुत अधिक होती है। प्रेसीडेंट हार्डिज के समय मे १५०,००० व्यक्ति प्रेसीडेंट से मिलने आए। "यदि प्रेसीडेंट यह चालाकी न सीखे कि मिलने वाले व्यक्ति को अवसर न देकर स्वयं उसका हाथ पहले पकड ले तो निश्चय ही हस्तमर्दन करते करते उसकी बाँह सूज जाय।"[1]

सबसे शक्तिशाली शासनाध्यक्ष—"अमरीका के प्रेसीडेंट पर जितनी जिम्मेदारियाँ हैं और उसकी जितनी शक्ति है उतनी इस देश मे या दुनिया के किसी देश मे किसी व्यक्ति को नहीं है। यह दुनिया के शासकों मे सबसे प्रथम है।"[2] प्रेसीडेंट की शक्ति का उपयुक्त वर्णन बिलकुल सत्य है, इसमे यदि कोई अपवाद है तो वे कम्पनियों के डाइरेक्टर हैं जिन्होंने पिछले कुछ वर्षों मे अपने हाथ मे बहुत शक्ति केन्द्रित कर रखी है। प्रेसीडेंट की शक्ति मे विशेषता इस बात की है कि उसका वैधानिक महत्व बहुत है और उसे लोक समर्थन प्राप्त रहता है। एक समय जो यह भय हुआ था कि प्रेसीडेंट स्यात् निरंकुश शासक बन जाय, वह निर्मूल सिद्ध हुआ है " ... ... "राष्ट्र के मन मे अमेरिकन शासक के सिद्धान्तों की जड़ें इतनी गहरी

---

१ हैमरिन—दी अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० ५६-५७।
२ उसी पुस्तक मे, पृ० ५१।

जमी हुई है कि उनको उल्लघन करने की थोडी सी भी प्रवृत्ति से विरोध की आँधी चलने लगेगी"।[1] ब्रिटिश सम्राट अपनी सरकार का दिखावटी अध्यक्ष है। उसकी कोई भी कार्य तब तक वैध नही होता जब तक उसका समर्थन मत्रियो मे से कोई न करे। वह राज्य करता है पर शासन नही करता। उसके बारे मे यह कहा जाता है कि वह कोई अपराध नही कर सकता। इस कथन मे बहुत सच्चाई है क्योकि शासन के मामले मे वह स्वय कोई आज्ञा नही देता। सब शासन शक्ति मत्रिमडल के पास रहती है। इस मत्रिमडल का अध्यक्ष प्रधानमत्री होता है और वही प्रमुख शासक रहता है। सम्राट का व्याख्यान भी मत्रिमडल तैयार करता है जिसमे इनकी शासन नीति रहती है। फ्रास का प्रेसीडेंट भी अपनी सरकार का दिखावटी अध्यक्ष है, वहाँ भी सारी शासन शक्ति मत्रीपरिषद् के हाथ मे रहती है। फ्रास का प्रेसीडेट न राज्य करता है न शासन करता है। इसके विपरीत सयुक्त-राज्य अमरिका के प्रेसीडेट के पास कई शक्तियाँ हैं और वह वास्तव मे शासन करता है।

विधायिनी शक्तियाँ—(Legislative power)—प्रेसीडेंट अपने सदेशो द्वारा कॉंग्रेस के सम्मुख अधिनियम सम्बन्धी प्रस्ताव रखता है। पहले प्रेसीडेंट प्रतिनिधि सदन और सीनेट की सयुक्त बैठक मे स्वय जाकर कांग्रेस को अपना सदेश दिया करता था। बाद मे यह प्रथा छोड दी गई और केवल यह सदेश उसकी ओर से पढ कर सुना दिया जाने लगा। किन्तु प्रेसीडेट विलसन ने स्वय जाकर अपने सदेश देने की प्रथा को फिर चालू किया। यह सयुक्त अधिवेशन प्रतिनिधि-सदन के भवन मे होता है। "कभी कभी प्रेसीडेट का सदेश किसी ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन कर देता है कि वह मौलिक तत्व के रूप मे मान्य हो जाता है और इस प्रकार वह सिद्धान्त या नियम देश के सविधान का वैसा ही भाग बन जाता है मानो सविधान मे विधिपूर्वक उसे शामिल कर लिया हो।"[2] जो मुनरो सिद्धान्त (Monro Doctrine) के नाम से प्रसिद्ध है उसकी सृष्टि प्रेसीडेंट मुनरो के द्वारा इसी प्रकार हुई थी। प्रेसीडेट मुनरो ने यह घोषणा की कि "सयुक्त राज्य अमरीका पश्चिमी गोलार्द्ध मे यूरोपियन राज्यो के आधिपत्य और प्रभाव का बढना सहन नही करेगा" प्रेसीडेट के ये सन्देश कॉंग्रेस के विधायक कार्य पर बडा प्रभाव डालते हैं, विशेषकर उस समय जब प्रेसीडेट के ही पक्ष का कॉंग्रस मे बहुमत होता है। इसी प्रकार मध्यपूर्व के सम्बन्ध मे प्रेसीडेंट आइज़न हावर का सदेश आइज़न हावर सिद्धान्त प्रसिद्ध हो गया है।

प्रेसीडेन्ट का प्रतिषेधात्मक अधिकार (Veto Power)—प्रेसीडेंट

---

१ मौडर्न डैमोक्रेसीज, पु० २, पृ० ७६।

२ दी अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० ६५।

कांग्रेस के बनाये हुये विधेयकों को रद्द भी कर सकता है। जो विधेयक दोनों सदनों से स्वीकार हो चुका हो, उसे प्रेसीडेंट अपनी विरुद्ध युक्तियों सहित दस दिनों के भीतर लौटा सकता है। इस प्रकार लौटाया हुआ विधेयक तब तक कानून नहीं बन सकता जब तक कि दोनों सदनों में दो तिहाई मत से वह फिर जैसे का तैसा पास न हो जाय। यदि दो तिहाई मत में वह पास न हो तो वह रद्द समझा जाता है। प्रेसीडेंट कांग्रेस का अतिरिक्त अधिवेशन कर सकता है। कांग्रेस सत्र (Session) के अन्तिम दस दिनों में आये विधेयकों को यदि प्रेसीडेंट वापिस न करे तो वे रद्द हो जाते है। इसे पाकेट विटो (Pocket Veto) कहा जाता है।

प्रतिषेधात्मक अधिकार (Veto Power) का महत्व—उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि प्रेसीडेंट की विधायिनी शक्ति ७३ प्रतिनिधियों और १७ सीनेटरों के बराबर है (प्रतिनिधियों की संख्या ४३५ और सीनेटरों की १०० है)। ऐसी शक्ति न ब्रिटिश सम्राट के पास में है न फ्रांस के प्रेसीडेंट के पास। अमरीका के प्रेसीडेंट ने सन् १७८६ व १९२५ के बीच में ६०० बार इस शक्ति का प्रयोग किया। १९३३-४४ के बीच रूजवेल्ट ने साधारण प्रतिषेधात्मक अधिकार का ३६६ बार जिनमें कांग्रेस ने ६ को विफल कर दिया और पाकेट विटो का २६० बार, और ट्रूमेन ने १९४५-५२ तक क्रमशः १८२ और पाकेट विटो का ७० बार उपयोग किया। राजशास्त्री हरमन फाइनर ने प्रतिषेधात्मक शक्ति का वर्णन इस प्रकार किया है। "यह ऐसी शक्ति है जिसमें कुछ व्यय नहीं करना पड़ता और जिसके प्रयोग करने में सफलता की आशा तो रहती है, दण्ड का भय नहीं रहता। देश में विधानमंडल में लड़ी हुई व्यवस्था सम्बन्धी लड़ाई को कांग्रेस का कोई भी पक्ष केवल इतने समय में हार सकता है जितना देर में प्रेसीडेंट 'नहीं' व कुछ दूसरे व्याख्यात्मक शब्द लिखने में लगावे। इस 'नहीं' का उल्लंघन पुनर्विचार और दो तिहाई मत से ही हो सकता है जो कांग्रेस की बहुलता और दोनों सदनों में पक्षों की विभिन्नता के कारण सम्भव नहीं है।"[1] असल में प्रेसीडेंट ने विधायक कार्य का बहुत कुछ नेतृत्व अपने हाथ में कर लिया है।

कार्यकारिणी शक्तियाँ—शासन क्षेत्र में प्रेसीडेंट की शक्तियाँ बड़ी विस्तृत हैं। वह राष्ट्र का प्रमुख मजिस्ट्रेट अर्थात् शासक है। वह सेना का मुख्य सेनापति है। विदेशी राजदूतों को वह ही स्वीकार करता है तथा अपने राजदूतों की नियुक्ति भी वह ही करता है। वह सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की भी नियुक्ति करता है। उसका यह प्रमुख काम रहता है कि वह यह देखे कि संयुक्त-राज्य अमरीका के कानूनों का भली भाँति पालन हो रहा है। सीनेट की अन्तिम स्वीकृति से वह संधि कर सकता है।

१ थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस आफ माडर्न गवर्नमेंट, पु० II, पृ० १०३३।

पर-राष्ट्र विभाग का वह अकेला कर्त्ता-धर्ता है ! इस नियंत्रित शक्ति का वह इस प्रकार प्रयोग कर सकता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाय जिसमें कांग्रेस को सिवाय प्रेसीडेंट की नीति का समर्थन करने के और कोई चारा ही न रह जाय। शासन-सम्बन्धी नियुक्तियों में उसे सीनेट से सलाह लेनी पड़ती है। व्यवहार में वह जिस उपराज्य में नियुक्ति करनी होती है उसी के सीनेटरों से सलाह लिया करता है। किन्तु जब सीनेट की बैठक न हो रही हो, उस समय अस्थायी रूप से रिक्त पदों के भरने का उसे पूरा अधिकार है ऐसी नियुक्तियाँ वह ऐसे ढंग से कर सकता है कि सीनेट की इच्छा के विरुद्ध भी वह नियुक्ति पक्की बनी रहे। रिक्त पदों पर वह अपने मित्रों व राजनैतिक पक्ष के साथियों को नियुक्त कर अपने पक्षानुराग का खुले तौर पर परिचय देता है। पदाधिकारियों की नियुक्ति की शक्ति का प्रायः ऐसा उपयोग किया गया है कि घरेलू व वैदेशिक मामलों में प्रेसीडेंट की ही मनचाही बात होती है। छोटे पदाधिकारियों को प्रेसीडेंट बिना सीनेट से पूछे ही नियुक्त कर सकता है। क्षमादान करने की शक्ति प्रेसीडेंट को ही दी हुई है और प्रेसीडेंट ही छुट्टियाँ घोषित करता है।

स्वविवेकी शक्तियाँ (Discretionary Powers)—प्रेसीडेंट को कुछ ऐसी शक्तियाँ भी प्राप्त है जिनका उपयोग वह अपने विवेक से ही करता है। इन शक्तियों के बल पर प्रेसीडेन्ट किन्हीं व्यक्ति या व्यक्ति-समूहों को किसी काम करने से रोक सकता है या किसी काम को करने के लिये उन्हें बाध्य कर सकता है। इस शक्ति के प्रयोग में न्यायालय भी रुकावट नहीं डालते। अमल में न्याय-सत्ता और प्रेसीडेंट में मुश्किल से कभी टक्कर होती है। प्रेसीडेंट की शक्ति इतनी अधिक है कि एक अवसर पर जब प्रधान न्यायाधीश मार्शल ने प्रेसीडेंट जैक्सन की इच्छा के प्रतिकूल एक निर्णय दिया तो प्रेसीडेंट जैक्सन ने कहा, *"मार्शल ने अपना निर्णय दे तो दिया पर वह उसको कार्यान्वित भी करे।"* इसने दिखला दिया कि न्यायालय भी अपने निर्णय को कार्यान्वित कराने में प्रेसीडेंट पर ही निर्भर है।

प्रेसीडेन्ट पर अभियोग—प्रेसीडेंट पर दुर्व्यवहार व महापराध का अभियोग लगाया जा सकता है। प्रतिनिधि-सदन में अभियोग लगाने का निर्णय पहले होता है। तब सीनेट में यह अभियोग लगाया जा सकता है और उसकी जाँच की जाती है। प्रेसीडेंट को अपराधी ठहराने और दण्ड देने के लिये सीनेट का निर्णय दो तिहाई बहुमत से होना चाहिये।

प्रेसीडेन्ट की मन्त्रिपरिषद्—प्रेसीडेंट की मन्त्रिपरिषद में शासन विभागों के अध्यक्ष होते हैं जिनको प्रेसीडेंट सीनेट की सम्मति से नियुक्त करता है। "ये लोग

१ थ्यौरी एण्ड प्रैक्टिस आफ मोडर्न गवर्नमेंट, पृ० १०४४।

प्रेसीडेंट के ऐसे निकटस्थ सहायक होते हैं कि यदि सीनेट प्रेसीडेंट से चुने हुये व्यक्तियों को नियुक्त करने से इन्कार करे तो यह केवल खेदजनक भद्दी बात ही न हो वरन् यदि ऐसे विरोधों की संख्या अधिक हो तो शासन सत्ता ही छिन्न-भिन्न हो जाय।"[१] "प्रेसीडेंट की मन्त्रिपरिषद् के सदस्यों को वैसी ही शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं जैसी ब्रिटिश या फ्रांस की पार्लियामेंटरी या अन्य मन्त्रिपरिषद् के सदस्यों को मिली हुई रहती हैं। इसका कारण यह है कि अमरीकन कार्यपालिका शक्ति केवल प्रेसीडेंट में ही विहित है। यह एकात्मक कार्यपालिका (Unitary Executive) है और इसीलिए फ्रांस व इंगलैंड की अनेकात्मक कार्यपालिका से भिन्न है। अमेरिका की कार्यपालिका का स्थायी (चार वर्ष के समय तक) अध्यक्षात्मक (Presidential) कार्यपालिका है जो विधानमन्डल की उत्तरदायी नहीं है जैसी कि संसदात्मक कार्यपालिका (Parliamentary Executive) होती है। अमरीका के प्रेसीडेंट को यह अधिकार है कि वह अपने मन्त्रियों की राय को पलट सकता है। वह प्रायः ऐसा करता भी है क्योंकि उनकी सलाह सिफारिश के रूप में होती है। इसका स्पष्टीकरण एक उदाहरण द्वारा किया जा सकता है। एक बार अब्राहम लिंकन ने अपना एक प्रस्ताव अपने सात मन्त्रियों की परिषद् के सामने रखा और उन सबने उसका विरोध किया। परन्तु स्वयं उसने उसका समर्थन किया। उसने चुपचाप यह निर्णय दिया, "इस निर्णय के पक्ष में हाँ कहने वाला १ और विपक्ष में न कहने वाले ७ मत हैं इसलिये हाँ की जीत हुई।"

सचिव प्रेसीडेन्ट के मातहत हैं—प्रेसीडेंट के मन्त्री जो सेक्रेटरी कहलाते हैं दोनों सदनों में से किसी में भी उपस्थित नहीं हो सकते। वे वहाँ जाकर अपनी नीति पर लगाये हुए दोषारोपण का प्रतिवाद भी नहीं कर सकते। वे प्रेसीडेंट के ही आश्रित रहते हैं और यदि वे किसी बात में प्रेसीडेंट से सहमत नहीं होते तो अधिक से अधिक यही कर सकते हैं कि अपना पद त्याग कर दें। प्रेसीडेंट रूजवेल्ट के समय में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे। युद्ध के समय प्रेसीडेंट की शक्ति अधिनायक (Dictator) जैसा हो जाता है। उस समय उसे सेक्रेटरियों से परामर्श लेने की आवश्यकता भी नहीं रहती। किन्तु बहुत कुछ प्रेसीडेंट के व्यक्तित्व पर निर्भर रहता है। यदि वह सुदृढ़ व्यक्ति नहीं है तो वह कुछ नहीं कर पाता और यदि वह दृढ़ इच्छा वाला होता है तो अपने देश में सर्वशक्तिमान बना रहता है।

ये सेक्रेटरी विभिन्न शासन विभागों के अध्यक्ष बना दिये जाते हैं। इस समय इन विभागों की संख्या १० है। मन्त्रिपरिषद् में इन दसों के उपाध्यक्ष १० सेक्रेटरी हैं। स्टेट डिपार्टमेंट, अर्थात् परराष्ट्र विभाग, अर्थ-विभाग, युद्ध-विभाग, न्याय-विभाग, डाक-विभाग, नौसेना-विभाग गृह-विभाग, कृषि-विभाग, व्यापार-विभाग और श्रम-विभाग, ये

दस विभाग है। इन शासन विभागो के बारे मे शासन-विधान में कुछ भी नही कहा गया है किन्तु ये कॉंग्रेस के ऐक्टो से स्थापित हुये है।

अमरीकी प्रेसीडेन्ट की अन्य राज्याध्यक्षों से तुलना—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है संसार के राज्यों के अध्यक्षो वा राज्याधीशो की अपेक्षा अमरीकी प्रेसीडेंट सबसे अधिक शक्तिशाली वैधानिक शासक (strongest constitutional ruler) है। जिस समय संविधान का निर्माण किया गया था तो निर्माताओ का यह कतिपय भी विचार न था कि प्रेसीडेंट इतना शक्तिशाली शासक हो जैसा कि वह अब हो गया है। संविधान मे केन्द्रीय सरकार के तीनो ही अंगो को परिमित शक्तियां और अधिकार दिये गये है। परन्तु सन् १८०३ मे जब प्रेसीडेंट जेफर्सन ने लूसियाना (Lousiana) नामक भूमि अमरीका के लिये फ्रास से खरीद ली उसके शासन को चलाने मे प्रेसीडेंट ने विभिन्न कर्मचारी नियुक्त करने तथा शासन कार्य पर दृष्टि रखने के लिये अनेक अधिकार प्राप्त कर लिये। सन् १८१२ मे इंगलैंड से, युद्ध १८६१-६४ तक घरेलू युद्ध, सन् १८९८ मे स्पेन से युद्ध और फलस्वरूप फिलिपाइन्स पर अमरीकी शासन स्थापन हो जाने, तथा १९१६-१९ तक प्रथम विश्व युद्ध, १९४०-४५ तक द्वितीय विश्व युद्ध और उसके फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति मे तथा सबसे अधिक सम्पन्न और शक्तिशाली राज्य का वास्तविक (नामधारी नही) कार्यपालिका सत्ताधारी होने के कारण अमरीकी प्रेसीडेंट अत्यन्त शक्तिशाली शासक हो गया है। आरम्भ मे इंगलैंड का राजा सबसे अधिक सत्ताधारी शक्तिशाली शासक था, परन्तु सत्रहवी शताब्दी के अन्त मे हो, जैसे जैसे पालियामेंट की शक्ति बढ़ती गई, राजा की शक्ति घटकर मंत्रिमंडल के हाथ मे आती गई, जिसका परिणाम यह हुआ है कि इंगलैंड का राजा केवल नामधारी शासक [Nominal ruler) है, वास्तविक शासक मंत्रि मंडल और उसमे भी प्रधान मंत्री विशेष शक्तिशाली है। इसके विपरीत, जैसे जैसे लोकतंत्र बढ़ता गया और अमेरिका अधिक सम्पन्न और शक्तिशाली होता गया, अमरीकी प्रेसीडेंट की शक्तियो और अधिकारो मे, वैधानिक अधिनियम से नहीं तो यथार्थ मे शासन के उत्तरदायित्व के कारण, वृद्धि होती गई। तभी तो यह ठीक ही कहा गया है कि इंगलैंड का राजा प्रतिभाधारी है, शासन नही करता, किन्तु अमरीका का प्रेसीडेंट शासन करता है और प्रतिभाधारी नही।"[1] यदि इंगलैंड का राजा पैतृक अधिकार से आजन्म राज्य का अधीश है और सारी सत्ता का नामधारी है किन्तु वह वास्तव मे स्वयं कुछ नही करता, सारा शासन उसके नाम से मंत्रिमंडल (जिसमे प्रधान मंत्री विशेषकर

---

1. The King of England reigns but does not rule, the President of America rules but does not reign

शक्तिशाली है) करता है, तो उधर अमरीका का प्रेसीडेंट किसी अन्य संस्था को उत्तरदायी नहीं, सारी शासन शक्ति उसको संविधान से प्राप्त है और वही उसका उपभोग करता है। यद्यपि वह अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता है, केवल वही व्यक्ति प्रेसीडेंट निर्वाचित किया जाता है जिसे राष्ट्र के किसी प्रमुख दल का विश्वास प्राप्त हो जाता है, उसे विदेशी नीति संचालन में पूर्ण अधिकार है, उसे हजारों पदों पर नियुक्ति करने का अधिकार है, वह कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी नहीं, उसे विधेयकों पर प्रतिषेधात्मक अधिकार है, वह अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अमेरिका की सम्प्रभुता का प्रतीक है, वह अमरीकी रक्षा सेना का वास्तविक प्रमुख सेनाध्यक्ष (Commander-in-Chief of the Defence Forces) है और विशेषतया युद्ध के समय वह स्वयं नीति निर्धारित करता है, उसकी शक्ति और सभी राज्यों के अधीशों की अपेक्षा (आतंकवादियों को छोड़कर) अधिक है। उसकी कार्यपालिका शक्तियां इंगलैंड के राजा, प्रधान मंत्री और पार्लियामेंट की कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों के बराबर हैं।

स्विट्ज़रलैंड का प्रेसीडेंट तो केवल एक वर्ष के लिये निर्वाचित होता है, उसे केवल राज्य की सम्प्रभुता का प्रतीक होने के और कोई विशेष शक्ति प्राप्त नहीं। वह कार्यपालिका का सदस्य है और इसी कारण एक विभाग का अध्यक्ष और दूसरे का उपाध्यक्ष है। उसे कोई भी प्रतिषेधात्मक अधिकार नहीं।

भारत के प्रेसीडेंट (राष्ट्रपति) को भारतीय संविधान में जो शक्तियां प्राप्त हैं वे अमरीकी प्रेसीडेंट की शक्तियों से अधिक ही हैं, परन्तु यहाँ संसदात्मक शासन प्रणाली होने के कारण राष्ट्रपति केवल नामधारी शासक है। वास्तविक शासन तो केन्द्रीय मंत्रिमंडल, राष्ट्रपति के नाम से, करता है। भारत के राष्ट्रपति की संकट कालीन शक्तियाँ अमरीकी प्रेसीडेंट से कहीं अधिक हैं और उसे राज्यों (States) के राज्यपालों की नियुक्ति करने और राज्यों के विधान मंडलों द्वारा निर्मित विधियों पर प्रतिषेधात्मक अधिकार प्राप्त है। भारतीय राष्ट्रपति को अनेक उच्च पदों पर नियुक्तियां करने का अधिकार है (जिस अधिकार में अमरीकी राष्ट्रपति को सीनेट की स्वीकृति लेनी पड़ती है), किन्तु ये सारे अधिकार वैधानिक अभिसमयों (Constitutional conventions) के अनुसार मंत्रिमंडल के हाथ में हैं।

अध्याय १९

अमरीकी संघ की न्यायपालिका

यदि कोई राजनीति स्वत. सिद्ध सत्य है, तो उनमे एक यह है कि राज्य की न्यायिक शक्ति उसकी विधायिनी शक्ति के सम-क्षेत्र को (co-extensive) होनी चाहिये।··· सभी राज्यों को एक ऐसे न्यायालय की स्थापना आवश्यक हुई है जो अन्य न्यायालयो के ऊपर शक्तिवान हो, जो सामान्य निरीक्षण करे और जिसे असैनिक न्यायविधि मे एक रुपता का अधिनियम निश्चित करने का अधिकार हो। —अलैक्जेन्डर हैमिल्टन

अमरीकी सविधान निर्माताओं की ससार के राजनैतिक क्षेत्र में जो अनेक नवीन देन है उनमे सघीय शासन प्रणाली, शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त, अध्यक्षात्मक कार्यपालिका और विशेष शक्ति वाला, ऊपरी सदन कहे जाते हैं परन्तु इन सबसे अधिक गरिमा वाली देन है एक ऐसे सघीय न्यायालय की स्थापना जो सर्व प्रकार स्वतन्त्र और शक्तिशाली होने के अतिरिक्त सविधान मे एक विशेष महत्व रखता है।

जब १७८७ के सविधान ने केन्द्रीय (सघीय) सरकार की स्थापना की तो उसके तीनो अगो (विधान मडल, कार्यपालिका और न्यायपालिका) की रचना और शक्तियो व अधिकारो का स्पष्ट वर्णन कर दिया था।

संघीय न्यायपालिका—सविधान के तीसरे अनुच्छेद म यह कहा गया है कि "सयुक्त राज्य की न्याय शक्ति एक सर्वोच्च न्यायालय (supreme court) तथा उन नीची श्रेणी के न्यायालयो मे विहित होगी, जिन्हे काग्रेस समय समय पर अभिव्यक्त और स्थापित करेगी।" सघ न्यायपालिका के शिखर पर जो सर्वोच्च न्यायालय (supreme court) है उसकी अपनी शक्ति व अधिकार सविधान से ही प्राप्त हैं। इसलिये वह काग्रेस (विधान मडल) और प्रेसीडेन्ड (कार्यपालिका) के सत्ता के अधीन न होकर उन्ही की भाति स्वतन्त्र है।

इस समय सघ न्यायपालिका मे एक सर्वोच्च न्यायालय है, दस भ्रमणशील न्यायालय अथवा सरकिट कोर्ट्स (circuit courts) और ८८ डिस्ट्रिक्ट न्यायालय (District courts) है, सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना काग्रेस द्वारा बनाये अधिनियम १७८९ (Judiciary Act of 1789) से हुई थी। उस समय एक मुख्य न्यायाधीश और ५ उप-न्यायाधीश नियुक्त किये गये थे। सन्

न्यायालयों के न्यायाधीश जब तक सदाचारी रहेंगे अपने पद पर काम करते रहेंगे और उन्हें अपने सेवा के लिये जो पारिश्रमिक मिलेगा वह उनके पदासीन रहते हुये घटाया नही जायगा।'[१] इससे न्यायाधीश स्वतन्त्रतापूर्वक तथा निष्पक्ष होकर काम करते हैं। संविधान के अनुच्छेद २ खण्ड २ पैरा २ में प्रेसीडेन्ट को सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति सीनेट की अनुमति से करने का अधिकार दे दिया गया है।[२] अतएव सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति प्रेसीडेन्ट, सीनेट की अनुमति से करता है। इस नियुक्ति में प्रेसीडेन्ट दलबन्दी की नीति का अधिक अनुकरण नही करता। न्यायाधीशो की "नियुक्ति में राजनीति का बहुत थोड़ा पुट रहता है। अपने पक्ष का ध्यान न रखते हुए प्रेसीडेन्ट रिक्त स्थान की पूर्ति करने के लिये सबसे योग्य व्यक्ति को ही नियुक्त करता है।'[३] सर्वोच्च न्यायालय के आधीन संघ के भ्रमणशील (circuit courts) न्यायालयों व जिला न्यायालयों के न्यायाधीशों को प्रेसीडेन्ट महान्यायवादी (attorney general) की सिफारिश पर नियुक्त करता है। न्यायवादी महाप्रभावकर्ता स्वयं सम्बन्धित उपराज्य के सीनेटरों से सलाह लेता है। इससे स्पष्ट है कि संघ न्यायालयों के न्यायधीशों की नियुक्ति में यह ध्यान रखा जाता है कि वे विधि-निर्बन्ध के सम्बन्ध में अनुपम योग्यता रखते हों। "अयोग्य व्यक्तियों को न्यायाधीश के पद पर नियुक्त करने वाली सत्ता को जितना दोष मिलता है उतना शासन की किसी और गलती से नही मिलता।"[४] अतएव इन परिस्थितियों में संयुक्त-राज्य का सर्वोच्च न्यायालय, प्रेसीडेंट, कांग्रेस और उपराज्यों के कार्यों को वैध-अवैध ठहराने की अपनी शक्ति के कारण तथा उस स्थायित्व के कारण जिसके होने से उसे बदलते हुये लोकमत का मुंह नही देखना पड़ता, संयुक्त-राज्य की शासन प्रणाली की बहुत सी बातों में एक बहुत प्रभावशाली हेतु बना हुआ है और दुनियां का सबसे बड़ा न्याय संगठन है।[५]

जब किसी न्यायाधीश का स्थान रिक्त होता है तो प्रेसीडेंट सोच विचार कर ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति सीनेट की अनुमति के लिये प्रस्तुत करता है जो प्रेसीडेंट की दृष्टि में बहुत योग्य हो। सीनेट की अनुमति केवल नाममात्र की प्रथा नही है। सीनेट के

1. "The Judges. both of the Supreme and other, inferior Courts shall hold their offices during good behavior and shall at stated times, receive for their service, a compensation, which shall not be diminished duringo their continuance in office". Art. III sec, 1.

२ Art. II, Sec. 2, para 2.

३ दी अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० २६६

४ फोर्म्स एंड फंक्शन्स ऑफ अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० २८३

५ दी अमरीकन गवर्नमेंट, पृ० २८५

सदस्यों ने कई बार प्रेसीडेंट द्वारा प्रस्तुत व्यक्तियों की नियुक्ति को अस्वीकृत किया है। उदाहरणार्थ, अलेक्जेन्डर वालकौट (Alexander Walcott) की नियुक्ति का प्रस्ताव प्रेसीडेंट ने ४ फरवरी १८११ को किया परन्तु सीनेट ने १८ फरवरी को उसे अस्वीकार कर दिया। जॉन जोर्डन (Jhon Jordan) की नियुक्ति का प्रस्ताव १८ दिसम्बर १८२८ को किया गया परन्तु सीनेट ने १२ फरवरी १८२६ को उसे स्थगित कर दिया। इसी प्रकार एक बार रोजर टेनी (Roger Taney) की नियुक्ति स्थगित कर दी गई थी। इसी प्रकार के निम्न उदाहरण भी हैं :—

नाम	नियुक्ति प्रस्तुत	नियुक्ति अस्वीकृत
जॉन कौफील्ड स्पेन्सर (John Caufeld Spencer)	६ जनवरी १८४४	३१ जनवरी १८४४ (२१ के विरुद्ध २५ मतों से अस्वीकृत)
जार्ज वाशिंगटन वुडवर्ड (George Washington Woodward)	२३ दिसम्बर १८४५	२२ जनवरी १८४६
ऐबेन्जर होर [Ebenzer Hoar]	१५ दिसम्बर १८६६	३ फरवरी १८७०

सारांश यह है कि सीनेट ने अपने स्वीकृति देने के अधिकार का उपभोग स्वतन्त्र रूप से ही किया है। अस्वीकृत की आशंका उस परिस्थिति में अधिक होती है जब सीनेट में प्रेसीडेंट के राजनीतिक दल के सदस्यों की संख्या विरोधी दल के सदस्यों से कम होती है।

न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति के लिये संविधान में कोई भी अर्हता (qualification) नहीं रखी गई। प्रेसीडेंट जिस व्यक्ति को चाहे नियुक्त करे, परन्तु अनुभव ने यह सिद्ध हो गया है कि प्रेसीडेन्ट सदैव ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति सीनेट में प्रस्तुत करता है जो अपने कार्य में अत्यन्त कुशल हो, जिसे कानून का पूरा २ ज्ञान हो और जो इस महत्वपूर्ण उत्तरदायी पद के लिये, जहाँ विधि का वैध और अवैध होने का अन्तिम निर्णय होता है और संविधान का निर्वाचन [Interpretation] होता है, सभी भांति योग्य हो और जिसकी योग्यता जनता में सर्वमान्य हो चुकी हो। अधिकतर प्रेसीडेन्ट के प्रस्तुत नाम सीनेट स्वीकार कर लेती है और जनता भी इन नियुक्तियों को श्रेष्ठ ही समझती है।

न्यायाधीशों की पद-अवधि और पारिश्रमिक—यह ऊपर कहा जा चुका है कि संविधान में न्यायाधीशों के पद-अवधि के सम्बन्ध में यही कहा गया है कि वे अपने पद पर तब तक रहेंगे जब तक वे सदाचारी रहें। अर्थात् यदि कोई न्यायाधीश जीवन भर पद पर आसन रहना चाहे तो रह सकता है। उसे अवकाश ग्रहण करने अथवा पद से निवृत्ति पाने की कोई आवश्यकता नहीं। ऐसे कई उदाहरण हैं कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश अपने जीवन की अन्तिम घड़ी तक पद पर रहे। परन्तु कोई भी न्यायाधीश ७० वर्ष की आयु में यदि उसने कम से कम १० वर्ष तक पद पर कार्य किया है, पूरा

निवृत्ति वेतन [full pension] लेकर पद त्याग कर सकता है। न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति के लिये कोई न्यूनतम आयु निश्चित नहीं है। सबसे कम आयु में (३२ वर्ष की आयु में) जोसेफ स्टोरी की नियुक्ति हुई थी जो १८११-१८४५ तक पदासीन रहे। न्यायाधीशों का पारिश्रमिक कांग्रेस अपने अधिनियम द्वारा नियत करती है, जो किसी न्यायाधीश के पद-काल में घटाया तो नहीं जा सकता, बढ़ाया जा सकता है। इन सभी कारणों से न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता ही सुरक्षित नहीं है वरन सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों में जनता का पूर्ण विश्वास है।

न्यायालय के न्यायाधीश अयोग्यता अथवा ऐसे किसी आरोप के कारण पद से हटाये नहीं जा सकते। किन्तु संविधान के अनुच्छेद २ के चौथे खण्ड में वर्णित "देश द्रोह, घूसखोरी या अन्य भारी अपराध व अदाचार" (Misdemeanors) के लिये पदच्युत किया जायगा। ऐसा आरोप लगाने के प्रस्ताव पर प्रतिनिधि सदन विचार कर महाभियोग (Impeachment) की स्वीकृत देगा तो सीनेट न्यायालय के रूप में बैठकर उसकी सुनवाई करेगी और यदि दो-तिहाई मत से अभियुक्त को दोषी ठहरावेगी तो वह (दंड के रूप में) अपने पद से हटा दिया जावेगा। ऐसा केवल एक बार ही अवसर आया है जब सन् १८०४ में न्यायाधीश सेमुअल चेज (Samuel Chase) पर यह आरोप लगाया गया था कि बाल्टीमोर में ग्रान्डजूरी को आदेश देते समय उसने पक्षपात किया और कुछ वर्णित अभियोगों में उसने सुनवाई के समय अत्याचार करा। परन्तु आरोपों का समर्थन सीनेट ने दो-तिहाई मत से नहीं किया। वह मुक्त हो गया और जीवनान्त तक पद पर रहा।

संघ न्यायपालिका का अधिकार क्षेत्र

हेमिल्टन (Hamilton) ने अपने लेख (फेडेरेलिस्ट म० ३०) में उन सिद्धान्तों का वर्णन किया है जो सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना करते समय दृष्टि में रखने चाहिये। उसके अनुसार (१) एक ऐसी वैधानिक प्रक्रिया होना आवश्यक है जिससे संविधान की धाराओं का सुचारु रूप से पालन हो। (२) राष्ट्रीय विधियों के निर्वाचन (Interpretation) अथवा व्याख्या करने में एक रूपता (uniformitiy) होनी चाहिये। (३) राष्ट्र और उसके सदस्य उपराज्यों अथवा नागरिकों के बीच उठे विरोधों का निर्णय राष्ट्रीय न्यायाधिकरण (Tribunal) द्वारा ही होना चाहिये। (४) सम्पूर्ण की शान्ति एक भाग के ऊपर अवलम्बित न हो। (५) सामुद्रिक झगड़ों का निपटारा राष्ट्रीय न्यायपालिका द्वारा होना चाहिये। इन्हीं सिद्धान्तों को दृष्टि में रखते हुये अमरीकी संविधान के तीसरे अनुच्छेद के दूसरे खंड में संघ की न्यायिक शक्ति का अधिकार क्षेत्र इन शब्दों में निर्धारित किया गया है "न्यायिक शक्ति उन सभी मामलों

के निपटारने मे रहगी जो इस सविधान के अन्तर्गत राज्य रचित कानूनो ग्रौर सामान्य न्याय सिद्धान्त (Equity) मे सम्बन्धित होगे, या सयुक्त राज्य अमेरिका के कानून और इनके आधीन जो सधियाँ हुई हो, या भविष्य मे हो इनके अन्तर्गत कानूनो के प्रावधानो के सम्बन्ध मे, या प्राकृतिक न्याय के बारे म उठने वाले प्रश्नो मे, राजदूतो मे सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नो मे, सामुद्रिक व नौसेना के अधिकार क्षेत्र मे उठने वाले प्रश्नो म उन झगडो मे जहाँ सयुक्त-राज्य ही वादी या प्रतिवादी हो या दो से अधिक उपराज्यो के बीच झगडे म, एक उपराज्य और दूसरे उपराज्यो के नागरिको के झगडे म, विभिन्न उप-राज्य के नागरिको के झगडे मे, एक ही उपराज्य के दो नागरिको को विभिन्न उपराज्यो से मिले, भूमि अनुदान सम्बन्धी झगडो मे, और एक उपराज्य व उसके नागरिको तथा दूसरे किसी विदेशी राज्य व उसके नागरिको म जो झगडा हो, इन सब बातो मे सघ न्यायपालिका को निर्णय करने का अधिकार प्राप्त रहेगा।" विधान ने सर्वोच्च न्यायालय के प्रारम्भिक व पुनर्विचारक अधिकार क्षेत्र की सीमा भी इस प्रकार निश्चित कर दी है।" "राजदूतो व किसी उपराज्य से सम्बन्धित मुकदमे सर्वोच्च न्यायालय म ही प्रारम्भ होगे। अन्य उपर्युक्त मुकदमो म सर्वोच्च न्यायालय मे कानून की व्याख्या व वास्तविकता के प्रश्न पर केवल पुनर्विचार ही सकता है, उन अपवादो को छोडकर ग्रोर उन-नियमो के अनुसार जिन्हे काँग्रेस निश्चित कर दे।"

दो प्रकार का अधिकार क्षेत्र— सघीय न्यायपालिका का जो सगठन है उसमें अभियोगों के निपटारे के लिये पहले पहल जिला न्यायालय मे फरियाद की जाती है। उस न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध भ्रमणशील न्यायालय अथवा सर्किट कोर्ट (Circuit Court) म अपील होती है, और सर्किट कोर्ट के निर्णय से असतुष्ट रहने पर सर्वोच्च न्यायालय म अपील की जाती है। किन्तु जिन दड-विधि अभियोगो (Criminal cases) मे जिला न्यायालय प्राणदड देता है उनकी अपील (सर्किट कोर्ट मे न होकर) सीधे सर्वोच्च न्यायालय मे होती है ताकि अपराधी के दड निर्णय मे अधिक विलम्ब न हो।

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र दो प्रकार का है। प्रथम, सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) सघीय विधि से सम्बन्धित सभी मामलो के लिये सर्वोच्च अपील-न्यायालय (Highest Appellate Tribunal) है और सविधान मे वर्णित कई प्रकार के मामलो म वह प्रारम्भिक न्यायालय है, जिसका उन मामलो मे प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र है।

प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र (Original Jurisdiction)— जैसे उन मुकदमो मे जहाँ किसी सघ या उपराज्य के कानून के वैध-अवैध होने का प्रश्न हो सर्वोच्च न्यायालय को प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार प्राप्त है वैसे ही जिन मुकदमो मे

संघ सरकार या कोई उपराज्य सरकार एक पक्ष में हों सर्वोच्च न्यायालय में ही वे प्रारम्भ होते हैं। संयुक्त-राज्य का सबसे बड़ा पुनर्विचारक न्यायालय होने के अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय की वास्तविकता महत्ता और अनुपमता इस बात में है कि वह शासन विधान की व्याख्या करता है और उसकी मान्यता को सुरक्षित रखता है। किन्तु अपनी इस शक्ति के प्रयोग का सूत्रपात वह न्यायालय स्वयं नहीं करता। इसका प्रयोग तभी होता है जब उसके सामने कोई एक ऐसा निश्चित उदाहरण उपस्थित किया जाता है जिसमें संघ सरकार या उपराज्य सरकार के किसी कानून की वैधानिकता पर आपत्ति की गई हो। ऐसे मुकदमे का निर्णय देने में यह न्यायालय शासन संविधान को सर्वोपरि मानकर उसकी कसौटी पर दूसरे कानूनों को वैध-अवैध ठहराता है। प्रेसीडेण्ट या कांग्रेस का कोई भी कार्य तभी वैध समझा जाता है जब उस कार्य का सम्बन्ध लिखित शासन विधान के किसी वाक्य या शब्द से हो। प्रेसीडेण्ट विलसन (Wilson) ने अपनी पब्लिक पेपर्स (Public Papers) में सच कहा है कि "हमारे न्यायालय हमारी विधान प्रणाली के आधीन हैं वे हमारे राजकीय विकास के साधन हैं, हमारा राज्य संगठन कुछ ऐसा विशेष रूप से वैधानिक प्रकृति का है कि हमारी राजनीति वकीलों पर निर्भर रहती है। अतएव प्रत्येक मुकदमे में निर्णय देते समय सर्वोच्च न्यायालय को पहले यह निश्चित करना पड़ता है कि जिस शक्ति को कांग्रेस अपनी कहती है वह विधान के किसी प्रावधान में जोड़ खाती है या नहीं और उसके बाद यह देखा जाता है कि उस प्रावधान का कितना विस्तृत अर्थ लगाया जा सकता है।"

सर्वोच्च न्यायालयके अधिकार क्षेत्र में वृद्धि—उपरोक्त अधिकार क्षेत्र तो संविधान में वर्णित है, किन्तु इसके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र में कई प्रकार से अधिक विस्तृत हो गया है।

(१) इन प्रकारों में न्यायालय का न्यायिक पुनर्विलोकन अधिकार (Power of Judicial Review) अधिक महत्व रखता है। यों तो संविधान में कहीं भी यह नहीं लिखा कि सर्वोच्च न्यायालय को अधिकार होगा कि वह कांग्रेस अथवा किसी उपराज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित किसी भी विधि (law) की यह जाँच अथवा पुनर्विलोकन (Review) करे कि वह संविधान के अनुकूल है अथवा प्रतिकूल है, और प्रतिकूल पाने पर उसे अवैध (unconstitutional) घोषित कर दे। किन्तु अपने कार्यक्रम में अवसर पाकर सर्वोच्च न्यायालय ने इस अधिकार को अपनी शक्ति अथवा क्षेत्र में कर लिया है। प्रश्न यह है कि न्यायालय ने यह अधिकार कैसे पा लिया? इसका उत्तर यह है कि संविधान के छठे अनुच्छेद के दूसरे पैरा में यह कहा गया है कि "यह संविधान और संयुक्त राज्य की विधियाँ जो

इसके अन्तर्गत बनेगी, और सभी संधियाँ जो संयुक्त राज्य के अधिकार से बनेगी, देश की सर्वोपरि विधि समझी जावेंगी, और सभी उपराज्यों के न्यायाधीश उनसे बाध्य होंगे, भले ही किसी उपराज्य की विधि अथवा संविधान में कुछ भी वर्णित हो।" क्योंकि इस अनुच्छेद में संविधान को देश की "सर्वोपरि विधि" (Supreme law) घोषित किया गया है और इसी संविधान पर सर्वोच्च न्यायालय आधारित है और उसी से शक्ति प्राप्त है, इस से यह स्पष्ट है कि सर्वोच्च न्यायालय अपने न्याय-कार्य सम्पादन में संविधान की सर्वोपरिता माने और उसके प्रतिकूल किसी भी अधिनियम अथवा आज्ञा या आदेश को अवैध समझे। सबसे पहिले सन् १८०३ में मार्बरी बनाम मेडीसन (Marbury vs. Madison) अभियोग में न्यायिक पुनर्विलोकन का प्रश्न उठा था। सन् १७८९ के जुडिशियरी ऐक्ट में यह कहा गया था कि सर्वोच्च न्यायालय को परमादेश लेख (Writ of Mandamus) देने का अधिकार होगा। सन् १८०१ को ३ मार्च की रात्रि को (अपने पद-काल की अवधि समाप्त होने के कुछ घंटे पूर्व, क्योंकि उस समय नये प्रेसीडेंट की पद-अवधि ता० ४ मार्च को प्रारम्भ होती थी। प्रेसीडेंट एडम्स (Adams) ने मार्बरी (Marbury) को शांति न्यायाधीश (Justice of the Peace) पद पर नियुक्त करने की आज्ञा पर हस्ताक्षर किये थे। नये प्रेसीडेण्ट जेफर्सन (Jefferson) जिसने ता० ४ मार्च को कार्यभार सभाला और उसके सचिव मेडीसन (Madison) ने मार्बरी को नियुक्ति-पत्र नहीं दिया। इस पर मार्बरी ने सर्वोच्च न्यायालय में फरियाद की कि न्यायालय मेडीसन को परमादेश द्वारा (Mandamus) आज्ञा दे कि उसे नियुक्त पत्र दे दिया जावे। प्रमुख न्यायाधीश मार्शल (Chief Justice Marshall) ने अदालत का निर्णय सुनाते हुए मार्बरी को प्रार्थना को रद्द कर दिया और कहा कि सन् १७८९ के न्यायिक अधिनियम (Judiciary Act) ने सर्वोच्च न्यायालय को परमादेश जारी करने का अधिकार देकर संविधान द्वारा निर्धारित न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की वृद्धि की है अतएव उस अधिनियम का उतना भाग संविधान के प्रतिकूल होने के कारण अवैध है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की वृद्धि की गई है।

न्यायाधीश मार्शल ने अपने इस निर्णय का समर्थन निम्न चार मानी हुई बातों पर किया :—(१) संविधान लिखित है और वह सरकार की शक्तियों को स्पष्टतया परिमित करता है, (२) संविधान मूल विधि (fundamental law) है और अन्य साधारण विधियों के सर्वोपरि है, (३) किसी भी विधान मंडल द्वारा निर्मित विधि जो इस आधारभूत मूल विधि के प्रतिकूल है, अवैध है, अतएव न्यायालय पर बाध्य नहीं; (४) न्यायालय की शक्ति तथा जो शपथ न्यायाधीश (पदासीन होते समय) लेते

है कि वे संविधान को ही मान्य समझेंगे यह निर्देश देता है कि न्यायाधीश संविधान के प्रतिकूल विधि को न मानें और फलतः उसे अवैध समझें।

उसी समय से सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायिक पुनर्विलोकन (Judicial Review) का अधिकार लिया है और जब कभी कोई अभियोग उसके सामने आता है तो यह इस बात को देखता है कि जिस विधि से वह मामला सम्बन्ध रखता है उसका निर्माण संविधान के अनुकूल हुआ है अथवा नहीं। यदि न्यायालय इस निर्णय पर पहुंचता है कि वह विधि (Law) संविधान के प्रतिकूल है तो क्योंकि संविधान सर्वोपरि राज्य विधि है, प्रतिकूल विधि (Conflicting Law) अथवा उसके किसी भी अंश को जो संविधान की अवहेलना करता है, अवैध घोषित कर देता है।

क्या न्यायिक पुनर्विलोकन अधिकार प्राप्त कर सर्वोच्च न्यायालय अमरिका की कांग्रेस (विधान मंडल) का तीसरा सदन (Third House of Congress) बन गया है? कुछ आलोचकों ने जो न्यायालय के उक्त अधिकार को अनुचित समझते हैं कहा है कि इस अधिकार उपभोग का तो यह अर्थ हुआ कि सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस का तृतीय सदन बन गया क्योंकि वह कांग्रेस द्वारा निर्मित विधि (Law) को रद्द कर देता है। परन्तु उनका यह विचार ठीक नहीं। प्रथम न्यायालय कांग्रेस द्वारा निर्मित अथवा उपराज्य के विधान मंडल द्वारा निर्मित प्रत्येक विधि का स्वतः पुनर्विलोकन नहीं करता। वह तो केवल उसी समय किसी विधि की वैधता की जांच करता है जब कोई पक्ष (Party) किसी अभियोग में सम्बन्धित विधि का विरोध करता है। ऐसी दशा में न्यायालय का कर्त्तव्य है कि संविधान को सर्वोपरि राज्य विधि समझकर उसकी कसौटी पर अन्य विधि की वैधता की जांच करे और यदि वह विधि अथवा उसका कोई भाग संविधान के प्रतिकूल है तो उस प्रतिकूल भाग को अमान्य अथवा शून्य (Void) समझकर अवैध घोषित कर दे। लगभग १२५ वर्ष हुए न्यायाधीश स्टोरी (Story) ने कहा था: "क्योंकि संविधान राज्य की सर्वोपरि विधि (supreme law of the land) है, सर्वोच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि यदि इस सर्वोपरि विधि के प्रतिकूल कोई भी विधि चाहे कांग्रेस द्वारा बनाई गई हो अथवा उपराज्य द्वारा, यदि वह मूल विधि (संविधान) के प्रतिकूल है, तो उसे अमान्य समझे और केवल मूल विधि का ही अनुसरण करे . . . . अन्यथा करने का फल यह होगा कि नागरिक अपनी राष्ट्रीय और उपराज्य की सरकारों की दया के शिकार बन जावेंगे।" सन् १९११ में सर्वोच्च न्यायालय ने मस्केट बनाम संयुक्त राज्य (Muscat vs United States) वाद (Case) का निर्णय किया था। न्यायालय की ओर से न्यायाधीश ड

(Justice Day) ने निर्णय के अन्तर्गत कहा: "किसी विधि को अवैध घोषित करने का अधिकार इसलिये उठता है क्योंकि कांग्रेस की कोई विधि जिस पर वादी अथवा प्रतिवादी का विश्वास है मूल विधि के प्रतिकूल है। इस अधिकार का उपभोग, जो न्यायालय के लिये अत्यन्त महत्व और कोमलता रखता है, न्यायालय को इसलिये प्राप्त नहीं कि उसे कांग्रेस के रचित अधिनियमों (Acts of Congress) के पुनरीक्षण की शक्ति है, किन्तु इसलिये प्राप्त है कि वादी और प्रतिवादी के विरोधी दावों के कारण न्यायालय को यह तय करना पड़ता है कि वह मूल विधि को मान्य समझे अथवा अन्य को।"[१]

इस अधिकार को प्राप्त कर सर्वोच्च न्यायालय ने अपने अधिकार क्षेत्र को बहुत बढ़ा लिया है। अनुमान किया जाता है कि अब तक लगभग ८० विधियों को सर्वांश में, अथवा कुछ अंश में अवैध घोषित किया गया है। यद्यपि न्यायालय के इस अधिकार का कुछ लोग विरोध करते हैं, और कभी कभी (जैसे १९३७ में रूजवेल्ट तथा न्यायाधीशों में) न्यायालय और शासकों में भारी गरमा गरमी भी हुई, किन्तु यह अधिकार अब अमेरिकन शासन प्रणाली का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मान्य सिद्धान्त हो गया है।

(२) दूसरा प्रकार जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की वृद्धि हुई है, वह है निहित शक्तियों का सिद्धान्त (Doctrine of Implied powers) इस सिद्धान्त का जनक न्यायाधीश मार्शल था, जिसने मेकल्लो बनाम मेरीलैंड (Maculloch vs Maryland) वाद में इसका प्रतिपादन सन् १८१९ में किया था। इस सिद्धान्त से फेडरल सरकार की, अपने निर्धारित क्षेत्र में, सम्प्रभुता ही पक्की नहीं हुई किन्तु उसकी शक्तियों में बहुत वृद्धि हो गई। इस सिद्धान्त का वर्णन पहले किया जा चुका है। यों तो इस सिद्धान्त का प्रथम बार समर्थन हैमिल्टन ने किया था, किन्तु उसको प्रायोगिक रूप देना और उसके आधार का समर्थन कर उसकी व्याख्या करना मार्शल का ही काम था मार्शल अपने निजी विश्वास से ही शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार का पक्षपाती था और उसने जान-बूझकर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन कर कांग्रेस की विधायिनी शक्ति को विस्तृत कर दिया। मार्शल ने अपने पदकाल के ३५ वर्षों (१८०१-१८३५) में ११०६ निर्णयों में भाग लिया जिनमें से ५१९ उसने स्वयं लिखे। केवल ८ बार वह अल्पमत में रहा, अन्यथा अन्य सभी अवसरों पर उसके सह-न्यायाधीशों ने उसकी सूक्ष्म न्यायायिक बुद्धि और चतुराई से प्रभावित होकर उसके निर्णयों का समर्थन किया। यदि आज अमेरिका की केन्द्रीय सरकार, विशेषतया कांग्रेस, बहुत शक्तिशाली है तो उसका अधिकतर श्रेय *न्यायाधीश मार्शल को ही प्राप्त है। उसी ने तीसरे प्रकार से कांग्रेस की शक्ति बढ़ाकर*

१ रेगम : दी अमेरिकन कान्स्टीट्यूशन, पृ० ३८-३९।

न्यायालय का अधिकार क्षेत्र भी बढाया। उसने सविधान का ऐसा निर्वाचन व अर्थ (Interpretation) किया जिससे केन्द्रीय सरकार के अधिकारो की वृद्धि हो। न्यायाधीश टैनी ने निर्वचन दूसरे विपरीत भाव से किया।

(३) संविधान की व्याख्या—तीसरा प्रकार जिससे सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में वृद्धि हुई है, सविधान की व्याख्या करने का अधिकार है। सविधान मे कांग्रेस को शक्तियो को पूरी तरह से निर्धारित कर दिया है किन्तु अनुच्छेद १ की ८वीं धारा के १८वें पैरा (Para) मे न्यायाधीशो की व्याख्या करने के हेतु (Interpretation of the Constitution) विस्तृत क्षेत्र छोड दिया गया है जिसके द्वारा उनको यह निर्णय करने की स्वतन्त्रता मिली हुई है कि क्या कांग्रेस से अध्यर्पित शक्ति "पूर्वोक्त शक्तियो को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक है।" इन शब्दो की व्याख्या करने मे ही न्यायाधीशों ने निहित शक्तियो के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इन निहित शक्तियो के सिद्धान्त (Doctrine of implied powers) के आधार पर अमेरिका मे सघ सरकार को शक्तियो को बहुत बढ़ा दिया गया है। न्यायाधीश टैनी (Taney) ने सर्वोच्च न्यायालय के सम्बन्ध मे कहा था, "यदि हम इस न्यायालय मे सविधान के शब्दो को नवीन अर्थ देने मे स्वतन्त्र हैं तो ऐसी व्यवस्था से किसी भी शक्ति को संघ सरकार के सुपुर्द किया जा सकता है और उसे उपराज्यो से छीना जा सकता है।"

निहित शक्तियो के सिद्धात को प्रतिपादित कर सघ सरकार को शक्तिशाली बनाने का श्रेय सबसे अधिक न्यायधीश मार्शल को दिया जाता है जो बहुत समय तक न्यायधीश के पद पर बना रहा और जो "उसी युग की उत्पत्ति थी जिसमे शासन विधान का निर्माण हुआ और सविधान निर्माताओं के अभिप्राय से भली-भांति परिचित था जब किसी प्रश्न पर कहीं भी वचन न दिखाई दी तो यह बतला सकता था कि देश के हित मे किस प्रकार बाल की खाल निकाली जा सकती है और उसने उसके समकालीनो को राय म अपने निर्णयो मे सविधान के स्पष्ट शब्दो की भी खूब खीचा-तानी की।"[१] अब भी अमरीका के वकील उन निर्णयो को उतना ही पुनीत समझते हैं जितना सविधान की धाराओ को, क्योकि दोनो का ही तात्पर्य एक है। वह तात्पर्य यह है कि राष्ट्र को चिरजीवी और सुदृढ बनाया जाय।"[२]

राजशास्त्री हरमन फाइनल ने अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के बारे मे एक बार कहा था कि "ऐसे कर्तव्यों वाला ऐसा न्यायालय राजनीति शास्त्र अमेरिका की अपनी निराली देन है जो इसके विरोध म पाई जाती है।" इससे बढ़कर यह वह सीमेंट है जिससे सघराज्य का भवन सुदृढ बना रहता है।"

१ दी अमरीकन गवर्नमेण्ट, पृष्ठ ८७।
२ थ्यारी एण्ड प्रेक्टिस आफ माडर्न गवर्नमेंट, पृ० १, पृष्ठ ३०६।

एक दूसरे लेखक हेस्किन (F. J. Haskin) ने भी न्यायालय के बारे में कहा है, "कि यह न्यायालय राज्य संगठन यंत्र की चाल को ठीक रखने वाला चक्र है। जब लोकमत के झकोरों से सरकार के दूसरे विभाग इधर-उधर झटके खाते हैं यह *अपना न्याय संतुलन बनाये रखता है, सब समय और सब परिस्थितियों में इसका* कर्तव्य संविधान की सर्वोच्चता की रक्षा करना है। इस कर्तव्य का निबाहना लोकहित के लिये अत्यन्त आवश्यक है।"[1]

सर्वोच्च न्यायालय की बनावट—सर्वोच्च न्यायालय में एक प्रमुख न्यायाधीश जिसका वार्षिक वेतन २५,५०० डालर है और ८ उप-न्यायाधीश जिनमें से प्रत्येक को २५,००० वार्षिक वेतन दिया जाता है, होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय में काम करने के अतिरिक्त ये ६ न्यायाधीश उन ६ भ्रमणशील न्यायालयों के काम की देखभाल करते हैं जो कांग्रेस ने स्थापित किये हैं। संयुक्त-राज्य का सारा भूमि प्रदेश ६ क्षेत्रों में बाँटकर इन ६ भ्रमणशील न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में कर दिया गया है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश यदि चाहें तो ७० वर्ष की आयु में अवकाश प्राप्त कर सकते हैं, यदि उस समय तक वे दस साल तक अपने पद पर काम कर चुके हों। मुकद्दमों को सुनने के लिये सब न्यायाधीश मिलकर बैठते हैं। सबके बीच में प्रमुख न्यायाधीश बैठता है। मंगलवार, बुधवार, बृहस्पतिवार और शुक्रवार के दिन मुकदमों की सुनवाई होती है। शनिवार का दिन न्यायाधीशों के परामर्श के लिये निश्चित है, जब ये आपस में मिलकर सब मुकद्दमों पर विचार व बहस करते हैं और विचार करने के पश्चात् पृथक होकर अपने सुपुर्द किये हुए मुकदमे का निर्णय लिखते हैं। निर्णय पहले ही विचार करने के फलस्वरूप बहुमत से या सर्वसम्मति से ही निश्चित रहता है। अगले सोमवार के दिन न्यायालय भवन में सबके सामने ये निर्णय सुना दिये जाते हैं।

न्यायालय की बैठक साधारणतया अक्टूबर से लेकर जून तक हुआ करती है। दुनिया में ऐसी कोई संस्था नहीं है जो इतने प्रभावपूर्ण ढंग से अपना कार्य करती हो जितना अमरीका का सर्वोच्च न्यायालय करता है। इसकी बैठकों में समय निष्ठा और *अनुपम शान्ति देखने योग्य है।*

भ्रमणशील न्यायालय (Circuit Courts)—कांग्रेस ने सर्वोच्च न्यायालय के आधीन निम्नकोटि की सघ अदालतें भी स्थापित की हैं। इस समय ऐसे न्यायालय १० हैं। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में से प्रत्येक एक भ्रमणशील न्यायालय के प्रबन्ध की देख-भाल करता है। प्रत्येक भ्रमणशील न्यायालय में दो न्यायाधीश होते हैं जिनको १०,००० डालर प्रतिवर्ष वेतन मिलता है। यह दौरा करने वाले न्यायाधीश

[1] अमरीकन गवर्नमेंट, पृष्ठ २६६

कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त जिस जिले में न्यायालय की बैठक होती है वहाँ एक जिला न्यायाधीश भी होता है जो भ्रमणशील न्यायालयों की बैठकों में भाग लेता है यदि उसके निर्णय के विरुद्ध न्यायालय में अपील सुनी जा रही हो। ऐसा होते समय वह दौरा करने वाले न्यायाधीशों के साथ बैठकर अपील नहीं सुनता।

जिला न्यायालय—न्यायमंडल की तह में ८८ जिला न्यायालय हैं जिनमें एक या अधिक जिला न्यायाधीश होते हैं। इनका वेतन ३,००० डालर होता है। हर एक उपराज्य में कम से कम एक जिला न्यायालय अवश्य होता है। किन्हीं में एक से अधिक भी न्यायालय होते हैं किन्तु एक ही जिले में दो या अधिक उपराज्यों का प्रदेश शामिल नहीं किया जाता। कुछ इने-गिने मामलों को छोड़कर जिनमें सर्वोच्च न्यायालय का प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार है सब मामले जिले के न्यायालयों में ही पहले प्रारम्भ होते हैं। इनके निर्णय के विरुद्ध अपील भ्रमणशील न्यायालयों और अन्त में सर्वोच्च न्यायालय में हो सकती है। किन्तु अपराध के मुकदमों में जिनमें फाँसी का दण्ड दिया जा सकता है। जिले के न्यायालय से सीधी सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।

अन्य न्यायालय—उपर्युक्त न्यायालय के अतिरिक्त दो प्रकार के न्यायालय और भी होते हैं, एक *अध्यर्थन-न्यायालय* (Court of Claims) और दूसरे *निराकम्य कर के पुनर्विचारक न्यायालय* (Court of Customs Appeals)। पहले में सरकार के प्रति व्यक्तियों के दावे के मुकदमे सुने जाते हैं और दूसरे में निराकम्य कर सम्बन्धी कानून के अन्तर्गत मुकदमे निपटाये जाते हैं। ये न्यायालय साधारण मुकदमों से कोई सरोकार नहीं रखते।

सन् १९११ से पूर्व न्यायमण्डल की कार्य-प्रणाली व कार्यवाही से सम्बन्धित कानून में ६००० धारायें थीं किन्तु उसी साल इनको फिर से छानबीन की गई और उनमें से असंगत धाराओं को निकाल कर उन्हें एक संक्षिप्त पर स्पष्ट रूप दे दिया गया।

अमरीकी संघ-न्यायपालिका पर सिंहावलोकन

अमरीकी संघ-न्यायपालिका राजनीति क्षेत्र में बहुत महत्व रखती है। उसका प्रभाव *अन्य राज्यों के संघीय न्यायालयों पर पड़ा है। परन्तु यह आश्चर्य की बात है* कि स्विस (Swiss) संविधान, अमरीकी संविधान के बहुत से सिद्धान्तों के अनुकूल बनाया गया था, फिर भी स्विस फेडरेल न्यायपालिका के अधिकार अमरीकी न्यायपालिका से बिल्कुल भिन्न हैं क्योंकि उन्हें स्विस विधि की वैधता जाँच करने का अधिकार नहीं, और न वह दो उपराज्यों के आपसी झगड़ों का ही फैसला करती है। स्विस संविधान में कानूनों को स्वीकार और अस्वीकार करने तथा उन्हें रद्द करने का अधिकार जनता को प्राप्त है जो प्रत्यक्ष जनतंत्र के द्वारा किसी भी फेडरेल कानून को रद्द कर सकती है। स्विट्जरलैंड में उपराज्यों के आपसी विरोधों

का निपटारा फेडरेल कार्यपालिका (Federal Council) करती है। परन्तु भारतीय गणतंत्र के संविधान में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय के बहुत कुछ अनुकूल हुई है और उन दोनों की तुलना की जा सकती है।

अमरीकी फेडरेल न्यायपालिका की निम्न विशेषतायें ध्यान देने योग्य हैं—

(१) अमेरिका की फेडरेल न्यायपालिका उपराज्यों की न्यायपालिकाओं से पृथक तथा स्वतंत्र है क्योंकि वहाँ प्रत्येक राज्य की न्यायपालिका पहले से ही स्थापित थी और इस कारण उसकी स्वतन्त्रता ज्यों की त्यों कायम है। संघीय सर्वोच्च न्यायालय का *उपराज्य के न्यायालयों पर कोई आधिपत्य नहीं, अर्थात् उपराज्य के न्यायालयों के* साधारण (उपराज्य के कानूनों से सम्बन्धित) अभियोगों में सर्वोच्च न्यायालय में अपील नहीं होती।

(२) अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) का कर्तव्य है कि वह संविधान की सर्वोपरिता (Supremacy) की रक्षा करे, उसका ठीक ठीक अर्थ अथवा निर्वचन (interpretation) करे। इस कर्तव्य पालन के कारण सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र (jurisdiction) बहुत कुछ बढ़ गया है। वह इस बात का अन्तिम निर्णय करता है कि संविधान के किसी भी अनुच्छेद (Article) अथवा खण्ड (section) अथवा वाक्य का असली अर्थ क्या है? उसी का किया हुआ अर्थ मान्य समझा जाता है।

(३) *निहित शक्तियों का सिद्धान्त* (*Doctrine of Implied Powers*) सर्वोच्च न्यायालय ने ही प्रतिपादित और स्थापित कर केन्द्रीय सरकार की विधायिनी शक्ति को बढ़ाया है और आज इसी सिद्धान्त की बदौलत कांग्रेस के कानून बनाने के *अधिकार बहुत बढ़ गये हैं जिसके फलस्वरूप केन्द्रीय सरकार बहुत दृढ़ हो गई है।*

(४) सर्वोच्च न्यायालय अमरीकी नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करता है। ये मूल अधिकार संविधान में किये गये पहले दस संशोधनों तथा अन्य कई संशोधनों में वर्णन किये गये हैं। यदि कोई भी सरकार चाहे केन्द्रीय सरकार हो व उपराज्य की सरकार, इन मूल अधिकारों का अपने किसी अधिनियम (Act) या आदेश और आज्ञा से उल्लंघन करती है तो कोई भी नागरिक सर्वोच्च न्यायालय में प्रार्थना कर उस अधिनियम या आदेश और आज्ञा को रद्द करा सकता है।

(५) सर्वोच्च न्यायालय सभी सरकारों के आधिपत्य से स्वतंत्र है। उसकी स्थापना संविधान से हुई है और उसी से उसका अधिकार क्षेत्र निश्चित हुआ है।

(६) सर्वोच्च न्यायालय साधारण तौर पर अपने पहले दिये गये निर्णयों के अनुकूल ही आगे निर्णय देता है परन्तु ऐसा करने के लिये वह बाध्य नहीं है।

(७) सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीश एक साथ बैठ कर प्रत्येक मामले को सुनते और निर्णय देते हैं अर्थात् वहाँ बेंच (Bench) एक ही है।

(८) सर्वोच्च न्यायालय अपना फैसला तो देता है परन्तु उस फैसले को लागू करना कार्यपालिका (executive) अर्थात् प्रेसीडेन्ट का काम है। सर्वोच्च न्यायालय के पास अपनी कोई ऐसी शक्ति नहीं जिससे वह अपने दिये गये फैसले के अनुसार किसी को बाध्य कर सके।

अमरीकन और भारतीय सर्वोच्च न्यायालयों (Supreme Courts) की तुलना

भारतीय गणराज्य के संविधान निर्माताओं ने भारतीय सर्वोच्च न्यायालय का संगठन और अधिकार क्षेत्र निर्णय करते समय अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय से बहुत कुछ प्रेरणा ली थी, इसीलिये इन दोनों सर्वोच्च न्यायालयों की तुलना इस प्रकार की जा सकती है :

(१) अमरीकी सुप्रीमकोर्ट का उपराज्यों की न्यायालिकाओं पर आधिपत्य नहीं है परन्तु भारतीय सुप्रीमकोर्ट सारे भारत के सभी न्यायालयों पर सर्वोपरि है इसलिये वह सभी मामलों में अन्तिम अपील न्यायालय है परन्तु अमरीकी सुप्रीमकोर्ट का अधिकार क्षेत्र सीमित है।

(२) दोनों ही न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन (judicial review) का अधिकार है किन्तु इस में अमरीकी सुप्रीमकोर्ट अधिक शक्तिशाली इसलिये है कि वहाँ कांग्रेस की कानून बनाने की शक्ति बहुत ही परिमित है।

(३) दोनों ही न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रेसीडेंट करता है। अमरीकी प्रेसीडेंट नियुक्ति करने में अधिक स्वतन्त्र है, वह अपनी ही समझ से किसी व्यक्ति को, सीनेट की अनुमति से नियुक्त करता है। भारतीय प्रेसीडेंट (राष्ट्रपति) न्यायाधीशों की नियुक्ति अपने मंत्रिमंडल की सलाह के अनुसार करता है, और सर्वोच्च न्यायालय के उच्चन्यायाधीशों की नियुक्ति में वह उसके प्रमुख न्यायाधीश (Chief Justice of India) से भी राय लेता है।

(४) दोनों ही न्यायालयों के फैसले सभी को मान्य होते हैं। अमरीकी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में यह नहीं है कि वह प्रेसीडेंट को किसी मामले पर सलाह (Advice) दे, किन्तु भारतीय सर्वोच्च न्यायालय का सलाहकारी अधिकार क्षेत्र (Advisory Jurisdiction) भी है। राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ने कई बार सर्वोच्च न्यायालय से सलाह मांगी है, जैसे केरल के शिक्षा विधेयक (Education Bill of Kerala) पर और भारत-पाकिस्तान के बीच हुए निर्णय के अनुसार कुछ भारतीय क्षेत्र फल को पाकिस्तान को देने की वैधता (Constitutionality) पर। इस दृष्टि से भारतीय सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र अधिक विस्तृत है।

(५) भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अर्हताएं (Qualifications) स्पष्टतया संविधान के अनुच्छेद १२४ खण्ड ३ में वर्णित हैं। अमरीकी संविधान में ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं, परन्तु वहाँ भी योग्यतम कानून जानने वाले व्यक्ति ही न्यायाधीश नियुक्त होते हैं। अमरीकी न्यायाधीशों के लिये अवकाश प्राप्त करने (Retirement) की कोई आयु नहीं, परन्तु भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश ६५ वर्ष की आयु में अवकाश ग्रहण करते है।

(६) दोनों ही सर्वोच्च न्यायालय संविधान तथा नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करते है।

(७) अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीश एक बेंच हैं, किन्तु भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के १५ न्यायाधीश विभिन्न बेंचों में बैठकर न्याय करते हैं, जिनका निर्माण करना तथा वैधानिक प्रश्नों को तय करने के लिये वैधानिक बेंच (constitutional bench) तय करना प्रमुख न्यायाधीश के अधिकार में है। वही दंड विधि तथा व्यवहारिक विधि (criminal law and civil law) से सम्बन्धित अभियोगों का निर्णय करने के लिये विभिन्न बेंचें नियत करता है।

(८) क्योंकि अमेरिका का संविधान सर्वोपरि विधि है, अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय इसकी रक्षा करने में विशेष प्रकार शक्तिशाली है। किन्तु भारतीय संविधान में केन्द्रीय सरकार की विधायिनी शक्ति अमरीकी कांग्रेस से कहीं अधिक है, और संविधान का संशोधन भी सुगमता से हो जाता है, इसलिये भारतीय सर्वोच्च न्यायालय, यद्यपि वह संविधान के प्रतिकूल विधि (law) को अवैध घोषित कर देता है, इतना शक्तिशाली नहीं जितना अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को विफल करना भारतीय संसद के लिये आसान है जैसा कि उसने संविधान के अनुच्छेद १६ व ३१ में संशोधन कर न्यायालय के दिये निर्णयों को विफल कर दिया था। उस समय भारतीय प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि हमारे आर्थिक सुधारों के मार्ग में यदि न्यायालय अड़चन डालेगा तो हम संविधान का संशोधन कर न्यायालय को अड़चन लगाने से वंचित कर देंगे। सन् १९३७ में रूजवेल्ट और अमरीकी सुप्रीम कोर्ट के बीच आर्थिक सुधारों के सम्बन्ध में अधिक मतभेद हो गया था, उस समय रूजवेल्ट ने भी ऐसी ही धमकी दी थी। वह संकट किसी तरह टल गया था। परन्तु इसमें संदेह नहीं कि इस दृष्टि से अमरीकी सुप्रीम कोर्ट भारतीय सुप्रीम कोर्ट की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और स्वतंत्र है तथा उसका अधिकार क्षेत्र अधिक विस्तृत है।

अध्याय २०

अमेरिका में राजनीतिक दल

मैं उन राजनीतिक दलों को महान कहूँगा जो परिणामों का विचार न कर सिद्धान्तों को अधिक अपनाते हैं, जो विशेष बातों का ध्यान न कर सामान्य बातों को देखते हैं, जो व्यक्तियों का ध्यान न कर विचारों को देखते हैं। ऐसे दलों की विशेषता उच्च सदाचार है अधिक उदारता अधिक सच्चा विश्वास, अधिक साहसपूर्ण कृत्य, उनके लक्षण हैं।

—डी टाकविली

यह सिद्धान्त स्वतः सिद्ध सा मान लिया गया है कि जनतन्त्र की सफलता के लिए राजनीतिक दलबंदी आवश्यक है। जब किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये एक ही विचारधारा के कुछ लोग आपस में सहयोग स्थापित कर किसी एक विशेष मार्ग अथवा साधन द्वारा कार्य करना निश्चित कर लेते हैं तो उनको "दल" के नाम से पुकारा जाता है। अनुभव से ऐसा मालूम होता है कि राज्य के करोड़ों मतदाता यदि स्वतन्त्र रूप से मत दे और किसी दल अथवा संस्था के सिद्धान्तों से प्रभावित न हों तो अवश्य ही वे ऐसे प्रतिनिधि नहीं चुन सकते जो किसी प्रकार आपस में सहयोग कर ठीक तरह कार्य कर सकें। जहां भी निर्वाचन होते हैं वहीं पर दलबंदी आरम्भ हो जाती है। दलबंदी से लाभ भी होता है और हानि भी। हमारा यहां पर दलबंदी की प्रथा के गुण और दोष वर्णन करने का अभिप्राय नहीं है। हम तो केवल अमेरिका के जनतन्त्र में दलबंदी कैसे आरम्भ हुई, विभिन्न दलों के क्या सिद्धान्त है और वहां दलबंदी का क्या प्रभाव और महत्त्व है, यही समझना चाहते हैं।

राजनीति के इतिहास में, विशेषकर शासन पद्धति में, राजनीतिक दलबंदी का आरम्भ इंगलैंड में हुआ। जब वहां गृह युद्ध (Civil War) १६४०-४६ हुआ तो पार्लियामेंट में राजा के समर्थक तथा विरोधी सदस्यों ने अपनी अपनी आवाज उठाई। यही राजनीतिक दलों का आरम्भ था। कालांतर में वहां समदलात्मक प्रणाली की स्थापना हुई जो एक विचारधारा पर आधारित थी। एक ही सिद्धान्त के मानने वाले एकत्रित हो कर राजनीति बागडोर अपने हाथ में लेने के लिए प्रयत्न करने लगे। उनके विपरीत विचार और सिद्धान्त वाले स्वतः विरोधी बन गये। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में इन दलों का विकास हुआ और उनके सिद्धान्तों और मन्तव्यों में भी हेर-फेर हुआ। विदेशीय नीति, व्यापार के सिद्धान्तों और

आर्थिक उद्देश्यों के सम्बन्ध में तथा समाज के ढांचे के बारे में भेद होने के कारण ही दलबंदी की प्रथा अधिक परिपक्व हुई और शासन विधि में एक मान्य सिद्धान्त बन गई। जिन जिन देशों ने इंगलैंड को शासन पद्धति के मुख्य सिद्धान्तों को, जैसे, ससदीय कार्यपालिका, प्रतिनिधि-जनतंत्र (representative democracy) और सार्वजनिक सप्रभुता (popular sovereignty), को अपनाया उन्होंने राजनीतिक दलबदी को भी अपनाकर और उसे शासन-पद्धति का अनिवार्य अंग समझ कर अपने सविधानों का निर्माण किया। यह ठीक है कि आरम्भ में इन विधानों में इन दलबदी का कोई जिकर नहीं। विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका के सविधान निर्माताओं ने तो दलबंदी से दूर रहने को ही उत्तम समझ कर अध्यक्षात्मक कार्यपालिका (Presidential executive) को रचना की थी। फिर भी निर्वाचन एक ऐसी प्रणाली है जिसमें दलबंदी होना आवश्यक हो जाता है। अमेरिका ने भी इंगलैंड से ही दलबंदी की प्रथा सीखी है।

परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका के राजनीतिक पक्षों की रचना, रूप व उद्देश्य, इंगलैंड व अन्य देशों के पक्षों से भिन्न है। इस भिन्नता का कारण समझने केलिये इन राजनीतिक पक्षों का इतिहास जानना आवश्यक है।

अमेरिका में राजनीतिक दलों का आरम्भ—अमरीकी १३ उपनिवेशों की जनता में दो भाग थे जिनमें सामाजिक तथा आर्थिक भिन्नता थी। एक भाग में धनी और उच्च स्तर के व्यक्ति थे जो इंगलैंड के राज-तन्त्र के प्रति विशेष निष्ठा रखने का दावा करते थे। इनकी संख्या कम थी, राजभक्त होने के कारण इनको इंगलैंड की सरकार से सुविधाएं प्राप्त थीं, अतएव जब स्वतन्त्रता का आन्दोलन आरम्भ हुआ तो ये राजनीतिक लाभ तो उठाना चाहते थे परन्तु यह नहीं चाहते थे कि इंगलैंड का आधिपत्य बिलकुल छोड़ दिया जावे। जब स्वतन्त्रता का युद्ध आरम्भ हुआ तो इनमें से अधिकांश संयुक्त राज्य की सीमा छोड़कर कनाडा के दक्षिणी प्रान्त क्यूबेक में जाकर बस गये। दूसरा पक्ष उन लोगों का था जो मध्य-श्रेणी के थे (जिनमें पढ़े-लिखे, राजनीतिक नेता, वकील, व्यापारी थे) और वे नीचे की श्रेणी के लोग थे जिन्हें जीवन-सामग्री सुलभ-प्राप्त न थी, जो अपने शारीरिक परिश्रम से जीविका कमाते थे। इन सब की संख्या बहुत अधिक थी और इंगलैंड की सरकार की नीति को असह्य समझकर उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया था।

अमेरिका की स्वतन्त्रता संग्राम समाप्त होने के बाद उपरोक्त राजनीतिक भेदभाव समाप्त हो गया और संयुक्त राज्य के लिये आन्तरिक शासन का, तथा शांति-स्थापना के फलस्वरूप साधारण जनता की समस्याओं का प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया। जब फिलेडेल्फिया सम्मेलन बुलाया गया तो उसके सामने सबसे अधिक महत्व का प्रश्न यह

था कि संविधान किस तरह का बनाया जाय। केन्द्रीय सरकार का क्या रूप, शक्तियाँ और पद्धति हो ? और नवीन पद्धति में उपराज्यों (States) का क्या स्थान रहे ! केन्द्र तथा उपराज्यों के क्या सम्बन्ध हो ? इन प्रश्नों पर विचार होते समय यह देखा गया कि सम्मेलन में उपस्थित प्रतिनिधियों में दो मत थे। कुछ प्रतिनिधि जिनका नेतृत्व अलैक्जन्डर हेमिल्टन (Alexander Hamilton) ने किया, यह चाहते थे कि केन्द्रीय सरकार की शक्तियां और अधिकार इतने अधिक हो कि वह अमेरिका की स्वतंत्रता की रक्षा ही न करे वरन् उसकी समृद्धि और कल्याण में अग्रसर हो। ये लोग सघीय-सरकार पद्धति के समर्थक होने के कारण सघवादी अथवा फेडेरेलिस्ट्स (Federalists) नाम से प्रसिद्ध हुए। दूसरे पक्ष के लोग इनके विरोधी थे और सघ-विरोधी अथवा एन्टी-फेडेरेलिस्ट्स (Anti-federalists) नाम से प्रसिद्ध थे और चाहते थे कि केन्द्रीय सरकार को शक्तियां अत्यन्त कम हो और उपराज्य हो पूर्णतया सत्ताधारी रहे। इन्होंने सम्मेलन में यह प्रयत्न किया था कि जहा तक हो केन्द्रीय सरकार की विधायिनी, कार्यकारिणी तथा आर्थिक शक्तियों पर अधिक से अधिक प्रतिबन्ध रहे। इनका विशेष नेतृत्व टामस जफ़र्सन ने (Thomas Jefferson) सम्मेलन का सदस्य न होते हुए बाहर से किया। क्योंकि जेफर्सन को अमेरिका की स्वतंत्रता के घोषणा का जनक समझा जाता था और वह योग्य भी बहुत था, उपराज्य-वादी उसके नेतृत्व में एकत्रित थे। जार्ज वाशिंगटन (George Washington , को जिसने स्वतंत्रता युद्ध में अमरीकी सेना के प्रमुख सेनाधिप का पद योग्यता से सभाला था, युद्ध में विजय पाई थी, सम्मेलन का सभापति निर्वाचित किया गया। उनको सम्मेलन के सभी सदस्य आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते थे। वाशिंगटन खुली तौर पर तो किसी पक्ष का समर्थन न कर स्वतंत्र थे और चाहते थे कि अमरीकी राजनीति में दलबदी को प्रोत्साहन न दिया जावे क्योंकि उनका विश्वास था कि ससदीय प्रणाली में दलबदी भले ही आवश्यक अथवा लाभकारी हो किन्तु अध्यक्षात्मक प्रणाली में वह अनावश्यक और घातक है। फिर भी उनकी हार्दिक इच्छा थी कि केन्द्रीय सरकार को, जिसका एक निर्दिष्ट वर्तव्य जन-कल्याण रखा है, सशक्त ही रखा जावे।

वाशिंगटन शासन और दलबंदी (१७८६-१७६७)—मतदाताओं ने वाशिंगटन को सर्व-सम्मति से सयुक्त राज्य अमेरिका का प्रथम प्रेसिडेंट निर्वाचित किया। वाशिंगटन को ही पहले पहल केन्द्रीय शासन का सगठन करना पडा। उन्होंने अपने पहले मंत्रिमंडल में, स्वय अत्यन्त कुशल शासक होने के कारण, केवल योग्य और कुशल व्यक्तियों को रखा और दलबदी का ध्यान न कर अत्यन्त उत्तरदायी और महत्वपूर्ण दो पदों पर टामस जेफरसन राज्य मंत्री (Secretary of state) और

अलैक्जन्डर हेमिल्टन अर्थ मंत्री (Finance Secretary) को नियुक्त किया। यद्यपि ये दोनों एक दूसरे के घोर राजनीतिक शत्रु थे और अपने अपने दल का नेतृत्व करते थे, फिर भी वाशिंगटन ने अपनी चतुराई तथा व्यवहार कुशलता से दोनों का सहयोग प्राप्त कर अपने पद-काल मे लड़ने नही दिया। अन्य सचिव पदो पर वाशिंगटन ने जो लोग नियुक्त किये वे संघवादी ही थे। आठ वर्ष के शासन-काल मे वाशिंगटन ने *राजनीतिक दलबंदी की भावना को पनपने न दिया। और अपने शासन के अन्त मे* अपनी विदाई भाषण (Farewell Address) मे दलबंदी के विषय मे ये विचार प्रकट किये : "मैंने पहले ही आप लोगों को राज्य मे दलबंदियो के खतरे से चेतावनी दे दी है, विशेषतया भौगोलिक दृष्टि से उनके निर्माण होने के विरुद्ध। अब मैं अधिक विस्तार से आपको अत्यन्त शांत भाव से दलबंदी के दुष्परिणाम से चैतन्य करता हूँ . . . इससे सदैव सार्वजनिक विचार-विमर्श मे और लोक प्रशासन मे मार्ग विहीनता आती है। इसके कारण समाज मे व्यर्थ की उत्तेजना, निराधार द्वेष और झूठी बातें फैलती हैं; यह एक भाग को दूसरे का शत्रु बनाती है; और कभी कभी उपद्रव तथा अशांति उत्पन्न करती। . . कुछ लोगो का विचार है कि स्वतंत्र देशो के लिये दलबंदियां लाभकारी हैं क्योंकि वे शासन पर प्रतिबन्ध रखती हैं और स्वतंत्रता की भावना को जीवित रखती हैं। कदाचित् किसी हद तक यह ठीक है— और राजतंत्रीय शासन मे इनको देशप्रेम की दृष्टि से सहन किया जा सकता है। परन्तु लोकप्रिय शासन मे, जहां सर्वथा निर्वाचित शासन हो, इस भावना को प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिये . . . इस अग्नि को अधिक उत्तेजित नहीं करना है, इसको सतर्क रहकर प्रज्वलित नहीं होने देना है, क्योंकि ऐसा न हो कि यह अग्नि गरम रखने के बजाय भस्म ही कर दे।"

वाशिंगटन के प्रेसीडेन्ट पद से हटने पर सन् १७६७ मे जोहन एडम्स (John Adams) को जो संघवादी (Federalists) थे प्रेसीडेन्ट निर्वाचित कर लिया गया। परन्तु हेमिल्टन ने (वाशिंगटन के पद-काल मे) जो आर्थिक सुधार और योजनाएं चलाई उनसे देश की आर्थिक स्थिति तो अवश्य सुदृढ हो गई और केन्द्रीय सरकार की शक्ति बढ गई, परन्तु उस नीति को संघवादियो अथवा फेडेरेलिस्ट्स को बड़ी भारी मूल्य चुकानी पड़ी। उस नीति ने केन्द्रीय सरकार को आर्थिक स्थिति सुधारने के लिये जो आयात-कर (Import Duties) लगाये उन करो का भार जनता पर पड़ा क्योंकि देश की उत्पादित वस्तुओं का मूल्य बढ गया और देश के व्यापारियो को उनके उद्योग की वृद्धि मे सहायता मिली। किन्तु इसी कारण फेडेरेलिस्ट दल लोकप्रियता खो बैठा। साधारण लोग समझने लगे कि यह दल व्यापारियो का मित्र है और जनता पर आर्थिक भार डालता है। परिणाम यह हुआ कि सन् १८०१ के

प्रेसीडेन्ट निर्वाचन मे सघ-विरोधी नेता जेफर्सन जो रिपब्लिकन दल (Republican Party) के नेता थे, को सफलता मिली और अगले २८ वर्ष तक इसी दल का शासन रहा। फेडेरेलिस्ट दल का अन्त ही हो गया।

गणतत्रीय तथा जनतंत्रीय दलों का आरम्भ—जेफर्सन स्वय सघीय विरोधी या और केन्द्रीय सरकार की शक्ति को परिमित रखना चाहता था। परन्तु १८०१मे प्रेसीडेन्ट निर्वाचित होने के पश्चात् अतराष्ट्रीय स्थिति कुछ ऐसी हो गई कि उसने ल्युसियाना क्रय (Lousiana Purchase) के कारण प्रेसीडेन्ट की फलत. केन्द्रीय सरकार की शासन शक्ति को बढाना ठीक समझा, अर्थात् रिपब्लिकन दल के सिद्धान्तो के विरुद्ध जेफर्सन ने (रिपब्लिकन नेता होते हुए) केन्द्रीय सरकार की शक्ति बढाई। इससे यह सिद्ध हो गया कि अमरिका म दलबदी कोई विशेष सिद्धान्तो पर आधारित नही है।

दो दल मुख्य हैं, एक है डिमोक्रेट्स (Democrats) और दूसरा है रिपब्लिकेन्स (Republicans)। पिछले १५० वर्षो मे इनके सिद्धान्तो और उद्देश्यो मे बहुत हेर-फेर हुआ है। जो आरम्भ मे सघवादी अथवा फेडेरेलिस्ट थे वे केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्ति देने के पक्ष मे थे और इनके विरोधी जो सघ-विरोधी थे उप-राज्यो को शक्ति को अधिक रखना चाहते थे। हेमिल्टन का नीतिने फेडेरेलिस्टाको ठेस पहुँचायी और वह दल सन् १८१६ मे समाप्त हो गया। किन्तु उसी के उतराधिकारी नेशनल रिपब्लिकन (National Republican) १८१६-३४ हुए जो १८३४ से १८५४ व्हिग (Whigs) नाम से प्रसिद्ध रहे और १८५४ मे अबतक रिपब्लिकन कहलाते है जो सामान्यया केन्द्र की शक्ति के पक्षपाती है। उधर दूसरी ओर रिपब्लिकन सघ-विरोधी (Anti-Federalists) १७८७-९१ तक उपराज्यो के समर्थक रहे, १७९१-१८२५ तक डिमोक्रेटिक रिपब्लिकन नाम से प्रसिद्ध रहे और तब से अब तक डिमोक्रेटिक कहलाते हैं। इसम स्पष्ट हो जाता है कि जो दल सघ के आरम्भ मे हेमिल्टन के नेतृत्व सघवादी (अर्थात् केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तिशान बनाना चाहता था) आज रिपब्लिकन कहलाता है और सिद्धान्ततः केन्द्र का पक्षपाती है। इसके विपरीत जो सघ-विरोधी (Anti-Federalists) अपने को जेफर्सन के नेतृत्व मे रिपब्लिकन कहते थे और उपराज्यो क समर्थक थे अब डिमाक्रेट्स कहलाते हैं और सामान्यतया उपराज्यो के समर्थक है। नामो म इस प्रकार हेर-फेर हो गया है और सिद्धान्तो मे अब इन दोनो दलो म बहुत अधिक मतभेद भी नही है।

निम्न तालिका से इन दलो का इतिहास स्पष्ट हो जाता है :—

अमेरिका के मुख्य राजनीतिक दल

स्वतन्त्रता आंदोलन के उदार
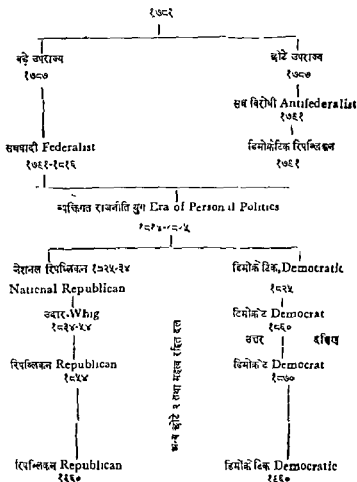
राजनीतिक दलों की महत्ता — यों तो आरम्भ से रिपब्लिकन-दल के नेता, जेफर्सन आदि, उपराज्यों की सत्ता के पक्षपाती थे, वे दक्षिण उपराज्यो मे अधिक प्रबल थे, गुलामी की प्रथा का समर्थन करते थे, परन्तु समता, स्वतन्त्रता और न्याय के पक्ष में थे, उनकी अधिक संख्या कपास उत्पादन करने वालो मे अधिक थी। किन्तु सन् १८६०-६४ के गृहयुद्ध के पश्चात् उनका नाम डिमोक्रेट हो गया और दूसरा पक्ष जो केन्द्रीय सरकार का समर्थक था रिपब्लिकन नाम से प्रसिद्ध हुआ।

अब अमेरिका में दो ही राजनीतिक दल हैं, रिपब्लिकन तथा डिमोक्रेट। समाजवादी दल को अधिक सहायता नहीं मिली इसलिये वह अधिक नहीं पनपने पाया है। इंगलैंड में राजनीतिक दलों का आधार ही कुछ और है। वहाँ संसदीय शासन व्यवस्था के कारण एक दल जो संसद में बहुमत में होता है केबीनेट बनाता है, और दूसरा विरोधी दल केबीनेट की आलोचना कर उस अवसर की प्रतीक्षा करता है जब मंत्रिमंडल में अविश्वास होने पर वह पदत्याग करे और स्वयं विरोधी दल को शासन की बाग डोर लेने का अधिकार मिले। इस कारण दिन प्रति दिन के शासन में वहाँ दलबन्दी का बहुत महत्व है। किन्तु अमेरिका में अध्यक्षात्मक कार्यपालिका होने के कारण कम से कम चार वर्ष तक इस की कोई भी आशा नहीं रहती कि विरोधी दल को शासन करने का अवसर प्राप्त होगा।

संयुक्त राज्य की दलबंदी में बहुत कुछ ढीलापन इसलिये भी है कि वहां न तो विदेशीय नीति में अधिक भेदभाव होने की गुंजायश है और न आन्तरिक शासन नीति में। साधारणतया लोग उद्योग-व्यवसाय में इतने लगे रहते हैं कि वे अपनी जीविका को अधिक उपयोगी बनाना ही श्रेय समझते हैं। वहाँ मध्यम श्रेणी के लोग अधिक हैं, भुखमरी नहीं है, जीविकोपार्जन के साधन बहुत हैं, साधारण मजदूर की भी आय काफी है इसलिये आर्थिक संकट ऐसा नहीं होता कि सरकार को अपनी नीति में बड़े परिवर्तन करने पड़ें। सारांश यह है कि संयुक्त राज्य के राजनीतिक क्षेत्र में ऐसी परिस्थितियां नहीं हैं जहाँ राजनीतिक मतभेद इतना भारी हो जाय कि दलबंदी की अनिवार्य आवश्यकता हो।

फिर भी संयुक्त राज्य में दलबंदी कायम है और रहेगी। इसका कारण ये हैं :—(१) *लोकतंत्रीय शासन होने के कारण वहाँ* उपराज्यों और केन्द्र के विधान मंडलों, राष्ट्रपति (President) और उपराज्यों के गवर्नरों का निर्वाचन होता है, इस निर्वाचन में करोड़ों मतदाता भाग लेते हैं, उनको संगठित करने के लिये दलबंदी ही एक मात्र साधन है। (२) प्रेसीडेंट और उपराज्यों के गवर्नरों को अनेक पदों पर नियुक्त करने का अधिकार है। वे अपने अपने ही दल के व्यक्तियों को नियुक्त करते हैं, इसलिये पदाभिलाषियों के लिये दलबंदी का महत्व है। (३) विभिन्न निर्वाचनों में

दलबदी द्वारा ही अभ्यर्थी चुने जाते हैं, उनको नामजद किया जाता है, चुनाव युद्ध किया जाता है और साधारण मतदाताओ को राजनीतिक मामलो से जानकारी कराई जाती है। प्रत्येक दो वर्ष पश्चात् पूरे प्रतिनिधि सदन एक तिहाई-सीनेट, सभी उपराज्यो के विधान मडलो और अधिकतर गवर्नरो का चुनाव होता है जिसमे दलबदी आवश्यक है।

दलो का सगठन इस प्रकार होता है कि सारे राष्ट्र के लिये एक कमेटी होती है जिसका एक सभापति तथा अन्य सदस्य कार्यकारिणी मे होते हैं। प्रत्येक उप-राज्य का इसमे प्रतिनिधित्व होना है। राष्ट्रीय कमेटी का एक भाग चुनाव की देख रेख करता है। वास्तव मे दल के प्रमुख नेताओ का एक छोटा गुट (Caucus) ही सारी नीति निर्धारित करता और शक्ति का प्रयोग करता है। प्रत्येक राज्य मे भी दल की एक शाखा होती है जो उपराज्य मे वही महत्व रखती है जो राष्ट्रीय कमेटी का समस्त राष्ट्र मे है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र मे भी दल की शाखा होती है, और उसके विभिन्न प्रारम्भिक क्षेत्रो (Primaries) मे भी शाखायें होती हैं।

दल के आय व्यय के लिये प्रत्येक दल सदस्य को वार्षिक शुल्क देना पड़ता है, परन्तु अधिक आय उन दानो और अनुदानो से प्राप्त होती है जो दल के धनी सदस्य अथवा दल से सहानुभूति रखने वाले व्यापारी अथवा कम्पनियाँ देती हैं।

दलो की सदस्यता किस प्रकार है और उसमे भूगोल, धर्म-मत, जाति आदि का क्या प्रभाव है? प्रत्येक दल म वे ही व्यक्ति सदस्य होते हैं जो दल की नीति, विचार-धारा तथा कार्यक्रम और उद्देश्य का समर्थन करते है अथवा उनसे सहानुभूति रखते हैं। परन्तु इसका यह भी अर्थ नही कि प्रत्येक मतदाता स्वय अपने विचार से ही इसका निर्णय करता है। उसका रुख तो वे लोग बदलते और बनाते है जो दल के नेता, उपनेता अथवा स्थानीय कार्यकर्ता उससे सम्पर्क रखते हैं ऐसे लोगो की सख्या बहुत है। एक बार एक दल के व्यवहारिक अनुभवी व्यक्ति ने कुछ ठीक ही कहा था कि "दल तो मूर्खो के आधार पर कायम है। विचारवान मतदाताओं की सख्या बहुत ही कम होती है। बहुत से लोग तो लकीर के फकीर होते हैं और कहते है कि 'मेरा कुटुम्ब रिपब्लीकन है, मैं भी रिपब्लीकन हूँ', अथवा 'डिमोक्रेट कुटुम्ब मे उत्पन्न मैं भी डिमोक्रेट हूँ'। प्रत्येक दल के स्थानीय कार्यकर्त्ता दल के समर्थक मतदाताओ से सम्पर्क रखते हैं, उन्हे पर्चो द्वारा, रेडियो और टेलीविजन (Television) द्वारा तथा दल के समाचार पत्रो द्वारा दल की नीति और कार्यक्रम से अवगत करते रहते हैं। दल के प्रमुख राष्ट्रीय नेता भी, रेडियो और टेलीविजन भाषणो तथा विभिन्न उपराज्यो मे भ्रमण कर दल की मशीन को चलाने म सहायता देते हैं।"

फिर भी यह कहना ठीक ही होगा कि अनिश्चित मतदाताओं (wavering and uncommitted voters) पर जहाँ इन प्रचार-साधनों का प्रभाव पड़ता है, विशेषतया मतदाता अपना प्राचीन परिपाटी के अनुसार दल के समर्थक रहते हैं। साधारणतया रिपब्लिकन दल के समर्थक म उत्तरी उपराज्य हैं, दक्षिणी उपराज्यो म डिमोक्रेटो के अनुयायी अधिक है। अश्वेत (non white) मतदाता प्रायः रिपब्लिकन हैं, किन्तु सन् १६३२ के पश्चात् डिमोक्रेटो ने उनकी कुछ सख्या को अपनी ओर खीच लिया है। पोलेंड से आये उपनिवेदियों के कुटुम्बों का रुख डिमोक्रेट है किन्तु स्केन्डेनेवियन (Scandinavians) अधिकतर रिपब्लिकन हैं। दक्षिणी उपराज्यो के इगलैड उद्‌गम के लोग अधिकतर डिमोक्रेट हैं जो प्राय प्रोटेस्टेंट (Protestant) मतावलम्बी हैं। फ्रेंच उपनिवेशी केथोलिक (Catholic) हैं और रिपब्लिकन हैं। किस दल के नेता कितने प्रभावशाली, और योग्य है, इसका भी दलबंदी के अनुयायियों पर प्रभाव पड़ता है।

सिहावलोकन

यद्यपि संविधान म कही भी और किसी प्रकार भी दलबन्दी को प्रोत्साहन नही दिया गया फिर भी अमेरिका के राजनीतिक क्षेत्र म उसका बड़ा महत्व हो गया है और अब दल प्रथा शासन का अटूट और विशेष शक्तिवान अग है। साराश में हम कह सकते है कि :—

संयुक्त राज्य के राजनैतिक पक्षो की रचना, रूप व उद्देश्य इगलैंड व अन्य देशो के पक्षों के उद्देश्य से भिन्न हैं। इस भिन्नता को समझने के लिये इन पक्षो का संक्षिप्त इतिहास जानना सुविधाजनक होगा।

प्रारम्भ मे संयुक्त-राज्य अमेरिका म एक पक्ष था जिसमे धनीमानी व्यक्ति थे जो राजा के प्रति निष्ठा रखने का दावा करते थे। दूसरा पक्ष उन लोगो का था जो सख्या मे बहुत अधिक थे किन्तु निर्धन व साधन-हीन थे और जो राजभक्ति के प्रतिकूल देश-भक्ति को उच्चतर मानते थे। इस दलबन्दी का स्वतन्त्रता युद्ध के पश्चात् अन्त हो गया। सन् १७८७ म जब शासन-विधान बना तो दो शक्तिशाली पक्ष बने, एक फेडर-लिस्ट्स जो धनीमानी वर्ग म से थे और केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तिशाली बनाने के पक्ष में थे और दूसरे डेमाक्रेट्स जो उपराज्यो को सर्वाधिकार सत्ता व उनके अधि-कारो की प्रमुखता के समर्थक थे। ये लोग स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व का प्रचार करते थे। टौमसन जेफरसन इस पक्ष का नेता था। थोड़े ही समय के पश्चात् हेमिल्टन के नतृत्व म फेडरलिस्ट्स पक्ष जार्ज वाशिंगटन का सहयोग प्राप्त होने से अधिक शक्ति-शाली हो गया।

कुछ समय के पश्चात् दलबन्दी के आधार का रूप कुछ बदल गया। सन् १८५६ में फेडरलिस्ट्स जो उस समय रिपब्लिकन नाम से कहलाने लगे, और डैमोक्रेट्स में बहुत ही उग्र विरोध हो गया। यह जानकर आश्चर्य होगा कि डैमोक्रेट्स दास-प्रथा के समर्थक बन, उन्होंने अपने स्वतन्त्रता, समानता व भ्रातृभाव के सिद्धान्त को केवल गोरवर्ण जनता तक ही सीमित माना। इस पक्ष में अधिकतर वे लोग थे जो दक्षिणी उपराज्यों में कपास आदि की कृषि करते थे। रिपब्लिक पक्ष की अधिक संख्या उत्तरी उपराज्यों में थी। डैमोक्रेट्स ने कलहाउन के उस सिद्धान्त का समर्थन किया जिसमें यह माना जाता था कि किसी संघ शासन के उपराज्यों को स्वेच्छानुसार पृथक होने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। उन्होंने अब्राहम लिंकन की दास-प्रथा-निवारक नीति का विरोध किया। गृह-युद्ध के सन् १८६१ में अन्त हो जाने से और उसके परिणाम-स्वरूप विधान में संशोधन हो जाने से दास-प्रथा का प्रश्न सर्वदा के लिये हल हो गया और इन दोनों पक्षों की विभिन्न नीति का यह आधार समाप्त हो गया।

इस समय रिपब्लिकन और डैमोक्रेट दो राजनैतिक पक्ष हैं जिनमें से पहला दल एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के बनाने के पक्ष में है। यहाँ यह बतलाना उचित होगा कि अमेरिका में विभिन्न राजनैतिक पक्ष बनने के लिये पर्याप्त मसाला नहीं है। पहली बात तो यह है कि शासन विधान की भाषा इतनी स्पष्ट व उपराज्यों व केन्द्रीय सरकार में शक्ति-विभाजन के बारे में उसका मन्तव्य समझने में इतना सरल है कि राजनैतिक पक्षों के लिये कार्यक्रम का कुछ मसाला बचता ही नहीं। विधान संशोधन पेचीदा और कठोर होने से उसके आधार पर किसी राजनैतिक पक्ष का संगठन सम्भव नहीं। दूसरे अभी संयुक्त-राज्य की आर्थिक, सांस्कृतिक व भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि कोई महत्व पूर्ण राजनैतिक प्रश्न नहीं उठते। वहाँ मुश्किल से कोई निर्धन भूखा वर्ग मिलेगा क्योंकि कृषि, उद्योग व व्यापार का पूँजी अधिकतर जनसंख्या में बंटी हुई है। राष्ट्र का अधिकतर जनता मध्यवर्ग की है। संसार की दूसरी राष्ट्र-शक्तियाँ, यूरोपियन, जापान आदि संयुक्त-राज्य से इतनी दूर है कि अमेरिका को इनसे डरने की कोई सम्भावना नहीं है, इसलिये वैदेशिक नीति के आधार पर दलबन्दी नहीं हो सकती। उद्योग व व्यापार के लिये अब भी बड़ा विस्तृत क्षेत्र खुला पड़ा है और अधिकतर लोग इससे लाभ उठाने में व्यस्त है। अधिकतर लोग नोन-कानफोरमिस्ट्स (Non-Conformists) है इसलिये सांस्कृतिक विभिन्नता भी अधिक प्रखर नहीं है। सबसे अन्त में यह बात है कि शक्ति विभाजन के सिद्धान्त से राजनैतिक मतभेद का क्षेत्र बहुत संकुचित रह गया है।

इसलिये यह कथन चाहे कितना ही विपरीत क्यों न प्रतीत होता हो पर है यह सत्य कि अमेरिका राजनैतिक पक्षों के उद्देश्यों की विभिन्नता के हेतु संख्या में

इतने कम हैं कि "अमेरिका में एक ही राजनैतिक पक्ष है जिसे रिपब्लिकन व डेमोक्रे-टिक पक्ष का संयुक्त दल कहा जा सकता है जो स्वभाव से व अधिकार संघर्ष से दो समान भागों में बँटा हुआ है एक भाग रिपब्लिकन कहलाता है और दूसरा डेमोक्रेट।"[1] संयुक्त राज्य के इतिहास में अधिकतर रिपब्लिकन पक्ष ने निर्वाचनों में जीत पाई है और प्रेसीडेंट के पद पर उसी दल का प्रतिनिधि नियुक्त हुआ है। डेमोक्रेट पक्ष का प्रभुत्व बहुत कम रहा है। राजनीतिज्ञ हरमन फाइनर ने उन पक्षों के कार्य व इनमें असमानता न होने के सम्बन्ध में कहा है, "यह ध्यान देने योग्य बात है कि अमरीकन राजनैतिक पक्षों के बारे में जितना साहित्य है वह उनका महत्व दिखलाते समय यही कहता है कि ये दल मतधारकों को संगठित करते हैं और अपने उम्मेदवार खड़े करते हैं। कार्य-क्रम के मापदण्ड को और आदर्श के पालन को गौण मान कर इनका केवल साधारण-सा वर्णन ही कर दिया जाता है। कुछ समय से अब आर्थिक संकट व समाजवाद के जाग्रत होने से राजनैतिक पक्षों में कुछ आर्थिक उग्र भेद उत्पन्न हो गए हैं जिनके फलस्वरूप समाजवादी पक्ष का संगठन हो गया है। किन्तु यह अभी अधिक प्रभावपूर्ण नहीं हुआ है। हालांकि यह समाजवादी पक्ष या और छोटे मोटे पक्ष बने रहें परन्तु अमरीकन राजनैतिक व निर्वाचनों पर इनका अधिक प्रभाव नहीं रहेगा। अतएव यह प्रतीत होता है कि दो पक्ष-प्रणाली (रिपब्लिकन व डेमोक्रेट) ही भविष्य में बहुत दिनों तक अमेरिका में प्रभुत्व जमाये रहेगी।

१ थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस आफ माडर्न गवर्नमेंट, पृ० ५३८।

पाठ्य पुस्तकें

Brogan, D. W.—The American Political System (London 1933).

Bryce, Viscount—Modern Democracies Vol II. pp 3—140

Bryce, Viscount—American Commonwealth 2 Vol (Macmillan 1907).

Finer, Herman—Theory & Practice of Modern Government, Vol. I. chs. VII, XI & XV. Vol. II chs XXIII.

Ferguson, J. H. and Mc Henry, Dean E—The American Federal System (1953).

Hamilton, Jay & Madison—The Federalist (Especially Nos I—XIV)

Haskin, F. J. The American Government, ch. I & XXII—XXVI

Hughes, C. E.—The Supreme Court of the United States (N.Y.1938.)

Munro, W. B.—The Government of the United States, (Macmillan 1937).

Newton, A. P.—Federal & Unified Constitutions. pp 66—94 .

Read, T. H.— Form & Functions of American Government, chs. I—III. IV. XI —XIII & XIX—XXIII.

Sharma, B. M. —Federal Polity, ch. II, pp 72—90 and Appendix A.

Smellie, K.—The American Federal System chs. I & III—VI

Wilson, Woodro—The State. (Chapters on Government of the United States.)

×——×

अध्याय २१

संयुक्त-राज्य अमेरिका में उपराज्यों की सरकारें

अमेरिका के राजनैतिक इतिहास मे उपराज्यो के शासन-विधान सबसे प्राचीन हैं क्योंकि वे उन्ही राजकीय उपनिवेश-चार्टरो के संशोधित व परिवर्तित रूप हैं जिनसे अमेरिका म सबसे प्रथम अग्रेजो बस्तियाँ स्थापित की गई थी और जिनके द्वारा उनकी स्थानीय सरकारो का सगठन किया गया था जिनके ऊपर ब्रिटिश सम्राट और अन्तिमत पालियामेट का आधिपत्य था। —जेम्स ब्राइस

उपराज्यों की उत्पत्ति का विकास—सन् १७८७ ई० मे सयुक्त-राज्य अमेरिका मे १३ उपराज्य थे। य वही उपनिवेश थे जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य के आधिपत्य को मानने से इन्कार कर दिया और स्वतन्त्रता-युद्ध मे विजय प्राप्त की। धीरे धीरे इसके पश्चात् पश्चिम की ओर नई बस्तियाँ स्थापित हुईं जिनके नये उपराज्य बने जो सन् १७८९ के शासन-विधान के तीसरे अनुच्छेद के पैरा १ की तीसरी धारा के अनुसार सघ-राज्य मे शामिल कर लिये गये। इस धारा मे नये उपराज्यो के बनने का प्रावधान कर दिया गया था, शर्त केवल यह थी कि तत्कालीन स्थित किसी उपराज्य की प्रदेश-भूमि के विस्तार आदि मे बिना काग्रेस या उस उपराज्य की विधान-मडल की सम्मति के कोई परिवर्तन न किया जायेगा। इस समय सयुक्त-राज्य अमेरिका के सघराज्य मे ५० उपराज्य हैं। उनका शासन उनके निजी पृथक् पृथक् शासन-विधानों द्वारा स्थापित राज्य सगठना के आधान होता है। ये शासन-विधान लिखित हैं और इनका अस्तित्व राष्ट्रीय सघ-शासन विधान पर निर्भर नहीं है किन्तु इनके आधारभूत सिद्धात एक समान हैं जो इगलैंड से बसने वाले अपने साथ लाये थे।

उपराज्यों के सम्बन्धों में कुछ प्रमुख बातें—भूमि के विस्तार, जनसख्या, भौगोलिक स्थिति और आर्थिक अवस्था मे उपराज्यो मे पारस्परिक विभिन्नता है। नीचे लिखा सारिणी म प्रत्येक उपराज्य (हवाई द्वीप के ५०वें उपराज्य सहित) का क्षेत्रफल, जनसख्या व सघ मे शामिल होने के समय के बारे मे सूचना मिल सकती है :—

उपराज्य का नाम और उसके सगठन का वर्ष		वर्ग मीलो मे लगभग क्षेत्रफल	१ अप्रेल सन् १९५८ को अनुमानित जनसख्या
अलाबामा	(१८१९)	५१,०७८	२,८४८,०००
अलास्का	(१९५८)	५७१,०६५	१२८,६२५
ऐरीजाना	(१९१२)	११३,५७५	७४९,५८७
अर्कनसास	(१८३६)	५२,६७५	१,९०९,५११
कैलाफोर्निया	(१९५०)	१५६,७४०	१०,५८८,२२३
कोलैरैडो	(१८७६)	१०३,९२२	१,३२५,०८९
कनैक्टीकट	(१७८८)	४,८९९	२,००७,२८०
डेलावेयर	(१७८७)	१,९७८	३१८,०८५
फ्लोरीडा	(१८४५)	५४,२६२	२,७७१,३०५
ज्योर्जिया	(१७८८)	५८,४८३	३,४४४,५७८
इदाहो	(१८९०)	८३,३५४	५३०,०००
इल्योनिस	(१८१८)	५६,०४३	८,६७०,०००
इण्डियाना	(१८१६)	३६,२०५	३,९०९,०००
आइओवा	(१८४६)	५६,५८६	२,६२५,०००
कनसास	(१८६१)	८१,७७४	१,९९८,०००
कन्टुकी	(१७९२)	४०,१८१	२,८१६,०००
लुईसियाना	(१८१२)	४५,४०९	२,५७६,०००
मेन	(१८२०)	२९,८९५	९००,०००
मेरीलैंड	(१७८८)	९,९४१	२,९४८,०००
मसाच्यूसेट्स	(१७८८)	८,०३९	४,७१८,०००
मिचीगन	(१८३७)	५७,४८०	६,२६५,०००
मिनैसोटा	(१८५८)	८०,८५८	२,९४०,०००
मिसिसिपी	(१८१७)	४६,३६२	२,१२१,०००
मिस्सौरी	(१८२१)	६८,७२७	३,९४७,०००
मोन्टाना	(१८८९)	१४६,१३१	४११,०००
नैब्रास्का	(१८६७)	७६,८०८	१,३०१,०००
नैवेदा	(१८६४)	१०९,८२१	१४२,०००
न्यू हैम्पशायर	(१७८८)	९,०३१	५४८,०००
न्यूजर्सी	(१७८७)	७,५१४	४,७२९,०००

उपराज्य का नाम और उसके सगठन का वर्ष		वर्ग मीलों में (लगभग क्षेत्रफल)	१ अप्रैल १९५८ को (अनुमानित) जनसख्या
न्यूमैक्सिको	(१९१२)	१२२,५०३	४७१,०००
न्यूयार्क	(१७८८)	७४,६५४	१४,३८८,०००
नार्थ केरोलीना	(१७८९)	४८,७४०	३,७१५,०००
नार्थडेकोटा	(१८८९)	७०,१८३	५६०,०००
ग्रोहियो	(१८०३)	४०,७४०	७,७९९,०००
ग्रोक्लाहामा	(१९०७)	६९,४१४	२,२६२,०००
ग्रोरागन	(१८५९)	९५,६०७	१,६२६,०००
पेंसिलवेनिया	(१७८७)	४४,८३२	१०,६८८,०००
रोड आइलैंड	(१७९०)	१,०६७	७४८,०००
साउथ केरिलोना	(१७८८)	७६,८६८	६२३,०००
साउथ डेकोटा	(१८८९)	३०,४६९	१,९९१,०००
टैनैसी	(१७९६)	४१,६८७	३,१४६,०००
टेक्सास	(१८४५)	२६२,३९८	७,२३०,०००
टाऊ	(१८९६)	८२,१८४	६६५,०००
वरमोन्ट	(१७९१)	९,१२४	३७४,०००
विरजीनिया	(१७८८)	४०,२६२	३,०२९,०००
वाशिंगटन	(१८८९)	६३,८३६	२,४८७,०००
वर्जीनिया	(१८६३)	२,०१२	१,९१५,०००
विसकौन्सिन	(१८४८)	५५,२५६	३,३०९,०००
व्योमिंग	(१८९०)	९७,५४८	२७५,०००
हवाई	(१९५९)	६,४३३	६१३,०००

उपराज्य शासन-विधान—संयुक्त राज्य के संघ शासन-विधान में केन्द्रीय राज्य संगठन की रचना व शक्तियों का वर्णन है। उसमें उपराज्यों के शासन-विधान के सिद्धान्त नहीं दिये हुये हैं। इस संघ शासन-विधान का निर्माण उन १३ मूल-उपराज्यों के शासन-विधानों के प्रमुख सिद्धान्तों के आधार पर हुआ था जो १७८७ के संगठन के सदस्य बने थे। अतएव उपराज्यों के शासन-विधान संघ-शासन-विधान से बिलकुल पृथक हैं। उनकी शक्ति का स्रोत पृथक पृथक उपराज्यों की जनता है। आस्ट्रेलिया व स्विट्ज़रलैंड में भी सदस्य-राज्यों के शासन-विधान संघ शासन-विधान में शामिल नहीं हैं और इसलिये उनका वैसा ही महत्व और स्वतंत्र अस्तित्व है जैसा अमेरिकन उपराज्यों

के शासन-विधानों का। इसके विपरीत, कनाडा, दक्षिणी अफ्रीका व रूस में संघ-शासन-विधान और उपराज्यों के शासन-विधान सब मिलकर एक शासन-विधान के रूप में हैं। भारतवर्ष के नए शासन-विधान में भी केन्द्रीय सरकार के संघात्मक राज्यसंगठन व प्रान्तों के राज्यसंगठन की रूपरेखा एक ही वैधानिक आलेख में निश्चित हुई है। अमेरिकन उपराज्यों के शासन-विधान संघ-शासन संविधान से पुराने हैं, इसलिये उनके आधार पर ही संघ-शासन की रचना भी हुई।

५० उपराज्यों का शासन-विधान—संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रत्येक उपराज्य का अपना पृथक्-पृथक् शासन-विधान है इसलिये ५० विभिन्न उपराज्य शासन-विधान हैं जिन्हें अध्ययन करने के पश्चात् उपराज्यों के शासन-प्रबन्ध का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। *किन्तु उन सबमें इतनी अधिक समानता है कि इन राज्यों के शासन-प्रबन्ध* को समझने के लिये केवल उनकी सामान्य विशेषताओं को जानने से ही काम चल जाता है। *इसका कारण जैसा राजनीतिज्ञ ब्राइस ने कहा, यह है* "कि वे सब प्राचीन अंग्रेजी संस्थाओं की कुछ अधिक व कुछ मिलती हुई प्रतिलिपियाँ हैं अर्थात् ये वे चार्टर प्राप्त स्वयत्त-शासन करने वाली कम्पनियाँ हैं जो अंग्रेजी स्वाभाविक प्रवृत्तियों से प्रभावित होकर और अंग्रेजी पालियामेंट-प्रणाली के उदाहरण को सामने रख कर ऐसे राज्य-संगठनों में विकसित हो गई जो अठारहवीं शताब्दी के इंगलैंड के राज्य संगठनों से मिलते-जुलते थे।" जब ये राज्य संगठन स्वतन्त्र राज्य बन गये तब भी इन्होंने अपने मूल शासन विधानों की प्रमुख विशेषताओं को ज्यों का त्यों सुरक्षित रखा। उसमें केवल वही परिवर्तन किया जो उनकी नई कानूनी, वैधानिक और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के लिये आवश्यक था। जब संघ में नये उपराज्य बनकर शामिल हुये, प्रत्येक ने मूल १३ उप-निवेशों के शासन-विधानों के ढाँचे को ही अपना लिया। "ऐसा करने के लिये उनका अधिक झुकाव इसलिये भी था क्योंकि प्राचीन शासन-विधानों में उन्हें कार्यपालिका, विधायिनी व न्यायिक सत्ता का वह पृथक्त्व देखने को मिला जो उस समय के राजनीतिक शास्त्र की दृष्टि से स्वतन्त्र सरकार के लिये आवश्यक समझा जाता था। इस पृथक्त्व सिद्धान्त से ही उन्होंने आगे बढ़ाने का निश्चय किया।"[१]

उपराज्यों के शासन-विधानों की सामान्य विशेषताएँ—शक्ति विभाजन के सिद्धांत के अतिरिक्त कुछ ऐसी बातें हैं जो इन सब शासन-विधानों में मिलती हैं। प्रत्येक उपराज्य में शासन-विधान जनता की देन है जिन्होंने कार्य-पालिका के अध्यक्ष के निर्वाचन करने का अधिकार अपने पास सुरक्षित रखा है। यह अध्यक्ष गवर्नर कहलाता है। शासन-विधान का संशोधन, लोक निर्णय (Referendum), निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) और प्रत्याहरण (Recall), ये सब भी जनमत के

१ ब्राइस—अमेरिकन कामनवेल्थ, पुस्तक १, पृ० ४७८।

आधीन हैं। प्रत्येक उपराज्य में एक निर्वाचित गवर्नर व कुछ प्रशासन-अधिकारी, द्विगृही विधान मण्डल, स्वतन्त्र न्यायपालिका और स्थानीय शासन संस्थायें हैं जैसे काउन्टी, नगर, ग्राम, जिनके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका की जनतन्त्रात्मक राज्यों की गिनती में बड़ा ऊँचा स्थान प्राप्त है।

उपराज्य विधानमंडल

उपराज्य के राज्यसंगठन में विधान मण्डल सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। लगभग सब उपराज्यों में द्विगृही विधान-मण्डल है जिसके निचले सदन को प्रतिनिधि सदन और ऊपरले सदन को सीनेट कहते हैं। केवल नेब्रास्का में एक वैधानिक संशोधन द्वारा यह निश्चय हुआ कि विधानमण्डल में ही एक सदन हो जिसके सदस्यों की संख्या ४३ हो, असल में द्विगृही विधान मण्डल की प्रणाली को उपराज्यों ने संघ शासन की नकल करके ही अपनाया। ऊपरले सदन के पक्ष में विधान-कार्य में जल्दबाजी के दोष को दूर रखने की जो दलील सामने उपस्थित की जाया करती थी वह अब अधिक महत्व नहीं रखती क्योंकि इस दोष को दूर रखने के लिये समाचार-पत्रों का प्रभाव, किसी भी अधिनियम का तीन बार वाचन का विचार करने की पद्धति, गवर्नर को अस्वीकार करने की शक्ति और लोकनिर्णय की पद्धति, ये सब पर्याप्त समझे जाते हैं।

विधानमंडल का निर्वाचन—दोनों सदन, लोक-निर्वाचित संस्थायें होती हैं। इस निर्वाचन में सब नागरिक भाग ले सकते हैं। दूसरे प्रतिनिधित्व का दोष दूर करने के लिये और दोनों सदनों के अस्तित्व की आवश्यकता दिखलाने के हेतु दोनों सदनों के निर्वाचन क्षेत्रों को निम्न प्रकार से संगठित किया जाता है। सीनेट में काउन्टियों (Counties) से निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं। चाहे उनकी जनसंख्या कितनी ही हो किन्तु प्रत्येक काउण्टी के प्रतिनिधियों की संख्या एक समान होती है। निचले सदन के प्रतिनिधियों का निर्वाचन जनसंख्या के आधार पर विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों से होता है। इसलिए इस कथन में कुछ सत्य है कि सीनेट का भौगोलिक निर्वाचन होता है और प्रतिनिधि सदन का जनसंख्यात्मक। निचले सदन में अधिकतर ग्रामनिवासी प्रतिनिधि हैं और नगरों की जनसंख्या बढ़ने से सीनेट में नगरवासी अधिक संख्या में हैं। निचला सदन सीनेट की अपेक्षा बड़ा होता है इसलिये वह सीनेट की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय रहता है।

विधानमण्डल की अवधि—यह अवधि भिन्न भिन्न उपराज्यों में अलग अलग है। प्रायः सीनेट की अवधि निचले सदन से अधिक लम्बी होती है। सीनेट के कुछ सदस्यों के स्थान पर निश्चित समय के पश्चात् नये सदस्य आ जाते हैं किन्तु निचले सदन के सब प्रतिनिधि निश्चित समय के बाद फिर से नये चुने जाते हैं। बहुत से उपराज्यों में सीनेट के उम्मेदवारों को प्रतिनिधि-सदन के उम्मेदवारों की अपेक्षा अधिक आयु का होना पड़ता है।

विधानमंडल का कार्य—सब उपराज्यों में विधान मंडल के सदस्यों को एकसा ही वेतन मिलता है। कुछ उपराज्यों में विधानमंडल की साल में दो बैठकें होती हैं, किन्हीं में साल में एक ही होती है। सदस्यों को सामान्य मुक्तियाँ, सुविधायें व अधिकार मिले हुये रहते हैं। प्रत्येक सदन का अपना अपना सभापति होता है और अन्य पदाधिकारी होते हैं जिनको सदन चुनता है। कोई विधेयक किसी भी सदन में प्रारम्भ किया जा सकता है किन्तु मुद्रा-विधेयक निचले सदन में ही आरम्भ हो सकता है। सीनेट मुद्रा-विधेयक में संशोधन कर सकती है। कोई योजना तभी सदन में स्वीकृत समझी जाती है जब उसके सदन में तीन वाचन हो जाते हैं। तब यह दूसरे सदन को भेज दी जाती है। यदि वह वहाँ स्वीकृत हो जाती है तो गवर्नर के हस्ताक्षर से कानून बन जाती है। यदि दोनों सदनों में मतभेद हो जाता है तो वह योजना अस्वीकृत समझी जाती है। दोनों सदनों में स्वीकृति योजना को गवर्नर अपनी आपत्तियों के साथ लौटा सकता है। इस प्रकार लौटाये जाने पर वह योजना तभी कानून बन सकती है जब वह दोनों सदनों में फिर से निश्चित मताधिक्य से पास हो जाय।

संविधान संशोधन—संघ संविधान के समान उपराज्यों के सब शासन शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त के आधार पर ही बने हैं। विधानमंडल संविधान में संशोधन भी कर सकती है केवल इन संशोधनों के लिये सामान्य मताधिक्य से कुछ अधिक मत पक्ष में होने चाहिए। किसी उपराज्य में गणपूरक के ⅔ मताधिक्य से और कहीं सदन के कुल सदस्यों की दो-तिहाई संख्या से संविधान में संशोधन हो सकता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक विधान-संशोधन का प्रस्ताव तब तक स्वीकृत नहीं समझा जाता जब तक लोक-निर्णय से वह पास न हो। कोई भी उपराज्य अपने शासन-विधान में ऐसा संशोधन नहीं कर सकता जो राष्ट्रीय संघ-शासन संविधान के प्रतिकूल हो।

उपराज्यों के विधानमण्डल की शक्तियाँ—यह पहले बतलाया जा चुका है कि संघ सरकार की शक्तियाँ सीमित हैं और संघ-शासन विधान उपराज्यों की शक्तियों की व्याख्या नहीं करता, इसमें केवल इतना ही कहा गया है कि जो शक्ति निश्चित रूप से संघ सरकार को न दी गई हो, न स्पष्टतया उपराज्यों को उससे वंचित रखा गया हो वह उपराज्यों के सुपुर्द है। अतएव उपराज्यों को सब शेषाधिकार मिले हुये हैं। किन्तु कुछ समय से यह देखने में आ रहा है कि बढ़ती हुई अन्तर्राष्ट्रीयता, व्यापारिक सम्बन्धों की पेचीदगी और कुछ राष्ट्रों की शक्ति लोलुपता के कारण उपराज्य केन्द्रीय सरकार पर अधिकाधिक परावलम्बी होते जा रहे हैं। इसलिए वे धीरे धीरे उस स्वतन्त्रता और उन अधिकारों को खोते जा रहे हैं जिनको उन्होंने बड़े यत्न से संघ के प्रारम्भिक काल में रखा की थी।

उपराज्यों की कार्यपालिका

अमेरिकन उपराज्य म छोटे छोटे गणराज्य हैं। इनके शासन विधान के इस गुण को बदला नहीं जा सकता। प्रत्येक उपराज्य मे प्रमुख कार्यपालिका सत्ता एक लोक निर्वाचित गवर्नर मे निहित रहती है। कार्यकारी विभाग विधानमण्डल से पृथक स्वतन्त्र रहता है। इनम गवर्नर के अतिरिक्त एक लैफ्टिनैन्ट गवर्नर, एक सेक्रेटरी ऑफ स्टट, एक कोषाध्यक्ष, महान्यायवादी (Attorney-General), लेखापरीक्षक (Auditor), शिक्षा-प्रबन्धक और कुछ दूसरे छोटे अफसर होते हैं।

गवर्नर—उपराज्य की सरकार का अध्यक्ष गवर्नर होता है। गवर्नर का पद बड़ा पुराना है। अमरिकन उपनिवेशों के प्रारम्भिक काल से ही लगभग ३०० साल से यह परम्परा के आधार पर चलता चला आ रहा है। गवर्नर जनता द्वारा चुना जाता है। इस पद के लिये उपराज्य के नागरिक ही योग्य समझे जाते हैं। गवर्नर के पद के उम्मेदवारों को राजनैतिक पक्षों के सम्मेलन में चुनकर मनोनीत किया जाता है। इस सम्मेलन म उस पक्ष के सब काउन्टियो से प्रतिनिधि एकत्र होते हैं। निर्वाचन गुप्त मतदान द्वारा होता है और सामान्य मताधिक्य से उम्मेदवार चुन लिया जाता है। उम्मेदवार उस उपराज्य का ५ वर्ष तक निवासी रह चुका हो और निर्वाचन के समय उसकी आयु ३० वर्ष से कम न होनी चाहिये। गवर्नर के पद की अवधि भिन्न भिन्न उपराज्यों में भिन्न है किन्तु या तो यह दो, या चार वर्ष है। गवर्नर पुनर्निर्वाचन के लिये खड़ा हो सकता है। तीन हजार स लेकर २५००० डालर तक का वेतन भिन्न भिन्न उपराज्यों मे दिया जाता है। गवर्नर पर अभियोग लगाकर उसके पद से उसे हटाया जा सकता है। यदि ऐसे न्यायाधिकरण (Tribunal) जिसमे उपराज्य की सीनट के सदस्य व उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो, दो-तिहाई मत से गवर्नर को अपराधी सिद्ध कर दें तो गवर्नर उसके पद से हटाया जा सकता है। लगभग एक दर्जन उपराज्यों म सरकार से प्रार्थना कर गवर्नर का प्रत्याहरण (Recall) किया जा सकता है अर्थात् उन्हें पद से हटाया जा सकता है। ऐसा प्रत्याहरण करने के लिये निश्चित रूप से कारण देने पड़ते हैं। किन्तु अभी तक केवल एक ही गवर्नर (नौर्थ डेकोटा के गवर्नर फ्रेजियर) को ही इस प्रकार हटाया गया है (१६२१)।

गवर्नर की शक्तियां—गवर्नर को कई प्रकार की शक्तियां दी जाती हैं। विधान-कार्य म प्रत्येक कानून के घोषित होने से पूर्व उस पर गवर्नर के हस्ताक्षर होना आवश्यक है। वह विधान-मण्डल से पास किये हुए किसी भी विधेयक पर आपत्ति कर सकता है और पुनर्विचार के लिये लौटा सकता है। वह विधान-मंडल का विशेष अधिवेशन बुला सकता है जिसमें विशेष योजनाओं पर ही विचार हो सकता है। विधान-

मडल के साधारण अधिवेशनो मे भी गवर्नर नये कानून बनाने के लिए सुझाव देता है और अपने उच्च पद के प्रभाव से दोनों सदनों मे उन्हे स्वीकृत करा लेता है। थियोडोर रूजवेल्ट ने जो कभी उपराज्य का गवर्नर रह चुका था यह कहा था कि "आधे से अधिक मेरा गवर्नर का काम आवश्यक और महत्वपूर्ण कानूनो का पास कराना था।" गवर्नर दलबन्दी मे पूरी तरह भाग लेता है। अपने पक्ष के व्यवस्थापको की सहायता से वह विधान-मडल पर अपना प्रभुत्व रखता है हालांकि वह विधान-मडल का सदस्य नहीं होता। कुछ मात्रा में वह विधेयकों को जैसा ऊपर वर्णन किया जा चुका है कानून बनने से रोक सकता है। विधान-मडल के मन्तव्य व निर्णयो को कार्यान्वित करने के लिये गवर्नर अध्यादेश (Ordinances) निकालता है। वह छोटे पदों पर नियुक्तियाँ कर सकता है, और उन पदो पर आसीन व्यक्तियों को हटा सकता है। वह सामान्य शासन-प्रबन्ध की देख-भाल रखता है और यह भी देखता है कि आर्थिक कार्य, सैनिक कार्य, केन्द्रीय सरकार से सम्बन्ध रखने वाले कार्य, सुचारू रूप से हो रहे हैं। वह दण्डित अपराधियों को क्षमा प्रदान भी कर सकता है। उपराज्य के अधिकतर पदाधिकारियो की नियुक्ति गवर्नर ही करता है किन्तु इन नियुक्तियों मे सीनेट की सम्मति होना आवश्यक है। यह सिविल सर्विस के अफसरों को तरक्की आदि दे सकता है। बजट उसके ही आदेशो के अनुसार बनाया जाता है वह वाह्यरूप से प्रधान सेनापति भी होता है।

दूसरे पदाधिकारी—जिन अफसरो की गवर्नर स्वयं नियुक्ति नही करता वे अधिकतर जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं। उनका अवधिकाल निश्चित रहता है। इस लिये वे अफसर गवर्नर के मातहत न होकर सहकारी होते हैं। अतएव केन्द्रीय मन्त्रि-परिषद् के सदस्यो की अपेक्षा गवर्नर के मन्त्री अधिक स्वतन्त्र है क्योंकि केन्द्रीय मन्त्री प्रेसीडेन्ट द्वारा ही बनाये जाते हैं और वह स्वेच्छा से ही उनको नियुक्त करता व हटा सकता है। उपराज्य का गवर्नर अपने मन्त्रियो को न नियुक्त करता है न हटा सकता है। ये लोग अभियोग लगाकर अवश्य हटाये जा सकते हैं किन्तु गवर्नर के साथ भी ऐसा बर्ताव किया जा सकता है। इस प्रकार हटाने के लिये प्रतिनिधि-सदन उन पर पहले अपराधो का अभियोग लगाता है। सीनेट इन अपराधो की जाँच करती है और अपराधी सिद्ध होने पर उन्हे उनके पद से हटा सकती है। सामान्य नागरिको के समान ही उन्हे न्यायालयो की आज्ञा का पालन करना पड़ता है। जिस अवधि के लिए गवर्नर चुना जाता है उसी अवधि के लिए ही उन अफसरो का चुनाव होता है। "सब राज्य पदाधिकारी एक दूसरे की सेवा नही करते, वे जनता की सेवा करते हैं जिसके द्वारा वे चुने जाते हैं। वे जनता पर ही निर्भर रहते हैं न कि एक दूसरे पर।"

उपराज्य न्यायपालिका

प्रत्येक उपराज्य म अपने अपने शासन विधान के अन्तर्गत न्याय-पालिका स्थापित है। उपराज्य के न्यायालय सघ-न्यायालयो के आधीन नही होते किन्तु वे एक पृथक न्यायपालिका के अङ्ग होते है जिनको अपने अधिकार क्षेत्र मे पूरी स्वतन्त्रता व शक्ति रहती है। सामान्य सगठन मे यह न्यायालय सघ-न्यायालयो मे बहुत कुछ मिलते जुलते है। दोनो न्यायप्रणालियो मे छोटे बडे कई न्यायालय होते है जिनके कर्तव्य व शक्तियाँ एक दूसरे स भिन्न, कम या अधिक होती हैं। प्रत्येक राज्य मे न्यायालयो की तीन श्रेणियाँ होती हैं, किसी मे चार भी होती है। पहली श्रेणी मे जस्टिसेज आफ दी पीस (Justices of the peace) हैं जो मामूली रुपये पैसे या बहुत छोटे अपराधों की जांच कर दण्ड देते हैं। इनके ऊपर काउन्टी या म्युनिसिपल न्यायालय होते हैं जिन मे कुछ बड़े मुकद्दमो की प्रारम्भिक सुनवाई होती है और निचली अदालतो के निर्णयो के विरुद्ध पुनर्विचार की अपील की जाती है। इनके ऊपर उच्चन्यायालय होते हैं जो काउन्टी न्यायालयो के निर्णय पर, प्रार्थना किये जाने पर पुनर्विचार करते हैं और कुछ अधिक भारी मुकद्दमो मे प्रारम्भिक विचार भी करते हैं। इन सब के ऊपर उपराज्य का सर्वोच्च न्यायालय होता है जिनमे सब प्रकार के मुकद्दमो पर प्रार्थना करने पर पुनर्विचार होता है। इस न्यायालय के निर्णयो पर पुनर्विचार करने के लिये सघ-सर्वोच्च न्यायालय (Federal Supreme Court) से प्रार्थना नही की जा सकती।

उपराज्यो के न्यायालय दो बडी बातो मे सघ-न्यायालयो से भिन्न हैं। पहला भेद तो यह है कि उपराज्य के न्यायाधीश जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं किन्तु सघ-न्यायालय के न्यायाधीशो को कार्यपालिका नियुक्त करती है। केवल १० उपराज्य ऐसे हैं जिनके न्यायाधीश निर्वाचित न होकर कार्यपालिका द्वारा नियुक्त होते हैं। दूसरा भेद यह है कि प्रत्येक उपराज्य मे न्यायपद्धति भिन्न भिन्न है जिससे सब उपराज्यों मे न्याय-व्यवहार मे समानता नही हो पाती।

उपराज्यों के न्यायाधीशो पर प्रतिनिधि-सदन अभियोग लगा सकता है और सीनेट अभियोग की जांच कर उन्हे दण्डनीय ठहरा कर उनके पद से उन्हे हटा सकती है। बारह उपराज्यो म यह प्रथा प्रचलित है कि विधान मडल म तत्सम्बन्धी प्रस्ताव पास होने से ही किसी न्यायाधीश को हटाया जा सकता है। नौ उपराज्यों म गवर्नर विधान मडल की प्रार्थना पर न्यायाधीश को पदच्युत कर सकता है। कुछ उपराज्यो म जनता न्यायाधीशो का प्रत्याहरण कर सकती है। इसके लिये पदच्युत करने की प्रार्थना पर जनता का प्रत्यक्ष मत लिया जाता है। इन उपराज्यो म न्यायालयो के कुछ निर्णयों

को भी जनमत से वापिस किया जा सकता है। इन सब बातों को प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली की दृष्टि से उचित ठहराया जाता है। जनमत के इस प्रकार के हस्तक्षेप से न्यायकार्य में भ्रष्टाचार की मात्रा बढ़ती है यह निश्चय है। यही नहीं किन्तु इससे अन्याय बढ़ता है और न्यायप्रणाली की स्थिरता जाती रहती है।

स्थानीय शासन

विभिन्न स्थानीय संस्थायें—संयुक्त राज्य अमेरिका एक बहुत ही जनतन्त्रात्मक राज्य है इसलिये सब उपराज्यों में "स्थानीय-शासन का काम जनता से प्रत्यक्ष रीति से चुनी हुई स्थानीय शासन संस्थाओं को सुपुर्द है। स्थानीय-शासन के अन्तर्गत पुलिस, सफाई, निर्धनों की देखभाल शिक्षालयों का भरण-पोषण व प्रबन्ध, सड़कों व पुलों का बनवाना और उनकी अच्छी अवस्था में बनाये रखना, व्यापार व उद्योगके लाइसेंस देना, कर लगाना और इकट्ठा करना, छोटे-छोटे न्यायालय व कारागृह स्थापित करना और वे अन्य सब कार्य आते हैं जो राज्य की विभिन्न जातियों व वर्गों के सुख शान्ति व स्थानीय शासन प्रबन्ध के लिये आवश्यक हैं। टाउनशिप (Township) काउन्टी (County), शिक्षालय जिला (The School District), कस्बा (Town) व नगर (City) ये विभिन्न प्रकार की और विभिन्न क्षेत्राधिकार वाली स्थानीय शासन संस्थायें पाई जाती हैं। इनके निजी कर्मचारी होते हैं। इन संस्थाओं की शक्तियाँ उपराज्य की सरकार से प्राप्त रहती है वे बहुत ही सीमित मात्रा में कर सकती है। अधिकतर संस्थाओं में एक कार्यकारी बोर्ड और कर्मचारी होते हैं। जिनमें नियम बनाने वाली सभायें भी होती है, वहाँ ये सभायें अपना काम बहुत कुछ उसी पद्धति पर करती है जिस पर उपराज्य का विधान मण्डल करता है। जैसा भारतवर्ष में प्रान्तीय सरकारों के स्वायत्त शासन विभाग हैं वैसा उपराज्यों में कोई विभाग नहीं है जो इन स्थानीय संस्थाओं पर स्वेच्छाचारी नियन्त्रण रखता हो। अमरीका में स्थानीय-शासन उस देश की शासन प्रणाली का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है।

प्रत्यक्ष लोकतंत्र

अधिनियम उपक्रम—(Initiative) अमरीका में प्रत्यक्ष लोकतंत्र (Direct Democracy) केवल उपराज्यों में ही पाया जाता है, संघ शासन में नहीं, किन्तु स्विट्जरलैंड में यह दोनों जगह पाया जाता है। अमेरिकन प्रजातन्त्र के प्रारम्भिक समय से ही शासन विधान के संशोधन कार्य में जनता के भाग लेने की प्रथा प्रचलित थी। किन्तु लोक निर्णय की इस प्रथा के अतिरिक्त बहुत से अमेरिकन उपराज्यों ने अधिनियम उपक्रम की प्रथा भी अपनाई है। इस प्रथा में व्यक्तियों को यह स्वतन्त्रता रहती है कि

वे किसी विधेयक या शासन-विधान के संशोधन को तैयार कर धारा सभा की मध्यस्थता के बिना ही लोक-निर्णय के लिए रख सकते हैं।

लोक-निर्णय—लोक निर्णय के अधिकार के होनेसे व्यक्तियों की निश्चित संख्या यह माग कर सकती है कि विधान मंडल से पास किया हुआ कोई अधिनियम जनता की स्वीकृति या अस्वीकृति के निर्णय के लिये उपस्थित किया जाय। पाँच से पन्द्रह प्रति सैकड़ा नागरिक प्रायः अधिनियम उपक्रम का प्रस्ताव कर सकते हैं और पांच से दस प्रति सैकड़ा नागरिक लोक-निर्णय की मांग कर सकते हैं। यह संख्या उपराज्यों में एक समान नहीं है।

इस प्रत्यक्ष लोक-व्यवस्थापना कार्य की मांग क्यों की गई, इसके प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ ब्राइस ने कुछ कारण बतलाये हैं जो ये हैं :—

(१) उपराज्य का विधानमंडल पर यह अविश्वास कि यह लोकमत का सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं करती और जनता की इच्छानुसार कानून नहीं बनाती।

(२) धनी व्यक्तियों व कम्पनियों की ओर से यह शंका कि ये व्यवस्थापकों व अफसरों पर अपना अनुचित प्रभाव डालते हैं और ऐसा कानून बनवा लेते हैं जो पूँजीवर्ग के ही अनुकूल होता है, (३) जनता के हाथ में ऐसी शक्ति रखने की इच्छा जिसमें ऐसी अधिनियम योजनायें पास की जा सकें जो विधानमंडल की अपेक्षा लोकनिर्णय से सुगमता से पास की जा सकती हैं, (४) अल्पसंख्यक समुदाय के विवेक की अपेक्षा, सारी जनता के विवेक, नीतिमत्ता व पुनीतता में विश्वास।

अधिनियम प्रकरण व लोकनिर्णय (Initiative and Referendum)—प्रत्यक्ष लोकव्यवस्थापन के ये दोनों साधन साधारण अधिनियम बनाने व विधान-संशोधन दोनों में ही प्रयोग किये जाते हैं।

इस प्रणाली के दोष—ऊपर से देखने में यह प्रणाली कितनी ही आकर्षक प्रतीत होती हो किन्तु व्यवहार में यह बिल्कुल दोष रहित सिद्ध नहीं हुई है। ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ ऐसे कानून बनाये गये जो दोषपूर्ण थे और ऐसे कानून रद्द कर दिये गये जो बड़े लाभदायक सिद्ध हो रहे थे। इसके कारण व्यवस्थापक अपने उत्तरदायित्व की ओर इतने सतर्क नहीं रहते जितना वे अन्यत्र रह सकते हैं। जनता ने भी प्रत्यक्ष व्यवस्थापन (Direct Legislation) में उतनी बुद्धिमानी का परिचय नहीं दिया जितना उन्होंने अपने प्रतिनिधियों के चुनाव में दिया। इसके अतिरिक्त यह सत्य भी है कि एक साधारण मतधारक दो उम्मेदवारों की अच्छाई-बुराई का अन्तर जितना अधिक भलीभाँति मालूम कर सकता है उतनी अच्छी तरह से वह यह निश्चय नहीं कर सकता कि कौन-सी योजना लोक हितकारी होगी और कौन-सी नहीं क्योंकि कानूनों की पेचीदगी

उसके लिये दुरुह होती हैं, वह आसानी से उनके सब पहलुओं को नहीं देख सकता न उनके अन्तिम परिणामों का उसे भान हो सकता है।

प्रत्याहरण (Recall)—देश के शासन कार्य में जनता स्वय भाग ले सके, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अमेरिका में एक तीसरी प्रथा भी प्रचलित है। इसको प्रत्याहरण (Recall) कहते हैं जिसका यह अर्थ है कि किसी भी प्रतिनिधि या राजपदाधिकारी को जो जनमत के अनुकूल नहीं है प्रत्यक्ष लोकमत लेकर वापिस बुला लेना। जहाँ तक यह प्रथा प्रतिनिधियों व राजपदाधिकारियों तक ही लागू है, इसमें बहुत लाभ भी हुआ है। इसका कारण यह है कि इससे ये लोग सतर्क व कर्तव्यपरायण बने रहते हैं। पदाधिकारी अपने कार्य को कुशलता व सतर्कता से सम्पादित करते हैं और प्रतिनिधि अपने निर्वाचकों की इच्छा का ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व करते है। किन्तु कुछ उपराज्यों मे न्यायधीशों को भी जनता मत देकर उनके पद से हटा देती है। इस प्रत्याहरण प्रणाली के कुछ समर्थकों का तो यहाँ तक कहना है कि सब न्यायालयों पर भी यह प्रणाली लागू होनी चाहिये। उनका यह प्रयत्न अभी सफलीभूत नहीं हो पाया है, प्रत्याहरण के भय से न्यायसगठन निर्बल हो जाता है, कहीं-कहीं इसके भय से न्यायाधीश कर्तव्य-विमुख भी हो सकते है। जब तक न्यायाधीशों को यह विश्वास न हो कि वे साधारणतया अपने पद से हटाये नहीं जा सकते और उनका वेतन कम नहीं किया जा सकता, कोई भी न्यायपालिका अपने कर्तव्य को निरपेक्षभाव से व सच्चाई से पूरा नहीं कर सकती यदि अधिनियम उपक्रम (Initiative) और लोकनिर्णय (Referendum) प्रतिनिधिक शासन प्रणाली पर कुठाराघात करते हैं तो प्रत्याहरण की प्रणाली शासन को निर्बल बनाती है किन्तु अमेरिका मे जहाँ न्यायधीश व उच्च पदाधिकारी भी जनता से निर्वाचित होकर नियुक्त होते हैं, प्रत्याहरण प्रथा का होना यह सिद्ध करता है कि सामान्य नागरिक इन पदाधिकारियों को चुनने की भी योग्यता नहीं रखते।

पाठ्य पुस्तकें

पूर्व अध्याय के अन्त में जो पुस्तकों की सूची दी हुई है उनमें ही उपराज्यों की शासन प्रणाली के अध्ययन करने के लिये पर्याप्त सामग्री मिलेगी। इसके अति- रिक्त प्रत्येक उपराज्य के लिये स्टेट्समैन ईयर बुक (Statesman Year Book) का सबसे नवीन संस्करण भी प्रयोग किया जा सकता है।

पञ्चम् पुस्तक

स्विट्जरलैंड की सरकार

अध्याय २२

स्विट्जरलैंड का लोकतंत्र

वे लोग स्वतन्त्र नही हैं जिनमे धार्मिक भावनाओ की अपेक्षा उत्तेजनाएं अधिकतर है, वे लोग स्वतन्त्र नही है जिनमे ज्ञान की अपेक्षा अज्ञान अधिक है; वे लोग स्वतन्त्र नही हैं जो अपने ऊपर अपना शासन करना नही जानते। —एच० डब्ल्यू० बीचर

शासन-विधान का इतिहास

आधुनिक ससार मे स्विट्जरलैंड को ही सबसे अधिक लोकतंत्र राज्य समझा जाता है। वहा का भूगोल, लोगों के स्वभाव और सविधान का इतिहास अपनी विशेषता रखते हैं।

परिचय—स्विट्जरलैंड एक पहाडी देश है जो दक्षिण-पश्चिम यूरोप के मध्य मे बना हुआ है इसके उत्तर मे जर्मनी, पूर्व मे आस्ट्रिया, दक्षिण मे इटली और पश्चिम मे फ्रास है। पूर्व से पश्चिम तक इसकी अधिक से अधिक लम्बाई कुल २२६॥ मील है, उत्तर से दक्षिण तक अधिक से अधिक चौड़ाई १३७ मील है। कुल क्षेत्रफल १५,९४४ वर्ग मील है। इसके विभिन्न भाग समुद्र तट से ६४६-१५००० फीट की ऊंचाई पर हैं। इस देश की जनसख्या सन् १९५० मे ४,६४०,००० थी। यह देश २२ जिलो या कैन्टनो मे बँटा हुआ है, यहां के निवासियो की जिविका का साधन प्रमुखतया खेती है। (यहां ३००,००० जमीन की पट्टियां है जिनसे २५ लाख व्यक्ति अपना भरण-पोषण करते हैं, अर्थात् कुल जनसख्या का ५३·५ प्रतिशत भाग खेती पर निर्भर है)। कृषि के अतिरिक्त पशुपालन और उद्योग व कारोबार हैं जिनसे शेष निवासी अपनी जीविका उपार्जन करते हैं।

निवासी—*स्विट्जरलैंड के निवासी एक जाति-समूह के नही हैं। उनमे विभिन्न* जाति, धर्म व भाषा बोलने वाले वर्ग है। कुछ जर्मन हैं, फ्रेंच हैं और इटैलियन हैं। कुल जनसख्या का ६९ प्रतिशत भाग जर्मन भाषा बोलता है जो अधिकतर उत्तर के १९ कैंटनो मे रहता है। फ्रेंच भाषा के बोलने वाले २१·१ प्रतिशत व्यक्ति हैं जो पश्चिम के ५ कैंटनो मे रहते हैं और ८ प्रतिशत इटैलियन भाषा बोलते है। धर्म की दृष्टि से *यहाँ के निवासी इस प्रकार विभाजित हैं : प्रोटेस्टेंट ५६·७ प्रतिशत, रोमन कैथोलिक्स*

४२ ८ प्रतिशत और शेष अन्य धर्मावलम्बी हैं।[1] ऐतिहासिक व भौगोलिक कारणों से यहाँ के निवासी धर्म के मामले में बड़े अद्भुत ढंग पर बँटे हुये हैं। यह विभाजन तीन प्रमुख भाषा-क्षेत्रों का भी अनुकरण नहीं करता। स्विट्जरलैंड में ऐसे बहुत से व्यक्ति मिलेंगे जो विदेशों से भागकर यहाँ बस गये हैं क्योंकि सैनिक सेवा या राजनीतिक अपराधों से बचने के लिये उन्हें यह देश सबसे अधिक सुरक्षित प्रतीत हुआ।

देश की भौगोलिक भिन्नता, भाषा, धर्म, जाति व रीतिरिवाजों के भेद के कारण और कृषिजीवी होने से यहाँ के निवासियों में लोकतंत्र की भावना बहुत मात्रा में पाई जाती है। इन्हीं कारणों से देश में वास्तविक संघात्मक संस्थाओं का विकास भी हुआ है। प्राचीन व अर्वाचीन सच्चे लोकतंत्रों का उदाहरण देते समय एथेंस (Athens) और स्विट्जरलैंड का नाम लिया जाता है। स्विट्जरलैंड एक बहुत छोटा देश है इसलिये यहाँ के निवासी अपने अपने कैंटन के शासन में सुगमता से सक्रिय भाग ले सकते हैं। वे अपने जीवन में सतुष्ट हैं। वहाँ की सरकार लोकहितकारी, दूरदर्शी, कुशल, मितव्ययी और अपनी नीति में दृढ है। सामाजिक जीवन में भ्रष्टाचार का नाम नहीं सुना जाता और राज्यपदाधिकारियों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है, न कि किसी राजनैतिक उद्देश्य की पूर्ति की दृष्टि से। उनके सामने जो समस्या है वह यह है कि सन्तोषी, मितव्ययी और स्थिर-प्रकृति वाले व्यक्तियों में स्थानीय शासन किस प्रकार चलाया जाय। इस समस्या को सुलझाना यहाँ अधिक सुगम है, बनिस्बत ऐसे बड़े देश में जहाँ के निवासी धनी और महत्त्वाकाँक्षी हैं। इसलिये यह भी ठीक है कि स्विट्जरलैंड में जिन उपायों से इस समस्या को सुलझाया गया है उनसे दूसरे देशों की भिन्न परिस्थितियों में वैसा ही सतोषजनक परिणाम नहीं हो सकता।

वैधानिक इतिहास के पाँच युग—स्विट्जरलैंड के राजनीतिक इतिहास को प्रायः पाँच हिस्सों में बाँटा जाता है (१) प्राचीन संघ, सन् १२९१ से १७९८ तक, (२) हेल्वेटिक प्रजातन्त्र, सन् १७९८ से १८०३ तक, (३) नैपोलियन काल, सन् १८०३ से १८१५ तक, (४) सन् १८१५ से १८४१ तक का संघ राज्य, और (५) सन् १८४८ से अब तक का वर्तमान संघ-शासन।

(१) प्राचीन संघ—सन् १२९१ में उरी, स्वीज और अन्टरवाल्डन नाम के तीन कैंटनों ने अपने आपको एक स्थायी संगठन में अपने अधिकारों की रक्षा के लिये संघीभूत किया। ये कैंटन लूटर्न झील के सबसे पृथक एक किनारे पर बसे हुये थे, किन्तु इनका राजनैतिक दशा एक समान था। वह समय सामन्तशाही की अराजकता का था। इस संगठन के बनने पर आस्ट्रिया के राजा लियोपोल्ड को बुरा लगा और वह सेना लेकर इन उद्दण्ड कैंटनों को दण्ड देने के लिये आगे बढ़ा। किन्तु इस युद्ध

१ ब्रुक्स—गवर्नमेंट एण्ड पोलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड।

में कैन्टनों की विजय हुई। अतएव यह संघ फलने-फूलने लगा। सन् १३५३ तक इसमें ३० सदस्य हो गये। "इसके पश्चात् ऐसे युग का आरम्भ हुआ जिसे राजनीतिज्ञ ब्रूक्स ने 'सैनिक शक्ति का युग' कहा है। इस युग में कैन्टनों ने पड़ोसी विदेशी राज्यों से भूमि छीन-छीन कर अपने प्रदेश का विस्तार बढ़ाया।"[1] उस समय स्विस लोग स्वदेश में ही लोकतन्त्र के समर्थक थे, बाहर न थे, सन् १४४२ से १४५० तक व एक बार फिर सन् १५३१ और १७२१ में धार्मिक व जातिगत विभेदों के कारण गृह-युद्ध हुये। किन्तु इन सब आपत्तियों के रहते हुये भी यह आश्चर्य की बात है कि संघ ने विदेशियों के आक्रमण का डट कर सामना किया और विजय पाई, जिससे आपसी फूट से *छिन्न-भिन्न स्विट्ज़रलैंड उस युग की डावाडोल अवस्था में भी अपने राजनीतिक* व्यक्तित्व की रक्षा कर सका।

(२) **हेल्वेटिक प्रजातन्त्र**—स्विस राजनैतिक इतिहास का दूसरा युग, जिसे हेल्वेटिक प्रजातन्त्र के नाम से पुकारा जाता है, सन् १७९८ में आरम्भ होकर १८०३ *में समाप्त होता है स्विट्ज़रलैंड की सेना फ्रांस की डाइरेक्टरी* (Directory) के सैन्य-बल से हार गई, जिसके परिणामस्वरूप फ्रांस ने अपने यहाँ के तत्कालीन शासन-विधान के ढाँचे के समान ही स्विट्ज़रलैंड को शासन-विधान बनाने पर बाध्य किया। देश को २२ डिपार्टमेंट (Departments) अर्थात् प्रांतों में बाँट दिया गया। प्रत्येक डिपार्टमेंट का अपना स्थानीय विधान मंडल था जो स्थानीय मामलों में स्वाधीन था। सारे देश के शासन के लिये सीनेट और ग्रांड कौंसिल (Grand Council) नाम के दो सदनों का विधान मंडल बनाया गया। बाहरी रूप से स्विट्ज़रलैंड में प्रजातन्त्र स्थापित करने का प्रयत्न करते हुए फ्रांस की राजसत्ता इस देश पर अपने अधिकार के वास्तविक मन्तव्य को छिपा न सकी। उन्होंने बर्न नगर में स्थित राजकीय कोष को जब्त कर लिया और कैंटनों से बहुत-सा धन और अनेकों सैनिक दूसरे देशों से लड़ने के लिये एकत्रित कर अपने आधीन किये। इसका परिणाम यह हुआ कि कैन्टनों में विद्रोह खड़ा हो गया जिसकी प्रतिक्रिया में फ्रांसीसियों ने स्विट्ज़रलैंड के निवासियों की निर्दयतापूर्वक हत्या की। जब फ्रांस और आस्ट्रिया में युद्ध आरम्भ हुआ *तो स्विट्ज़रलैंड तुरन्त ही इस संघर्ष की युद्ध-भूमि बन गया।*

(३) **नेपोलियन काल**—नेपोलियन ने तुरत ही अपने कुशल जनरल ने (Ney) को सुव्यवस्था स्थापित करने के लिये भेजा। स्विट्ज़रलैंड के प्रतिनिधि पेरिस में इकट्ठे हुए और वहाँ उन्होंने एक्ट आफ मिडिएशन (Act of Mediation) पास किया जिसमें स्विटज़रलैंड के इतिहास का तीसरा युग आरम्भ हुआ। किन्तु इस

[1] फेडरल पौलिटी, पृष्ठ ५३।

एक्ट ने भी स्विट्जरलैंड को फ्रांस के प्रभाव से छुटकारा न मिला। सन् १८१३ में जब नेपोलियन की हार हुई तब इस युग की समाप्ति हुई।

(४) **सन् १८१५-१८४८ का संशोधन**—वियना कांग्रेस (Vienna Congress) ने यूरोप के नक्शे को बिल्कुल बदल दिया था, यह सभी जानते हैं। यद्यपि स्विट्जरलैंड को अपनी खोई भूमि न मिली किन्तु एक सुन्दर शासन-विधान अवश्य मिल गया जो १८१५ की संधि के नाम से प्रसिद्ध है। इस संविधान से सब कैन्टनों को समान राजनैतिक दर्जे का मान लिया गया, और प्रत्येक को इसी आधार पर राष्ट्रीय परिषद में एक मताधिकार दिया गया। स्थानीय मामलों में उन्हें पूरी स्वाधीनता दे दी गई। सन् १८३० के जुलाई मास में इस संविधान में कई महत्वपूर्ण सुधार किये गये।

(५) **आधुनिक काल**—सन् १८४५ ई० में स्विट्जरलैंड में भयंकर गृहयुद्ध हुआ जिसमें सात कैन्टनों ने अपना पृथक संघ बनाया, जिसका नाम उन्होंने बेवाफनैटर सौंदरबन्द (Bewaffneter Sonderbund) रखा और यह धमकी दी थी कि वे संघ-शासन से पृथक हो जायेंगे। संघ-संसद ने जनरल ड्यूफोर की अध्यक्षता में अपनी १ लाख सेना भेजी जिसने विद्रोही कैन्टनों की ५५००० सेना को दस दिन के युद्ध के पश्चात् हरा दिया। इस प्रकार संघ से पृथक होने के कार्य को सफल होने से रोका। सन् १८४८ में कैथोलिक कैन्टनों की कुछ मांग को पूरा करने के लिए शासन विधान को दुहराया गया। इस नये संविधान से, जिसमें सन् १८७४ में फिर संशोधन हुआ, स्विटजरलैंड के पांचवें युग का आरम्भ होता है। वर्तमान समय में यही संविधान चल रहा है।

सन् १८७४ का शासन-विधान

सन् १८४८ के शासन-विधान में नये विचारों की प्रतिच्छाया के साथ-साथ प्राचीन व्यवहार को सुरक्षित रखने का प्रयत्न दिखाई पड़ता था। इन दोनों का मेल उनमें स्पष्ट रूप में किया गया था। संघ-सरकार को जो शक्तियां सुपुर्द की गई थी वे बहुत सीमित थीं। "ये शक्तियां सेना-संबंधी व कूटनीति संबंधी मामलों में प्राप्त थी। डाक, आयात-निर्यात कर, माप,तोल इन आर्थिक विषयों में भी, जिनमें मिली-जुली कार्यवाही के बिना प्रजा की एकता की रक्षा नहीं हो सकती, संघ-सरकार को अधिकार दिया गया था।"[१] इस संविधान को जब व्यवहार में लाया गया तो यह आवश्यकता प्रतीत हुई कि केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तिशाली बनाया जाय। इस उद्देश्य से जो आन्दोलन चला उसमें यह कहा गया कि कैंटनों की पृथक न्याय-प्रणालियां मिटा दी

१ सेलेक्ट कान्स्टीट्यूशन्स आफ दी वर्ल्ड, पृ० ४२७।

जायें, कानून को सघीभूत कर क्रमबद्ध किया जाय और एक स्थायी न्यायालय स्थापित किया जाय। यह भी कहा गया कि रेलो का राष्ट्रीयकरण किया जाय और वे सघ-सरकार के अधीन रखी जायें और यह भी माग की गई कि प्रत्येक कानून सम्पूर्ण जनता की स्वीकृति के लिये रखा जाय। इस सम्बन्ध में जनता शब्द से कैंटनो की पृथक-पृथक जनता न समझी जाय। किन्तु सारे सघ की जनता को ही अन्तिम निर्णय करने वाला न्यायालय समझा जाय।[1]

सन् १८७४ के शासन विधान का रूप—उपर्युक्त परिवर्तन के सुझावो कोसन् १८७४ के *सशोधित शासन-विधान में स्वीकार कर लिया गया। इस सशोधित सविधान* को प्रथम विधानमंडल ने पास किया, फिर लोक निर्णय से यह स्वीकार हुआ। यह सविधान विस्तार में सयुक्त राज्य अमेरिका के शासन-विधान का आधा है। "यह सविधान सघ सरकार और कैन्टनो की सरकारो की शासन सम्बन्धी व कानून सम्बन्धी शक्तियों की सीमा निर्धारित करता है।" इसने कैन्टनो के अधिकार व सघ सरकार के अधिकार के समर्थकों के विचार का सामजस्य कर उन्हें लोक हितकारक सजीव रूप देने का प्रयत्न किया है। इसलिये इसका इतना लम्बा विस्तार है जिससे पढने वाला उकता जाता है। किन्तु इसमें आन्तरिक मतभेद और सम्भवत सघर्ष के कारणों को दृष्टि में रख कर उनके दोष को दूर रखने या उन्हें उत्पन्न न होने देने का प्रयत्न किया गया है जिससे राजनीति सम्बन्धी सद्गुणों की दृष्टि में बहुत ऊँचा स्थान दिया जाता है। "स्विट्जरलैंड के विधान-निर्माता, मौंटेसक्यू (Montesquieu) के सिद्धात में श्रद्धा न रखते थे, इसलिये उन्होंने राज्य सगठन के विभिन्न अगो में शक्ति का विभाजन या पृथक्करण नहीं किया और न उनके साथ पारस्परिक सतुलन या विरोध का आयोजन किया।" इस दृष्टि से सयुक्त राज्य अमेरिका व स्विट्जरलैंड के सविधान में अद्भुत असमानता है।[2] स्विट्जरलैन्ड में २२ कैन्टनों, या यो कहिये कि १९ पूर्ण और ६ अर्द्ध-कैन्टनो का सघ-शासन स्थापित किया गया है। इनके नाम शासन विधान की प्रस्तावना में दिये हुए हैं। नए उपराज्यो अर्थात् घटको या इकाईयो को सघ में शामिल करने का आयोजन इस सविधान में नहीं है। यदि ऐसा करने की आवश्यकता पड जाय तो सविधान में परिवर्तन करना पडेगा। इसके विपरीत सयुक्त-राज्य अमेरिका के शासन-विधान में इससे सम्बन्धित स्पष्ट प्रावधान है।

सविधान की प्रमुख विशेषतायें—स्विट्जरलैन्ड के निवासियों को सन् १८४८ के गृहयुद्ध का कटु अनुभव हो चुका था इसलिये इस नए सविधान में पृथक्करण की

---

१ मैलैट कन्स्टीट्यूशन आफ दी वर्ल्ड, ४२८।

२ गवर्नमेंट एण्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० ४९-५०।

सम्भावना को दूर रखने का प्रयत्न किया गया है। इसके लिये यह निश्चित प्रावधान कर दिया गया है कि कैन्टनों में आपस में राजनैतिक सधियाँ नहीं हो सकती। संयुक्त राज्य अमेरिका के शासन विधान में कहा गया है कि संघ-सरकार के अधिनियम को संघ सरकार के अफसर कार्यान्वित करेंगे और उपराज्यों के अधिनियम को उपराज्यों के अफसर। किन्तु स्विट्जरलैन्ड में इस प्रकार का विभाजन नहीं किया गया है, इस संविधान में स्विस नागरिकता की विधि-पूर्वक परिभाषा नहीं की गई है, किन्तु केवल यही कह दिया गया है कि कैन्टन का प्रत्येक नागरिक स्विस नागरिक है। संविधान में मूलाधिकारों का वर्णन नहीं मिलता किन्तु वैयक्तिक अधिकारों का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। निर्बन्धन्याय में विधि के समक्ष सब व्यक्तियों की समानता, आत्मस्वातन्त्र्य, धर्म-विश्वास, आराधना सम्बन्धी स्वतन्त्रता और समाचार-पत्रों की स्वतन्त्रता सुरक्षित कर दी गई है। किन्तु संविधान के ५२ वें अनुच्छेद में नए मठों या सम्प्रदायों को पुनर्जीवित करना मना है। नागरिकों का यह अधिकार भी सुरक्षित कर दिया है कि वे प्रार्थना-पत्र दे सकते हैं और समुदाय बना सकते हैं। प्रतिबन्ध केवल इतना है कि ये समुदाय राज्य में हानिकारक या किसी अवैध उपायों को काम में नहीं ला सकते। भारतवर्ष के समान स्विट्जरलैन्ड के विधान-निर्माताओं के सामने भी विभिन्न भाषा धर्म और जातियों की समस्या थी। अतएव भारतवर्ष के निवासियों को स्विट्जरलैन्ड के संविधान व उसके इतिहास का अध्ययन बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

यद्यपि सन् १८७४ के संविधान निर्माताओं के सामने संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का उदाहरण और अनुभव दोनों ही उपस्थित थे, किन्तु उन्होंने इससे अधिक लाभ नहीं उठाया। इसका कारण यही था कि स्विट्जरलैंड की भौगोलिक परिस्थिति, वहां की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, लोगों के आचार-विचार तथा आर्थिक परिस्थिति अमेरिका से भिन्न थे। यही कारण है कि यद्यपि अमेरिका की भांति स्विट्जरलैंड भी लोकतन्त्रीय तथा गणतन्त्रीय राज्य है और दोनों ने संघीय शासन प्रणाली अपनाई है, फिर भी दोनों के संविधान में बहुत भेद और अन्तर है। स्विस संघवाद (Swiss Federalism) और अमरिकन संघवाद (American Federalism) में बहुत कुछ भिन्नता है। स्विस-संविधान अन्य देशों के संविधानों की अपेक्षा बहुत ही निराला (unique) है और उसमें कई राजनीतिक सिद्धान्त (political principles) और राजनीतिक संस्थाएं (political institutions) अनुपम हैं। स्विस संविधान की विशेषताओं का तुलनात्मक वर्णन भी राजनीतिक के विद्यार्थियों और जिज्ञासुओं के लिये महत्वपूर्ण है। स्विस संविधान की निम्न विशेषताएँ प्रमुख हैं :—

(१) संविधान का कलेवर—अमेरिकन संविधान की अपेक्षा स्विस संविधान

अधिक बड़ा है, उसमे ५० प्रतिशत अधिक लम्बा है। स्विस सविधान मे कुछ ऐसी बातो का भी समावेश है जो वास्तव मे विधायिनी (constitutional) नही हैं। परन्तु इस सविधान के बड़े होने का मुख्य कारण यह है कि उसमे कई बातो को अधिक विस्तार पूर्वक लिख दिया गया है; सघीय सरकार के अधिकारो और शक्तियो का सविस्तार वर्णन किया गया है और सघ तथा कैंटनो के विधायिनी (legislative) और प्रशासकीय (administrative) अधिकारो पर जो प्रतिबन्ध लगाये गये है उनका भी विस्तृत वर्णन किया गया है। जहा अमेरिका मे निहित शक्तियो के सिद्धान्त को महत्ता दी गई है वहा स्विस सविधान मे स्पष्टतया वर्णित शक्ति को ही अधिक महत्व दिया गया है। सविस्तार वर्णन का एक लाभ स्विट्जरलैंड मे यह अवश्य हुआ है कि वहा सघ और घटक राज्यो (cantons) मे कोई विरोध नही होने पाया है; यह स्विस राजनीति का एक बड़ा गुण माना जाता है।

(२) संविधान का आधार भूत सिद्धान्त—अमेरिकन सघवाद की सप्रभुता पर स्थिर है और इसी कारण वहा के सविधान की प्रस्तावना मे कहा गया है कि "हम सयुक्त राज्य अमेरिका के लोग ..... इस सविधान को निर्दिष्ट तथा स्थापित करते हैं"। किन्तु स्विस सविधान की प्रस्तावना मे कहा गया है कि "स्विट्जरलैंड के निम्न बाइस सप्रभुताधारी कैंटनो के लोग स्विस सघ का निर्माण करते हैं," अर्थात् कैंटनो की सप्रभुता को महत्व दिया गया है जिसके कारण स्विस सघ की एकता उतनी पक्की नहीं जितनी अमरीकी सघ की है। स्विस सघ को उपराज्यो का सघ और अमरीका सघ को सयुक्त राज्य के नागरिको का सघ कहना ठीक होगा, इसीलिये स्विट्जरलैंड को कन्फेडरेशन (confederation), न कि फेडरेशन (federation) कहा गया है। सविधान के तीसरे अनुच्छेद मे कहा गया है कि "कैंटन सप्रभुताधारी है जहा तक उनपर सघीय सविधान ने कोई प्रतिबन्ध नही लगाया है, अत वे उन सभी अधिकारो का उपभोग करते है जो सघीय सरकार को नही दिये गये है।" कैंटनो की सप्रभुता को अनुच्छेद ५ मे और भी अधिक स्पष्ट कर दिया गया है जिसके द्वारा उनके क्षेत्रफल, सप्रभुता, उनके सविधानो और नागरिको के अधिकारो तथा नागरिको द्वारा प्रदत्त कैंटनो की शक्तियो की सुरक्षा अथवा प्रत्याभूति (guarantee) सघीय सरकार का कर्त्तव्य है। साराश यह है कि स्विस सविधान म कैंटनो की सप्रभुता पर अधिक जोर दिया गया है, और सयुक्त राज्य म नागरिको की सप्रभुता पर। भारत के गणतत्र म भी लोगो (न कि उपराज्यो) की सप्रभुता मानी गई है।

(३) शक्ति पृथकीकरण के सिद्धान्त का अभाव—सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान माटेस्क्यू द्वारा प्रतिपादित शक्ति-पृथक्करण (Separation of Powers) पर आधारित है और इसलिये प्रथम तीन अनुच्छेदो मे सघीय सरकार के विधान मडल

(legislature), कार्यपालिका (executive) और न्यायपालिका (judiciary) की रचना, उनके अधिकार और शक्तियों तथा पारस्परिक सम्बन्धों का सविस्तार वर्णन है। किन्तु स्विस संविधान में इस सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया, वहां तो सारी शक्ति के अन्तिम उपभोक्ता वहां के कैंटन और नागरिक हैं। स्विस विधान मंडल का कार्यपालिका पर पूर्ण अधिकार है, वास्तव में स्विस कार्यपालिका अनोखे ढंग की है, वह केवल विधान मंडल के निर्णयों को लागू करती है, स्वयं राजनीति का निर्माण नहीं करती। स्विस न्यायपालिका को अमरीकी सुप्रीमकोर्ट की भांति विधियों की अवैधता घोषित करने, संविधान की व्याख्या करने अथवा न्यायिक पुनर्विलोकन (judicial rereω) करने का कोई भी अधिक.र नहीं। उसके न्यायाधीशों का निर्वाचन एक निर्धारित अवधि के लिये विधान मंडल करता है और उसके संवैधानिक झगड़ों को तय करने का कोई अधिकार नहीं। कैंटनों के आपसी न्यायिक (legal) अथवा वैधानिक (constitutional) झगड़ों का निपटारा स्विस कार्यपालिका करती है और संघीयविधियों को रद करने का अधिकार कैंटनों के बहुमत तथा नागरिकों के बहुमत से होता है। क्योंकि संविधान का संशोधन प्रत्यक्ष जनतंत्र द्वारा होता है न्यायपालिका पर (अमेरिकन सुप्रीम कोर्ट के विपरीत) स्विस संविधान को सर्वोपरि विधि मानने का अथवा उसकी रक्षा करने का प्रतिबंध नहीं।

(४) **नागरिकों के मूल अधिकार**—अमरीकी संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में (जिनका वर्णन किया जा चुका है) नागरिकों के मूल अधिकारों का एकत्रित वर्णन है। भारत के संविधान के तीसरे अध्याय में नागरिकों के मूल अधिकारों का स्पष्टीकरण किया गया है। किन्तु स्विस संविधान में ऐसे मूल अधिकारों का कोई विशेष एकत्रित घोषणा-पत्र (Bill of Rights) नहीं है। हां, प्रथम अध्याय के इतर-वितर अनुच्छेदों में नागरिकों के निम्न अधिकार वर्णित हैं :—

(क) सारे स्विस लोग विधि (Law) में एक समान हैं। स्विट्जरलैंड में कोई प्रजा (subjects) नहीं, (अर्थात् दूसरे के आधिपत्य में लोग नहीं, और पद या जन्म के व्यक्तिक, अथवा कौटुम्बिक विशेषाधिकार नहीं। (अनु० ४)

(ख) कैंटन प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबन्ध करेंगे जो काफी होगी और असैनिक शक्ति द्वारा ही प्रचारित होगी। प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और सरकारी स्कूलों में नि:शुल्क है।

सभी धार्मिक मतों के सदस्यों के लिये सरकारी स्कूल खुले रहेंगे, और किसी के *मार्ग में धार्मिक विश्वासों के भेदभाव से कोई अड़चन न रहेगी।*

यदि कोई कैंटन इन शर्तों का पालन नहीं करेंगे तो संघ-सरकार उनके विरुद्ध आवश्यक पग उठावेगी। (अनु० २७)

(ग) सारे सघ के अन्तर्गत व्यापार और उद्योग की स्वतत्रता है। (अनु० ३१)

(घ) सघ ऐसे अधिनियम बनाने का अधिकारी होगा जो रोग और दुर्घटना से पीडितो का बीमा करेगा। ऐसा अधिनियम सभी लोगों अथवा निर्धारित वर्गो के लिए अनिवार्य होगा। (अनु० ३४ ब)

(ङ) कैंटन का प्रत्येक नागरिक स्विस नागरिक है। अतएव वह, अपनी आर्हता (Qualification) साबित करने पर, अपने कैंटन तथा सघ-सम्बन्धी निर्वाचनो मे मतदान का अधिकारी है।

कोई भी व्यक्ति एक से अधिक कैंटन मे राजनीतिक अधिकारो का उपभोग नही करेगा। (अनु० ४३)

(च) किसी भी स्विस नागरिक को सघ अथवा अपने जन्म के कैंटन की सीमा के बाहर निर्वासित नही किया जावेगा। (अनु० ४४)

(छ) प्रत्येक स्विस नागरिक को, जन्म आदि के प्रमाण पत्र दिखाने पर, स्विट्जरलैंड के किसी भी भाग मे निवास करने का अधिकार है। (अनु०४५)

(ज) आत्म-स्वतत्रता (Freedom of conscience) पर आघात नही होगा। किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध किसी धार्मिक सहवास (association) का सदस्य होने के लिये बाधित नही किया जायगा।

कोई भी माता-पिता अपनी सतान को (१६ वर्ष की अवस्था तक) धार्मिक शिक्षा दिलाने मे स्वतत्र है। किसी भी धर्म अथवा मत के आधार पर असैनिक और राजनीतिक अधिकारो को परिमित नही किया जायगा। (अनु० ४६)

(झ) सार्वजनिक आचार, शाति और व्यवस्था के अनुकूल धार्मिक स्वतत्रता की प्रत्याभूति (Guarantee) की जाती है।

सघ की बिना आज्ञा किसी भी कैंटन मे बिशप पद (Bishopric) की स्थापना न होगी। (अनु० ५०)

(ञ) विवाह का अधिकार सघ के सरक्षण मे है।

धर्म, निर्धनता अथवा किसी भी पक्ष के आचार-विचार के कारण विवाह मे बाधा नही होगी।

किसी भी कैंटन मे अथवा विदेश मे हुए विवाह सारे सघ मे मान्य होगे।

विवाह हो जाने पर पत्नि अपने पति के कम्यून (Commune) की नागरिक समझी जावेगी।

पति अथवा पत्नी से कोई विवाह शुल्क नहीं लिया जावेगा। (अनु०५४)

(ट) मुद्रणालय की स्वतत्रता प्रत्याभूत की जाती है। किन्तु कैंटन को अधिकार है कि आवश्यक कार्रवाई द्वारा इसका दुरुपयोग रोक दें। (अनु० ५५)

(ठ) नागरिकों को संघ (association) बनाने की स्वतन्त्रता है परन्तु इनके उद्देश्य और साधन न तो गैर कानूनी हों और न राज्य के लिये खतरनाक हों। कैंटन इनका दुरुपयोग रोकेंगे। (अनु० ५६)

(ड) प्रार्थना करने (Petition) का अधिकार प्रत्याभूत किया जाता है। (अनु० ५७)

(ढ) प्रत्येक नागरिक को सामान्य न्याय मिलेगा। (अनु० ५८)

(ण) प्रत्येक कैंटन अन्य कैंटनों के नागरिक के साथ वही व्यवहार करेगा जो अपने नागरिकों के साथ करता है। (अनु० ५९)

(त) शारीरिक दंड (Corporal punishment) नहीं दिया जायगा। राजनीतिक अपराधों के लिये प्राण दंड नहीं दिया जायगा। (अनु० ६०)

(५) स्विट्जरलैंड में धार्मिक भेदभाव अधिक है। यद्यपि वहां प्रोटेस्टेंट मतावलम्बी अधिक हैं, फिर भी कैथोलिक मतावलम्बियों का बहुत प्रभाव है, अतएव वहां स्त्रियों को मताधिकार नहीं दिया गया है। कई बार संविधान में संशोधन प्रस्तुत हुए कि स्त्रियों का मताधिकार दिया जावे, परन्तु वे स्वीकृत नहीं हुए।

(६) संयुक्त राज्य अमरिका में संघीय विधियों को संघीय कर्मचारी लागू करते हैं, किन्तु स्विट्जरलैंड में ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं। इसका यह परिणाम है कि केन्द्र की शक्ति अधिक है और कैंटनों के कर्मचारी केन्द्रीय विधियों को लागू करते हैं।

(७) अमेरिका में धार्मिक स्वतन्त्रता सम्पूर्ण अपरिमित और स्पष्टतया लागू है। यद्यपि वहां भी धार्मिक भेद भावों का निर्वाचन पर काफी प्रभाव पड़ता है और अधिकतर प्रोटेस्टेंट मतावलम्बी ही प्रेसीडेंट निर्वाचित हुए हैं किन्तु वहां किसी धर्म अथवा मत पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं। इसके विपरीत स्विस विधान में जेसुइट मत (Jesuit) पर पूरा प्रतिबंध है। न तो उनको कोई स्वतन्त्रता है, और न वे अपने विचारों का प्रचार कर सकते हैं। न वहां कोई नवीन मत की स्थापना की जा सकती है और न नया बिशप पद स्थापित हो सकता है। अनुच्छेद ५१ व ५२ इन प्रकार के प्रतिबन्ध लगाते हैं।

(८) स्विट्जरलैंड की कार्यपालिका विचित्र प्रकार की है, न तो वह संसदीय है और न अध्यक्षात्मक, और न उसके सभी सदस्यों को सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective responsiblity) रखना पड़ता है। इस कालिजिएट (Collegiate) कार्यपालिका का सविस्तार वर्णन अन्यत्र किया गया है।

(९) स्विट्जरलैंड ही एक ऐसा राज्य है जिसमें अभी तक प्रजातंत्र का प्रत्यक्षरूप बहुत कुछ जारी है। वहां नागरिकों और कैंटनों का अधिकार है कि किसी भी विधि का लोक निर्णय (Referendum) करावें, अथवा अधिनियम का प्रस्ताव करें

(Initiative) अथवा (कुछ कैंटनों में) प्रतिनिधियों अथवा न्यायाधीशों, व न्याय-निर्णयों (judgements) को वापिस (recall) करा दें।[1]

छ. कैंटनों में जिनकी जनसंख्या कम है। कोई प्रतिनिधि सदन नहीं, वहां नागरिक अपने सम्मेलन (Landsgemeinde) में कैंटन की विधियां (Laws) बनाते, आय-व्यय का ब्योरा तय करते और अधिकारियों का निर्वाचन करते तथा प्रशासन का निरीक्षण करते हैं। ऐसी प्रथा किसी और देश में नहीं है। ये कैंटन हैं, ऊरी (Uri) ग्लैरस (Glarus), अपर और लोअर अटरवाल्डन (Unterwalden), तथा आन्तरिक वहिः अपेनजल (Appenzel, Interior and Exterior)। इन सभाओं का सविस्तार *वर्णन अन्यत्र दिया गया है।*

(१०) **संविधान की अपरिवर्तनशीलता**—स्विस संविधान में सामान्य विधि (ordinary law) और संवैधानिक विधि (constitutional law) में भेद किया गया है। सामान्य विधि का निर्माण विधान मंडल करता है, यद्यपि लोक निर्णय द्वारा उसे नागरिक और कैंटन रद्द कर सकते हैं। किन्तु संविधान में संशोधन करने के लिये विधान मंडल केवल प्रस्ताव कर सकता है, अन्तिम निर्णय तो अनिवार्य लोक निर्णय (Compulsory referendom) द्वारा आधे से अधिक कैंटनों और सारे संघ के अधिकांश नागरिकों के बहुमत से हो हो सकता है। अतएव संशोधन की यह प्रक्रिया अमरीकी संविधान संशोधन की प्रक्रिया से अधिक कठिन है।

(११) *स्विस संविधान में एक संघीय प्रशासकीय न्यायाधिकरण* (Federal Administrative Tribunal) की स्थापना अनुच्छेद ११४ (अ) के द्वारा की गई है, जो २५ अक्तूबर १६१४ के लोकनिर्णय में स्वीकृत हुआ था। *इस ट्रिब्यूनल* को संघीय विधियों और संधियों के अन्तर्गत झगड़ों का निपटारा करना पड़ता है।

सिंहावलोकन

स्विस संविधान में एक प्रस्तावना और चार अध्याय हैं पहले अध्याय में जिसका शीर्षक है साधारण उपबन्ध (General Provisions), ७० अनुच्छेद (Articles) हैं जिनका क्रम किसी विशेष प्रकार से नहीं किया गया है, किन्तु एक ही *विषय सम्बन्धी बातें विभिन्न तितर-बितर (scattered) अनुच्छेदों में वर्णित हैं।* प्रस्तावना में यह कहा गया है कि २२ सम्प्रभुतापूर्ण कैंटनों (जिनके नाम दे दिये गये हैं) के लोग "इस मेल (alliances) में संगठित ·· एक कन्फेडरेशन (Confederation) का निर्माण करते हैं।" इसमें संघ (federation) नहीं कहा गया, अतएव प्रथम अध्याय के ७० अनुच्छेदों में जो साधारण उपबन्ध हैं उनमें कई विषयों का वर्णन

१ इसका प्रयोग अब कई पीढ़ियों से नहीं हुआ है।

है, प्रथम तो उसमे सघीय सरकार के उन अधिकारो का वर्णन है जो वह कैंटनो की सरकारो पर रखती है, दूसरे, नागरिकों के कुछ अधिकारो का वर्णन है; तीसरे, उसमे कैंटनो की स्वतंत्रता और उनके अपने सविधानो पर प्रतिबन्ध लगाये गये है, चौथे, उसमे सघ की कुछ शक्तियाँ (जिनमे आर्थिक शक्तियां भी है), वर्णन की गई है और कुछ स्रोतो की आयका सघ और कैंटनो मे विभाजन किया गया है, पाचवे, धार्मिक प्रतिबन्ध भी वर्णित हैं। इन्ही कारणो से यह अध्याय ही सविधान के कलेवर को बढाता है।

दूसरे अध्याय मे सघीय सस्थाओ और कार्याधिकारियो को वर्णित किया गया है, इसमे अनुच्छेद ७१—११७ है। सघीय विधान मडल की रचना, निर्वाचन, शक्तियां आदि का वर्णन अनुच्छेद ७१—८४ मे किया गया है। अनुच्छेद ६५—१०५ मे सघ की कार्यपालिका (Federal Council) की रचना, उसका निर्माण शक्तियां, कर्त्तव्य, तथा विधान मडल से सम्बन्ध स्पष्ट किये हैं। अनुच्छेद १०६—११४ मे सघीय न्यायालय की रचना, शक्तियो और क्षेत्राधिकार का वर्णन है। अनुच्छेद ११४ (अ) मे प्रशासकीय न्यायाधिकरण के अधिकार दिये गये हैं। अनुच्छेद ११५—११७ मे मिश्रित उपबन्ध (Misellaneous provisions) दिये गये हैं। तीसरे अध्याय के ११८—१२३ मे सविधान के विभिन्न प्रकार (आशिक तथा सम्पूर्ण) सशोधनो की प्रक्रिया (Revision of the Constitution) का सविस्तार वर्णन किया गया है।

चौथे अध्याय के अनुच्छेदो मे अस्थायी (temporary) तथा सक्रामिक (Transitional) उपबन्धन वर्णित हैं।

इस सविधान में कैंटनो के सविधान का समावेश नही है। प्रत्येक कैंटन (घटक-राज्य) का सविधान पृथक है, जो जनतत्रीय सिद्धान्तो पर आधारित है, नागरिको द्वारा निर्मित है और उन्ही के द्वारा लोकनिर्णय प्रणाली से सशोधित होता है। उसमे कोई ऐसा प्रावधान नही हो सकता जो सघीय सविधान के प्रतिकूल हो।

स्विस सविधान मे ४ भाषायें प्रमाणित और मान्य हैं, जर्मन भाषा जो १६ कैंटनो मे बोली जाती है, फ्रेंच ५ कैंटनो मे इटालियन १ मे और रोमाश (Romansch) एक कैंटन मे।

अध्याय २३

स्विट्ज़रलैंड की संघीय सरकार

स्विस संस्थाओं के संबंध में साधारण विवरण अवलोकन संवैधानिक ढांचे और उसकी क्रिया का महत्व इस बात में ही नहीं है कि अन्य आधुनिक राज्यों की अपेक्षा वे संस्थायें भिन्न प्रकार की हैं, किन्तु इस बात में भी है कि उनके दिन प्रतिदिन की प्रक्रिया में ऐसे परिणाम निकले हैं जिनकी आशा न थी। इसके दो कारण हैं। एक तो वहां ऐसी प्रथाओं का चलन हो गया है जिनका प्रभाव उनके दिन प्रतिदिन की प्रक्रिया पर बहुत पड़ा है। दूसरा कारण यह है कि राजनीतिक दल की शक्ति का बहुत कम प्रभाव है। —ब्राइस

स्विट्जरलैंड की संघीय सरकार के ढांचे, उसके अन्तर्गत विभिन्न संस्थाओं (विधान मंडल, कार्यपालिका, न्यायपालिका) की रचना, अधिकार क्षेत्र और प्रक्रिया तथा पारस्परिक सम्बन्धों का वर्णन करने के पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि इस संघ में केन्द्रीय सरकार तथा कैंटनों के क्या सम्बन्ध है, उनकी प्रक्रिया में संघ कहाँ तक कैंटनों पर अधिकार रखता है और आवश्यकता पड़ने अथवा किसी प्रकार का (आन्तरिक अथवा बाह्य) संकट उपस्थित होने पर किन शक्तियों का प्रयोग कर केन्द्रीय सरकार संघ की व्यवस्था को स्थिर रखती है?

संविधान के दूसरे अनुच्छेद में कहा गया है कि संघ का उद्देश्य (object) देश की बाहरी आक्रमण से रक्षा करना, उसमें आन्तरिक शांति और व्यवस्था रखना और उसके सदस्यों (कैंटनों) के अधिकारों की रक्षा करना तथा उनकी समृद्धि बढ़ाना है। यह अधिकार क्षेत्र सीमित है, इसीलिये तीसरे अनुच्छेद में कहा गया है कि कैंटनों को, संविधान द्वारा संघीय सरकार की शक्तियों के अलावा, सम्प्रभुता प्राप्त (sovereignty) है और वे शेष सभी अधिकारों का उपभोग करते हैं। संघ कैंटनों प्रत्याभूति (guarantee) देता है कि उनका राज्य क्षेत्र (territory) और सम्प्रभुता (sovereignty) तीसरे अनुच्छेद के अनुसार, उनके संविधान, उनके नागरिकों की स्वतंत्रता और अधिकार, और नागरिकों द्वारा प्रदत्त उनकी राजनैतिक संस्थाओं के अधिकार सुरक्षित रहेंगे। (अनु० ५)

कैंटनों को अपने संविधानों पर पूर्ण अधिकार है, वे अपनी इच्छानुकूल उनका संशोधन कर सकते हैं, किन्तु उनमें संघीय संविधान के विपरीत कोई बात नहीं

होनी चाहिये, उनमें गणराज्यीय सिद्धान्तों के अनुसार राजनैतिक अधिकारों की सुरक्षा होनी चाहिये, उनको जनता ने स्वीकृत कर लिया होना चाहिये और जनता के स्पष्ट बहुमत द्वारा संशोधन की प्रक्रिया होनी चाहिये। (अनु० ६)

कैंटन आपस में राजनैतिक संधियां नहीं कर सकते। परन्तु वे विधायिनी, प्रशासकीय तथा न्यायिक मामलों से सम्बन्धित समझौते वा करार कर सकते हैं, किन्तु इन करारों की सूचना संघीय सरकार को भेजनी होगी। (अनु० ७)

संघ को ही इसका अधिकार है कि वह देशों से युद्ध घोषणा करे, शांति-संधि करे, करार और संधियां (विशेषतया व्यापारिक तथा बहि:शुल्क अर्थात् कस्टम सम्बन्धी) करे (अनु० ८)। किन्तु आर्थिक तथा पुलिस और सरहदी सम्बन्धी मामलों में कैंटन विदेशों से करार और संधियां करने के अधिकारी हैं, परन्तु इन में अन्य कैंटनों के अधिकारों तथा संघ के प्रतिकूल कोई बात नहीं होनी चाहिये। (अनु० ९) इन स्पष्ट बातों के अतिरिक्त शेष सभी बातों में कैंटनों और विदेशों के बीच पत्र व्यवहार संघ के द्वारा होगा (अनु० १०)। संघ को स्थायी सेना रखने का अधिकार नहीं, किन्तु कैंटन, संघ की आज्ञा बिना भी, पुलिस के अतिरिक्त ३०० तक सैनिक रख सकते हैं (अनु० १३)। यदि कैंटनों में पारस्परिक झगड़े उठें तो वे शस्त्र नहीं उठा सकते, ऐसे झगड़ों का निपटारा संघ द्वारा निर्दिष्ट प्रक्रिया से होना चाहिये। (अनु० १४)

अकस्मात बाहिरी भय उपस्थित होने पर, जिस कैंटन को भय है उसकी सरकार को संघ से सहायता लेनी चाहिये और इस संबध में दिये गये संघीय सरकार के आदेशों का पालन सम्बन्धित कैंटनों को करना पड़ेगा। (अनु० १५) यदि किसी कैंटन को अन्य पड़ोसी कैंटन से खतरा हो तो पहले कैंटन को इसकी सूचना संघीय सरकार को देनी होगी जो इसका उचित प्रबन्ध करेगी। (अनु० १६) भय उपस्थित होने पर संघीय सरकार कैंटनों के सैनिकों पर पूर्ण अधिकार और नियन्त्रण रखेगी और कैंटनों को सेना के आने जाने के लिए निर्बन्ध रहित मार्ग देना होगा। (अनु० १८)

कैंटनों को अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबन्ध करना होगा और सार्वजनिक स्कूलों में बिना धार्मिक भेदभाव के सभी मतावलम्बी शिक्षा पा सकेंगे। इसका उल्लंघन करने पर कैंटनों के विरुद्ध संघीय सरकार को उचित कार्य करने का अधिकार है। (अनु० २७)

यद्यपि प्रारम्भिक शिक्षा का संगठन, संचालन तथा निरीक्षण कैंटनों के अधिकार में है, संघीय सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह कैंटनों को समुचित सहायता दे कि वे अपना कर्त्तव्य पूरा कर सकें। (अनु० २७ अ)

अनुच्छेद ६१ के अनुसार किसी व्यवहारिक निर्णय जो किसी भी कैंटन में हुआ हो सारे संघ में लागू होगा।

विभिन्न अनुच्छेदो मे सघ को सामाजिक तथा आर्थिक मामलो तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाओ के लिये विधि अथवा अधिनियम बनाने का अधिकार है जो कैंटनो मे लागू होते हैं। सघीय सरकार अपनी विधियो तथा अधिनियमो का पालन कैंटनो के अधिकारियो तथा कर्मचारियो द्वारा कराती है। सघीय कार्यपालिका किसी भी कैंटन अव्यवस्था होने पर उनके शासन को अपने अधिकार मे ले लेती है और जब तक व्यवस्था तथा साधारण शाति स्थापित नही होती वह उचित शासन प्रबन्ध करती है।

केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ और अधिकार—सविधान के प्रथम अध्याय के विभिन्न अनुच्छेदो मे वे शक्तिया वर्णित हैं जो केन्द्रीय सरकार (Federal Government) द्वारा भोगी जाती है। दूसरे अनुच्छेद मे सघ के उद्देश्य की परिभाषा से सघ-सरकार की शक्तियो का मूल भाव जाना जा सकता है। इसके अनुसार सघ का उद्देश्य विदेशियो से देश की स्वतन्त्रता की रक्षा करना, देश के भीतर शान्ति व सुव्यवस्था रखना, सदस्य-राज्यों की स्वतन्त्रता व अधिकारो की रक्षा करना और उन सबकी समृद्धि को बढाना है। इसलिये सघ-सरकार को बहुत ही सीमित और स्पष्टतया निश्चित अधिकार प्राप्त हैं। तीसरे अनुच्छेद मे इसको स्पष्ट कर दिया गया है, "जहाँ तक सघ शासन से कैन्टनो की सम्पूर्ण सत्ता मर्यादित नही हुई है, कैन्टन सम्पूर्ण सत्ताधारी है, अतएव वे उन सब शक्तियो को काम मे ला सकते हैं जो सघ सरकार को नही सौंपी गई है।" सघ ने कैन्टनो की सम्पूर्ण सत्ता, उनकी भूमि व उनके नागरिको के अधिकार की रक्षा करने का वचन दिया है। कैन्टनो के शासन-विधानो मे सघ सरकार हस्तक्षेप नही कर सकती, पर उसमे सघ शासन-विधान के विरुद्ध कोई बात न होनी चाहिये, उनसे प्रतिनिधिक प्रजातत्री गणराज्य की रक्षा होती रहनी चाहिये और कैन्टनो की बहुसख्यक जनता उन सविधानो को मान्य समझती हो। कैन्टन आपस मे राजनैतिक मित्रता नही कर सकते, हालांकि वे दूसरे कामो मे एक दूसरे से सहयोग कर सकते हैं। अद्भुत बात तो यह है कि कैन्टनो को यह अधिकार अब भी मिला हुआ है कि वे पुलिस, अर्थ सम्बन्धी और सीमा सम्बन्धी के बारे मे विदेशी राज्यो से सधि कर सकते हैं। पर इन समझौते मे कोई ऐसी बात न होगी जो सघ के या दूसरे कैन्टनो के हितो के प्रतिकूल हो। इसके साथ साथ यह भी प्रतिबन्ध है कि विदेश राज्यो से जो कुछ विचार विनिमय होगा वह सघ कौंसिल की मध्यस्थता से होगा। कोई भी पूर्ण कैन्टन या अर्ध-कैन्टन ३०० सैनिको से अधिक स्थायी सैन्य शक्ति न रख सकेगा। यह ऐसा प्रावधान है जो प्रायः बहुत से अन्य सघ-शासन विधानो मे नही मिलता क्योंकि सुरक्षा व उससे सम्बन्धित सब समस्यायें सघ सरकार के आधीन ही होती हैं। कैन्टनो की सेना का अनुशासन सघ कानून से निश्चित व नियमित रहता है और

आवश्यकता पडने पर सघ-सरकार सघ सेना के अतिरिक्त कैन्टनो की सारी सैन्यशक्ति पर अनन्यरूप मे तुरन्त अपना नियन्त्रण रख सकती है। इससे यह सम्भावना नही रहती कि कोई कैन्टन सघ के विरुद्ध शक्तिशाली बन गृह-युद्ध के लिये खड़ा हो जाय। यदि दो कैन्टनो मे कोई झगडा हो जाता है या किसी कैन्टनो मे विद्रोह खड़ा हो जाता है तो सघ-कौंसिल उसके निवटाने का प्रबन्ध करती है और यदि परिस्थिति गभीर हो तो अधिनायक जैसी शक्ति अपने हाथ मे कर उसका प्रयोग करती है। सब बातो पर विचार करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि सघ मे रहकर भी कैन्टनो को बहुत विस्तृत अधिकार मिले हुए हैं।

केन्द्रीय सरकार की शक्तियां—केन्द्रीय सरकार सेना-सम्बन्धी कानून बना सकती है। सेना का सगठन, युद्ध-घोषणा, सधि करना, सुरक्षा, वैदेशिक सम्बन्धो, इन सबकी व्यवस्था सघ-अधिनियमो से होती है। जल-विद्युत शक्ति, डाक व तार, सघ की सडकें और पुल, नौपरिवहन (Aerial Navigation)-विदेशी मुद्रा की कीमत, मुद्रा का बनाना, माप व तौल बारूद का बनाना और बेचना, विवाह-निबन्ध और प्रत्यर्पण (Extradition) आदि पर सघ सरकार का अनन्य स्वामित्व व नियन्त्रण है। व्यवहार-सम्बन्धी मामलो मे व्यापार के कानूनी प्रश्नो के बारे मे, चलसम्पत्ति के हस्तान्तरण, साहित्यिक व कलात्मक प्रतिलिप्याधिकार (Copy Right) प्रौद्योगिक अन्वेषण, ऋण, चुकाने के अभियोग और दिवालियापन आदि के सम्बन्ध म सघ सरकार को अधिनियम बनाने का अधिकार है। न्यायसगठन, न्याय-कार्य-प्रणाली, अपराध सम्बन्धी कानून, खाद्य व अन्य घरेलू वस्तुओ के व्यापार और सामान्य आयात निर्यात् कर, इन सबके लिये भी सघ सरकार आवश्यक व्यवस्था कर सकती है। सघ सरकार कैन्टनो से नि.शुल्क अनिवार्य शिक्षा के लिये आयोजन की आशा रखती है।

सघ सरकार की आर्थिक शक्तियां—आय के सम्बन्ध मे सविधान के ४१ वें अनुच्छेद से सघ सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह हुँडियां, बीमे की रसीदा, अधिकार-पत्रो व अन्य सामान पत्रों पर मुद्रांक शुल्क (Stamp Duty) लगा सकती है। किन्तु इस कर से जो धन एकत्रित हो व्यय घटा कर उसका पांचवां भाग कैन्टनो को लौटाना पडता है। ४२ वें अनुच्छेद मे कुछ और आगम स्रोतो का वर्णन है जैसे, सघसम्पत्ति की आय, सीमा पर उगाया हुआ सघ-कर, डाक व तार से प्राप्य आय, या बारूद बनाने के एकाधिकार से प्राप्त धन, कैन्टनो मे सैनिक सेवा मे मुक्त किये गये व्यक्तियो से प्राप्त कर का आधा भाग (स्विट्जरलैंड मे सैनिक-सेवा अनिवार्य है, जो व्यक्ति इससे मुक्त होना चाहते हैं उनसे कुछ कर वसूल किया जाता है) मुद्रांक शुल्क, कैन्टनो से प्राप्त धन।

अन्य शक्तियाँ जो निश्चित रूप से सघ सरकार को नही दी गई हैं सविधान ने कैन्टनो को सुरक्षित कर दी है।

संघ विधान मंडल (Fedeial Legislature)

द्विसदनी विधान मडल—यह विधान-मडल फेडरल असेम्बली अर्थात् सघ परिषद् के नाम से पुकारा जाता है। इसमें दो सदन (Houses) है, एक को नेशनल कौंसिल और दूसरे को कौसिल आफ स्टेट कहते हैं।

निचला सदन—नेशनल कौंसिल, विधान-मडल का निचला सदन है। इसके सदस्यों को सब प्रौढ़ नागरिक अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर चुनते हैं। प्रति २२००० नागरिको का एक प्रतिनिधि चुना जाता है। यदि ११००० या इससे अधिक सख्या मतधारको की होती है तो उन्हे एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार होता है। कैंटनो के जिले निर्वाचन-क्षेत्र रहते है। विभिन्न कैंटनो की जनसख्या मे बहुत अन्तर है, अतएव छोटे कैंटनों मे कुछ कैंटन एक ही प्रतिनिधि चुनकर भेजते हैं। ऊरी का कैंटन अपने २३००० नागरिको का एक प्रतिनिधि चुनता है किन्तु बर्न के ३३ और ज्यूरिच के २ प्रतिनिधिनि नेशनल कौशिल के सदस्य हैं। नेशनल कौंसिल की कुल सख्या सन् १९५१ के निर्वाचन के पश्चात् १९६ थी। सन् १९३० के निर्बन्ध से इसका कार्य-काल तीन वर्ष से बढ़ाकर चार वर्ष कर दिया गया है। इतने समय से पहले सदन का विघटन नही होता क्योंकि कार्यपालिका नेशनल कौसिल को उत्तरदायी नही है। यह कार्यपालिका पार्लियामेंटरी (ससदात्मक) ढग की नही है।

सदस्यों की योग्यता—राज्य का प्रत्येक नागरिक जिसने २१वें वर्ष मे प्रवेश किया हो मत देने का अधिकारी है और पादरियो को छोड़कर कोई भी मतधारक प्रतिनिधि चुना जा सकता है। किन्तु एक ही व्यक्ति दोनो सदनों का सदस्य एक समय मे नही रह सकता। प्रत्येक प्रतिनिधि को आने जाने के खर्च के अतिरिक्त सदन मे उपस्थित रहने के प्रतिदिन के लिये २५ फ्रैंक के हिसाब से भत्ता मिलता है। वर्ष में चार बैठकें होती हैं। सदन स्वय ही अपने सभापति व उपसभापति को चुनता है। हर एक सत्र (Session) के लिये नये सभापति व उपसभापति चुने जाते हैं। पूर्व सभापति या उपसभापति को लगातार दूसरे सत्र मे अर्थात् दूसरे वर्ष मे, फिर से सभापति या उपसभापति नही चुना जा सकता। एक वर्ष मे जितनी बैठकें होती हैं उन सबकी एक सत्र मे गिनती होती है।

सदन का सभापति—समान मत होने पर सभापति को निर्णायक मत देने का अधिकार है अतएव साधारण प्रश्नो पर वह दो मत दे सकता है। किन्तु समितियो के सदस्यो के निर्वाचन मे वह दूसरे सदस्यों के समान ही मतदान करता है। इस सभापति

का प्रभाव व शक्ति वैसी नही है जैसा अमेरिकन प्रतिनिधि-सदन के सभापति को प्राप्त है। फिर भी इस पद की आकाक्षा बडे बडे राजनैतिक नेता करते हैं, और जो सौभाग्य से इस पद को पा जाते हैं उनका अपने साथियो मे बडा (विशेष) आदर होता है। यही बात कौसिल ऑफ स्टेट के सभापति के बारे मे भी ठीक है।[1]

दूसरा सदन—फेडरल असेम्बली का दूसरा सदन कौसिल ऑफ स्टेट्स(Council of States) कहलाता है। अमेरिका व आस्ट्रेलिया की सीनेट की तरह कैंटनो के प्रतिनिधि सदस्य होते हैं। प्रत्येक कैंटन को दो प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। इस प्रकार २२ कैंटनो के ४४ प्रतिनिधि होते है। अर्ध-कैंटन एक प्रतिनिधि भेजता है। "यह अनोखी बात है कि सविधान मे इन प्रतिनिधियों के चुनाव के ढग के बारे मे कोई प्रावधान नहीं है। न इसकी योग्यता ही निर्धारित की गई है ये सब बातें कैंटनो पर छोड दी गई है; सविधान मे यह भी नही कहा गया है कि पादरी लोग इसके सदस्य नही हो सकते।[2] सविधान मे केवल यह निर्धारित है कि कैंटन अपने प्रतिनिधियो को स्वय वेतन देंगे। फिर भी कैंटनो में यह प्रवृत्ति बढती जा रही है कि इस सम्बन्ध मे वे सब एक ही प्रणाली का अनुकरण करें। यह बात इससे स्पष्ट है कि अधिकतर कैंटनो मे कौंसिल ऑफ स्टेट्स के प्रतिनिधि सीधे प्रजा द्वारा चुने जाते हैं। कुछ कैंटनो मे वहाँ की विधान-मण्डल इन प्रतिनिधियों को चुनती है।

सदस्यों की अवधि—तीन वर्ष की अवधि ही एक सामान्य नियम सा हो गया है किन्तु किन्ही कैंटनो मे १ वर्ष और दूसरो मे चार वर्ष की अवधि भी रखी जाती है। कैंटन अपने प्रतिनिधियों को वापस बुला सकते हैं और उनके स्थान पर दूसरे प्रतिनिधियो को भेज सकने मे स्वतन्त्र है। किन्तु ९१ वें अनुच्छेद मे एक प्रावधान है जो इसके भाव के प्रतिकूल प्रतीत होता है। इस अनुच्छेद मे लिखा है कि "कौसिल ऑफ स्टेट्स के सदस्यो को कौसिल मे अपना मत देने के सम्बन्ध मे कोई आदेश नही दिया जा सकता।"[3]

सदस्यों का वेतन—कैंटन अपने प्रतिनिधियो को वेतन व आने जाने का मार्ग-व्यय उसी दर से देते हैं जो सघ सरकार, नेशनल कौंसिल के सदस्यो के लिये निश्चित करती है। यदि कौंसिल ऑफ स्टेट्स के सदस्य किन्ही विधायनी-समितियो मे सदस्य बनने पर कार्य करते है तो सघ सरकार उन्हें भत्ता देती है।

सभापति—कौंसिल ऑफ स्टेट्स स्वय ही अपना सभापति व उपसभापति चुनती है। किन्तु एक ही कैन्टन के निवासी एक सत्र मे दोनो पदो के लिये नही चुने जा सकते

१. गवर्नमेन्ट एण्ड पोलिटिक्स ऑफ स्विट्जरलैंड, पृ० ७९--८०।
२ गवर्नमेण्ट एण्ड पोलिटिक्स ऑफ स्विट्जरलैंड पृ० ८३।
३. गवर्नमेण्ट एण्ड पोलिटिक्स ऑफ स्विट्जरलैंड पृ० ।

हैं। न एक ही कैन्टन के प्रतिनिधियों में से लगातार दो सत्रों में सभापति या उपसभापति चुने जा सकते हैं (अनुच्छेद ८२)। प्रचलित प्रथानुसार उपसभापति दूसरे सत्र में सभापति बना दिया जाता है। वर्ष में जितनी बैठकें होती हैं वे सब एक सत्र (Session) का भाग समझी जाती हैं। मत बराबर रहने पर सभापति को निर्णायक मत देने का अधिकार है।

संघ विधान-मण्डल की शक्तियाँ—संघ विधानमण्डल, जैसा पहले बतला चुके हैं, फेडरल असेम्बली (Federal Assembly) के नाम से पुकारा जाता है जिसमें कौंसिल ऑफ स्टेट्स और नेशनल कौंसिल नाम के दो सदन हैं। मंत्रिपरिषद्, जो फेडरल कौंसिल (Federal Council) के नाम से प्रसिद्ध है, सब अधिनियम योजनाओं को तैयार करता है, चाहे वह याचना विधेयक के रूप में हो या रिजोल्यूशन अर्थात् प्रस्ताव के रूप में। विधान मण्डल के सदस्य या दूसरे सामान्य व्यक्ति (उस दशा में जब वे स्वयं किसी योजना का प्रस्ताव रखते हैं) किसी योजना के प्रस्ताव की सूचना दे सकते हैं और फेडरल कौंसिल तब इस प्रस्ताव का मसविदा तैयार करती है। कभी कभी प्रस्ताव करने वाले व्यक्ति स्वयं ही अपना मसविदा कौंसिल के पास भेज देते हैं। जब सत्र (session) आरम्भ होने जा रहा हो उस समय फेडरल कौंसिल उस सत्र में विचारार्थ रखे जाने वाले विधेयकों और प्रस्तावों की पूरी सूची कौंसिल ऑफ स्टेट्स और नेशनल कौंसिल के सभापतियों के सम्मुख रख देती है। ये दोनों आपस में विचार करके यह निर्णय कर लेते हैं कि कौन से प्रस्तावों पर दोनों सदनों में पहले विचार किया जाय। यहाँ यह बतलाना आवश्यक है कि जब एक सदन में कोई योजना स्थापित हो जाती है तो यह फेडरल असेम्बली में स्थापित हुई समझी जाती है, इसलिए यदि एक सदन में वह योजना अस्वीकृत हो जाय फिर भी दूसरे सदन में वह विचाराधीन समझी जाती है। दोनों सदनों को समान अधिकार है। उन दोनों में मतभेद होने पर प्रत्येक सदन एक समिति नियुक्त करता है। ये दोनों समितियाँ आपस में सलाह करती हैं और प्राय किसी न किसी समझौते पर पहुँच जाती हैं। यदि समझौता न हो तो योजना या प्रस्ताव गिर जाता है। स्विट्ज़रलैंड में ऐसा कोई उदाहरण नहीं है जब इस प्रकार के मतभेद से कोई वैधानिक संकट खड़ा हो गया हो। दूसरे संविधानों की प्रथा के विपरीत स्विस संविधान में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जिससे दोनों सदनों के मतभेद होने पर किसी प्रश्न पर निर्णय हो सके। किन्तु इन मत भेदों की संख्या अधिक नहीं होती, न ये बहुत गम्भीर होते हैं क्योंकि अपनी रचना के कारण कौंसिल ऑफ स्टेट्स नेशनल कौंसिल अर्थात् लोक सभा से अधिक उन्नति-विरोधी नहीं होती। अधिनियम निर्माण में सारी प्रजा के अन्तिम नियंत्रण का अधिकार होने से संविधान में इस कमी का कोई महत्व भी नहीं रह जाता है।[1]

१. मॉडर्न डेमोक्रेसीज़ पृ० ५३६।

असेम्बली को सघ-अधिकार क्षेत्र के सब विषयों में व्यवस्था करने का अधिकार है। सदनों के इन अधिकारों या शक्तियों को संक्षेप में नीचे दिया गया है।

(१) विदेशी राज्यों से व्यवहार करने में, युद्ध या संधि करने में संघ सेना के लिए अधिनियम बनाने में, स्विट्जरलैंड की बाहरी सुरक्षा व तटस्थता बनाये रखने के लिये सब प्रकार का प्रबन्ध करने में ये सदन सघ की सर्वाधिकारी सत्ता का उपभोग करते हैं।

(२) कैंटनों व सघ के बीच वे सघ के अधिकार की रक्षा करते हैं। इसके साथ साथ वे यह भी ध्यान रखते है कि कैंटनों के संविधानों की सुरक्षा-सम्बन्धी-सघ द्वारा दी हुई प्रत्याभूति के पालन के हेतु आवश्यक अधिनियम भी बनते रहें और फेडरल कौंसिल में प्रार्थना किये जाने पर वे कैंटनों में आपस में किये हुए या किसी कैन्टन और विदेशी राज्य के बीच किये हुए समझौते या संधि के वैध-अवैध होने का निर्णय भी करते हैं।

(३) वे सघ की सामान्य अधिनियम शक्ति को कार्यान्वित करते हैं, और इस बात का विशेष प्रयत्न करते है कि शासन-विधान कार्यान्वित हो और सघ के कर्तव्यों का अच्छी तरह पालन हो।

(४) वे सघ के आय-व्यय के लेखे को स्वीकार करते हैं और सघ की आर्थिक स्थिति पर नियंत्रण रखते हैं।

(५) वे सघ के पदाधिकारियों व कर्मचारियों का प्रबन्ध करते हैं। आवश्यक शासन विभागों की रचना कर उनके अफसरों के वेतन आदि का उचित प्रबन्ध भी उन्हीं के द्वारा होता है।

(६) वे सघ सरकार की व सघ न्यायपालिका की कार्यवाहियों पर दृष्टि रखते हैं। शासन सम्बन्धी मुकद्दमों में फेडरल कौंसिल के निर्णयों के विरुद्ध वे शिकायतें सुन उन पर अपना निर्णय देते हैं।

(७) जनता की सम्मति से वे सघ-शासन-विधान में संशोधन भी करते हैं।[१]

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जायगा कि फेडरल असेम्बली को विधायिनी, कार्यकारी व न्यायिक शक्तियाँ प्राप्त हैं और वह उनका प्रयोग भी करती है। स्विट्जरलैंड में मौंटेस्क्यू के शक्ति विभाजन (Separation of Powers) के सिद्धांत का अनुकरण नहीं किया गया है। वहां की कार्यपालिका विधान-मंडल अर्थात् फेडरल असेम्बली को अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होती बल्कि असेम्बली की इच्छाओं को व्यवहार रूप देती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के समान यहाँ की न्यायपालिका सर्वोच्च न्यायसत्ता नहीं है।

---

१. दी स्टेट, पैरा ६६६ (सन् १९२६ की प्रति)।

सम्मिलित बैठकें—असेम्बली के दोनों सदन फेडरल कौंसिल (कार्यपालिका) का निर्वाचन करने के लिये संयुक्त अधिवेशन में सम्मिलित होते हैं। ऐसी संयुक्त बैठकों में ही फेडरल कौंसिल के सभापति व उप-सभापति का चुनाव किया जाता है। फेडरल चान्सलर व अन्य प्रमुख संघ-अधिकारी भी इसी संयुक्त बैठक में चुने जाते हैं।

विधान-मण्डल के उल्लेख पत्र—असेम्बली की कार्यवाही का उल्लेख जर्मन, फ्रैंच व इटैलियन तीनों भाषाओं में रखा जाता है और सदस्यों को किसी भी भाषा में वक्तृत्व देने का अधिकार है। दोनों सदनों में कार्यवाही बड़े शिष्टाचार से और गौरवपूर्ण ढंग पर होती है। जब कोई सदस्य वक्तृता देता होता है उस समय सब लोग बिल्कुल शांत रहते हैं। सब सदस्य अपने कार्य से परिचित रहते हैं और उनकी संख्या कम होने से सब मामलों पर पूर्ण विचार होता है। सैनिक मामलों की खूब अच्छी तरह से छानबीन होती है क्योंकि सैनिक सेवा स्विट्जरलैंड के प्रत्येक निवासी के लिए अनिवार्य होने के कारण, सब सदस्य उसमें वैयक्तिक अनुभव के आधार पर विचार प्रकट करते हैं और अपनी अभिरुचि का परिचय देते हैं।

सदस्यों की योग्यता—दोनों सदनों के सदस्य खूब पढ़े-लिखे व्यक्ति होते हैं। नेशनल कौंसिल के साठ फी सदी सदस्य और कौंसिल आफ स्टेट के तीन चौथाई सदस्य विश्वविद्यालय में शिक्षित व्यक्ति होते हैं।[१] कुछ सदस्य ऐसे भी होते हैं जो विदेशी विद्यालयों में शिक्षा पाये हुए होते हैं। जैसी दलबन्दी संयुक्त-राज्य की कांग्रेस में देखने को मिलती है वैसी स्विस विधानमंडल में नहीं है। यहाँ का साधारण व्यवस्थापक "ठोस चतुर, उद्वेगहीन या कम से कम अपने उद्वेगों को सहज ही व्यक्त करने वाला होता है। किसी समस्या के विचार करने पर वह व्यावहारिक बुद्धि से मनन करता है और उसका दृष्टिकोण मध्यवर्गीय व्यवहारी व्यक्तियों का सा रहता है। जर्मन व्यक्ति की तरह उसकी प्रवृत्ति सैद्धांतिक बातों पर बार बार लौटने की नहीं होती, न फ्रांस के निवासी के समान वह चकित करने वाले वाक्यों से प्रभावित होता है।"[२] सदस्य सदनों में ठीक समय पर नियमानुसार उपस्थित होते हैं। व्यवस्थापकों के इन गुणों के कारण स्विट्जरलैंड के विधानमंडल को विशेषतया आदरणीय और गौरवपूर्ण समझा जाता है। संसार में इसके समान दत्तचित होकर अपना काम करने वाली दूसरी कानून बनाने वाली संस्था नहीं है। इसमें क्रमबद्ध वाद-विवाद कम होता है और उससे भी कम क्रमबद्ध व्याख्यान होते हैं। यहाँ प्रभावपूर्ण भाषा की कला का कोई प्रदर्शन नहीं होता। वक्ताओं को न कोई बीच में रोकने का प्रयत्न करता है, न वे प्रशंसा के

---

१ गवर्नमेंट एण्ड पालिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० १८।

२ मौडर्न डैमोक्रेसीज, पुस्तक १, पृष्ठ ३७८।

करती है। सघ-विधान के पालन और सघ के कानूनो, आदेशो व समझौतो के अनुकरण को यह निरापद करने के लिए आवश्यक कार्यवाही करती है, कैन्टनो के शासन-विधानो के पालन की सुरक्षा करती है, फेडरल असेम्बली के सम्मुख प्रस्तुत किये जाने वाले अधिनियमो व आदेशो का मसविदा तैयार करती है, और कैन्टनो व अन्य कौंसिलो द्वारा भेजे हुये प्रस्तावो पर अपनी रिपोर्ट देती है।[1] फेडरल कौंसिल सघ अधिनियमो को सघ न्यायालय के निर्णयो को कैन्टनो के बीच हुये समझौतो को कार्यरूप देती है। यह उन शासन-पदो पर व्यक्तियो की नियुक्ति करती है जो असेम्बली द्वारा नही भरे गये हो। यह विदेशी राज्यो से की हुई सधियो की और कैन्टनो के बीच की हुई सन्धियो की परीक्षा कर अपनी सहमति देती है, राष्ट्र के सब वैदेशिक व्यवहार को चलाती और आवश्यकता पड़ने पर स्विट्जरलैन्ड की घरेलु व बाहरी सुरक्षा का प्रबन्ध करती है। यह शान्ति व सुव्यवस्था की रक्षा के लिये सेना बुलाती है और सेना पर आधिपत्य रखती है। यह सघ की आय-व्यय का प्रबन्ध करती है, अपने कार्य का विवरण असेम्बली के सम्मुख रखती और अपने कार्य के सम्बन्ध मे उन विशेष रिपोर्टो को प्रस्तुत करती है जो असेम्बली द्वारा मांगी जाती हैं।

प्रशासन-विभाग—उपर्युक्त विभिन्न कार्यकलापो का सचालन करने के लिए फेडरल कौंसिल ने सात प्रशासन-विभागो का निर्माण किया परराष्ट्र विभाग, न्याय व पुलिस विभाग, गृह-विभाग, युद्ध-विभाग, अर्थ-विभाग, उद्योग व कृषि विभाग और डाक व रेल विभाग, ये सात प्रशासन-विभाग असेम्बली के आदेशो को कार्यरूप देते हैं। कुछ समय पहले प्रेसीडेंट परराष्ट्र-विभाग को अपने हाथ मे रखता था किन्तु हाल ही मे यह प्रथा टूट गई है। अब प्रतिवर्ष शासन-विभागो का राजमत्रियो मे नये ढग से वितरण किया जाता है प्रत्येक प्रशासन-विभाग के लिये मुख्य अध्यक्ष के अतिरिक्त एक दूसरा अध्यक्ष निश्चित कर दिया जाता है जो स्वय किसी दूसरे विभाग का मुख्य अध्यक्ष होता है। अतएव फेडरल कौंसिल का प्रत्येक सदस्य एक प्रशासन-विभाग का मुख्य अध्यक्ष और किसी अन्य प्रशासन-विभाग का "एवजी अध्यक्ष" होता है। इस युक्ति से शासन के कार्य का सुसचालन पक्का हो जाता है क्योकि बारी-बारी से सब प्रशासन-विभागो के कार्य की पेचीदगी का अनुभव सदस्यो को हो जाता है।

फेडरल कौंसिल का कार्य-संचालन—फेडरल कौंसिल की बैठक सप्ताह मे दो बार बर्न नगर मे होती है, गणपूरक चार सदस्यो की उपस्थिति होती है। मताधिक्य से सब निर्णय होते है। "कौलिजियेट" (Collegiate) ढग की कार्य-पालिका होने के कारण कौंसिल के सदस्य अपने साथी सदस्यो से प्रस्तुत की हुई योजनाओ के विरुद्ध

१ गवर्नमट एन्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्जरलैन्ड, पृ० ११०।

प्रकट रूप से असेम्बली में बोल सकते है। यह इसलिये सम्भव है कि प्रत्येक सदस्य अपने कार्यो के ही लिये उत्तरदायी है, कौसिल सामुदायिक रूप मे विधानमडल को उत्तरदायी नही है जिस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रि-परिषद् पार्लियामेंट को उत्तरदायी है। ऐसी योजना भी जो फेडरल कौसिल की सर्वसम्मति से असेम्बली के सम्मुख रखी गयी हो यदि असेंबली द्वारा अस्वीकार हो जाय तो "राजमंत्रियो को अपने त्यागपत्र देने या पद से हटाये जाने, इन दोनो बातो मे एक को पसन्द करने की स्वतत्रता नही रहती वे उस निर्णय को शिरोधार्य करते और उसके अनुसार कार्यारम्भ कर देते है।" वे अपने पदो पर बराबर रहे आते हैं, पदत्याग नही करते। इस प्रथा के कारण कौसिल दूसरे देशो की सिविल सर्विस से मिलती-जुलती है, केवल अन्तर यह है कि इसके सदस्यो का निर्वाचन प्रति चार वर्ष बाद होता है। केवल फेडरल कौसिल के सदस्य विधानमडल के किसी भी सदन म उपस्थित हो सकते है और बोल सकते है। वे वाद- विवाद मे बिना किसी प्रतिबन्ध के भाग ले सकते हैं। उन्हे वहा प्रश्नो का उत्तर भी देना पड़ता है। किन्तु असेम्बली के सदस्य न होने के कारण वे वहा वोट नहीं दे सकते। वे स्विस राजनीति मे अन्तिम अधिकार रखने वाली असेम्बली की इच्छा को कार्यान्वित करते हैं।

विधान मण्डल का अनुत्तरदायी होना—फेडरल कौसिल की शक्ति-सविधान प्रदत्त है "वह राष्ट्र की किसी अन्य कार्यकारी सत्ता की ओर से काम नहीं करती है। इसकी रचना बहुसख्यक पक्ष से बनाई जाने वाली मन्त्रि-परिषद् के ढग पर नहीं होती। इसमे कोई प्रधान मन्त्री नही होता जो सब मन्त्रियो को अपने ही पक्ष के व्यक्तियो मे से चुनता हो। इसके "सदस्य विभिन्न राजनैतिक पक्षो से ही नही वरन् विरोधी पक्षो से भी चुने जाते हैं। तिस पर भी वे लोग कौसिल के प्रति सद्भावना व अपने इस सगठन के ऊपर अभिमान दिखाते है। अपनी नीति के लिये यह असेम्बली पर निर्भर रहती है। यह विधानमडल का विघटन नही करा सकती और उसके द्वारा अपने पक्ष मे निर्णय करने को जनता से अपील नही कर सकती है। असेम्बली भी कौसिल के सदस्यो को बरखास्त नही कर सकती।"[1] इन अनुपम बातो के रहते हुये भी कौसिल अपना काम बडी कुशलता से, मिलकर व उत्तम ढग पर करती है। इसका कारण यह है कि यह छोटी सस्था है जिसके सदस्यो को लम्बे समय का अनुभव रहता है और ये लोग अपने अपने पक्षो के व्यक्तियो की सहायता से असेम्बली मे अपना बड़ा प्रभाव रखते हैं। नियुक्तियाँ करने की शक्ति होने से भी उनका बडा दबदबा रहता है। सन् १६१४-१८ के महायुद्ध मे असेम्बली ने फेडरल कौसिल को असीमित अधिकार दे

---

१ गवर्नमेंट एण्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्ज़रलैण्ड, पृ० ११२-११३।

दिये थे जिनकी सहायता से वह स्विट्जरलैन्ड की सुरक्षा, पूर्णता व तटस्थता की रक्षा के लिये सब प्रकार का प्रबन्ध कर सके और स्विट्जरलैन्ड की आर्थिक स्थिति व विश्वास की रक्षा कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये कौंसिल को खर्च करने और कर्ज लेने की असीमित शक्ति दे दी गई थी। केवल प्रतिबन्ध इतना था कि उसे असेम्बली की आगे होने वाली बैठक में पूर्व बैठक के बाद से इन असीमित शक्तियों के प्रयोग का पूरा विवरण देना पड़ता था। उस समय कौंसिल को जो शक्तियाँ दी गई उनसे कौंसिल का प्रभाव सदा के लिये बढ़ गया है।

कौन्सिल के प्रभाव के बारे में ब्राइस का मत—राजनीतिज्ञ ब्राइस ने स्विस कार्यपालिका की प्रशंसा इस प्रकार की है : इस प्रणाली से ऐसी संस्था की स्थापना होती है, जो जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को कम किये बिना शासक असेम्बली को प्रभावित कर केवल परामर्श ही नहीं दे सकती किन्तु दलबन्दी से दूर रहने के कारण यह आवश्यकता पड़ने पर दो लड़ने वाले पक्षों में मध्यस्थ का काम भी कर सकती है, और कठिनाइयों को कम कर मित्र भावना के सहारे समझौते करा सकती है। इसके द्वारा सिद्धबुद्धि प्रशासक राष्ट्र की सेवा में लगे रहते हैं, चाहे उनके वे राजनैतिक विचार कुछ भी हो जिनके कारण तत्कालीन राजनैतिक पक्षों में विभेद हो। इसके द्वारा परम्परा की रक्षा होती है और नीति की अविच्छिन्नता बनी रहती है।

फेडरल कौन्सिल की सफलता—फेडरल कौंसिल की बहुत कुछ आलोचना व इसके सुधार के लिये अनेकों सुझावों के होते हुए भी यह दृढ़ विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि "स्विस कार्यपालिका ने अपनी शक्तियों व अवसरों की सीमा के भीतर उच्च श्रेणी की दक्षता प्राप्त कर ली है, और इस छोटे देश में रहने वाली तीनों जातियों का सन्तुलन करने में यह कृतकार्य हुई है।"

चांसलर—स्विस कार्यपालिका का वर्णन समाप्त करने से पूर्व चासलर जो सघ का एक उच्च पदाधिकारी होता है, का वर्णन भी कर देना आवश्यक है। इस पदधिकारी का नाम संविधान की १०५ वी धारा में पाया जाता है, इसको प्रति चार वर्ष पश्चात् फेडरल असेंबली चुनती है। वह फेडरल असेंबली व कौंसिल के जेनरल सक्रेटरी के समान कार्य करता है और उसी के कार्यकाल तक अपने पद पर काम करता है। विशेष रूप से वह फेडरल कौंसिल के आधीन रहता है। चासलर के कर्तव्यों में उल्लेख पत्रों का रखना, प्रलेखा का रक्षा निर्वाचनों, लोकनिर्णयों (Referendum), निर्माण-उपक्रम (Initiative) आदि का विधिवत् प्रबन्ध करना, ये सब काम गिने जाते हैं। सघ के सब निर्बन्धों पर उसके हस्ताक्षर होना आवश्यक है, उसको वैध करने के लिये नहीं किन्तु उनके सही होने को प्रमाणित करने के लिये। अतएव वह एक 'उच्च हैड क्लर्क'

के समान है, और उसके नाम से किसी को जर्मन चासलर का भ्रम न होना चाहिये जो जर्मनी मे एक बडी शक्तिशाली विभूति के रूप मे हुआ करता था।

संघ न्यायपालिका (Federal Tribunal)

इसकी बनावट—सविधान द्वारा एक सघ-ट्रिब्युनल अर्थात् न्यायालय की स्थापना की गई है। जिसमे सघ-सबधी मामलो मे न्याय का निर्णय किया जाता है। इस समय इसमे २६-२८ सदस्य हैं और ११ से १३ तक अतिरिक्त न्यायाधीश हैं। ये सब ६ वर्ष के लिये फेडरल असेंबली द्वारा चुने जाते हैं और इस अवधि के समाप्त होने पर फिर चुने जा सकते हैं। इनमे सेएक प्रेसीडेंट और एकउपप्रेसीडेंट नियुक्त किया जाता है दोनो दो वर्ष के लिये नियुक्त होते हैं और लगातार दो बार निर्वाचित होकर नियुक्त नही किये जा सकते। प्रेसीडेंट का वेतन ३२००० फ्रैंक प्रति वर्ष है। दूसरे न्यायाधीशो मे प्रत्येक को ३०,००० फ्रैंक मिलता है। स्विट्जरलैन्ड का कोई नागरिक जो नेशनल कौंसिल का सदस्य होने योग्य है, वह न्यायालय का सदस्य चुना जा सकता है चाहे उसका विधि-निबंध सबधी जानकारी और योग्यता कुछ भी हो। पर प्रतिबन्ध यह है कि वह न्यायालय का सदस्य रहने के साथ साथ विधानमडल का सदस्य नही रह सकता, न किसी और पद पर काम कर सकता है। यह एक विचित्र सी बात प्रतीत होती है कि, कम से कम सिद्धान्ततः सविधान न्यायाधीशो के लिये कोई विधि-निबंध सबधी जानकारी की योग्यता निश्चित् नही करता, हालांकि व्यवहार मे ऐसी जानकारी रखने वाले व्यक्ति ही न्यायाधीश चुने जाते हैं।

इसका अधिकार क्षेत्र—सघ और कैन्टनो के बीच व्यवहार सबधी सब मुकदमे ऐसे मुकदमे जो सघ व कपनियो या व्यक्तियो के बीच मे हो, आपस मे कैन्टनो के मुकदमे, या कैन्टनो व कम्पनियो या व्यक्तियो के बीच के मुकदमे निबटाना सघ न्यायालय के अधिकार क्षेत्र मे है। यह न्यायालय सघ के प्रति देश द्रोह के अपराध या शासन सविधान के विरुद्ध विद्रोह सबधी अपराधो की जाँच करने का भी अधिकारी है। राष्ट्रो के मध्य मान्य निबंध के विरुद्ध अपराधो या ऐसे अपराधो और राजनैतिक अवज्ञाओ की परीक्षा जिसमे सघ सेना के हस्तक्षेप की आवश्यकता हो जाय, यह न्यायालय कर सकता है। सघ पदाधिकारियों के विरुद्ध लगाये गये अभियोगो को भी यही न्यायालय सुनकर अपना निर्णय देता है। "क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध मे यदि सघ और कैंटनो के अधिकारियों मे झगडा हो जाय, या लोक निबंध के बारे मे यदि कैन्टनो मे मतभेद हो, नागरिको के वैधानिक अधिकारो के उल्लघन की शिकायत हो, या समझौतो अथवा सन्धियो के तोड़ने की, व्यक्तियो द्वारा शिकायत की, चाह नो हन

सब मामलो की जाँच करने का सघ-न्यायालय को अधिकार है।"[१] मजे की बात यह है कि विधानमण्डल द्वारा पास किये हुये अधिनियमो को वैध-अवैध निश्चित करने का अधिकार इस न्यायालय को नही है, जिससे यह अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के समान प्रभावशाली व गौरवपूर्ण न्यायालय नही रह जाता। अमेरिका मे सर्वोच्च न्यायालय विधान मण्डल या कार्यपालिका के तत्र से परे है। किन्तु इस न्यायालय के "सीमित अधिकारो के कारण, न्यायाधीशो की निर्वाचन पद्धति होने से और विधान मण्डल का न्याय-पालिका पर नियन्त्रण होने से स्विट्जरलैंड के निवासी एक शक्तिशाली सघ-न्यायपालिका बनाने मे असफल रहे है। यह कमी इस बात से और भी अधिक खटकती है कि उन्होने सयुक्त-राज्य अमरीका की बहुत-सी बातो मे नकल की है।"[२] यद्यपि यह सच है कि इस न्याय-पालिका का अधिकार क्षेत्र बराबर विस्तृत होता जा रहा है फिर भी यह निश्चय है कि वह सयुक्त-राज्य के सर्वोच्च न्यायालय के वैधानिक महत्व को नही पा सकता। विशेषकर विधान-मडल के बनाये हुए अधिनियमो को वह अवैध घोषित नही कर सकता। ऐसा करना स्विट्जरलैंड को ही नही वरन् यूरोपीय परम्परा के भी विरुद्ध होगा इसका कारण स्पष्ट है और वह यह है कि स्विट्जरलैंड मे शक्ति-विभाजन को अगीकार नही किया है। विधान-मडल ही राज्य-सगठन का सबसे शक्तिशाली अग है और वह भी प्रजा की सतर्क देख-रेख म सदा बनी रहती है, क्योकि जनता लोक निर्णय (Referendum) निर्बन्ध उपक्रम (Initiative) और प्रत्याहरण (Recall) द्वारा लोक व्यवस्था पर अपना प्रत्यक्ष नियत्रण रखती है।

न्यायालय की कार्य प्रणाली—न्यायाधीशो को इस ढग से चुना जाता है कि वे तीनो राष्ट्रभाषाओ का प्रतिनिधित्व करें। न्यायालय की बैठक लूसेन नगर मे होती है जो फ्रेंच भाषा-भाषियो के कैंटन वोड (Vaud) मे स्थित है। बर्न नगर के राज-नैतिक वातावरण से न्यायालय को दूर रखने के लिए ऐसा किया गया था। न्यायालय तीन विभागो मे विभक्त है, प्रत्येक विभाग मे ८ न्यायाधीश व्यवहार सम्बन्धी व कानून सम्बन्धी (Civil) मुकदमो को सुनकर निर्णय करते हैं। अपराध सम्बन्धी (Criminal) मुकदमो का निबटारा करने मे पच (Jury) सहायता करते है। ये सख्या मे १२ होते हैं और ५४ नामो की सूची स १४ चुने हुए व्यक्तियो मे से लाटरी द्वारा छाँट लिए जाते हैं। मुकदमो मे प्रत्येक पक्ष को सूची के २० नामो के विरुद्ध आपत्ति करने का अधिकार होता है। इन पचो को प्रतिदिन के काम के लिए २० फ्रैंक पारिश्रमिक मिलता है।

---

१ विधान की ११३ वी धारा।

२ फेडरल पौलिटी, पृ० १८६-१८७।

राजनैतिक पक्ष (Political Parties)

दलबन्दी की भावना का अभाव—"फ्रांस और इंग्लैंड के राजनैतिक पक्षों की अपेक्षा यहाँ राजनैतिक पक्ष निम्न श्रेणी का कार्य करते हैं क्योंकि कार्यकारी क्षेत्रमें सदन मन्त्रियों को स्थान च्युत नहीं करा सकते और व्यवस्थापन क्षेत्र में प्रश्नों का निर्णय अन्तिम निर्णय नहीं होता। यह अन्तिम निर्णय जनता का होता है।"[१] इनके अतिरिक्त उत्कट दलबन्दी की भावना के इस अभाव के पीछे और भी कई कारण है। विधान मण्डल के सत्र बहुत कम समय के होते हैं जिसमें दलबन्दी को सुदृढ करने के लिये समय ही नहीं रहता विधान-मंडल के सदस्य जिला के अनुसार समूह बनाकर बैठते हैं न कि पक्ष समूहो मे केन्द्रीय सरकार के हाथ में अपने समर्थकों को देने के लिये कोई अधिक संख्या में पुरस्कार भी नहीं होते क्योंकि कैन्टनो की सरकारों को ही अधिक विस्तृत अधिकार मिले हुए हैं। संघ-सरकारी पदों पर राजनीतिक के आधार पर न होकर योग्यता के कारण ही नियुक्तियाँ होती हैं। इन पदाधिकारियों के वेतन इतने कम हैं कि कृपाकांक्षी व्यक्ति उसमें आकर्षित नहीं होते। फेडरल कौंसिल के मन्त्रियों का चुनाव अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर होता है। जिसमें गुटबन्दी को प्रोत्साहन नहीं मिलता। लोक-निर्णय और प्रत्याहरण के स्विट्जरलैंड जैसे छोटे देश में दलबन्दी नहीं होने पाती, क्योंकि मतदाता अपने पडोसियो को ही मत देने के इच्छुक होते हैं। योजना के दोष गुण पर अधिक ध्यान दिया जाता है, न कि व्यक्ति विशेष पर। अतएव पडोसी से न कि पक्ष के उम्मीदवारों से यह अधिक आशा की जाती है कि वह लोक-प्रिय योजनाओं का समर्थन करेगा। अन्तिम स्विस निवासी स्वभाव से व्यावहारिक बुद्धि के होते हैं, उनमें वह गुण नहीं पाया जाता है जो प्रायः राजनैतिक दलबन्दी के लिये आवश्यक है। वे निर्वाचन के समय किसी प्रकार का प्रदर्शन पसन्द नहीं करते।

पुराने पक्ष—प्रारम्भ में उपराज्यों के अधिकार के प्रश्न पर पक्षों का संगठन हुआ था। कैथोलिक सम्प्रदाय के अनुयायी जो परम्परा के समर्थक थे अपने आपको फेडरलिस्ट (Federalist) कहते थे किन्तु कैन्टनों के अधिकारों को सुरक्षित किए जाने पर जोर देते थे। इसी नाम का अमेरिका में एक राजनैतिक दल है जो हैमिल्टन और वाशिंगटन के नेतृत्व में उपराज्यों के स्थान पर केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्ति-शाली बनाने के पक्ष में था। स्विट्जरलैंड में दूसरा पक्ष अपने आपको सैन्ट्रलिस्ट (Centralist) के नाम से पुकारता था और केन्द्रीय सरकार की शक्ति को बढाने का समर्थन करता था। सौंदर-बन्द के युद्ध में कैथोलिक पक्ष की हार हुई किन्तु मेल और सुदृढ संगठन के कारण उनका अस्तित्व नष्ट नहीं हुआ। विजयी सैन्ट्रलिस्ट कुछ समय के पश्चात् दो शाखाओं में बँट गये, एक रैडीकल पक्ष (Radicals) और दूसरा राइट विंगर्स (Right Wingers)। रैडीकल पक्ष की संख्या बढती गई क्योंकि

१ मॉडर्न डेमोक्रेसीज, पुस्तक १, पृ० ३६०।

उन्होंने सघ क्षेत्र में लोक निर्णय और निर्बन्ध-उपक्रम लागू करने का जो प्रश्न उठाया उसका प्रजा ने बड़ा समर्थन किया। सन् १८७४ के सविधान में जो सशोधन हुआ वह रैडीकल पक्ष की विजय का द्योतक था। उसके पश्चात् इस दल ने स्विस राजनीति पर अपना सिक्का जमा लिया। राइट-विंगर्स (Right Wingers) जल्दी ही राजनैतिक क्षेत्र से लुप्त हो गए। रैडीकल पक्ष से समाजवादी पक्ष का आविर्भाव हुआ जिसने १८९० के निर्वाचन में नेशनल कौंसिल के छः स्थानों पर अपना अधिकार कर लिया। किन्तु इस पक्ष की अधिक उन्नति न हुई। "इसका एक कारण यह है कि स्विट्जरलैंड में पहले से ही राज्य सगठन के ऊपर अन्य देशों की अपेक्षा अधिक मात्रा में जनता का नियत्रण हो चुका था और बडे बडे उद्योगों का स्थानिकरण भी हो गया था, इसलिए इस बात में सदेह नहीं कि इन कारणों से व अचल सम्पत्ति के छोटे-छोटे टुकडो के अधिक व्यक्तियों में बटे रहने से, स्विट्जरलैंड में समाजवाद का वैसा जोर नहीं हुआ जैसा जर्मनी और फ्रांस में रहा है।"[1]

लिकों की पर्याप्त सख्या है और उनका एक शक्तिशाली अल्पसख्यक दल है। किन्तु लोक सभा अर्थात् निचले सदन में उन की सख्या अधिक है। इसका विशेष कारण यह है कि निचला सदन जनसख्या के आधार पर चुने हुये प्रतिनिधियों से सगठित होता है और इस पक्ष के समर्थकों की सख्या, घनी आबादी वाले और अधिक सख्या में प्रतिनिधि चुनने वाले कैन्टनों में ही अधिक है।

शासन-विधान का संशोधन

दो प्रकार का परिवर्तन—किसी समय भी पूरे सविधान का या उसके किसी भाग का सशोधन हो सकता है ऐसा आयोजन स्वय शासन विधान में कर दिया गया है। फेडरल असेम्बली का कोई सदन जब सविधान को पूरी तरह से सशोधन करने का प्रस्ताव पास कर दे और उस प्रस्ताव को दूसरा सदन स्वीकार नहीं करे तो सशोधन का यह प्रश्न प्रजा के निर्णय के लिए रखा जाता है। ऐसे लोक निर्णय के लिए उस प्रस्ताव को भी प्रस्तुत किया जाता है जो पूरे शासन विधान के सशोधन के लिए ५०,००० मतधारकों द्वारा भेजा गया हो। दोनों अवस्थाओं में यदि मत देन वालों की अधिक सख्या सशोधन के लिए मत देती है तो दोनों कौंसिलों के लिए नया निर्वाचन किया जाता है और नये सदन सशोधन कार्य को अपने हाथ में लेते हैं।

सामान्य ढंग से स्वीकार कर लेती है तो फेडरल कौंसिल उस सशोधन का मसविदा

१ गवर्नमेंट एण्ड पालिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० २६६।

तैयार करना आरम्भ कर देती है। यदि फेडरल असेम्बली इस मांग को अस्वीकार कर
[illegible] ता है। यदि
[illegible] न असेम्बली
[illegible] के लिये रखे
[illegible] न के संशो-
धन का प्रस्ताव कर सकते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि विधान मंडल और जनता दोनों संशोधनों का प्रस्ताव रख सकते हैं।

विधान-संशोधन के लिए लोकनिर्णय अनिवार्य—उपर्युक्त दोनों अवस्थाओं में संशोधन लोक-निर्णय के लिये प्रस्तुत किया जाता है। बहुसंख्यक कैंटनों में मताधिक्य से संशोधन स्वीकार हो जाता है तो यह पास समझा जाता है। बहुसंख्यक कैंटनों की गिनती करने से पूरे कैंटन का एक मत और अर्ध-कैंटन का आधा मत गिना जाता है। पास होने के लिए सब कैंटनों के मतदाताओं की भी अधिक संख्या उसके पक्ष में होनी चाहिये। अथवा यों कहा जा सकता है कि संशोधन कम से कम ११½ कैंटनों की जनता के बहुमत से भी स्वीकृत होना चाहिये। अब तक १०५ के लगभग संशोधन लोक निर्णय के लिये प्रस्तुत किये गए जिनमें से ४५ को छोड़कर सभी स्वीकृत हो गये। इनमें से लगभग १५ का प्रस्ताव *जनता द्वारा (उपक्रम) प्रस्तुत किया गया था।* एक संशोधन का प्रस्ताव ११७,४६४ मतों से किया गया था। यह संशोधन प्रस्ताव जुआघरों (gambling houses) के सम्बन्ध में था और इसका पूरा मसविदा (Complete draft) तैयार करके मतदाताओं की ओर से संघ कौंसिल (Federal Council) को भेजा गया था। संघ असैम्बली (Federal Assembly) ने अपना निजी वैकल्पिक मसविदा तैयार किया। दोनों मसविदे जनमत के लिये रखे गये। इस जनमत का निम्न प्रकार विरोध अथवा समर्थन हुआ और दोनों ही अस्वीकृत हुए :—

	मतदाताओं की संख्या		कैंटनों की संख्या	
	पक्ष में	विरोध में	विरोध में	पक्ष में
उपक्रम किया हुआ मसविदा	२६६,७४०	३२१,६६६	१३½	८½
असैम्बली का मसविदा	१०७,२३०	३४४,६१४	½	२१½

इस वर्ष एक संशोधन इस अभिप्राय से रखा गया कि स्विस निर्वाचनों में स्त्रियों को मताधिकार दिया जावे, किन्तु वह भारी मत से अस्वीकृत हुआ। अतएव यद्यपि स्विट्जरलैंड आधुनिक संसार का सब से अधिक जनतंत्रीय राज्य है किन्तु वहाँ राजनीतिक निर्वाचनों में स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त नहीं हैं।

अध्याय २४

स्विस कैंटन सरकारें और प्रत्यक्ष प्रजातंत्र

स्विट्जरलैंड ही अधिनियम उपक्रम और लोक निर्णय का प्राचीन निवास स्थान है। स्विस कैन्टनों मे बहुत बड़े काल से प्रत्यक्ष प्रजातंत्र की ये संस्थाएँ किसी न किसी रूप मे चालू रही हैं, और स्विट्जरलैंड से ही, प्रजातंत्र के दीर्घ मार्गों द्वारा चलकर, ये अन्य देशों में पहुँची हैं जिनमे संयुक्त राज्य भी है। प्रजातंत्र ने उत्पन्न संस्थाओ में ये कदाचित् अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, क्योंकि ये किसी विधान-मंडल के हस्तक्षेप बिना ही विधि-निर्माण का साधन हैं; दूसरे शब्दों में, लोगों द्वारा प्रत्यक्ष कार्य। आधुनिक प्रजातंत्र के विद्यार्थी के लिये स्विस राजनीतिक प्रणाली मे इससे अधिक शिक्षाप्रद और कोई बात नही है। —डबल्यू० बी० मनरो

स्विट्जरलैंड के कैन्टनो का इतिहास लगभग ७००-८०० वर्ष पुराना है। योरुप के मध्ययुग मे इन्होंने अपनी स्वतंत्रता की, किस प्रकार एक दूसरे से सहयोग कर, रक्षा की यह बात सभी इतिहास के विद्यार्थी जानते हैं। इनकी समस्याएँ सरल थीं, इनके जीवन के साधन परिमित थे, भावनाएँ शुद्ध थीं, किन्तु स्वतंत्र रहने की इच्छा अत्यन्त प्रबल थी। इनको अपना शासन चलाने के लिये यही काफी था कि सभी समझदार वयस्क नर एकत्रित होकर अधिनियम बनाते और कर्मचारी नियुक्त करते थे। ये ही तरीके प्रत्यक्ष प्रजातंत्र के अब तक छोटे छोटे छः कैन्टनों मे जारी है, जहाँ कोई निर्वाचित विधान मंडल नहीं। इनको लैंड्सगैमीन्ड (Landsgemeinde) कहा जाता है जिनमें कैन्टन के वयस्क पुरुष (male) एकत्रित होकर अधिनियम बनाते हैं। ये कैन्टन ग्रामीण जीवन व्यतीत करते हैं, उनकी यह सभा, किसी गाँव सभा की भाँति प्रति वर्ष होती है। १५ अन्य कैन्टनो मे उपक्रम है, केवल जिनेवा मे नहीं। स्विट्जरलैंड मे कुल २२ कैन्टन हैं, अथवा १९ पूर्ण तथा ६ अर्ध कैंटन (Half Cantons) हैं, जो स्विस संघ के घटक राज्य हैं।

प्रत्येक कैन्टन का अपना पृथक संविधान है जिसमे वहाँ की शासन व्यवस्था, उसके अन्तर्गत विविध संस्थाओ और उनकी रचना तथा शक्तियों का वर्णन है। प्रत्येक कैन्टन गणराज्य (Republic) है और उसे अपने संविधान मे संशोधन करने का अधिकार है, किन्तु संघ संविधान के विरुद्ध संशोधन नही हो सकता है। संघ को प्रदत्त शक्तियाँ को छोड़ और सब शक्तियाँ कैन्टनो को प्राप्त हैं। अधिकतर कैन्टनो में निर्वाचन अनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्तो (Proportional Representation) के अनुसार होता है।

निम्न सारिणी मे स्विस सघ के २२ कैन्टनो का क्षेत्रफल, जनसख्या और लोकसभा (Lower House) मे उनके प्रतिनिधियो की सख्या दी हुई है।

कैन्टनो के नाम और सघ मे आने का वर्ष	क्षेत्रफल	१९५० की जनसख्या	नेशनल कौंसिल मे प्रतिनिधियो की संख्या
ज्यूरिच (१३५१)	६६८	७७७,००२	३२
बर्न (१३५३)	२६५८	८०१,९४३	३३
लूजर्न (१३३२)	५७६	२२३,२४९	९
ऊरी (१२०१)	४१५	२८,५५६	१
स्वीज (१२९१)	३५१	७१,०८२	३
ओर्बवाल्डन (१२९१)	१९०	२२,१२५	१
निडवाल्डन (१२९१)	१०६	१९,३८९	१
ग्लैरस (१३५२)	२६४	३७,६६३	२
जुग (१३५२)	९३	४२,२३९	२
फीवर्ग (१४८१)	६१५	१५८,६९५	७
सोलोयर्न (१४८१)	३०६	१७०,५०८	७
वेसिल-सिटी (१५०१)	१४	१९६,४९८	८
वैसिलर्लैंड (१५०१)	१६५	१०७,५४९	४
शेफेमान् (१५०१)	११५	५७,५१५	२
एपैन्जल ए (१५१३)	९४	४७,९६८	२
एपैन्जल आई (१५१३)	६७	१३ ४२७	१
सेंट गैलेन (१८०३)	७७७	३०९,१०६	१३
ग्रोजोन्स (१८०३)	२७४६	१३७,१००	६
आरगोवी (१८०३)	३८३	३००,७८२	१३
थुरगाड (१८०३)	३८८	१४९,७३८	६
टिसीनो (१८०३)	१,०८६	१७५,०५५	७
वोड (१८०३)	१,२३९	३७७,५८५	१६
वैलेंज (१८१५)	२,०२१	१५९,१७८	७
नोचटेल (१८१५)	३०९	१२८,१५२	५
जेनीवा (१८१५)	१०९	२०२,९१८	८
कुल	१५,९४४	४,२६५,७०३	१९६

कैण्टनों की सरकारे

घटक-राज्यो या कैन्टनो के विस्तार मे बडी विभिन्नता है। ग्रौबुन्डन और बर्न का क्रमानुसार जहाँ २७४६ और २६५८ वर्गमील क्षेत्रफल है वहाँ जुग (Zug) का ९३ वर्गमील क्षेत्रफल है। बर्न कैन्टन की जनसख्या सब से अधिक है; इसमे ८०१

व्यक्ति रहते हैं। एपैन्जल इन्टिरियर (Appenzell Interior) जो अर्ध-कैन्टन है उसमें सबसे कम, अर्थात् १३,४२७ मनुष्य ही रहते हैं। सन् १२९१ से लेकर सन् १८१५ तक विभिन्न समया पर ये कैन्टन सघ मे शामिल किये गये थे। सघ मे शामिल होने से पूर्व अधिकतर कैन्टन स्वतन्त्र और सम्पूर्ण सत्ताधारी थे। उनके निजी शासन-विधान और सस्थायें थी। सघ मे आने पर उन्होंने निश्चित शक्तियो को ही सघ के सुपुर्द किया, शेष बातों मे उन्होने अपनी सम्पूर्ण सत्ता ज्यो की त्यो सुरक्षित रखी। इसीलिये सघ का नाम कनफेडरेशन (Confederation) है न कि फेडरेशन (Federation), जो अन्य देशों मे पाया जाता है।

कैंटनों में प्रत्यक्ष जनतन्त्र—जिन बातो मे शासन-विधान कैन्टनो की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध नही लगाता उनमे वे सम्पूर्ण सत्ताधारी हैं। कुछ छोटे कैन्टनो मे प्रत्यक्ष जनतन्त्र है, अर्थात् सब नागरिक मिलकर विधायिनी सत्ता का कार्य करते हैं। वे ही सब अफसरो को चुनते हैं। अन्य बहुत से कैन्टनो मे कही अपरिहार्य और कही वैकल्पिक लोक निर्णय की प्रथा प्रचलित है, फ्रीवर्ग कैन्टन मे ही किसी रूप मे लोक निर्णय नही लिया जाता। स्विट्जरलैन्ड के कैन्टनो मे यह ही एक ऐसा कैन्टन है जहां प्रतिनिधिक राज्य-सस्थायें हैं।

कैंटनों के विधान-मण्डल—प्रत्यक्ष जनतन्त्र प्रणाली वाले छः कैन्टनो को छोड़ कर सब मे सरकार का सगठन एक ही ढग का पाया जाता है। प्रत्येक मे एकगृही विधान मडल है जो ३ या ४ वर्ष के लिए लोक निर्वाचन द्वारा सगठित किया जाता है। दस कैन्टनो मे अनुपाती प्रतिनिधित्व द्वारा व्यवस्थापक चुने जाते हैं। प्रति ३००-५०० निवासी १ प्रतिनिधि को चुनते हैं। विधान मडल प्राय: ग्राड कौसिल (Grand Council) के नाम से पुकारा जाता है।

शासन-विधान का संशोधन— सब कैन्टनो मे शासन-विधान का अनुसमर्थन और उसका सशोधन जनमत से होता है। कई कैन्टनो मे सब अधिनियम अन्तिम स्वीकृति के हेतु जनमत के प्रकाशन के लिये प्रस्तुत किये जाते हैं। बहुत से मुद्रा विधेयक भी इसी भाँति अपरिहार्य लोक-निर्णय के लिये रखे जाते हैं। कैन्टनो के सविधान में सशोधन का प्रस्ताव जनता द्वारा व विधानमडल द्वारा किया जा सकता है।

कैंटनों की कार्यपालिका—प्रत्येक कैन्टन मे कार्यकारी सत्ता ५ या ७ सदस्यो के एक बोर्ड मे विहित होती है। यह बोर्ड या कमीशन एडमिनिस्ट्रेटिव कौसिल (Administrative Council) स्मोल कौंसिल (Small Council) या कौंसिल आफ स्टेट (Council of State) के नाम से विख्यात रहते हैं। ज्यूग और टिसीनों में यह कमीशन अनुपाती प्रतिनिधित्व प्रणाली पर चुना जाता है।

अन्य कैन्टनो मे साधारण पद्धति से निर्वाचित होता है। केवल ज्यूरिच और वैलेस मे ही यह कार्यकारी कमीशन विधानमडल द्वारा चुना जाता है। कमीशन का एक प्रेसीडेंट और एक उप-प्रेसीडेंट होता है। "फेडरल कौंसिल की तरह कैन्टन की कार्य-पालिका बडे-बड़े मामलो मे सामुदायिक रूप से कार्य करती है।" जो सबध फेडरल कौसिल और फेडरल असेम्बली मे है वही सबध इन कमीशनो का कैन्टनो की विधानमडल से होता है अर्थात् कौसिल विधान-मडलो की अनुचर रहती है और उनके आदेशो को कार्यान्वित करती है।

कैंटनों की न्यायपालिका—प्रत्येक कैन्टन का अपना निजी न्याय-सगठन है किन्तु ब्योरे की बातें छोडकर इस सगठन के सामान्य सिद्धान्त व उसका रूप सब कैन्टनो मे एकसा है। व्यवहार-सबधी व अपराध-सबधी मामलो को दो भिन्न न्यायालय सुनकर निर्णय देते हैं।

कैंटनों में स्थानीय शासन—स्थानीय शासन की सबसे छोटी इकाई स्विस कम्यून (Swiss Commune) है। इनकी जनसख्या मे बडा भेद है। किसी मे केवल ५० मनुष्य रहते हैं दूसरे मे २००,००० मनुष्यो के नगर शामिल हैं। सारे देश मे ३१६४ कम्यून (Commune) हैं। जहाँ प्राकृतिक स्थिति चाहती है उन बड़े कम्यूनो मे क्वार्टर कम्यून, अर्थात् उप-कम्यून भी होते हैं। कम्यून मे प्रबन्ध करने वाली एक कम्यून कौन्सिल होती है जिसमे ५ या कही ६ सदस्य होते हैं जिनको कम्यून के निवासी स्वय चुनते हैं। इन कौन्सिलो मे एक सभापति और एक उप-सभापति भी होता है।

कैंटनों में शिक्षा—सब कैन्टनो मे ऐसा शिक्षा-सगठन है जो अपनी व्यवहारिकता और दृष्टि की व्यापकता के लिये विख्यात है। इनमे नागरिक शास्त्र की शिक्षा अनिवार्य है। इसीलिए यहाँ के निवासी अच्छे नागरिक हैं। अधिकतर कैन्टनो मे कृषि विद्यालय हैं। उनमे माध्यमिक शिक्षालय तथा विभिन्न व्यवसायो की शिक्षण सस्थायें हैं जो सघ-सरकार के डाक, तार, टेलीफोन और चुंगी आदि कार्यो के लिये युवा स्त्री पुरुषो को शिक्षा देकर तैयार करते हैं।[१] सैनिक शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। शिक्षा के सम्बन्धो मे कैन्टनो को अधिक मात्रा मे स्वाधीनता मिली हुई है हालांकि सघ-सरकार शिक्षा के व्यय मे कैन्टनो को सहायता देती है और यह आशा किया करती है कि शिक्षा का स्तर ऊँचे से ऊँचा हो।

प्रत्यक्ष जनतन्त्र (Direct Democracy)

स्विट्जरलैंड प्रत्यक्ष जनतन्त्र का घर है—ससार के सब देशो मे स्विट्जरलैन्ड ही ऐसा देश है जहाँ सबसे अधिक मात्रा मे प्रत्यक्ष जनतंत्र प्रचलित है। "जनतंत्र के विद्यार्थी के लिए स्विट्जरलैन्ड की प्रणाली मे इससे अधिक शिक्षा देने वाली कोई

अन्य वस्तु नहीं है क्योंकि प्रत्यक्ष जनतन्त्र से मानव-समुदाय की आत्मा का ज्ञान प्राप्त होता है। उनके विचार में भावनाओं का जितना वास्तविक ज्ञान प्रकट रूप से इससे हो सकता है उतना प्रतिनिधिक संस्थाओं के माध्यम से विवर्त हुये ज्ञान से नहीं हो सकता।"[1] कई कारणों से यह प्रत्यक्ष जनतन्त्र यहां सम्भव भी है। देश पहाड़ी है जिसमें छोटी छोटी घाटियां हैं जो एक दूसरे से पृथक होने से निवासियों में विभिन्नता उत्पन्न करती हैं। कैन्टनों का विस्तार छोटा है, बड़े से बड़े में भी ५ लाख से कुछ अधिक निवासी हैं। औसतन कैन्टन का क्षेत्रफल ६४० वर्गमील से अधिक नहीं है। "अतएव ऐसे प्रदेश के निवासी राजकार्य के बीच में ही सदा रहते होते हैं और लोक कार्य के गुण दोष को जांचने के लिये किसी भी समय सुगमता से एकत्र हो सकते हैं। उनके विचारों व भावनाओं में एकज्ञापन भी होता है और उन्हें अपनी शक्तियों को प्रतिनिधियों को सौंपने की आवश्यकता नहीं रहती।"[2] अमरीका में भी प्रत्यक्ष जनतन्त्र की संस्थायें हैं किन्तु स्विट्जरलैंड में उनकी अधिक आवश्यकता है क्योंकि यहां विधानमंडल बहुत कम संख्या में कानून पास करती है इसलिए उतनी ही उसकी कमी को पूरा करती है।

उपर्युक्त प्रत्यक्ष जनतन्त्र के दो प्रसिद्ध साधन लोक-निर्णय (Referendum) और निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) और लैन्ड्सगैमीड ((Landsgemeinde) है। पहला प्रतिनिधियों द्वारा सम्पादित कार्य के दोषों को दूर कराने में प्रयोग किया जाता है और दूसरा उनकी भूल के दोषों के निवारण करने में काम में लाया जाता है और तीसरा जो छः छोटे कैन्टनों में है नगर सभा की भांति है।

(१) सब में लोक निर्णय—स्विट्जरलैन्ड में सब संविधान-संशोधनों के लिये लोक-निर्णय अपरिहार्य्य (Compulsory) है। जैसा हम पहले ही कह चुके हैं। दूसरे अधिनियमों के लिये यह इच्छा पर छोड़ दिया गया है। वैकल्पिक अर्थात् इच्छा पर निर्भर लोक-निर्णय पूर्णरूप से स्विट्जरलैन्ड की ही कृति है। १८२०-१८३० की क्रान्ति के फलस्वरूप इसकी उत्पत्ति हुई। सन १७८४ में ही संघ-शासन में इसको अंगीकार किया गया यद्यपि कुछ कैन्टनों में उन्नीसवीं शताब्दी के पहले से ही इसका प्रयोग होता आ रहा था। सार्वजनिक प्रस्तावों व अधिनियमों के लिये इसका प्रयोग किया जा सकता है। "व्यवहार में, सन्धियां, वार्षिक आय-व्यय (बजट), स्थानीय सुधारों के हेतु आर्थिक अनुदान और विधानमंडल के सामने प्रस्तुत निश्चित प्रश्नों पर दिये गये निर्णय, में क्षेत्राधिकार के झगड़े कैन्टनों के विधानों की स्वीकृति इत्यादि ये सब लोक-निर्णय के लिये नहीं रखे जाते।"[3] तीस हजार नागरिक लिखित प्रार्थनापत्र के द्वारा

१ मौडर्न डेमोक्रेसीज, पु० १, पृ० ४१५।
२ स्टेट (१६०० का सस्करण पृ० ३०६)
३ गवर्नमेंट एण्ड पौलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० १५३।

लोक-निर्णय की माँग कर सकते हैं आठ कैन्टन भी मिलकर लोक-निर्णय की माँग कर सकते हैं किन्तु कैन्टनो ने ऐसी माँग कभी भी नहीं की है। अधिनियम पास होने के ६० दिन के भीतर ही यह माँग होनी चाहिये।' असल मे फेडरल असेम्बली के पास हुए अधिनियमों मे से ७ प्रतिशत लोक-निर्णय से रद्द किये जा चुके हैं, जिससे स्पष्ट है कि जनता वास्तव मे इनमे रुचि रखती है।

कैण्टनों में लोक निर्णय—कैन्टन के शासन-सविधानो का सशोधन लोक-निर्णय से ही पास हो सकता है। आठ कैन्टनो मे सब अधिनियमो व प्रस्तावो के पास होने के लिये लोक-निर्णय से लोक-सम्मति प्राप्त करना आवश्यक है। सात कैन्टनो मे वैकल्पिक लोक निर्णय प्रचलित है जिसकी माँग नागरिको की निश्चित सख्या कर सकती है। यह सख्या भिन्न भिन्न है। तीन कैन्टनो मे अपरिहार्य्य लोक-निर्णय का रूप वैकल्पिक निर्णय से भिन्न है। केवल एक कैन्टन मे ही सामान्य अधिनियमो के लिये लोक-निर्णय की आवश्यकता बिल्कुल नहीं है।

लोक निर्णय की गुण-दोष परीक्षा—यद्यपि लोक-निर्णय की प्रथा से कुछ लाभ हुआ है किन्तु निम्नलिखित हानियाँ भी इससे हुई बताई जाती हैं।

(क) पहली बात तो यह है कि योजना के विरोधी ही अधिक सख्या मे मत दे जाते हैं, समर्थक प्राय· प्रयत्नशील न होने के कारण घर पर ही बैठे रहते हैं। अतएव मतधारको की बहुत थोडी सख्या ही इसमे भाग लेती है, यह लोक-निर्णय का दोष है। इसमे भाग लेने वालो की सख्या योजना के महत्व पर निर्भर रहती है। प्रायः धार्मिक योजनाओं मे सबसे अधिक सख्या भाग लेती है उसके बाद क्रम से रेल, स्कूल, आर्थिक योजनाओ आदि के सम्बन्ध मे जो योजनाए होती हैं उनको महत्व दिया जाता है।

(ख) **मतदाताओं की अयोग्यता**—अधिनियम, विशेषकर पेचीदा योजनाओ के बारे मे, साधारण मतदाता ठीक निश्चय करने मे अयोग्य रहता है। मतधारकों को योजना की छपी हुई प्रतिया मिलती हैं जिसमे बडा व्यय होता है।

(ग) लोक-निर्णय प्रथा मे प्रतिनिधियो के उत्तरदायित्व की भावना निर्बल हो जाती है दलबन्दी के प्रभाव के कारण विधानमण्डल मे वे प्रायः किसी योजना के पक्ष मे अपना मत देते हैं यद्यपि वे समझते हैं कि योजना हानिकारक है, और यह आशा करते रहते हैं लोक-निर्णय मे जनता स्वय ही उसे अस्वीकार कर देगी।

(घ) यद्यपि कुछ लोग इसको बहुत ही उत्तम साधन बतलाते हैं, एमड्रोज का कहना है कि इसके द्वारा व्यवसायी राजनैतिक नेताओ के बढने का अवसर मिलता है जो निरर्थक असतोष बढ़ाकर और निषेधात्मक नीति का अनुसरण कर अपने नेतृत्व को रक्षा किया करते हैं।

लोक निर्णय से लाभ—यद्यपि लोक-निर्णय अन्य मानव संस्थाओं के समान अपूर्ण है तब भी वर्तमान स्थिति में इसने एक भारी कमी को पूरा किया है और दल-बन्दी की भावना को दबाकर बड़ा लाभ पहुँचाया है। इसके ही कारण बहुत अधिक मात्रा में स्विट्जरलैंड अत्यन्त सुव्यवस्थित और शान्तिपूर्ण राष्ट्र बनने में सफल हुआ है। जैसा किसी ने कहा है "लोक निर्णय ने, जिन हितों को हम साधना चाहते थे उनमें बहुत कम रुकावटें डाली है किन्तु इसके अस्तित्व भर से ही बहुत से अहित होने से बच गये प्रतिकूल, प्रगति की सम्भावना होते हुये भी इसने लोकतन्त्र में रोड़ा नहीं अटकाया प्रत्युत इसने प्रगति को भी व्यवस्थित रूप दिया है।" [१]

(२) *संघ में अधिनियम उपक्रम(Initiative)*—*अधिनियम-उपक्रम वह साधन* है जिससे नागरिकों की कुछ संख्या किसी निबंध का प्रस्ताव कर सकती है और यह मांग कर सकती है कि उस पर लोकमत लिया जाय चाहे विधान-मण्डल उस अधिनियम का विरोध ही क्यों न करे। जैसा पहले कहा जा चुका है संघ में यह अधिनियम-उपक्रम का साधन शासन संविधान में परिवर्तन करने के लिये काम में लाया जा सकता है। इसके द्वारा जो १० संशोधनों की मांग की गई, उनमें से तीन ही पास हो सके इसके विपरीत विधान-मण्डल के बीस प्रस्तावों में से १७ संशोधन पास हुये। इससे यह स्पष्ट है कि विधान-मण्डल के संशोधनों के प्रस्तावों की अपेक्षा उपक्रम किये हुये संशोधनों की नश्वरता अधिक है। "तिस पर भी वैधानिक उपक्रम एक स्थायी वस्तु बनी रहेगी, यह निश्चय है। यही नहीं किन्तु इसके समर्थन में इतना जोर है कि साधारण अधिनियमों के लिये भी इसका प्रयोग बढ़ाने का प्रयत्न हो रहा है।" किन्तु अभी तक "इस मांग को स्वीकार नहीं किया गया है क्योंकि जनता को अधिनियम उपक्रम करने का अधिकार देने से व्यवस्था के संघात्मक रूप के स्थान पर एकात्मक रूप हो जायेगा।" [२]

कैंटनों में अधिनियम-उपक्रम—कैंटनों में नागरिकों की निश्चित संख्या (जो भिन्न भिन्न कैंटनों में भिन्न भिन्न है) सारे संविधान के परिवर्तन की या कुछ संशोधनों की मांग कर सकती है। पहली अवस्था में कैंटनों के अधिकारी या तो उस मांग के अनुसार मसविदा तैयार कर लोक-निर्णय के लिये प्रस्तुत करते हैं या यह प्रश्न ही लोक निर्णय के लिये रख दिया जाता है कि संशोधन हो या न हो। सामान्य अधिनियम के लिये भी बहुत से कैंटनों में साधारण नागरिक स्वयं प्रस्ताव कर सकते हैं।

जनतन्त्र के सम्बन्ध में स्विस-दृष्टिकोण—स्विट्जरलैंड के रहने वालों का

---

१ गवर्नमेंट एण्ड पोलिटिक्स आफ स्विट्जरलैंड, पृ० १६१।

२ *फाइनर-थ्यौरी एण्ड प्रैक्टिस आफ मौडर्न गवर्नमेंट के पृ० ६२८ पर दी हुई* पाद टीका से।

कहना है कि जब तक नागरिकों को स्वयं अधिनियम बनाने का अधिकार न हो, जनतन्त्र अधूरा है। इस कमी को पूरा करने का साधन अधिनियम उपक्रम की प्रणाली है। प्रार्थना और उपक्रम में भेद है क्योंकि उपक्रम विधान-मण्डल के ऊपर अनिवार्य बन्धनस्वरूप हो जाता है। प्रार्थना (Petition) के सम्बन्ध में यह बात ठीक नहीं है। यद्यपि अधिनियम उपक्रम लोक-निर्णय की कमी पूरी करता है किन्तु ये दोनों साथ ही उत्पन्न नहीं हुये हैं। पहले-पहल इसका प्रयोग जनमत की उपेक्षा करने वाले अधिनियमों को रोकने में नहीं किया गया था।

अधिनियम-उपक्रम के दोष—अधिनियम-उपक्रम की कई श्रेष्ठ राजनीतिज्ञों ने बुराई की है। इनमें एम ड्रोज और हरमन फाइनर का नाम उल्लेखनीय है। पहले राजनीतिज्ञ का कहना है कि जनतन्त्र की नीव पक्की करने के बजाय इस अधिनियम उपक्रम की प्रणाली से राज-संगठन के आधारभूत संविधान को बात बात में भय उत्पन्न हो जाता है। उसका कहना है कि इसके द्वारा नेता युग का प्रारम्भ होता है जिसमें स्वनिर्मित समितियों का उतना ही महत्व हो जाता है जितना व्यवस्थित सरकार का। अतएव देश की समृद्धि व शान्ति को इससे हमेशा भय बना रहेगा। इसका अन्तिम परिणाम यही होगा कि बनी-बनाई व्यवस्था विशृंखलित होकर नष्ट हो जाएगी। इस कथन में अत्युक्ति है किन्तु यह भी ठीक नहीं कि दो या तीन ऐसी सफलीभूत माँगों में जनमत का परिचय प्राप्त हो सकता है, अधिनियम उपक्रम के कारण व्यवस्थापकों के उत्तरदायित्व की भावना में कमी आ जाती है। साधारण जनता बहुत-सी अधिनियम योजनाओं पर ठीक ठीक मत निश्चय करने में अयोग्य रहती है। लोक-मतदाता का परिणाम जनता की इच्छा का सच्चा व दोषरहित प्रदर्शन नहीं कहा जा सकता क्योंकि लोकबुद्धि असंगत बातों के चक्कर में पड़ भ्रमित हो जाती है, या विधेयक के अनेक प्रावधानों से घबरा कर किसी एक प्रावधान से असन्तुष्ट होने के कारण ही सारे विधेयक को भी रद्द कर देती है चाहे सारे विधेयक के सार से वह सहमत हो क्यों न हो। अधिनियम उपक्रम की माँग में संशोधन भी सम्भव नहीं होता। इसमें मतधारक पर उत्तरदायित्व का अत्यन्त भारी बोझ पड़ जाता है जिसे वह भली प्रकार संभाल सकने में असमर्थ होता है।

अधिनियम उपक्रम के समर्थकों की विचारधारा—उपर्युक्त दोषों के रहते हुये भी इस प्रणाली के समर्थक इससे बड़ी आशा रखते हैं। उनका विचार है कि इसके द्वारा जनता की प्रभुसत्ता (Sovereignty) की रक्षा होती है। इसके द्वारा जनता अपने प्रतिनिधियों के प्रति अपना असंतोष प्रकट करने में समर्थ होती है, यदि वे अपना कर्तव्य अच्छी तरह नहीं निबटाते। इससे देश-भक्ति जाग्रत होती है और उत्तरदायित्व की भावना की वृद्धि होती है क्योंकि स्वनिर्मित निबंध के अनुसार आचरण करने के

लिये मतधारक का सुझाव अधिक होता है। इसमे सर्वसाधारण को राजनीति की शिक्षा मिलती है, दलबन्दी का जोर कम हो जाता है, जहाँ कार्यपालिका को विधायिनी सत्ता पर नियन्त्रण रखने की शक्ति नही होती वहाँ इसके द्वारा जनता का नियन्त्रण रखा जा सकता है और अन्त मे, उस जनमत की शक्ति का इससे प्रकाशन होता है जो ऐसा निर्णय करने मे समर्थ है जिसके विरुद्ध कही अपील नहीं हो सकती।

प्रत्यक्ष जनतन्त्र के सचालन के सम्बन्ध में ब्रूक्स का यह कथन है कि "इसमे सन्देह नहीं कि स्विट्जरलैंड मे लोक-निर्णय और अधिनियम-उपक्रम से राज्यसगठन तितर-बितर नही हुआ है। इनसे अल्पसख्यक पक्षों का प्रभाव अवश्य बढ गया है। स्विस राज्यसगठन की यह प्रणाली एक आवश्यक अग बन गई है जिससे इसके प्रति अब विरोध होना भी बहुत समय से समाप्त हो गया है।

(३) लैण्ड्सगेमींड (Landsgemeinde) तीसरी प्रथा या सस्था जिसके द्वारा प्रत्यक्ष प्रजातत्र स्विटजरलैंड में कार्यान्वित होता है, लैंड्सगैमीड है जो वहा के केवल ६ कैंटनों तथा चार अर्ध कैंटनो मे प्रचलित है, ऊरी (Uri) और ग्लेरस (Glarus) और चार अर्धकैंटन, ऊपरी और निचला अटरवाल्डन (Upper & Lower Unterwalden) तथा आन्तरिक व बाह्य अपैनजल (Appenzell Interior and Exterior)।

इस सस्था का इतिहास बहुत पुराना है। तेरहवी शताब्दी मे इसका आरम्भ हुआ बताया जाता है जब पहाडी भागो (घाटियो) के आदि निवासी एकत्रित होकर आपसी मामलो को तय करते थे। कदाचित् समान्तो (feudal lords) के अधीन इलाकों मे ऐसा होता था कि आसपास के ग्राम निवासी एकत्रित होकर मजिस्ट्रेटों की नियुक्ति करते थे और कुछ अभियोगो का निपटारा भी स्वय करते थे। एल्प्स पहाड के भागो मे यह सस्था मौजूद थी, परन्तु यह ठीक-ठीक नही कहा जा सकता कि वहा इसका आरम्भ कैसे हुआ। पता चला है कि ऊरी (Uri) कैंटन मे सन् १२३३-३४ के लगभग पहली बार ऐसी नगर या ग्राम सभा हुई जिसमे सभी लोगो ने एकत्रित होकर अपने स्वायत्त शासन की कुछ बातें तय की। यह भी कहा जाता है कि स्विज (Schwyz) के निवासियो ने १२६४ के लगभग ऐसी ही सभा मे एकत्रित होकर पहले पहल अपने कानून बनाये थे। इसमे यह परिणाम निकलता है कि व्यवस्थित राज्य (State) के पूर्व ही लैंडसगैमीड सस्था का जन्म हुआ था, अर्थात् या समझना चाहिये कि वहा के आदि निवासियो ने ऐसी सभाओ द्वारा अपने कार्यो का करना आरम्भ किया था। ऊरी और अटरवाल्डन मे सन् १३०६, से ग्लेरस मे सन् १३८७ से तथा अपैनजल मे सन् १४०३ से लैंडसगैमीन्ड (ग्राम सभाएँ) कानून बनाने का काम करती रही हैं। एक बार सत्रहवीं शताब्दी में स्विट्जरलैंड में

११ लैंड्सगैमीड थी। परन्तु १६वी शताब्दी मे केवल ८ कैंटनो मे ही वे शेष रह गईं। परन्तु इनमे से स्विज कैंटन ने सन् १८४८ मे लैंडसगैमीन्ड को समाप्त कर एक निर्वाचित विधान मडल की स्थापना कर ली। उसी वर्ष जग (Zug) कैंटन ने भी प्रत्यक्ष लैंडसगैमीड के स्थान पर एक प्रतिनिधि विधान मडल स्थापित कर लिया और तभी से केवल छः कैंटनो मे ही प्रत्यक्ष प्रजातंत्र की सस्था लैंडसगैमीन्ड ही शासन चलाती है।

लैंड्सगैमीड का अधिवेशन प्रतिवर्ष अप्रैल के अन्तिम अथवा मई के प्रथम रविवार को होते हैं। यदि सारा कार्य समाप्त नहीं होता तो दूसरा अधिवेशन या तो सभा स्वय ही अपने निर्णय से अथवा उसकी सलाह समिति (Advisory Council) या स्वय मतदाताओ की निश्चित् सख्या (अपेनजल मे १५० और ग्लेरस मे १५००) की प्रार्थना पर बुलाया जाता है। अधिवेशन कैंटन के मुख्य नगर के चरागाह मे और कभी-कभी मुख्य सार्वजनिक चौराहे पर होते हैं। यदि उस समय वर्षा होती है और अधिक असुविधा मालूम होती है तो दो कैंटनो मे सभा पास के गिरजाघरो मे अपना अधिवेशन करती है।

लैंड्सगैमीड सभा के अधिकार कैंटन के सविधान मे वर्णित है, जो प्रत्येक कैंटन मे भिन्न भी हैं। साधारणतया सभा के अधिकार हैं सविधान का पूर्ण अथवा आंशिक सशोधन करना, सामान्य अधिनियम (ordinary law) बनाना, कर लगाना ऋण लेना, सार्वजनिक सम्पत्ति का क्रय-विक्रय और अनुदान, देशीयकरण (naturalization) नये पदो की स्थापना और उनके वेतन नियत करना, और कैंटन के कर्मचारियो तथा न्यायिक पदाधिकारियो का निर्वाचन करना। इन अधिकारो मे अधिकतर विधानीय (legislative) अधिकार है किन्तु उनमे कुछ प्रशासकीय (administrative) भी हैं।

सभा के अधिवेशन बड़े समारोह और सजधज के साथ होते हैं। उन्हे देखने के लिये आसपास के कैंटनो के लोग तथा विदेशी दर्शक बस, रेल, ट्राम, मोटर आदि द्वारा आते है। कैंटन के मताधिकारी अपनी लैंड्सगैमीन्ड के पदाधिकारियो और कर्मचारियों के साथ जलूस बनाकर, गाजे बाजे, झडे और झडियो सहित हर्ष और प्रसन्नता भरे सभा स्थल पर पहुँचते हैं। मुख्य पदाधिकारी लैंडामन (Landaman) अन्य पदाधिकारियो सहित मच पर बैठता है, उनकी पोशाक मतदाताओ से भिन्न होती है; सिर पर ऊँची टोपिया (top hats) धारण किये वे अनुपम शोभित होते हैं। खुली हवा मे गोलाकार वृत्त मे, मच के चारो, ओर, मतदाता बैठते है और गोलाकार स्थान के बाहर दर्शको की भीड़ होती है।

कार्य क्रम धार्मिक प्रार्थना से प्रारम्भ होता है और उस समय अत्यन्त शाति

तथा धार्मिक भाव मुख्य दिखाई देते हैं। प्रार्थना के पश्चात् निर्धारित कार्य आरम्भ होता। लैंडसगैमीड के पदाधिकारी अपने गत वर्ष के शासन कार्य की रिपोर्ट सुनाते हैं। मतदाता मुनकर अपनी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति हाथ उठाकर, और स्वयं की वक्तृता न देकर और थोड़े समय में ही, प्रकट करते हैं। आय-व्यय का ब्यौरा, *नवीन* कर लगाना तथा आवश्यक, अधिनियम बनाना तथा अगले वर्ष के लिये पदाधिकारियों तथा कर्मचारियों का निर्वाचन, आदि कार्य बड़ी व्यवहार कुशलता, धार्मिक और दलीय निरपेक्षता के साथ होता है। अधिकतर गत वर्ष वाले ही पदाधिकारी और कर्मचारी फिर निर्वाचित हो जाते हैं। अभ्यर्थियों के जो नाम प्रस्तुत होते हैं लिख लिये जाते हैं, प्रत्येक नाम पर मत लिए जाते हैं और बहुमत पाने वालों को निर्वाचित कर लिया जाता है।

तत्पश्चात् शपथ लेने का कार्य होता है। उसे वहाँ का लेखक (clerk) बड़े शांत भाव से पढ़ता है, अन्य सब (नंगे सिर और ऊपर वायु में अपनी तीन उंगलियाँ उठाये) उच्च स्वर से दुहराते हैं। अन्त में कैंटन का गान होकर सभा विसर्जित होती है।

यह कैंटन निवासियों का बड़ा उत्साहपूर्ण दिवस होता है वे अपना शासन स्वयं करके अपनी समस्याएं सुलझाते हैं। यह संस्था उनके जीवन का अति प्राचीन अंग है जिसको संसार के राजनीतिज्ञ अनुपम, अनोखी और महत्वपूर्ण समझते हैं। उन कैंटनों में कोई प्रतिनिधि विधान मंडल नहीं। प्रत्यक्ष जनतंत्र की यह अत्यन्त प्राचीन संस्था है जिसको सभी आदर की दृष्टि से देखते हैं।

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का सिंहावलोकन

स्विट्जरलैंड में प्रत्यक्ष प्रजातंत्र अधिकतर सफल हो रहा है। इसके विशेष कारण भी हैं। देश छोटा है, प्रत्येक कैन्टन का क्षेत्रफल और जनसंख्या कम है। वह अत्यन्त निरपेक्ष है, सभी राष्ट्र उसकी तटस्थता का मान करते हैं, अतएव शांति का वातावरण इतना अधिक है कि वहाँ के निवासी अपने जीविकोपार्जन में, अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों से निर्विघ्न रहकर, संलग्न रहते हैं। वहां प्रारम्भिक शिक्षा सौ वर्ष से अनिवार्य रही है और नागरिकता की भावना उस शिक्षा का विशेष अंग रहा है। अतएव नागरिक अपने अधिकारों और कर्तव्य को समझते हैं। राजनीति में अधिक हलचल नहीं होती। अन्तिम शक्ति नागरिकों के हाथ में है अतएव राजनीतिक दलबन्दी का न तो अधिक महत्व है और न उसमें अधिक भाग लेने से कोई लाभ है। कार्यपालिका समदीय नहीं इसलिए मंत्री-पद का कोई प्रलोभन नहीं। सरकारी कर्मचारियों के वेतन कम हैं, इसलिए सरकारी नौकरी के लिए कोई होड़ नहीं और आकर्षण नहीं। अधिकतर लोग खेतिहर और सादा जीवन व्यतीत करने वाले हैं। प्रायः सभी लोग मध्यम वर्ग के हैं, अत्यन्त धनी और निर्धन नहीं, इसलिए आर्थिक असमानता से उत्पन्न झगड़े नहीं होते। घरेलू

उद्योग धंधों की भरमार है, इसलिये पूंजीवादियों और श्रमिकों के झगड़ों से उत्पन्न वहाँ कोई समस्या नहीं। लोग मितव्ययी है, न तो व्यर्थ धन लुटाते हैं और न व्यर्थ की बक-बास कर विधान मंडलों का वातावरण दूषित करते हैं। वे स्वभाव और भौगोलिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के कारण बन्धुत्व भाव से पूरित हैं। वे व्यावहारिक तथा कुटुम्ब-प्रिय है, धार्मिक भावनाएँ उनके जीवन की विशेषता है।

लैंड्सगेमीड वाले कैंटनों में किसी की भी जनसंख्या ५० हजार से अधिक नहीं। यह सभा संस्था इतनी प्राचीन है कि वहाँ के निवासियों का निर्विच्छेद अंग और जीवन का आधार बन गई है।

लोक निर्णय तथा अधिनियम उपक्रम के जो दोष हैं उनकी अपेक्षा गुण अधिक है। फिर यह भी ध्यान रखना चाहिये कि स्विस नागरिक इन संस्थाओं को आवश्यक समझते हैं।

भारत जैसे विशाल देश में जिसकी जनसंख्या लगभग ४० करोड़ है, जहाँ निरक्षरता तथा अशिक्षा अत्यन्त अधिक है, समाज का ढांचा काफी दूषित है, आर्थिक परिस्थितियां शोचनीय हैं, सैकड़ों वर्ष के विदेशी-शासन से उत्पन्न परिस्थितियों ने प्राचीन प्रथाओं को नष्ट कर दिया है, उपराज्य ही क्या जिलों के क्षेत्रफल और जनसंख्या बहुत है; प्रत्यक्ष जनतन्त्र का लागू करना और सफल बनाना, संघ में ही नहीं, वरन् राज्यों (states) और जिलों में असम्भव हैं।

हाँ लैंड्सगेमीन्ड की भाँति भारत में ग्राम सभाओं, पंचायतों अथवा विकास क्षेत्रों (development blocks) में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों का समावेश हो सकता है। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीणों को शिक्षा दी जावे, उन्हें अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों का ठीक ठीक ज्ञान कराया जावे, नागरिकता के मूल भाव समझाये जावें। यह कार्य धीरे धीरे हो सकता है और तब प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र वहाँ सफल हो सकता है।

पाठ्य पुस्तकें

Brooks, R. C — Government and Politics of Switzerland.
Bryce, Viscount—Modern Democracies, nol. I; chs. XXVII XXXII.
Finer, Herman—Theory & Practice of Modern Governments, Vol. II.
Lowell, A. L. —Government and Partich. XXI. in Continental Europe, vol. II, ch. XI.
Munro, W B Governments of Europe, ths. on Switzerland.
Ogg, F. A. —The Governments of Europe. chs. XXI-XXXIII.
Sharma, B M. —Federalism in Theory ond Practice, 2 vols., (Portions dealing with Switzerland.)
Vincent, J. M —Governments in Switzerland,
Wilson, woodrow—The State, Ed. 1903, pp. 631-728.
Select Constitutions of the World, pp. 425-428.
Statesman's Year Book (Latest Issue).

षष्ठम् पुस्तक

सोवियत रूस की सरकार

अध्याय २५
सोवियत रूस और समाजवाद

सामाजिक उत्पादन-व्यवस्था में लगे हुए लोग कुछ ऐसे स्थिर और निश्चित सबध स्थापित कर बैठते हैं जो उनकी इच्छा पर निर्भर नही होते। ये उत्पादन-सबध भौतिक शक्तियो की एक विशेष अवस्था मे मिलते जुलते हैं। इन्ही सबधो के योग से समाज के आर्थिक ढाचे और प्रणाली का निर्माण होता है। समाज का यही आधार है, जिस पर कानून और राजनीति का भवन (इमारत) बनता है।

—कार्ल मार्क्स

सन् १९१७ तक आधुनिक ससार के विभिन्न राज्यो की शासन प्रणालियों का विकास किसी विशेष सिद्धान्त अथवा दार्शनिकवाद के अनुसार क्राति से नही हुआ था। ये शासन-प्रणालियाँ, जिनमें से कुछ का वर्णन हम इस पुस्तक में कर चुके हैं, धीरे-धीरे विकसित हुई है। परन्तु सन् १९१७ में (जब विश्व का प्रथम महासग्राम चल रहा था) रूस मे जार के शासन का, हिंसात्मक आदोलन ने, अन्त कर दिया। उस आदोलन के नेताओ ने राज्यसत्ता अपने हाथ में ले ली और जानबूझ कर एक ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया जो आधुनिक राज्य-व्यवस्थाओं से बिलकुल निराली थी और समाजवाद के सिद्धान्तो पर आधारित थी। आजका सोवियत शासन साम्यवाद के सिद्धान्तो पर आधारित है। साम्यवाद तो समाजवाद के विकास की अन्तिम सीढी समझी जाती है। अतएव सोवियत रूस की राज्य व्यवस्था को समझने के लिये समाजवाद के सिद्धान्त, उनके वैज्ञानिक विकास में मार्क्सवाद और साम्यवाद की विचारधारा तथा समाजवाद और साम्यवाद का अन्तर जान लेना अत्यन्त आवश्यक है।

समाजवाद के सिद्धान्त

इसका जन्म फ्रास की राज्य क्राति के समय से माना जाता है परन्तु तब से अब तक इसके रूप में परिवर्तन होता रहा है और अब इसका रूप पहले से बिल्कुल भिन्न हो गया है। आरम्भ में समाजवाद का विरोध साम्राज्यवाद से था, परन्तु साम्राज्य के न रहने पर इसका रूप परिवर्तित हो गया और अब यह पूंजीवाद का विरोध करता है।

समाजवाद को इस नवीन रूप मे परिवर्तित करने का श्रेय सर्व प्रथम कार्ल मार्क्स को है। मार्क्स ने अर्थशास्त्र की समुचित व्याख्या की और एक नये सिद्धान्त की पुष्टि की। सन् १८४८ ई० में कार्ल मार्क्स ने साम्यवादी घोषणा पत्र (Communist

Manifesto) प्रकाशित कर समाजवाद के दर्शन को विश्व के सामने रखा। इसके पूर्व ही यूरोप के राष्ट्रों में समाजवादी विचारों का प्रचार था परन्तु अब तक समाजवादी संगठन इतना दृढ़ और अन्तर्राष्ट्रीय नहीं था।

यद्यपि मार्क्स आधुनिक समाजवाद का जन्मदाता कहा जाता है परन्तु यह विशेष ध्यान देने की बात है कि आधुनिक समाजवाद मार्क्स के सिद्धान्तों से कहीं आगे बढ़ चुका है और उसमें अन्य नवीन सिद्धान्त भी आकर मिल गये हैं। आधुनिक युग के समाजवादी नेता, आचार्य हैराल्ड लास्की आदि समाजवाद के प्राचीन रूप में संशोधन कर उसे और भी विकसित कर दिया है। सारांश में हम कह सकते हैं कि समाजवाद का विकास आदि काल से आरंभ हुआ और अब तक हो रहा है और भविष्य में भी जब तक संसार में मानव जाति रहेगी तब तक उसमें विकास का क्रम जारी रहेगा सम्भव है यह संसार किसी दिवस एक शासनसूत्र में बँधकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्" के भाव को पूर्ण करे।

समाजवाद की व्याख्या—जिस युग से होकर हमारा जीवन-स्रोत बह रहा है वह समाजवाद का युग है। आधुनिक काल में यह शब्द बड़ा व्यापक हो गया है। बड़े-बड़े शहरों से लेकर ग्राम तक के स्त्री-पुरुष समाजवाद के नाम से परिचित हो गये हैं।

समाजवाद एक प्रकार का प्रगतिशील आन्दोलन है अतः इसकी परिभाषा नहीं बनायी जा सकती। कारण यह है कि यदि हम इस आन्दोलन के विषय में किसी समय में कोई परिभाषा देते हैं तो दूसरे समय में वह उपयुक्त नहीं प्रतीत होती और हमें उस समय की परिस्थिति के लिये दूसरी परिभाषा बनानी पड़ती है। एक साधारण उदाहरण इसके लिये पर्याप्त होगा। यथा, अनेक देशों की निर्धन जनता ने अपने अपने देश के पूँजीपतियों का विरोध किया और महान क्रान्ति का आयोजन किया परन्तु किसी देश में वह आन्दोलन विशाल मिल के श्रमिकों द्वारा चलाया गया, किसी देश में वह कृषकों द्वारा चलाया गया और इसी आधार पर उन आन्दोलनों के नाम भी भिन्न-भिन्न हुए।

समाजवाद की परिभाषा में कठिनाई उत्पन्न होने का कारण उसकी बहुमुखी प्रतिभा है। समाजवाद का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। मिल मालिक तथा मजदूरों की समस्याओं से लेकर राष्ट्र का कर्त्तव्य क्या है, और उसकी सीमा कहाँ तक है, आदि प्रश्न समाजवाद के अन्तर्गत आते हैं। एक सज्जन ने समाजवाद को सर्पनाग तक कह डाला। जब तक आप एक सिर का खण्डन करें तब तक दूसरा सिर निकल आता है। समाजवाद एक प्रकार का जीवन अथवा जीवन का एक ढंग है। यह एक आदर्श है अतः जिस प्रकार हम अन्य वस्तुओं की परिभाषा निश्चित कर सकते हैं, ठीक उसी

रूप में हम समाजवाद की परिभाषा नहीं निश्चित कर सकते। समाजवाद एक प्रकार का ऐसा अंकुरित वृक्ष है जिसकी परिभाषा द्वारा कोई सीमा निश्चित नहीं की जा सकती। यह एक प्रकार का जीवित आन्दोलन है और उसके लिये हम एक व्यवस्था निश्चित करके उसे निर्जीव नहीं बना सकते। समाजवाद के लिये भविष्य में अनेक आशायें की जा सकती हैं। उसमें नूतन विचारों के लिये बहुत बड़ा स्थान सुरक्षित है। समाजवाद में परस्पर विरोधी विचार भी समाविष्ट हो सकते हैं। यदि कोई समाजवादी विद्वान् किसी विशेष व्यवस्था का प्रतिपादन करता है तो दूसरा समाजवादी उस व्यवस्था की कटु आलोचना उपस्थित कर सकता है। समाजवाद समय के परिवर्तन के साथ अपनाया जा सकता है और वह समाज के प्रत्येक प्राणी के लिये उपयुक्त हो सकता है। समाजवाद वृद्ध, युवक, स्त्री तथा बच्चों सबके लिये योजनाएँ प्रस्तुत करता है। यह नहीं कि अमुक व्यक्ति युवक हैं और केवल वही समाजवाद के प्रगतिशील नियमों पर चल सकता है, अन्य उससे वंचित रहें। दूसरे यह कि वह जीवन के तथा समाज के प्रत्येक अंग पर प्रकाश डालता है। समाजवाद समाज की सामूहिक सुविधा को लक्ष्य बनाकर अग्रसर होता है, वह केवल कुछ चुने हुये अपने दल के लोगों की सुविधा को ध्यान में नहीं रखता। समाजवाद एक प्रकार का राजनीतिक स्वतन्त्रता का संग्राम है जिसका क्रम निरन्तर चलता रहता है। यह प्रजातन्त्र में भविष्य की एक व्यवस्था है। स्वतन्त्रता जिसके सुख को हम प्रजातन्त्र में अनुभव करते हैं बिना समाजवादी व्यवस्था के निरर्थक है। बिना समाजवादी व्यवस्था के प्रजातन्त्र किसी एक दल के केवल कुछ मनुष्यों के सुख का साधन मात्र है। ऐसे प्रजातन्त्र से समाज को कोई विशेष लाभ नहीं होता। ऐसे प्रजातन्त्र में केवल कुछ लोग आनन्द भोगते हैं। और दूसरे भूखों मरते हैं।

सेलर्स (Sellars) के अनुसार समाजवाद एक प्रजातन्त्र आन्दोलन है जिसका उद्देश्य समाज की आर्थिक व्यवस्था का जब कभी जहाँ तक न्याय संगत हो और अधिक से अधिक जहाँ तक किया जा सके सुधार है, जिससे प्रत्येक को अधिकतम स्वतन्त्रता तथा न्याय में अधिकार प्राप्त हो।

हुगन (Hughan) के अनुसार यह एक राजनैतिक आन्दोलन है जो श्रमिकों द्वारा चलाया गया है और जिसका उद्देश्य मिल मालिकों के सम्मिलित शोषण को बन्द करना है और ऐसी प्रजातन्त्र-व्यवस्था स्थापित करना है जिसमें उत्पादन यन्त्र तथा वितरण-शक्ति समाज के अधिकार में हो।

समाजवाद समाज में एक न्यायोचित ढंग से परिवर्तन चाहता है। समाजवाद में यह विशेष ध्यान दिया जाता है कि कोई भी *परिवर्तन अन्याय पूर्ण रीति से न किया* जाय परन्तु अराजकतावाद न्यायोचित तथा अन्यायोचित विधि का विचार नहीं

करता। समाजवाद का सिद्धान्त क्रमिक विकास का सिद्धान्त है और इसका आधार प्रत्यक्ष सत्य है परन्तु अराजकतावाद का सिद्धान्त दार्शनिक सिद्धान्तो पर अवलम्बित है और अराजकतावाद प्रगतिशील तथा आदर्शवादी है। किसी ने अराजकतावाद की उपहासास्पद आलोचना की है कि विक्षिप्त व्यक्तिवाद ही अराजकतावाद है।

कुछ लोग समाजवाद का अर्थ परिवर्धित कर्मचारी वर्ग समझते हैं परन्तु कुछ ऐसे विचारक हैं जो शासन व्यवस्था को एक बाहर की वस्तु समझते है। यदि हम यह मान लें कि सरकार शासित व्यक्तियो द्वारा बनाई गई है जो प्रजा उस प्रकार का एक अनावश्यक अग बन जाती है और यह कहना कि परिवर्धित कर्मचारी वर्ग ही समाजवाद है असत्य सिद्ध होता है।

ब्राडला लिखता है कि समाजवाद व्यक्तिगत संपत्ति का समर्थन नही करता है और यह चाहता है कि सारी सपत्ति राष्ट्र की हो और राष्ट्र ही सबसे काम लेने का अधिकारी हो और उपज को राष्ट्र ही सबमें समान रूप से वितरित करे। परन्तु ब्राडला का यह वचन वास्तविकता से अधिक दूर है। समाजवाद यह कभी नही चाहता कि समस्त सपत्ति राज्य के आधीन रहे। समाजवाद तो केवल इतना चाहता है कि उत्पादन साधनो पर राज्य का अधिकार हो। समाजवाद सीमित मात्रा मे निजी सपत्ति का समर्थन करता है।

समाजवाद विकासवादी है और साम्यवाद क्रान्तिकारी है, साम्यवाद समाजवाद से कम स्पष्ट और अधिक काल्पनिक तथा अधिक नौकरशाही है। समाजवाद राष्ट्र-वादी है परन्तु साम्यवाद का अन्तिम लक्ष्य राष्ट्र की अन्त्येष्टि क्रिया कर देना चाहता है।

समाजवाद की व्यवस्था—आज का युग अतीत के युग से कहीं आगे बढ चुका है। उत्पत्ति के अनेकों साधन उपलब्ध हो गये हैं। मशीनो से जुताई, बुवाई का काम लिया जाता है। सिंचाई के लिये नहरो का नवीन ढग से आयोजन हो रहा है। याता-यात के साधनों में बडी वृद्धि हो गई है। रेल, तार,तथा हवाई जहाज आदि के साधन मानव के लिये उपलब्ध हैं। परन्तु हाय रे मानव समाज! यह समस्त साधन केवल कुछ मनुष्यो के हित के लिये ही उपयुक्त हो रहे हैं। समाज के अधिकाश मनुष्य इस साधन के लाभ से वंचित रह जाते हैं। कहाँ तक कहा जाय और किससे कहा जाय? भारतवर्ष में अभी ऐसे मनुष्य हैं जिन्होंने अभी तक रेलगाडी तक नही देखी। भारत की ही नही वरन् ससार की बडी दयनीय दशा है। रेलगाडी के तृतीय श्रेणी के डिब्बे मे जब हम खचाखच भीड़ देखते है और उसी के पास जब हम प्रथम श्रेणी के डिब्बे को देखते हे जिसमें केवल एक ही व्यक्ति विश्राम करता रहता है तो हमें अत्यन्त क्षोभ होता है। प्रथम श्रेणी के डिब्बे में जहाँ केवल एक ही मनुष्य रहता है पखे की

भी सुविधा रहती है परन्तु तृतीय श्रेणी में जहां गर्मी के कारण अत्यन्त आकुलता रहती है कोई पखे का समुचित प्रबन्ध नही होता। कृषक दिन रात कार्य करता-करता थक जाता है परन्तु सायकाल को उसे उचित भोजन भी नही प्राप्त होता। उसके बच्चों की अध्ययन की सुविधा को कौन कहे भोजन भी पेट भर नही मिलता है। मनुष्य जाति के कुछ बच्चे भयानक रोगो से पीडित तडपते हुए सडको पर इधर-उधर घूमा करते हैं परन्तु किन्ही महाशय के कुत्ते के लिये डाक्टर साहब दौड-धूप मचाते हैं।

ऐसा क्यो है? क्या कारण है कि एक मनुष्य को भोजन तक न मिले और दूसरा अन्न का अपव्यय करे? एक समाजवादी इसका कारण स्पष्ट करते हुए लिखता है कि उत्पादन के समस्त साधनो पर थोडे से व्यक्तियो अथवा व्यक्ति-समूहो का अधिकार है। भूमि,भोजन, पूंजी और अन्य आर्थिक व्यवस्थाओ पर केवल अल्प व्यक्ति नियन्त्रण रखते है। प्राचीन अधिकारो के नाम पर ये थोडे से व्यक्ति ससार की सपत्ति पर अपना पैतृक अधिकार बनाये हुए हैं चाहे बेटा कितना ही निकम्मा क्यो न हो परन्तु उसे भोग के अनेकानेक साधन उपस्थित है। ये अल्प-व्यक्ति समाज की आवश्यकताओ को बिना ध्यान दिये अपनी भोग-विलास की सामग्री अधिक पैदा कराते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि निर्धन अपने भोजन और वस्त्र के लिये तरसते रहते है और सपत्तिशाली अपनी विलासिता मे निमग्न रहते है। ये समाज के विशाल समुदाय को शिक्षा तथा सस्कृति से वचित किये रहते हैं जिससे समाज की दशा सुधरने में विलम्ब हो रहा है। अशिक्षा का तो निर्धन तथा पददलित समाज पर इतना प्रभाव है कि चमार अपने को सदैव के लिये हीन ही समझे रहता है। उसमे यदि कहा जाय कि पढ लिखकर कोई ऊँची नौकरी करो तो उसका स्वभावत यही उत्तर होगा कि हमारे भाग्य मे चमार का जन्म ही लिखा था तो मैं विद्या कैसे पढ लूं। इस धनी समुदाय ने अधिकाश जनता को अशिक्षित बना दिया है जिससे उन्हे अपनी स्थिति का कभी ध्यान भी नही होता और वह अपनी इस पददलित स्थिति में पूर्ण सतुष्ट है। इन बेचारे निर्धनों को इस धनिक वर्ग ने इतना गुलाम बना डाला है कि वे अपने मालिक के सामने चारपाई आदि पर बैठना भी उचित नही समझते।

परन्तु क्या इन श्रमिको की यही हीन दशा ही सदैव बनी रहेगी? जिन्होने अपना रक्त बहाकर देश की अनेक योजनाओ को पूर्ण किया है, जिन्होने समय पडने पर समाज के लिये अपने को बलिवेदी पर चढा दिया है। जिनके सहयोग के बिना ससार का कोई भी अनुसधान तथा आविष्कार सभव नही हुआ है। प्रत्येक आविष्कार में इन निर्धन व्यक्तियों का ही विशेष हाथ रहा है। तो क्या इनकी दशा सदैव ही दयनीय बनी रहेगी? यह कभी नही हो सकता। इनकी अवस्था मे परिवर्तन अवश्य होगा।

प्रिंस क्रोपाटकिन ने लिखा है कि "एक भी विचार, एक भी आविष्कार, जिसका उदय अतीत काल में हुआ है, ऐसा नही है जिसे सबकी सपत्ति न कहा जाय। ऐसे हजारो ज्ञात और अज्ञात अविष्कार हुए है जो दरिद्रता में ही मर गये किन्तु उन्ही के सहयोग से ये मशीने निकली हुई है जिन्हे आज मानवीय प्रतिभा की मूर्ति कहा जाता है। प्रत्येक यत्र का यही इतिहास है—वही रात्रि का जागरण, वही दरिद्रता, वही निराशायें वही हर्ष और वही अज्ञात मजदूरो की कई पीढियो द्वारा किये गये आशिक सुधार जिनके बिना अधिक से अधिक उर्वरा कल्पना शक्ति व्यर्थ सिद्ध होती है। इनके अतिरिक्त एक बात और है। प्रत्येक नवीन आविष्कार एक योग है—ऐसे असख्य अविष्कारो का परिणाम है, जो यत्र-शास्त्र और उद्योग-धन्धो के विशाल क्षेत्र में उससे पहिले हो चुके है। विज्ञान और उद्योग, ज्ञान और प्रयोग, आविष्कार और व्यवहारिक सफलता, मस्तिष्क और हाथ का कौशल, मन और स्नायु का श्रम यह सब साथ साथ कार्य करते है। प्रत्येक आविष्कार, प्रत्येक प्रगति और मानव सपत्ति मे प्रत्येक वृद्धि भूत तथा वर्तमान में सम्मिलित मानसिक और शारीरिक श्रम का फल है।

अत जब प्रत्येक कार्य समाज द्वारा किया गया है तो समाज को ही उसका फल भी मिलना चाहिए न कि समाज के कुछ चुने हुए व्यक्तियो को। परन्तु आधुनिक सामाजिक व्यवस्था मे परिवर्तन किये बिना यह असभव है और सामाजिक व्यवस्था को परिवर्तित करने के लिये मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है। प्रचलित आर्थिक व्यवस्था का नाश और उसके स्थान पर एक नवीन व्यवस्था की स्थापना करना और समाज में मौलिक परिवर्तन करना एक ऐसी घटना है जो विधानवाद द्वारा सभव नही है। क्योकि इस परिवर्तन का स्थापित स्वार्थ विरोध करेगा और आर्थिक व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन सभव न होगा। अतः क्रान्ति के द्वारा राज्य सत्ता पर समाजवादियो का आधिपत्य आवश्यक है। राज्य सत्ता पर समाजवादियों का अधिकार हो जाने पर ही समाजवादी व्यवस्था कार्य रूप मे परिणत की जा सकती है।

वह समाजवादी व्यवस्था जिसे समाज वाद प्राप्त करना चाहता है सेलार्स (Sollars) के विचार से निम्न प्रकार की है

प्रथम—समस्त उत्पादक साधनो, भूमि, कल-कारखानो, आकर, बैंको, रेलो, जहाजो, जगलो आदि पर समाज का अधिकार होगा। श्रमिक तथा पूँजीपति के भेद न रहेंगे। प्रत्येक व्यवसायिक क्षेत्र मे सहयोग समितियो की स्थापना की जायगी। जमीदारी प्रथा का अन्त हो जायगा और कृषक अपनी भूमि लगान पर दूसरो को न दे सकेंगे। सहकारिता के सिद्धान्त पर कृषि की जायगी।

द्वितीय—इस प्रकार समाज में प्रचलित वर्ग सघर्ष का अन्त हो जायगा। पूँजीपति, श्रमिक, जमीदार और किसान जैसे वर्ग न रहेंगे। सब मनुष्य अपने परिश्रम

का फल भोगेंगे। कोई व्यक्ति किसी के परिश्रम का लाभ न उठा सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति को समाज में समान अधिकार मिलेगा। उसे समाज में प्रत्येक प्रकार की सुविधा मिलेगी।

तृतीय—वस्तुओं का दुरुपयोग कम कर दिया जायगा। आधुनिक व्यवस्था मे धन व्यर्थ व्यय किया जाता है। अमेरिका में लगभग ६ सहस्र पत्र बाजार में रखे जाते है परन्तु उनमें आधे भी नही बिकते। संसार के व्यक्तियो को अन्न भोजन के लिये नही मिलता परन्तु संयुक्त राज्य मे गेहूँ इसलिये जला दिया गया जिससे गेहूँ का मूल्य घट न जाय। पैदावार अधिक हो गयी थी और यह भय था कि यह गेहूँ बाजार में रख दिया जायगा तो गेहूँ के दाम कम हो जायेंगे। केवल इतना ही नहीं देश की रक्षा के लिये आजकल एक बहुत बडी सेना रखनी पडती है जो समाज के लिये अन्य उपयोगी कार्य में लायी जा सकती है। इस प्रकार के एक नहीं अनेक उदाहरण पाये जाते हैं जिनसे व्यर्थ व्यय होता है। समाजवादी व्यवस्था मे ये व्यय बन्द हो जायेंगे।

आजकल बडी-बडी कम्पनियो तथा बडे-बडे राज्यो की प्रतिद्वन्द्विता के कारण समाज को बडी हानियाँ उठानी पड रही हैं। कम्पनियाँ अपने लाभ के लिये दूसरी कम्पनियो की अपेक्षा कम दामों में सामग्री बेचना चाहती हैं और इसके लिये वे अमानुषिक कार्य कर डालती हैं जिससे समाज को हानि उठानी पडती है कभी-कभी ऐसा होता है कि एक कम्पनी दूसरी कम्पनी को नष्ट करने के लियेउसकी समस्त सामग्री को लेकर उसे हीन दशा मे कर देती है और उसके पश्चात् उसे बाजार में रखती है और जो उसे लेता है वह हानि में रहता है। अतःलोग उस कम्पनी के बने हुए माल को घृणित दृष्टि से देखने लगते है। समाजवाद में भी प्रतिद्वन्द्विता चलेगी परन्तु इस प्रकार की जिससे देश को लाभ हो। उदाहरण के लिये उत्पादक कार्यों के लिये प्रतिद्वन्द्विता चलेगी।

चतुर्थ—समाजवाद संसार की दुर्भिक्षता दूर करने के लिये आयोजनाएँ समाज के सम्मुख प्रस्तुत करता है। आधुनिक युग में कितने ही ऐसे योग्य पुरुष हैं जो आर्थिक विपत्ति के कारण उन्नति नहीं कर सकते। उनके आर्थिक संकट पैतृक होते हैं और समाज में उन्हें निर्धनता के कारण स्थान नहीं मिलता। परन्तु समाजवाद समाज के सामने ऐसी व्यवस्था उपस्थित करता है कि उसमें प्रत्येक योग्य व्यक्ति को यथोचित स्थान प्राप्त होगा।

पञ्चम—समाजवादी व्यवस्था से हमारी सुषुप्त शक्ति का पुनर्जागरण होगा। आधुनिक व्यवस्था में तो अधिकांश मनुष्य अशिक्षित हैं और जो शिक्षित भी हैं उनको अनुकूल शिक्षा नहीं मिली है जिससे हमारी अधिकांश शक्ति सुषुप्त अवस्था में ही

है। जब प्रत्येक को अपनी शक्ति का परिचय देने का अवसर मिलेगा तो उस समय समाज मे आज से भी बड़े बड़े वैज्ञानिक तथा दार्शनिक दिखाई पडेगे।

षष्ठ—समाजवादी व्यवस्थामें हमारा कार्य बडी सुगमता से और कम समय में हो जायगा, हमें अधिक कार्य करने की आवश्यकता नही पड़ेगी। अधिकाश कार्य मशीनों द्वारा किया जायगा और जो समय तथा परिश्रम छोटी-छोटी योजनाओं को पूर्ण करने मे लगता है वह लम्बी योजनाओ में नही लगेगा खेती तथा अन्य उद्योग धन्धो पर राष्ट्र का अधिकार रहेगा। छोटे हलो के स्थान पर बडे बडे ट्रैक्टरो से जुताई होगी। जिस काम के लिये आज १०० आदमी लगे हुए है उसे मशीनो द्वारा समाजवादी व्यवस्था मे केवल एक ही मनुष्य कर सकेगा। कार्य सभी के लिये उसकी बुद्धि तथा बल के अनुसार अनिवार्य होगा। इस प्रकार समाज की व्यवस्था मे मनुष्य का समय बहुत बच जायगा उसे अपनी जीविका केवल कुछ घण्टो के काम करने से ही मिल जायगी शेष समय वह अन्य किसी उपयोगी कार्य में लगा सकेगा।

सप्तम—समाजवाद इस प्रकार एक सुन्दर तथा सुदृढ समाज की स्थापना करेगा। न तो उसमे कोई व्यक्ति आलस्य करेगा और न निष्क्रिय ही बनने पायेगा। इसके अतिरिक्त किसी को अत्यन्त कार्य भी न करना पडेगा। प्रत्येक के लिये उसकी शक्ति तथा योग्यता के अनुसार कार्य निश्चित हो जायेगा। इस प्रकार सब को मानसिक शान्ति भी मिलेगी; आधुनिक समाज में क्या है? जो एक सच्चा सैनिक बन सकता है उसे दफ्तर का बाबू बनना पडता है और जो एक पुलिस का काम कर सकता है उसे एक शिक्षक बनना पडता है। इससे समाज मे अत्यन्त असतोष फैला हुआ है समाज मे कोई भी कर्मचारी अपने कर्त्तव्य का पालन सुचारु रूप से नही कर रहा है। और न उस कार्य मे उस मनुष्य की कोई रुचि ही होती है। इसके फल स्वरूप समाज को बडा कष्ट उठाना पड रहा है। जो जैसा है वही चिन्तित और दुखी है।

साराश यह है कि समाजवाद का अभिप्राय हानिकारक प्रतिद्वन्द्विता का अन्त कर देना है। पूंजीवाद को समाप्त कर देना है और उसके स्थान पर उत्पादक यन्त्रों का पुनर्वितरण करना है। इस भाँति पैतृक अधिकारों की इतिश्री हो जायगी।

साम्यवाद—सभवत आधुनिक युग का कोई भी शिक्षित व्यक्ति साम्यवाद या कम्यूनिज्म के नाम से अपरिचित न होगा। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति साम्यवाद की रूपरेखा का ज्ञान रखता है। परन्तु यदि किसी से पूछा जाय कि साम्यवाद की परिभाषा क्या है तो सभव है बडा से बड़ा विद्वान् उत्तर देने में असमर्थ होगा। इतना व्यापक होते हुए भी परिभाषित नही है और न इसकी कोई परिभाषा की जा सकती है। साम्यवाद की परिभाषा न होने के कारण है। साम्यवाद एक परिवर्तनशील वाद है। इसमे प्रगति है, देश तथा परिस्थिति के अनुकूल इसकी रूपरेखा

बदल जाती है। साम्यवाद प्लेटो के समय में कुछ और था और अब कुछ और हो गया है। कार्ल मार्क्स जो आधुनिक साम्यवादी सिद्धान्तो का जन्मदाता कहा जाता है और लेनिन तथा स्टेलिन के सिद्धान्तो में बडा अन्तर आ चुका है।

इसमे सन्देह नही कि साम्यवाद का जन्म समाजवाद से ही हुआ है परन्तु साम्यवाद और समाजवाद मे आकाश और पाताल का अन्तर है। साम्यवाद क्रान्तिकारी है परन्तु समाजवाद क्रमिक विकासवादी है। समाजवाद का यह विश्वास है कि शासन सत्ता पर समाजवादियो को वैधानिक रूप से अधिकार मिल जायगा। साम्यवाद इस विचार का विरोध करता है। साम्यवाद का विश्वास है कि आधुनिक शासन सत्ताधिकारी अपने अधिकार की रक्षा पशुबल से करेंगे। इसलिए आधुनिक शासन-पद्धति के विनाश के लिये क्रान्ति आवश्यक है। दूसरे समाजवाद उत्पत्ति के वितरण मे आवश्यकता का ध्यान नही रखता है। समाजवादी व्यवस्थाके अनुसार उत्पत्ति का वितरण मनुष्य के श्रम तथा श्रम की श्रेणी के अनुसार होना चाहिये। साम्यवादी इस व्यवस्था की आलोचना करते हैं। उनके अनुसार उत्पत्ति का वितरण श्रम तथा आवश्यकता के अनुसार होना चाहिये।

आधुनिक साम्यवाद एक दर्शन है। साम्यवाद आवश्यक परिवर्तनों द्वारा आर्थिक तथा राजनैतिक असमानता को दूर करने की एक प्रणाली है। आधुनिक युग मे साम्यवाद एक प्रकार की राजनैतिक तथा आर्थिक नीति के रूप मे स्वीकार कर लिया गया है। इस ससार मे एक ओर बडे-बडे करोडपति, लक्ष्मीपति तथा भूमिपति पड़े हुए है तथा दूसरी ओर नगे, भूखे भिखमगो का ससार है। एक ओर अल्पसख्यक पूँजीपति है जो विलासिता के गहन तिमिर में निमग्न है और दूसरी ओर निराश्रय श्रमिक है जिनको निरन्तर कठिन परिश्रम के ऊपर भी भर पेट भोजन नही मिलता। नगो और भूखो की सख्या पूँजीपतियो तथा भूमिपतियो की अपेक्षा अत्यन्त अधिक है। नगे तथा भूखे शारीरिक बल मे भी पूँजीपतियों से अधिक है। परन्तु सामाजिक तथा राजनैतिक व्यवस्था ऐसी बन गई है जिसमे वे निर्धन श्रमिक पूँजीपतियों के दास बने हुए हैं। धनिक वर्ग अपनी सपत्ति के बल से राष्ट्र के उच्चतम पदों पर अधिकार बनाये हुए हैं और निर्धनो को समृद्ध नही होने देते। बेचारे निर्धन शिक्षा सस्कृति मे वचित कर दिये जाते हैं जिससे उनको अपनी दीन दशा का ज्ञान भी नही होने पाता। साम्यवाद इन निर्धनो के कष्ट को मिटाने के लिये एक आन्दोलन है, साम्यवाद का आदर्श एक नवीन राष्ट्र का निर्माण करना है जिसमे धनी तथा निर्धनी सबको समान अधिकार प्राप्त हो और कोई भी व्यक्ति दूसरे के श्रम का शोषण न कर सके।

साम्यवाद निम्न सिद्धान्तो का कट्टर प्रतिपादक है —

उत्पादक यन्त्रो पर व्यक्ति विशेष का अधिकार न होना चाहिये प्रत्युत समुदाय

का अधिकार होना चाहिये। चाहे वह उत्पादन यन्त्र भूमि सम्पत्ति के रूप में हो चाहे कल कारखानो के रूप में हो। उद्योग का सगठन समाज द्वारा होना चाहिये न कि पूंजी विनाशकारी प्रतिद्वन्द्वी पूंजीपतियो द्वारा। जिस प्रकार उत्पत्ति के साधनो पर समाज का अधिकार होना आवश्यक है उसी प्रकार वितरण पर भी समाज का अधिकार होना आवश्यक है।

वितरण श्रमिको के कार्य तथा उसकी विशेषता के अनुसार चाहिये। अभिप्राय यह है कि प्रत्येक श्रमिक जितना कार्य करे तथा जिस प्रकार का कार्य करे उसे उसी के अनुसार वितरण मे भाग मिलना चाहिये। इस प्रकार उत्पादक केवल श्रमिक मात्र रह जायेंगे। वे धनिको के दास नही रहेंगे क्योकि व्यक्तिगत सपत्ति नही रह जायगी। सम्पत्ति पर समाज का अधिकार होगा और उत्पादन के यन्त्रो पर समाज का अधिकार होने के कारण सब सबके लिये कार्य करेगे। इस प्रकार भविष्य मे श्रमिक तथा पूंजीपति का भेद मिट जायगा, हानि तथा लाभ का प्रश्न भी मिट जायगा। लाभ जो आधुनिक युग मे पूंजीपतियो का व्यक्तिगत रूप में होता है, वह राष्ट्र का होगा। जो अधिक श्रम करेगा तथा जो उच्चकोटि का परिश्रम करेगा वह अन्य लोगो से अधिक सुखी भी रहेगा, जो व्यक्ति किसी उत्पादन क्षेत्र में कार्य न करके सार्वजनिक सेवा करेगा उसे राष्ट्र की ओर से उसकी सेवा के अनुकूल फल मिलेगा।

सक्षेप मे हम कह सकते है कि साम्यवाद एक राज्य प्रणाली है तथा समाज सगठन है जिसमे उद्योग धन्धो का स्वामित्व व्यक्तिगत मनुष्यो के हाथ में न रहकर सम्पूर्ण जनता के हाथ में रहेगा। साम्यवाद सर्वाधिकार वाद का समर्थन तथा पोषक है; साम्यवाद के अनुसार राष्ट्र का कर्त्तव्य केवल शासन करना ही नही है वरन् प्रत्येक व्यक्ति की सुख-सुविधा का भी साधन उपस्थित करना है। राष्ट्र का कर्त्तव्य प्रत्येक व्यक्ति को कार्य देना तथा प्रत्येक को भोजन देना भी है। सभी मनुष्य राष्ट्र के है। राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति पर पूर्ण अधिकार है। राष्ट्र जिससे जो उचित समझे कार्य ले सकता है।

साम्यवाद का विकास—आधुनिक साम्यवाद का प्रारम्भ कार्ल मार्क्स (Karl Marx) तथा ऐंगिल्स (Enggles) के समय से माना जाता है। आधुनिक साम्यवाद का आदि आचार्य कार्ल-मार्क्स माना जाता है और १८४८ का साम्यवादी घोषणापत्र तथा दास केपिटल (Das Capital) साम्यवाद की गीता समझी जाती है। साम्यवाद समय के साथ और भी अधिक विकसित हुआ। दो साम्यवादी आचार्यो का और भी उदय हुआ। उनमें से प्रथम का नाम लेनिन और दूसरे का नाम स्तालिन है। बीसवीं शताब्दी का साम्यवाद स्तालिन से अधिक प्रभावित है। इस प्रकार आधुनिक साम्यवाद के कार्ल मार्क्स, लेनिन तथा स्तालिन त्रिवेद हैं। मार्क्सवाद जो सर्व प्रथम सोने का

स्वप्न समझा जाता था अवसर पाकर लेनिन द्वारा अकुरित तथा स्तालिन द्वारा परिपुष्ट हुआ।

मार्क्स के अनुसार समाज तीन श्रेणियो से होकर चलता है। प्रथम आदि साम्यवाद, द्वितीय एतिहासिक समाज जैसा आधुनिक युग मे है, और तृतीय उच्चतर साम्यवाद। तृतीय अवस्था आदि-साम्यवाद को तथा ऐतिहासिक सामाजिक अवस्था को सम्बद्ध करती है। प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था तक परिवर्तन मन्दगति से होता है, परन्तु द्वितीय अवस्था से तृतीय अवस्था मे परिवर्तन द्रुतगति से अचानक होता है। अन्य दार्शनिक मार्क्स के इस सिद्धान्त का खण्डन करते है। व्यक्तिगत सम्पत्ति जिसका उद्भव मार्क्स ने ऐतिहासिक समाज मे दिखलाया है, असत्य है। कारण यह है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति उतने ही प्राचीन काल से चली आ रही होगी जितने प्राचीन-काल से मानवता व्यक्तिगत सम्पत्ति का उदय मानवता के साथ हुआ होगा। क्रमिक विकास का सिद्धान्त जो आधुनिक समय में सर्व-स्वीकृत सिद्धान्त माना जाता है इस कथन का समर्थन करता है। इस भाति मार्क्स के सिद्धान्तो से क्रमिक विकास, के सिद्धान्तो का परस्पर विरोध उत्पन्न होता है।

इतिहास की आर्थिक व्याख्या—मार्क्स ने जो इतिहास की आर्थिक व्याख्या की वह सर्वप्रथम किसी की समझ में न आई। तत्कालीन विद्वानो ने जैसा ही चाहा वैसा ही तर्क उस व्याख्या के खण्डन के लिये प्रस्तुत करदिया। मार्क्स ने अपने द्वन्द्व न्याय मे यह प्रतिपादित किया है कि मानव जीवन तथा ऐतिहासिक घटनाओ का आधार मनुष्य की दैनिक आवश्यकताओ में परिवर्तन होता है जैसे-जैसे मनुष्य के सामूहिक जीवन में भी परिवर्तन हुआ करता है। आदि काल से अब तक ज्यो-ज्यों मनुष्य का जीवन सामाजिक बनता गया है त्यो-त्यो मनुष्यकी दैनिक आवश्यकताओ का प्रभाव समाज पर अधिक व्यापक होता गया है। नवीन विचार धारा सर्वप्रथम अनीश्वरवादी तथा नितान्त भ्रम मूलक समझी गई। जिस मनुष्य ने युगो से यह समझ रखा था कि ससार मे जब अपार दु:ख समुद्र उमडने लगता है, पाप पृथ्वी पर घोर रूप में छा जाता है, महात्मा पुरुषों के लिये बचाव की कोई सुविधा नही रह जाती तो भगवान स्वय अवतरित होते हैं और साधु पुरुषो की रक्षा तथा दुष्टो का सहार करते है, वह समष्टि-वादी सिद्धान्तों पर क्यों विश्वास करने लगा। वह तो ऐसे सिद्धान्तो को अवश्य ही अनादर की दृष्टि से देखेगा।

समाज व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्धो से बना है। जहाँ एक व्यक्ति के जीवन का सम्बन्ध दूसरे व्यक्ति के जीवन मे नही है वहाँ हम समाज की रचना नही मान सकते। यद्यपि समाज की रचना में अन्य शक्तियाँ कार्य करती है परन्तु विशेषता समाज की मुख्य शक्ति एक व्यक्ति का सम्बन्ध दूसरे व्यक्ति के सम्बन्ध और इसी भाँति

समाज के प्रत्येक मनुष्य का सम्बन्ध समाज के साथ होने में है। यह समाज के सम्बन्ध में स्थितशील नहीं है वरन् प्रक्रिय है और यही कारण है कि समाज में निरन्तर परिवर्तन हुआ करता है। दूसरे समाज के एक मनुष्य का सम्बन्ध समाज के अन्य पुरुषों के साथ आर्थिक व्यवहारों द्वारा प्रगट होता है। यद्यपि मनुष्य के व्यवहारों में अन्य वस्तुओं का भी समावेश होता है परन्तु सर्व प्रथम व्यवहार जो स्वाभाविक सम्बन्धों का निर्माता है, आर्थिक व्यवहार है। यदि यह प्रश्न किया जाय कि मनुष्य अपना सम्बन्ध क्यों दूसरे व्यक्ति से बनाये रखना चाहता है तो यही उत्तर मिलेगा कि जिससे उसको वह आवश्यकताएँ जो उसके जीवन के लिये नितांत उपयोगी हैं, पूर्ण हों। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के बिना वह जीवित ही नहीं रह सकता। फलस्वरूप आर्थिक आवश्यकता ही समाज का मूलकारण है। मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली इस शक्ति को यदि हम "उत्पादन शक्ति" कहे तो अत्युक्ति न होगी।

उत्पादन शक्ति के दो मुख्य अंग हैं। प्रथम, प्रकृति स्वयं कुछ साधनों को उपस्थित करके उत्पादन क्रिया को सफल करती है। द्वितीय, मनुष्य परिश्रम करके उन प्राकृतिक साधनों का उपयोग करता है। इस प्रकार उत्पादन शक्ति पर प्रकृति तथा मनुष्य दोनों का योग होता है। उत्पादन पर इन दोनों शक्तियों का प्रभाव पड़ता है या इस प्रकार कहिए कि बिना इन दोनों शक्तियों के योग के उत्पादन नहीं हो सकता है। उत्पादन की शक्ति में सदैव से विकास होता रहा है। आदि काल में जितना परिश्रम करके मनुष्य जो उत्पादन करता था आज उसी परिश्रम से वह उससे अधिक पदार्थ उत्पन्न कर सकता है। उत्पादन की शक्ति में आदिकाल से आज तक निरन्तर अबाध-गति से विकास होता रहा है। यह विकास भविष्य में भी अवश्यम्भावी है। उत्पादन में विकास के दो कारण हैं, प्राकृतिक साधनों में परिवर्तन हो जाना तथा मनुष्य की श्रम शक्ति में यन्त्रों के प्रयोग द्वारा विकास होना। अतएव "उत्पत्ति के साधनों" अथवा "उत्पादन शक्ति" में होने वाला क्रमिक विकास ही इतिहास की प्रक्रिया का सचालक है। इसी को हम कार्य-क्षमता, शक्ति या विकास भी कह सकते हैं।

वर्ग युद्ध की व्यापकता—वर्ग संघर्ष का दिग्दर्शन हम इतिहास की आर्थिक व्याख्या के साथ कर चुके हैं। साम्यवादी यों कहते हैं कि जिस प्रकार मानवता के विकास के लिये किसी समय अज्ञान जनित धर्म की आवश्यकता थी उसी प्रकार आधुनिक युग में वर्ग संघर्ष की आवश्यकता है। उन्नत समाज की रचना के लिये श्रेणी संघर्ष के अन्तिम स्वरूप के समन्वय की आवश्यकता है। अत समष्टिवादी समाज की स्थापना के लिये वर्ग संघर्ष (Class Struggle) की अत्यन्त आवश्यकता है।

वर्ग संघर्ष के इस नवीन सिद्धान्त का आधुनिक युग के पूँजीवादी विरोध करते हैं। कारण यह है कि इस सिद्धान्त के मान लेने से इन्हें आर्थिक हानि होने की सम्भावना

है। पूंजीवादियो के अतिरिक्त कुछ अन्य भी विद्वान् है जो *वर्ग-सघर्ष के सिद्धान्त का* विरोध करते हैं। पूंजीवादियो का विरोध तो केवल अपने स्वार्थों की रक्षा के लिये ही है। परन्तु अन्य लोग अज्ञानता वश विरोध करते हैं। वर्गस घर्ष का सिद्धान्त उनकी समझ में अभी नही आ सकता है। *वर्ग सघर्ष के विरोधी कह सकते है कि सामाज* की रचना का आधार उत्पादन की शक्तियो पर प्रभुत्व नही है किन्तु श्रम विभाग है। मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिये श्रम विभाजन कर लिया है, परन्तु ऐसा कहना नितान्त भ्रमपूर्ण है। समाज मे श्रमविभाजन उत्पादन शक्तियो पर स्वामित्व प्राप्त करने पर ही सम्भव हो सका है।

राज्य सस्था के उद्भव का कारण भी वर्ग-सघर्ष ही है, राज्य सस्था का बाह्य रूप निष्पक्ष सा प्रतीत होता है परन्तु वास्तव मे यह निष्पक्ष नही है। राज्य पर स्वत उसी वर्ग का प्रभाव होना है जो समाज में अधिक शक्तिशाली होता है। राज्य सस्था यदि समर्थ वर्ग की सहायता न करे तो उसका अस्तित्व ही कठिनाई में पड जाय। मार्क्स के विचार से तो राज्य सस्था पूंजीवादियो द्वारा निर्मित है और वह इसलिये है कि श्रमजीवी वर्ग के आन्दोलनो को अधिक न बढने दे। राज्य सस्था के विविध अग जैसे पुलिस, सेना, न्याय विभाग तथा कारागार आदि केवल इसलिये थे कि श्रमजीवी किसी प्रकार भी क्रान्ति न कर सके। मार्क्स के विचार से राज्य सस्था शोषितो के दमन के लिये ही एक शक्ति है, आधुनिक राज्य सस्था के बल पर ही शोषण करने वाला वर्ग दलितो पर अनेक प्रकार का अत्याचार करता है। राज्य सस्था ऐसा वातावरण उत्पन्न श्रमजीवियो के लिये हितकर नही है और क्रान्ति द्वारा उस सस्था का अन्त इसलिये कर देना श्रमजीवियो का प्रथम कर्तव्य होगा।

पूंजीपतियो के विरुद्ध यह क्रान्ति किसी देश विशेष की वस्तु नही है, बल्कि ससार के समस्त श्रमिको को उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व प्राप्त करने के लिये एक साथ प्रयत्न करना है, ससार के समस्त श्रमिक जब तक एक साथ सम्मिलित नही होते तब तक यह क्रान्ति सम्भव नही हो सकती। यदि किसी देश विशेष में श्रमिक क्रान्ति सफल भी हो जायेगी तो उस देश के श्रमिको पर अन्य पूंजीवादी देश अवश्य आक्रमण करेगे और ऐसे कठिन अवसर की रक्षा के लिये उस देश के श्रमिको को केवल श्रमजीवी प्रधान राज्य स्थापित करना अनिवार्य होगा। अत श्रमिको का आन्दोलन जब तक पूर्ण ससार में व्याप्त नही हो जाता तब तक उनको श्रमिक प्रधान *राज्य की स्थापना करनी होगी।*

कुछ लोगो को सन्देह है कि श्रमिको का जो सामयिक राज्य स्थापित होगा वह केवल श्रमिको का ही हित चाहेगा और दूसरे एक नवीन राज्य सस्था भी उत्पन्न हो जायगी। इस प्रकार न तो वर्ग सघर्ष का ही अन्त होगा और न राज्य सस्था का

ही अन्त होगा। अन्तर केवल इतना होगा कि पहले पूँजीवादियो का उत्पादन-पर प्रभाव था और अब श्रमिको का प्रभाव रहेगा।

मार्क्स इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार देता है—

"जब साम्यवाद के उन्नत काल में वर्गविहीन समाज का निर्माण हो जाता है और जब समस्त उत्पत्ति सामाजिक व्यक्ति के हाथ मे केन्द्रित हो जाती है तब सार्वजनिक प्रभुत्व राजनीतिकता मे विच्छिन्न हो जाता है। राजनीतिक शक्ति विशेषता एक वर्ग-व्यवस्थित शक्ति है जो दूसरे वर्ग के अतिक्रमण के लिये प्रयुक्त होती है जब श्रमजीवी मध्यम वर्ग के विरोध के लिये बलपूर्वक अपने को गठित करता है और क्रान्ति द्वारा अपना वर्ग निर्मित करता है तो स्वामी वर्ग अपनी उत्पत्ति की समस्त अवस्था को हटाने के लिये विवश हो जाता है और तत्काल ही वर्ग सघर्ष समाप्त हो जाता है। वर्ग सघर्ष के मूल मत्र—उत्पादन के स्वामित्व के समाप्त होते ही समाज भी वर्ग विहीन हो जाता है। एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर प्रभुत्व नहीं रह जाता। मध्यम वर्ग व उसकी श्रेणियो के स्थान पर एक ऐसे श्रम जीवी सगठन का उदय होता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति सामाजिक उन्नति के साथ समाविष्ट होती है।"

मार्क्सवाद के इन्ही सिद्धान्तो का कुछ हेर फेर के साथ लेनिन ने ग्रहण कर रूस मे सन् १९१७ की क्रान्ति के पश्चात् कार्यान्वित करने का प्रयास किया और बोल्शेविक शासन स्थापित हुआ जो सन् १९२४ के रूसी सविधान का आधार था। आज का रूस मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तो पर आधारित एक विचित्र शासन व्यवस्था स्थापित कर सार्वजनिक हित में अग्रसर है।

अध्याय २६

सोवियत रूस के शासन विधान का विकास

स्पष्ट है कि प्रजातन्त्र की नींव पर आघात करने वाला रूस का नया संविधान नहीं है किन्तु दूसरे पूँजीवादी शासन विधान हैं। इसीलिए मैं समझता हूँ कि सोवियत रूस का शासन संविधान पूर्ण रूप से जनतन्त्रात्मक संविधान है।" —जोसेफ स्टेलिन

समाजवादी सोवियत प्रजातन्त्रों के संघ (Union of the Socialist Soviet Republics) का क्षेत्रफल ८०,९५,७२४ वर्गमील है जो संयुक्त राज्य अमेरिका से तिगुना है, और जनसंख्या १९५६ के अनुसार २००, २००,००० है। यहाँ पिछले ३० वर्षों में एक नवीन राज्य शासन-प्रणाली का बृहत-प्रयोग किया जा रहा है जिसके प्रशंसकों और आलोचकों ने विभिन्न रूपों में इसकी व्यवस्था की है। कुछ लोगों ने सोवियत रूस के शासन-विधान को वास्तविक रूप में प्रजातन्त्रात्मक कह कर प्रशंसा की है, दूसरे लोगों ने लाखों मूक-व्यक्तियों पर अत्याचार करने वाला कठोर शासन कह कर इसकी बुराई की है।

शासन विधान का इतिहास

रूस की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि वह संस्कृत, हितों और संस्थाओं की दृष्टि से अर्ध-यूरोपियन और अर्ध-एशियाई समझा जाता है। सन् १९१४-१९१८ के महायुद्ध के पूर्व रूस संसार के सबसे कठोर शासित देशों में गिना जाता था। जार (Czar) राज्य का ऐकैवाधिकारी स्वामी माना जाता था, उसकी शक्ति असीमित थी और उसका वचन ही कानून था। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जार अलैक्जण्डर प्रथम (Czar Alexander I) ने शासन-प्रणाली में कुछ सुधार करने का प्रयत्न किया किन्तु इस कार्य में सन् १८१२ में किये हुये नैपोलियन के आक्रमण ने बाधा डाल दी। उसका उत्तराधिकारी जार अलैक्जैण्डर द्वितीय उदार विचारों का व्यक्ति था। अपने पड़ोसी राज्य आस्ट्रिया के उदाहरण से (जहाँ सन् १७८१ में कृषि-श्रमजीवियों की स्थिति में सुधार हो चुका था) प्रेरित होकर उसने यह इच्छा प्रकट की कि सामन्त लोगों को इन कृषि श्रमजीवियों को स्वतन्त्र करने का काम अपने हाथ में लेना चाहिए। तीन मार्च सन् १८६१ में एक राजाज्ञा से वैयक्तिक भूसिम्पत्तियों के श्रमजीवी दासों को

स्वतन्त्र कर दिया गया। उनके साथ गृह-कार्य करने वाले दासों को स्वतन्त्रता दे दी गई। कृषकों की भूमि उनकी सम्पत्ति बना दी गई और उनसे अपने जमीदारों को एक उचित नियत लगान देने के लिये कह दिया गया। तीन वर्ष बाद उसने पोलैंड (Poland) के दासों को भी स्वतन्त्र कर दिया। "न्याय, प्रकाश और स्वतन्त्रता" उसका निर्देशक सिद्धान्त था, तब भी शून्यवादी रूसी क्रान्तिकारियों (Nihilts) ने उसका विरोध किया। इन लोगों ने गुप्त संस्थायें खोलना आरम्भ किया, हिंसा का प्रचार किया और अन्त में जार पर बम फेंका। (१३ मार्च सन् १८८१) जिससे उसके शरीर के टुकड़े टुकड़े हो गये।

ड्यूमा (Duma) को बुलाने का प्रथम प्रयत्न—इस घटना के बाद से सन् १९०५ के रूसी-जापानी युद्ध तक शासन को जनतन्त्रात्मक बनाने का कोई दूसरा प्रयत्न नहीं किया गया; इस युद्ध में रूस की पराजय हुई और उससे जार के ऐश्वर्य का भवन खण्डहर हो गया। उसकी उच्चता की चमक-दमक फीकी पड़ गई और उसके पैतृक अधिकार में अविश्वास होने लगा। जार ने एक लोक निर्वाचित असेम्बली (जिसे (ड्यूमा कहा गया) का संगठन कर लोकमत जानने का प्रयत्न किया। इसी समय जनता ने विद्रोह खड़ा कर दिया। मताधिकार को बढ़ाकर जनता को प्रसन्न करने के सब प्रयत्न विफल हुये और उसे बाध्य होकर एक मैनीफेस्टो (अर्थात् घोषणा-पत्र) निकालना पड़ा जिससे "व्यक्ति के शरीर की, आत्मा की, समुदाय व मुक्तव्यवहार की वास्तविक स्वतन्त्रता के आधार" पर जनता को नागरिक स्वतन्त्रता प्रदान करनी पड़ी। यह अपरिवर्तनशील नियम भी स्थिर करना पड़ा कि ड्यूमा (Duma) की सम्मति के बिना कोई कानून लागू न होगा, और जनता के प्रतिनिधियों को यह अधिकार दिया गया कि वह राज्याधिकारियों के कार्यों को वैध-अवैध ठहरा सके। सन् १९०६ में जो प्रथम ड्यूमा एकत्रित हुई उसमें प्रत्यक्ष प्रौढ़मताधिकार पालियामेण्टरी (संसदात्मक) शासन-प्रणाली, जमींदारी उन्मूलन आदि की माँग की गई। इस ड्यूमा का जुलाई में विघटन हो गया। द्वितीय ड्यूमा मार्च १९०७ में एकत्रित हुई और वह भी विफल-कार्य सिद्ध हुई।

जार की सत्ता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ—मई सन् १९०६ के मौलिक अधिनियमों के चौथे अनुच्छेद से यह घोषणा कर दी गई थी कि "रूस के सम्राट् की शक्ति सर्वोच्च निरंकुश शक्ति है। उसके प्रभुत्व को शिरोधार्य करना चाहिए, केवल भय से ही नहीं किन्तु आत्मा की रक्षा के लिए भी, यही परमेश्वर की आज्ञा है।" ऐसे वातावरण में सन् १९०७ के नवम्बर मास में बुलाई गई ड्यूमा भी कोई कार्य न कर सकी। जार की इच्छा से ही अन्तिमत सब व्यवस्था होती थी। यदि ड्यूमा सरकार के आर्थिक प्रस्तावों को अस्वीकार कर देती थी तो जार के मन्त्री पूर्व वर्ष के बजट के

अनुसार शासन चलाते रहते थे, कार्यपालिका पूर्णतया जार को उत्तरदायी थी, न कि ड्यूमा (Duma) को।

इसलिये प्रथम महायुद्ध के समय रूस की जनता उस युद्ध से उत्पन्न कष्टों से घबराकर विद्रोह कर उठी और निकोलस (Nicholos, Czar) को राजत्याग करने पर बाध्य कर दिया (मार्च १२ सन् १९१७)।

सन् १९१७ की क्रान्ति—प्रथम महायुद्ध में रूस यूरोप की केन्द्रीय शासन सत्ताओं के विरुद्ध मित्रराष्ट्रों का साथी था किन्तु वह अपने यहाँ के निरंकुश शासन के कारण अधिक समय तक युद्ध न कर सका। शासन को प्रजातन्त्रात्मक बनाने की माँगों को जार लगातार कुचलता रहा जिससे प्रगतिशील व्यक्तियों ने उसके विरुद्ध विद्रोह खड़ा कर दिया। जार ने समझदारी से काम न लेकर अनुचित आज्ञायें दीं कि ड्यूमा के सदस्य घर वापिस चले जायें, पिट्रोग्राड के श्रमिकों को हड़ताल बन्द करने की आज्ञा दी और काम आरम्भ करने को कहा, जिससे विद्रोह सजीव हो उठा। इस विद्रोह के दूरवर्ती कारणों में रूस के किसानों की भूख से मृतप्राय अवस्था, यूरोप में प्रजातन्त्र का जोर, रूसी-जापानी युद्ध से उत्पन्न कष्ट और रूसी युवकों की अधीरता, ये सब कारण थे। ड्यूमा ने राजाज्ञा का विरोध किया। एक सप्ताह के भीतर जार ने सिंहासन छोड़ दिया और उसको कुटुम्ब सहित बन्दी बना दिया गया। ड्यूमा ने जो अस्थाई सरकार स्थापित की उसने आज्ञा देकर समाचार-पत्रों पर लगाये हुए बन्धनों को हटा दिया, राजनैतिक व धार्मिक बन्दियों को छोड़ दिया, श्रमिकों के संगठन बनाने और हड़ताल करने के अधिकार को मान्य कर दिया और स्थल व जल सैना के अनुशासन को अधिक मानुषिक रूप दिया। यह सरकार थोड़े ही समय तक कायम रह सकी क्योंकि पीट्रोग्रेड की सोवियत ने स्थल सेना व जलपोतों के बेड़े को यह आदेश दे दिया कि इस अस्थायी सरकार की उन आज्ञाओं का पालन न किया जाय जो सोवियत के आदेशों के विरुद्ध हों। इसका परिणाम यह हुआ कि सैनिकों व नाविकों ने स्थानीय क्रान्तिकारी समितियाँ स्थापित कीं। इस समय भी अधिक व्यक्ति पूर्व शासकों के पक्ष में थे और दूसरे लोगों को युद्ध करने से बिल्कुल मना कर दिया।

सन् १९१७ के अक्टूबर मास में बोल्शैविकों ने अपने पक्ष की बैठक में बलपूर्वक राज्यशक्ति को अपने हाथ में करने का निर्णय किया। नवम्बर मास की ६ तारीख को उन्होंने पीट्रोग्रेड नगर पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया और सरकार के मन्त्रियों को बन्दी कर लिया। सोवियत की अखिल रूसी कांग्रेस ने ७ नवम्बर को एक कार्यपालिका समिति बनाई और एक प्रशासन बोर्ड स्थापित किया जिसके लैनिन सभापति, ट्रौट्स्की परराष्ट्र मन्त्री और स्तालिन विभिन्न जातियों का मन्त्री (Commissar of Nationalities) बनाए गये। सन् १९१७ के नवम्बर मास की

क्रान्ति की प्रमुख प्रेरक शक्ति लैनिन और उसके अत्यन्त योग्य सहकारी ट्रौट्स्की की थी। मन्त्रिमण्डल ने एक कार्यक्रम तैयार किया जिसमें निम्नलिखित बातें थी :—

(i) योरप केन्द्रीय सत्ताओ (Central Powers) से तुरन्त सन्धि करना।

(ii) स्थानीय विद्रोह का दमन करना और पृथक्करण की भावनाओं को मिटाना।

(iii) पूर्ण कम्यूनिस्ट सरकार की स्थापना के लिये श्रमिको की अधिनायक सत्ता (Dictatorship of Proletariat) स्थापित करना और इस अधिनायक सत्ता की स्थापना के लिये सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सगठन को पूरी तरह से बदल देना। और

(iv) सारे ससार में श्रमजीवियों के विद्रोह को फैलाना।

सोवियतों की कांग्रेस ने जिसका सचालन बोलशैविक समाजवादी पक्ष करता था, जल्दी जल्दी अपने कई अधिवेशन किये। सन् १९१८ को १० मार्च को जो पाँचवाँ अधिवेशन हुआ उसम रूस के समाजवादी सघात्मक सोवियत गणराज्य (Russian Socialist Federal Soviet Republic) के लिये शासन विधान तैयार किया। इस गणराज्य या प्रजातन्त्र मे ज़ार नष्ट-भ्रष्ट साम्राज्य के उत्तरी व सुदूरपूर्वी अधिकतर भाग शामिल थे। सन् १९१८ से १९२३ तक इस सविधान मे कई महत्व-पूर्ण सशोधन किये गये। विशेषकर ये सशोधन नए प्रदेशो को सघ मे शामिल करने के बारे मे थ। सन् १९२३ स इस सघ का नाम समाजवादी सोवियत प्रजातन्त्रो का सघ (U S. S. R or Union of Socialist Soviet Republics) रखा गया।

यह विधान बहुत ही अद्वितीय था और इसमे ससार के अन्य शासन-विधानो से बिल्कुल भिन्न शासन प्रणाली अपनाई गई थी। इसकी उत्पत्ति सन् १९१७ की जनक्रांति से हुई थी इसलिए यह जार की अत्याचारी सत्ता की प्रतिक्रिया स्वरूप निर्मित हुआ था। इसके द्वारा प्रसिद्ध दार्शनिक कार्ल मार्क्स के समाजवादी सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप दिया गया जिसके अनुसार प्रत्येक समस्या राजनैतिक समस्या है और प्रत्यक श्रमिक राज्य का सेवक है। इसका उद्देश्य पूंजीवाद को पूर्णतया कुचल देना था इसलिए इस शासन विधान मे रूस को "सोवियत श्रमिको, सैनिको और कृषको के प्रतिनिधियो का प्रजातन्त्र" कहकर पुकारा गया था। वास्तव मे यह सगठन अत्यन्त दृढ़ सघ (Close Federation) के रूप में था अर्थात सघ शक्तिया केन्द्रीय शक्ति को विस्तृत अधिकार दिए गये और जनता के राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले प्रमुख मामलो को सघ सरकार के हाथ मे कर दिया था। सघ के सात घटक प्रजातन्त्र राज्यो को स्थानीय व सास्कृतिक

स्वाधीनता मिली हुई थी इसका अन्तिम उद्देश्य सारे संसार का एक सोवियत संघ बनाना वादी था इसलिए इस संघ को एकराष्ट्रीय इकाई नहीं कहा जाता था। इसको, समान समाज- सिद्धान्तो पर स्थित समान समाजवादी संस्था वाला संघ समझा जाता था। कम से कम कागज पर इसमें घटक राज्यो को संघ से पृथक् होने का अधिकार दिया गया था जो संघ के सर्वमान्य सिद्धान्तो के बिल्कुल प्रतिकूल बात थी।

श्रमिको का शासन--संविधान ने श्रमिको के शासन की स्थापना की थी इसलिए मताधिकार सबके लिए समान था, चाहे वे स्त्री हो या पुरुष। जो लोग लाभकारी उद्योगो मे मजदूरों से मजदूरी देकर काम कराते थे, या अन्तउपार्जित आय से जीविका चलाते थे, पादरी, सन्यासी, मूढ व्यक्ति और जार के पूर्व कर्मचारी, ये लोग मताधिकार से वंचित कर दिये गये थे। संविधान की एक नवीनता यह थी कि इसमें जिले की सोवियत सरकार की सोवियत और केन्द्रीय कार्यपालिका समिति, इन सबको अप्रत्यक्ष निर्वाचन-प्रणाली द्वारा संगठित करने की योजना थी। प्रत्यक्ष-निर्वाचन द्वारा गाँव या फैक्टरी की सोवियत (परिषद्) ही बनाई जाती थी जिसका अधिकार क्षेत्र बहुत सीमित था। "इस प्रकार का संगठन किसी राजनैतिक पक्ष के लिए तो नई वस्तु न थी किन्तु राज्य-संगठनमें इसका होना एक अद्वितीय बात थी।"[1]

स्थानीय व प्रान्तीय सरकार—रूस के शासन का रूप पिरैमिड जैसा था जिसके आधार मे फैक्टरी और ग्राम सोवियतो की बडी संख्या थी और चोटी पर केन्द्रीय कार्यपालिका समिति (Central Executive Committee) और प्रेसीदियम (Presidium) थी। अपनी सीमा के भीतर ग्राम सोवियत को संविधान ने शासन सत्ता का सर्वोच्च अंग माना था।

सोवियत राजनैतिक सिद्धान्तो के अनुसार मताधिकार वास्तव में कोई अधिकार नही है, केवल एक सामाजिक कर्तव्य है और इससे मजदूरो के अधिकारो की रक्षा होती है। रूस में रहने वाले विदेशी मजदूरो को भी मताधिकार मिला हुआ था। सन् १९३१ में १६०,००९,००० लोगो मे से ८४,०००,०००लोगो को मताधिकार मिला हुआ था। सूचीबद्ध मतधारको में से ७१८ प्रति सैकडा ने मतदान किया था। सोवियत शासन में मतदान करना मजदूरो की राजनैतिक शिक्षा का साधन समझा जाता था और मतधारकों को बराबर इस कर्तव्य में चूक न करने का आदेश दिया जाता था।

निर्वाचन और प्रतिनिधित्व का आधार—शासन की जिस इकाई का निर्वाचन होना होता था उसकी कार्यपालिका द्वारा नियुक्त कमीशन निर्वाचन की सब बातें, जैसे निर्वाचन-स्थान, समय, ढंग आदि निश्चय करता था। निर्वाचन क्षेत्र प्रादेशिक

१ कोल-ए गाइड टु मौडर्न पौलिटिक्स, पृ० २३।

न थे किन्तु व्यवसायिक थे, प्रत्येक फैक्टरी या सामूहिक कृषि फार्म स्वयं एक निर्वाचन-क्षेत्र होता था। गुप्त मतदान (Secret ballot) की प्रथा न थी, मतधारक निर्वाचन-पदाधिकारी के सम्मुख उपस्थित होकर अपना मत बता देता था। ग्राम व फैक्टरी सोवियतों में हाथ उठा कर मत लिये जाते थे। जो उम्मेदवार मतों की अधिक संख्या पाते थे वे निर्वाचित हो जाते थे। यद्यपि सोवियत शासन-विधान श्रमिकों की अधिसत्ता पर आधारित था, किन्तु नगरों, कारखानों और गाँव के रहने वालों के नागरिक अधिकार में बहुत विभिन्नता थी (यदि वोट इस नागरिकता के मूल्य को माप हो)। नगरों में या कारखानों में काम करने वाले २५००० व्यक्तियों का एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार था किन्तु गाँव में कृषि करने वाले १२५००० व्यक्ति एक प्रतिनिधि चुन सकते थे। इस भेद का कारण यह बतलाया जाता था कि पूँजीवादी से समष्टिवाद के परिवर्तन काल में राजनीति में शिक्षित व वर्गभेद को समझने वाले मजदूर के हाथ में नेतृत्व होना चाहिये। यह कहा जाता था कि जब कृषक लोग भी जाग्रत हो जायेंगे तब यह भेद मिटा दिया जायेगा।

ग्राम्य और फैक्टरी सोवियत—शासन की प्राथमिक इकाई ग्राम या फैक्टरी थी और प्रत्येक की अपनी निजी सोवियत (परिषद् समिति) होती थी जिसको सब स्थानीय मामलों के प्रबन्ध का काम सौंपा गया था। तीन सौ निवासियों वाले ग्राम या तो अपना शासन स्वयं करते थे या दूसरे गाँवों के साथ मिल कर संयुक्त शासन-प्रबन्ध करते थे। इसी प्रकार छोटे कारखाने जिनमें १०० से कम मजदूर काम करते थे वे दूसरों से मिलकर अपनी एक सोवियत स्थापित कर लेते थे। फैक्टरी समिति काम करने वालों के सामाजिक जीवन, पाठशाला, क्लब, निवास-स्थान (यदि इसका आयोजन कारखाने के पास ही होता था) और काम करने वालों की शिक्षा की देखभाल करती थी।[1]

डिस्ट्रिक्ट सोवियत—ग्राम व फैक्टरी सोवियतों के ऊपर जिले की सोवियत होती थी जिसमें जिले की ग्राम व फैक्टरी सोवियतों के प्रतिनिधि होते थे। इन प्रतिनिधियों को ग्राम के किसान या फैक्टरी के काम करने वाले न चुनते थे, किन्तु ग्राम व फैक्टरी सोवियत चुना करती थी। यही से अप्रत्यक्ष निर्वाचन (Indirect Election) जो रूस की शासन प्रणाली की विशेषता थी आरम्भ होता था। डिस्ट्रिक्ट सोवियत जिले के भीतर स्थानीय हित की बातों का प्रबन्ध करती थी और साथ साथ ऊपर से मिले आदेशों का भी पालन करती थी।

प्रादेशिक सोवियत (Regional Soviet)—अगली ऊँची प्रशासन-इकाई

१. एक गाइड टु मोडर्न पोलिटिक्स, पृ० २२६।

प्रादेशिक सोवियत थी जिसके आधीन अनेक डिस्ट्रिक्ट सोवियतें होती थी। प्रादेशिक सोवियत जिसको कांग्रेस भी कहते थे, मे प्रतिनिधियो को कुछ सख्या मे डिस्ट्रिक्ट सोवियत चुनती थी और कुछ प्रतिनिधि फैक्टरी सोवियतो द्वारा चुने जाते थे जिससे ग्राम सोवियतो की अपेक्षा फैक्टरी सोवियतो का अधिक महत्व था, क्योकि ग्राम प्रादेशिक काग्रेस में प्रत्यक्षरूप से अपना प्रतिनिधि चुनकर न भेजती थी। इन प्रादेशिक कांग्रेसो के कर्तव्य जिले की सोवियतो की अपेक्षा उच्च श्रेणी के होते थे। रूसी सघ के सात प्रजातन्त्र इकाई-राज्यो मे से प्रत्येक में कई प्रदेश (Regions) होते थे जो स्थानीय शासन की इकाई होते थे। प्रत्येक प्रादेशिक काग्रेस उपराज्य की काग्रेस में अपना प्रतिनिधि चुनकर भेजती थी। इसलिये प्रादेशिक कांग्रेस के ऊपर उपराज्य की काग्रेस होती थी।

स्वाधीन उपराज्य—रूसी सोवियत सघ मे स्वय अपना शासन करने वाले सात उपराज्य (Autonomous Republics) थे। इनमे से बहुत से उपराज्य स्वय छोटे स्वतन्त्र गण-राज्यो के सघ थे जिनका सोवियत ढग पर शासन प्रबन्ध होता था। उपराज्यो को शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, समाचार पत्रो आदि मे पूर्ण स्वतन्त्रता थी। प्रत्येक इकाई राज्य की अपनी काग्रेस थी जिसमे प्रादेशिक (Regional) कांग्रेसो के प्रतिनिधि सदस्य होते थे। सदस्यो की सख्या बहुत होती थी। इसकी साल मे दो बैठके होती थी। यह अपने सदस्यो में से कुछ व्यक्तियो को चुनकर केन्द्रीय कार्यपालिका समिति बनाती थी जिसको सामान्यतया कुछ अधिनियम सम्बन्धी व प्रकाशन सम्बन्धी अधिकार मिले होने थे। इस समिति में भी सदस्यो की सख्या बहुत अधिक होती थी। इसकी मास मे तीन बैठके होती थी। यह अपनी एक छोटी समिति चुनती थी जो इसकी ओर से कार्य करती थी, जब केन्द्रीय समिति की बैठके न होती थीं। इस छोटी समिति को प्रीसीडियम (Presidium) कहा जाता था। प्रीसीडियम के अतिरिक्त एक लोक-प्रबन्धक परिषद् (Council of People's Commissaries) भी सगठित की जाती थी जिसमे उपराज्य के शासन-विभागाध्यक्ष (Heads of Departments) होते थे। यह परिषद् मन्त्रिपरिषद् के समान थी, किन्तु इसे प्रीसीडियम के आदेशो को कार्यान्वित करना पडता था।

सातो उपराज्यो मे एक-सा ही प्रशासन होता था क्योकि इनकी कांग्रेसो मे अधिकतर सदस्य कम्यूनिस्ट पक्ष के ही लोग होते थे जिनकी नीति पक्ष के लिए निश्चित की हुई नीति होती थी। हर एक उपराज्य में रूस के सर्वोच्च न्यायालय की एक शाखा होती थी जिसके नीचे अन्य छोटे न्यायालय थे। इन सबसे मिलकर उपराज्य की न्यायपालिका थी।

रूस की केन्द्रीय सरकार—सोवियत सरकार सगठन के पिरैमिड की चोटी

पर सोवियत रूस की सघ या केन्द्रीय सरकार थी। केन्द्रीय प्रशासन की सबसे बड़ी सस्था सोशलिस्ट उपराज्यों के सघ की सोवियत-कांग्रेस थी। इसमें नगर या फैक्टरी सोवियतों के चुने हुये प्रतिनिधि सदस्य थे जो २५००० मतधारकों के लिये एक प्रतिनिधि के हिसाब से चुने जाते थे। इनके अतिरिक्त प्रादेशिक सोवियतें (Regional Soviets) भी प्रति १,२५,००० मतधारकों के लिये एक प्रतिनिधि चुनकर इस कांग्रेस में भेजती थीं। यह कांग्रेस रूसी सघ में सर्वोच्च सत्ताधारी सस्था थी। इसमें लगभग ४००० सदस्य बैठते थे। इसकी बैठक साल में एक बार हुआ करती थी। यह सघ की कौंसिल के सदस्यों का निर्वाचन कर उसका सगठन करती, जिससे यह कौंसिल विधान मण्डल का कार्य करती थी। इस कौंसिल में ४७२ सदस्य सातों उपराज्यों के अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने हुये होते थे। कांग्रेस एक कौंसिल आफ नेशनेलिटीज (Council of Nationalities) या उपराष्ट्र परिषद् भी चुन कर सगठित करती थी। इस कौंसिल के सदस्यों की सख्या १३८ थी जो इस हिसाब से निर्वाचित होते थे कि प्रत्येक स्वतन्त्र उपराज्य के लिये ५ सदस्य और प्रत्येक स्वाधीन प्रदेश (Region) के लिये १ सदस्य हो। ये दोनों कौंसिलें मिल कर सघ की सेंट्रल एक्जीक्यूटिव कमेटी (Central Executive Committee) अर्थात् केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति कहलाती थी। जब कांग्रेस की बैठक नहीं होती थी तब सोवियत रूस की यह ही सर्वाधिकारी निर्बन्धकारी, कार्यकारी और न्यायकारी सत्ताधारी सस्था थी। इसकी बैठक तीन मास में एक बार होती थी। बैठक न होने के समय प्रीसीदियम (Presidium) इसके कार्यों का सचालन करती थी प्रीसीदियम में २१ सदस्य थे। जिन शक्तियों को केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति प्रयोग कर सकती थी वे सब प्रीसीदियम को भी मिली हुई थीं। केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति एक लोक प्रबन्ध-परिषद् का सगठन भी करती थी जिसमें शासन विभागों के १७ अध्यक्ष होते थे। यह लोक-प्रबन्ध परिषद् (Council of People's Commissaries) ब्रिटिश मन्त्रिपरिषद् जैसी सस्था थी। इसमें जो शासनाध्यक्ष होते थे उनको दो सहायक और मिले होते थे। परराष्ट्र विभाग, युद्ध, गृह, विदेशी व्यापार, कृषि, स्थान-यातायात, जल-यातायात, डाक व तार, मजदूर व कृषकों का निरीक्षण, काष्ठ-उद्योग, सरकारी फार्म, अर्थ-विभाग इन सबके अध्यक्ष इस परिषद् में सदस्य होते थे। राजकीय योजना कमीशन (State Planning Commission) का प्रेसीडेंट भी इसका सदस्य था। परिषद् में एक प्रेसीडेंट और एक उप-प्रेसीडेंट था स्तालिन (Stalin) इसी परिषद् का सदस्य था।

अतएव अप्रत्यक्ष चुनाव के टेढ़े-मेढ़े ढग से चुनी हुई प्रीसीदियम व प्रबन्धक परिषद् (People's Commissaries) ये दो सस्थायें थीं जो रूस के प्रशासन का सचालन करती थीं। सघ सरकार के कर्तव्यों में विदेशी व्यापार, परराष्ट्र सम्बन्ध,

सुरक्षा, राष्ट्रीय आर्थिक नीति का निश्चय करना, घरेलू व्यापार, कर लगाना, मजदूरी और उसके सम्बन्ध मे कानून और सरकार की समान्य देखभाल ये सब शामिल थे।[1]

न्यायमण्डल—सोवियत रूस के सातो उपराज्यो मे न्यायमण्डल की एकरूपता थी। इसके सगठन का उद्देश्य इसको लोक बुद्धि-गम्य और ऐसा बनाना था जिससे सब उस तक पहुँच कर उसका उपयोग कर सकें। हर उपराज्य (Republic) में उपराज्य की कांग्रेस के द्वारा किये हुये कुछ परिवर्तनो के साथ एक सा ही न्याय-सगठन था। इस सगठन मे एक सर्वोच्च न्यायालय और अनेक प्रादेशिक (Regional Courts) और लोक-न्यायालय (People's Courts) होते थे।

छोटे न्यायालय—"न्यायालय की सबसे प्राथमिक इकाई लोक न्यायालय (People's Courts) थी इसमे एक न्यायाधीश और उसके दो सहयक होने थे। इन सबको समान अधिकार मिले हुये थे। सहायक न्यायाधीश का चुनाव ग्राम और फैक्टरी सोवियत द्वारा चुने हुए व्यक्तियों की सूची में से प्रदेश (Region) की कार्यपालिका समिति करती थी। वह किसी वर्ष मे लगातार छ दिन से अधिक न कार्य करता था। न्यायाधीश की नियुक्ति प्रादेशिक कार्यपालिका समिति एक वर्ष के लिय करती थी।

प्रादेशिक न्यायालय—हर प्रादेशिक न्यायालय में प्रादेशिक कार्य-कारिणी समिति से नियुक्त कई न्यायाधीश होते थे। यह प्रादेशिक न्यायालय लोक न्यायालयो के काम की देखभाल करता था। और उन निर्णयो के विरुद्ध अपील सुनता था। बडे मुकदमा में इसे प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार प्राप्त था।

सर्वोच्च न्यायालय—प्रादेशिक न्यायालय के ऊपर उपराज्य का सर्वोच्च न्यायालय था जिसके न्यायाधीश उपराज्य (Republic) की कार्यपालिका समिति द्वारा नियुक्त होते थे। उपराज्य में (Republic) सर्वोच्च न्यायालय ही उपराज्य का अन्तिम न्यायालय था। यह उन मुकदमो को सुनकर निबटाता था जो प्रादेशिक न्यायालय इसके पास भेजते थे। जिन मुकदमो को उपराज्य की कार्यपालिका समिति या उपराज्य का अभियोक्ता (Prosecutor) विशेष महत्वपूर्ण होने के कारण इस न्यायालय में भेजता था उनमें इस न्यायालय को प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार था। सरकार (Republican) के सदस्यो के अपराधो वाले मुकदमे भी इसी सर्वोच्च न्यायालय में प्रारम्भ होते थे।

सोवियत कानून में केवल सामान्य आदेश होते है जिनके अनुसार न्याय का निर्णय करना पड़ता है। कानून के प्रत्येक शब्द का पालन नही करना पडता। सोवियत सरकार के विरुद्ध किये गये अपराधो का दण्ड बडा कठिन दिया जाता था। काम से

---

१. ए गाइड टू मोडर्न पोलिटिक्स पृ० २२८।

बचने या आर्थिक कानूनो को तोडने के साधारण अपराधो के लिये दल का दण्ड दिया जाता था। ऐसे अपराधो के लिये एक से दस वर्ष तक के कारावास का दण्ड दिया जाता था। राज-विद्रोह के लिये मृत्यु सबसे ऊँचा दण्ड था। "सोवियत न्याय प्रणाली का उद्देश्य अपराधी को सुधारना और अपराध करने से रोकना है न कि निरद्देश्य को सताना।"

सघ का सर्वोच्च न्यायालय—केन्द्रीय कार्यपालिका समिति से लगा हुआ केन्द्रीय सर्वोच्च न्यायालय था। यह अन्य सघ-शासनो के समान स्वतन्त्र न्यायालय न होता था। इसमे एक सभापति, एक उपसभापति और ३० न्यायाधीश होते थे जो सब प्रीसीदियम द्वारा नियुक्त होते थे। यह न्यायालय तीन विभागो मे विभक्त था। दिवानी विभाग (Civil), दण्ड-विभाग (Criminal) और सेना विभाग (Military) सघ-सरकार के सदस्यों के अपराधो की यह न्यायालय परीक्षा करता था। घटक उपराज्यों के बीच झगडो की परीक्षा कर सघ की कार्यपालिका समिति से उनके विरुद्ध यह प्रार्थना कर सकता था कि वे उपराज्य सघ के सामान्य-निर्बन्धो के विरुद्ध आचरण करते है या दूसरे उप राज्य को हानि पहुँचाते है, सघ और उपराज्यो का सरकारो के आदेशो के वैध-अवैध होने के सम्बन्ध मे पूछे जाने पर यह न्यायालय केन्द्रीय कार्यपालिका समिति को अपनी राय भी देता था। इन न्यायालयो के अतिरिक्त विशेष प्रश्नो के लिये अन्य न्यायालय भी सोवियत सघ में बने हुए थे।

सोवियत शासन विधान का पुनर्निर्माण

मार्क्स के सिद्धान्तो के इस व्यवहारिक प्रयोग से यह मालूम हो गया कि इस समाजवाद की आदर्श-विचारधारा को व्यवहारिकता में लाना बडा कठिन है। अतएव शासन-विधान मे कई सशोधन किये गये जिनमे से मुख्य ये हैं :—

सुदूर पूर्वीय प्रदेशो को जो बडे निर्धन थे कर से मुक्त कर दिया गया। (१९३३)

मजदूरी उत्पादन के परिमाण व गुण, दोनो के आधार पर निश्चित की जाने लगी। (१९३४)

बालको को नागरिक शिक्षा व उनके राजनीतिक शिक्षण के सम्बन्ध मे जो नियम थे उनमे सशोधन कर दिया गया। (१९३४)

शासन प्रणाली तोड दी गई। (१९३४)

सामूहिक कृषि का कानून बदल दिया गया और वैयक्तिक सम्पत्ति का अधिकार विस्तृत कर दिया गया। (१९३४)

शिक्षा प्रणाली का पुनर्सगठन करने और शिक्षालयो में अनुशासन की मात्रा बढ़ाने के लिए कानून बनाय गये।

एक नये शासन-सविधान के विकास का प्रयत्न—उपर्युक्त परिवर्तनो से जिस प्रवृत्ति का परिचय मिलता है उसकी प्रेरणा से सन् १९३५ में एक समिति बनाई गई जिसका स्तालिन सभापति था। अन्य प्रमुख सदस्यो में लिट्वीनोव, रैडक, वाइसिस्की, वोरोशिलोव मौलोटोव, बुखारिन, अकौजोव आदि थे। इस समिति को शासन-विधान बनाने का काम सौंपा गया। एक वर्ष के परिश्रम के पश्चात् एक मसविदा तैयार हुआ जो केन्द्रीय कार्यपालिका समिति से स्वीकार होकर जनमत के जानने के लिये १२ जून सन् १९३६ को प्रकाशित किया गया। अखिल सोवियत कांग्रेस ने फिर इस पर विचार किया और ५ दिसम्बर सन् १९३६ को इसे पास किया। यह शासन-विधान सन् १९३७ में लागू किया गया।

कांग्रेस के विचारार्थ इस सविधान के मसविदे को उपस्थित करते हुये स्तालिन (Stalin) ने कहा कि इसकी उत्पत्ति पूंजी पद्धति की समाप्ति और सोवियत रूस मे समाजवादी पद्धति की विजय के फलस्वरूप हुई है। नये सविधान का प्रमुख आधार समाजवाद के सिद्धान्त हैं। जिसके प्रधान-अवलम्बों को प्राप्त किया जा चुका है, जैसे भूमि, बन, कारखानो, मशीनों व अन्य उत्पादन के साधनो पर समाज का स्वामित्व प्रपीडका और उत्पीडको का विनाश बहुसंख्यको की निर्धनता व अल्पसख्यको की विलासिता का निवारण, बेकारी को दूर करना प्रत्येक स्वस्थ शरीर वाले के लिये काम को एक कर्तव्य व सम्मान का स्थान देना।" स्तालिन ने कहा कि उस मसविदे मे जो मार्ग चला जा चुका है और जो सफलता प्राप्त की जा चुकी है उसका कुल योग व साराश इनमें दिया हुआ है। अर्थात् जो व्यवहार मे सत्य है उस अधिनियम का रूप दिया जा रहा है।

स्तालिन द्वारा सविधान का मूल्याकन—कांग्रेस के सामने सविधान के मसविदे की विशेषतायें बतलाते हुए स्तालिन ने कहा कि अब तक (१९३६) सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र सघ (सो० स० प्र० स०U. S. S. R) ने समाजवाद तो कायम कर लिया है जिसे मार्क्सवादी दूसरे शब्दों में साम्यवाद (कम्यूनिज्म) की पहली या निचली मजिल कहते हैं, जिसका बुनियादी सिद्धान्त यह सूत्र है कि "हरेक अपनी योग्यता के अनुसार काम करे और हरेक को उसके काम के अनुसार पारिश्रमिक दिया जाय" (Each to work according to his ability and to get wages according to his work.), इस सविधान की पहली विशेषता यह है कि उसमें इस पहली मजिल के हासिल हो जाने को मान लिया गया है।

अब अतिम मजिल अर्थात् कम्यूनिज्म की स्थापना करनी है जिसका सिद्धान्त यह सूत्र होगा कि "हरेक अपनी योग्यता के अनुसार काम करे और हरेक को उसकी आवश्यकताओं के अनुसार पारिश्रमिक दिया जाय" (Each to work accor-

ding to his ability and to get wages according to his needs), इसी दृष्टि से यह नविधान बनाया गया है। अब तक शोषण और शोषक वर्गों (Exploiters) का अन्त कर दिया गया है, बहुसंख्या की गरीबी और अल्पसंख्या के ऐशो-आराम का अंत हो चुका है, बेकारी का खात्मा हो चुका है; "जो काम नहीं करता वह खाना भी नहीं पायेगा" के सूत्र के अनुसार हर स्वस्थ नागरिक के लिये काम करना एक फर्ज और सम्मानित कर्त्तव्य बन गया है काम पाने का अधिकार मिल गया है, यानी हर नागरिक को अधिकार मिल गया है कि उसे काम जरूरी दिया जायगा; आराम करने और अवकाश (फुरसत) पाने का अधिकार मिल गया है, और शिक्षा पाने का अधिकार मिल गया है, इत्यादि। इस नये संविधान की यह दूसरी विशेषता है।

पूंजीवादी देशों में विभिन्न वर्ग हैं जिनमें वर्ग संघर्ष (Class struggle) चलता रहता है, वहां शासन की बागडोर किसी राजनीतिक दल के हाथ में हो, परन्तु राज्य द्वारा समाज के संचालन का काम (अधिनायकत्व) पूंजीपति वर्ग के हाथ में होता है, और यह इसलिये होता है कि सम्पत्तिशाली वर्गों द्वारा वांछित और उनके लिये लाभदायक सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ बनाया जाय। इसके विपरीत सो० स० प्र० स० का नया संविधान दूसरे आधार पर बनाया गया है, वह आधार यह है कि अब यहां समाज में कोई विरोधी वर्ग नहीं रहे हैं, समाज में किसान और मजदूर, दो मित्रता रखनेवाले वर्ग हैं, इन्हीं वर्गों के हाथ में सत्ता की डोर है, राज्य द्वारा समाज के संचालन का काम (अधिनायकत्व) समाज के सबसे ज्यादा उन्नत वर्ग, मजदूर वर्ग के हाथ में है, और शासन विधान की जरूरत इसलिये है कि श्रमिकों द्वारा वांछित और उनके लिये लाभदायक सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ बनाया जाय। यही इस मसविदे की तीसरी विशेषता है।

पूंजीवादी शासन विधान बिना कहे कुछ और बातों को मानकर बनाये जाते हैं, जो यह है कि विभिन्न जातियों और वंशों के अधिकार समान नहीं हो सकते, कुछ अधिकार रखने वाली कौमें होती हैं और दूसरी अधिकार न रखने वाली, तथा एक तीसरा भी वर्ग होता है जो और भी कम अधिकार रखने के योग्य है जैसे उपनिवेशों की जनता। इसके विपरीत, सो० स० प्र० स० का शासन विधान अन्तर्राष्ट्रीयता से ओतप्रोत है। इसके अन्तर्गत सभी कौमों और नस्लों के अधिकार बराबर हैं; रंग, नस्ल या भाषा तथा संस्कृति अथवा राजनीतिक विकास के कारण कोई और भेद कौमों की असमानता का आधार नहीं हो सकता; ऐसे कोई भी भेद विभिन्न कौमों में क्यों न हो, लेकिन समाज के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों में कौमों और नस्लों को समान अधिकार मिलना चाहिये। यही इस नये शासन विधान की चौथी विशेषता है।

नये शासन विधान की पाचवी विशेषता यह है कि वह पूरी तरह जनवादी (Completely democratic) है। पूंजीवादी शासन विधान या तो नागरिको के अधिकारो की समानता और जनवाद को ठुकराते है, और या वे उन सिद्धान्तो को कहने मात्र के लिये स्वीकार तो करते है परन्तु शासन का ढाँचा ऐसा रखते है कि जनवाद वास्तव मे सीमित हो जाता है (जैसे स्त्रियो को समानता नही मिलती) या कुचल जाता है। परन्तु सो० स० प्र० स० के सविधान में ऐसे कोई अपवाद नहीं। उसकी नजर में सभी नागरिक समान है। न तो सम्पत्ति की हैसियत, न राष्ट्रीय पैदाइश, न लिंगभेद (Sex difference) और न पद, बल्कि व्यक्ति की योग्यता और उसका परिश्रम ही उसकी स्थिति निर्धारित करती है।

इस सविधान की अन्तिम विशेषता यह है कि जो पूंजीवादी शासन-विधान नागरिको की समानता मानते है, किन्तु समाज में आर्थिक तथा अन्य भेदो के कारण वहाँ मूल अधिकार सभी नागरिको को उपलब्ध नही होते क्योंकि निर्धन नागरिको को उचित साधन प्राप्त नही, किन्तु हमारे सविधान म नागरिको के अधिकारो को भोगने पर खास जोर दिया जाता है। नागरिको को शोषण-मुक्तकर दिया गया है और उनके अधिकारो की गारटी करदी गई है, यही वास्तविक तथा समाजवादी जनवाद है। इसके बाद स्तालिन ने उन बातो का भी उत्तर दिया जो दूसरे देशो के लोगो ने नये सविधान की विपरीत आलोचना करते समय कहा थी। कांग्रेस ने हर्ष दिखाते हुए इस सविधान की स्वीकृति की।

वैधानिक दृष्टि से रूसी सविधान की तुलना

उपरोक्त में स्तालिन ने रूस के सविधान की विशेषताएँ अपनी समाजवादी अथवा कम्युनिस्ट दृष्टि से बताई है। किन्तु राजनीति के विद्यार्थी और जिज्ञासु के के लिये इस सविधान की अन्य वैधानिक विशेषताएं विभिन्न देशो के सविधानो से तुलना करने से मालूम होती है। सोवियत सविधान में छोटे-छोटे तेरह अध्याय और १४२ अनुच्छेद (धारायें) है। प्रथम अध्याय की बारह धाराओ में कहा गया है कि सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र मजदूरो और किसानो का एक समाजवादी राज्य है। इसका राजनीतिक आधार श्रमिक-जनता (Working People) के प्रतिनिधियो की सोवियतें है।[1] राज्य की सारी सत्ता श्रमिक जनता के हाथ मे है, जिसका प्रतिनिधित्व

१ सोवियत श्रमिको की एक सभा है। इसका सबसे पहले आरम्भ १९०५-०७ में हुआ था, जब श्रमिक जनता के प्रतिनिधियो ने नगरो मे, इनकी स्थापना की थी। जब १९१७ की क्रान्ति हुई तो ऐसी सभाए अधिक सख्या में बनाई गई। अब वे विभिन्न स्तरो पर, गाँव व फैक्टरी व कृषि फार्म से लेकर पूरे राज्य तक की सोवियते हैं।

उसके प्रतिनिधियो की सोवियतें करती हैं। राज्य का आर्थिक आधार है पैदावार के औजारो तथा साधनों का समाजवादी स्वामित्व। काम करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है, इसलिये जो काम नही करता वह खाना भी नही पायेगा।

अध्याय २ के सत्रह धाराओं में राज्य का ढाँचा वर्णित है। सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र सघ एक सघात्मक राज्य(Federal State)है। जिसमें घटक राज्य १६ सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र (Republics) हैं। १४वी धारा में सघ का क्षेत्राधिकार निर्धारित है, अन्य मामले घटक राज्यो के हाथ में हैं। धारा १७ के अनुसार घटक राज्यो(Union Republics)को सघ से अलग हटने का अधिकार है। प्रत्येक घटक राज्य का पृथक् शासन विधान है जो सो० स० प्र० स० के सविधान के अनुकूल बनाया गया है, और सघ प्रजातन्त्र की स्वीकृति बिना उसके क्षेत्र (इलाका) मे परिवर्तन नही हो सकता। इन घटक राज्यों के विदेशी राज्यो के साथ सीधे सम्बन्ध कायम करने और उनके साथ समझौते करने तथा राजनीतिक और राजकीय प्रतिनिधियो की अदला-बदली करने का अधिकार है, हरेक प्रजातन्त्र अपनी निजी प्रजातान्त्रिक सैनिक शक्तियाँ रखता है (धारा १८ अ व १८ आ)। ऐसे अधिकार सघवाद के सिद्धान्तो के प्रतिकूल हैं और वे रूसी सघवाद को अन्य (उदाहरणार्थ अमेरिकन व स्विस) सघवादो से भिन्नता देते हैं। सो० स० प्र० स० के कानून सारे सघ मे लागू होते हैं। यदि किसी घटक राज्य का कानून सघराज्य के कानून से टकराता है, अर्थात् उसके विपरीत होता है तो वह अमान्य हो जाता है। धारा ८१ के अनुसार सारे सघ की एक ही नागरिकता है, घटक राज्य (सघ प्रजातन्त्र) का हरेक नागरिक सो० स० प्र० स० का नागरिक होता है।

यद्यपि सो० स० प्र० स० एक सघीय राज्य (Federal State) है किन्तु अन्य सघीय राज्यो से यह कई प्रकार भिन्न है। इस सघ के अन्तर्गत सो० प्रजातन्त्र राज्य (घटक राज्य है) उनके कई स्वय उप-सघ है जैसे (१) धारा २२ में वर्णन किया गया है कि रूसी सोवियत सघात्मक समाजवादी सघ (R. S. F. S. R.) में विभिन्न ६ प्रदेश, और ये सभी प्रदेश भी छोटे छोटे उपराज्य हैं जिनमे कई स्वायत्त क्षेत्र (Autonomous Regions) हैं जो स्वय स्वायत्त क्षेत्रो से बने हुए उपसघ हैं। इसी प्रकार उक्रेनियन सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र (Ukranian Soviet Socialist -Republic) भी सघो का सघ है (धारा २३)। अन्य ८ घटक राज्य, आजरबैजान, जार्जियाई, उजबेक, ताजिक, कजाक, ब्रेलोरूमी (Brylo-Russia), तुर्कमान, किरगिज, लिथूनाई, प्रजातन्त्र घटक राज्य भी उपसघ हैं। अतएव सो० स० प्र० स० को सघो का सघ कहना (Federation of Federations) अनुचित नहीं होगा।

अध्याय ३ की २७ धाराओं में सो० स० प्र० स० की राज्यसत्ता की उच्च कमेटियो का वर्णन है जिनमें सर्वोच्च सोवियत(Supreme Court) विधान मण्डल है जिसकी शक्तियाँ धारा १४ में वर्णित हैं, इसके दोनो भवनो द्वारा निर्वाचित एक प्रीसीदियम है जो धारा ४९ मे वर्णित शक्तियों का उपभोग करती है, और जो रूसी सविधान की एक विशेष सस्था है जिसके सदृश्य अन्य सविधानो में कोई सस्था नही है।

इसी प्रकार अध्याय ४ मे ६ धाराओ मे घटक राज्यो की सोवियतो और प्रीसीदियमो का वर्णन है।

अध्याय ५ की १४ धाराओ मे सो० स० प्र० स० की वास्तविक कार्यकारिणी मन्त्रिमण्डल(Council of Ministers)की रचना और शक्तियो का वर्णन किया गया है और यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि सर्वोच्च सोवियत तथा प्रीसीदियम के साथ उसके क्या सम्बन्ध है।

अध्याय ६, ७ तथा ८ में वे ही बाते घटक राज्यो के बारे में कही गई हैं जो अध्याय ३, ४ व ५ मे सो० स० प्र० स०, के बारे में दी गई हैं। अध्याय ९ मे सो० स० प्र० स० के न्याय विभाग (अदालते और प्राक्यूरेटर) के विषय में वर्णन है। अध्याय १० मे नागरिको के मूल अधिकार तथा कर्त्तव्य स्पष्ट किये गये हैं। अध्याय ११ मे विभिन्न सस्थाओ के चुनाव की विधि वर्णित है, अध्याय १२ में राज्य-चिह्न तथा झण्डा व राजधानी सम्बन्धी ३ धारायें हैं और अध्याय १३ की एक धारा (धारा १४६) मे सविधान के सशोधन का तरीका दिया गया है जो यह है "सो० स० प्र० स० के शासन विधान में सिर्फ सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च सोवियत के फैसले से ही सशोधन हो सकता है। उसके प्रत्येक भवन के वोटो का कम से कम दो-तिहाई बहुमत होने पर ही वह स्वीकृत किया जायगा।" सशोधन की प्रक्रिया से यह स्पष्ट है कि अन्य सघीय-विधानो की अपेक्षा जो अनम्य(Rigid) हैं, सो० स० प्र० स० का सविधान नम्य (flexible) है।

साराश में हम, वैधानिक दृष्टि से सो० स० प्र० स० के सविधान मे निम्न विशेषतायें देखते हैं —

(१) सो० स० प्र० स० का आधार साम्यवादी है जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों को कार्यान्वित करता है,

(२) इस राज्य मे श्रमिक और किसान सत्ताधारी हैं, इन्ही के द्वारा निर्वाचित सस्थाये शासन करती है,

(३) सो० स० प्र० स० सघीय राज्य (Federal state) है परन्तु यहाँ के सघवाद (Federalism) और अन्य सघवादो मे निम्न मुख्य भेद हैं —

(क) रूसी संघवाद में घटक राज्य स्वयं उत्तरदायी है, ऐसा और संघों में नहीं है;

(ख) रूसी संघवाद में घटक राज्यों को संघ से अलग होने का अधिकार प्राप्त है, परन्तु अन्य संघ अटूट हैं जहाँ घटक राज्यों को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं,

(ग) कुछ रूसी घटक राज्यों को सेना रखने तथा विदेशों से पृथक् और सीधा सम्पर्क रखने और राजदूतों को अदल बदल करने का अधिकार है, अन्य संघों में ऐसा नहीं हो सकता

(घ) सो० स० प्र० म० का शासन विधान अन्य संघीय शासनों की अपेक्षा नम्य (Flexible) है,

(ङ) सो० स० प्र० म० में न्यायपालिका को न्यायिक पुनर्विलोकन तथा कानूनों की अवैधता घोषित करने का अधिकार नहीं, अन्य संघों की न्यायपालिकाओं को ये अधिकार प्राप्त हैं,

(च) सो० म० प्र० म० में केन्द्र और घटक राज्यों के बीच शक्ति विभाजन उतना स्पष्ट तथा अनम्य नहीं जैसा अन्य संघों में है।

(४) सो० म० प्र० म० में जाति, नस्ल, लिंग-भेद, धर्म शिक्षा के बिना सभी नागरिकों को वयस्क-मताधिकार है। हरेक नागरिक का एक वोट होता है। चुनाव प्रत्यक्ष (*Direct*) होते हैं, *जिसमें वोट गुप्त रूप (Secret Ballot) से दिये* जाते हैं।

(५) कुछ वैयक्तिक-सम्पत्ति मान्य की गई है—सामूहिक कृषि-भूमि उनकी संस्थाओं के लिये बिना कुछ मूल्य दिये हुये दे दी गई। सामूहिक-कृषि संस्था Collective Farm) के प्रत्येक गृहस्थी को अपने प्रयोग के लिये घर से लगी हुई जमीन का टुकड़ा और अन्य आवश्यक वस्तुयें जैसे रहने का मकान, पशु, मुर्गियाँ, व अन्य खेती करने का सामान दे दिया गया। उन किसानों व कारीगरों की आय व वैयक्तिक सम्पत्ति उनके लिये कानून से सुरक्षित कर दी गई जो केवल अपने परिश्रम से कमाई गई हो और दूसरों की मेहनत से प्राप्त न की गई हो। नागरिकों की आय, उनकी बचत, रहने का मकान व अन्य वस्तुयें, घर की चीजें, दिन प्रतिदिन के जीवन यापन की आवश्यक वस्तुयें आदि को अपनी वैयक्तिक सम्पत्ति मानकर रखने का अधिकार कानून से दे दिया गया है। इस वैयक्तिक सम्पत्ति का पिता से प्राप्त करने का अधिकार भी कानून से मान्य कर दिया गया है।

(६) नागरिकों के मूल अधिकार और कर्त्तव्य—नये शासन विधान की एक विशेषता यह है कि इसके दसवें अध्याय में नागरिकों के मौलिक अधिकारों की घोषणा कर दी गई। मौलिक अधिकार ये हैं

(क) काम पाने का अधिकार जिसका अवश्यक प्रबन्ध राष्ट्र की समाजवादी आर्थिक व्यवस्था, सोवियत समाज के बढ़ते हुये उत्पादन, आर्थिक सकटों के अभाव और बेकारी के निवारण द्वारा किया गया है (धारा ११८)।

(ख) *विश्राम का अधिकार जिसके लिये अधिकतर काम करनेवालों के* काम के घण्टे घटा कर सात घण्टे कर दिये गये हैं। कर्मचारियों व मजदूरों को सवेतन वार्षिक छुट्टी दी जाती है, और स्वास्थ्य गृहों, विश्राम गृहों और चिकित्सालयों का प्रबन्ध है (धारा ११९)।

(ग) वृद्धावस्था, रोगावस्था या काम करने की सामर्थ हीनता की अवस्था में जीवन यापन की उचित व्यवस्था। इसके लिये श्रमिकों का राज्य की ओर से बीमा की व्यवस्था है जिसका व्यय सरकार अपने ऊपर लेती है, नि शुल्क चिकित्सा की जाती है और अनेक स्वास्थ्य सुधारने के स्थानों का प्रबन्ध है (धारा १२०),

(घ) शिक्षा का अधिकार, इसके लिये नि शुल्क सार्वजनिक प्राथमिक अनिवार्य शिक्षा, राज्य की ओर से माध्यमिक शिक्षालयों के बहु-सख्यक विद्यार्थियों के लिये छात्रवृत्तियाँ, नि शुल्क उच्च शिक्षा, शिक्षालयों में मातृभाषा मे शिक्षण, नि शुल्क व्यवसायी शिक्षा और फॅक्टरियों, फार्मों, ट्रैक्टर, स्टेशनों पर काम करने वालों का कृषि सम्बन्धी शिक्षा, इन सबका *प्रबन्ध किया जाता है (धारा १२१)।*

(ङ) अधिकारों के उपभोग मे स्त्री और पुरुष में भेद नही किया जाता। पुरुषों की तरह स्त्रियों को भी काम करने, विश्राम शिक्षा, आदि का अधिकार है। माँ व बच्चे की आवश्यक देख भाल, गर्भावस्था में सवेतन छुट्टी, अनेक जच्चा-घरों का प्रबन्ध व छोटे बालकों के लिये रहने, *खेलने व पढ़ने का आयोजन ये सब होता है (धारा १२२)।*

(च) जातीयता या राष्ट्रीयता के आधार पर, आर्थिक, राजकीय सास्कृतिक व सामाजिक क्षेत्र मे व नागरिक अधिकारों के उपभोग में अन्तर नही किया जाता है। इसका उल्लघन दण्डनीय है (धारा १२३)।

(छ) आत्मिक स्वतन्त्रता सुरक्षित कर दी गई है। अतएव रूस मे धर्ममठ (Church) *राज्य से पृथक् है और शिक्षालय भी धर्ममठ से पृथक* है (धारा १२४)।

(ज) नागरिकों को वक्तृता देने, एकत्र होने, सस्था बनाने, सड़कों पर जलूस निकालने और प्रदर्शन करने की स्वतन्त्रता दी जाती है। इसके साथ साथ समाचार छपवाकर प्रकाशित करने की भी स्वतन्त्रता है। इन

सत्रके लिये मजदूरो और उनकी सस्थाओ को छापने की मशीनें, कागज, मकान, सडकें, बातचीत करने के साधन और अन्य सुविधायें उपलब्ध कराई जाती है (धारा १२५)।

(झ) किसी भी व्यक्ति के शरीर को व्यर्थ ही कष्ट नही पहुँचाया जा सकता। अभियोक्ता की आज्ञा से या किसी न्यायालय के निर्णयानुसार ही कोई भी व्यक्ति पकड कर बन्दी बनाया जा सकता है अन्यथा नही। कानून से व्यक्तियो के रहने का स्थान सुरक्षित स्थान माना गया है जहाँ हर कोई बिना मकान के स्वामी की इच्छा के नही जा सकता। व्यक्तियो का पत्र व्यवहार भी इसी प्रकार सुरक्षित रहता है। पत्रो को खोलकर उनका भेद खोलना अवैध है (धाराएँ १२७-१२८)।

(ञ) कर्त्तव्य—सोवियत नागरिक को (१) सविधान के अनुसार कार्य करना पडता है। निर्बन्धो का पालन, काम करने के सम्बन्ध मे अनुशासन मानना अपने सामाजिक कर्तव्यो को सच्चे मन से पूरा करना और समाजवादी जनसगठन के नियमो का पालन करना, ये सब नागरिक को करने पडते है। (२) उसे सार्वजनिक धन सम्पत्ति की रक्षा समाजवादी प्रणाली का पुनीत अलघ्य आधार मानकर और श्रमिको के पूर्ण सास्कृतिक जीवन का स्रोतसमझकर करनी पडती है (धारा १३०)।

(ट) सैनिक शिक्षा सबके लिये अनिवार्य है, क्योकि देश की सुरक्षा करना प्रत्येक नागरिक का पवित्र कर्त्तव्य है। देश के प्रति विद्रोह, शपथ का उल्लघन, शत्रु से जाकर मिलना, राज्य की सैन्य-शक्ति को हानि पहुँचाना, विदेशी राज्य के लिये गुप्तचर का कार्य करना, इन सब के लिये कडे दण्ड का विधान है (धारायें १३१-१३३)।

(७) कार्यपालिका और विधान मण्डल के सम्बन्धो की दृष्टि से सो० स० प्र० स० की कार्यपालिका ससदात्मक (Parliamentary Executive) है किन्तु यहाँ केवल एक ही राजनीतिक दल, कम्युनिस्ट पार्टी, के होने के कारण, जिसका शासन पर पूर्ण अधिकार है, यह ससदात्मक कार्यपालिका केवल नामधारी ससदात्मक है, क्योकि जैसा अध्याय २ में तथा अन्यत्र भी स्पष्ट किया गया है, ससदात्मक प्रणाली के लिये दो राजनीतिक दलो का होना आवश्यक है। इस प्रणाली का सिद्धान्त है कि एक दल (जो बहुमत में हो) मन्त्रिपरिषद् बनावे और दूसरा, विरोध में रहता हुआ, शासन की आलोचना करे। किन्तु स्रुश्चेव ने कहा है कि जहाँ राज्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में मतभेद न हो, राज्यसत्ता सभी श्रमिको और कृपको के हाथ में हो, जहाँ वर्गविहीन समाज हो, जहाँ सभी नागरिको को समानाधिकार हो, वहाँ पर विभिन्न

दलो का होना अनावश्यक तथा निरर्थक है। अतएव सो० स० प्र० स० में एकदलीय (Single Party) शासन व्यवस्था है।

(८) संविधान में कम्यूनिस्ट पार्टी को मान्यता ही नही दी गई, वरन् उसको एक मात्र राजनीतिक दल समझ कर अधिकार दिय गये है। धारा १२६ मे कहा गया है कि "श्रमजीवी वर्ग और श्रमिक किसानो तथा श्रमिक बुद्धिजीवियो (Working intelligentsia) के वर्गों को सबसे सक्रिय राजनीति से जागरूक सोवियत सघ कम्युनिस्ट पार्टी में स्वेच्छा पूर्वक सगठित होने का अधिकार है, और कम्युनिस्ट समाज (जनता) का निर्माण करने के लिये किये जाने वाले सघर्ष में यह दल मार्गदर्शक (vanguard) तथा राजकीय सस्थाओ का मूलकेन्द्र है।" इसके अतिरिक्त धारा १४१ मे कम्यूनिस्ट पार्टी को अधिकार दिया गया है कि वह अपनी सगठित सस्थाओ द्वारा विभिन निर्वाचनो के लिये लोगो को नामाकित (nominate) करे। सो० स० प्र० म० मे कम्यूनिस्ट पार्टी के महत्व और पद का आगे अधिक सविस्तार वर्णन दिया गया है।

(९) इस सविधान की एक अभूतपूर्व विशेषता है उसका जनतान्त्रिक केन्द्रवाद (democratic centralism) जिसका सोवियत नेता बडे गर्व से समर्थन करते हैं। इस नवीन सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वाले कम्युनिस्ट नेता कहते है कि रुस में उत्पादन के सभी साधनो पर जनता का अधिकार है, सारी सम्पत्ति के स्वामी सो० म० प्र० स० के समस्त श्रमिक और कृषक, सामूहिक हैसियत से, स्वामी है, यहाँ शोषक और शोषित वर्गों का नितान्त अभाव है। ऐसा आर्थिक आधार राज्य का होने के कारण सम्पत्ति और उत्पादन के साधनो का केन्द्रीय करण (Centralisation) हो गया है। तो यह आवश्यक है कि उसका प्रबन्ध भी नये ढग से होना चाहिये। लैनिन ने पहले पहल ऐसी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के लिये आवश्यक प्रशासन तथा प्रबन्ध के तरीको को समझाते हुए कहा कि उसमें प्रजातन्त्रीय केन्द्रवाद (democratic centralism) आवश्यक है। इसका सूत्र यह है कि राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था की नीति का केन्द्रित्व होते हुए भी उसका सचालन स्थानीय सस्थाओ की प्रवृत्ति तथा उनसे अपना मत व्यक्त करने की स्वतन्त्रता तथा आवश्यकताओ की पूर्ति के साथ-साथ राष्ट्र की नीति से सतुलन रहना चाहिये।

क्योंकि सारी सम्पत्ति और उत्पादन के साधनो का केन्द्रीयकरण किया गया है, इसलिये यह आवश्यक है कि उसके प्रबन्ध को नीति का भी केन्द्रीयकरण किया जावे। इसी उद्देश्य से कम्यूनिस्ट पार्टी शासन की प्रक्रिया और नीति को, सदस्यों द्वारा स्वतन्त्र विचारो के प्रकट करने के पश्चात्, निर्धारित करती है। सर्वोच्च सोवियत तथा अन्य सोवियतो के सदस्यो को उस नीति पर अपने विचार प्रकट करने की पूरी स्वतन्त्रता

है, किन्तु एक बार बहुमत से नीति निर्धारित हो जाने के पश्चात् सारे संघ में उसका पालन किया जाता है। फलत यह नीति बिना किसी दलीय भेद-भाव के कार्यान्वित की जाती है, केन्द्र म, संघ के घटक राज्यो तथा उनके अन्तर्गत सभी स्तरों की सोवियतों में, अर्थात् कृषि-फार्मों, फैक्टरियों और सभी प्रकार के कारखाना की सोवियतो में। क्योंकि इन सभी सोवियतो का प्रबन्ध श्रमिकों अथवा उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों के ही हाथ में है और क्योंकि वे लोग अपनी स्थानीय परिस्थितियों और आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए अपने सुपुर्द किये गये उत्पादन की वृद्धि केन्द्रीय सर्वोच्च सोवियत की निर्धारित नीति के अनुकूल अथवा उसके अन्तर्गत करते है, प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद सफलता पूर्वक चलता है।

सोवियत व्यवस्था में आर्थिक मामलो का प्रबन्ध तथा राजनीतिक शासन पारस्परिक अनुकूलता से ही चलते है। राजनीतिक नेतृत्व में कम्यूनिस्ट पार्टी के स्थानीय संगठन ही आर्थिक साधनों और प्रबन्ध के लिये जिम्मेदार हैं। यह पार्टी इस सिद्धान्त के अनुकूल काम करती है कि जो लोग आर्थिक उत्पादन में संलग्न हैं वे केवल आर्थिक प्रबन्धक ही न रहे, वरन् राजनीतिज्ञता से ओत-प्रोत रहें और प्रबन्ध कार्य में जनवादी आग्रह तथा आत्मदर्शी भाव से काम करते हुए कुछ सक्रियता दिखावें।

अक्टूबर की क्रान्ति के फलस्वरूप सारी सम्पत्ति पर श्रमिकों का अधिकार हो गया था। उस क्रान्ति का उद्देश्य था कि एक ऐसी आर्थिकता स्थापित हो जो केन्द्रीय होती हुई सारे राष्ट्र की समाज के हितों के अनुकूल रहे। समाजवादी सिद्धान्तों के अनुकूल समाज स्थापित करने के लिये यह आवश्यक है कि राष्ट्र की आर्थिक एकरूपता (uniform national economy) स्थापित हो, और यह तभी हो सकता है जब विभिन्न आर्थिक योजनाओं की पूर्ति में पूर्णतया अनुशासन रखा जावे। समाजवादी राज्य तभी स्थापित हो सकता है जब सारे राष्ट्र की एक सम योजना हो और केन्द्र से ही उसका प्रबन्ध संचालित किया जावे। लेनिन ने कहा था कि समाजवाद का अर्थ है कि केन्द्रीय आर्थिक व्यवस्था, केन्द्र द्वारा संचालित, का निर्माण किया जावे।[1] और यही तो किसी समाजवादी राज्य का आर्थिक और संगठनीय कृत्य है। आर्थिक व्यवस्था में केन्द्रवाद (centralism) का अर्थ है कि उस आर्थिक व्यवस्था का प्रबन्ध एक केन्द्रीय संस्था करे, जो सारे देश के लिये उत्पादन की संख्या अथवा राशि निश्चित करे, वितरण के, भारी निर्माणों के, आर्थिक, श्रमिक, आदि मामलों पर अन्तिम निर्णय दे।

नये समाजवादी ढांचे का आधार समाजवादी केन्द्रवाद ही है। इस केन्द्रवाद

1 "the building of centralised economy, an economy directed from the centre."

का सचालन श्रमिकों के हित के लिये जनवादी शासन है, यह केन्द्रवाद आम जनता की सक्रियता और उपक्रम को बढाता है। साम्यवाद के प्रसार के लिये यह आवश्यक है कि समाजवादी प्रजातन्त्र को लगातार बढाया जावे ताकि दिन प्रतिदिन अधिकतर लोग राजनीतिक और आर्थिक मामलो में भाग लें और आर्थिक तथा सास्कृतिक क्षेत्रो मे स्थानीय सस्थाओं का महत्व और कार्य निरन्तर बढता रहे। लेनिन ने कहा था "हम प्रजातन्त्रीय केन्द्रवाद के समर्थक हैं। और प्रत्येक को यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिये कि नौकरशाही केन्द्रवाद और प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद के बीच एक खाई (gulf) है, किन्तु वही खाई प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद को अराजकता से जुदा रखती है।'

सोवियत राज्य एक विशेष प्रकार का राज्य है, उसके केन्द्रवाद में प्रजातन्त्र भरा है, यही प्रजातन्त्रवाद सोवियत शक्ति का तत्व है—श्रमिकों और कृषकों की राजनीतिक शक्ति है।

इस प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद को प्रायोगिक रूप देने के लिये देश मे एक सर्वोच्च कौंसिल बनाया गया जिसे राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के सचालन का कार्य सौंपा गया (दिसम्बर १९२७)। इसकी स्थानीय शाखायें खोली गईं जो अपने-अपने निर्धारित क्षेत्र मे आर्थिक उत्पादन आदि के लिये उत्तरदायी थी। सोवियत राज्य को एक आर्थिक सर्वसम्पन्न इकाई बनाने के लिये देश को विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित किया गया, (१९२०)। सन १९३२ में देश के विभिन्न आर्थिक विभागों की स्थापना की गई, जैसे लकडी, भारी और हलके उद्योग, आदि। मार्च १९४६ मे इन विभागों को मन्त्रि-विभाग का पद मिला। घटक राज्यों की शक्तियाँ बढाई गईं और १९५४ और १९५६ के बीच १५,००० औद्योगिक धन्धे घटक राज्यो को सौंप दिये गये। फलत उन राज्यो की सक्रियता बढ गई और आम जनता को प्रोत्साहन मिला।

तभी से निरन्तर, आर्थिक उत्पादन को बढाने के लिये विभिन्न निम्न स्तर की सोवियतो को निश्चित तथा निर्धारित धन्धे सौंप दिये गये हैं। आम श्रमिक बडे उत्साह से भाग लेकर दिन प्रतिदिन उत्पादन वृद्धि कर स्वय अधिकाधिक कमाते और अधिक सुख-सामग्री पाते है। उनकी सक्रियता बढ रही है। सभी क्षेत्रो, आर्थिक, सामाजिक, सास्कृतिक, राजनीतिक, में दिन प्रतिदिन आम जनता भाग लेकर केन्द्रीय नीति का पालन करती प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद को प्रायोगिक रूप देती है।

अध्याय २७

सोवियत संघ का राजनीतिक ढांचा

'हम प्रजातान्त्रिक या केन्द्रवाद के समर्थक हैं। प्रत्येक को यह भली भांति समझ लेना चाहिये कि कौन सी खाई प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद को नौकरशाही केन्द्रवाद तथा अराजकता से पृथक् करती है।"
—लेनिन

सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्रीय संघ का सारा आर्थिक ढांचा प्रजातान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त को कार्यान्वित करने के लिये बनाया गया है। सोवियत रूस में आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं में वह भेद नहीं किया गया जो अन्य प्रजातन्त्रीय देशों में है। सोवियत नेताओं ने अपने राजनीतिक ढांचे (Political Structure) को आर्थिक ढांचे के अनुकूल रखा है। क्योंकि संविधान ने यह स्पष्ट कर दिया है कि राज्य में श्रमिक तथा कृषक सर्वसत्ताधारी हैं, अतएव इस जनवादी राज्य के सारे अधिकारी उस जनता के प्रतिनिधि हैं। सोवियत संघ में केन्द्रीय सरकार का ढांचा और घटक राज्यों संघ प्रजातन्त्र (Union Republics), स्वायत्त शासित प्रजातन्त्र (Autonomous Republics), स्वायत्त शासित क्षेत्र (Autonomous Regions) आदि सभी शासकीय इकाइयों का शासकीय ढांचा एक रूप है। अतएव संघ का शासकीय ढांचे का विस्तृत वर्णन करना अत्यन्त शिक्षाप्रद होगा। सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्रीय संघ एक संघ राज्य (Federal State) है जिसमें १६ घटक राज्य, रूसी, यूक्रेनी, बेलोरूसी, उजबेक, कज़ाक, जार्जियाई, आज़रबैजानी, लिथूनियाई, मोल्देवियाई, लैतवियाई, किरगिज़, ताजिक, आरमीनियाई, सोलह सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र, घटक राज्य हैं (धारा १३)।

संघ की शक्तियां और संगठन

संविधान के दूसरे व तीसरे अध्याय में राज्य का संगठन (Organisation of the State) उसकी विभिन्न संस्थाओं का वर्णन दिया गया है।

केन्द्रीय सरकार की शक्तियां—सोलह सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र राज्यों के मिलाने से संघ का निर्माण हुआ है। इन सब घटक राज्यों को एक समान अधिकार प्राप्त हैं। राज्यचिह्न में हँसिया और हथौड़े का चित्र है। राज्य की राजधानी मास्को है। संविधान में १४ वीं धारा के अनुसार निम्नलिखित शक्तियां संघ को दी गई हैं :—

(क) अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में संघ का प्रतिनिधित्व करना, पर-राष्ट्रों से सन्धि करना और उनको पूरा करना और संघ, उपराज्यों व विदेशी राज्यों के बीच सम्बन्धों के बारे में सामान्य प्रणाली निश्चित करना।

(ख) युद्ध और शान्ति सम्बन्धी प्रश्न।
(ग) सोवियत रूस मे नये प्रजातन्त्रात्मक उपराज्यो को शामिल करना।
(घ) सघ शासन-विधान के पालन की देखभाल करना जिससे उसके अनुसार ही सब कार्य हो।
(ङ) उपराज्यो की सीमाओ को परिवर्तन करने की स्वीकृति देना।
(च) उपराज्यों में नये स्वाधीन प्रदेशो, प्रान्तो व प्रजातन्त्रो (Republics) के बनाने की स्वीकृति देना।
(छ) सोवियत रूस की सुरक्षा का प्रबंध, उसकी सैन्य शक्ति का सचालन और उपराज्यो मे सैन्य शक्ति का सगठन करने के लिये निर्देशक सिद्धान्तो को स्थिर करना।
(ज) राज्य के एकाधिकार के आधार पर वैदेशिक व्यापार।
(झ) राज्य की सुरक्षा का बचाव।
(ञ) सोवियत रूस की आर्थिक योजनाओ को कार्यान्वित करना।
(ट) सारे सघ का एक बजट (आय-व्यय का लेख) बनाकर स्वीकार करना। उपराज्यों व स्थानीय सगठनो के बजट मे करो व आय के साधनो की स्वीकृति देना।
(ठ) उद्योगो, कृषि-सम्बन्धी सस्थाओ, बैंको और सारे सोवियत रूस के लिये महत्वपूर्ण व्यापार-योजनाओ का प्रबन्ध।
(ड) यातायात के साधन, डाक व तार आदि का प्रबन्ध।
(ढ) मुद्रा व उधार-प्रणाली का सचालन।
(ण) राजकीय बीमा का प्रबन्ध।
(त) ऋण लेना या देना।
(थ) भूमि, जगल, खान, जल आदि के प्रयोग के सम्बन्ध में मूल सिद्धान्तों को स्थिर करना।
(द) शिक्षा के सम्बन्ध में सार्वजनिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में मूल सिद्धान्तो को स्थिर करना।
(ध) देश के लिये हिसाब-किताब रखने की एक ही प्रणाली का आयोजन करना।
(न) श्रम के सम्बन्ध में कानून के आधारभूत सिद्धातो को निश्चित करना।
(प) न्याय-सगठन व न्याय-प्रणाली के सम्बन्ध में कानून बनाना।
(फ) नागरिकता और विदेशियो के सम्बन्ध में कानून बनाना।
(ब) सारे सघ के बन्दियो का मुक्त करने का आदेश देना।

१४ वे अनुच्छेद में वर्णित शक्तियो को छोडकर शेष शक्तिया सघ के उपराज्यो की है। सघ उनमें उपराज्यों की सत्ता की रक्षा करता है। प्रत्येक उपराज्य का शासन-विधान पृथक्-पृथक् है क्योंकि वह अपनी निजी विशेष आवश्यक्ताओ के अनुकूल बनाया गया है, किन्तु उसका रूप सघ शासन-विधान के रूप के समान ही है। सिद्धान्तत प्रत्येक उपराज्य को सघ से पृथक होने का अधिकार है। किसी भी उपराज्य के प्रदेश मे उसकी सम्मति के बिना परिवर्तन नहो किया जा सकता।

सघ के सारे निवासी सघ के नागरिक है। सघ के अधिनियम सब उपराज्यो में लागू रहते हैं और सघ अधिनियम में टक्कर होने पर सघ अधिनियम ही मान्य होता है।

सघ का ढाचा

सो० स० प्र० स० का केन्द्रीय तथा घटक राज्यो का शासकीय ढाचा एक सा ही रखा गया है। सघ मे तीन शक्तियाँ हैं, सर्वोच्च सोवियत जो दो सदनो से बना है, अर्थात् सघ सोवियत और जातियो की सोवियत (Sov.et of Nationalities) जो सारे राज्य की सघीय विधान मडल (legislature) है। (२) सो० स० प्र० स० का प्रीसीदियम *जो इस राज्य की अनुपम सस्था है जिसकी शक्तियाँ और* अधिकार विधायिनी तथा कार्यपालिका सम्बन्धी भी है, ऐसी सस्था किसी अन्य राज्य मे नही, और (३) सो० स० प्र० स० का मन्त्रि-परिषद् (Council of Ministers of the U.S.S.R.) जो समस्त राज्य की सर्वोच्च कार्यपालिका है। सर्वोच्च सोवियत ही प्रीसीदियम और मन्त्रि-परिषद की नियुक्ति करती है और उसी को ये दोनों उत्तरदायी है।

सर्वोच्च सोवियत (विधान मडल)

प्रथम सदन या लोकसभा—सघ सोवियत या सघ कौसिल निचला सदन है जिसमें प्रजा द्वारा प्रत्यक्ष प्रणाली से चुने हुए व्यक्ति सदस्य होते हैं। इन प्रतिनिधियो को नागरिक स्वय चुनते है। इसकी सदस्य सख्या स्थिर (fixed) नही,, प्रति ३००,००० जनसख्या के लिये एक प्रतिनिधि चुना जाता है, चुनाव के लिये सारा देश निर्वाचन क्षेत्र में बँटा हुआ है।

सोवियत रूस के सब नागरिक जिनकी आयु १८ वर्ष की हो प्रतिनिधियो के निर्वाचन मे भाग ले सकते हैं और २३ वर्ष अथवा अधिक आयु वाले मतदाता प्रतिनिधि निर्वाचित होने के लिये खडे हो सक्ते है। मताधिकार के लिये किसी विशेष जाति, धर्म या राष्ट्रनिष्टा, शिक्षा का स्तर, सम्पत्ति, स्वामित्व आदि का ध्यान नही रखा जाता, सब को मत देने का अधिकार रहता है चाहे कोई विदेशी क्यो न हो

केवल उन्माद रोग से पीड़ित व्यक्ति या वे जिनको किसी न्यायालय ने मताधिकार से वंचित कर दिया है, मत नहीं दे सकते। स्त्रियों को भी मत देने का अधिकार है, वे प्रतिनिधि भी चुनी जा सकती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को एक मत देने का अधिकार होता है। सैनिक भी मत दे सकते हैं और प्रतिनिधि बन सकते हैं। गुप्त शलाका (Secrot ballot) द्वारा मत लिया जाता है। निर्वाचन-क्षेत्रों में उम्मेदवारों को श्रमिकों की संस्थायें, कम्यूनिस्ट पार्टी के संगठन, व्यवसायी संघ, सहकारी समितियाँ, युवक संघ और सांस्कृतिक संस्थायें मनोनीत करती हैं। कौंसिल चार वर्ष के लिये चुनी जाती है, चुने हुये प्रतिनिधि को अपने काम के बारे में अपने निर्वाचकों को सन्तुष्ट करना पड़ता है। अधिनियम के अनुसार स्थिर किये हुये तरीके पर निर्वाचकों के बहुमत से किसी भी प्रतिनिधि को उसके कार्य से असन्तुष्ट होने पर वापस बुलाया जा सकता है। नये संविधान के अन्तर्गत संघ सोवियत का प्रथम निर्वाचन १२ दिसम्बर सन् १९३७ को हुआ। उस समय ९१,११३,१३५ व्यक्तियों के ९६.८ प्रतिशत मतदाताओं ने मतदान में भाग लिया। चुने हुये प्रतिनिधियों में सोवियत संघ के प्रत्येक प्रदेश के कुछ निवासी अवश्य थे। एक ओर उत्तरी प्रदेश के एस्कीमो थे तो दूसरी ओर दक्षिण के कौकेशिया निवासी भी थे। ये प्रतिनिधि लगभग १०० भाषाओं के बोलने वाले और रहन-सहन, *संस्कृति आदि में एक दूसरे से बहुत भिन्न थे। इस भिन्नता का कारण सोवियत* रूस के विशाल देश की विभिन्न भौगोलिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ ही हैं।

संविधान के अनुकूल दूसरा निर्वाचन सन् १९४१ में होना था किन्तु रूस द्वितीय महासमर में लगा हुआ था, इसलिये सन् १९४६ में सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों के निर्वाचन कराये गये, तब से प्रति ४ वर्ष पश्चात् निर्वाचन होते हैं जिनमें प्राय सभी नागरिक भाग लेते हैं। निम्न तालिका से प्रगट होता है कि रूस में नागरिक कितने जागरूक हैं और निर्वाचनों में भाग लेते हैं —

संघ सोवियत (Union Soviet) के निर्वाचन

वर्ष	मतदाताओं की संख्या द्वारा मतदान हुए	प्रतिशत मत दिये
१९४६	१० करोड़ १० लाख	९९.०७
१९५०	११ करोड़ १० लाख	९९.९८
१९५४	१२ करोड़	९९.९८
१९५८	१३ करोड़ ४० लाख	९९.९७

सन् १९५४ के निर्वाचन में ७०८ प्रतिनिधि संघ सोवियत में और ६३९ दूसरे सदन में चुने गये, जिनमें ३४८ स्त्रियाँ थी। ३१८ श्रमिक, २२० किसान तथा ८०९ बुद्धिजीवी चुने गये थे। *मार्च सन् १९५८ के निर्वाचन में कुल १३७८ प्रतिनिधि चुने*

गये, जिनमें ८३१ श्रमिक व किसान थे, (६१४ वेतन प्राप्त थे) और शेष बुद्धजीवी थे। सभी जातियो ओर नस्लो के स्त्री पुरुष भाग लेते हैं और स्त्रियो की संख्या जो निर्वाचित होती है, अन्य देशो से कहीं अधिक है।

सन् १९५८ मार्च के निर्वाचन मे संघ सोवियत के ७३८ सदस्य और दूसरे सदन में ६३३ निर्वाचित हुए।

द्वितीय सदन—नैशनेलिटीज सोवियत (या कौंसिल) अर्थात् उपराष्ट्र-परिषद् कहलाता है। इसके सदस्य भी सीधे नागरिकों द्वारा चुने जाते है। प्रत्येक संघ प्रजातन्त्र (Union Republic) अर्थात् उपराज्य को २५, स्वाधीन प्रदेश को ११, स्वाधीन जिले को ५ और राष्ट्रीय जिले को १ प्रतिनिधि चुन कर भेजने का अधिकार है। संघ-सोवियत के साथ-साथ ही यह उपराष्ट्र परिषद् भी चार वर्ष के लिये चुनी जाती है। निर्वाचन पद्धति भी प्रथम सदन की निर्वाचन पद्धति के समान है। यहाँ यह बतलाना आवश्यक है कि सोवियत रूस के कई उपराज्यों में अनेक स्वाधीन प्रजातन्त्र, प्रान्त और प्रदेश (Autonomous Republics, Provinces and Regions) होते है। केवल चार उपराज्यो मे ऐसी स्वाधीन इकाइयाँ नही है।

विधानमंडल की कार्यवाही—दोनो सदनो मे से प्रत्येक अपनी कार्यपद्धति निश्चित कर उसके अनुसार अपना कार्य करता है। सदन मे एक सभापति और दो उपसभापति होते हैं। प्रत्येक सदन अपने सदस्यों के प्रतिनिधि बनने के अधिकार की भी परीक्षा भी करता है। दोनो सदनो को अधिनियम बनानेका समान अधिकार है। किसी भी सदन में नई योजना पर विचार आरम्भ हो सकता है। जब दोनो सदन साधारण बहुमत से किसी विधेयक को स्वीकार कर लेते है तो वह स्वीकृत समझा जाता है। इस प्रकार स्वीकृत हो जाने के पश्चात् वह अधिनियम सुप्रीम कौंसिल (Supreme Council) की प्रीसीडियम के अध्यक्ष व सेक्रेटरी के हस्ताक्षर सहित संघ की विभिन्न भाषाओ में छाप कर प्रकाशित कर दिया जाता है।

दोनो सदनो के मतभेदो को सुलझाना—यदि दोनो सदनो में मतभेद होने से कोई विधेयक दोनो मे स्वीकार नही हो पाता तो वह एक समझौता-कमीशन के सुपुर्द कर दिया जाता है। यह कमीशन पक्ष-प्रणाली के अनुसार ही संगठित होता है, अर्थात् प्रत्येक राजनैतिक पक्ष के प्रतिनिधि अपनी अपनी संख्या के अनुपात से इसके सदस्य बनाये जाते हैं। यदि कमीशन (Commission) किसी समझौते पर पहुँचने में असफल रहे या यदि इसका निर्णय किसी सदन को अमान्य हो तो सदनो को पुनर्विचार करने के लिए एक बार फिर अवसर दिया जाता है। यदि फिर भी वे सहमत नहीं होते तो सर्वोच्च सोवियत का अर्थात् दोनो सदनो का विघटन कर दिया जाता है और

नया निर्वाचन किया जाता है। किन्तु न तो अब तक ऐसा अवसर आया है और न एक दल प्रणाली के कारण आने की सम्भावना ही सकती है।

सुप्रीम कौंसिल की प्रीसीडियम और मन्त्रि-मण्डल (लोक प्रबन्धक परिषद् को चुनने के लिए दोनों सदनों की संयुक्त बैठक होती है)। वर्ष में दो बार सदनों की साधारण बैठकें होनी हैं किन्तु प्रीसीडियम स्वयं या सर्घ प्रार्थना पर उपराज्यों को सुप्रीम सोवियत का विशेष अधिवेशन बुला सकती है। चार वर्ष की अवधि समाप्त होने पर या विघटन होने पर दो मास के भीतर ही नये निर्वाचन का होना आवश्यक है और निर्वाचन होने से एक मास के भीतर ही नये सदनों की प्रथम बैठक होनी चाहिये।

सर्वोच्च सोवियत (सुप्रीम सोवियत) के अधिकार—संविधान की धारा ५७ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत सो० स० प्र० स० की राज्य शक्ति का सर्वोच्च अंग (highest organ of state power) सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet) ही है। यह सारे राज्य के लिये उन सभी विषयों के सम्बन्ध में विधि और अधिनियम बनाने वाली सर्वोच्च विधायिनी अंग (highest law making organ) है, जो संविधान की १४ वीं धारा में वर्णित है और सो० स० प्र० स० की केन्द्रीय सरकार के अधिकार में है। इन विषयों की गणना इस अध्याय के आरम्भ में कर दी गई है। इसलिये यही सोवियत सो० स० प्र० स० का दो सदनों का विधान मण्डल है। इस विधायिनी अधिकार के अतिरिक्त, सर्वोच्च सोवियत अपने दोनों भवनों की संयुक्त बैठक में —

(१) संघ की प्रीसीडियम (Presidium) का निर्वाचन करती है, जिसमें एक प्रेसीडेंट (जो सारे राज्य का राज्याधीश समझा जाता है), १६ उप-प्रेसीडेंट, एक सेक्रेटरी, तथा १५ अन्य सदस्य, कुल मिलाकर ३३ व्यक्ति होते हैं (धारा ४८)।

(२) सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रि-परिषद् (Council of Ministers of the U S S. R.) की ४ वर्ष के लिये नियुक्ति करती है, यह मन्त्रि-परिषद् सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है (धारा ७०)।

(३) सो० स० प्र० स० के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तथा विशिष्ट न्यायालयों के न्यायाधीशों का निर्वाचन ५ वर्ष के लिये करती है (धारा १०५)।

(४) सो० स० प्र० स० के महान्यायवादी (Procurators General) की ७ वर्ष के लिये नियुक्ति करती है।

(५) सो० स० प्र० स० के संविधान का संशोधन प्रत्येक सदन (पृथक्-पृथक् बैठक में) अपने सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत से करना भी सर्वोच्च सोवियत का ही अधिकार है।

(६) सर्वोच्च सोवियत सघ के मन्त्रिमण्डल के कार्य निरीक्षण करती अर्थात् अपने सत्र में, उसके कृत्यो की स्वीकृति करती और उन पर आलोचना करती है, तथा सघ का बजट आय व्यय लेखा पास करती है।

इसके अतिरिक्त सुप्रीम अर्थात् सर्वोच्च सोवियत :

(७) राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था पर विचार करती तथा उसकी स्वीकृति करती है।

(८) सो० स० प्र० स० के सविधान के पालने और उसके अनुकूल कार्य कराने का अधीक्षण करती है।

(९) वही अन्तर्राष्ट्रीय मामलो में देश का प्रतिनिधित्व करती है, सन्धियाँ करना और उनका समर्थन करना भी उसी के हाथ मे है।

सोवियत सघ की प्रीसीदियम (Presidium)

सर्वोच्च सोवियत के वर्ष भर में केवल दो सत्र होते है और वे भी थोडे काल के ही लिये बुलाये जाते है। हाँ, आवश्यकता पडने पर उसके विशेष सत्र (Special sessions) भी बुलाए जा सकते है। सत्र समाप्त होने पर सोवियत के सदस्य अपने-अपने स्थानो को लौट जाते है और निजी व्यवसायो अथवा कार्यों में सलग्न हो जाते है। परन्तु राज्य का कार्य इतना अधिक है कि उसके सचालन के लिये सर्वोच्च सत्ताधारी शासकीय अग की दिन-प्रतिदिन आवश्यकता होती है। किन्तु हजारो सदस्यो के सर्वोच्च सोवियत के सत्र अधिक समय के लिये बुलाना अथवा कई बार बुलाने का नतीजा होगा, अधिक व्यय तथा अधिक व्यक्तियो का समय लेना। यही कारण है कि *सोवियत रूस के सविधान में एक अनुपम सस्था का निर्माण किया गया,* वह है सो० स० प्र० स० की प्रीसीदियम (The Presidium of the Supreme Soviet of the U.S.S.R.) जो सर्वोच्च सोवियत के सत्रो (Sessions) के मध्यान्तरो (recesses) में उन सारी शक्तियो का उपभोग करती है जो सविधान की धाराओ मे वर्णित है।

प्रीसीदियम का निर्वाचन प्रत्येक सर्वोच्च सोवियत अपने नवीन निर्वाचन के पश्चात् प्रथम सत्र मे ही चार वर्ष के लिये करती है। प्रीसीदियम अपने कृत्यो के लिये सर्वोच्च सोवियत को उत्तरदायी है। प्रीसीदियम में १ अध्यक्ष (President), १६ उपाध्यक्ष (Vice-Presidents) जो प्रत्येक घटक राज्य के प्रीसीदियम के अध्यक्ष होते है, १५ अन्य निर्वाचित सदस्य तथा १ सचिव (Secretary) होते हैं।

प्रीसीदियम की शक्तियो और अधिकारो का स्पष्टीकरण सविधान की धारा ४९ में किया गया है। इसके अनुसार प्रीसीदियम निम्न कार्य करती है :—

(क) सोवियत रूस की सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन बुलाती है।

(ख) सोवियत रूस के अधिनियमों की व्याख्या करती तथा आदेश देती है।

(ग) किसी उपराज्य की माँग पर स्वेच्छा से लोक-निर्णय का प्रबन्ध करती है।

(घ) जब सघ की या उपराज्यो के मन्त्रि-मण्डल (Council of Ministers of the Union Republics) के निर्णय या आज्ञाये अधिनियमो के विरुद्ध हो तो उनको रद्द करती है।

(ङ) सर्वोच्च सोवियत के दो सत्रो के बीच के समय मे सर्वोच्च सोवियत का कार्य करती है।

(च) मन्त्रि-मण्डल (Council of Ministers) के सभापति के सुझाव पर सघ के किसी मन्त्रि-विभाग को अर्थात् लोक प्रबन्ध को नियुक्त करती है *जिसकी अन्तिम स्वीकृति सुप्रीम सोवियत देती है।*

(छ) सम्मानो तथा सम्मान सूचक उपाधिया प्रदान करती है।

(ज) क्षमादान देती है।

(झ) सेना के उच्चपदाधिकारियो को नियुक्त करती या पदच्युत करती है।

(ञ) सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनो के मध्यान्तरो मे यदि सघ पर बाहरी आक्रमण की सम्भावना हो या किसी दूसरे आक्रमण से पारस्परिक सुरक्षा हेतु अन्तर्राष्ट्रीय सधियो के कर्त्तव्यो को पूरा करने की जरूरत पड़े तो युद्ध की स्थिति की घोषणा करती है।

(ट) पूर्ण या आंशिक सेना मे भर्ती के लिये घोषणा करती है।

(ठ) अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों का अनुसमर्थन करती है।

(ड) दूसरे देशो मे रूस के राजदूतो को नियुक्त करती या उन्हे वापिस बुलाती है।

(ढ) विदेशी राजदूतो का स्वागत करती व उनको आवश्यकता पडने पर वापिस भेजने का प्रबन्ध करती है।

(ण) सघ की सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनो के मध्यान्तरो में सघ के मन्त्रि-मण्डल के प्रधान मत्री की सिफारिश पर मन्त्रियो को अलग करती और नियुक्त करती है लेकिन इस पर बाद में सर्वोच्च सोवियत की मजूरी आवश्यक होती है।

(त) विदेशी राज्यों द्वारा राजनैतिक प्रतिनिधि के लिये अपने नाम भेजे गये प्रमाण-पत्रो और वापस बुलाने के पत्रो को देखती है।

(थ) सघ की सुरक्षा हेतु या सार्वजनिक व्यवस्था और राज्य की सुरक्षा कायम रखने के लिये अलग-अलग जगहो में या पूरे सघ में मार्शलॉ-घोषित करती है।

(द) अध्यादेश जारी करती है।

उपरोक्त (ड) मे वर्णित शक्ति का क्षेत्र विशाल है, क्योंकि सर्वोच्च सोवियत के सत्रो के मध्यान्तरो में प्रीसीदियम कोई भी कानून बना सकती है जो उतना ही मान्य और लागू होगा जितना सर्वोच्च सोवियत का बनाया कानून होता है, और क्योंकि धारा १४६ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत सविधान का सशोधन करती है, तो उसके सत्रो के मध्यान्तरो प्रीसीदियम धारा १४ में वर्णित मामलो के सम्बन्ध मे सर्वोच्च सोवियत की भाँति विधि अथवा अधिनियम ही नही बना सकती, वरन् सविधान में सशोधन भी कर सकती है। प्रीसीदियम, सर्वोच्च सोवियत के बनाये कानूनों की व्याख्या करती है और आवश्यक आदेश जारी करती है। सन् १९४६ के पूर्व प्रीसीदियम ने सर्वोच्च सोवियत की सदस्यता के लिये अल्पमत आयु १८ से बढ़ाकर २३ कर सविधान सशोधन ही किया, इसके अतिरिक्त उसने विदेशो मे स्थिति लाल सेना के सैनिको को प्रतिनिधित्व देकर सविधान सशोधन ही किया। इन दोनो कृत्यों का बाद मे सर्वोच्च सोवियत ने अनुसमर्थन किया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रायोगिक दृष्टि से प्रीसीदियम की विधायिनी शक्ति अपरिमित है।

कार्यकारिणी क्षेत्र मे प्रीसीदियम के अधिकार बहुत विस्तृत हैं। सर्वोच्च सोवियत के बैठकों के मध्यान्तरो में प्रीसीदियम, मन्त्रि-मण्डल के सभापति की सिफारिश पर मन्त्रि-मण्डल के सदस्यों की नियुक्ति करती है और उनको पदच्युत करती है। वह मन्त्रालय का पुनर्निर्माण कर सकती है, किसी भी मन्त्रि-विभाग के अधिकार क्षेत्र में परिवर्तन कर सकती है, यद्यपि इन कृत्यो के लिये बाद मे सर्वोच्च सोवियत का अनुसमर्थन प्राप्त करना आवश्यक है, परन्तु अभी तक ऐसा कोई अवसर नही आया जब वह अनुसमर्थन न मिला हो। प्रीसीदियम युद्ध घोषणा अथवा सन्धियो का अनुसमर्थन, तथा सेना के अधिकारियों की नियुक्ति अथवा उसमें परिवर्तन सर्वोच्च सोवियत की भाँति, मध्यान्तरो में करती है। इस शक्ति का प्रयोग द्वितीय महासमर के काल मे अनेक बार हुआ था।

न्यायिक क्षेत्र में प्रीसीदियम किसी भी दण्डित व्यक्ति को क्षमादान कर सकती है।

प्रीसीदियम का निर्वाचन प्रत्येक सर्वोच्च सोवियत के पहले सत्र में दोनो भवन सयुक्त बैठक में चार वर्ष के लिये करते हैं। परन्तु सर्वोच्च सोवियत का चार वर्ष बाद विघटन होता है तो उसके साथ प्रीसीदियम भग नहीं होती, वह अपने पद पर रहती है जब तक नया सर्वोच्च सोवियत अपने पहले सत्र में नवीन प्रीसीदियम का निर्माण नही करती। सर्वोच्च सोवियत के सत्र बुलाना, उसका विघटन करना तथा उसका नवीन निर्वाचन करना भी प्रीसीदियम का ही अधिकार है। प्रीसीदियम ही उपाधि देती और पुरस्कारो का वितरण करती है।

प्रीसीदियम के सदस्य, कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख नेता होते है, और क्योंकि

पार्टी का आदेश मानना प्रत्येक कम्युनिस्ट का परम कर्त्तव्य और क्योंकि राज्य शासन की नीति कम्युनिस्ट पार्टी ही करती है, यह स्वाभाविक ही है कि प्रीसीदियम पार्टी के निर्णयो के अनुसार ही अपनी विधायिनी और कार्य कारिणी शक्ति का प्रयोग करे।

प्रीसीदियम का एक विशेष स्थान सविधान मे यह है कि वह सो० स० प्र० स० की राज्याध्यक्षता (Headship of State) करती है। अन्य राज्यो मे, जिन्होने साम्यवाद नही अपनाया है, राज्य का एक अध्यक्ष होता है, जो चाहे नामधारी हो जैसे इगलैण्ड मे राजा और चाहे वास्तविक शासक हो जैसे अमेरिका का प्रेसीडेंट, जो अन्य विदेशो के राजदूतो के प्रमाणपत्र लेता है और अपने देश के राजदूतो की नियुक्ति करता है, तथा सभी अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे देश की सत्ता का प्रतिनिधित्व करता है, औपचारिक (Ceromonial) अवसरो पर सर्वोच्च पद-ग्रहण करता है, और नाम-मात्र के लिये (जैसे इगलैण्ड मे) अथवा वास्तविक रूप से (जैसे अमेरिका मे) विधान मण्डल द्वारा स्वीकृत विधियों और अधिनियमो पर प्रत्याभिषेध (veto) लगाने का अधिकारी है, तथा जिसके नाम पर सारा शासन चलाया जाता है। किन्तु सो० स० प्र० स० मे राज्य की अध्यक्षता सारी प्रीसीदियम सामूहिक रूप से करती है अर्थात् रूस में कोई एक व्यक्ति राज्याधीश नही कहलाता, वहाँ प्रीसीदियम के ३३ सदस्य सामूहिक रूप से राज्य सत्ताधारी है। प्रीसीदियम को यह अधिकार नही कि वह सर्वोच्च सोवियत के स्वीकृत अधिनियमो पर हस्ताक्षर कर प्रमाणित करे अथवा उन पर प्रत्याभिषेध लगावे। हाँ, जब दोनो सदनो मे किसी विषय मे मतभेद हो और वह न सुलझे तो प्रीसीदियम सर्वोच्च सोवियत का विघटन (दोनों सदनों का एक साथ) कर नया निर्वाचन कराती है, अथवा किसी गण-राज्य द्वारा माँग किये जाने पर अथवा अपनी ही इच्छा से किसी प्रश्न पर राष्ट्रव्यापी मत सग्रह अथवा लोकनिर्णय (Referendum) करा सकती है। प्रीसीदियम के ३३ सदस्यो मे एक उसका अध्यक्ष (President) तो अवश्य होता है जो उसकी बैठको में सभापतित्व करता है, विदेशी राजदूतो के प्रमाण-पत्र (Credentials) लेता है, तथा कभी-कभी औपचारिक अवसरो पर सभापति होता है वा विदेशी उच्च अतिथियों का स्वागत करता है, किन्तु उसे न तो अधिनियमो पर हस्ताक्षर कर उनकी प्रमाणता करने और न उन पर प्रत्याभिषेध (Veto) का अधिकार है, और न उसके नाम पर शासन चलाया जाता है। शासन प्रीसीदियम के सामूहिक नाम से चलता है। लैनिन और स्तालिन दोनो ही का विश्वास था कि किसी एक व्यक्ति को राज्याध्यक्षकता के अधिकार नही होने चाहिये क्योकि ऐसा करने से यह भय हो सकता है कि वह व्यक्ति अवसर पाकर व्यक्तित्व रूप से सत्ताधारी हो जावे और शक्ति ग्रहण कर एकाधिकार जमा दे जो साम्यवादी शासन प्रथा के विरुद्ध है, अथवा लोग उसको विशेष श्रद्धा और भक्तिभाव से देखने लगें जिससे

व्यक्तिवाद (Personality Cult) की स्थापना हो जावे। एक बार इस बात का प्रयास किया गया था कि प्रीसीदियम के अध्यक्ष को सघ की राज्याध्यक्षता का नामधारी प्रतीक बनाया जावे, स्तालिन ने इसका विरोध करते हुए सोवियतो की आठवी कांग्रेस के सामने अपनी रिपोर्ट पेश करते हुए कहा था "हमारे सविधान की व्यवस्था के अनुसार सो० स० प्र० स० मे, जनता द्वारा निर्वाचित कोई ऐसा व्यक्ति नही होना चाहिए जो अपने को सर्वोच्च सोवियत के बराबर समझ कर उसके विरोध मे खडा हो सके। सो० स० प्र० स० मे अध्यक्ष तो एक सामूहिक सस्था (Collegium) है जो सर्वोच्च सोवियत की प्रीसीदियम है जिसमे उसका अध्यक्ष भी शामिल है, जिसका चुनाव सारी जनता नही करती, बल्कि सर्वोच्च सोवियत करती है जिसको वह उत्तरदायी है। ऐतिहासिक अनुभव यह दिखाता है कि उच्चाधिकारी सस्थाओ का ऐसा सगठन ही अत्यन्त प्रजातान्त्रिक है और अवाछनीय अवसरो के विरुद्ध देश की सुरक्षा कर सकता है।"

प्रीसीदियम की शक्तियाँ सामूहिक रूप मे बहुत है, विधायिनी, कार्यकारिणी, न्यायिक तथा अन्य। उसकी बैठके मास में कई बार होती है, उसकी कार्यवाही गुप्त रखी जाती है और यह भी नहीं मालूम होता कि कौन प्रश्नों पर वह विचार करेगी, उसकी कार्यवाही का कोई लेखा नही रखा जाता, उसके निर्णय शीघ्रता से लागू किये जाते है। साराश यह है कि सोवियत राज्य व्यवस्था मे प्रीसीदियम का सर्वोच्च महत्व है। वही सर्वोच्च सोवियत और मन्त्रि-मण्डल के बीच सम्पर्क का साधन है, और क्योंकि १६ गणराज्यो की प्रीसीदियमो के अध्यक्ष इस सघीय प्रीसीदियम के, पदाधिकार से (ex-officio), उपाध्यक्ष होते है, सघीय प्रीसीदियम शासन क्षेत्र में सो० स० प्र० स० की अत्यन्त शक्तिधारी सस्था (Highest organ of power) है।

सोवियत रूस का मन्त्रि-परिषद्
(Council of Ministers)

सविधान की धारा ६४ के अनुसार सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च कार्यपालिका सम्बन्धी तथा प्रशासकीय शक्ति धारण करने वाला अग वहाँ का मन्त्रि-परिषद् अथवा कौंसिल आफ मिनिस्टर्स (Council of Ministers) है। मन्त्रि-परिषद् का उत्तर- दायित्व सो०स०प्र०स० की सर्वोच्च सोवियत के प्रति है और उसी को वह अपने कृत्यो का ब्यौरा देती है, किन्तु सर्वोच्च सोवियत के सत्रा के बीच (मध्यान्तरो) में मन्त्रिमण्डल, सो० स० प्र० स० की प्रीसीदियम को उत्तरदायी है (धारा ६५)। अन्य राज्यों की कार्यपालिकाओ की भांति यह मन्त्रि-मण्डल भी देश के शासन के लिये आवश्यक कार्य करती है। सो० स० प्र० स० का मन्त्रि-परिषद् राज्य के कानूनो का

पालन कराने के लिये आवश्यक निर्णय और आदेश जारी करता है और उनके पालन की जाँच करता है (धारा ६६)। मन्त्रि-मण्डल के निर्णय और आदेश सारे राज्य में अनिवार्य रूप से मान्य हैं धारा(६७)। इससे स्पष्ट है कि संविधान ने इस मन्त्रि-मंडल को इतनी अधिक शक्ति देकर रूसी संघवाद में घटक राज्यों की कार्यपालिकाओं को केन्द्रीय सरकार की पूरी अधीनता में रख दिया है।

उपरोक्त के *अतिरिक्त मन्त्रि-मण्डल (धारा ६८ में वर्णित) निम्न कार्य भी* करता है —

(१) *सोवियत रूस के उपराज्यों के शासन विभागों* (Peoples' Ministers), अन्य आर्थिक या सांस्कृतिक संस्थाओं के कार्यों का संचालन करना व उसमें *सामंजस्य लाना।*

(२) राष्ट्र की आर्थिक योजनाओं व आय-व्यय के निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक प्रबन्ध करना और मुद्रा-व्यवस्था को शक्तिपूर्ण बनाना।

(३) लोक व्यवस्था ठीक रखना, राज्य के हितों की रक्षा करना और नागरिकों के स्वत्वों को बचाना।

(४) सोवियत रूस के पर-राष्ट्रीय सम्बन्धों को निश्चित कर उनको व्यवहार-रूप देना।

(५) संघ-सैन्य बल के सामान्य संगठन की देखभाल व नागरिकों की सैन्य-सेवा का वार्षिक परिमाण निश्चित करना, और

(६) आवश्यक होने पर, आर्थिक, सांस्कृतिक या सुरक्षा सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने के लिये विशेष समितियाँ बनाना।

धारा ७१ के *अनुसार सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्र संघ* की सरकार को, या सो० स० प्र० स० के जिस भी मन्त्री में से सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च सोवियत *का सदस्य सवाल पूछे, उसे ज्यादा से ज्यादा तीन दिन के समय के भीतर तदनुकूल* भवन में जबानी या लिखित जवाब देना चाहिये।

धारा ७२ के अनुसार सो० स० प्र० स० के मन्त्री के अधिकार-क्षेत्र में आने वाली राजकीय प्रबन्ध की शाखाओं का संचालन करते हैं।

धारा ७३ के अनुसार अमल में लागू कानूनों के और सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मण्डल के फैसलों तथा आदेशों के भी आधार पर और उन्हें चलाने के लिये सो० स० प्र० स० के मन्त्री अपने-अपने मन्त्रि-विभागों के अधिकार-क्षेत्र की सीमाओं के भीतर आदेश तथा हिदायतें जारी करते हैं और उनकी तामीली की देखभाल करते हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि मन्त्रि-मण्डल ही राज्य के दिन-प्रतिदिन के शासन का

सचालन करता है, यही सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च कार्यपालिका है जो सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है, और उसके सत्रो के मध्यान्तरों में प्रीसीदियम को उत्तरदायी है। परन्तु उसका उत्तरदायित्व अन्य पूंजीवादीराज्यो के मन्त्रि-मण्डल की भांति नही है। उसकी नियुक्ति चार वर्ष के लिये होती है परन्तु सर्वोच्च सोवियत के विघटन हो जाने पर मन्त्रि-मण्डल भग नही होगा बल्कि नवीन सोवियत के प्रथम सत्र मे नये मन्त्रि-मडल की नियुक्ति तक वह पदासीन रहता और शासन सचालन करता है। मन्त्रि-मण्डल का सभापति (Chairman) अन्य देशो के प्रधान मन्त्रियो की भांति प्रधान मन्त्री ही कहलाता है। मन्त्रि-मण्डल की बैठकें प्राय प्रतिदिन होती है, प्रधान मन्त्री सभापतित्व करता है और उसकी कार्यवाही गुप्त रहती है।

मन्त्रि-मण्डल की रचना और अवधि—सविधान की धारा ७० के अनुसार, सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च सोवियत के दोनो भवन अपनी सयुक्त बैठक में मन्त्रि-मण्डल की नियुक्ति करती है। मन्त्रि-मण्डल मे निम्न सदस्य होते है —

सोवियत समाजवादी प्रजातान्त्रिक सघ के मन्त्रि-मण्डल का सभापति;
एक से अधिक इस मन्त्रिमण्डल के प्रथम उप-सभापति,
एक से अधिक मन्त्रिमण्डल के सभापति,
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-गण,
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मण्डल की राजकीय दीर्घ समयी योजना कमेटी के अध्यक्ष;
सो० स० प्र० स० के आर्थिक चालू योजना मन्त्रि-मण्डल के अध्यक्ष;
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मण्डल की वेतन कमेटी के अध्यक्ष,
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मण्डल की नवीन उद्योग-प्रणाली के अध्यक्ष,
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मन्डल की निर्माण कमेटी के अध्यक्ष,
सो० स० प्र० स० के मन्त्रि-मण्डल की सुरक्षा कमेटी के अध्यक्ष,
सो० स० प्र० स० के बैंक के प्रशासकीय बोर्ड के अध्यक्ष,
सो० स० प्र० स० के उच्च शिक्षा कमेटी के अध्यक्ष, ।

इस प्रकार यह मन्त्रि-मण्डल सदस्यता की दृष्टि से बहुत बड़ा है। सो० स० प्र० स० के मन्त्रालय में नये विभागो की रचना और कभी-कभी पुरानो का विघटन होने के कारण सोवियत समाजवादी प्रजातान्त्रिक सघ के मन्त्रि-गण की सख्या निश्चित नही रहती। मन्त्रि-मण्डल का निर्माण यो तो सर्वोच्च सोवियत करता है, किन्तु वह भी प्रीसीदियम की सिफारिश पर चलता है, और प्रीसीदियम पर कम्युनिस्ट पार्टी का ही प्रभाव है।

अत मन्त्रि-मण्डल की सख्या निश्चित अथवा स्थिर नही है, क्योकि अधिकतर

नये विभाग बनाये जाते हैं और उनके लिये विभागाध्यक्ष मन्त्री नियुक्त होते हैं। सन् १९३६ में इनकी संख्या ३२ थी, सन् १९४७ में ५९, सन् १९५१ में ५०, और अब ६० है जिनमें ७ सदस्य योजना कमेटी में लिये गये हैं। धारा ७० के अनुसार घटक राज्यों के मन्त्रि-मण्डल के उप-सभापति, पदाधिकार से, सो० स० प्र० स० के सदस्य होते हैं।

मन्त्रि-परिषद् की कार्य पद्धति—मन्त्रि-परिषद् के उन सदस्यों की नियुक्ति जो सो० म० प्र० स० विभिन्न मन्त्रि-विभागों के अध्यक्ष बनाये जाते और उन विभागों के सचालन के लिये उत्तरदायी होते हैं, सर्वोच्च सोवियत तो करती है, परन्तु कम्युनिस्ट पार्टी का पोलिट ब्यूरो (Polit Buro) जो पार्टी के राजनीतिक वा शासकीय भाग की कमेटी है, मन्त्रि-मण्डल के व्यक्तियों को पहले से ही नामांकित करता है और उन्ही नामों को (प्रधान मन्त्री के प्रस्ताव पर) सर्वोच्च सोवियत स्वीकार करती है। जब सर्वोच्च सोवियत की बैठकों का मध्यान्तर होता है तो प्रीसीदियम नियुक्ति करती है।

सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों में सोवियत रूस की सरकार से प्रश्न पूछे जा सकते हैं, इन प्रश्नों का तत्सम्बन्धी मन्त्री उत्तर देता है। यह उत्तर लिखित हो या मौखिक, प्रश्न पूछने के तीन दिन के भीतर मिलना चाहिए। प्रत्येक मन्त्रि अपने अधीन शासन-विभाग का सचालन करता है। वही विभाग सम्बन्धी आदेश निकालने तथा इन आदेशों के कार्यान्वित होने का आयोजन तथा निरीक्षण करने का उत्तरदायी है। मन्त्रि-मण्डल ही अपने निकाले आदेशों को तय करता है, उसके ऊपर केवल एक ही नियन्त्रण है, वह है राष्ट्र के अधिनियमों तथा प्रीसीदियम की निर्धारित नीति का, क्योंकि प्रीसीदियम को भी कार्यपालिका शक्तियाँ प्राप्त हैं। बहुधा ऐसा होता है कि मन्त्रि-मण्डल प्रीसीदियम तथा कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी (Contral Executive Committee) से मिलकर ही राष्ट्रीय महत्व के मामलों पर अपने आदेश जारी करता है और क्योंकि इन तीन सस्थाओं के सदस्य प्रभावशाली कम्युनिस्ट नेता ही होते हैं जो पार्टी के कठोर अनुशासन के अधीन हैं और पोलिट ब्यूरो के आदेशों से बद्ध हैं, रूस का शासन सचालन एक विलक्षण तथा पेचीदे प्रकार से होता है।

सविधान में केवल कार्यपालिका का ढाचा ही दिया गया है, वास्तविक शासन-सचालन मन्त्रि-मण्डल करता है। शासन के विभिन्न विभागों का सगठन, उनकी कमेटियों, कौंसिलों और ब्यूरो आदि का सगठन तथा उनके कार्य निर्धारित करने और उसका निरीक्षण करने का काम मन्त्रि-मण्डल करता है। मन्त्रि-मण्डल को सवैधानिक अधिकार है कि वह राज्य की आर्थिक व्यवस्था का प्रबन्ध करे। इस कार्य में मन्त्रि-

मण्डल कम्युनिस्ट पार्टी के आदेशानुसार ही कार्य करता है और इसमें उसकी आर्थिक शक्ति महान है, बजट बनाना, कर तय करना, और राष्ट्र की सारी आर्थिक पद्धति का सचालन करना मन्त्रि-मण्डल का अधिकार क्षेत्र है।

राष्ट्र की सुरक्षा करने और आन्तरिक शान्ति रखने का भी उत्तरदायित्व मन्त्रि-मण्डल पर है, वही नागरिको के अधिकारो की रक्षा करता है, वही राज्य की सेना के सगठन और सचालन की देख भाल करता है।

मन्त्रि-मण्डल का उत्तरदायित्व बहुत है, वह सामूहिक है, व्यक्तिगत मन्त्री अपने-अपने विभाग के लिये उत्तरदायी है, परन्तु यह सब उत्तरदायित्व पूँजीवादी राज्यो के मन्त्रि-मण्डलो की भाँति नही जहाँ विधान मण्डल की शक्ति महत्वपूर्ण है। सो० स० प्र० म० में वास्तविक शक्ति एकमात्र कम्युनिस्ट पार्टी है, और उसी के प्रति विभिन्न अधिकारी-सस्थाओं की वा व्यक्तियो का असली उत्तरदायित्व है।

मन्त्रि-मण्डल के सगठन अथवा मन्त्रालय में दो प्रकार के मन्त्रि-विभाग है, एक तो सर्वसघीय विभाग (All Union Ministries) और दूसरे सघ प्रजातन्त्रीय विभाग (The Union Republican Ministries)। दूसरी श्रेणी के विभागो का कर्त्तव्य है कि वे विभिन्न घटक राज्यो के तत्सम्बन्धी विभागो के सचालन में आदेश दें, सघ की नीति का पालन करावें और शासन की एकरूपता (Uniformity) कायम रखें, इससे स्पष्ट है कि रूसी सघवाद वास्तव में केन्द्रीयवाद है। सर्वसघीय विभाग उन मामलो से सम्बन्धित है जो सविधान की धारा १४ में वर्णित शक्तियों के प्रयोग के लिये स्थापित किये गये हैं। १९५७ मे सविधान के निम्न अनुसार सर्वसघीय विभाग २३, और सघीय प्रजातन्त्रीय विभाग २७ है, जो क्रमश धारा ७ और ७८ मे वर्णित है —

धारा ७७, सर्वसंघीय विभाग (All Union Ministries) –

१. वायुयान उद्योग मन्त्रालय (Air Craft Industry),
२ स्वचालित वाहन-उद्योग मन्त्रालय (Automobile Industry),
३ विदेशी व्यापार मन्त्रालय (Foreign Trade),
४ यन्त्र-निर्माण मन्त्रालय (Machine Building),
५ वणिक जलपोत मन्त्रालय (Merchant Marine),
६ सुरक्षा उद्योग (Defence Industry),
७ सामान्य यन्त्र-उद्योग (General Machine Industry),
८ यन्त्र उपकरण तथा स्वचालित यन्त्र साधन (Instrument Makin and Means of Automation);

९ रेलवे मन्त्रालय(Railways),
१०. रेडियो-इन्जीनियरिंग उद्योग (Radio-Engineering Industry),
११. मध्यम-कोटि यन्त्र-निर्माण उद्योग (Medium Machine-Building Industry),
१२ यन्त्र उपकरण व उपकरण उद्योग (Machine Tool & Tool Industry),
१३ भवन तथा मार्ग-निर्माण यन्त्र उद्योग (Building & Road Building Machinery Industry),
१४ तैल-उद्योग निर्माण (Oil Industry Construction),
१५ विद्युत-शक्ति-केन्द्रो का निर्माण (Electric Power Stations),
१६. पोत निर्माण (Ship Building),
१७ ट्रेक्टर तथा कृषि यन्त्र निर्माण उद्योग (Tractor & Agricultural Machine-Building Industry),
१८ यातायात यन्त्र-निर्माण उद्योग (Transport Machine-Building Industry),
१९ यातायात निर्माण (Transport Construction),
२० भारी यन्त्र-निर्माण उद्योग (Heavy Machine-Building Industry);
२१ रसायनिक उद्योग (Chemical Industry),
२२ विद्युत-शक्ति केन्द्र (Electric Power Stations),
२३ विद्युत्-इन्जीनियरिंग उद्योग (Electric Engineering Industry);

धारा ७८ में वर्णित संघ प्रजातन्त्र राज्यों के मन्त्रालय

(Republic Minitries) —

१ कागज तथा लकडी उद्योग मन्त्रालय (Paper and Wood Processing Industry),
२ आन्तरिक विषय मन्त्रालय (Internal Affairs),
३ उच्च शिक्षा मन्त्रालय (Higher Education);
४ भूतत्वीय परिमाप तथा खनिज विकास मन्त्रालय (Geological Survey and Conservation of Mineral Resources);
५ नगर तथा ग्राम निर्माण मन्त्रालय (Town & Village Construction);
६. राज्य नियन्त्रण मन्त्रालय (State Control);
७. सार्वजनिक स्वास्थ्य मन्त्रालय (Public Health),

८. विदेशीय विषय मन्त्रालय (Foreign Affairs);
९ संस्कृति मन्त्रालय (Culture);
१० अल्प परिमाण उद्योग मन्त्रालय (Light Industry),
११ इमारती लकडी उद्योग मन्त्रालय (Timber Industry);
१२ तैल-उद्योग मन्त्रालय (Oil Industry),
१३ प्रतिरक्षा मन्त्रालय (Defence),
१४ मास तथा दुग्ध-पदार्थ उद्योग मन्त्रालय (Meat & Dairy Products Industry),
१५ खाद्यपदार्थ उद्योग मन्त्रालय (Foodstuffs Industry),
१६ भवन निर्माण सामग्री मन्त्रालय (Building Materials Industry);
१७ मीन उद्योग मन्त्रालय (Fish Industry),
१८ यातायात मन्त्रालय (Communications)
१९ कृषि मन्त्रालय (Agriculture),
२० *राजकीय फार्मों का मन्त्रालय (State Farms);*
२१ व्यापार मन्त्रालय (Trade),
२२ कोयला उद्योग मन्त्रालय (Coal Industry)
२३ वित्त मन्त्रालय (Finance),
२४ अनाज भण्डार मन्त्रालय (Grain Stocks),
२५ अलौह-धातु उद्योग मन्त्रालय (Non-Fibrous Metals Industry),
२६ लौह और इस्पात उद्योग मन्त्रालय (Iron & Steel Industry)

उपरोक्त विभाग सूचियो से यह स्पष्ट है कि सो० स० प्र० स० किस सीमा तक अपनी औद्योगिक उन्नति विभिन्न क्षेत्रों मे तथा कृषि और अन्य भोजन सामग्रियो की उत्पादन वृद्धि मे शासन की सारी शक्ति लगा रहा है। एक-एक उद्योग के लिये कई-कई विभाग बनाये गये है ताकि पचवर्षीय अथवा सप्तवर्षीय योजनाओ को पूर्ण सफलता प्राप्त हो। उदाहरणार्थ, सघ विभागो की सूची के सख्या १५, २२ और २३ में विद्युत् उन्नति के तीनो विभाग हैं, और स० ४, ८, ११, १२, २० के पाँचो *विभाग यन्त्र उद्योग की वृद्धि करते हैं इत्यादि।* जैसे-जैसे औद्योगिक उन्नति में किसी विशेष प्रकार की वृद्धि की आवश्यकता होती है, सर्वोच्च सोवियत नव-विभाग निर्माण कर देती है। यही बात घटक राज्यो मे है। सारे देश में जनता राष्ट्रीय उन्नति के विभिन्न उद्योगो में सलग्न है। देश और राज्य साम्यवादी है, यहाँ कम्युनिस्ट पार्टी ही एक मात्र चालक शक्ति (Motive Force) है उसके द्वारा शासन पर कठोर नियन्त्रण सभव है जो विभिन्न सस्थाओ द्वारा, विशेषतया, मन्त्रि-मण्डल द्वारा, सचालित होता है।

सोवियत रूस की न्यायपालिका

साम्राज्यवादी रूसी राज्य के सविधान का आधार जनसत्ता है। तो स्वाभाविक ही है कि अन्य राज्यो की अपेक्षा रूसी न्याय-व्यवस्था तथा न्यायपालिका के सिद्धान्त, रचना, कार्यप्रणाली और उद्देश्य भिन्न हो।

रूस की न्याय व्यवस्था की विशेषताएँ कई है। रूसी न्यायालयो की कार्य-प्रणाली के लिये सन् १९३८ में सघीय सर्वोच्च सोवियत ने एक विधि (Law on Judiciary) बनाई जिसमे न्याय-व्यवस्था सम्बन्धी बातो को विस्तृत रूप दिया। रूसी न्यायालया का मुख्य कार्य है सोवियत नागरिको के श्रम और सम्पत्ति सम्बन्धो की रक्षा करना और राजकीय सस्थाओ, व्यवसायों, सहकारी तथा अन्य सार्वजनिक सगठनो के अधिकारो तथा कानूनी हितो की रक्षा करना है। यद्यपि रूस एक सघीय राज्य है किन्तु इसके सर्वोच्च न्यायालय (Supreme court) को, अमरीकन अथवा भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के विपरीत सविधान की व्याख्या करने अथवा पुनर्विलोकन (Judicial Review) करने अथवा किसी भी विधि (law) की अवैधता घोषित करने का अधिकार नही है। उसके दो क्षेत्राधिकार है, प्रारम्भिक तथा अपीलीय। इसके अतिरिक्त वह निम्न सभी न्यायालयो का अधीक्षण (Supervision) भी करता है।

सोवियत न्यायपालिका की दूसरी विशेषता है वहाँ पर सभी न्यायालयो के न्यायाधीशो का निर्वाचन। प्रत्येक न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय से लेकर जन न्यायालय (People's courts) पाँच वर्ष के लिये निर्वाचित होते है।

तीसरी विशेषता यह है कि सभी न्यायालयो मे मुकदमों की सुनवाई जज तथा निर्णय जननिर्धारकों (People's Assessors) की सहायता से होती है। सामान्यतया प्रत्येक अभियोग की सुनवाई एक जज और दो जन-निर्धारक करते हैं; तीनो के अधिकार समान हैं और निर्णय बहुमत से होता है। जन निर्धारक भी निर्वाचित होते हैं। जन निर्धारको का एक मण्डल (Panel) बना लिया जाता है। जन निर्धारक निर्वाचित होने के लिये नागरिक मताधिकारी होना आवश्यक है और अन्य किसी अर्हता (Qualification) की आवश्यकता नही। प्रत्येक अभियोग के लिये निर्धारक मण्डल में से दो निर्धारक चुन लिये जाते है। किसी भी निर्धारक को १० दिन से अधिक कार्य नही करना पडता, क्योकि यह कार्य निःशुल्क होता है। यदि जज को कानूनी ज्ञान है तो निर्धारको को उसी क्षेत्र के निवासी होने के कारण अभियोग सम्बन्धी वास्तविक घटनाओ आदि का ज्ञान है, वे अभियुक्त की कठिनाइयों से परिचित होते हैं, इसलिये निर्णय में जज के समान अधिकार प्राप्त होने के कारण

ठीक न्याय कर सकते हैं। अन्य देशो में जूरी प्रथा है परन्तु वहाँ जूरी-सदस्यो (Jurymen) को न्यायाधीश के समान अधिकार नही होते।

चौथी विशेषता है न्यायाधीशो को स्वतन्त्रता। कोई भी सरकारी कर्मचारी चाहे कितना ही उच्च पदाधिकारी वा प्रभावशाली हो, किसी भी अभियोग के निर्णय मे प्रभाव नही डाल सकता। निर्णय कानून के अनुसार और साक्षी के आधार पर ही होता है। विशेषतया सन् १९५३ से कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार ने *निष्पक्ष तथा अप्रभावित निर्णय पर अधिक जोर दियाहै और उसके उल्लघन के लिये* कठोर दण्ड रखा है क्योकि पहले व्यक्तिवाद (Personality cult) ने न्याय व्यवस्था में भी हस्तक्षेप किया था।

पाँचवी विशेषता है विधि की दृष्टि मे सभी नागरिको की समानता। वहाँ सभी अभियोगो और अभियुक्तो के लिये एक मे ही न्यायालय है, चाहे अभियोग साधारण नागरिक जीवन से सम्बन्धित हो अथवा प्रशासकीय कार्य से सम्बन्धित हो, किसी विशेष व्यक्ति वा जन समुदाय के लिये विशेष न्यायालय नही।

छठी विशेषता है कि वहाँ न्यायिक कार्यवाही सघ घटक राज्य (Union Republic) *अथवा स्वायत्त शासित प्रजातन्त्र (Autonomous Republic)* की मान्य भाषा मे ही होती है। जो अभियुक्त उस भाषा से अनभिज्ञ होता है उसकी सहायता के लिये एक निर्वाचक (Interpreter) दिया जाता है। सभी अभियुक्त अपनी भाषा मे ही न्यायालय में बोलने के अधिकारी हैं।

सातवी विशेषता है वहाँ के न्यायालयो मे, राज्य के भेदो तथा सेना अथवा राजदूती सम्बन्धी अभियोगो को छोडकर सभी अभियोगो की सार्वजनिक सुनवाई होना। अत वहाँ न्यायालयो द्वारा जनता को भी शिक्षा मिल जाती है।

आठवी विशेषता है, दण्ड व्यवस्था का यह उद्देश्य कि दण्डित अभियुक्त को आत्मसुधार करने का अवसर दिया जाय। अभियुक्त दण्ड पाने पर ईमानदारी से काम करके अपने आचरण को सुधार कर समाज का फिर आदर प्राप्त कर सकता है। दण्ड देने का अभिप्राय यह नहीं कि दोषी को सदा के लिये अपमानित और समाज से बहिष्कृत किया जाय।

नवी विशेषता यह है कि अन्य देशो की भाँति वहाँ वकीलो को वैयक्तिक व्यवसाय और मनमानी शुल्क लेने का अधिकार नही। विश्वविद्यालयो में वकीली शिक्षा प्राप्त कर कोई भी व्यक्ति किसी वकील मण्डल (Lawyers' collegium) का सदस्य बन सकता है। जब किसी अभियोग में किसी अभियुक्त को वकीली सहायता की आवश्यकता होती है तो वह किसी वकील मण्डल से सहायता माँगता और निर्धारित शुल्क मण्डल में जमा करता है। मण्डल किसी सदस्य को उस अभियुक्त की सहायता

के लिये आदेश देता है। शुल्क कम होता है और सामान्यत एक सुयोग्य श्रमिक के पारिश्रमिक के बराबर ही होता है। इसलिये वहाँ न्याय सस्ता और शीघ्र होता है।

दसवी विशेषता है जजो की नियुक्ति। कोई भी सोवियत नागरिक, पुरुष हो या स्त्री, जिसकी आयु कम से कम २३ वर्ष की हो, मतदाताओ का विश्वास प्राप्त कर जज *निर्वाचित हो सकता है, मतदान वयस्क मताधिकार के अनुसार, गुप्त शलाका* द्वारा, जन-न्यायालयो के लिये प्रत्येक जिले मे तीन वर्ष के लिये होता है। और इसी प्रकार प्रत्येक जिले के लिये ५० से ७५ तक जन निर्धारक (People's Assessors) *निर्वाचित होते हैं। इस निर्वाचन में मतदाता बडी दिलचस्पी लेते हैं। उदाहरणार्थ,* सन् १९५४ मे मास्को के जन-न्यायाधीशो (People's Judges) के निर्वाचन में ९९.९२ प्रतिशत मतदाताओ ने भाग लिया। लगभग ४५ प्रतिशत जज अथवा जन निर्धारक महिलाएँ होती है।

ऊपरी स्तर के न्यायाधीशो का निर्वाचन वहाँ की सोवियत करती है। अत सघ सर्वोच्च न्यायालयो के न्यायाधीश सर्वोच्च सघ सोवियत के दोनो सदनो के सदस्यो द्वारा ५ वर्ष के लिये, इसी प्रकार सघ घटक राज्यो (Union Republics) के सर्वोच्च न्यायालयो के न्यायाधीशो का निर्वाचन यूनियन रिपब्लिक की सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो द्वारा ५ वर्ष के लिये होता है।

ग्यारहवी विशेषता है रूस मे एक विशेष पदाधिकारी, महान्यायवादी (Procurator General) की नियुक्ति, अधिकार और कर्त्तव्य। सन १९४६ के पूर्व उसे अटार्नी जनरल (Attorney General) कहते थे। उस वर्ष सविधान में सशोधन कर उसको महान्यायवादी (Procurator General) कहा गया। यह सर्वोच्च न्यायालय से स्वतन्त्र है। सविधान के ११३ वी धारा में कहा गया है कि "सारे मन्त्रि विभागो तथा उनके अधीन सस्थाओ, अधिकारियो तथा नागरिको द्वारा विधि का पूर्ण पालन कराने की सर्वोच्च अधीक्षण शक्ति (Supreme Supervisory Power) सोवियत सघ के महान्यायवादी में निहित है।" महान्यायवादी की नियुक्ति सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च सोवियत (दोनो सदनो की बैठक) सात वर्ष के लिये करती है। उसका कर्त्तव्य है कि वह यह देखे कि सभी नागरिक, राजकीय कर्मचारी तथा शासकीय सस्थायें राज्य की विधि का पालन करते है। यदि कोई विधि का उल्लघन करता है तो वह प्रीसीदियम को राय देता है कि उल्लघन करने वाले के विरुद्ध उचित कार्यवाही करे। सघ का महान्यायवादी ही घटक राज्यो तथा स्वायत्त प्रजातन्त्रो, क्षेत्रो और उपक्षेत्रो के न्यायवादियो (Procurators) की नियुक्ति करता है। महान्यायवादी सो० स० प्र० स० का सरकारी वकील है वह सघ राज्य

की ओर से लगाये गये अभियोगो में राज्य की ओर से न्यायालय में पैरवी करता है। इसी प्रकार घटक राज्यों, क्षेत्रो और नगरो आदि के न्यायवादी अपने-अपने क्षेत्राधिकार में सरकारी वकील है।[1]

इस सम्बन्ध में संविधान की १२७ वी धारा है: "सो० स० प्र० स० के नागरिको को शारीरिक अनुल्लघनीयता (Inviolability of person) की प्रत्याभूति की जाती है। किसी न्यायालय की आज्ञा बिना अथवा न्यायवादी की स्वीकृति बिना किसी व्यक्ति को गिरफ्तार नही किया जायगा।"

न्यायवादी का कर्त्तव्य है कि वह इस धारा को लागू करे और जो उसका उल्लघन करे उन्हे दण्ड दिलाने की व्यवस्था करे। न्यायवादी आम जनता से सम्पर्क रखते है अत उन्हे अपने कर्त्तव्य पालन में जनता से बहुमत सहयोग और सहायता प्राप्त होती है।

आलोचना—सोवियत रूस की न्याय व्यवस्था की विदेशियो ने प्रशसा की है। यह व्यवस्था और न्याय प्रणाली लोकप्रिय है, जटिलता से रहित और नागरिको को आसानी से प्राप्त अथवा लभ्य है। इसमें वादी-प्रतिवादी को धन कम व्यय करना पडता है, न्याय शीघ्र होता है। विशेषतया नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों मे जन न्यायालय (People's Court) बहुत लोकप्रिय हैं, जन निर्धारकों द्वारा लोगो को न्याय कराना और न्याय प्राप्त होना अत्यन्त अच्छा लगता है। प्रो० लास्की ने इस न्याय व्यवस्था के सम्बन्ध मे कहा है कि "न्यायालयों की प्रक्रिया सरलता और समानता का वातावरण है, यहाँ वह भावना नही है कि विधि (law) जन के सामान्य प्रतिदिन के जीवन से परे है या उससे विरुद्ध है, जिससे यह विचार उठता है कि कानून को क्या बनाया जा सकता है।"[2] लास्की का यह भी कहना है कि वे न्यायाधीश "केवल दड ही नहीं देते, वरन् सामाजिक अव्यवस्थाओं को भी दूर करते है। अभियोगो को आर्थिक

1. "The theory is that the *Procurator General* alone bears the procuratorial power, all other procurators possessing such power only in so far as it is delegated to them by him"

Golunsky, *The Supreme Soviet of the U S S R and the Organs of Justice*, p 92

'The Procurator General is the official guardian of public property and the state enemy of graft or sabotage be administrative departments and individuals alike".

Harper and Thomson, *op cit* p 236.

2. "There is a simplicity about their work, atmosphere of equality, an absence of that sense of the law as something outside and against normal daily life, which gives one a new vision of what the law might be made".

Laski, *Law and Justice in Soviet Russia*, p 19-20.

पृष्ठभूमि का पता लगाकर ही, तय करते हैं"।[1] सोवियत न्याय-व्यवस्था के सम्बन्ध मे कापिन्स्की का कहना है "लेनिन और स्तालिन हमे शिक्षा देते हैं कि सोवियत राज्य और सोवियत जनता को न्यायालयों की आवश्यकता है, प्रथम तो सोवियत सरकार के शत्रुओ से युद्ध करने के लिये, और द्वितीय नई सोवियत शासन-व्यवस्था को सुदृढ करने तथा जनता में समाजवादी अनुशासन कायम करने के लिये"।[2]

कुछ प्रत्यालोचको ने सोवियत न्याय व्यवस्था को कम्युनिस्ट पार्टी का एक शस्त्र कहा है।

सोवियत न्यायपालिका सगठन

न्याय व्यवस्था सारे देश मे एक सी है। यहाँ की न्यायपालिका के ढाँचे में निम्न न्यायालय हैं (१)सो० स० प्र० स० का सर्वोच्च न्यायालय(Supereme Court of the U.S S R)(२)सो० स० प्र० स० के विशिष्ठ न्यायलय,(३)घटक राज्यो के सर्वोच्च न्यायालय(४)स्वायत्त प्रजातत्रो(Autonomous Republics)के सर्वोच्च न्यायालय,(५)स्वायत्त राज्य भागो(Autonomous Regions)के न्यायालय,(६) क्षेत्रो के न्यायालय, तथा (७) जन न्यायालय(People's Court)जो न्यायपालिका सगठन के पिरामिड (Judicial pyramid) के आधार निम्नतम न्यायालय है।

सर्वोच्च न्यायालय(सुप्रीम कोर्ट)—सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीशो का निर्वाचन सो० स० प्र० स० की सर्वोच्च सोवियत पाँच वर्ष के लिये करती है। उनको वही सोवियत पद च्युत भी कर सकती है यदि महान्यायवादी (Procurator General) उनके विरुद्ध दड-दोष का आरोप लगावे इस न्यायालय के न्यायाधीशो की सख्या निश्चित नही है।

सर्वोच्च न्यायालय के पाँच भाग हैं जो क्रमश दण्ड, व्यावहारिक (Civil), सैनिक (Military), रेलवे तथा जल-यातायात सम्बन्धी अभियोगो की सुनवाई करते हैं। प्रारम्भिक अभियोगो में एक न्यायाधीश और दो जन निर्धारक बैठते हैं, और अपीलीय अभियोगो मे ३ न्यायाधीश होते हैं। किसी भी न्याय बेंच मे मुख्य न्यायाधीश बैठ सकता है। दो मास मे एक बार पूरी बेन्च बैठकर अन्य बंचो द्वारा निर्णित फैसलो को देखते हैं जब कभी इसके लिये महान्यायवादी इसके लिये प्रार्थना करता है।

---

1 "They are resolving social maladjustments, and not merely inflicting penalties They relate the cases they try to all the economic background they can discover"

Laski Law & Justice in Soviet Russia p 20

2 "Lenin and Stalin teach us that the Soviet State, the Soviet people, need the Courts, first to fight the enemies of Soviet Government and secondly to fight for the consolidation of the new, Soviet system, to firsuly, anchor, the new, socialist discipline among the working people"

The Social and State Structure of the U S. S. R., p. 133

रखने वाली संस्था वहाँ की प्रीसीदियम और मन्त्रि-मण्डल होती है। इसके आधीन २६ शासन-विभाग है जो इस प्रकार है खाद्य उद्योग, छोटी वस्तुओ के उद्योग, काष्ठ उद्योग, कृषि, अन्न और पशु, सरकारी फार्म, आय-व्यय, घरेलू व्यापार, घरेलू मामले, न्याय, सार्वजनिक स्वास्थ्य,सैनिक सगठन और वैदेशिक मामले, आदि। यह परिषद् उपराज्य की सुप्रीम कौंसिल को उत्तरदायी रहती है। सोवियत के अवकाश काल में उसका सब कार्य मन्त्रि-मण्डल स्वय करती है और उसके लिये वहाँ की प्रीसीदियम को उत्तरदायी रहती है।

इस परिषद् में एक सभापति, उपसभापति, राष्ट्रीय योजना कमीशन का सभापति, २६ शासन विभागों के प्रबन्धक, भण्डारो (Reserves) की समिति का प्रतिनिधि, कला-प्रशासन का अध्यक्ष और सघ के शासन-विभागो का एक प्रतिनिधि, इतने सदस्य होते है।

मन्त्री अपने आधीन प्रशासन-विभागो के कार्य का सचालन करते हैं। सोवियत सघ और उपराज्यों के अधिनियमो के आधार पर उन्ही को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक आदेश जारी करते हैं। इसके अतिरिक्त वे सघमन्त्रि-मण्डल (Council of Ministers of the U S.S.R.) और उपराज्य के मन्त्रियो के आदेशो का पालन करते हैं।

उपराज्य के मन्त्रीगण स्वाधीन प्रजातन्त्रो के मन्त्रियों व प्रान्तो और प्रदेशो की कार्यपालिका समितियों के निर्णयों को स्थगित और रद्द भी कर सकते हैं।

१ फरवरी सन् १९४४ को सविधान मे एक सशोधन कर सघ की सुप्रीम सोवियत ने उपराज्यो को यह शक्ति दे दी है कि वे अपनी सुरक्षा के लिए निजी सेना रख सकते है और दूसरे राष्ट्रों से स्वय सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं किन्तु इन विषयो में उन्हें सघ की सुप्रीम सोवियत द्वारा निर्णीत सिद्धान्तो के अनुसार ही चलना पडता है।

स्वाधीन सोवियत प्रजातन्त्र उपराज्यो की छोटी इकाइयाँ हैं। इसमें एक सुप्रीम सोवियत होती है जो इन प्रजातन्त्रो (Autonomous Soviet Scoialist Republics) की प्रजा द्वारा चार वर्ष के लिये निर्वाचित होती है। प्रत्येक प्रजातन्त्र का निजी शासन-विधान है जो सोवियत रूस के शासन-विधान के ढग पर उस प्रदेश की विशेष परिस्थितियों के अनुकूल निर्मित हुआ होता है। प्रजातन्त्र की सुप्रीम सोवियत चुनकर एक प्रीसीदियम और एक लोक-प्रबन्धक-परिषद् का सगठन करती है।

उपराज्यों में प्रान्त, प्रदेश स्वाधीन प्रदेश (Autonomous Regions) स्वाधीन प्रजातन्त्र (U S S R) जिले, रेओन, नगर ग्राम-क्षेत्र आदि शासन की इकाइयाँ होती है जिनमें निजी सोवियत शासन प्रबन्ध करती हैं। इन सोवियतो का चुनाव दो वर्ष के लिये होता है। इनका काम यह है कि ये सुव्यवस्था रखने का प्रबन्ध करती है, अधिनियमो के पालन का आयोजन और नागरिकों के अधिकारो की रक्षा की देखभाल करती है। ये स्थानीय बजट तैयार करती है। ये अपने निर्वाचक श्रमिकों को ही नहीं वरन् अपने ऊपर वाली सोवियत को भी उत्तरदायी रहती है।

अध्याय २८

रूस में प्रजातंत्र और कम्यूनिस्ट राजनीतिक दल

यहाँ सोवियत संघ में—श्रमिकों के आतंकवादी देश में—यह तथ्य कि एक भी महत्वपूर्ण *राजनीतिक अथवा संगठनात्मक प्रश्न का निर्णय हमारे सोवियत तथा* अन्य जन-संस्थायें, पार्टी से निर्देश प्राप्त किये बिना, नहीं करती, पार्टी के सर्वोच्च नेतृत्व की अभिव्यक्ति समझना चाहिये।[1] —स्तालिन

इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में राजनीतिक दलों के विषय में यह बताया गया है कि प्रजातान्त्रिक देशों में राज्य शासन में दलों का क्या महत्व और भाग है। राजनीतिक दलों का आरम्भ इंगलैण्ड से हुआ जहाँ केवल देश की परिस्थिति में घरेलू युद्ध के कारण कुछ लोग सजा के समर्थक और कुछ विरोधी हो गये। उसके पश्चात् देश की राजनीति में मतभेद के कारण १८वीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में संसदीय केबिनेट प्रणाली की स्थापना राजनीतिक दल-पद्धति के आधार पर हुई। तत्पश्चात् जिस किसी देश ने संसदीय प्रणाली का अनुकरण किया वहीं पर राजनीतिक दल बन गये। संयुक्त राज्य अमेरिका के अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली स्वीकार की परन्तु वहाँ केन्द्रीय सरकार की क्या शक्तियाँ हों, इस पर मतभेद होने के कारण दो दल बन गये, फिर भी प्रथम प्रेसीडेंट वाशिंगटन ने दलपद्धति का विरोध करते हुए अपने विचार प्रकट कर देशवासियों को चेतना दी कि वे दलबन्दी को हानिकारक समझकर उससे बचते रहे। फिर वहाँ अब दलबन्दी का महत्व इतना बढ़ गया है कि वहाँ राजनीति और शासन में दलबन्दी एक आधारभूत सिद्धान्त हो गया है जितने भी निर्वाचन होते है, दलबन्दी के ही आधार पर होते हैं। किन्तु अमेरिका में दलबन्दी का वह महत्व नहीं जो इंगलैंड में है। फ्रांस ने इंगलैण्ड की संसदात्मक प्रणाली का अनुकरण किया, किन्तु बहुदली प्रथा के कारण वहाँ राजनीतिक स्थिरता नहीं हुई और एक के बाद दूसरा मन्त्रिमण्डल बनता रहा जो अपनी नीति अधिक समय तक लागू न कर सका। फ्रान्स के चतुर्थ और पंचम गणराज्य में भी बहुदली प्रथा से वह शासकीय स्थिरता नहीं आई जो देश के लिये आवश्यक थी।

---

1. "Here in the Soviet Union, in the land of dictatorship of the proletariat, the fact that not a single important question is decided by our Soviet and other mass organizations without directions from the Party must be regarded as the highest expression of the leading role of the Party"

Stalin—*Problems of Leninism*, p 34

प्रजातन्त्र के पक्षपातियों का कहना है कि इस तन्त्र की सफलता के लिये दलबन्दी आवश्यक है और समदीय प्रणाली की सफलता के लिये तो कम से कम दो दल होना आवश्यक है। जहा राज्य के उद्देश्य, वहाँ की आर्थिक समस्याओं तथा वर्गों के सघर्ष अथवा शासन व्यवस्था तथा नीति के विषय मे मतभेद होते है वहाँ राजनीतिक दल बन ही जाते है। इन दलो के बनने से एक ऐसा वर्ग समाज मे अग्रसर हो जाता है जो सदा राजनीतिक विषयों मे अपने को ही महत्व देता है, वह वर्ग है व्यवसायी राजनीतिज्ञो (Professional Politicians) का। जहाँ बहुदलीय प्रथा है वहाँ निर्वाचन के समय आपसी विरोध होता है, विभिन्न दलो के उम्मेदवार निर्वाचन मे जनता के सामने अपने-अपने विचार प्रकट करते और वोट माँगते है। ऐसे निर्वाचन में धन और समय अधिक व्यय होता है तथा आपसी मतभेद के कारण देश की प्रगति धीमी पड जाती है। फिर एक ही दल के भीतर कई उपदल खडे हो जाते है जो शक्ति पाने के लिये अनुचित साधनो द्वारा सदा पदाभिलाषी रहते हैं।

कम्यूनिस्ट नेताओं का कहना है कि रूस की शासन व्यवस्था साम्यवादी सिद्धान्तो पर आधारित है, इसलियें वहाँ वे मतभेद नही जो पूँजीवादी देशो मे है। अतएव कम्यूनिस्ट पार्टी ही उन सिद्धान्तो के अनुकूल शासन सचालन में प्रजातन्त्र की सुरक्षा करती है।

कम्यूनिस्ट पार्टी

पीछे सोवियत शासन-प्रणाली का जो वर्णन किया गया है उसका सचालन कम्यूनिस्ट पार्टी के हाथ में था फिर भी सरकार और कम्यूनिस्ट पार्टी एक नही है, वे एक दूसरे से भिन्न और पृथक् है।

कम्यूनिस्ट पार्टी का कोई भी व्यक्ति सदस्य हो सकता है क्योंकि कम्यूनिस्ट के सिद्धान्तो मे राष्ट्रीयता, जाति आदि की सकीर्णता को कोई स्थान नही दिया गया है। उसका उद्देश्य सारे ससार मे श्रमिकों का शासन स्थापित करना है। यह अपनी मूल विचारधारा मे राज्यसीमाओं का आदर नही करती। उसका तो प्रयत्न ही यह है कि विश्वमजदूरो को सगठित किया जाय। इतनी व्यापक दृष्टि के होते हुए भी कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य होना बडा कठिन काम है। उम्मेदवार को निश्चित समय तक पार्टी की शिक्षा लेनी पडती है। इस शिक्षण के पूरे होने पर भी जानकार व प्रभावशील सदस्यो की सिफारिश से ही वह व्यक्ति सदस्य बनाया जा सकता है। इसके विपरीत पार्टी का छोडना बडा सरल है, केवल अपनी इच्छा प्रकट करना ही पर्याप्त होता है। समय समय पर पार्टी में से उन व्यक्तियों को निकाल दिया जाता है जो निरुत्साही प्रतीत होते है, क्योंकि या तो कम्यूनिज्म सिद्धान्तो

व व्यवहार में उनका विश्वास नही रह गया या वे पार्टी के प्रति निष्ठा-रहित हो गये होते हैं।

सन् १९३८ के आरम्भ मे पार्टी के कुल सदस्यो की सख्या ३० लाख थी। सदस्यों की भर्ती कौमसोमोल (Comsomol) से होती है। जिसमें १६ और २३ वर्ष की आयु वाले युवा-स्त्री-पुरुष होते हैं। दस से सोलह वर्ष की आयु के भीतर वाले बालक पायनियर्स (Pioneers) कहलाते हैं। दस वर्ष की आयु से छोटे आठ वर्ष को आयु तक के औक्ट्रीहारिस्ट्स (Octriharists) कहलाते हैं। इस प्रकार पार्टी की ये तीन श्रेणिया मिलकर स्काउट सगठन के समान प्रतीत होती हैं। जिसमें एक के बाद एक श्रेणी को पार करना पूर्ण सदस्यता के लिये आवश्यक होता है। कम्यूनिस्ट पार्टी और उसकी उपसभाओ की कुल सख्या १२० लाख के ऊपर है।

पार्टी का अनुशासन—पार्टी का अनुशासन बडा कठोर है और उसका पालन करना बडा कठिन है। प्रत्येक सदस्य या उम्मेदवार को पार्टी के हित के लिये अपने वैयक्तिक भावो का बलिदान करना पडता है। प्रत्येक सदस्य अपने से उच्च व्यक्ति की इच्छा पर अपने आपको छोड देता है और उसकी आज्ञा का बिना हिचकिचाहट के पालन करता है। सदस्य को जहाँ भेजा जाय वहाँ जाना पडता है। अपना बचा हुआ समय वह कम्यूनिज्म के सिद्धान्तो के प्रचार करने में लगाता है और यदि उनकी रक्षा करने मे प्राण की भी बलि देनी पडे तो उसे उसके लिये तैयार रहना पडता है। सदस्यो में लगभग १४ प्रतिशत स्त्रियाँ या बालिकायें हैं।

कम्यूनिज्म के उद्देश्य—कम्यूनिज्म मार्क्स के दार्शनिक सिद्धान्तों को व्यवहार म लाना चाहती है। वर्गभेद का मिटाना, व्यक्ति के परिश्रम के आधार पर राजनैतिक व सामाजिक अधिकारो को निश्चित करना, पूँजीवाद को मिटाकर उत्पादन व वितरण के सब साधनो पर राज्य या स्वामित्व स्थापित करना, यह कम्यूनिज्म के उद्देश्य हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी का जो सदस्य मदिरा आदि मादक द्रव्यो का प्रयोग करता हुआ पाया जाता है या अपने से उच्च अधिकारी व्यक्ति की आज्ञा की अवहेलना करता है या जो गिरजाघर में जाता है या जो पार्टी के सिद्धान्तों के प्रचार करने में उत्साह नही दिखाता या पूँजीवर्ग को सहायता पहुँचाता है वह पार्टी से निकाल दिया जाता है। दूसरी ओर जो सदस्य पार्टी की सेवा में अपने आपको विख्यात बना लेता है उसको विशेष पुरस्कार दिया जाता है। पार्टी के अफसरों का आने जाने का भत्ता, रहने का मकान और सवारी के लिये मोटर मिलता है। कम से कम सिद्धान्ततः व्यवहार की समानता पर अधिक जोर दिया जाता है किन्तु सच तो यह है कि जो कारखानो और फर्मों के अफसर होते हैं

उनको अतिरिक्त लाभ का भाग बाँट कर अधिक सुविधायें दी जाती हैं। सोवियत रूस की कम्युनिज्म के व्यवहारिक रूप के बारे में जो विविध मत हैं वे एक दूसरे के बहुत विरोधी हैं क्योंकि वहाँ पर जाकर देखने वालों व लेखकों की दृष्टि पक्षपात रहित नहीं होती। मानव स्वभाव ही ऐसा है कि उससे यह आशा रखना कि वह आदर्श के व्यवहार में सच्चा अनुकरण करेगा, व्यर्थ है। फिर भी यह लाभ अवश्य है कि पार्टी के दृढ़ संगठन से शासन प्रबन्ध सुव्यवस्थित है।

पार्टी का संगठन—पार्टी की सबसे छोटी इकाई "सेल" (Cell) होती है जिसमे तीन सदस्य होते हैं। किसी गाव या कारखाने में बनाई जा सकती है। यह सेल पार्टी की नीति का प्रचार करके उसे कार्यान्वित करती है। सन् १९२८ में सेलो की कुल संख्या ३९,३२१ थी जिसमें से २५.४ प्रतिशत कारखाना में, ५२.७ प्रतिशत गावो में, १८.५ प्रतिशत अफसरों और उद्योगो मे और १.८ प्रतिशत शिक्षालयो में थी पार्टी की जो प्रादेशिक संस्था होती है उसके प्रतिनिधियों को ये सेल चुनती है। प्रान्तीय व प्रादेशिक संस्थाये अखिल संघ की पार्टी कांग्रेस के लिये अपने प्रतिनिधि चुनती हैं। कांग्रेस साल में दो बार एकत्र होती है। बीच में कांग्रेस से चुनी हुई एक सैन्ट्रल एक्जीक्यूटिव काम चलाती है। सैन्ट्रल कमेटी का सबसे प्रभावशाली व्यक्ति सैक्रेटरी-जनरल होता है (आज कल इस पद पर ख्रुश्चेव हैं) सन् १९३६ तक यह सेक्रेटरी-जनरल पार्टी पर ही नहीं किन्तु सरकार पर भी अपना नियंत्रण रखता था। यद्यपि पार्टी और सरकार पृथक् हैं फिर भी पार्टी सरकार को पूरी तरह से अपने हाथ में किये हुये थी। सन् १९३४ की कांग्रेस ने यह प्रस्ताव पास किया कि पार्टी और सरकार का भेद मिटा दिया जाय।

यद्यपि पार्टी के भीतर वाद-विवाद करने व विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता है पर जब एक बार कोई निश्चय हो जाता है तो सब सदस्यों पर वह लागू हो जाता है। जो कोई भी पार्टी के आदेशों की अवहेलना करता है उसे पार्टी से निकाल दिया जाता है या अन्य दण्ड दिया जाता है। सारे देश में फैली हुई पार्टी की शाखायें सोवियतो के कार्य पर दृष्टि रखती है जिससे केन्द्र से निकले हुये आदेशो का पालन कराने में सहायता होती है। सन् १९३६ तक सरकार की प्रमुख संस्थायें पिरेमिड के ऊँचे स्तरो पर थी इसलिये कम्यूनिस्ट अपने पक्ष के अधिक व्यक्तियों को उन संस्थाओं में ही रखने को अधिक उत्सुक रहते थे। गाँव और नगरो की सोवियतो में वे ऐसे ही व्यक्तियों से संतोष कर लेते थे जो पार्टी के सदस्य न हों परन्तु उनके कृपा-पात्र हो।

सरकार की वास्तविक नीति ऊपर ही निश्चित होती थी और वहाँ कम्यूनिस्टो का पूर्ण आधिपत्य या जिसे कम्यूनिस्टो का सरकार पर पूरा नियन्त्रण रहता था। सच रूस में कम्यूनिस्ट पार्टी ही प्रेरक शक्ति है। जहाँ कम्यूनिस्ट स्वयं सर्वेसर्वा नहीं

होते वहां उनका प्रभाव ही सब कार्य उनके अनुकूल ही करता है। प्रत्येक कारखाने में एक "लाल त्रिभुज" पाया जाता है जिससे कारखाने की नीति निश्चित करते समय मैनेजर और फैक्टरी समिति के प्रतिनिधि के साथ कम्यूनिस्ट पार्टी का एक प्रतिनिधि बैठता है।

राज्यशक्ति को अपने हाथ में करने के पश्चात् कम्यूनिस्ट पार्टी ने उन विभिन्न आर्थिक योजनाओं को अपने हाथ में लिया जो सोवियत रूस के शासन-विधान की आर्थिक व राजनैतिक प्रणाली का अंग समझी जाती थी। इनको कार्यरूप देने में स्तालिन और त्रात्सकी में विरोध उत्पन्न हुआ। लेनिन की मृत्यु के पश्चात् इन दोनों में से प्रत्येक लेनिनवाद के दृष्टिकोण का सच्चा प्रतिनिधित्व करने का दावा करता था। अन्त में स्तालिन की ही विजय हुई। त्रात्सकी को पार्टी से निकाल दिया गया। स्तालिन के शासन-प्रबन्ध के विरुद्ध गुप्त षड्यन्त्र रचे गये किन्तु स्तालिन ने सब विरोधियों को कुचल दिया।

शासन में कम्यूनिस्ट पार्टी का स्थान—रूस में राज्य शासन का आधार समाजवाद पहली सीढ़ी और साम्यवाद अथवा कम्यूनिज्म अन्तिम सीढ़ी है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद ही सो० स० प्र० स० का मार्ग है, जो वास्तव में सारे विश्व में कम्यूनिज्म के आधार पर एक सम शासन व्यवस्था स्थापित करना चाहता है। लेनिन ने अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये एक विशेष शस्त्र रचा और वह है कम्यूनिस्ट पार्टी, जिसके संगठन का ऊपर वर्णन किया गया है। लेनिन, और उसके बाद स्तालिन तथा अन्य रूसी राजनीतिक नेताओं का विश्वास था, और विश्वास है, कि कम्यूनिस्ट पार्टी ही ऐसी संस्था है जो रूस में, तत्पश्चात् संसार में, साम्यवाद के सिद्धान्तों को प्रायोगिक रूप देकर सच्चे साम्यवादी राज्य की स्थापना कर सकती है, वही जनसाधारण को साम्यवादी सिद्धान्तों से अवगत कर, देश की आर्थिक नीति को निर्धारित कर, शासन की बागडोर अपने हाथ में कर साम्यवादी राज्य स्थापित कर सकती है। इसी विश्वास में दृढ़ होकर स्तालिन संविधान के निर्माताओं ने उक्त संविधान की १२६ धारा में कहा है "श्रमजीवी जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए, और आम जनता में संगठनात्मक आत्म-कदमों तथा राजनीतिक सक्रियता को विकसित करने के लिये, सो० स० प्र० स० के नागरिकों के लिये निम्नलिखित अधिकार की गारंटी की गई है, उन्हें सार्वजनिक संगठनों—मजदूर सभाओं, सहयोग समितियों, युवक संगठनों, खेल तथा रक्षा सम्बन्धी संगठनों तथा सांस्कृतिक, यन्त्र ज्ञान सम्बन्धी और वैज्ञानिक समितियों में एक-मेल होने का अधिकार है। श्रमिकों में जो अत्यन्त सक्रिय तथा राजनीतिक दृष्टि जागरूक हैं, श्रमिक किसानों तथा श्रमिक बुद्धिजीवियों, को स्वेच्छापूर्वक सोवियत संघ की कम्यूनिस्ट पार्टी में, संगठित होते हैं, यही पार्टी जो साम्यवादी समाज

के निर्माण हेतु श्रमिकों के युद्ध में मार्ग-प्रदर्शक है, श्रमिकों के सभी संगठनों, सार्वजनिक तथा निजी, दोनों तरह के संगठनों का मुख्य अंग है।" संविधान की धारा १४१ में कम्यूनिस्ट पार्टी के विभिन्न संगठनों को राज्य की सोवियतों के निर्वाचन के लिये उम्मेदवारों (अभ्यर्थियों) को नामांकित (नामजद) करने का अधिकार है। वास्तव में यही पार्टी इन निर्वाचनों में अधिक सक्रिय तथा अगुआ रहती है।

कम्यूनिस्ट पार्टी अपने समाचार पत्रों, प्रचार पर्चों, सभाओं, सम्मेलनों तथा अन्य साधनों द्वारा रूस की आम जनता को साम्यवादी सिद्धान्तों की शिक्षा देती है, अपने संगठनों द्वारा जिले से लेकर ऊपर संघ तक विभिन्न सोवियतों में सक्रियता रखती है, शासन की नीति निर्धारित कर उसको प्रयोग में लाने के लिये अपने सदस्यों को, कठोर अनुशासन द्वारा, बाध्य करती है, यदि कोई सदस्य उस नीति की अवहेलना करता है तो उसे उचित दण्ड देती अथवा पार्टी से निष्कासित कर देती है। पार्टी में अनुशासन बहुत कड़ा है और क्योंकि राज्य में और ऐसा राजनीतिक दल नहीं जो उससे मोर्चा ले, कम्यूनिस्ट पार्टी ही शासन की परोक्ष से, और बहुत कुछ प्रत्यक्ष से, एकमात्र कर्णधार है। वही विभिन्न उत्पादन सोवियतों और फैक्टरियों में, अपने सदस्यों द्वारा, यह देखती है कि निर्धारित उत्पादन हो।

कम्यूनिस्ट पार्टी यह निश्चित करती है कि विदेशीय तथा घरेलू नीति में किस मार्ग पर चला जावे। वह अपने विशेषज्ञों द्वारा राष्ट्रीय आर्थिकता—उद्योग, यातायात, कृषि-विज्ञान को विकास सम्बन्धी समस्याओं तथा सांस्कृतिक समस्याओं तथा इन सभी से सम्बन्धित अगुआ लोगों के अनुभवों का अध्ययन करती है, देश के इन मामलों में जो कमियाँ हैं उन्हें जानकर देश-निर्माण के लिये उचित आदेश देती है।

किन्तु शासन संचालन के इस कार्य में कम्यूनिस्ट पार्टी वैधानिक संस्थाओं अथवा सर्वोच्च सोवियत का स्थान नहीं लेती। वैधानिक शासन-सम्बन्धी संस्थायें, जैसे विभिन्न स्तरों की सोवियतों, प्रेसीडियम, मंत्री परिषद् आदि अपने निर्धारित कार्य करती रहती हैं, कम्यूनिस्ट पार्टी उसमें हस्तक्षेप नहीं करती, वह केवल उनका पथ प्रदर्शन करती है और शासन को पूर्णतया साम्यवादी ढंग पर चलाने में सहायता देती है। क्योंकि सभी उच्चकोटि के प्रमुख राज्यनेता कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य हैं और उसके कड़े अनुशासन से बाध्य हैं, अन्तिम फल यही होता है कि पार्टी ही शासन की नायक बन गई है।

ठीक है कि सो० स० प्र० स० में गैर पार्टी संगठन तथा संस्थायें भी हैं, परन्तु जो पार्टी के सदस्य नहीं वे भी साम्यवादी सिद्धान्तों के समर्थक हैं। फिर पार्टी के वे सदस्य जो नीचे से लेकर ऊपर तक की सोवियतों के सदस्य हैं और जो फैक्टरियों, फार्मों, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक संगठनों में काम करते हैं वे पार्टी की निर्धारित नीति

वा मार्ग से गैर-सदस्यों को अवगत करते रहते है, और इस प्रकार वहाँ भी पार्टी के आदेशो के अनुसार कार्य होता रहता है।

सन् १९१७ से लेकर अब तक कम्यूनिस्ट पार्टी क्रान्तिकारी रही है, आम जनता के हितो की रक्षा करती रही है, उसी के कारण पूंजीवादियो और अन्य प्रकार के शोषको का रूस में अन्त हुआ है, इसलिये वह देश मे लोकप्रिय है। क्योकि पार्टी मार्क्सवाद-लैनिनवाद पर आधारित है और लैनिन ने ही उसकी स्थापना की और उसी को मार्क्सवाद के प्रचार का साधन बनाया इसलिये वही अब राज्य-शासन की प्रमुख पथ प्रदर्शक है। आज रूस में वर्ग सघर्ष नही है, वहाँ समाज मे वर्ग है, जैसे श्रमिक, कृषक तथा बुद्धिजीवी, कि तु वे एक दूसरेके सहायक वा पूरक है, विरोधी नही, वे साम्यवादी समाज के अग है, उन सबके हितो को कम्यूनिस्ट पार्टी सुरक्षित रखती है, और वे सभी अनुभव से इस बात का विश्वास करते है कि कम्यूनिस्ट पार्टी ही उनका सच्चा हित साधन करती है, कर रही है और कर सकती है। यही कारण है कि राज्य-शासनो में कम्यूनिस्ट पार्टी का इतना प्रभाव है। स्तालिन ने एक बार स्पष्ट शब्दो मे कहा था 'पार्टी खुले आम यह स्वीकार करती है कि वह शासन का पथ-प्रदर्शन तथा निर्देशन करती है।' रूस म श्रमिको का रज्य है और सप्रभुता तथा अधिकार है, कम्यूनिस्ट पार्टी ही इसका प्रतीक है।

कम्यूनिस्ट पार्टी की शक्ति इसलिये है कि लैनिन और स्तालिन ने उसकी स्थापना की और आम जनता को पार्टी द्वारा सगठित कर रूस म क्रान्ति की। दूसरा कारण यह है कि पार्टी के सगठन मे कठोर अनुशासन है, आपसी मेल है, उसमे अनुशासन हीनता के लिये कठोर दण्ड दिया जाता है। पार्टी का आदेश है कि उसका प्रत्यक सदस्य आदर्श साम्यवादी बने, निजी हित साधन न कर राज्य तथा पार्टी के हित के लिये कार्य करे, जो भी कार्य पार्टी उसे सौपे उसी म सलग्न रहे। तीसरा कारण यह है कि पार्टी आम जनता से निरतर सम्पर्क रखती है लैनिन और स्तालिन का कहना कि जो पार्टी जनता से सम्पर्क नही रखती वह कमजोर हो जाती है, जनता का विश्वास खो बैठती है और अन्त मे नष्टप्राय हो जाती है। यही शिक्षा पार्टी के सदस्या को सदा सक्रिय और चेतन्य रखती है, वे आम जनता से घुल-मिलकर साम्यवादी सिद्धान्तो और मार्गों को समझाते है। केलिनिन (Kalinin) ने सन् १९४४ ने कहा था. "हमारे देश में अच्छे, बहुत अच्छे लोग है परन्तु बुरे लोग भी है. . केवल २६ वर्ष हुए कि हमारे लोग पूंजीवाद से मुक्त हुए थे, पुरानी प्रथा के कुछ चिह्न अब भी शेष है।" इन्ही चिह्नो को मिटाने और सर्वांश में साम्यवाद का प्रसार करने में कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य निरन्तर लगे रहते है और क्योकि यहाँ कोई विरोधी राजनीतिक दल नही, इसलिये कम्यूनिस्ट पार्टी रूस के शासन में अत्यन्त क्रियाशील,

प्रभावशाली और एक मात्र सर्वोपरि नेतृत्व करती है। वहाँ के सभी उच्च कोटि के नेता, मन्त्रिपरिषद् प्रीसीदियम आदि के सदस्य क्रियाशील कम्यूनिस्ट हैं।

व्यक्तित्ववाद (Personality Cult) और उसके दोष—लैनिन ने कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना करते समय इस बात पर बहुत जोर दिया था कि पार्टी की शक्ति और सफलता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसका सामूहिक नेतृत्व (Collective leadership) हो। लैनिन किसी व्यक्ति विशेष के महत्व को अत्यधिक बढाने का विरोधी था। परन्तु लैनिन की मृत्यु के पश्चात् सामूहिक नेतृत्व का धीरे-धीरे अन्त हो गया। लैनिन के दो प्रमुख उत्तराधिकारी नेताओ, स्तालिन और त्रात्स्की (Stalin and Trostky) में प्रमुख नेतृत्व के लिये होड लगी; दोनों ही इसका दावा करते थे कि मैं ही लैनिनवाद का सच्चा ज्ञाता और अनयायी हूँ; इस होड में स्तालिन ने अपनी चालाकी से त्रात्स्की को देश से निकाल दिया। फिर धीरे-धीरे कम्यूनिस्ट पार्टी में अपना प्रभाव जमाया और लोगों ने यह समझ कर कि लैनिन का यही एक मात्र शिष्य और पार्टी का प्रमुख निर्माण करता है उसके सभी विचारों और कृत्यों का बिना विरोध अथवा आलोचना किये, समर्थन किया और अन्त में वह रूस का एकमात्र आतंकवादी नेता और शासक बन गया। वह कम्यूनिस्ट पार्टी का अध्यक्ष (Secetary General) बना और अपने पद की शक्तियों और अधिकारों का अनुचित प्रयोग कर वैयक्तिक शासन स्थापित करने में सफल हो गया। इसी को व्यक्तिवाद (Personality Cult) कहते हैं। इस मत के अनुसार एक व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व के साथ अत्यधिक तथा अनुचित श्रद्धा का भाव उत्पन्न हो जाता है। साधारण और भोले भाले लोग समझने लगते हैं कि इस नेता में निस्सन्देह असाधारण योग्यता और दैवी शक्ति है और उसकी एक प्रकार पूजा करने लगते हैं। इस मत में आदर्शवाद का भाव होता है जिसके कारण एक व्यक्ति, लोगो के इस अन्ध विश्वास का अनुचित लाभ उठाकर अपना आतंक स्थापित कर लेता है। लैनिन की मृत्यु के बाद स्तालिन ने अपनी चतुराई, मक्कारी तथा लैनिन के प्रमुख सहयोगी और लैनिनवाद के प्रमुख ज्ञाता होने के दावे से अनुचित लाभ उठाया। परिस्थिति ने उसका बहुत साथ दिया। विदेशों ने साम्यवादी प्रथा का विरोध किया तो स्तालिन ने कठोर शब्दों का प्रयोग कर तथा हिंसात्मक नीति का समर्थन कर उन्हें धमकी दी, साथ ही साथ विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा देश की आर्थिक स्थिति और उत्पादन वृद्धि में सुधार किया। साधारण जनता उसे मान तथा एक प्रकार के दैवी भय, की दृष्टि से देखने लगी। अधिकांश लोगों का विश्वास हो गया कि स्तालिन ही रूस का एकमात्र रक्षक है। उसने बडी होशियारी से अपने विरोधियों को अपने मार्ग से हटा दिया। यद्यपि रूस की आर्थिक उन्नति सारी कम्यूनिस्ट पार्टी के सहयोग, प्रचार तथा श्रमिको और कृषकों के परिश्रम से हुई थी, किन्तु

स्तालिन के प्रशंसक कहने लगे कि यह उन्नति स्तालिन की अनुपम योग्यता का फल है, वे एक प्रकार स्तालिन की पूजा करने लगे और उसके दोषों और भूलों तथा गलतियों की ओर ध्यान ही नहीं देते थे। इस धारणा ने लेनिन के सिद्धान्त "सामूहिक नेतृत्व" (Collective leadership) को आघात पहुँचाया। स्तालिन की मृत्यु के पश्चात् दूसरी और विपरीत विचारधारा उत्पन्न हुई। सन् १९५६ में २० वीं सोवियत संघ की कम्यूनिस्ट पार्टी ने स्तालिन के शासन की कड़ी आलोचना कर उसकी गलतियों की ओर ध्यान आकर्षित कराया, साथ ही साथ स्तालिन के उन कामों की उचित सराहना की जो देश हित के थे। तभी से कम्यूनिस्ट पार्टी स्तालिन-पूजा के विरुद्ध प्रचार में तथा सामूहिक नेतृत्व की स्थापना में संलग्न है। स्तालिन ने युगोस्लाविया से शत्रुता कर ली थी यद्यपि वह भी एक साम्यवादी राज्य है। स्तालिन की असहिष्णुता (Intolerance)और तानाशाही का मार्शल टीटो (Marshal Tito)ने विरोध किया और युगोस्लाविया के साम्यवादी राज्य को रूस के आधिपत्य से दूर रख विदेशी मामलों में तटस्थ रह कर, युगोस्लाविया के साम्यवाद को रूसी साम्यवाद से स्वतन्त्र रखा। स्तालिन की नीति थी कि साम्यवादी रूस पूंजीवादी देशों से सहअस्तित्व (co-existence)नहीं रख सकता, किन्तु ख्रुश्चेव आदि रूसी नेता अब लेनिन के "सामूहिक नेतृत्व" सिद्धान्त की पुनर्स्थापना कर विश्वशान्ति के लिये सह-अस्तित्व की नीति का समर्थन करते हैं, उनका विश्वास है कि साम्यवाद की अंतिम विजय होगी और पूंजीवादी राज्य के लोग स्वयं साम्यवाद के लाभों को देखकर साम्यवादी शासन स्थापित कर लेंगे। वे कहते हैं कि लेनिन की भी यही नीति थी और विश्व के हित में यही नीति वाञ्छनीय है।

अतः अब कम्यूनिस्ट पार्टी स्तालिन की भूलों को सुधार कर सामूहिक नेतृत्व की नीति अपना रही है। आलोचना और प्रत्यालोचना की स्वतन्त्रता देकर अन्तिम नीति निर्धारित कर उसका पालन करना पार्टी का अब मुख्य साधन है।

पाठ्य पुस्तक

Basily, N de—Russia under the Soviet Rule
Batsell, W R —Soviet Rule in Russia, (1939)
Buck, P W, and Musland J W —The Governments of Foreign Powers, (1950), pp 501-590
Buell, R L —New Governments in Europe, (1934)
Cole G D and M I —A Guide to Modern Politics, (Gollancz)
Freund, H A —Russia from A to Z, (1945)
Harper and Thomson—Government of the Soviet Union
Karpinsky V —The State and Social Structure of the U S S, R
Laski, Harold J —Law and Justice in Soviet Russia
Makeev and O'Hara—Russia (Modern World Series)
McCormic, A O —Communist Russia (William & Norgate)
Ogg, F A, and Zink, Harold—Modern Foreign Governments pp 793 923
Kovalesky D I —Soviet Democracy, (1958)
Hundred Questions and Answers (Soviet Embassy, New Delhi).
Vishinsky, A Y —The Law of the Soviet State
Vishinsky A Y—The Electoral System of the U S S R
Text of the Soviet Constitution
Sharma, B

Umansky,
The U S S ... (19
Statesman's Year Book, Latest Edition